भारतरत्न बाबा साहब डॉ० भीमराव अम्बेडकर

का

पुनर्मूल्यांकन

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी

के कला संकाय के

इतिहास विषय में

डाक्टर ऑफ फिलॉसफी

उपाधि हेतु

शोध-प्रबन्ध

शोध निर्देशक : 25.12.07
डॉ० आई०एस० सक्सेना
भूतपूर्व विभागाध्यक्ष– इतिहास
दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर
महाविद्यालय उरई (उ०प्र०)

अनुसंधित्सु :
इन्द्रजीत सिंह
प्रवक्ता–इतिहास
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
(हमीरपुर उ०प्र०)

DEDICATED

TO
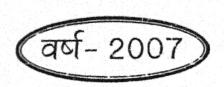
MY
VENERABLE
PARENTS
and
Wife

डा0 आई0एस0 सक्सेना
भूतपूर्व विभागाध्यक्ष
इतिहास विभाग
दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय
उरई, उत्तर प्रदेश

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि इन्द्रजीत सिंह, प्रवक्ता, इतिहास विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हमीरपुर ने "भारतरत्न बाबा साहेब डॉ0 भीमराव अम्बेडकर का पुनर्मूल्यांकन" विषय पर बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी के शोध परिनियमावली में उल्लिखित निर्धारित अवधि तक उपस्थिति रहकर मेरे निर्देशन में परिश्रम के साथ शोध कार्य पूर्ण किया है। इनकी विषय सामग्री पूर्णतः मौलिक एवं विशिष्ट है। प्राप्त शोधप्रबन्ध बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी के पी–एच0डी0 के सभी उपबन्धों की पूर्ति करता है। मैं संस्तुति करता हूँ कि यह इस योग्य है कि मूल्यांकन हेतु विश्वविद्यालय में प्रस्तुत किया जाये।

25.12.2007

शोध निर्देशक

डा0 आई0एस0 सक्सेना
भूतपूर्व विभागाध्यक्ष
इतिहास विभाग
दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उरई

उद्घोषणा

मैने इतिहास विषय में बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी की पी–एच0डी0 उपाधि के लिए ''भारतरत्न बाबा साहेब डॉ0 भीमराव अम्बेडकर का पुनर्मूल्यांकन'' शोध शीर्षक पर डा0 आई0एस0 सक्सेना, भूतपूर्व विभागाध्यक्ष, दयानन्द वैदिक स्नातकोत्तर महाविद्यालय उरई के कुशल निर्देशन में इस शोध प्रबन्ध को निष्पादित किया है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध मेरे अनुसंधान एवम् गहन चिन्तन का परिणाम है। इसकी शोध–सामग्री मौलिक एवम् यथाशक्ति मेरी अपनी है। इस शीर्षक के सम्बन्ध में जहाँ तक मेरी जानकारी है, किसी अन्य विश्वविद्यालय में कोई शोध प्रबन्ध प्रस्तुत नही किया गया है।

अनुसंधित्सु

इन्द्रजीत सिंह

अनुक्रमणिका

पुरोवाक्

"'पुरोवाक्'"

भारत सहित विश्व के अनेक भू–भागों मे समय–समय पर अनगिनत ऋषियों, मुनियों, मनीषियों, महात्माओं और महापुरुषों का जन्म हुआ, जिनका कालजयी व्यक्तित्व देशकाल में आबद्ध सीमाओं से मुक्त युग–युग से मानवीय मूल्यों, आदर्शों का प्रतिमान बना हुआ है। इन कालजयी महापुरुषों में भारत भूमि में जन्म लिए बोद्धिसत्व भारत रत्न बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर का महत्वपूर्ण स्थान है, जो अपने व्यक्तित्व और कृतित्व से अपने युग में ही नहीं आने वाले युग में भी प्रासंगिक बने रहेंगे। बाबा साहेब ने समता, स्वतन्त्रता और बन्धुता मूलक समाज की स्थापना हेतु आजीवन संघर्ष किया। बाबा साहेब के कालजयी व्यक्तित्व से प्रभावित होकर बड़ी संख्या में चिंतकों, विचारकों ने अपने–अपने दृष्टिकोणानुसार विवेचन व मूल्यांकन किया है। इस क्रम में एक शोधार्थी के रूप में मैंने भी प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में बाबा साहेब से सम्बन्धित समस्त तथ्यों व साक्ष्यों का निष्पक्ष एवं वैज्ञानिक मूल्यांकन कर उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का पुनर्मूल्यांकन करने का एक लघु प्रयास प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध में किया है।

एक शोधार्थी के रूप में मैं यह स्पष्ट करना चाहूँगा कि इतिहास का विद्यार्थी तथा वर्तमान में इतिहास का अध्यापक होने के नाते मेरे मन में भी बाबा साहेब के कालजयी व्यक्तित्व को पढ़ने और जानने की बहुत पहले से जिज्ञासा रही है। यह जिज्ञासा उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग में वर्ष 1994 में पी0सी0एस0 परीक्षा के इण्टरव्यू के दौरान और तीव्र हुई जब मुझसे तथा अन्य परीक्षार्थियों से बहुधा यह प्रश्न पूछा जा रहा था कि डा0 अम्बेडकर और महात्मा गाँधी में कौन महान है? अभी तक पढ़ाये जा रहे भारत के इतिहास के अनुसार मैंने भी पारम्परिक उत्तर दिया कि गाँधी जी डा0 अम्बेडकर से अधिक महान रहे हैं किन्तु साक्षात्कार के बाद मैंने बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर को अधिकाधिक पढ़ने और समझने का संकल्प किया लेकिन विश्वविद्यालयों में

पढ़ाए जा रहे आधुनिक भारत के इतिहास की पुस्तकों में डा0 अम्बेडकर के विषय में अधिक जानकारी नहीं है। मैंने अपनी जिज्ञासाओं के परिशमन हेतु इलाहाबाद विश्वविद्यालय के आधुनिक इतिहास विभाग में स्वीकृत अपना शोध शीर्षक ''अयोध्या की समस्या और समाचार पत्रों की भूमिका'', को छोंड़कर डा0 अम्बेडकर पर शोध करने का निश्चय किया और बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय में ''बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर का एक पुनर्मूल्यांन'' विषय की शोध संक्षिप्तिका प्रस्तुत की जिसे विश्वविद्यालय ने स्वीकार कर लिया, इससे मुझे अपार प्रसन्नता हुई।

शोध सामग्री के संकलन के सम्बन्ध में जब मै विभिन्न विश्वविद्यालयों के पुस्तकालयों में सम्पर्क किया तो मुझसे बुद्धजीवी वर्ग के द्वारा जाति बोधक प्रश्न किये गये, जिस पर मैंने कहा कि बाबा साहेब को जातिगत सीमाओं से ऊपर उठकर देखने की आवश्यकता है। मेरे आश्चर्य का उस समय और ठिकाना नहीं रहा कि जब मैंने देखा कि इलाहाबाद विश्वविद्यालय, लखनऊ विश्वविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय तथा जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय जैसे भारत के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों में डा0 अम्बेडकर से सम्बन्धित शोध कार्य नगण्य है। मुझे ज्ञात हुआ कि आजादी के इतने वर्षों बाद भी भारतीय संविधान के निर्माता डा0 अम्बेडकर अभी भी अछूत बने हुए हैं। यद्यपि उनसे सम्बन्धित साहित्य की भरमार है लेकिन उनमें प्रामाणिकता बहुत कम है तथा वे बहुधा एकांकी दृष्टिकोण से लिखे गए हैं।

जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय में मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार डा0 अम्बेडकर से सम्बन्धित दो शोध–प्रबन्ध प्रस्तुत हुए हैं, जिनमें से 'एक बाबा साहेब और बौद्ध धर्म तथा दूसरा डा0 अम्बेडकर और भारतीय सामाजिक व्यवस्था' हैं। लखनऊ विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग में डा0 ठाकुर प्रसाद (प्रवक्ता– हिन्दी लखनऊ विश्वविद्यालय) के द्वारा ''डा0 बी0आर0 अम्बेडकर का हिन्दी साहित्य पर प्रभाव'' विषय पर डी0लिट0 हुआ है लेकिन डा0 बी0आर0 अम्बेडकर के सम्पूर्ण व्यक्तित्व और उनके योगदान का मूल्यांकन करने वाला शोध–प्रबन्ध मेरी अधिकतम जानकारी के अनुसार शायद ही किसी विश्वविद्यालय में प्रस्तुत हुआ है। इस दृष्टिकोण से मेरा यह

शोध–प्रबन्ध अपने विषय की सर्व प्रथम मौलिक कृत्य के रूप में मान्य किया जा सकता है।

शोध सामग्री के संकलन में भारतीय पार्लियामेण्ट की लाइब्रेरी, जवाहर लाल नेहरू विश्व विद्यालय की लाइब्रेरी, दिल्ली विश्व विद्यालय की लाइब्रेरी, ब्रिटिश उच्चायुक्त लाइब्रेरी नई दिल्ली, लखनऊ विश्व विद्यालय की टैगोर लाइब्रेरी, इलाहाबाद विश्वविद्यालय की लाइब्रेरी, उत्तर प्रदेश विधान भवन लाइब्रेरी, डा0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान नई दिल्ली, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय हमीरपुर की लाइब्रेरी तथा जनपद लाइब्रेरी हमीरपुर के समस्त अधिकारियों, कर्मचारियों का मैं हृदय से धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ, जिन्होंने बाबा साहेब से सम्बन्धित बहुमूल्य पुस्तकों, सामग्री को उपलब्ध कराने में अपना बहुमूल्य सहयोग दिया है। मैं विशेष रूप से भारतीय पार्लियामेण्ट लाइब्रेरी के उप निदेशक आदरणीय जसबीर सिंह साहब का आभारी हूँ, जिन्होंने ने डा0 अम्बेडकर से सम्बन्धित पार्लियामेण्ट डिबेट्स तथा अन्य बहुमूल्य दुर्लभ सामग्री मुझे उपलब्ध कराई है।

डा0 अम्बेडकर विषयक चर्चा को बढ़ाने तथा अध्ययन सामग्री दिल्ली में रहकर एकत्र कराने में मेरे प्रिय शिष्य श्री ब्रह्म कुमार आई0एफ0एस0 (भारतीय विदेश सेवा) तथा उनके मित्र श्री सुदीप बनर्जी आई0एफ0एस0 (भारतीय विदेश सेवा), श्री सन्दीप सिंह एवं कार्तिकेय सिंह का योगदान रहा जिनके प्रति मैं आभार प्रकट करता हूँ।

शोध अवधि के दौरान जिनके साथ मैं लगातार डा0 अम्बेडकर और उनकी योगदान की चर्चा, परिचर्चा करता रहा तथा जो लगातार मेरा उत्साहवर्धन व मार्गदर्शन करते रहे तथा शोध–प्रबन्ध लिखने में भी जिनका विशेष योगदान रहा, ऐसे श्रद्धेय अपने बड़े भाई डा0 सुरेन्द्र प्रताप सिंह 'अमित' रीडर मनोविज्ञान, राजकीय महिला महाविद्यालय, हमीरपुर के प्रति मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूँ।

इस अवसर पर मैं अपने परम पूज्यनीया माता स्व0 ज्ञानवती की पुण्य स्मृति को प्रणाम करता हूँ तथा अपने पूज्य पिता श्री अम्बिका प्रसाद सिंह, जो मेरा उत्साहवर्धन एवं प्रेरणा देते रहे के प्रति आभार प्रकट करता हूँ। इसी क्रम में मैं अपनी जीवन संगिनी

श्रीमती पुष्पा सिंह के प्रति हृदय से आभार प्रकट करता हूँ कि जिन्होंने शोध–प्रबन्ध लिखने में सहयोग ही नहीं किया अपितु सतत उत्साहवर्धन भी करती रहीं।

इस अवसर पर मैं श्रद्धेय श्री शेर बहादुर सिंह अम्बेडकर नगर एवं बड़े भाई आदरणीय श्री राकेश गोस्वामी महोबा जैसे राजनीतिक व्यक्तियों तथा अनन्य मित्र डा0 आनन्द गोस्वामी, प्रवक्ता इतिहास, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चरखारी के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनका स्नेह और सहयोग शोध–प्रबन्ध के दौरान प्राप्त हुआ।

मैं अपने महाविद्यालय के प्राचार्य आदरणीय प्रो0 बी0पी0 जोशी का आभारी हूँ, जिन्होंने न केवल शोध कार्य के लिए मुझे समय दिया अपितु अपना स्नेह और मार्गदर्शन भी देते रहे। महाविद्यालय के ही मेरे विभाग प्रभारी डा0 श्रीमती पूनम श्रीवास्तव का विशेष स्नेह और सहयोग इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण करने में रहा, जिसके लिए मैं आभार प्रकट करता हूँ।

अन्त में मैं अपने शोध निदेशक श्रद्धेय डा0 आई0एस0 सक्सेना, अवकाश प्राप्त विभागाध्यक्ष, डी0बी0एस0 कालेज, उरई के प्रति श्रद्धा पूर्वक अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ, जिनके विद्वतापूर्ण निदेर्शन एवं स्नेह पूर्ण प्रोत्साहन के फल स्वरूप मैं अपने इस शोध प्रबन्ध को उसके वर्तमान रूप में प्रस्तुत करने मे सक्षम हो सका।

मुझे खेद है कि विषय वस्तु की व्यापकता के कारण शोध–प्रबन्ध विस्तृत हो गया है तथा शोध प्रबन्ध में टंकण की कतिपय अशुद्धियां अब भी शेष रह गई हैं यद्यपि मैंने शुद्ध करने का प्रयास किया है।

इन्द्रजीत सिंह
प्रवक्ता– इतिहास
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
हमीरपुर

अध्याय
एक

अध्याय– एक

भूमिका

विश्व इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों में अंकित अनेक महापुरुषों की पंक्ति में बोधिसत्व भारत रत्न बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर निःसन्देह अग्रिम स्थन के भागीरदार हैं, जिन्होंने अपने कर्तव्य और व्यक्तित्व से न केवल अपने युग को प्रभावित किया है अपितु आने वाले युग पर भी अपनी अमित छाप छोड़ेंगे और जिनका नाम वर्तमान पीढ़ी के साथ–साथ आने वाली पीढ़ी भी अत्यन्त श्रृद्धा के साथ सम्मान पूर्वक लेगी। अंग्रेजी साहित्य के महाकवि विलियम शेक्सपियर का प्रसिद्ध कथन है– कुछ महान पैदा होते हैं और कुछ महान बनते हैं। ऐसे व्यक्तित्व समाज को अधिकाधिक प्रभावित करते हैं जो महान बनते हैं, क्योंकि धूल से शिखर तक की यात्रा वे अपने अथक परिश्रम, त्याग, तपस्या, कर्तव्य निष्ठा और आचरण के शील से करते हैं। वे ही समाज के वास्तविक प्रेरणास्रोत होते हैं, जो सन्देश देते हैं कि उक्त मार्ग क अनुगमन कर निम्नतम कुल, परिवार, जाति में पैदा होकर भी कोई मनुष्य इतिहास पुरुष बनकर दलित, शोषित, उपेक्षित, वंचित मानवता के उद्धारक बन सकते हैं। बाबा साहेब ऐसे ही महामानव हैं जिन्होंने आत्मदीपोभवः के आदर्श को साकार करते हुए धूल से शिखर तक की यात्रा कर 'बोधिसत्व' के आचरण के अनुरूप जीवन व्यतीत करते हुए हजारों वर्षों से दलित, शोषित, वंचित, अपमान एवं तिरस्कार तथा घृणास्पद व्यवहार को अपना भाग्य मानने वाले करोड़ों मानवों के दीपक बनकर उनमें नव चेतना, स्वाभिमान, उत्साह, जिजीविषा की ललक पैदा ही नहीं किया अपितु उनके उद्धारक, मुक्तिदाता, मसीहा भी बने। बाबा साहेब की अद्वितीयता जिस तरह से संघर्षों के बलबूते निखर कर संसार के सम्मुख आयी, वह प्रणम्य है, श्रीवंत हैं।

हिन्दी साहित्य में प्रयोगवाद के जनक कहलाने वाले अज्ञेय के कविता की एक प्रसिद्ध पंक्ति है– दुःख सबको माँजता है, सत्य तो है लेकिन यह अनुभूतिकर्ता के अनुभूति की गहराई पर निर्भर करता है। मिथुनरत क्रौंच पंक्षी के मृत्यु को देखकर सभी आदि कवि महर्षि बाल्मीकि नही बन सकते, अपमान से व्यथित होकर सभी मोहनदास कर्मचन्द्र गाँधी नहीं बन सकते, अन्याय, शोषण अत्याचार को देखकर सभी बाबा साहेब नहीं बन सकते। बाबा साहेब की संवेदना अद्वितीयता ही विश्व के महामानव के रूप में उनकी पहचान का कारण है। बहु आयामी व्यक्तित्व के धनी बाबा साहेब अम्बेडकर न केवल शोषण, अत्याचार, अन्याय के विरुद्ध अनवरत संघर्षों करने वाले महानायक रहे अपितु विश्व के महान बुद्धिजीवी, महान तार्किक, विधिवेत्ता, अर्थशास्त्री, प्रखर राजनीतिक विचारक, महान दार्शनिक और सम्राट अशोक, कनिष्क तथा महाराजाधिराज हषर्वधन की परम्परा के महान बौद्ध प्रचारक एवं अनुयायी भी थे। उनकी मानवीय संवेदना, राष्ट्रीयता, चेतना और मौलिक चिन्तन का गाम्भीर्य अद्वितीय है। उन्होंने समता, स्वतन्त्रता और बंधुता पर आधारित समाज की स्थापना हेतु आजीवन प्रयास किया और यही उनके जीवन दर्शन का सारतत्व और उनके जीवन का स्वप्न भी हैं। अपने जीवन दर्शन के विषय में बाबा साहेब ने कहा– "समता, स्वतन्त्रता और बनुता पर आधारित जीवन का ही नाम लोकतन्त्र है।"

अपने जीवन के अंतिम समय में 1956 में आगरा में एक विशाल सभा में बाबा साहेब करोड़ों अनुयायियों से मार्मिक अपील की– "जो कुछ मैं पाया हूँ, वह जीवन भर मुशीबतें सहन करके विरोधियों से टक्कर लेने के बाद ही कर पाया हूँ। जिस कारवां को आप यहाँ देख रहे हैं, उसे मैं अनेक कठिनाइयों से यहां ले आया हूँ। अनेक अवरोध जो इसके मार्ग में है आ सकते हैं, के बावजूद इस कारवां को बढ़ते रहना है। अगर मेरे अनुयायी इसे आगे ले जाने में असमर्थ रहें, तो उन्हें इसे यहीं पर छोंड़ देना चाहिए, जहाँ पर यह अब है। पर किन्हीं भी परिस्थितियों में इसे पीछे नहीं हटने देना है। मेरी जनता के लिए यही मेरा सन्देश है।"

बाबा साहेब का कारवां कुछ भटकाव के बाद मा0 स्व0 कांशीराम तथा कु0 मायावती के नेतृत्व में आगे बढ़ता हुआ, बाबा साहेब के स्वप्नों को साकार कर उत्तर

प्रदेश जैसे विशाल राज्य में राजनैतिक शक्ति प्राप्त कर पूर्ण बहुमत की सरकार स्थापित कर ली है। सामाजिक न्याय के पुरोधा, शोषितों के मसीहा, स्वतन्त्रता संग्राम के महानायक, महान राष्ट्रप्रेमी, संविधान शिल्पी बाबा साहेब को सच्ची श्रद्धांजली अर्पित करते हुए उनके जन्म शताब्दी वर्ष में राष्ट्रीय मोर्चा की वी0पी0 सिंह सरकारने 1990 में भारत रत्न का सर्वोत्तम सम्मान देकर सम्मानित किया, जिससे स्वयं भारत रत्न ही सम्मानित हुआ है।

बाबा साहेब की कालजयी व्यक्तित्व से प्रभावित होकर बड़ी संख्या में विद्वानों, मनीषियों, चिन्तकों ने अपनी लेखनी चलाई है लेकिन बाबा साहेब के समग्र व्यक्तित्व अपने यथार्थ रूप में अभी भी जनमानस में स्थापित नहीं हो पाया है। सवर्ण अवर्ण मानसिकता से ओत–प्रोत व्यक्तियों द्वारा ही बाबा साहेब का मूल्यांकन कर उनका व्यक्तित्व समाज के सम्मुख लाया गया है। एक वर्ग बाबा साहेब को दलित, शोषित वर्ग का मसीहा, सामाजिक न्याय का पुरोधा, संविधन शिल्पी कह कर श्रद्धा भाव प्रकट करता है तो दूसरा वर्ग उन्हें ब्रिटिश सरकार का पिछलग्गू, स्वाधीनता संग्राम में अंग्रेजो के हाथ का खिलौना, सामाजिक समरसता का विरोधी, देशद्रोही आदि के रूप में स्वीकार करता है। एक शोधार्थी के रूप में मैंने उपलब्ध समस्त तथ्यों की निष्पक्ष, वैज्ञानिक समीक्षा कर इन अन्तर्विरोधों को समाप्त कर बाबा साहेब के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का पुनर्मूल्यांकन करने का प्रयास प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध में किया है।

बाबा साहेब का सम्पूर्ण व्यक्तित्व इनता लोमहर्षक और वैशिष्टपूर्ण है कि उसका विश्लेषण स्वयं ही एक महाग्रन्थ का रूप उसी प्रकार धारण कर लेता है, जिस प्रकार राष्ट्रकवि मैथलीशरण गुप्त जी ने भगवान राम के विषय में कहा– राम तुम्हारा चरित्र स्वयं ही काव्य है। बाबा साहेब के सम्पूर्ण व्यक्तित्व की सांगोपांग विवेचना प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में तेइस अध्याय में किया गया है। प्रथम अध्याय भूमिका ही है, जिसमें बाबा साहेब के संक्षिप्त जीवन एवं दर्शन का विवरण है।

द्वितीय अध्याय में बाबा साहेब के जनम की पूर्व सन्ध्या के भारत की विवेचना है। इसमें भारत की राजनैतिक दशा, राष्ट्रवाद का उदय, भारतीय राष्ट्रीय

कांग्रेस की स्थापना की परिस्थितियां, पुनर्जागरण, सामाजिक दशा, धार्मिक स्थिति तथा आर्थिक स्थिति की विवेचना प्रस्तत की गई है।

तृतीय अध्याय में बाबा साहेब का पारिवारिक जीवन प्रस्तुत करते हुए महार जाति के इतिहास को स्पष्ट किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में बाबा साहेब की शिक्षा और अस्पृश्यता से साक्षात्कार की स्थिति को स्पष्ट किया गया है। इसमें बाबा साहेब की प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा तथा उच्च शिक्षा जिसमें बड़ौदा के महाराजा तथा साहू महाराज का योगदान तथा आजीवन अस्पृश्यता के अपमान का बोध वर्णित है।

पांचवें अध्याय में अस्पृश्यता और मनुवादी व्यवस्था के खिलाफ आजीवन संघर्ष वर्णित है। बाबा साहेव ने मनुवादी व्यवस्था के विरुद्ध जिस दीर्घकालिक संघर्ष को किया, वे सव विवरण इसमें हैं।

छठवें अध्याय में बाबा साहेब के निजी जीवन और वैशिष्टपूर्ण जीवन–शैली को प्रस्तुत किया गया है। इसमें जहाँ एक ओर डॉ० अम्बेडकर के व्यक्ति की विशेषताओं को प्रकाशन में लाया गया है वहीं दूसरी ओर विशिष्ट जीवन शैली की विवेचना प्रस्तुत की गई है।

सातवें अध्याय में बाबा साहब के भारतीय राजनीति में अवतरण को स्पष्ट किया करते हुए भारतीय राजनीति में उनके विशिष्ट कार्यों, संघर्षों, योगदान को तर्कों, तथ्यो के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

आठवें अध्याय में बाबा साहेब का भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के साथ सम्बन्ध जैसे– विवादस्पद प्रश्न की व्याख्या की गई है। इसमें सप्रमाण स्पष्ट किया गया है कि क्यों बाबा साहेब ने कांग्रेस का प्रबल विरोध किया तथा उसके अस्पृश्यता उन्मूलन कार्यक्रम की क्यों आलोचना कर उसे अछूतों के साथ कांग्रेस का छल बताया। बाबा साहेब ने कांग्रेस के इस दावे का सप्रमाण लगातार विरोध किया कि कांग्रेस सबका प्रतिनिधित्व करती है। साथ ही साथ इसमें यह भी स्पष्ट किया गया है कि बाबा साहेब किन परिस्थितियों में और क्यों कांग्रेस में शामिल हुए तथा त्याग–पत्र दिए।

नवें अध्याय में बाबा साहेब का महात्मा गाँधी के साथ सम्बन्धों और वैचारिक अन्तर्विरोधों को स्पष्ट किया गया है। इस अध्याय में भारत की दो महाविभूतियों की समानता, असमानता, सम्बन्धों, कटुतापूर्ण वार्तालाप, हरिजन सेवक सघ में कांग्रेस के साथ कुछ समय कार्य करना, बाबा साहेब के नेहरू मंत्रिमण्डल में शामिल होने की परिस्थितियों में गाँधी जी का विचार, बाबा साहेब का महात्मा के विषय में विचार, गाँधीवाद और अम्बेडकरवाद में अन्तर को स्पष्ट किया गया है।

दसवें अध्याय में बाबा साहेब का ब्रिटिश सरकार से सम्बन्धों को स्पष्ट करते हुए यह सप्रमाण स्पष्ट किया गय है कि बाबा साहेब ने ब्रिटिश सरकार का कितना विरोध और समर्थन किया है। ब्रिटिश सरकार की विभिन्न नीतियो, सुधारों की बाबा साहेब ने जो समर्थन और विरोध किया, स्पष्ट किया गया है।

ग्यारहवें अध्याय में बाबा साहेब का मुस्लिम लीग और उसके बाद में कर्ता–धर्ता बने जिन्ना साहब के साथ सम्बन्धों को स्पष्ट किया गया है।

बारहवें अध्याय में बाबा साहेब विद्यमान रियासतों का उल्लेख करते हुए बाबा साहेब का उनके साथ सम्बन्धों को स्पष्ट किया गया है। बाबा साहेब का बड़ौदा तथा कोल्हापुर जैसी रियासतों के शासकों से उनके उदारवादी दृष्टिकोण के कारण मधुर सम्बन्ध ही नहीं अपितु कोल्हापुर के छत्रपति साहूजी महाराज जैसे शासकों ने बाबा साहेब के संघर्षों का साथ दिया, सहायता दिया लेकिन इसके बावजूद बाबा साहेब सामन्ती व्यवस्था के कभी समर्थक नहीं रहे, अपितु विरोध किया, स्पष्ट किया गया है।

तेरहवें अध्याय में बाबा साहेब का भारतीय स्वाधीनता संग्राम में योगदान की सुसंगत विवेचना प्रस्तुत की गई है। इसमें स्पष्ट किया गया है कि बाबा साहेब कांग्रेस द्वारा संचालित स्वाधीनता संग्राम के समर्थक नहीं थे, जिसमें केवल राजनैतिक स्वतन्त्रता का लक्ष्य था, अपितु बाबा साहेब ने सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा राजनैतिक स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष किया गया है। प्रमाणों से स्पष्ट किया गया है कि वे कितने महान देशभक्त थे।

चौदहवें अध्याय में बाबा साहेब ओर श्रमिक आन्दोलन में उनकी सहभागिता को स्पष्ट किया गया है। इसमें बाबा साहेब के कार्यों, प्रयासों तथा योगदान का उल्लेख एक सच्चे श्रमिक हितैषी के रूप में किया है।

पन्द्रहवें अध्याय में दलित–शोषित वर्ग के मसीहा के रूप में बाबा साहेब के आजीवन संघर्षों एवं प्रयासों का तथ्यात्मक विवरण प्रस्तुत है, जिसके द्वारा दलित, शोषित जनों के हजारों वर्षों के शोषण, दुःखों का अन्त हुआ और उन्हें मानवीय अधिकारों के लिए संवैधानिक अधिकार प्राप्त हुए।

सोलहवें अध्याय में संविधान निर्माता के रूप में बाबा साहेब के योगदान को स्पष्ट किया गया है। इसमें भारत में संवैधानिक विकास को स्पष्ट करते हुए संविधान सभा की स्थापना तथा बाबा साहेब का संविधान प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में कठोर परिश्रम कर संविधान निर्माण को स्पष्ट किया गया है।

सत्रहवें अध्याय में भारत–विभाजन किन परिस्थितियों में हुआ और बाबा साहेब का उन परिस्थितियों, कारणों में कितना जुड़ाव, अलगाव था स्पष्ट करते हुए, बाबा साहेब का भारत विभाजन की समस्या पर सप्रमाण विवरण प्रस्तुत किय गया है।

अठारहवें अध्याय में आजादी के बाद की भारतीय राजनीति और बाबा साहेब के सम्बन्ध को स्पष्ट किया गया है। इसमें आजादी के बाद बाबा साहेब द्वारा कोंग्रस मंत्रिमण्डल में शामिल होना, त्याग पत्र देना, अनुसूचित जाति संघ के बैनर तले प्रथम लोक सभा चुनाव लड़ना, बाबा साहेब और उनकी पार्टी का पराजय, राज्य सभा में बाबा साहेब द्वारा नेहरू सरकारी की नीतियो की आलोचना करना, महा परिनिर्वाण की पूर्व सन्ध्या पर रिपब्लिकन पार्टी की स्थापना की योजना, तत्पश्चात् बाबा साहेब के मिशन का ठहराव, बिखराव तथा मा0 कांशीराम और कु0 मायावती के नेतृत्व में बाबा साहेब के स्वप्नों को साकार कर राजनैतिक सत्ता, शक्ति हासिलकर स्वतन्त्रता, समता तथा बन्धुतापूर्ण समाज की स्थापना की दिशा में बहुजन कारवां के प्रयास को स्पष्ट किया गया है।

उन्नीसवें अध्याय में बाबा साहेब और भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के पारस्परिक सम्बन्धों की विवेचना क्रम में दोनो की समानता, असमानता, बाबा साहेब द्वारा नेहरू मंत्रिमण्डल में शामिल होने के पीछे की परिस्थितियां, उद्‌देश्य को स्पष्ट करते हुए हिन्दूकोड बिल विवाद तथा नेहरू सरकार की नीतियों से मतभेद के कारण बाबा साहेब के त्याग–पत्र ओर राज्य सभा में नेहरू सरकार की विदेश नीति की जबरदस्त आलोचना को स्पष्ट किया गया है।

बीसवें अध्याय में बाबा साहेब ने क्यो धर्म परिवर्तन की पवेंला में 1935 में घोषणा की तथा सभी धर्मो के तुलनात्मक अध्ययन के बाद बौद्ध धर्म को स्वीकार करने का निर्णय लिया। इसमें यह भी स्पष्ट किया कि नागपुर को बाबा साहेब ने क्यो दीक्षा भूमि के रूप में चुना। इसमें दीक्षा कार्यक्रम की विस्तृत ब्यौरा के साथ–साथ, बौद्ध धर्म में बाबा साहेब के विचार, तथा महापरि निर्वाण की परिस्थितियों और विभिन्न व्यक्तियों द्वारा शोक संवेदना, का विवेचन किया गया है।

इक्कीसवें अध्याय में उपसंहार में शोध–प्रबन्ध के विभिन्न अध्यायों का संक्षिप्त विवरण और निष्कर्ष तथाा बाबा साहेब के विचार सिद्धान्त और दर्शन की वर्तमान समय में उपयोगिता और प्रासंगिकता तथा इकीसवीं सताब्दी में अम्बेडकरवाद के स्वरूप को स्पष्ट किया गया है।

अन्तिम बाइसवें अध्याय में बाबा साहेब के जीवन से सम्बन्धित विभिन्न मुद्राओं, भावों तथा घटनोंओं को अंकित करने वाले दुर्लभ चित्रों का संकलन किया गया है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का पुनर्मूल्यांकन एवं उनके जीवन दर्शन की समकालीन प्रासंगिकता का विवेचन ही प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध है।

अध्याय
दो

अध्याय– दो

''बाबा साहेब के जन्म की पूर्व सन्ध्या का भारत''

भारत रत्न बाबा साहेब डा० बी० आर० अम्बेडकर का जन्म ऐसे समय पर हुआ जब राजाराम मोहन राय और उनके ब्रह्म समाज (1828) द्वारा आरम्भ किया गया पुनर्जागरण प्रगति के पथ पर अग्रसर था। इटली के फ्लोरेंस शहर से आरम्भ हुए यूरोपीय पुनर्जागरण ने जिस प्रकार योरप के निवासियों के जीवन के विविध पक्षों को पूर्णतया बदल कर नये प्रतिमानों, मूल्यों, आदर्शों की स्थापना की, उसी प्रकार भारतीय पुनर्जागरण ने भी भारतीय सामाजिक, धार्मिक एवं राजनैतिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया था। देश के राजनैतिक क्षितिज का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि इस समय भारतीय राष्ट्रवाद का उद्‌भव और विकास हो रहा था। समाज के विभिन्न वर्गों में जागृति आ रही थी। संक्षेप में बाबा साहेब के जन्म की पूर्व सन्ध्या के भारत का अवलोकन निम्नवत् शीर्षकों में किया जा सकता है–

1. राजनैतिक दशा

ब्रिटेन की महारानी एजिलावेथ के सहयोग से 1600 ई0 में जिस ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना हुई थी उसकी राजनैतिक शक्ति में शनैः शनैः विस्तार हो रहा था और 23 जून 1757 को निर्णायक प्लासी के युद्ध में बंगाल के नवाब सिराजुद्‌दौला को पराजित कर लार्ड क्लाईव ने भारत में ब्रिटिश साम्राज्य की नींव डाली। प्रथम गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स (1772–1785) तथा लार्ड कार्नवालिस (1786–93) एवं लार्ड वेलेज्ली (1798–1805) ने ब्रिटिश साम्राज्य की वृद्धि में अपना विशिष्ट योगदान दिया। लार्ड वेलेज्ली ने अपनी 'सहायक–सन्धि' प्रणाली से बड़ी संख्या में भारतीय रियासतों को ब्रिटिश नियंत्रण में लाने में सफलता प्राप्त की। लार्ड मार्विस आफ हेस्टिंग्स (1813–23) ने 'तृतीय ऑग्ल–मराठा' युद्ध में मराठा शक्ति को पूर्णतया

समाप्त कर ब्रिटिश सर्वोच्चता की स्थापना में अपना योगदान दिया। भारत में अब तक आए समस्त गवर्नर जनरलों में सबसे अधिक साम्राज्यवादी अर्क ऑफ डलहौजी ने (1848–56) हर संभव तरीकों से भारतीय रियासतों का ब्रिटिश साम्राज्य में विलय कर लिया।

भारत में ब्रिटिश सरकार द्वारा अपनाई गई विभिन्न नीतियों से भारतीय समाज के विभिन्न वर्गों में व्यापक – स्तर पर असंतोष फैला, जिसकी अभिव्यक्ति 1857 के क्रांति के रूप में हुई। 10 मई 1857 को मेरठ से सैनिक विद्रोह के रूप में आरम्भ हुई क्रांति धीरे–धीरे देश के एक बड़े भू–भाग में फैल गई, जिसमें बड़ी संख्या में सैनिकों, किसानों, दस्तकारों तथा कतिपय भारतीय रियासतों यथा– अवध, झाँसी, जगदीशपुर–बिहार, आदि ने भाग लिया। अंतिम पेश्वा वाजीराव द्वितीय के दत्तक पुत्र नाना साहेब, अवध की बेगम हजरत महल, झाँसी की विधवा युवा रानी लक्ष्मी बाई, बिहार के जगदीशपुर के जमीदार कुँवर सिंह, तात्या टोपे, बख्त सिंह, झलकारी बाई आदि ने अपने शौर्य एवं पराक्रम की गाथा से जनमानस को प्रभावित किया। अंततः क्रांति का दमन करनें में ब्रिटिश सरकार सफल हो गई, लेकिन इसके कतिपय महत्पूर्ण दूरगामी परिणाम हुए।

ब्रिटिश सरकार ने 1858 का भारत शासन अधिनियम पारित कर ईस्ट इण्डिया कम्पनी के भारत पर शासन को समाप्त कर दिया और ब्रिटिश महारानी ने भारत के शासन को सीधे अपने हाथ मे ले लिया। भारत पर शासन का अधिकार वायसराय (महारानी का प्रतिनिधि) और उसकी कौंउसिल को दे दिया गया। ब्रिटिश महारानी ने यह भी घोषणा की कि– "भारतीय रियासतों की संप्रभुता एवं अखण्डता में कोई हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा।" भारतीय सेना का पुनर्गठन किया गया। जिन क्षेत्रों में क्रांति हुई थी उनको असैनिक क्षेत्र तथा जिन क्षेत्रों के सैनिकों ने विद्रोह के दमन में ब्रिटिश सरकार का साथ दिया था उनको सैनिक क्षेत्र घोषित करके वहाँ से सैनिकों की अधिकाधिक भर्ती आरम्भ की गई। सरकार ने भारतीयों के सामाजिक एवं धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप

न करने की नीति घोषित की। विद्रोह के बाद ब्रिटिश सरकार ने "बाँटो और राज्य करो" की नीति को शासन के मूलभूत सिद्धान्त के रूप में स्वीकार किया। भारतीयों की दृष्टि में यही सबसे दुर्भाग्यपूर्ण था। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने डिस्कवरी ऑफ इण्डिया में लिखा है– "साम्राज्यवाद और एक जाति की दूसरी जाति पर अधिकार बुरा तो है ही, जातिवाद और भी बुरा है।"[1]

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध से राष्ट्रवाद का उद्भव और विकास हुआ, जिसके पीछे अनेक कारणों का योगदान है। इसमें अत्यन्त महत्वपूर्ण कारण पुनर्जागरण है। राजाराम मोहन राय (1774–1833) और उनके ब्रह्म समाज (1828) से भारतीय पुनर्जागरण का आरम्भ हुआ। राजाराम मोहन राय ने सामाजिक, धार्मिक, स्त्री समानता एवं अधिकार, पत्रकारिता, स्वाधीनता का समर्थन तथा प्राच्य एवं पश्चात्य का स्वस्थ स्वरूप समन्वय करते हुए पुनर्जागरण का आरम्भ किया। स्वामी दयानन्द सरस्वती (1824–83) तथा उनके आर्य समाज (1875 में बंबई में स्थापित) ने वेदों की ओर चलो' का नारा देते हुए सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया। स्वामी जी प्रथम सुधारक थे, जिन्होंने दलितों तथा महिलाओं को वेद पढ़ने के अधिकार का समर्थन किया। वे वर्ण–व्यवस्था को जन्म से नहीं कर्म से मानते थे। चारो वर्ण समान हें, कोई अस्पृश्य नहीं है।

पुनर्जागरण के इस अलख को स्वामी विवेकानन्द (1862–1902) और उनके रामकृष्ण मिशन ने आगे बढ़ाया। स्वामी जी ने हिन्दू धर्म और समाज की अनेक बुराइयों की तीव्र आलोचना की। उन्होंने हिन्दू धर्म के छुआछूत पर विशेष प्रहार किया। उनके अनुसार हिन्दू धर्म अब केवल खान–पान तक ही सीमित रह गया है। स्वामी जी ने कहा कि भूखे व्यक्ति से धर्म की बात कहना ईश्वर तथा मानवता का अपमान है। 1993ई0 में शिकागो मे हुए विश्व धर्म संसद में स्वामी जी ने हिन्दू धर्म की अनेक अच्छाइयों तथा महानताओं की विशद व्याख्या की और सार रूप में यह मत प्रस्तुत किया कि यदि

[1] प्रो0 वी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारतीय इतिहास, एक नवीन मूल्यांकन, पृ0सं0–274

हमें मानवता का उद्धार और विकास करना है तो अध्यात्मवाद और भौतिकवाद के मध्य स्वस्थ्य संतुलन स्थापित करना होगा।[1]

पुनर्जागरण की ज्योति को थियोसोफिकल सोसाइटी (1875 में मैडम एच0पी0 ब्लावस्की और कर्नल एम0एस0 औल्कॉट ने अमेरिका में स्थापना की) और मैडम एनी बेसेन्ट ने बढ़ाई। एनी बेसेन्ट हिन्दू धर्म और संस्कृति में प्रगाढ़ आस्था रखती थीं और उन्होंने भारत में शिक्षा के प्रसार के लिए 1898 में वनारस में सेन्ट्रल हिन्दू कालेज की नींव रखी।

भारतीय पुनर्जागरण ने केवल हिन्दू धर्म को ही प्रभावित नहीं किया अपितु मुस्लिम तथा पारसीक धर्म भी प्रभावित हुए। मुस्लिम सुधार आन्दोलन में बहावी आन्दोलन, देववन्द आन्दोलन, मिर्जा गुलाम अहमद का अहमदिया आन्दोलन तथा महान सुधारक और विद्वान सर सैयद अहमद खाँ (1817–98) के नेतृत्व में चलाया गया अलीगढ़ आन्दोलन विशेष रूप से उल्लेखनीय है। पारसी धर्म में 1851 में दादा भाई नौरोजी, नौरोजी फरदोनजी तथा आर0के0 कामा के नेतृत्व में स्थापित 'रहनुमाए मजदायस्मान सभा' ने धर्म सुधार का कार्य आरम्भ किया। सिक्ख धर्म में भी सुधार आन्दोलन हुआ, जिसमें प्रमुख भूमिका अमृतसर में स्थापित 'सिंह सभा' तथा इससे संलग्न 'खालसा दीवान' ने निभाई। सरकार ने अंत में 1922 ई0 में सिक्ख गुरुद्वारा एक्ट पारित किया।

इनके अतिरिक्त देश के अन्य भागों में भी अनेक सुधार आन्दोलन चल रहे थे, जिसमें महाराष्ट्र में महात्मा ज्योविता फूले का 'सत्य शोधक समाज' आत्माराम पाण्डुरंग और आचार्य केशवचन्द्र सेन का 1867 में मुम्बई में स्थापित 'प्रार्थना समाज' तेलगू भाषी क्षेत्र में 1878 में वीरेशलिंगाम द्वारा स्थापित 'राजमुद्री सोसल रिफार्म एसोसियेशन', न्यायमूर्ति महादेव गोविन्द रानाडे द्वारा 1887 में 'भारतीय राष्ट्रीय सामाजिक सम्मेलन', नेता जी दुर्गाराम मंचाराम द्वारा 1844 में स्थापित 'मानव धर्म सभा', एवं

---

[1] प्रो0 वी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारतीय इतिहास, एक नवीन मूल्यांकन, पृ0सं0–387

यूनिवर्सल रिलिंगसश सोसाइटी, मदास में श्री घरलू नायडू द्वारा 1871 में स्थापित 'ब्रह्म समाज आफ साउथ इंडिया' आदि ने सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। महात्मा ज्योतिवा फूले और उनके सत्य शोधक समाज ने महाराष्ट्र में 1870 के दशक में ब्राह्मण विरोधी आन्दोलन का पहला बिगुल बजाया।

बाबा साहेब के जन्म के 14 अप्रैल 1891ई0 पूर्व भारत में राष्ट्रवाद का उदय हो चुका था जो आरम्भ से भी ब्रिटिश शासकों को रूचिकर नहीं लगा। आरम्भ में तो ब्रिटिश और पाश्चात्य विचारकों ने भारत में राष्ट्रवाद के अस्तित्व को मानने से इंकार कर दिया। 1884ई0 में आई0सी0एस0 अधिकारी ज्ञान स्ट्रैची ने कैब्रिंज विश्वविद्यालय में छात्रों के बीच महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया–"भारत के विषय में सबसे पहली तथा प्रमुख आवश्यक जानने योग्य बात यह है कि भारत न एक है और न था और भारत कभी भी एक संयुक्त राष्ट्र नहीं होगा"।[1]कालान्तर में जब भारतीय राष्ट्रवाद अधिकारिक तीव्र होता गया तो कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में इतिहास के प्रोफेसर कूपलैण्ड महोदय जैसे विचारकों ने यह प्रचारित करना शुरू किया कि भारतीय राष्ट्रवाद ब्रिटेन की संतान थी, लेकिन कूपलैण्ड महोदय शायद यह कहना भूल गये कि भारतीय राष्ट्रवाद ब्रिटेन की अनैच्छिक संतान थी जिसे जन्म के समय उसकी माँ ने दूध पिलाने से इन्कार कर दिया और फिर उसका गला घोटने का प्रयास किया।

देश में 19वीं सदी के मध्य से ही धीरे–धीरे अनेक छोटे–छोटे संगठनों की स्थापना शुरू हुई। इसकी शुरुआत जुलाई 1838 में स्थापित 'लण्ड होल्डर सोसाइटी' (Land holder Society) से हुई। 1843 में बंगाल ब्रिटिश इण्डियन सोसाइटी की स्थापना हुई। इन संस्थाओं ने मिलकर 28 अक्टूबर 1851 को ब्रिटिश इण्डियन एसोसियेशन की स्थापना की। 26 अगस्त 1852 को बंबई में 'बंबई एसोसियेशन' की स्थापना हुई। इसी क्रम में दादा भाई नौरोजी ने 'ईस्ट इण्डियन एसोसियेशन' की

[1] प्रो0 वी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारतीय इतिहास, एक नवीन मूल्यांकन, पृ0सं0–399

स्थापना लन्दन में की। 1870 में रनाडे महोदय ने 'पूना सार्वजनिक सभा' की स्थापना। 1885 में बंबई प्रेसीडेन्सी एसोसियेशन की स्थापना हुई।

इन सभी संस्थाओं में 1876 में सुरेन्द्रनाथ बनर्जी तथा आनन्द मोहन बोस द्वारा स्थापित 'इण्डियन एसोसियेशन सबसे महत्वपूर्ण थी। इन सभी संस्थाओं ने एक राष्ट्रीय संस्था की आवश्यकता को स्पष्ट कर दी थी। इस दिशा में पहला प्रयास इण्डियन एसोसियेशन ने किया था। 1883 में कलकत्ता में अखिल भारतीय संगठन की स्थापना के लिए अखिल भारतीय नेशनल कांग्रेस आयोजित किया गया, जिसमें देश के विभिन्न भागों में कार्यरत संगठनों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया, लेकिन राष्ट्रीय संगठन की दिशा में आम सहमति न बन सकी। यह निर्णय लिया गया कि दो वर्ष बाद 1885 में बंबई में दूसरा अखिल भारतीय नेशनल कांग्रेस आयोजित होगा और तब तक सारे नेता पारस्परिक विचार विमर्श के द्वारा एक आम सहमति बनाने का प्रयास करेंगे। मगर इस विचार को मूर्त और अंतिम रूप देने का श्रेय एक ब्रिटिश अवकाश प्राप्त आई0सी0एस0 अधिकारी ए0ओ0ह्यूम को मिला, जिसने दिसम्बर 1885 में कुछ प्रबुद्ध भारतीयों को साथ लेकर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना कर दी। डब्ल्यू0सी0 बनर्जी की अध्यक्षता में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन बंबई में सम्पन्न हुआ, जिसमें कुल 72 प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। एक महत्वपूर्ण प्रश्न है कि लार्ड रिपन तथा लार्ड डफरिन के गैर सरकारी राजनैतिक सलाहकार ए0ओ0ह्यूम को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की क्या आवश्यकता थी? इस प्रश्न का उत्तर उनके जीवनी लेखक वेडरवर्न ने दिया है :– "वायसराय लार्ड लिटन के शासन के अंतिम वर्ष ह्यूम महोदय को पक्का विश्वसा हो गया कि बढ़ती अशांति का मुकाबला करने के लिए कोई सुनियोजित कार्यवाही आवश्यक हो गई है.... भारत के भावी कल्याण के लिए खतरा पैदा हो गया है।" इससे लगता है कि ह्यूम महोदय ब्रिटिश साम्राज्य की सुरक्षा के लिए सुरक्षा कवच तैयार कर रहे थे। कतिपय अन्य साक्ष्य यह भी संकेत करते हैं कि ह्यूम महोदय उदारवादी थे और उनके मन में भारतीयों के हित की भावना भी थी।

कांग्रेस की स्थापना के साथ ही भारतीय राष्ट्रवाद संगठित होकर उत्तरोत्तर विकसित होता गया। कांग्रेस के साथ ब्रिटिश सरकार का संबंध आरम्भ में अच्छा रहा। कोलकाता में 1886 में सम्पन्न हुए कांग्रेस क द्वितीय अधिवेशन में सम्मिलित हुए प्रतिनिधियों को वाइसराय लार्ड डफरिंग ने उद्यान भोज दिया था। कांग्रेस के तीसरे अधिवेशन (1887) मद्रास में भी मद्रास के गवर्नर ने सुविधाएं प्रदान की, लेकिन इसके बाद ब्रिटिश सरकार का दृष्टिकोण बदल गया और लार्ड कर्जन के समय तक आते–आते कांग्रेस और ब्रिटिश सरकार के सम्बन्ध अत्यन्त कटु हो गये थे। लार्ड कर्जन ने 1899 में महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया– "कांग्रेस अपने पतन की ओर लड़खड़ाती जा रही है........ वह उसकी (कांग्रेस) शांतिपूर्ण मृत्यु में सहयोग कर सके।"

बाबा साहेब के जन्म (1891) तक भारतीय राष्ट्रीय कांगेस और ब्रिटिश सरकार के सम्बन्ध कटु हो गये थे यद्यपि इस दौरान भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस पर उदारवादियों का कब्जा रहा जिनकी राजभक्ति और विनम्रता पूर्ण निवेदन में पूर्ण आस्था थी। 1898 में आनन्द माहेन बोस ने कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में घोषणा की थी कि "शिक्षित वर्ग इंग्लैण्ड का शत्रु नहीं अपितु उसके सम्मुख बड़े कार्य में उसका प्राकृतिक और आवश्यक सहयोगी है।" उदारवादियों के लगातार संवैधानिक सुधारों की मांग से प्रभावित होकर ब्रिटिश सरकार ने 1892 ई0 में "Indian Councils Act " पारित किया, लेकिन इस अधिनियम से भारतीय राष्ट्रवादी संतुष्ट नहीं हुए। गोपाल कृष्ण गोखले के शब्दों में "अधिनियम की वास्तविक कार्यशीलता से उसके खोखलेपन का ठीक–ठीक ज्ञान हुआ।"

इसी समय ब्रिटिश सरकार ने अपनी फूट डालो और राज्य करो की नीति के तहत मुस्लिम समाज को अपनी ओर आकृष्ट करने की सुविचारित नीति आरम्भ की। इस नीति का आरम्भ 1870 में प्रकाशित डब्ल्यू हण्टर की प्रसिद्ध पुस्तक "इण्डियन मुस्लिम" से हुआ। सर सैय्यद अहमद खाँ और उनके अलीगढ़ आन्दोलन से ब्रिटिश सरकार को फूट डालो की नीति को बढ़ाने में सहयोग मिला। सैय्यद अहमद खाँ ने

1875 में अलीगढ़ में अलीगढ मुहम्मडन एग्लो ओरियण्टल स्कूल की स्थापना की जिसका शिलान्यास ब्रिटिश आई0सी0एस0 अधिकारी थियोडोर बैक ने की और वही इस कालेज का प्रथम प्रिंसिपल भी हुआ। बैक 1883 से 1899 तक इस पद पर बना रहा। कालेज के छात्रों को कांग्रेस से दूर रखने के लिए थियोडोर बैक ने छात्रावासों में स्वयं जाकर तथा अपने निवास स्थान पर छात्रों को बुलाकर उसको मानसिक रूप से इसके लिए तैयार किया। कांग्रेस विरोधी राजनैतिक विचारधारा को इंग्लैण्ड में प्रचारित करने के लिए पियोडोर बैक की सहायता से सर सैय्यद अहमद खाँ ने 1888 में 'यूनाइटेड इण्डियन पैट्रियाटिक एसोसियेशन की स्थापना की। मुस्लिम हितों की विशेष रक्षा के लिए सैय्यद अहमद खाँ ने सारस के राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द के साथ मिलकर "1893 में मुहम्डन एंग्लो ओरिएण्टल डिफेंस एसोसियेशन" की स्थापना की। इस एसोसियेशन के उद्घाटन भाषण में बैक ने यह घोषणा की कि— "सम्प्रति देश में दो आन्दोलन चल रहे हैं— पहला भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का और दूसरा गोहत्या विरोधी। पहला आन्दोलन ब्रिटिश विरोधी है और दूसरा मुस्लिम विरोधी।" सर सैय्यद अहमद खाँ भारतीय मुसलमानों से लगातार कांग्रेस के आन्दोलन से दूर रहने का आह्वान करते रहे।

इस प्रकार स्पष्ट होता हैकि बाबा साहेब के जन्म के समय तक ब्रिटिश सरकार की फूट डालो और राज्य करो की नीति सुसंगठित रूप चल रही थी जिसके द्वारा मुस्लिम समाज को ब्रिटिश सरकार का समर्थन बनाने का प्रयास सुनियोजित ढंग से चल रहा था।

भारत रत्न बाबा साहेब के जन्म की पूर्व सन्ध्या पर भारतीय समाज के अनेक वर्ग ब्रिटिश सरकार की नीतियों से असंतुष्ट हो विद्रोह का विगुंल बजा रहे थे, जिनमें आदिवासियों का विद्रोह भी उल्लेखनीय है। आदिवासी विद्रोह की एक लम्बी श्रृंखला है जिनमें कुछ प्रमुख इस प्रकार है—

1. चुआर तथा हो विदोह,
2. कोल विद्रोह— 1831,

3. सन्थाल विद्रोह– 1855–56

4. नायकड विद्रोह– 1867

5. सांवुदान नामक जादूगर का विद्रोह– 1882

6. कोंडा डोरा का विद्रोह– 1900

7. रामदुंड आन्दोलन,

8. उल्लूगन विद्रोह– 1899–1900

9. **मोपला विद्रोह**

मालावार में मोपला आदिवासियों ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर

लिया था। 1836–54 के मध्य मोपलाओं के 22 विद्रोहों का उल्लेख मिलता है।

10. **कोली विद्रोह**

कोली आदिवासियों ने 7 महीनों में से 28 डकैतियाँ डाली। इसके अतिरिक्त भील विद्रोह, खासी विद्रोह आदि उल्लेखनीय हैं।

देश के अनेक भागों में सरकार, जमीदारों, साहूकारों के शोषण से क्षुब्ध होकर कृषकों ने अनेक बार विद्रोह किया जिसमें कतिपय महत्वपूर्ण आन्दोलन इस प्रकार हैं–

1. **नील विद्रोह**

नील उत्पादको के शोषण से त्रस्त बंगाल के कृषकों ने 1859–60 में दिंगवर विश्वास ओर विष्णु विश्वास के नेतृत्व में विद्रोह किया। आन्दोलन सफल रहा और 1860 के अंत तक बंगाल में नील की खेती पूरी तरह खत्म हो गई।

2. पवना विद्रोह

बंगाल के पवना परगनें में 1873 में विद्रोह हुआ और 1876 तक चला। इस आन्दोलन से प्रभावित होने वाले प्रमुख जंमीदार द्विजेन्द्रनाथ ठाकुर थे। आर0सी0दत्त की रचना 'पेजेट्री ऑफ बंगाल' में इस आन्दोलन का विवरण है।

3. ढक्कन उपद्रव

महाराष्ट्र के पूना और अहमदनगर जिलों में 1875 में कृषकों ने विद्रोह आरम्भ किया और धीरे–धीरे सम्पूर्ण ढक्कन में विद्रोह की आग फैल गई। सरकार ने अन्ततः विद्रोह को दवा दिया लेकिन सरकार ने 1879 में ढक्कन कृषक राहत अधिनियम पारित कर किसानों को महाजनों के खिलाफ कुछ संरक्षण प्रदान किया।

4. वासुदेव बलवंत फडके का विद्रोह

महाराष्ट्र में 1879 में वासुदेव बलवंत फडके के नेतृत्व में रामोशी कृषकों ने विद्रोह किया। सरकार ने सैन्य कार्यवाही करके पड़के को गिरफ्तार कर लिया और उसके बाद दौलता रामोशी के नेतृत्व में एक डाकू दल 1883 तक सक्रिय रहा।

बाबा साहेब के जन्म की पूर्व सन्ध्या पर देश के श्रमिक वर्ग में भी जाग्रति आ रही थी और वे संगठित होकर हड़ताल आदि कर रहे थे। बंगाल में शशिपद बनर्जी ने मजदूरों का एक क्लब स्थापित किया और 'भारत श्रमजीवी' (1874) नामक पत्रिका निकाली।[1] 1880 में बंबई मिल हैंड्स एसोसियेशन की स्थापना की, यद्यपि यह सच्चे अर्थों में ट्रेड यूनियन नहीं था।[2] बंबई और मद्रास में 1882 से 1890 के मध्य 25 हड़तालों का उल्लेख मिलता है। सरकार ने श्रमिकों की दशा में सुधार लाने के लिए 1881 में तथा 1891 में फैक्ट्री एक्ट पारित करके श्रमिकों के काम के घण्टा तथा साप्ताहिक अवकाश निर्धारित किया, लेकिन श्रमिकों की दशा में कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं हुआ

[1] प्रो0 सुमित सरकार, आधुनिक भारत. पृ0सं0– 79
[2] प्रो0 सुमित सरकार, आधुनिक भारत. पृ0सं0– 79

उनमें असंतोष बढ़ता गया। बाबा साहेब के जन्म की पूर्व सन्ध्या पर विश्व के अन्य देशों की भाँति भारत में भी श्रमिक–मालिकों के शोषण के जबरदस्त शिकार थे।

देश के सामाजिक परिदृश्य पर नगर डालने से स्पष्ट होता है कि भक्ति आन्दोलन तथा पुनर्जागरण के बावजूद सामाजिक ताने–बाने में कोई विशेष अन्तर नहीं आया था। परम्परागत वर्ण–व्यवस्था सामाजिक ढांचे का आधार बनी रही। वर्ण--व्यवस्था की उत्पत्ति का सर्व प्रथम विशद वर्णन ऋग्वेद के 10वें मण्डल के पुरुष सूक्त में मिलता है, जिसमें विराट पुरुष के शरीरके विभिन्न अंगों से चारो वर्णों का प्रादुर्भव हुआ– मुख से बाह्मण का, भुजा से क्षत्रिय का, उदर से वैश्य का तथा पैर से शूद्र का। ऋग्वैदिक काल में वर्ण का आधार कर्म था, जन्म नहीं, लेकिन उत्तर–वैदिक काल तक आते–आते वर्ण–व्यवस्था जन्मजात हो गई और वर्ण–परिवर्तन अब असंभव हो गया। वर्ण–व्यवस्था के शीर्ष पर स्थित ब्राह्मण वर्ण को सर्वाधिकार तथा निम्नतम् स्तर पर स्थित शूद्र को न्यूनतम अधिकार था। बाबा साहेब के जन्म के पूर्व सन्ध्या तक यही वर्ण व्यवस्था समाज का मूल आधार बनी रही यद्यपि भगवान बुद्ध (567 B.C.- 487 B.C.) ने वर्ण–व्यवस्था के विरुद्ध व्यापक आन्दोलन छेंड़ा। "जातिगत पूँछ–आचरण पूँछ" का नारा देकर बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय के लिए अपने धर्म का द्वार सब नर–नारियों के लिए खोल दिया था। दुःख रो पीड़ित मानवता का त्राण ही बौद्ध धर्म का लक्ष्य था। सदियों – सदियों से शोषित–दलित मानवों ने सहर्ष बौद्ध धर्म को अंगीकार कर लिया था। बौद्ध धर्म के पतन के पश्चात् मानव समानता का यह आन्दोलन मंद पड़ गया, जिसे भक्ति काल में सूफी संतों तथा क्रांतिदर्शी महात्मा कबीर ने मुखरित किया–

"एक बूँद एक मल मतूर, एक चाम एक गूदा।
एक ज्योति से सब उत्पन्ना, को वाभन को शूदा।।"

कबीर ने छुआ–छूत का विरोध कर मानव समानता की बात कही। कालान्तर में 19वीं सदी के पुनर्जागरण आन्दोलन में स्वामी विवेकानन्द आदि महापुरुषों

ने छुआ—छूत को समाप्त कर मानव समानता का उद्घोष किया। ये सभी असफल रहे और वर्ण—व्यवस्था अपने कठोर स्वरूप में चलती रही।

भारतीय समाज (हिन्दू समाज) की एक बड़ी विशेषता जाति व्यवस्था थी। उत्तरवैदिक काल (1000 B.C.- 600B.C.) में जाति व्यवस्था का प्रादुर्भाव हुआ, जिसमें लगातार वृद्धि होती गई। गुप्तोत्तर काल में बड़ी संख्या में जातियों का प्रगुणन हुआ और कायस्थ (कायस्थ जाति का सर्वप्रथम उल्लेख याज्ञवल्य स्मृति में हुआ है) डोम्ब, आर्भीर तथा व्यधसीरन (बहाई पर कार्य करने वाले) जैसे अनेक जातियों का उदय हुआ। इन जातियों में अनेक अछूत जातियाँ थीं। भारतीय इतिहास में अस्पृश्य जातियों का उदय 5वीं सदी ई0पूर्व में माना जाता है। अस्पृश्य जातियों और उनकी दयनीय स्थिति ने विदेशियों तक का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया है। महाराज चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के समय 399 ई0 में भारत आने वाले चीनी यात्री फाह्यान, महाराजाधिराज हर्षवर्धन के समय 629ई0 में भारत आने वाले चीनी यात्री ह्वेनसांग तथा महमूद गजनवी (आक्रमण भारत पर 1001 ई0 में) के साथ भारत आने वाले अलवरूनी ने अनेक अस्पृश्य जातियों का उल्लेख कर उनकी दयनीय स्थिति का विशद वर्णन अपनी पुस्तकों, लेखों में किया है। ह्वेनसांग अपने यात्रा वृत्तान्त—सिन्यू कि में लिखता है कि ''अछूत जातियों को सफाई, मुर्दों को जलाना, मृत पशुओं को हटाना आदि गन्दे कार्य करने पड़ते थे। वे गाँव के बाहर निवास करते थे और जब कभी वे गाँव में आते थे तो लकड़ी पीटते थे व ढ़ोल बजाते थे जिससे लोगों को उनके आने की सूचना प्राप्त हो सके वे अछूत के स्पर्श या परछाई से बच सकें।'' अछूतों को सामाजिक, धार्मिक या राजनैतिक अधिकार रंचमात्र नहीं था। वे दयनीय और अभिशप्त पाशविक जीवन जीने के को विवश था।''

भगवान बुद्ध, महात्मा कबीर, स्वामी विवेकानन्द, ज्योविता फूले आदि ने इसके विरुद्ध अवाज उठाई, लेकिन अस्पृश्यता के कलंक को समाप्त करने में सफल रहे। बाबा साहेब के आजीवन संघर्ष के फलस्वरूप, भारतीय संविधान के भाग 3 में

वर्णित मूल अधिकारों में अनुच्छेद 17 में अस्पृश्यता के उन्मूलन का प्रावधन कर समाप्त किया गया।

बाबा साहेब के जन्म के समय हिन्दू समाज में अन्य बुराईयाँ भी थीं। शूद्रों और अछूतों की ही भांति स्त्रियो की दशा भी दयनीय थी। सम्पत्ति के अधिकार से वंचित स्त्रियों पर अनेक बन्धन और अयोग्यतायें लाद दी गई थीं। उन्हें शिक्षा के अधिकार से वंचित कर दिया गया था यद्यपि ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना के बाद नारी शिक्षा के कुछ प्रयास किये गये। कोलकाता में 1819 में 'तरुण स्त्री सभा' की स्थापना हुई, परन्तु स्त्री शिक्षा की दिशा में वास्तविक कार्य जे0ई0डी0 वेधून ने किया। उन्होंने 1849 में कलकत्ता में एक बालिका विद्यालय स्थापित किया। पं0 ईश्वर चन्द्र विद्यासागर ने भी इस दिशा में महत्वपूर्ण प्रयास किया। वे बंगाल के कम से कम 35 बालिका विद्यालयों से संबद्ध थे। बंबई के एलफिंस्टन इन्स्टीट्यूट के विद्यार्थियों ने भी स्त्री शिक्षा के प्रसार में योगदान दिया था। 1854 के चार्ल्स बुड के पत्र में भी स्त्री शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया गया था। फिर भी बाबा साहेब के जन्म के पूर्व सन्ध्या पर स्त्री शिक्षा की विशेष प्रगति नहीं हो सकी थी।

भारतीय समाज में अनेक कुरीतियाँ भी व्याप्त थीं। हिन्दू समाज की ऐसी ही एक कुरीति थी– सती प्रथा, जो सदियों से चली आ रही थी। राजाराम मोहन राय ने इसके विरुद्ध संगठित आन्दोलन व्यापक स्तर पर छेड़ा और अन्ततः विलियम वैटिंग की सरकार ने 1829 में सती उन्मूलन अधिनियम पारित किया। धीरे–धीरे यह आमुनाषिक प्रथा समाप्त हुई।

बाल विवाह एक अन्य कुरीति थी। 1872 ई0 में 'नेटिव मैरिट एक्ट' पारित किया गया, जिसमें 14 वर्ष से कम उम्र की कन्याओं का विवाह प्रतिबन्धित कर दिया गया, लेकिन यह एक्ट विशेष प्रभावी नहीं हो सका। अंत में एक परसी सुधारक वी0एम0 मालावारी के प्रयत्नों से 1891 ई0 में 'सम्मति आयु अधिनियम (Age of Constent Act)'

पारित हुआ, जिसमें 12 वर्ष से कम आयु की कन्याओं के विवाह पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया।

विधवा विवाह पर प्रतिबन्ध लगने के कारण विधवाओं की दशा और भी दयनीय हुई थी। यद्यपि ऋग्वेद में विधवा विवाह का उल्लेख मिलता है, लेकिन कालान्तर में विधवा विवाह पर प्रतिबन्ध लग गये। पुनर्जागरण में विधवा विवाह के समर्थन में व्यापक आन्दोलन हुआ। इस दिशा में सबसे उल्लेखनीय कार्य कलकत्ता संस्कृत कालेज के आचार्य पं0 ईश्वरचन्द्र विद्या सागर ने किया। उन्होंने प्रमाण प्रस्तुत किया कि धर्मशास्त्र विधवा विवाह का समर्थन करते हैं। उनके प्रयासों से ब्रिटिश सरकार ने 1856 में 'हिन्दू विवाह पुनर्विवाह अधिनियम (Hindu Widow Remarriae Act)' पारित कर विधवा विवाह को वैधानिक मान्यता दी। इस दिशा में बंबई के प्रोफसर डी0के0 कर्वे और मद्रास के समाज सुधारक वीरेश लिंगम पट्टलू ने विशेष प्रयास किया। प्रो0 कर्वे ने विधुर होने पर 1893 में स्वयं एक ब्राह्मण विधवा से विवाह किया । उन्होंने 1899 ई0 में पूना में एक विधवा आश्रम स्थापित किया। इस दिशा में जस्टिस रानाडे ने भी विशेष योगदान दिया था, उन्होंने 1870 में 'ऑल इण्डिया वीडो रीमैरिज एसोसियेशन' की स्थापना की थी।

शिशु वध प्रथा भी एक अन्य कुरीति थी। यह विशेषकर बंगालियों और राजपूतों में प्रचलित थी। महाराजा रणजीत सिंह के पुत्र दिलीप सिंह ने शिशु वध प्रथा का इस प्रकार उल्लेख किया है– "उसने स्वयं अपने नेत्रों से देखा कि उसकी अपनी बहनों को बोरी में बन्द करके नदी में फेंक दिया गया।" इसे कानून बनाकर धीरे–धीरे रोंका गया। 1870 में इस प्रथा को रोकने के लिए कुछ कानून बनाये गये।

पर्दा प्रथा भी एक बड़ी कुरीति थी जो सदियों से चली आ रही थी। ऐतिहासिक रूप से पर्दा प्रथा का उदय गुप्तकाल में हुआ था, जो इस्लाम के आने के बाद और बढ़ी। यह प्रथा न केवल हिन्दू धर्म में अपितु इस्लाम धर्म में भी व्यापक स्तर पर फैली थी। राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम में गाँधी जी के आह्वान पर बड़ी संख्या में

महिलायें घर से बाहर निकली थीं। यद्यपि अभी भी अनेक पिछड़े क्षेत्रों तथा इस्लाम में यह प्रथा जारी है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब के जन्म की पूर्व सन्ध्या के भारतीय समाज में अस्पृश्यता जैसी भयानक बुराइ व्याप्त थी साथ ही नारियों की दशा अत्यन्त दयनीय थी यद्यपि इसके विरुद्ध 19वीं सदी के समाज और धर्म सुधारकों ने व्यापक स्तर पर आन्दोलन छेंड़ा लेकिन अस्पृश्यता उन्मूलन जैसी सामाजिक बुराइयों के प्रश्न पर कोई सफलता नहीं मिल सकी थी। बाबा साहेब और महात्मा गाँधी ने इसके विरुद्ध एक लम्बा संघर्ष छेड़ा जिसके फलस्वरूप भारतीय संविधान में अस्पृश्यता का उन्मूलन कर (अनुच्छेद–17, भाग–3) इसे समाप्त किया गया। यद्यपि महाराष्ट्र में बाबा साहेब के पूर्व महात्मा जयोतिबा फूले और उनके सत्यशोधक समाज ने 1870 के दशक में महाराष्ट्र में ब्राह्मण विरोधी आन्दोलन का पहला बिगुल बजाया था। महात्मा फूले ने 1872 मं गुलामगीरी नाम एक पुस्तक लिखी तथा 1873 में सत्यशोधक समाज नामक संगठन बनाया, जिसका लक्ष्य था, वंचक ब्राह्मणों एवं उनके अवसरवादी शस्त्रों से निम्न जातियों की रक्षा करना। महात्मा फूले का आन्दोलन धीरे–धीरे मराठा किसानों के जाति समूहों में जड़े जमा लिया। 1890 के दशक से इसे कोल्हापुर के महाराजा का संरक्षण भी मिलने लगा बाद में बाबा साहेब ने महात्मा फूले के आन्दोलन को न केवल बढ़ाया अपितु एक नया आयाम देकर आन्दोलन को सफलीभूत किया।

जातिगत आन्दोलन की ऐसी ही रूप रेखा मद्रास में भी देखी गई। वहाँ शिक्षा एवं सेवाओं पर ब्राह्मणों के असंदिग्ध आधिपत्य को तमिलनाडु के शिक्षित वल्लाल, तेलगू, रेड्डी, कम्मा एवं नायर चुनौती देने लगे थे। ईशयिक का अध्ययन इस बात को स्पष्ट करता है कि ब्रिटिश सरकार ने इस प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया।[1] 1886 में मद्रास के गवर्नर द्वारा दिये गये दीक्षांत भाषण के अंश बहुत रोचक हैं–"आप शूद्र द्रविड जाति के हैं। मैं चाहूँगा कि आपमें संस्कृत पूर्व तत्व और भी अधिक प्रबल हों.... संस्कृत से तो

---

[1] प्रो0 सुमित सरकार, आधुनिक भारत, पृ0सं0– 76

आपका संबंध उतना ही होना चाहिए जितना कि हम अंग्रेजों का है। कुछ बदमाश यूरोपियन कभी–कभी भारत के मूल लोगों को 'हब्शी' कहते सुने गये हैं, किन्तु कम से कम वे घमण्डी संस्कृत भाषियों या लेखकों की भाँति दक्षिण के लोगों को वानर सेना तो नहीं कहते।"[1] अनेक अन्य आंतरिक तनावों की भांति यहाँ भी साम्राज्यवादियों ने संकीर्ण चेतना को उभारने के लिए बड़ी चतुराई से वास्तविक शिकायतों का प्रयोग किया।

बाबा साहेब के जन्म की पूर्व सन्ध्या के भारत की धार्मिक स्थिति का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि हिन्दू धर्म अनेक कर्मकाण्डों, अंधविश्वासों, रूढ़ियां एवं परम्पराओं से जकड़ा हुआ था। ब्राह्मणवाद, पुरोहितवाद का धर्म पर वर्चस्व था। अछूतों को मन्दिर प्रवेश सहित रंचमात्र का भी धार्मिक अधिकार नहीं था। हिन्दू धर्म का वास्तविक स्वरूप ओझल हो गया था। इस्लाम में भी अनेक बुराइयां आ गई थीं। इसका लाभ उठाकर ईसाई मिशनरियों ने सुनियोजित तरीके से सुसंगठित रूप से धर्म प्रचार आरम्भ कर धर्म परिवर्तन का कार्य प्रारम्भ किया। ईसाई धर्म प्रचारकों को 1813 के चार्टर ऐक्ट से भारत आने की अनुमति मिली और शीघ्र ही देश के विभिन्न भागों में सरकार के प्रत्यक्ष सहयोग से अनेक मिशनरियाँ स्थापित हुईं। ईसाई मिशनरियों ने हिन्दू और इस्लाम धर्म की बुराइयों का लाभ उठाकर प्रचार–प्रसार आरम्भ किया तथा समाज के कमजोर, निम्न वर्ग को अनेक प्रकार का प्रलोभन देकर धर्म परिवर्तन आरम्भ किया। 1850 में पारित किये गये धार्मिक अयोग्यता अधिनियम ईसाई धर्म स्वीकार करने वाले को लाभान्वित किया गया। धीरे–धीरे भारतीयों को विश्वास होता जा रहा था कि ब्रिटिश सरकार उन्हें ईसाई बनाने की योजना बना रही है।

1880 के दशक के पूर्व साम्प्रदायिक दंगे भारत में कदाचित ही हुए थे। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में इतिहास के प्रोफेसर कूपलैण्ड महोदय ने अपनी पुस्तक

---

[1] वही, पृ0सं0– 76

"कांस्टीट्यूशन प्रॉब्लम इन इण्डिया के पृष्ठ सं0– 29 पर 1808 ई0 की वनारस की एक घटना का उल्लेख करते हैं, जिसमें हिन्दुओं ने 50 मस्जिदों को नष्ट कर दिया था।[1]

साम्प्रदायिक वैमनस्य की एक घटना 1871–72 में हुई, इसके पश्चात् 1885 के बाद साम्प्रदायिक दंगों की एक श्रृंखला आरम्भ होती है। कूपलैण्ड महोदय ने तो यहाँ तक लिखा है कि भारत में ब्रिटिश शासन के बने रहने का कारण ही हिन्दू मुस्लिम समस्या है।

गैराल्ड वैरियर 1883 एवं 1891 के बीच पंजाब में ऐसे 15 बड़े दंगों का उल्लेख करते हैं कि जिन्होंने पूर्वी संयुक्त प्रान्त और बिहार में 1888 और 1893 के बीच चरम रूप धारण कर लिया था।[2] बलिया, वनारस, आजमगढ़, आरा, गया और पटना के जिले इनसे बुरी तरह प्रभावित हुए। कलकत्ता के औद्योगिक उपनगरों में पहले दंगे की सूचना मई 1891 में मिलती है। इसके बाद टीटागढ़ और गार्डनरीच में 1896 में बकरीद पर कुछ गड़बड़ी हुई तथा उत्तरी कलकत्ता में 1897 में बड़े पैमाने पर टल्ला में दंगे हुए।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब के जन्म की पूर्व सन्ध्या पर भारत ब्रिटिश साम्राज्य के पूर्णतया न केवल अधीन ही हो गया था अपितु उनकी एक शताब्दी से चली आ रही नीतियों से असंतुष्ट हो भारतीयों ने 1857 के विद्रोह का विगुल बजाया, लेकिन प्रयास असफल रहा। विद्रोह के दमन के तत्काल बाद ही ब्रिटिश सरकार ने 1858 का अधिनियम पारित करके भारत पर ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन को समाप्त कर सीधे अपने नियंत्रण में ले लिया गया। इसी समय राम मोहन राय और उनके ब्रह्म समाज के नेतृत्व में पुनर्जागरण आरम्भ हुआ, जो आर्य समाज, थियोसाफिकल सोसाइटी, रामकृष्ण मिशन से होता हुआ इस्लाम, पारसीक तथा सिक्ख धर्म को प्रभावित कर सामाजिक और धार्मिक क्षेत्रों में पाखण्डों, आडम्बरों, रूढ़ियों,, कुप्रभावों, कुरीतियों, विदूपताओं की आलोचना करके स्वस्थ समाज के निर्माण का प्रयास किया। इसी समय

[1] प्रो0 कूपलैण्ड, कांस्टीट्यूशन प्राब्लम्स इण्डिया, पृ0सं0– 29
[2] प्रो0 सुमित सरकार आधुनिक भारत पृ0सं0–78

राष्ट्रवाद का उदय हुआ जो भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ और भी विकसित होता गया, लेकिन ब्रिटिश शासकों ने फूट डालो और राज्य करो की नीति के तहत क वर्ग या जाति को दूसरे के खिलाफ भड़का कर अपना समर्थक बनाने का प्रयास किया। सामाजिक रूप में वर्ण--व्यवस्था और जाति–व्यवस्था अपने विकृत रूप में मौजूद थी, जिसके द्वारा समाज के एक बड़े वर्ग के साथ घोर अत्याचार और अन्याय हो रहा था। धार्मिक रूप में ईसाई धर्म का प्रचार–प्रसार हो रहा था और भारतीयों में एक प्रकार का धार्मिक भय व्याप्त था। ब्रिटिश सरकार अपनी नीति के तहत हिन्दू–मुस्लिम विभेद को भड़का रही थी, जिससे 1880 के दशक के बाद बड़ी संख्या में साम्प्रदायिक दंगे आरम्भ हुए। भारत का लगातार आर्थिक दोहन चल रहा था, जिसके विरुद्ध दादा भाई नौरोजी, आ0सी0 दत्त जैसे बुद्धजीवियों ने आवाज बुलन्द की। ऐसे रोग ग्रस्त भारत में एक तिरस्कृत और बहिष्कृत समाज में बाबा साहेब डा0 बी0आर0 अम्बेडकर का जन्म हुआ।

अध्याय
तीन

अध्याय– तीन

''बाबा साहेब का जन्म और महार जाति का इतिहास''

भारत भूमि महापुरूषों की रही है जो समय–समय में अवतरित होकर अपने कृतित्व और व्यक्तित्व से स्वर्णिम इतिहास लिखे हैं। राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, अशोक, कनिष्क, हषवर्धन, कबीर, नानक, विवेकानन्द, गाँधी जी व बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर आदि ने अविष्मरणीय कार्य किया है और इस भूमि को धन्य किया है। महात्मा फुले भारत रत्न वोधिसत्य बाबा साहेब डा0 भीम राव अम्बेडकर महाराष्ट्र में निवास करने वाली अछूत महार जाति में जन्म लेकर महार जाति को गौरान्वित किया।[1]

बाबा साहेब का जन्म

बाबा साहेब का जन्म 14 अप्रैल 1891ई0 में महूँ (मध्य प्रदेश स्थित) छावनी की एक बैरक में हुआ। उनके पिता का नाम रामजी सकपाल और माता का नाम भीमा बाई था। उनके पितामह का नाम मोलाजी सकपाल था जो ब्रिटिश सेना में एक सिपाही थे। उनका पैतृक गाँव महाराष्ट्रके रत्नगिरि जिले में दापोली तालुके में स्थित अम्बावडे नामक गाँव था। मालो जी सकपाल की 2 सन्तानें थीं। पहला बेटा रामजी सकपाल और दूसरी बेटी मीराबाई।

बड़े होकर रामजी सकपाल भी ब्रिटिश सेना में भर्ती हो गए। उनके रेजीमेंट के सूबेदार मेजर धर्मा मखाडकर थे जो महार जाति के थे। मेजर धर्मा महाराष्ट्र के पाडे जिले के मुखाड गाँव के निवासी थे। उनका परिवार क्षेत्र का सम्मानित परिवार था और

---

[1] मधुमिलये– बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0– 11।

उनके सभी सातों भाई ब्रिटिश सेना में महत्वपूर्ण ओहदों पर थे।[1] धीरे–धीरे रामजी सकपाल और सूबेदार धर्मा मुखाडकर में घनिष्ट संबंध स्थापित हुआ। मेजर धर्मा ने अपनी बेटी भीमाबाई का विवाह रामजी सकपाल के साथ करने का निश्चय किया लेकिन आर्थिक असमानता के कारण मेजर धर्मा के परिवार के लोगों ने इस प्रस्ताव का विरोध किया, लेकिन अंत में सभी सहमत हो गए और 1865 में रामजी सकपाल और भीमाबाई का विवाह सम्पन्न हुआ। विवाह के समय रामजी सकपाल की उम्र 21 वर्ष और भीमाबाई की उम्र 13 वर्ष की थी।[2] भीमाबाई ने अपने मायके से दृढ़ संकल्प के साथ कहा कि मैं तब ही मायके जाऊँगी, जब जेवरों से भरी पूरी अमीरी प्राप्त करूँगी।[3]

भीमाबाई बड़ी बातूनी, मानी हठीली और धर्मपरायण महिला थीं। वे गौरवर्ण की थीं। सूबेदार रामजी सकपाल और भीमाबाई के कुल 14 सन्तानें पैदा हुईं। 14वाँ रत्न भीम के रूप में प्राप्त हुआ। इन 14 सन्तानों में से 7 अकाल ही काल कलवित हुए, जिसके कारण माँ भीमाबाई बहुत दुःखी रहती थीं। जीवित 7 सन्तानों में से 4 पुत्रियां थीं–1. गंगा, 2. रमा, 3. मंजुला, 4. तुलसा और तीन पुत्र थे जिनके नाम– 1. बालाराव, 2. आनन्दराव और 3. भीमराव।

माँ भीमाबाई के 14वें रत्न भीम के जन्म के पूर्व की एक घटना काफी रोचक है। सूबेदार रामजी सकपाल अनेक स्थानों पर कार्यरत हुए। 1888 ई0 में महूँ भेज दिये गए। महूँ छावनी ब्रिटिश सेना की पश्चिमी क्षेत्र की सेना का प्रधान केन्द्र था। महूँ मिलिट्री हेडक्वार्टर ऑफ वार एम0एच0ओ0 डब्लू का संक्षिप्त रूप था। मंहूँ में एक विचित्र घटना घटी। रामजी सकपाल के एक चाचा बहुत पहले सन्यास ग्रहण कर लिए थे जिनका कई वर्षो से कुछ पता नहीं था। एक दिन वे घूमते–घूमते कुछ सन्यासियों के साथ महूँ आ गए जिन्हें रामजी सकपाल के परिवार के एक सदस्य ने देख लिया और पहचान लिया। रामजी सकपाल को जब इसकी जानकारी हुई तो तत्काल उनको लेने

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 9

[2] वही, पृष्ठ सं0 9

[3] सवादकर, का0वि0, बाबा साहेवानी सांगित लेली अठवण, पृष्ठ सं0–11

चल पड़े और अपने घर चलने की बहुत अनुनय विनय की लेकिन वे आए नहीं, तथापि उन्होंने रामजी को आशिर्वाद दिया कि अपने कर्तव्य से इतिहास पर चिरंतन छाप डालने वाला, अपने घराने का नाम रोशन करने वाला एक पुत्र तेरे पैदा होगा।[1]

संत पुरुष की भविष्यवांणी सत्य सिद्ध हुई और महूँ में ही 14 अप्रैल 1891 ई0 को भीम के रूप में अनमोल रत्न प्राप्त हुआ। महूँ में जिस स्थान पर भीम का जन्म हुआ था, वहाँ इस समय कोई वैरक तो नहीं हैं, लेकिन इस स्थान चिन्हित कर दिया गया है। पास में एक चबूतरा है और उसके पास एक बोर्ड है जिस पर लिखा है कि यहीं पर गणतंत्र भारत के संविधान निर्माता बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर का 14 अप्रैल 1891 को जन्म हुआ था। महूँ टाउन एरिया कार्यालय के सामने एक ऊँचे स्तम्भ पर बाबा साहेब की आदमकद भव्य प्रतिमा स्थापित है। उनकी स्मृति में बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान संस्थान की स्थापना हुई।

सूबेदार रामजी सकपाल को भीम के जन्म के एक वर्ष के भीतर ही एक बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। 1892 में बिटिश सरकार ने ब्रिटिश सेना मे महारों की भर्ती पर प्रतिबन्ध लगा दिया और इसी के साथ सूबेदार रामजी को अनिवार्य सेवा–निवृत्त दे दी गई। पेंशन के रूप में थोड़ी सी राशि मिलती थी जिसमें पूरे परिवार का भरण–पोषण करना अत्यन्त कठिनाई से हो पाता था। भीमाबाई सांताक्रूज में रास्ते पर कंकड़–पत्थर पसारने का काम किया करती थीं।[2] कठिन परिस्थितियों में सूबेदार ने अपने पैतृक गांव आम्वडे आने का निश्चय किया और पैतृक जमीन पर खेती करना आरम्भ किया। बच्चे बड़े हो रहे थे और उनकी पढ़ाई का बन्दोवस्त भी करना था। यद्यपि गांव के समीप दापोली में सैनिक छावनी थी लेकिन शिक्षा की कोई समुचित व्यवस्था नहीं थी। वे शिक्षा के महत्व को समझते थे, इसलिए बच्चों की पढ़ाई को लेकर परेशान थे। वे कई स्थानों पर सरकारी सेवा के लिए प्रार्थना पत्र भेजे। इस समय महाराष्ट्र सहित देश का एक बड़ा भाग अकाल की चपेट में था। ब्रिटिश सरकार सतारा

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब भीमराव अम्बेडकर जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0–
[2] सवादकर का0वि0, बाबा साहेवानी सांगितलेली आठवण।

में अकाल पीड़ितों को राहत देने के उद्देश्य से तालाब खोदने का कार्य आरम्भ किया। सूबेदार रामजी को निरीक्षक के पद पर नियुक्त किया गया और अब वे परिवार सहित गाँव छोंड़कर सतारा आ गये। सतारा में शिक्षा की अच्छी व्यवस्था थी। यह घटना 1896 ई0 की थी। सतारा में ही भीम की अपने बड़े भाई आनन्दराव के साथ स्कूली शिक्षा आरम्भ हुई और उसी के साथ अछूत होने का बोध भी होने लगा।

सतारा के इसी माध्यमिक स्कूल में पेंडसे नामक एक ब्राह्मण अध्यापक थे, जो भीम से स्नेह रखते थे। इसी स्कूल में आंवडकर नाम एक दूसरे अध्यापक भी थे। वे ब्राह्मण जाति के थे और अपने नाम के साथ आंवेडकर उपनाम लिखते थे। वे डा0 अम्बेडकर के पैतृक गाँव अंवावडे के रहने वाले थे। वे भीम से बहुत स्नेह रखते थे। एक दिन गुरुवर अंवावडे ने बालक भीम को अपने पास बुलाया और खाने के लिए रोटी सब्जी दिया। यह दिनचर्या काफी दिनों तक चलता रही। प्यार से दी गई रोटी और सब्जी का स्वाद भीम को अच्छा लगता था। गुरुवर अंवावडे ने भीम के लिए एक और अविस्मरणीय कार्य किया। उन्होंने भीम से कहा कि वह सरल–सुलभ आंवेडकर नाम धारण करे। उन्होंने भीम के सहमति व्यक्त करने पर तत्काल स्कूल के कागजात में भीम का नाम बदलकर आम्बेडकर कर दिया। आम्वेडकर गुरू जी को अपना नाम अमर करने की ऐसी बुद्धि प्राप्त हुई, यह उनका भाग्य ही कहना चाहिए।[1]

आंवेडकर गुरू जी को अपने प्रिय शिष्य का ध्यान बृद्धावस्था तक बना रहा। डा0 अम्बेडकर जब 1930 में लंदन में होने वाले प्रथम गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए लंदन जा रहे थे तब गुरुवर आंवेडकर ने अपने प्रिय शिष्य के पास शुभेच्छा सूचक और अभिनन्दन परख पत्र दिया, जिसे अमूल्य धरोहर मानकर बाबा साहेब अंत तक रखे रहे।[2]

---

[1] कीर, धनंजय, बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 18।

[2] डब्लू0 एन0 कुबेर, आधुनिक भारत के निर्माता डा0 भीमराव अम्बेडकर, पृष्ठ सं0–8–9

माँ भीमाबाई का देहान्त

बाबा साहेब के भाग्य में ईश्वर ने माँ का प्यार--दुलार बहुत दिनों तक नहीं लिखा था। इतिहास का एक बड़ा संयोग है कि कुछ महापुरुषों को माँ के प्यार से वंचित होना पड़ा। इनमें से उल्लेखनीय महामानव भगवान बुद्ध थे। युवराज सिद्धार्थ (भगवान बुद्ध) के जन्म (567 B.C.) के 8वें दिन उनकी माँ महामाया या मादेवी का देहान्त हो गया और उनका लालन–पोषण उनकी मौसी महाप्रजापति गौतमी ने किया जो भगवान की छीरदायिका बनी और बौद्ध धर्म में दीक्षित होने वाली प्रथम महिला बनी थीं। दूसरे महामानव क्रांतिदर्शी कबीर थे जिनका जन्म होते ही लोक–जाल के भय से उनकी मा (विधवा ब्राह्मणी)ने फेंक दिया और नीमा और नीरू नामक जुलाहे दम्पत्ति ने लालन–पोषण किया। तीसरे महामानव बाबा साहेब अम्बेडकर रहे जिनकी माँ भीमाबाई का 1897ई0 में जब वे 6 वर्ष के थे, देहान्त हो गया। माँ के प्यार से वंचित भीम का लालन–पोषण बुआ मीराबाई ने किया। डा0 अम्बेडकर ने जीवन के इस अंग से समानता रखने वाले भगवान बुद्ध और महात्मा कबीर को ही अपना और उन्हीं का गुरु माना, का सर्वाधिक प्रभाव पड़ा था और अंत में बुद्ध की हिमछाया में शरण लेकर महापरि निर्वाण को प्राप्त हुए।

बुआ का बटुआ चोरी करना

माँ भीमाबाई के देहान्त के पश्चात् बुआ मीराबाई ने ही भीम का पालन–पोषण किया। भीम का अपनी बुआ से विशेष लगाव हो गया। शैशवकाल की शरात के लिए जब कभी पिताजी नाराज होते थे, तब भीम बुआ के आंचल में छिप कर अपने को बचाता था। बुआ यद्यपि कूबड़ी थी फिर भी भीम की अच्छी देखभाल देख–भाल करती थी। एक बार भीम की इच्छा हुई कि अच्छे बच्चों के साथ सतारा जा कर मिल में नौकरी करेगा और अपने पैर पर खड़ा होगा। सतारा जाने के लिए किराए हेतु वह बुआ का बटुआ चोरी करना चाहा जिसे बुआ कमर में बाँधती थी। बालक भीम ने तीन रात प्रयास किया लेकिन बुआ जग जाती थी और योजना असफल हो जाती थी। चौथी रात्रि बालक भीम

को बटुआ चुराने में सफलता मिली। बटुये में मात्र 2 पैसे थे, इससे बालक भीम को बहुच पश्चाताप हुआ। इस घटना ने भीम के जीवन पर गहरा प्रभाव डाला। उसने सोंचा कि ऐसी चालाकी कर पलायनं करने की अपेक्षा मेहनत से अध्ययन कर स्वयं अपनी उन्नति करें। अपनी उन्नति साध्य करना ही श्रेष्ठकर है। उस दिन से भीम ने अध्ययन के लिए कठोर परिश्रम करने का निश्चय किया। अपनी सच्ची लगन और परिश्रम से अध्यापकों का ध्यान अपनी पढ़ाई की ओर आकृष्ट किया।

बाबा साहेब का सौतेली माँ से सम्बन्ध

भीमाबाई के देहान्त के पश्चात् सूबेदार रामजी ने दूसरा विवाह न करने का संकल्प लिया। वे जानते थे कि सौतेली माँ के साथ बच्चों का भविष्य अच्छा नहीं होगा, लेकिन ईश्वर को कुछ और मंजूर था। बच्चों की देख--भाल ठीक से नहीं हो पाती थी क्योंकि सूबेदार को काम के सिलसिले में बाहर अधिक रहना पड़ता था। रामजी सूबेदार की बहन मीराबाई भी कुबड़ी थी, जिससे वह अधिकाधिक परिश्रम करके भी परिवार की ठीक से देख–भाल नहीं कर पाती थी। अंत में विवश होकर सूबेदार को समझौता करना पड़ा। जीजाबाई नामक एक विधवा स्त्री से उन्होंने विवाह कर लिया। जीजाबाई शिरकावले नामक सेवानिवृत्त जमादार की बहन थी।[1] जीजाबाई कभी–कभी भीमाबाई के कपड़े और जेबर आदि पहनती थी, इसे देख कर भीम बहुत क्रोधित होता था। उसका मन सदैव उसे कचोटता था। कभी–कभी वह सौतेली माँ से झगड़ पड़ता था और फिर अपनी 'वय' (भीमाबाई) की याद करके जोर–जोर से खूब रोता था। भीम अपना सारा कार्य स्वयं करता था। सौतेली माँ क मदद नहीं लेता था। वह अपनी सौतेली माँ को कभी भी माँ के रूप में स्वीकार नहीं कर पाया।[2] इसका पिताजी के साथ संबंधों पर कोई असर नहीं पड़ा।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन–चरित्र, पृष्ठ सं0– 15।

[2] डा0 राही, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, शोध–प्रबन्ध, पृष्ठ सं0– 6।

बाबा साहेब का रमाबाई के साथ विवाह

अम्बेडकर ने 1907 में एलफिस्टन स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा अच्छे अंको से उत्तीर्ण की। यह सम्पूर्ण महार जाति के लिए अति गौरव की बात थी। मैट्रिक उत्तीर्ण होने के बाद इसी एलफिस्टन कालेज से इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसी समय उनके पिता सूबेदार रामजी सकपाल समाज में प्रचलित बाल–विवाह की परम्परा का अनुसरण करते हुए अपने बेटे अम्बेडकर की शादी करने का निश्चय किया। उस समय भी भारत में सदियों से प्रचलित बाल–विवाह का प्रचलन था। भारत में बाल–विवाह का प्रचलन गुप्तकाल से आरम्भ हुआ।[1] सूबेदार रामजी पर भी अम्बेडकर की शादी का दबाव पड़ा। एक बार मंगनी भी हो गई लेकिन बच्चे की पढ़ाई का हवाला देकर सूबेदार ने विवाह टाल दिया। इस अपराध में महारों की पंचायत ने सूबेदार रामजी पर पाँच रुपये का अर्थदण्ड दिया जो उन्हें भरना पड़ा। सूबेदार अम्बेडकर की शादी को अधिक टाल न सके। विवाह का एक प्रस्ताव दाभोल के समीप स्थित वंदन गाँव से आया। उस गाँव के भिकू धुत्रे गरीब लेकिन सदाचारी परिवार के थे। रमाबाई नाम की उनकी एक सुशील पुत्री थी लेकिन थोड़े ही दिनों में भिकू धुत्रे का निधन हो गया। उनके पुत्र शंकर धत्रे ने साहस और धैर्य का परिचय दिया और पूरे परिवार की जिम्मेदारी संभाली। शंकर धुत्रे ने ही अपनी बहन रमाबाई के विवाह का प्रस्ताव सूबेदार से भीमराव के साथ करने का किया। सूबेदार ने इस प्रस्ताव पर सहमति व्यक्त किया। पिता जी की इच्छा मानकर एक आज्ञाकारी पुत्र की भाँति भीमराव इस विवाह के लिए तैयार हो गये। विवाह का स्थान बड़ा विचित्र था। विवाह की सभी रस्में बंबई की भायखला मच्छी मार्केट में सम्पन्न हुई। बाराती इसी मण्डी में दुकाने बन्द होने के पश्चात् रात में पहुँच गए थे। इस मार्केट में एक गंदा नाला बहता था। मार्केट के पत्थरों के प्लेटफार्मों से बेंचों का काम लिया गया। इस प्रकार बाजार एक मैरिज हाल के रूप में काम आया। गन्दे नाले के ऊपर बने हुए मण्डप में, घड़े फेरों (लावा) की रस्म सम्पन्न की गई। विवाह की रस्म सुबह के उस

---

[1] झा और श्रीमाली, प्रचीन भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0–

समय तक चलती रही जब तक कि दुकाने खुल नहीं गईं। इस विचित्र पर सौहार्दपूर्ण वातावरण में भीम और रमा का विवाह सम्पन्न हुआ।[1] कहा जाता है कि दहेज के रूप में भीम को एक बाल्टी मिली थी, जिसे वे संभालकर विवाह के प्रतीक के रूप में रखे रहे।

विवाह के समय भीमराव 14 वर्ष के और रमा 9 वर्ष की थीं।[2] लेकिन धनंजय कीर जैसे विद्वान यह लिखते हैं कि भीम की आयु 17 वर्ष और रमा की आयु 9 वर्ष थी।[3] रामाबाई अपने आचरण एवं स्वभाव से एक आदर्श पत्नी का उदाहरण पेश किया।

बड़ौदा महाराज से छात्रवृत्ति पाकर 1913 में अम्बेडकर जब उच्च शिक्षा के लिए अमेरिका रवाना हुए, तो उस समय रामाबाई गर्भवती थीं। उन्होंने एक पुत्र (रमेश) को जन्म दिया था, परन्तु वह बाल्यावस्था में ही ईश्वर को प्यारा हो गया। कुछ समय बाद गंगाधर नाम का एक अन्य पुत्र पैदा हुआ लेकिन वह भी शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त हो गया। पुत्र वियोग से रामाबाई बहुत व्यथित हो गई, लेकिन ईश्वर ने उन्हें अपार त्याग, धैर्य और साहस प्रदान किया था। ईश्वर ने उन्हें यशवन्त नामक एक पुत्र दिया जो दीर्घायु होकर माँ का वात्सल्य प्राप्त कर सका। यद्यपि यशवन्त का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता था, जिससे माँ रामाबाई स्वभाविक तौर पर चिन्तित रहती थीं। वे एक आदर्श पत्नी थीं जो हमेशा ध्यान रखती थीं कि उनके पति के अध्ययन तथा कार्यों में कोई व्यवधान न आने पाये। अम्बेडकर जब अमेरिका में थे, उस समय रामाबाई ने बडी कठिनाइयों का सामना किया। उन्होंने वह कठित समय भी बिना किसी शिकवा–शिकायत के धैर्य के साथ हँसते–हँसते काट दिया। बाबा साहेब रामाबाई को प्रेम से 'रामू' कह कर पुकारते थे।

सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्रों में अत्यन्त व्यस्त होने के कारण डा0 अम्बेडकर परिवार को अधिक समय नहीं दे पाते थे। इन्हीं दिनों रामाबाई बीमार हो गईं।

---

[1] डी0सी0डीन्कर, डा0 अमबेडकर स्मृति गृन्थ, पृष्ठ सं0– 21
[2] डा0 राही, डा0 अम्बेडकर, पृष्ठ सं0-- 7
[3] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन–चरित्र, पृष्ठ सं0– 23

जलवायु परिवर्तन के लिए वे अपनी धर्मपत्नी रामू को धखाड ले गये, लेकिन स्वास्थ्य में कोई सुधार नहीं हुआ। तीन पुत्रों और एक पुत्री का निधन डा0 अम्बेडकर के परिवार को अभिशप्त करने के लिए पर्याप्त था। रमेश, गंगाधर और राजरतन नामक पुत्रों का बाल्यावस्था में देहान्त तथा पुत्री इन्दू का देहान्त बाबा साहेब और उनकी पत्नी को अन्दर से खोखला कर दिया था। अपनी धर्मपत्नी के इलाज के लिए उन्होंने हर संभव प्रयास किया परन्तु अदृष्य क्रूर छाया सघन होती जा रही थी। 27 मई 1935 को बाबा साहेब के हर सुख–दुःख में छाया की भाँति रहने वाली धर्म पत्नी क्रूर काल के कराल के गाल में समा गई। वह पति परायण पत्नी जिसने वर्षों तक पति का वियोग सहकर भी धैर्य नहीं छोंड़ा, जिसने निरन्तर ध्यान रखा कि उसकी निजी पीड़ा या अस्वस्थता का उनके पति को कभी आभास न हो, उनको महान कार्य करने में किसी प्रकार का मानसिक कष्ट न पड़े, जिससे पारिवारिक अभावों को अपने पति के संवेदना के पास भी न फटकने दिया हो, ऐसी करुणा और त्याग की प्रतिमूर्ति रामादेवी का देहान्त बाबा साहेब के लिए एक महान झंझावात था। बाबा साहेब ने 1940 में लिखी गई अपनी विश्व प्रसिद्ध पुस्तक थॉट्स ऑफ पाकिस्तान (पाकिस्तान की परिकल्पना) में अपनी प्रिय पत्नी रामाबाई को समर्पित की है। समर्पण का शब्द इस प्रकार है– "मैं यह पुस्तक रामू (रामाबाई) को उनके गन का सात्विकता, मानसिक सद्वृत्ति, सदाचार की पवित्रता और मेरे साथ दुःख झेलने में, आभाव व परेशानी के दिनों में जबकि हमारा कोई सहायक नहीं था, असीम सहनशीलता और सहमति दिखाने की प्रशंसा स्वरूप समर्पित करता हूँ।" इन शब्दों से स्पष्ट होता है कि पत्नी रामाबाई ने किस प्रकार अपने पति का साथ दिया और पति के ह्रदय में अपनी पत्नी के लिए कितना असीम प्यार था।

बाबा साहेब के पिता का देहान्त

बाबा साहेब को अपनी माँ का प्यार अधिक दिनों तक नसीब नहीं हुआ, लेकिन पिता रामजी सूबेदार ने पुत्र के प्रति अपनी जिम्मेदारियों का बाखूबी निर्वहन किया। भीम की शिक्षा के लिए यथासंभव व्यवस्था की, कष्ट सहा, बड़े बेटे आनन्द की

पढ़ाई रोक दी, पुत्री के गहने गिरवी रखे लेकिन भीम की पढ़ाई जारी रखा। ऐसे पिता के प्रति भीम के मन में असीम श्रद्धा होना स्वभाविक ही था। इसी श्रद्धा का ही परिणाम था अनिच्छा के बावजूद पिता द्वारा तय किये गये विवाह को स्वीकार कर लिया। बाबा साहेब के भाग्य में पिता का प्यार भी लम्बे समय तक नहीं लिखा था। बाबा साहेब स्नातक होने के बावजूद बड़ौदा रियासत में 1913 में अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध पद ग्रहण किया। वे बड़ौदा नरेश के ऋण से मुक्त होना चाहते थे। बड़ौदा का वातारण बेटे को रास नहीं आएगा, ऐसा सूबेदार को आभास था।[1] बड़ौदा में बाबा साहेब को अस्पृश्यता का कटु अनुभव हुआ भी। बड़ौदा आने के 15 दिन के भीतर ही बाबा साहेब को अपने पिता जी के गम्भीर रूप से अस्वस्थ होने का तार मिला वे घर आने के लिए तत्काल ही गाड़ी पकड लिए। सूरत रेलवे स्टेशन पर वे गाड़ी से उतर कर पिताजी के लिए मिठाई लेने के लिए चले गये और इसी बीच रेलगाड़ी चली गई और उनका सारा सामान (जो थोड़ा बहुत था) भी चला गया। अगले दिन गाड़ी मिली और घर पहुँचे। घर आने पर देखा कि पिता जी मृत्युशैय्या पर पड़े हैं। अपने लाड़ले बेटे की पीठ वे प्रेम से थपथपाये। अपने जीवन के आशा की एक मात्र पूँजी को उन्होंने अच्छी तरह से स्नेहासिक्त आखों से देखा और थोड़े ही क्षणों में प्राण त्याग दिये। यह हृदयविदारक घटना 2 फरवरी 1913 की है। वह मौत उनके पिता की नहीं अपितु उनके सपनों, इच्छाओं और संकल्पों की थी।

पिता के देहान्त से बाबा साहेब टूट गए लेकिन उनमें अदम्य साहस और अपार इच्छा शक्ति थी, जिससे वे कर्मक्षेत्र में कभी रुके नहीं, थके नहीं, हारे नहीं। बड़ौदा महाराज की छात्रवृत्ति पाकर उन्होंने अमेरिका और इंग्लैण्ड में अध्ययन कियां इंग्लैण्ड में उनका अध्ययन छात्रवृत्ति की अवधि समाप्त होने के कारण अपूर्ण रहा, लेकिन कोल्हापुर के महाराज साहू जी के सहयोग से जुलाई 1920 में पुनः लन्दन जा कर अपना अध्ययन पूर्ण किया, तत्पश्चात् 14 अप्रैल 1923 को पुनः भारत लौट आये।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन–चरित्र, पृष्ठ सं0– 26।

आजीविका हेतु बाबा साहेब का संघर्ष

बाबा साहेब इस बीच बड़ौदा रियासत के साथ किए गए इकरारनामे के अनुसार 20 सितम्बर 1917 को अपने बड़े भाई आनन्दराव के साथ बड़ौदा के लिए अपने घर से प्रस्थान किए। बड़ौदा सरकार की इस बार की सेवा के दौरान उन्हें जो अनुभव हुए वे रोंगटे खड़े करने वाले थे। बाबा साहेब के साथ पाशविक स्तर तक दुर्व्यवहार किया गया और अत्यन्त अपमानित एवं असहाय होकर निराशाजनक स्थिति में नवम्बर 1917 में बड़ौदा रियासत की सेवा को सदा के लिए छोंड़कर मुम्बई आ गए।

पारिवारिक दायित्वों के निर्वहन के लिए उन्होंने ट्यूशन पढ़ाना आरम्भ किया। साथ ही व्यवसायियों को परामर्श देने के लिए एक संस्था खोली। बाबा साहेब को इस संस्था से अच्छी आमदनी होने लगी। किन्तु शीघ्र ही कई ईर्ष्यालू ब्राह्मणों नें इसी प्रकार की एक दूसरी संस्था, पास में ही खोलकर दुष्प्रचार शुरू किया कि अम्बेडकर अछूत है। सवर्ण व्यवसायियों ने अम्बेडकर से सम्बन्ध तोड़ लिया और इस प्रकार उनकी संस्था बंद हो गई। अब उनके सम्मुख पुनः आर्थिक समस्या आई। जीविका के लिए उन्होंने एक पारसी व्यवसायी के यहाँ सहायक और मुनीम का कार्य भी किया। इसी समय सिडेनहम कालेज ऑफ कामर्स एण्ड एकोनामिक्स मुम्बई में एक प्रोफेसर का पद रिक्त हुआ। डा0 अम्बेडकर ने अपना प्रतिवेदन दिया। नवम्बर 1918 में उनको प्रोफेसर पद के लिए चयनित कर लिया गया। अपने अपा प्रतिभा और उत्कृष्ट अध्यापन शैली से वे शीघ्र ही चर्चित एवं लोकप्रिय प्रोफेसर हो गए। अध्यापन के दौरान भी उनको अस्पृश्यता का कटु अनुभव हुआ। कालेज के किसी चपरासी द्वारा पानी पिलाने की बात तो दूर की थी उनको कालेज का घडा और गिलास भी छूने की इजाजत नहीं थी।

कालेज में अध्यापन का व्यवसाय उनका अभीष्ट नहीं था। उनके मन में लंदन की अधूरी पढ़ाई करने की उत्कृष्ट अभिलाषा थी। सतारा के साहू जी महाराज से सहायता पाकर कालेज की प्रोफसरी छोंड़कर जुलाई 1920 में बाबा साहेब पुनः लंदन

रवाना हो गए। लन्दन से वॉर एट लॉ तथा डाक्टर ऑफ साइन्स की उपाधि प्राप्त कर अप्रैल 1923 में भारत वापस लौट आए।

बाबा साहेब भारत आकर स्वतन्त्र वृत्ति के रूप में वकालत करने का निश्चय किया और बंबई उच्च न्यायालय में वकालत करने लगे। यद्यपि बाबा साहेब कानून के विशेषज्ञ थे तथापित अछूत होने के कारण कम लोग अपने मुकदमा उनके पास लाते थे। वे गरीबों से बहुत कम फीस लेते थे या कभी–कभी मुफ्त में कार्य करते थे। अब बाबा साहेब वकालत के साथ–साथ देश की राजनीति तथा समाज सुधार कार्यों में भी अपना समय देने लगे।

डा0 अम्बेडकर अछूतों को मानवीय अधिकार दिलाने के लिए म्यूनिसिपल कारपोरेशन बंबई का सदस्य तथा बंबई विधान परिषद का सदस्य बनने का भी प्रयास कर रहे थे। इसी समय सिनडेहम कालेज में प्रिंसिपल का पद रिक्त हुआ जिसके लिए डा0 अम्बेडकर ने अपना आवेदन दिया। गुरुवर केलुसकर महोदय ने डा0 अम्बेडकर के लिए पैरवी भी की, यद्यपि डा0 साहेब की असाधारण योग्यता को देखते हुए सिफारिश की कोई आवश्यकता नहीं थी, फिर भी उनका चयन प्रिंसिपल पद के लिए नहीं किया गया। डा0 साहेब को प्रोफेसर पद की पेशकश की गई, जिसे उन्होंने अस्वीकार कर दिया। बाबा साहेब के स्वाभिमान का यह एक उदाहरण है।

बाबा साहेब आर्थिक कठिनाइयों का निरन्तर सामना कर रहे थे। इसी मध्य उन्होंने वाटलीवाय एकाउन्टेन्सी ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट बम्बई में प्रोफेसर का पद स्वीकार कर लिया। इस कालेज में वे मर्कन्टाइल ला पढ़ाते थे और अपने विद्वता से विद्यार्थियों में श्रद्धा और सम्मान के प्रतीक बने हुए थे। इस कालेज का सौभाग्य ही था कि उसे बाबा साहेब जैसी प्रतिभा सम्पन्न प्राध्यापक मिला, जहाँ वे जून 1925 से मार्च 1928 तक अध्यापन कार्य करते रहे। इसी समय बाबा साहेब को बंबई के सरकारी लॉ कालेज में प्रोफेसर पद पर काम करने का आमंत्रण मिला। इसे स्वीकार कर बाबा साहेब ने जून 1928 में लॉ कालेज में प्रोफेसर का पद ग्रहण किया जहाँ मार्च 1929 तक अध्यापन कार्य

करते रहे। यह भी कहा जाता है कि ए0बी0लेथ ने डा0 अम्बेडकर को आर्ट कालेज कोल्हापुर का प्रिंसिपल का पद स्वीकार करने का निमंत्रण दिया।[1] अछूतों की समस्या में भयंकर रूप से उलझे रहने के कारण डा0 अम्बेडकर इस निमंत्रण को स्वीकार नहीं किया। बाबा साहेब लंदन में सम्पन्न हुए तीनों गोल मेज सम्मेलनों (1930, 1931, 1932) में भाग लेकर अपने विद्वतापूर्ण भाषण द्वारा इंग्लैण्ड सहित सम्पूर्ण भारत में चर्चा का केन्द्र बिन्दु बन गए। ज्वाइंट कमेटी में भाग लेकर भारत के भावी संविधान की रूप रेखा तैयार कर दी।

अन्तर्राष्ट्रीय चर्चित व्यक्ति वाले बाबा साहेब के निजी जीवन में आर्थिक समस्या बनी हुई थी। अंत में उन्होंने सरकारी लॉ कालेज में पुनः प्रोफेसर का पद ग्रहण कर लिया। यह जून 1934 की घटना है। जून 1934 से मई 1935 तक डा0 अम्बेडकर सरकारी लॉ कालेज में अध्यापन करते रहे। बंबई सरकार को यह शिकायत मिलती रही कि डा0 अम्बेडकर जैसे अन्तर्राष्ट्रीय चर्चित विद्वान को प्रोफेसर का पद देकर सरकार ने विद्वता का उपहास किया है। बंबई सरकार को अपनी भूल ज्ञात हुई और ब्रिटिश सरकार ने 1 जून 1935 को सरकारी लॉ कालेज का प्रिंसिपल डा0 अम्बेडकर को बना दिया। इस पद पर बाबा साहेब मई 1938 तक बने रहे। लॉ कालेज के प्रिंसिपल पद पर उनकी सेवा अनुकरणीय रही।

बंबई सरकार ने 1935 के मध्य बाबा साहेब को जिला जज बनने का प्रस्ताव किया। डा0 अम्बेडकर ने समाज सेवा तथा देश सेवा को त्याग कर जनपद न्यायाधीश पद स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। लॉ कालेज में प्रोफेसर तथा प्रिंसिपल का पद भी उन्होंने समझौते के आधारपर किया था। बाबा साहेब का सम्पूर्ण जीवन समाज सेवा को समर्पित था। श्री बाबा साहेब अपने असाधारण योग्यता से उन्नत करते हुए 1942 में बायसराय के काउन्सिल के श्रम सदस्य (श्रम मंत्री) के रूप में मनोनीत हुए। एक निम्न एवं अस्पृश्य कुल में उत्पन्न एक व्यक्ति के लिए एक महान उपलब्धि थी। शून्य से

---

[1] डा0 राही, डा0 भीमराव अम्बेडकर शोध प्रबन्ध, पृष्ठ सं0– 16।

शिखर तक के डॉ0 अम्बेडर की यह यात्रा न केवल महार जाति के लिए अपितु सम्पूर्ण अस्पृश्य जाति के लिए गर्व की बात थी।

महार जाति का इतिहास

भारतीय इतिहास में अनेक ऐसे उदाहरण उलब्ध है जब किसी व्यक्ति, जाति के विशेष उपलब्धियों के आधार पर क्षेत्र विशेष का नामकरण हुआ है। यथा बिहार में चमार के नाम पर चम्पारण, संथाल के नाम पर संथाल परगना, नाग वंश के नाम पर नागपुर, भगवान बुद्ध के ज्ञान प्राप्ति के स्थान को बोध गया, उत्तर प्रदेश में गोंड जाति के नाम पर गोण्डा जिले का नाम, गढ़वाल के नाम पर गढ़वाल जिले का नाम, बाबा गोरख नाथ के नाम पर गोरखपुर, गुर्जर जाति के नाम पर गुजरात आदि नामकरण हुआ है। यद्यपि तर्क (Logic) के सामान्य नियम के अनुसार व्यक्ति वाचक नाम अगुणवाचक होते हैं लेकिन भारतीय इतिहास के अनेक उदाहरण इसकी अपवाद हैं। इसी अपवाद में सम्मिलित है महाराष्ट्र के भूभाग में निवास करने वाली महार जाति। अनेक विद्वानों का मत है कि इसी महार जाति के नाम पर महाराष्ट का नामकरण हुआ है। उपलब्ध साक्ष्यों के तथ्यों के आधार पर यह निर्विवाद रूप से स्पष्ट होता है कि महाराष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और धार्मिक जीवन में महारों की प्रमुख भूमिका रही है। कोई आश्चर्य नही कि महारों के महत्व को देखते हुए इस भूभाग को महाराष्ट्र कहा गया है।

महारों का आरम्भिक इतिहास स्पष्ट नही है। वेदों, ब्राह्मणों और उपनिषदों में महार शब्द का उल्लेख नही प्राप्त होता है। ॠग्वेद के दसवें मन्डल के पुरूष सुक्त में चारों वर्णों की उत्पत्ति का सिद्धान्त सर्वप्रथम वर्णित किया गया है। ॠग्वैदिक काल में जाति व्यवस्था का प्राद्रुभाव नही हुआ था। उत्तर वैदिक काल (1,000 बी0सी0 से 600 बी0सी0) में जाति व्यवस्था का उदय स्वीकार किया जाता है। लेकिन महार शब्द का उल्लेख बौद्ध काल में उपलब्ध होता है। महारों के शारीरिक बनावट, साहस, शौर्य एवं पराक्रम के आधार पर लगता है कि वे शासक वर्ग के थे। किसी शसित वर्ग में इतना साहस और पराक्रम नही हो सकता जितना महार जाति में उपलब्ध होता है। इतिहास से

ज्ञात होता है कि महारों का अपना राज्य भी था।[1] महारों की आर्थिक स्थिति भी अच्छी थी। महारों ने छठी शताब्दी ईशा पूर्व में बौद्ध धर्म को अंगीकार कर लिया जिससे उनका ब्राह्मण धर्म के साथ संघर्ष का सिलशिला आरम्भ हुआ ब्राह्मण ग्रन्थों में उन्हें शूद्र के रूप में वर्णित किया गया और इस प्रकार चतुर वर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत उन्हें शूद्र वर्ण के अन्तर्गत उन्हें मान्यता प्रदान की गई और अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध लगा दिये गये। वे अस्पृश्य समझे जाने लगे बौद्ध धर्म अपनाने के कारण ब्राह्मण ग्रन्थों ने मौर्य वंश के शासकों को भी शूद्र कहा है, जबकि ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर मौर्यो को क्षेत्रिय माना जाता है। मौर्यों की भाँति महार भी ब्राह्मणबादी षड्यंत्र के शिकार हुए।

अनेक ग्रन्थों में महारों को महान अरि (महान दुश्मन) के रूप में वर्णित किया गया है। महारों और ब्राह्मणवादी संस्कृति में यह एक सांस्कृतिक संघर्ष है जो दीर्घकाल तक चला। मध्यकाल में पाण्डारपुर आन्दोलन के प्रमुख सन्त एकनाथ की कविता में यह सांस्कृतिक संघर्ष प्रमुख रूप में मुखरित हुआ है। यह कविता अंग्रेजी (अनूदिति) में इस प्रकार है[2]–

'Get out, thou arrogant mahar.'

'What, ho, Sir Brahman, what a word.'

'Who fears the wrath of thy poor site?'

'Thy parents and mine own are one.'

'Take thou good care and speak not thus.'

'From out the Formless all have come;

'How knowest thou the Formless one?

'For Him make search within the heart.'

---

[1] बुद्ध शरण हंस, बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन कथा पृ0सं09

[2] अलेकजेण्डर रोबरसन, द् महार फॉल्क पृ0सं0 31

'We may not know that essence pure.'

'Then go and ask the saints for help

'What help among the saints is found?'

'The mi9llion births through them are passed.'

'By whom was taught to thee such lore?'

'By favour of Janardhana.'

पाण्डारपुर आन्दोलन के अन्य सन्तों के साहित्य में भी महार ब्राह्मण सांस्कृतिक संघर्ष व्यक्त हुआ है।

सातवीं शताब्दी ईसवीं, विशेषकर महाराज हर्षवर्धन के देहान्त के पश्चात, बौद्ध धर्म का पतन आरम्भ हुआ, यद्यपि राजपूत काल में पाल, चालुक्य जैसे राजवंशों ने बौद्ध धर्म को प्रोत्साहन और राजाश्रय को प्रदान किया लेकिन बौद्ध धर्म के पतन को रोका नही जा सका। महारों की स्थति में भी गिराबट आने आरम्भ हुई। वे आर्थिक, राजनैतिक और धार्मिक दृष्टि से भी असक्त हो रहे थे और यह स्थति मुगल काल तक भी बनी रही। मराठा साम्राज्य के संस्थापक छत्रपति शिवाजी जो स्वयं एक कुर्मी थे और बाद में क्षत्रिय बना लिये गये,[1] के समय स्थिति में कुछ बदलाव आया। महारों को सेना में बड़ी संख्या में भर्ती किया गया।

ब्रिटिश शासन के साथ महारों की स्थिति में काफी बदलाव आया। दक्षिण भारत में यूरोपिय राजनैतिज्ञयों की सत्ता के लिए संघर्ष शुरू होने पर अंग्रेजों ने बड़ी होशियारी से इस उपेक्षित लेकिन साहसी महार जाति के साथ प्रथमतः सम्बन्ध जोड़ लिया।[2] ब्रिटिश सरकार ने महारों की जातिगत साहस, शौर्य के कारण उन्हें सेना में भर्ती करने का निर्णय लिया और ईस्ट इण्डिया कम्पनी की सेना में पृथक से महार रेजिमेन्ट बनाया।

---

[1] अलेकजेण्डर रोबरसन, द् महार फॉल्क पृ0सं0 40

[2] कीर धंनजय, बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र पृ0सं0 8

महारा रेजिमेन्ट ने कोरेगांव के ऐतिहासिक युद्ध में ईस्ट इण्डिया कम्पनी को महान ऐतिहासिक सफलता दिलाई। ब्रिटिश सरकार ने कतिपय विशेष कारणों से 1892 ईसवी से महारों के सेना में प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दिया। इस प्रतिबन्ध के खिलाफ बाबा साहेब बाबा साहेब डॉ0 भीमराव अम्बेडकर के पिता सूबेदार रामजी सत्यपाल ने महान समाज सुधारक जस्टिस महादेव गोविन्द रानाडे से एक प्रत्यावेदन तैयार कर ब्रिटिश सरकार को सौंपा जिसमें लगाये गये प्रतिबन्ध को समाप्त करने की मांग की गयी थी। बाद में ब्रिटिश सरकार ने यह प्रतिबन्ध हटा लिया।

इस प्रकार अंग्रेजो के संपर्क में आने के कारण महार जाति में काफी जागरूकता आ गयी थी। लेकिन सामाजिक और धार्मिक रूप में उनका लगातार शोषण, उत्पीड़न होता रहा और वे अपमानजनक व्यवहार के भागीदार बने रहें। महारों के घर अन्य अस्पृश्य जातियों की भाँति गांव के बाहर होते थे और झोपड़ियों में रहते हुए उन्हें पशुवत जीवन व्यतीत करना पड़ता था। संक्षेप में गांवों में महारो को निम्नलिखित कार्य करना पड़ता था–

1. उन्हें गांव की चौकीदारी करनी पड़ती थी।
2. उन्हें गांव के व्यक्तियों के घरों की अलग से चौकीदारी करनी पड़ती थी।
3. उन्हें संदेशवाहक का कार्य करना पड़ता था।
4. उन्हें मरें हुए जानवरों को उठाना पड़ता था।
5. उन्हें गांव की सफाई करनी पड़ती थी।
6. ब्रिटिश शासन के दौरान कुली और गाइड का कार्य करना पड़ता था।

इसके अतिरिक्त अनेक कार्य करने पड़ते थे। इस सेवा कार्य के बदले उन्हें जीवकोपार्जन के लिए कुछ जमीन गांव की ओर से मिलती थी जिसे महार वतन कहा जाता था। बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण तथा पीढ़ी दर पीढ़ी भूमि के टुकड़े होने के कारण इस जमीन से उनका जीवकोपार्जन नही हो पाता था। गांव के लोगों के द्वारा

दिये गये जूठे भोजन, फटे, पुराने कपड़े पहनने के लिए विवश थे। बाबा साहेब ने संघर्ष कर बाद में महार वतन संशोधन विधेयक पारित करवाया। जिससे उनके दैनीय स्थिति में सुधार हुआ।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि महाराष्ट्र में महारों का गौरवशाली इतिहास रहा है और महारों ने मराठी साहित्य के विकास में भी अपना विशिष्ट योगदान दिया है। जोनाबाई, चोखामल आदि मराठी साहित्य के सम्मानित हस्ताक्षर हैं।

अध्याय चार

अध्याय– चार

''बाबा साहेब की शिक्षा और अस्पृश्यता से साक्षात्कार''

शिक्षा व्यक्ति के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु अत्यन्त आवश्यक है, इसीलिए भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से ही शिक्षा पर बल दिया गया था। प्राचीन काल में शिक्षा आश्रम पद्धति पर थी और विभिन्न भागों में फैले हुए गुरुकुल शिक्षा के केन्द्र बिन्दु थे। बौद्ध धर्म के उदय के साथ शिक्षा व्यवस्था के स्वरूप में परिवर्तन हुआ। देश के विभिन्न भागों में फैले हुए बौद्ध–विहार (भिक्षुओं के निवास स्थान) धीरे–धीरे विश्वविद्यालय का रूप धारण कर विश्वविख्यात हुए। नालन्दा, विक्रमशिला, उद्रभाण्ड आदि ऐसे ही विश्वविद्यालय थे, जहाँ देश–विदेश से बड़ी संख्या में विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने आते थे। यह सम्पूर्ण शिक्षा–व्यवस्था जिस पर हम गर्व करते हैं– सबके लिए नहीं थी, केवल द्विज जातियों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) के लिए ही शिक्षा–व्यवस्था थी। समाज के एक बडे वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले शूद्रों, अछूतों के लिए शिक्षा के द्वार बन्द थे। बड़े ही सुनियोजित तरीके से अत्यन्त कठोरता पूर्वक अत्यन्त प्राचीन काल से शूद्रों और अछूतों को शिक्षा से दूर रखा गया। कम से कम दो ऐतिहासिक उदाहरण ऐसे हैं, जब शूद्रों ने शिक्षा की दिशा में प्रयास किया तो उन्हें दण्ड और प्रताड़ना मिली। पहला उदाहरण रामायण में बाल्मीकि का है जहाँ वेदाध्यन करने वाले शूद्र शाम्बुक का मर्यादा पुरुषोत्तम कहे जाने वाले राम ने वध किया। दूसरा उदाहरण वेद ब्यास के महाभारत का है जहाँ गुरु द्रोण ने शूद्र एकलव्य को न केवल शिक्षा देने से मना कर दिया अपितु वाद में बिना शिक्षा दिये ही गुरु दक्षिणा के रूप में उसका अंगूठा ले लिया।

मध्यकाल में भी शूद्रों को शिक्षा का अधिकार नहीं रहा लेकिन आधुनिक काल (पुनर्जागरण से) आरम्भ होते ही शिक्षा–व्यवस्था में परिवर्तन आया। अंग्रेजों ने भारत

में शिक्षा–व्यवस्था के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। 21 फरवरी 1784 को लिखे एक पत्र में भारत के प्रथम गवर्नर जनरल लार्ड वारेन हेस्टिंग्स ने कोर्ट ऑफ डायरेक्टर का ध्यान इस तथ्य की ओर आकृष्ट किया कि उत्तर भारत और दक्षिण के सभी प्रमुख नगरों में विद्यालय धन, जन, और भवन सभी प्रकार के अभाव से क्षींण अवस्था में थे।[1] वारेन हस्टिंग्स ने 1781 में कलकत्ता में एक मदरसा स्थापित किया, जिसमें फारसी और अरबी का अध्ययन किया जाता था। 1791 ई0 में वनारस के ब्रिटिश रेजीडेन्ट श्री डंकन के प्रयासों से संस्कृत कालेज खोला गया। सर्व प्रथम 1813 ई0 के चार्टर एक्ट में यह प्रावधान किया गया कि भारत में शिक्षा के प्रचार–प्रसार हेतु 1 लाख रुपया व्यय किया जायेगा, लेकिन यह स्पष्ट नहीं था कि यह धन प्राच्य शिक्षा के प्रचार–प्रसार हेतु होगी या पाश्चात्य शिक्षा के लिए। इसी के साथ प्राच्य पाश्चात्य विवाद आरम्भ हआ। आधुनिक भारत के जनक कहे जाने वाले राजाराम मोहन राय ने 1823 ई0 में गवर्नर जनरल लार्ड एमहर्स्ड को पत्र लिखकर भारत में पाश्चात्य शिक्षा लागू करने की वकालत की। अंत में गर्वनर जनरल लार्ड विलियम वैटिंग की सरकार ने 7 मार्च 1835 को लार्ड मैकाले (गवर्नर जनरल की काउन्सिल का विधि सदस्य) के प्रस्ताव को स्वीकार कर भारत में पाश्चात्य शिक्षा लागू कर दी। 1854 ई0 के शिक्षा पर चार्ल्स वुड के डिस्पैच द्वारा विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई, जिसके क्रम में 1856 में बंबई कलकत्ता और मद्रास में तीन विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई।

ब्रिटिश सरकार की यह शिक्षा–व्यवस्था भी समाज के कुछ वर्गों (उच्च वर्ग) के लिए थी, जन साधारण को इससे दूर रखा गया था। बंबई महाप्रान्त की शिक्षा समिति की रिपोर्ट में कहा गया था– "जनता के थोडे से हिस्से को शिक्षा दी जा सकती है और यह थोड़ा सा हिस्सा उच्च वर्गों का होगा।"[2] फिर भी शिक्षा पर शूद्रों के लिए प्रतिबन्ध उतने नहीं रहे जितने प्राचीन काल में रहे। कुछ अछूत जातियों ने भी शिक्षा ग्रहण करनी शुरू की, जिससे महाराष्ट्र की महार जाति प्रमुख थी। महार जाति के लोगों को 1857

---

[1] प्रो0 ग्रोवर, बी0एल0, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 352।

[2] डॉ0 शर्मा, राम बिलास, गाँधी, अम्बेदकर, लोहिया और भारतीय इतिहास की समस्यायें, पृष्ठ सं0– 562।

की क्रांति के बाद सेना में विशेषकर भर्ती किया जाने लगा, इसलिए शिक्षा के दरवाजे उनके लिए भी खुले थे। बाबा साहेब अम्बेदकर का जन्म 1891 ई0 में इसी महार जाति में हुआ था, जिन्होंने अपनी प्रखर प्रतिभा, उत्कृष्ट बौद्धिकता से शिक्षा क्षेत्र में उच्चतम प्रतिमान स्थापित कर यह उदाहरण पेश किया कि अछूत जाति के लोग भी प्रतिभावान हैं और यदि अवसर तथा संसाधन मिले तो ज्ञान विद्या के क्षेत्र में किसी द्विज जाति से कम नहीं है।

बाबा साहेब का पारिवारिक वातारण

परिवार और उसका वातावरण बच्चे की प्रथम पाठशाला होती है। माता–पिता ही बच्चे के प्रथम गुरू हाते हैं। सौभाग्य से बाबा साहेब को अच्छा परिवारिक वातावरण मिला। उनके पूर्वजों को सेना में प्रशिक्षण प्राप्त करने तथा नौकरी करने का मौका मिला।[1] उनके पिता राम जी सकपाल ब्रिटिश सेना में दूसरी ग्रनोडियर रेजीमेन्ट में सूबेदार मेजर थे। उनको यह रैंक मिलिट्री स्कूल में हेड मास्टर होने की वजह से मिली थी।[2] राम जी सकपाल का व्यक्तित्व बड़ा ही निर्भीक और साहसी था। वे धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे तथा कबीरपंथ में उनकी आस्था थी। वे शिक्षा के महत्व को समझते थे, इसीलिए अपने बच्चों को विशेषकर 'भीम' को शिक्षा देने की यथा सम्भव अच्छी से अच्छी व्यवस्था की। बाबा साहेब की माँ भीमाबाई भी धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थीं। भीमाबाई के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विषय में धनंजय कीर लिखते हैं– ''भीमाबाई बड़ी बातूनी, मानी, हठीली और धर्म परायण थीं।[3] बाबा साहेब के भाग्य में माँ का स्नेह अधिक दिन नहीं लिखा था। अभी वे 6 वर्ष के भी नहीं हुए थे कि भीमाबाई का देहान्त हो गया। अब उनकी देख–भाल बुआ मीराबाई ने किया।

बाबा साहेब की स्कूली शिक्षा काप–दलोली के एक मराठी स्कूल से बड़ भाई आनन्दराव के साथ शुरू हुई, लेकिन आर्थिक तंगी के कारण रामजी सकपाल को

---

[1] लिमये, मधु, बाबा साहेब अम्बेदकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0– 10
[2] डॉ0 भटनागर, राजेन्द्र प्रसाद, डा0 अम्बेदकर जीवन और दर्शन,
[3] कीर, धनंजय,एस0के0, बाबा साहेब अम्बेदकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0–9

काप–दापोली शीघ्र ही छोड़ देना पड़ा और सतारा में अपना निवास बनाया। सतारा के लश्करी छावनी में आनन्दराव के साथ भीम की शिक्षा आरम्भ हुई। प्राथमिक स्कूल में बाबा साहेब सामान्य बच्चों की भाँति ही थे। स्कूल में कानों पर जो कुछ रेंग जाता था, वही उसका ज्ञान था, वही उसका अध्ययन था, वही उसकी शिक्षा थी। वैसे वे बुद्धि में तेज थे, पिताजी क बेहद स्नेह से भीम बिगड़ गया था।[1] स्कूल से उनके नटखट स्वभाव की शिकायतें आती रहती थीं, जिसके लिए उन्हें मार भी पड़ती थी, तथापि बुआ के पीछे जाकर छिप जाने से मार पड़ने से बहुधा बच भी जाते थे।

बालक भीम ने पहली कक्षा उत्तीर्ण कर दूसरी कक्षा में प्रवेश लिया। उसी समय की एक घटना है कि एक दिन खूब वर्षा हो रही थी और अपने एक सहपाठी के कहने पर भीम खूब भींग कर स्कूल में पहुँचा। उनके क्लास टीचर पेंडसे नामक एक ब्राह्मण थे जो भीम से स्नेह करते थे। उन्होंने पूँछा– बारिस में भींगकर तू आ गया, छाता क्यों नहीं लाया? भीम ने उत्तर दिया – छाता एक ही था और उसे भाई ले गया। यह सुनकर पेंडसे महोदय ने अपने बच्चे के साथ भीम को अपने घर भेज दिया और कपड़ा बदल कर आने को कहा। भीम नहाया और लंगोटी धारण करके कक्षा के बाहर सीटी बजाते हुए बड़े चाब से घूमने लगा। कक्षा में आकर बैठ तुझे शरमाने की क्या जरूरत। गुरू पेंडसे के यह कहने पर भीम जोर जोर से रोने लगा और शर्म से गर्दन झुका कर कक्षा में बैठ गया।[2] उस घटना ने भीम के स्वभाव से जिद निकाल दिया।

भीम के द्वितीय कक्षा के दौरान 16 जनवरी 1901 ई0 को न्यायमूर्ति महादेव गोविन्द रानाडे का देहान्त हो गया और स्कूल से छुट्टी हो गई। उन्होंने भी दूसरे छात्रों के साथ छुट्टी का आनन्द लिया। रानाडे कौन थे? उन्होंने क्या किया? क्यों उनके लिए स्कूल की छुट्टी कर दी गई? बालक भीम को कुछ मालुम नहीं था। यह बाद में भीम के पिता ने ने रानाडे के षट–वार्षिकी उत्सव के निमित्त आयोजन सभा में यह बात कही

---

[1] कीर, धनंजय, एस0के0, बाबा साहेब अम्बेदकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0–14
[2] कीर, धनंजय,एस0के0, बाबा साहेब अम्बेदकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0–17

थी। बाद में डॉ0 अम्बेदकर ने जब रानाडे का अध्ययन किया तो उनका हृदय श्रद्धा से भर गया।

सतारा के इसी माध्यमिक स्कूल में आंबेदकर नाम के एक दूसरे ब्राह्मण अध्यापक थे। वे ब्राह्मण जाति के थे और अपने नाम के साथ आंवेडकर उपनाम लिखते थे। वे डा0 अम्बेडकर के पितामह मालोजी के पैतृक गाँव अंवावडे के रहने वाले थे।[1] वे भीम से बहुत स्नेह रखते थे। एक दिन गुरू जी अंवावडे ने बालक भीम को अपने पास बुलाया और खाने के लिए रोटी और सब्जी दिया। यह दिनचर्या काफी दिन तक चलती रही। प्यार से दी गई रोटी–सब्जी का स्वाद भीम को अच्छा लगा था। इन्सानियत से परिपूर्ण आंवेडकर गुरू जी का सारा जीवन का सारा जीवन ही निराला लगता था। गुरू जी ने भीम के लिए एक और अविस्मरणीय कार्य किया। उन्होंने भीम से कहा कि वह सरल–सुलभ आंवेडकर नाम धारण करे। तत्काल ही स्कूल के कागजात में उन्होंने भीम का नाम बदल कर आंवेडकर कर दिया। आंवेडकर गुरू जी को अपना नाम अमर करने की ऐसी बुद्धि प्राप्त हुई, यह उनका भाग्य ही कहना चाहिए।[2] आंवेडकर गुरू जी को अपने प्रिय शिष्य का ध्यान वृद्धावस्था तक बनी रही। 1930 में लंदन में प्रथम गोलमेज सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए डा0 अम्बेडकर जब लंदन रवाना हो रहे थे तब गुरू आंवेडकर ने उनके पास शुभेच्छा सूचक और अभिनन्दन परक एक पत्र अपने प्रिय शिष्य को दिया। उसे अमूल्य धरोहर मानकर डा0 अम्बेदकर ने अपने पास सजो कर रखा।

भीम दूसरी, तीसरी कक्षा तक सामान्य विद्यार्थी ही रहा। पढ़ने–लिखने की अपेक्षा बागवानी, घूमने का अधिक शौक भीम को था। इसी क्रम में सतारा जाकर मिल में नौकरी करने की भीम की इच्छा अन्य बच्चों को देख कर हुई। सतारा जाने का खर्च बुआ के बटुए चुरा कर करने की योजना बनाई और चौथी रात चुराने में सफलता प्राप्त की, लेकिन बटुए में मात्र 2 पैसे ही थे। इससे भीम को बहुत पश्चाताप हुआ और इस घटना ने बालक भीम के जीवन पर अटूट प्रभाव डाला। उसने सोचा कि ऐसी चालाकी

---

[1] विवेक, रामलाल, डा0 अम्बेदकर जीवन और दर्शन, पृष्ठ सं0– 12।
[2] कीर, धनंजय,एस0के0, बाबा साहेब अम्बेदकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0–18।

कर पलायन करने की अपेक्षा मेहनत से अध्ययन कर स्वयं अपनी उन्नति करें। अपनी उन्नति साध्य करना ही श्रेष्ठकर है। उस दिन से भीम ने अध्ययन के लिए कठोर परिश्रम करने का निश्चय किया। भीम ने अपनी सच्ची लगन और परिश्रम से अध्यापकों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। आध्यापकों ने भीम के पिता से आग्रह किया कि सूबेदार कछ भी करो, कष्ट उठाओ लेकिन इस बच्चे की शिक्षा पूरी करो।

भीम के पिता की इच्छा थी कि उनके बच्चे संस्कृत सीखें, बुद्धिमान हों, पंडित के रूप में ख्याति प्राप्त करें। उन्होंने आनन्दराव और भीम को संस्कृत विषय दिलवाना चाहा लेकिन स्कूल के संस्कृत अध्यापक ने महार जाति के इन अछूत बच्चों को संस्कृत पढ़ाने से इन्कार कर दिया। बाद में डा० अम्बेदकर ने स्वयं संस्कृत भाषा का विशद् अध्ययन किया। भीम ने अध्ययन में विशेष रुचि दिखाई। पिता जी के सहयोग से अंग्रेजी भाषा का अच्छा अध्ययन किया। डा० अम्बेडकर ने बाद में इस बात को स्पष्ट किया कि– मेरे अंग्रेजी वक्तृव्य और ग्रन्थ लेखन का श्रेय मेरे पिता जी को है।[1] पाठ्य पुस्तकों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकों को पढ़ने का शौक अम्बेडकर को हुआ। अम्बेडकर के लिए पुस्तकों का प्रबन्ध उनके पिता जी यथा संभव तरीके से करते थे और इसके लिए अनेक बार उन्होंने अपनी बेटी के गहने गिरवी रख दिये।

भीम के अध्ययन के लिए अलग कमरा नहीं था। एक ही कमरे में पूरा परिवार था। रामजी सकपाल बेटे की शिक्षा के प्रति विशेष सजग थे, इसलिए एक उपाय सोचा। खाना खाकर भीम सो जाते थे और उनके पिता रात दो बजे तक जगते थे और दो बजे भीम को अध्ययन के लि जगाते थे। भीम पढ़ने बैठते तो वे सो जाते थे। तेल के दीपक के प्रकाश में भीम अध्ययन करते थे। इसी बीच भीम को क्रिकेट का शौक पैदा हो गया। भीम अपने दोस्तों के साथ क्रिकेट मैच खेलते थे, बहुधा खेल–खेल में झगड़ा भी हो जाया करता था। भीम के पिता क्रिकेट खेलने से मना करते थे और पढ़ने पर दबाव बनाते थे। इसी बीच सूबेदार रामजी ने भीम की शिक्षा सुचारु रूप से जारी रखने

---

[1] कीर, धनंजय,एस0के0, बाबा साहेब अम्बेदकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0–20।

के लिए अपने बडे बेटे आनन्दराव की शिक्षा बन्द कर नौकरी में लगा दिया। भीम पूर्ण मनोयोग एवं सच्ची लगन से विद्या अध्ययन में लगा रहा और प्रत्येक कक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण करता रहा। 1907 ई0 में उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। पुत्र की इस सफलता से पिता सूबेदार रामजी को अपार खुशी हुई। अछूत महार जाति का एक बालक मैट्रिक परीक्षा उत्कृष्ट अंकों से उत्तीर्ण की, यह सम्पूर्ण महार जाति के लिए गर्व का विषय था। धनंजय कीर और डा0 राजेन्द्र मोहन भटनागर लिखते हैं कि भीमराव ने 750 में से 282 अंक प्राप्त किया।[1] इसके उपलक्ष्य मे सीताराम केशव बोले (महाराष्ट्र के समाज सुधारक) की अध्यक्षता में एक समारोह आयोजित किया गया। इस सभा में गुरुवर कृष्णा जी अर्जुन केलुसकर भी उपस्थित थे। उन्होंने सूबेदार रामजी से भीमराव की भावी शिक्षा–प्रबन्ध के सम्बन्ध में पूँछ–ताँछ की। सूबेदार ने बताया कि अत्यन्त कठिन परिस्थिति के बावजूद मैंने भीम को उच्च शिक्षा देने का संकल्प किया है। इसी समारोह में भीम को "लाइफ ऑफ गौतम बुद्ध" नामक पुस्तक भेंट की गयी। धनंजय कीर के अनुसार इसी समारोह में गुरुवर केलुसकर ने अपनी लिखी हुई मराठी 'बुद्ध चरित्र' भीमराव को भेंट दी।

बाबा साहेब की कालेज की शिक्षा

मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् सूबेदार रामजी ने भीमराव का प्रवेश देश के अत्यन्त प्रतिष्ठित कालेज बंबई के एलफिस्टन कालेज में करवाया। कालेज के प्राचार्य पद पर उस समय कॉवर्नटन थे जो अत्यन्त अनुशासन प्रिय तथा गुणाग्रही थे। कालेज के प्रमुख प्राध्यापकों में से मूलर ऐसे महानुभाव थे जिनका भीमराव के प्रति प्रगाढ़ स्नेह था। वे भीमराव को पुस्तकें तथा कपड़े देते थे। भीमराव ने परिश्रम से अध्ययन आरम्भ किया लेकिन अस्वस्थ होने के कारण एक वर्ष नष्ट हो गया। स्वस्थ होने पर पुनः अध्ययनरत हुए तथा अच्छों अंकों से इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण की। उनके पिता सूबेदार रामजी ने अत्यन्त कठिनाई से इण्टर तक की शिक्षा का व्यय उठाया था, लेकिन अब

---

[1] कीर, धनंजय,एस0के0, बाबा साहेब अम्बेदकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0–22।

पास किया है। उन्होंने बडौदा रियासत की नौकरी में प्रवेश किया, सन् 1913 में उन्हें बडौदा सरकार की तरफ से अर्थशास्त्र की उच्च शिक्षा के लिए अमेरिका भेजा गया। एम0एस0 मार्डना नाम जहाज से 15 जून 1913 को उन्होंने बंबई छोड़ा।[1]

डा0 अम्बेडकर की बी0ए0 करने के पश्चात् उच्च शिक्षा प्राप्त करने की उत्कृष्ट अभिलाषा थी, लेकिन विकट आर्थिक समस्या उनकी राह में बाधा डाल रही थी। अंत में काफी सोंच–विचार के पश्चात् बडौदा रियासत में नौकरी कर ली। बडौदा सरकार की सेना में डा0 अम्बेदकर की लेफ्टिनेंट पद पर नियुक्ति हुई। उन्होंने 1913 में यह पद ग्रहण किया। पद ग्रहण करने के 15 दिन के बाद ही अपने पिता के गंभीर रूप से अस्वस्थ होने का तार मिला। वे तत्काल अपने घर आने के लिए गाड़ी पकड़ ली और घर आने पर देखा कि पिता जी मृत्युशैया पर पड़े हैं। अपने लाडले बेटे की पीठ वे बड़े प्रेम से थपथपाये। अपने जीवन के आशा की एक मात्र पूँजी को उन्होंने अच्छी तरह से स्नेहासिक्त आँखों से देखा और थोड़े ही क्षणों में अपने प्राण त्याग दिये। यह घटना 2 फरवरी 1913 की है। वह मौत उनके पिता की नहीं अपितु उनके (भीम के) के सपनों की, इच्छाओं और संकल्पों की थी।[2]

पिता के देहान्त से डा0 अम्बेडकर पूरी तरह टूट गये थे। वे बड़ौदा सेना की नौकरी करने की मनःस्थिति में नहीं थे। उस 15 दिन की नौकरी का अनुभव बहुत कटु था। उनके सामने दो समस्यायें थीं। पहली पिताजी के देहान्त के पश्चात् पारिवारिक उत्तरदायित्वों का निर्वहन तथा दूसरी उच्च शिक्षा प्राप्त करने के पथ पर आने वाली आर्थिक बाधा। डा0 अम्बेडकर भरे मन से बंबई में बडौदा नरेश महाराज गायकवाड से मुलाकात की। उस समय बडौदा सरकार 4 मेधावी छात्रों को छात्रवृत्ति देकर अमेरिका में शिक्षा प्रदान कराने की योजना बना रही थी। डा0 अम्बेडकर ने महाराज गायकवाड़ से निवेदन किया कि 4 छात्रों में उन्हें सम्मिलित कर लिया जाए। गायकवाड ने अम्बेडकर से छात्रवृत्ति के लिए आवेदन करने को कहा। अंत में उन 4

---

[1] लिमये, मधु, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0–11
[2] लिमये, मधु, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0–।

छात्रों में अम्बेडकर को चुन लिया गया। अम्बेड़कर बडौदा गये और सरकार के उपशिक्षा मंत्री के सम्मुख 4 जून 1913 को एक इकरारनामें पर हस्ताक्षर किये। इस इकरारनामें में यह व्यवस्था थी कि वे मनोनीत विषयों का अध्ययन अमेरिका में करे और बाद में दस वर्ष बडौदा रियासत की सेवा करें।[1]

बाबा साहेब का अमेरिका में शिक्षा ग्रहण करना

किसी भी भारतीय के लिए अमेरिका में शिक्षा ग्रहण करना अपने आप में एक बड़ी बात थी, विशेषकर एक अस्पृश्य, अछूत के लिए यह अत्यन्त गौरव की बात थी। एक अछूत को यह स्वर्णिम अवसर परम सौभाग्य से महाराज गायकवाड़ की अनुकम्पा से प्राप्त हुआ था। अत्यन्त उत्साह एवं उमंग तथा ज्ञान की प्यास लिए अम्बेडकर 15 जून 1913 को एम0एस0 मार्डोना नामक जहाज से बंबई से अमेरिका के लिए रवाना हुए।[2] जुलाई के तीसरे सप्ताह में वे अमेरिका पहुँचे। सबसे पहले वे न्यूयार्क विश्वविद्यालय के आवास में रहने लगे लेकिन वहाँ के अधपके अन्न और गोमांस के व्यंजनों से उनके मन में घृणा पैदा हुई और उस स्थान को छोंड़कर वे उस स्थान पर रहने लगे जहाँ अनेक भारतीय छात्र रहते थे।[3] यह स्थान न्यूयार्क में 544 वेस्ट, 114 स्ट्रीट में स्थित था। वहाँ से वे लिविंग्सस्टोन हॉल चले गये जहाँ उनकी मुलाकात नवल भथेना नामक एक पारसी विद्यार्थी से हुई और गहरी दोस्ती हो गई जो अंत तक चलती रही।

अम्बेडकर के लिए न्यूयार्क का जीवन एक नया अनुभव था, अब उनको चैन की सांस लेने का मौका मिला। वहाँ वे ऐसे दोस्तों के बीच रहते थे जिनमें छुआछूत की भावना का लेशमात्र भी नहीं था। उनमें आपस में भ्रातृत्व और समानता की भावना थी। उनके सामने नया उत्साही समाज था, जिसकी गति बहुत तेज थी, जिसका चिन्तन क्रांतिकारी था और जिसके लिए स्वतन्त्रता सहज उपलब्ध थी। अम्बेडकर ने अपने

---

[1] कीर, धनंजय, एस0के0, बाबा साहेब अम्बेदकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0–28।

[2] डा0 अम्बेडकर पर बंबई सरकार का विवरण।

[3] कीर, धनंजय,एस0के0, बाबा साहेब अम्बेदकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0--28।

अमेरिका प्रवास की अनुभूतियों को अपने पिता के मित्र को पत्र में लिखा था। उस पत्र में उन्होंने स्पष्ट किया कि जन्म से कर्म का कोई ताल्लुक नहीं है। शिक्षा स्त्री–पुरुष दोनो के लिए शिक्षा आवश्यक है। इस पत्र में उन्होंने शक्सपियर की इन पंक्तियों को दोहराया–

"There is tide in the affairs of man, which taken at the flood, leads on to fortune.

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में अवसर आता है, जिसका प्रयोग करके वह आगे बढ़ जाता है। अमेरिका में रहकर अम्बेडकर ने अपना सम्पूर्ण ध्यान अध्ययन पर केन्द्रित रखा। कोलंविया विश्वविद्यालय में अध्ययन करते हुए उनका लक्ष्य केवल एम0ए0 की डिग्री प्राप्त करना नहीं था, अपितु वे समाज विज्ञान, राजनीति विज्ञान, नैतिक, दर्शन– शास्त्र का भी अध्ययन करना चाहते थे, यद्यपि अर्थशास्त्र उनका एम0ए0 का प्रमुख विषय था।

कोलम्विया विश्वविद्यालय में अध्ययन के दौरान वहाँ के अध्य।पकों में से वे सबसे अधिक प्रभावित प्रो0 एडविन आर0ए0 सेलिग्मन महोदय से हुए। अम्बेडकर प्रो0 सेलिग्मन की अध्यापन शैली तथा उनके मृदु स्वभाव से प्रभावित हुए। एक बार अम्बेडकर ने प्रो0 सेनिग्मन से अनुसंधान की कौन सी पद्धति अपनाई जाय, प्रश्न एर चर्चा की, प्रो0 सेलिग्मन का महत्वपूर्ण उत्तर था– तुम अपना कार्य लगन से करते जाओ, तुम्हारी स्वयं की पद्धति सहज बन जायेगी। प्रो0 सेलिग्मन लाला लाजपत राय के मित्र थे। उस समय लाला लाजपत राय अमेरिका में थे। इसी समय भारतीय क्रांतिकारी आन्दोलन अपने प्रथम चरण में उफान पर था। 1914 ई0 में ही अमेरिका के सेनफ्रांसिस्को शहर में लाला हरदयाल राय ने गदर पार्टी की स्थापना की और गदर नामक समाचार पत्र निकाला।[1]

लाला लाजपत राय ने अम्बेडकर से मुलाकात की और राजनीति में सक्रिय होने की सलाह दी। अम्बेडकर ने उनकी सलाह को स्वीकार करने में अपनी असमर्थता व्यक्त की और कहा – 'अन्य सब बातों का विचार छोड़ दिया जाय तो भी बडौदा नरेश ने मेरी

---

[1] प्रो0 शुक्ला, आर0एल0, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 534।

बहुत सहायता की है, उन्हें दिया हुआ वचन न तोडते हुए अपना अध्ययन पूरा करना मेरा पहला फर्ज है।'[1]

अम्बेडकर ने पूर्ण मनोयोग से अध्ययन जारी रखा। दो वर्ष की कठिन साधना के पश्चात् 'प्राचीन भारत का व्यापार (एसेन्ट इंडियन कामर्स) नामक शोध प्रबन्ध पर उन्हें कोलंबिया विश्वविद्यालय से एम0ए0 की डिग्री प्राप्त हुई। अम्बेडकर की शिक्षा की सतत साधना जारी रही। 1916 ई0 में डा0 गोल्डेन वाइजर की एन्थ्रोपोलाजी सेमिनार में अम्बेडकर ने– "कास्ट इन इण्डिया, देयर मेकेनिडम, जेनिसिस एण्ड डेवलपमेंट" नामक प्रमुख शोध पत्र पढ़ा। इसमें कुछ महत्वपूर्ण वाक्य इस प्रकार थे– स्वजातीय विवाह जाति व्यवस्था का प्राण सूत्र है। जाति व्यवस्था बहुवचन में ही संभव होती है, एकवचन में असंभव है। मनु के पूर्व जाति व्यवस्था थी, मनु ने सिर्फ उसे संहितावद्ध किया था।[2]

एम0ए0 की डिग्री प्राप्त करने के पश्चात् अम्बेडकर ने पी–एच0डी0 के लिए गहन अध्ययन शुरु किया। उनके शोध–प्रबन्ध का विषय था– "भारत के राष्ट्रीय मुनाफे का बॅटवारा– एक ऐतिहासिक और विवेचनात्मक अध्ययन", "National Divident of India- A Historical and Analytical Study"। उनकी यह थिसिस कोलंबिया विश्वविद्यालय से पी–एच0डी0 हेतु जून 1916 में स्वीकृत हुई थी। शैक्षिक क्षेत्र में अम्बेडकर की यह सफलता असाधारण थी। कोलंबिया विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने प्रीतिभोज देकर उनका हार्दिक अभिनंदन किया। उनके लिए अवाहम लिंकन का संकल्प और जीवन उद्देश्य तथा जार्ज बाशिंगटन की उद्यमशीलता अपने में समेकित करने वाले अम्बेडकर का अभिनन्दन करना, एक बड़ा सुयोग ही था।[3] बडौदा के महाराज सायजीराव गायकवाड ने भी उन्हें इस असाधारण सफलता के लिए तार द्वारा बधाई संदेश भेजा।[4]

---

[1] कीर, धनंजय, एस0के0, बाबा साहेब अम्बेदकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0–32।
[2] द इण्डियन अन इक्वालिटी, मई 1717।
[3] कीर, धनंजय,एस0के0, बाबा साहेब अम्बेदकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0–30।
[4] डा0 भटनागर, राजेन्द्र मोहन, डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृष्ठ सं0–37।

अम्बेडकर केइस शोध–प्रबन्ध का 'बजट' अध्याय बहुत महत्वपूर्ण था। उन्होंने इसमें स्पष्ट किया कि "ब्रिटिश सरकारकी सारी नीतियाँ ब्रिटिश उद्योगपतियों के हितों को ध्यान में रखकर बनाई जाती हैं।" अम्बेडकर धनाभाव के कारण शोध–प्रबन्ध को टाइप कराकर प्रकाशित नहीं करा सके। 3 वर्ष बाद उनके शोध–प्रबन्ध को लंदन के मेसर्स पी0एस0किंग एण्ड संस ने नये शीर्षक 'द इवोयूशन ऑफ प्राक्सीयल फाइनेंस इन ब्रिटिश इण्डिया' से प्रकाशित किया। इस ग्रन्थ की छपी हुई प्रतियाँ कोलम्विया विश्वविद्यालय को प्रस्तुत करते ही नियमानुसार उन्हें पी–एच0डी0 की उपाधि प्रदान की। यह घटना 1924 की है। अपने शोध प्रबन्ध में डा0 अम्बेदकर ने बड़ौदा नरेश सायजीराव गायकवाड के प्रति आभार प्रगट किया था। शोध–प्रबन्ध की भूमिका डा0 अम्बेडकर के प्रिय गुरु प्रो0 सेलिग्मन ने लिखी थी "इस विषय का इतना गहरा तथा सर्वांगीण अध्ययन अन्य किसी ने किया हो तो मुझे मालूम नहीं"।[1]

अमेरिका में अध्ययन के दौरान डा0 अम्बेडकर दो घटनाओं से विशेषरूप से प्रभावित हुए–

1. अमेरिका के संविधान में गुलामी समाप्त करने के लिए किया गया 14वाँ संशोधन।
2. वुकर टी0 वाशिंगटन की मृत्यु।

बाबा साहेब का ब्रिटेन अध्ययन

कोलम्बिया विश्वविद्यालय से एम0ए0 और पी–एच0डी0 की डिग्री प्राप्त करने के पश्चात् विश्वविख्यात शिक्षा केन्द्र लंदन में अध्यन करना चाहा। वे लंदन में कानून तथा अर्थशास्त्र का अध्ययन करना चाहते थे और इसके लिए उन्होंने बड़ौदा के महाराज की सहमति भी प्राप्त कर ली। महाराजा ने एक वर्ष की अवधि और बढ़ा दी थी। वे जून 1916 में न्यूयार्क से लंदन के लिए रवाना हुए। लंदन पहुँचने पर ब्रिटिश गुप्तचरों ने डा0 अम्बेडकर की सघन तलाशी ली क्योंकि अमेरिका उन दिनों भारतीय

[1] डा0 भटनागर, राजेन्द्र मोहन, डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृष्ठ सं0–37।

क्रांतिकारियों का प्रमुख केन्द्र था और ब्रिटिश सरकार को डा0 अम्बेडकर पर भी क्रांतिकारियों से मिले होनें की शंका थी, लेकिन यह शंका निराधार सिद्ध हुई।

डा0 अम्बेडकर ने लंदन में कानून का अध्ययन करने के लिए ग्रेट इन में प्रवेश लिया तथा अर्थशास्त्र का अध्ययन करने के लिए 'लंदन स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स एण्ड पोलिटकल सांइस' में प्रवेश लिया। उनके अर्थशास्त्र में विशेष दक्षता को देखते हुए लंदन स्कूल के प्रो0 ने उन्हें डी0एस0सी0 के लिए कार्य करने की अनुमति प्रदान की। इसी बीच बड़ौदा के दीवान पद पर मनुभाई मेहता की नियुक्ति हुई। नए दीवान ने अम्बेडकर को सूचित किया कि छात्रवृत्ति की निर्धारित कालावधि समाप्त हो गई है, इसलिए आप भारत लौट आइए। इस पत्र को पढ़कर अम्बेड़कर को गहरा धक्का लगा, लेकिन विवश होकर अत्यन्त दुःखी मन से भारत लौटने का निर्णय अध्ययन को बीच में छोंड़कर करना पड़ा। उन्होंने बाद में अपना अध्ययन पूर्ण करने का निश्चय किया और प्रोफेसर एडविन केयर की सिफारिश पर कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय ने यह अनुमति प्रदान की कि वे चार वर्ष के अन्दर अपना अध्ययन पूर्ण कर सकते हैं।

लंदन से वापस भारत लौटना

डा0 अम्बेडकर ने परिस्थितिवश दुःखी मन से भारत लौटने का निश्चय किया। वे भारत आने के लिए मार्सेलिस में कैसर-ए-हिन्द जहाज पर बैठे। उसी समय बड़े जोर से अफवाह उडी कि जिस जहाज पर डा0 अम्बेडकर बैठे थे, वह डूब गया, इससे उनके सभी शुभ चिन्ताकों मे शोक की लहर दौड़ गई, लेकिन शीघ्र ही ज्ञात हुआ कि डा0 अम्बेडकर का जहाज सुरक्षित है। जो जहाज डूबा था, उसमें सिर्फ उनका सामान, पुस्तकें आदि थीं। इन पुस्तकों के डूबने से डा0 अम्बेडकर को अपार कष्ट हुआ था, क्योंकि उन्हें वे अपने खर्चे में कटौती करके खरीद थे। डा0 अम्बेडकर के सम्मान में अछूत समाज ने एक सम्मेलन बुलाया जिसके आयोजनकर्ता संभाजी बाघमारे थे।

सम्मेलन की अध्यक्षता बंबई के चीफ मजिस्ट्रेट प्रेसीडेंसी श्री चुन्नीलाल शीतलचन्द्र ने की थी।[1]

योरप का अनुभव

यूरोप में रहकर डा0 अम्बेडकर ने न केवल विश्वविद्यालयी अध्ययन किया अपितु योरप के समाज, परिवेश, संस्कृति, रीति--रिवाज सभी का गहन अनुभव किया। उन्होंने जाना कि विश्व, समाजवाद और पूँजीवाद में विभक्त हो चुका है। वे पाश्चात्य जगत के प्रजातांत्रिक मूल्यों, इंग्लैण्ड की संसदीय व्यवस्था से विशेष प्रभावित हुए।[2] उन्होंने हिन्दू समाज को विश्व के उन्नत समाज से सम्बद्ध करने का इरादा कर लिया था। उन्होंने कहा कि विभाजित होकर स्वस्थ जीवन नहीं जिया जा सकता है। लोकतन्त्र की असफलता का मूल कारण पारस्परिक विभाजन है।

बड़ौदा रियासत की सेवा में डॉ0 अम्बेडकर

भारत वापस आकर डा0 अम्बेडकर बड़ौदा रियासत के साथ किये गये इकरारनामें के अनुसार बड़ौदा जाने का निश्चय किया, लेकिन उनके पास किराये के लिए पैसे नहीं थे। संयोग से इसी समय थामस कुक कम्पनी ने मुआवजे के रूप में उनको कुछ पैसे दिये। उन्होंने कुछ पैसे अपनी पत्नी को दिये और कुछ पैसे लेकर 20 सितम्बर 1917 को बड़ौदा के लिए प्रस्थान किए। उनके साथ बड़े भाई आनन्दराव भी थे। बड़ौदा नरेश ने व्यवस्था की थी कि कोई कर्मचारी डा0 अम्बेडकर को लेने रेलवे स्टेशन जाए लेकिन एक अछूत को लेने कोई नहीं गया। महाराजा के मन में अम्बेडकर को वित्त मंत्री बनाने की इच्छा थी, लेकिन अनुभव न होने के कारण सेना सचिव के पद पर उनकी नियुक्ति हुई।[3] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर सम्पूर्ण बांडमय के खण्ड 18 में उनका संक्षिप्त परिचय तथा बड़ौदा रियासत की सेवा के सम्बन्ध में इस प्रकार दिया है–

---

[1] विवेक रामलाल, डा0 अम्बेडकर जीवन और आदर्श, पृष्ठ सं0– 33।
[2] डा0 डी0 आर0 जाटव, थॉट ऑन डा0 अम्बेडकर, पृष्ठ सं0– 33।
[3] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 34।

कोलंविया विश्वविद्यालय में उन्होंने अर्थशास्त्र, समाज विज्ञान, राजनीति और नैतिक दर्शन शास्त्र का अध्ययन करते हुए लंदन गये और इण्डिया आफिस लाइब्रेरी तथा लंदन स्कूल ऑफ इकोनामिक्स में अनुसंधान कार्य आरम्भ करने के साथ–साथ ग्रेट इन में भी प्रवेश लिया।

भारत लौट कर उन्होंने अपनी सेवाएं उस व्यक्ति को अर्पित की जिसने उनकी मदद की थी और उन्हें बड़ौदा के एकाउन्टेन्ट जनरल के कार्यालय में प्रोवेशनर (परिविद्यार्थी) के रूप में नियुक्त किया गया।

बड़ौदा रियासत में दूसरी बार सेवा के दौरान भी उन्हें अस्पृश्यता का कटु अनुभव हुआ। यहाँ तक स्थिति आई कि हिन्दू या मुस्लिम कोई भी उन्हें आश्रय देने को तैयार नहीं हुआ। आखिरकार भूख और प्यास से व्याकुल डा0 अम्बेडकर एक पेड़ के नीचे खूब रोए।[1] अंत में असहाय होकर निराशाजनक स्थिति में नवम्बर 1917 को बड़ौदा रियासत की सेवा को छोंडकर बंबई के लिए प्रस्थान किए। महाराज गायकवाड निःसन्देह सुधारवादी और उदार थे लेकिन उनके कर्मचारी उतने ही प्रतिक्रियावादी और रूढ़िवादी थे।

लंदन में अपूर्ण शिक्षण को पूर्ण करना

बड़ौदा रियासत की सेवा छोड़ने के पश्चात् डा0 अम्बेडकर ने अध्यापन का पेशा अपनाया। सिडेनहम कालेज में अस्थायी प्रोफेसर का पद्भार ग्रहण किया, लेकिन उनके मन में अपना अध्ययन पूर्ण करने की उत्कट अभिलाषा थी। डा0 अम्बेडकर को इस बार सहयोग कोल्हापुर के महाराज साहू ने प्रदान किया। 5000 रुपये उन्होंने अपने मित्र नवल भथेना से कर्ज के रूप में लिया तथा कुछ पैसे प्रोफेसरी की नौकरी से बचाया था। डा0 अम्बेडकर जुलाई 1920 में पुनः लंदन के लिए रवाना हुए। सितम्बर 1920 से वे लंदन स्कूल ऑफ इकोनामिक्स एण्ड पोलिटिकल साइन्स में अपने अधूरे अध्ययन को पूर्ण करने में पूर्ण मनोयोग से संलिप्त हुए। वे अपना सारा समय इंडिया आफिस लाइब्रेरी,

---

[1] अम्बेडकर भाषण, जनसत्ता, 23 मई 1936।

लंदन विश्वविद्यालय के पुस्तकालय तथा शहर के अन्य पुस्तकालयों में बिताते थे। डा0 अम्बेडकर त्याग और परिश्रम से अध्ययनरत थे।

डा0 अम्बेडकर को इस समय घोर अर्थाभाव का सामना करना पडा। इस विषम परिस्थिति में उन्होंने 4 सितम्बर 1921 में छत्रपति साहू महाराज को पत्र लिखकर 200 पौण्ड भेजने का निवेदन किया और वादा किया कि हिन्दुस्तान लौटने पर पूरी रकम ब्याज सहित वापस कर देंगे।[1] महाराज ने वह रकम भेज दी जिससे लंदन में उनका अध्ययन संभव हो सका। डा0 अम्बेडकर ने अपने अध्ययन को जारी रखते हुए डॉक्टर ऑफ साइन्स उपाधि के लिए (द प्राब्लम ऑफ रूपी) 'रुपये की समस्या' नाम प्रबन्ध अप्रैल 1922 को कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में प्रस्तुत किया। इसी समय वे वार–एट–लॉ की उपाधि भी प्राप्त करने में सफल रहे। लंदन में अपना अध्ययन पूर्ण कर जर्मनी के प्रसिद्ध वोन विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। यह मई 1922 की बात है। डा0 अम्बेडकर के जर्मनी आए अभी 9 माह ही हुए थे लंदन विश्वविद्यालय के प्रो0 एडविन पत्र लिखकर तत्काल लंदन आने को कहा। लंदन पहुँचने पर डा0 अम्बेडकर को ज्ञात हुआ कि ब्रिटिश इम्पीरियलिस्टक एग्जामिनरों ने उन्हें बिना निष्कर्षों को बदले पुनः थिसिस लिखने का परामर्श दिया।[2] प्रो0 लस्की जैसे विचारकों को भी डा0 अम्बेडकर के प्रबन्ध के निष्कर्षों में अतिवाद लगा। इसमें ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध कुछ तीखी टिप्पणियां थीं परन्तु थीसिस को पुनः लिखने के लिए उनके पास न तो समय था और नही धन। निराश मन से 14 अप्रैल 1923 को लंदन से वापस लौट आये। अपने घर पर तीन–चार महीने परिश्रम कर कतिपय परिवर्तन के साथ पुनः थीसिस लिखकर कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय भेज दिया। डा0 अम्बेडकर को कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय ने दिसम्बर 1929 में डॉक्टर ऑफ साइन्स की उपाधि प्रदान की।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि डा0 अम्बेडकर ने अपनी त्याग, लगन और कठिन परिश्रम से शिक्षा के क्षेत्र में पी–एच0डी0, डी0एस0सी0, एम0एस0सी0, बार एट

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 41।
[2] डा0 भटनागर, राजेन्द्र, डा0 अम्बेडकर जीवन–दर्शन, पृष्ठ सं0– 48।

लॉ जैसी गौरवशाली उपाधियों को धारण कर न केवल कीर्तिमान स्थापित किया अपितु यह दिखा दिया कि शिक्षा केवल द्विजों के लिए नहीं है, बल्कि यदि दलित, शोषित–अछूत समुदाय को भी अवसर और सुविधा मिले तो ज्ञान के क्षेत्र में वे किसी द्विज से पीछे नहीं हैं।

अस्पृश्यता से साक्षात्कार

बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर का अस्पृश्यता से साक्षात्कार शैशवाकाल में ही हो गया था वे बचपन में मां के साथ बाजार जाते तो देखते थे कि माँ के सामने दुकानदार दूर से कपड़े फेंक देता था जिससे वह अछूत स्त्री के संपर्क से बच सकें। डा0 अम्बडकर बचपन में अपने बड़े भाई आनन्दराव और एक भांजे के साथ एक बार पिताजी से मिलने कोरेगांव जा रहे थे। पांडली से मसूर तक सभी बच्चे रेलगाड़ी से गये। रेलवे स्टेशन से वे कोरेगांव जाने के लिए एक बैलगाड़ी की व्यवस्था किए। बैलगाड़ी के कुछ आगे बढ़ने पर बातचीत में गाड़ीवाले को ज्ञात हुआ कि बच्चे महार जाति के अछूत हैं। वह आग बबूला हो गया और बच्चों को गाड़ी से दूर फेंक दिया। भीम और उनके भाइयों ने गाड़ीवान से बहुत विनय किया कि रात के समय वे कहाँ जायेंगे। वह दुगुना किराया ले ले लेकिन कोरेगांव पहुँचा दे। अंत में गाड़ीवान इस शर्त पर तैयार हो गया कि बच्चे गाड़ी चलायें और वह पीछे पैदल चलेगा। भूखे–प्यासे वे सभी किसी प्रकार अपने पिताजी के पास पहुँचे।[1] उस दिन बालक अम्बेडकर को अपनी दीन–हीन कारुणिक जिन्दगी की एक झलक मिली। अस्पृश्यता के कारण ही कोई नाई बाल नहीं काटता था। इसलिए उनकी बहन चबूतरे पर बैठकर बाल काटती थी।

स्कूली जीवन में अम्बेडकर को अस्पृश्यता का और भी कटु अनुभव हुआ। एक दिन भीम स्कूल जा रहे थे और उस दिन वे अकेले थे। रास्ते में घनघोर वर्षा आरम्भ हो गई और उससे बचने के लिए बालक भीम पास के मकान की दीवार के सहारे खड़ा हो गया। उस मकान की महिला जानती थी कि वह अछूत है। वह दौड़ते

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 16।

हुए बालक भीम के पास आयी और उन्हें बरसते हुए पानी में धक्का दे कर गिरा दिया। उनकी सारी पुस्तकें भींग गईं। स्कूल का वातावरण भी छुआ–छूत की भावना से ओत–प्रोत था। बालक भीम अन्य लड़कों के साथ कक्षा में बैठ नहीं सकता था, न ही बाल्टी का पानी पी सकता था, अपना बैठने का टाट स्वयं लेकर वह जाते थे। स्कूल के संस्कृत अध्यापक ने भीम तथा उसके बड़े भाई आनन्दराव को संस्कृत पढ़ाने से मना कर दिया था। ए सभी घटनायें बालक भीम के मन में गहरी छाप छोंड़ी।

अस्पृश्यता से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण घटना एलफिस्टन के माध्यमिक स्कूल में घटी। एक दिन स्कूल के एक प्राध्यापक ने ब्लैक बोर्ड पर एक उदाहरण हल क़रने के लिए अम्बेडकर को बुलाया। अम्बेडकर ब्लैक बोर्ड की तरफ बढ़ने लगे, इतने में ही कक्षा के बच्चों ने शोर आरम्भ किया– रोको– रोको और सभी बच्चे ब्लैक बोर्ड की ओर दौड़ने लगे। बच्चे ब्लैक बोर्ड के पीछे रखे गऐ अपने–अपने टिफिन बाक्स को लेने लगे। उन्हें लगा कि भीम द्वारा ब्लैक बोर्ड के स्पर्श से उनके टिफ़िन अपवित्र हो जायेंगे। इस घटना ने अम्बेडकर के कोमल मस्तिष्क पर गहरा आघात किया और उसे आजीवन भूल नहीं सके। स्कूल के ही कुछ अध्यापक कहते– अरे अछूत तू महार है। तुझे पढ़ाई करके क्या करना है? तुम स्कूल छोड़ दो तो अच्छा है।

डा0 अम्बेडकर ने अपने स्कूली जीवन के कष्टों का विवरण अपने संस्मरण में इस प्रकार दिया है– मेरे स्कूल में एक मराठा जाति की स्त्री नौकरी पर थी। वह स्वयं अशिक्षित थी लेकिन वह छुआछत मानती थी। मुझे छूने से बचती थी। मुझे याद है कि एक दिन मुझे बहुत प्यास लगी थी। नल को छूने की मुझे अनुमति नहीं थी।[1] मैंने मास्टर जी से कहा कि मुझे पानी चाहिए? उन्होंने चपरासी को आवाज देकर नल खोलने के लिए कहा। चपरासी ने नल खोला और तब मैंने पानी पिया। चपरासी गैर हाजिर होता तो मुझे प्यासा ही रहना पड़ता। घर आकर ही मेरी प्यास बुझती थी।

---

[1] द स्पोक आंबेडकर खण्ड–2, पृष्ठ सं0– 162, भगवानदास (जालंधर, 1977)

डा0 अम्बेडकर को अस्पृश्यता का कटु अनुभव केवल विद्यार्थी जीवन में ही नहीं हुआ अपितु बड़ौदा रियासत में सेवा के दौरान भी इसी अस्पृश्यता के भयावह का दर्शन हुआ। एलफिस्टन कालेज से स्नातक होने के बाद पिता जी की इच्छा के विपरीत बड़ौदा रियासत में नौकरी कर ली। पिता की बीमारी के कारण 15 दिन के अन्दर ही नौकरी छोड़ देनी पड़ी लेकिन बड़ा कटु अनुभव रहा वह भी अस्पृश्यता का। विदेश में शिक्षा पूरी करके भारत वापस आकर डा0 अम्बेडकर बड़ौदा रियासत के साथ किये गये इकरारनामें के अनुसार 20 सितम्बर 1917 को वे बड़ौदा के लिए अपने घर बंबई से प्रस्थान किए। बड़ौदा सरकार की इस बार की सेवा के दौरान उन्हें जो अनुभव हुए वे रोंगटे खड़े करने वाले हैं। जब डा0 भीमराव अम्बेडकर बड़ौदा स्टेशन पर पहुँचे तो आशा के विपरीत रियासत का कोई भी व्यक्ति उन्हें लेने नहीं आया था। धनंजय कीर के अनुसार बड़ौदा नरेश ने यह व्यवस्था की थी कि कोई कर्मचारी डा0 अम्बेडकर को लेने रेलवे स्टेशन पर जाए लेकिन एक उच्च शिक्षित अछूत को लेने कोई नहीं गया। महाराजा के मन में अम्बेडकर को वित्त मंत्री बनाने की इच्छा थी, किन्तु अनुभव के अभाव में सेना सचिव के पद पर उनकी नियुक्ति हुई।[1] वे महार जाति के अछूत थे, इसीलिए सरकार के अधिकारी और कर्मचारी किसी ने भी उनके साथ सहयोग नहीं किया। चतुर्थ श्रेंणी का कर्मचारी भी उनके लिए कागज या फाइल फेंकता था। उन्हें कार्यालय में लिपिकों को रखा पानी तक पीने को नहीं मिलता था, पानी पिलाने की बात तो दूर की थी।

पूरे शहर में यह बात फैल गई थी कि एक अछूत को महाराज ने सेवा (नौकरी) में रख लिया है। उनके रहने की कोई व्यवस्था नहीं थी। हिन्दू या मुस्लिम कोई भी व्यक्ति उन्हें कमरा किराये पर देने के लिए तैयार नहीं हुआ। अंत में वे एक पारसीक होटल में ठहरे। सौभाग्य से वहाँ कोई और ठहरने वाला नहीं था किन्तु 10 दिन बाद बड़ी संख्या में पारसी लोग हाथ में लाठी लिए आए और उन्हें बुलाया तथा पूँछा कि

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 34।

उनके समुदाय के लिए आरक्षित होटल को भ्रष्ट करने का उनका क्या मतलब है? और कहा कि उसी शाम तक होटल खाली कर दें।[1]

अब नगर में उन्हें कोई भी व्यक्ति आश्रय देने वाला नहीं था। उन्होंने दो मित्रों से आश्रय मांगा जिसमें से एक हिन्दू था और दूसरा इसाई। उनमें से पहले ने कहा कि यदि तुम मेरे घर आओगे तो मेरा नौकर घर छोंड़ देगा। दूसरा मित्र अपनी पत्नी से परामर्श करना चाहता था। डा0 अम्बेडकर यह जानते थे कि पति–पत्नी दोनो रूढ़िवादी ब्राह्मण वंशज थे और पत्नी में अभी भी जातीयता की भावना भरी है। आश्रय विहीन डा0 अम्बेडकर भूख और प्यास से व्याकुल होकर एक पेड़ के नीचे बैठ कर खूब रोये।[2] अंत में असहाय होकर निराजाशनक स्थिति में नवम्बर 1917 को बडौदा रियासत की सेवा छोंड़ कर बंबई के लिए प्रस्थान किये।

इस प्रकार डा0 अम्बेडकर को शैशवाकाल से ही हिन्दू समाज में हजारों वर्ष से चली आ रही अस्पृश्यता का साक्षात्कार हुआ। स्कूली जीवन में उसका और भी कटु अनुभव हुआ तथा बड़ौदा रियासत की सेवा के दौरान अस्पृश्यता का व्यवहार तो दहला देनेवाली हृदय विदारक घटना थी। डा0 अम्बेडकर ने आजीवन अस्पृश्यता के विरुद्ध संघर्ष किया।

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर सम्पूर्ण बांग्रामय खण्ड–18, पृष्ठ सं0– 11।
[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 34

अध्याय
पाँच

अध्याय– पाँच

"अस्पृश्यता और मनुवादी व्यवस्था के खिलाफ आजीवन संघर्ष"

मानव इतिहास में सदा ही जालिम और शोषणवादी एवं अत्याचारपूर्ण व्वस्था का विरोध होता रहा है और जब उसका विरोध सफल हुआ, उसे आजादी मिली। ऐसा ही अत्याचार एवं अमानवीय व्यवहार हजारों वर्षों से तथाकथित देव भूमि भारत में जहाँ कण–कण में ईश्वर का वास माना जाता है सर्वम् इदं खलु ब्रह्मं, सर्वे भवन्तु सुखिना, वसुधैव कुटम्बकम् का उद्घोष किया जाता रहा है, एक बड़े वर्ग को अछूत मान कर किया जाता रहा है। अछूतों के साथ जानवरों से भी वदतर व्यवहार किया जाता रहा है, जिसका रंचमात्र उल्लेख रोंगटे खड़े कर देने में समर्थ है। स्पृश्यों के अत्याचार से कराह रहे अस्पृश्यों के उद्धार के लिए बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकरके रूप में एक महामानव का जन्म हुआ जिसने अस्पृश्यता उन्मूलन, उसको मानवीय अधिकार दिलवाने तथा मनुवादी व्यवस्था को समाप्त करने के लिए आजीवन संघर्ष किया और अपने मिशन को सफलता की मंजिल तक पहुँचाया, जिससे शोषित, दलित जनों को अत्याचार से मुक्ति मिली।

भारतीय समाज का एक बड़ा वर्ग अत्यन्त प्राचीन काल से अस्पृश्य या अछूत माना जाता रहा है। भारत में अस्पृश्यता के उद्गम के विषय में बड़ा विवाद है। बाबा साहेब ने अक्टूबर 1948 में अपनी बहु चर्चित पुस्तक अनहचे वल्स (अछूत कौन और कैसे) प्रकाशित कर स्पष्ट किया कि भारत में अस्पृश्यता का उद्गम 400 बी0सी0 के आस–पास हुआ था। इसमें उन्होंने स्पष्ट किया कि छुआछूत दो कारणों से पैदा हुई–

1. ब्राह्मणों द्वारा बिखरे हुए लोगों और बौद्धों के साथ घृणा की भावना।

2. बिखरे हुए लोगों द्वारा गोमांस खाते रहना, जबकि दूसरे लोगों ने यह खाना त्याग दिया था।

इस पुस्तक के प्रकाशन के पूर्व बाबा साहेब ने अपने अमेरिका में अध्ययन के दौरान मई 1916 को डा0 ए0ए गोल्डन विज्नर द्वारा आयोजित नृतत्व विज्ञान विषयक गोष्ठी में एक निबन्ध पढ़ा था, जिसका शीर्षक था– भारत में जाति–उद्‌भव, विकास और स्वरूप।[1] इस निबन्ध में उन्होंने कहा– मानव समाज मानव सम्बन्धों का जाल है और उन्होंने समाज की अत्यतिक व्यक्त्विादी कल्पना को अस्वीकार किया और उसे बहुत बड़ा दोष बताया– ''यह कहना कि व्यक्ति ही समाज को बनाते हैं, बहुत असत्य कथन है। वर्गों के मिलने से समाज बनता है। वर्ग के संघर्ष के सिद्धान्त में कुछ अतिश्योक्ति हो सकती है, लेकिन यह सच है कि समाज के भीतर वर्ग होते हैं। उन वर्गों के आधार अलग–अलग हो सकते हैं। आधार आर्थिक, बौद्धिक या सामाजिक हो सकते हैं, किन्तु व्यक्ति सदैव समूह का सदस्य होता है। यह सार्वभौम सत्य है और प्राचीन हिन्दू समाज इस नियम का अपवाद नहीं हो सकता और हम जानते हैं कि वह अपवाद नहीं था। अगर हम इस बात को ध्यान में रखेंगे तो जाति के उद्‌गम के विषय में हमारे अध्ययन में काफी मदद मिलेगी। तब हमें इतना ही निश्चित करना होगा कि किस वर्ग ने सबसे पहले अपने को जाति के रूप में स्थापित किया, क्योंकि धर्म, जाति निकटवर्ती संकल्पनाएं हैं और कालान्तर में ही दोनो अलग–अलग होती हैं। बंद या जमा हुआ वर्ग ही जाति है।[2]

डा0 अम्बेडकर ने अपने निबन्ध में यह भी स्पष्ट किया है कि जब समूह के बाहर विवाहों के स्थान पर समूह के अन्दर असंग्रोत विवाह की प्रणाली चलने लगती है तो वर्ग जाति में परिणत होता है। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि मनु ने जाति प्रणाली का निर्माण नहीं किया। वह यह कर ही नहीं सकता था। जाति मनु से पहले अस्तित्व में

---

[1] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृ0सं0– 20।
[2] राइटिंग एण्ड स्पीडिंग, खण्ड–1, पृ0सं0– 15।

थी।[1] बाबा साहेब ने जाति की उत्पत्ति के सम्बन्ध में वंश या नस्ल, रंग या व्यवसाय के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं किया और अपने विद्वतापूर्ण निबन्ध में निष्कर्ष निकाला – वंश की दृष्टि से सभी लोग शंकर है, सांस्कृतिक एकता उनकी एक रूपता का कारण है, इस बात को मानकर चलते हुए मैं यह कहने का साहस कर सकता हूँ कि संकर रचना के बावजूद सांस्कृतिक एकता में कोई भी देश भारत का मुकाबला नहीं कर सकता। इसमें न केवल भौगोलिक एकता है अपितु उससे ज्यादा गहरी और मूलभूत एकता है। सांस्कृतिक एकता जो एक छोर से दूसरे छोर तक सारे देश में व्याप्त है लेकिन इस सांस्कृतिक एकता के कारण ही जाति की गुत्थी को सुलझाना अत्यन्त कठिन हो जाता है। यदि हिन्दू समाज परस्पर विलग इकाईयों का संघ होता तो यह समस्या आसान होती किन्तु जाति समरूप सांस्कृतिक इकाई के विभक्तीकरण का परिणाम है और जाति के उद्‌गम का स्पष्टीकरण इस विभक्तीकरण की प्रक्रिया में खोजा सकता है। मेरा कहना है कि शुरू में एक समूह था और अनुकरण तथा बहिष्कार की प्रक्रियाओं से समूह ने जातियों का रूप ले लिया।[2]

इस बौद्धिक निबन्ध में डा0 अम्बेडकर ने जाति व्यवस्था के उद्‌गम विकास पर विस्तार से प्रकाश डाला। साथ ही इस पर भी प्रकाश डाला कि अस्पृश्य वर्ग के साथ कितने व्यापक स्तर पर अनुचित एवं निर्दयतापूर्ण व्यवहार किया जाता है। अस्पृश्यों के साथ अति प्राचीनकाल से यह अमानवीय व्यवहार किया जाता रहा है। भारत आने–जाने वाले फाह्यान (399 – 414 ई0) अलवरूनी तथा ह्वेनसांग (629) इत्सिंग (672 ई0) अलवरुनी, वारवोसा आदि विदेशी यात्रियों ने अस्पृश्यों की स्थिति पर विस्तार से अपने–अपने यात्रा वृतान्त में प्रकाश डाला है। इन सभी यात्रियों ने लिखा है कि अस्पृश्य लोगों को गाँव से बाहर निवास करना पड़ता था और सफाई, मृत पशुओं को उठाना, शमशान घाट की रखवाली करना आदि कार्य करना पड़ता था। ह्वेनसांग ने अपने यात्रा वृत्तान्त सि–यू–कि में लिखता है कि कसाई और मेहतर नगर के बाहर ऐसे

---

[1] वही, पृ0सं0– 16।

[2] राइटिंग एण्ड स्पीडिंग, खण्ड–1, पृ0सं0– 6 और 22।

मकानों में निवास करते थे जो किसी विशेष चिन्ह से जाने जाते थे। उन्हें जब कभी भी गाँव में आना होता था तो लकड़ी बजाते थे जिससे लोग जान कर हट जाए और अपवित्र होने से बच सकें।[1]

मनु (मनु स्मृति के लेखक मनु का काल 200 बी0सी0 माना जाता है) जैसे स्मृतिकारों ने शूद्रों, अस्पृश्यों पर कठोर प्रतिबन्ध लगा दिये और केवल सेवा कर्म ही उनका व्यवसाय बताया। मनु द्वारा लगाये गये कुछ महत्वपूर्ण प्रतिबन्ध इस प्रकार थे–

1. अगर कोई शूद्र अहंकारवश ब्राह्मणों को धर्मोपदेश देने की धृष्टता करता है तो राजा को चाहिए कि वे उसके मुँह और कान में खौलता तेल डाल दें।[2]
2. समर्थ होने पर भी शूद्र को धन का संग्रह नहीं करना चाहिए, क्योंकि नीच पुरुष जिसने धन का संग्रह कर लिया है, अहंकारी हो जाता है।[3]
3. यदि ब्राह्मण अपनी जीविकोपार्जन के लिए कष्ट में है तो वह निःसंकोच अपने शूद्र की सम्पत्ति को अधिग्रहीत कर ले।[4]
4. जो शूद्र शिष्यों को अध्ययन कराता है और जिस किसी का शिक्षक शूद्र होता है वह शूद्र को नियुक्त करने के कारण आयोग्य हो जाते हैं।[5]
5. ब्राह्मा ने शूद्रों के लिए केवल एक ही व्यवसाय नियत किया है– विनम्रतापूर्वक तीनों वर्णों अर्थात– ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य की सेवा करना।[6]
6. प्रत्येक ब्राह्मण शूद्र को दास कर्म करने के लिए बाध्य कर सकता है, चाहे उसे (शूद्र को) उसने खरीद लिया हो अथवा नहीं, क्योंकि शूद्र की सृष्टि ब्राह्मणों का दास बनने के लिए ही की गई है।[7]

---

[1] झा और श्रीमाली, प्राचीन भारत का इतिहास, पृ0सं0– 310।
[2] मनु समृति, 8–272।
[3] मनु स्मृति, 10– 219।
[4] मनु स्मृति, 8–417।
[5] मनु स्मृति, 3–456।
[6] मनु स्मृति, 1–191।
[7] मनु स्मृति, 8–271।

7. शूद्रों को बचा–खुचा अन्न, घर–गृहस्थी का पुराना सामान दिया जाए।[1]

8. यदि शूद्र द्विजों के नाम और जाति का इन द्विजातियों के नाम तथा जाति का उच्चारण कर कटु वचन अपमानजनक रीति में उच्चारण करता है तब उसके मुंह में दहकती हुई लोहे की दस अंगुली लंबी गरम कील घुसेड़ दी जाए।[2]

इसके अतिरिक्त बड़ी संख्या में प्रतिबन्ध मनु ने अपनी स्मृति में लगाये थे। अन्य संस्मृतिकारों ने भी कतिपय परिवर्तनों के साथ शूद्रों पर प्रतिबन्ध लगाये। भारत के प्रत्येक गाँव में संक्षेप में 2 बस्तियां होती थीं–

1. स्पृश्य लोगों की बस्ती।
2. अस्पृश्य लोगों की बस्ती।

अस्पृश्य या अछूतों की बस्ती गाँव से बाहर होती थी। प्रत्येक गाँव में अस्पृश्य लोगों की एक आचार संहिता होती थी, जिसका अस्पृश्यों को पालन करना पड़ता था। यह संहिता उन कार्यों को निश्चित करती है जिनको करने या न करने पर अस्पृश्य लोगों का अपराध माना जाता है। इन अपराधों की कुछ प्रमुख सूची इस पकार है[3]–

1. अस्पृश्यों को चाहिए कि वे अपने घर स्पृश्यों की बस्तियों से दूर बनाएं।
2. अस्पृश्य लोगों के घर गाँव के बाहर दक्षिण दिशा में होने चाहिए।
3. अस्पृश्यों को चाहिए कि वे इस बात का ध्यान रखें कि उनके छू जाने या छाया मात्र से भी पाप लगता है। अगर वह इस नियम को तोड़ता है, तब वह अपराध करता है।
4. अगर कोई अस्पृश्य स्वच्छ कपड़े, जूते, घड़ी या सोने के आभूषण पहनता है तब वह अपराध करता है।

---

[1] मनु स्मृति, 8– 413।
[2] मनु स्मृति, 10–125।
[3] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड–9, पृ0सं0– 42–43।

5. अपने बच्चों के अच्छे नाम रखता है, तब वह अपराध करता है। उसके नाम हीनता या घृणा सूचक होने चाहिए।

6. अगर कोई अस्पृश्य किसी स्पृश्य को प्रणाम आदि नहीं करता तो वह अपराध करता है।

अस्पृश्यों को कतिपय निर्धारित कर्त्तव्यों का पालन करना पड़ता था[1]–

1. अस्पृश्यों को चाहिए कि वे किसी स्पृश्य के घर की घटना जैसे– मृत्यु या विवाह की सूचना दूसरे गाँवों में रहने वाले सगे सम्बन्धियों तक पहुँचायें।

2. अस्पृश्यों को चाहिए कि स्पृश्य के घर में विवाह के अवसर पर ऐसे कार्य जैसे– लकड़ी चीरना या आने–जाने का कार्य करें।

3. अस्पृश्य को चाहिए कि जब स्पृश्य की लड़की अपने पिता के घर से पति के गाँव जा रही हो तो वह उसके साथ–साथ जाये, चाहे वह गाँव कितनी ही दूर क्यों न हो।

4. अस्पृश्यों को चाहिए कि वे कुछ त्योहारों पर अपनी स्त्रियों को गाँव के स्पृश्य लोगों के हवाले कर दें, जिससे वे उनके साथ फूहड़ मजाक कर सकें।

इन उल्लेखों से स्पष्ट होता है कि समाज में अस्पृश्य लोगों के साथ अत्यन्त अमानवीय पशुतापूर्ण निर्मम व्यवहार किया जाता रहा है। उनके साथ हजारों वर्षों से ऐसा ही अत्याचारपूर्ण व्यवहार किया जाता रहा है। व्यापक परिवर्तनों के बावजूद भी ब्रिटिशकाल में अस्पृश वर्ग के साथ अत्याचारों में कोई खास कमी नहीं आई थी। समाचार पत्रों में भी इस प्रकार की अमानवीय घटनायें प्रकाशित होती रहती थीं। दिल्ली के तेज समाचार पत्र ने 4 सितम्बर 1927 के अंक में यह समाचार छापा– ''हरिजनों ने वायकोम शिव मन्दिर को उसके एकदम पास जाकर अपवित्रकर दिया। इस पर उस क्षेत्र के हिन्दुओं ने प्रचुर धन लगाकर मंदिर को शुद्ध करने का फैसला किया है, जिससे यहाँ

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड–9, पृ0सं0– 44।

फिर से पूजा आरम्भ हो सके।"[1]

प्रताप समाचार पत्र में 12 फरवरी 1923 को यह समाचार प्रकाशित हुआ– आगरा क एक चमार ने किसी ब्राह्मण को उसके घर में विष्णु की मूर्ति की पूजा करते हुए देख अपने घर में भी ऐसा ही किया। जब ब्राह्मण को इसका पता चला तो वह गुस्से से लाल पीला हो उठा। उसने बहुत से गाँव वालों की सहायता से अभागे हरिजन को पकड़कर उसकी जम कर पिटाई की और कहा– तुझे भगवान विष्णु की पूजा करने की हिम्मत कैसे हुई? इसके बाद उन्होंने उसके मुंह में कीचड़ भरकर छोड़ दिया। चमार ने हताश होकर हिन्दू धर्म त्याग दिया और इस्लाम धर्म को स्वीकार कर लिया।[2]

टाइम्स ऑफ इण्डिया में 7 नवम्बर 1928 को यह समाचार छपा– वरसाड तालुका में श्री ठक्कर ने एक कुए के पास देखा कि वहाँ एक भंगिनी खड़ी लोगों से पानी मांग रही थी। वह वहाँ सबेरे से दोपहर तक खड़ी रही, लेकिन किसी ने भी उसे पानी नहीं दिया...... एक बार हमारे अध्यापक चुन्नीभाई ने अपनी बाल्टी से एक भंगी के बरतन में सीधे पानी डालने का दुस्साहस किया तो उन्हें इस पर कड़ी चेतावनी दी गई कि मास्टर यहाँ यह सब नहीं चलेगा। कुंए के पास ढलान पर एक छोटा सा हौज बना दिया जाता है और जिन लोगों को दया आती है वे इस हौज में पानी डाल देते हैं। इस हौज में नीचे की तरफ बॉस की टोटी लगी होती है। भंगिनी उस टोटी के पास अपना बरतन रख देती है जिसके भरने में घण्टा–डेढ़ घण्टा लग जाता है।[3]

6 जून 1932 के नेशनल हेराल्ड में यह छपा– गढ़वाल के चाँदकोट हरिजनों के दस परिवार जिनमें कुल मिलाकर 33 लोग हैं,सवर्ण हिन्दुओं द्वारा सताए जाने पर लगभग दो महीने तक इधर–उधर मारे–मारे फिरते रहने के बाद वहाँ के अधिकारियों की सहायता से अपने गाँव रिंगवाड़ी वापस आ गए। याद होगा कि इन लोगों ने महात्मा गाँधी और स्वामी श्रद्धानन्द के अछूतोद्धार आन्दोलन से प्रेरित होकर

---

[1] तेज समाचार पत्र, 4 सितम्बर 1927।
[2] प्रताप समाचार पत्र, 12 फरवरी 1923।
[3] टाइम्स ऑफ इण्डिया, 7 नवम्बर 1928।

जनेऊ पहन लिए थे और सन्ध्योपासना शुरू कर दी थी। लेकिन गढ़वाल के सवर्ण हिन्दुओं को यह सहन नहीं हुआ और उन्होंने उन्हें प्रताड़ित करना आरम्भ किया।.......... एक जगह 4 हरिजनों को पकड़कर उनसे जबरदस्ती एक भैंसा कटवाया गया और उन्हें उसका गोश्त खाने के लिए कहा गया।[1]

टाइम्स ऑफ इण्डिया के 4 जनवरी 1928 के अंग में यह समाचार छपा– ''मई 1927 के महीने में इंदौर जिले के कनारिया, बिछौली, हप्सी, मरदाना और लगभग 15 अन्य गाँवों के सवर्ण हिन्दुओं ने अपने–अपने गाँवों में वलाई जाति के लिए यह चेतावनी दी है कि यदि वे लोग गाँव में उनके साथ रहना चाहते हैं तो उन्हें निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा[2]–

1. वलाई जाति के लोग जरी की किनारी वाली पगड़ी नहीं पहनेंगे।
2. वे रंगीन या किनारीदार धोती नहीं पहनेंगे।
3. वे हिन्दू की मृत्यु होने पर उनके रिश्तेदारों को खबर करने जायेंगे।
4. वे हिन्दुओं के यहाँ विवाह के अवसर पर बारात के आगे और विवाह के दौरान गाने–बजाने का काम करेंगे।
5. वलाई स्त्रियां फैंसी लंहगा व कुर्ता नहीं पहनेंगी।
6. वलाई स्त्रियां हिन्दू घरों में दाई वगैरह का काम करेंगी।
7. वलइयों को ये खिदमतगारी बिना उजरत करनी होगी और हिन्दू खुशी से जो दे उसे उन्हें स्वीकार करना पड़ेगा।
8. यदि वलाई इन शर्तों को नहीं मानते तो वे गाँव छोंड दें।

जब वलाइयों ने इन शर्तों को मानने से इंकार कर दिया तब हिन्दुओं ने उनके विरुद्ध कार्यवाही शुरू कर दी। वलाइयों का कुंओं से पानी लेना बन्द कर दिया गया। वे

---

[1] नेशनल हेराल्ड, 6 जून 1932।
[2] टाइम्स ऑफ इण्डिया, 4 जनवरी 1928।

अपने जानवरों को चरा नहीं सकते थे। उनका हिन्दुओं के जमीन पर से गुजरना बन्द कर दिया गया। हिन्दुओं ने अपने जानवर बलाइयों के खेत में चरने के लिए छोंड़ दिए। वलाइयों ने इंदौर दरबार में इन अत्याचारों के खिलाफ गुहार की परन्तु उन्हें समय पर मदद नहीं मिली और अत्याचार बढ़ता गया। सैकड़ों वलाइयों को अपने पैतृक गाँव बच्चों सहित छोड़ देना पड़ा।[1]

महात्मा गाँधी के पत्र यंग इण्डिया में 12 दिसम्बर 1929 के अंग में काठियावाड़ के एक स्कूल में मास्टर के हवाले से यह समाचार छपा– "मेरी पत्नी ने इस महीनें में 5 तारीख को एक बच्चे को जन्म दिया। 7 तारीख को वह बीमार पड़ गई और उसे दस्त लग गए। वह कमजोर होती गई। उसे बहुत दर्द होने लगा। मैं डा0 को बुलाने गया लेकिन उसने कहा कि वह एक हरिजन के घर नहीं जाएगा। वह बच्चे की जाँच करने के लिए तैयार भी नहीं हुआ। तब मैं नगर सेंठ के पास गया और गरसिया दरबार में गया उनसे गुजारिश की कि वे इस मामले में मेरी मदद करें। नगर सेंठ में बतौर डाक्टर की फीस दो रुपये की जमानत दी। डाक्टर इस शर्त पर आया कि वह उन्हें हरिजन की बस्ती के बाहर देखेंगे। मैं अपनी पत्नी और उसके हाल के हुए बच्चे को बस्ती के बाहर ले गया तब डाक्टर ने अपना थर्मामीटर एक मुसलमान को दिया, उसने मुझे दिया और मैंने उसे अपनी पत्नी को लगाया और बाद में इसी प्रक्रिया के द्वारा डाक्टर को लौटाया गया। तब कोई रात के आठ बजे होंगे। डाक्टर ने लालटेन की रोशनी में थर्मामीटर देखा और कहा कि मरीज को निमोनिया हो गया है। इसके बाद डाक्टर चला गया और उसने दवाई भेज दी। मैं बाजार से अलसी का तेल खरीद लाया और उसे अपनी पत्नी के सीने पर मला। इसके बाद डाक्टर दुबारा आने को तैयार नहीं हुआ हालाकि मैंने उसकी फीस दो रुपये दी थी। यह बीमारी खतरनाक है। भगवान ही भला करेगा।"

---

[1] यंग इण्डिया, 12 दिसम्बर, 1929।

मेरे जीवन की ज्योति बुझ गई। आज दोपहर 2 बजे मेरी पत्नी का देहान्त हो गया।[1]

यह समाचार प्रमाण है कि एक पढ़ा–लिखा डाक्टर जैसा हिन्दू भी एक अस्पृश्य को छूने के बजाय अमानवीय होना अधिक पसन्द करता है। ए सभी घटनायें तो उस अत्याचार और अमानवीय व्यवहार की एक झलक मात्र हैं जो अस्पृश्य वर्ग को प्रतिदिन सहन करनी पड़ती थीं। इन अत्याचारों का स्मरण तो रोंगटे खड़े करने वाला है। अपने को सभ्य कहलाने वाले स्पृश्यों द्वारा हजारों वर्षों से अस्पृश्य वर्ग के साथ ऐसा ही बर्बरतापूर्ण व्यवहार किया जाता रहा है।

बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर को स्वयं अपने शैशवकाल से ही अपमानजनक एवं तिरस्कारपूर्ण व्यवहार का सामना करना पड़ा था। इसलिए उन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य ही अस्पृश्यता उन्मूलन और उनके साथ हो रहे समानतापूर्ण व्यवहार एवं अत्याचारों के उन्मूलन का बना लिया। बाबा साहेब ने अस्पृश्य वर्ग की स्थिति, जाति व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था हिन्दू धर्म का गंभीर अध्ययन अनुशीलन किया। अपने अध्ययन के दौरान ही अस्पृश्य वर्ग की समस्याओं के प्रति वे अत्यन्त संवेदनशील हो गये थे। कोलम्बिया विश्वविद्यालय में अध्ययन के दौरान ही इस संवेदनशीलता का प्रमाण मिलता है। बंमई 1916 को अमेरिका के डा0 ए0ए0 गोल्डन विजर द्वारा आयोजित नृतत्व विज्ञान विषयक गोष्ठी में ''भारत में जाति उद्गम, विकास और स्वरूप विषय पर बाबा साहेब ने अत्यन्त उच्च कोटि का बौद्धिक व्याख्यान दिया। इस व्याख्यान के विषय में मधुलिमये जैसे विचारक कहते हैं कि–

गुणवत्ता की दृष्टि से यह उच्च कोटि का है। यदि उन्होंने इस निबन्ध के अतिरिक्त और कुछ न लिखा होता तो भी उनकी गणना अच्छे विचारकों में होती।[2]

---

[1] यंग इण्डिया, 12 दिसम्बर, 1929।
[2] मधुलिमये, बाब साहेब आम्बेडकर एक चिंतन, पृ0सं0– 25

अमेरिका मे अध्ययनपूर्ण होने के पश्चात् भारत लौटकर डा0 अम्बेडकर ने गहन चिन्तन, मनन और अनुशीलन कर सुनियोजित तरीके से अस्पृश्यता उन्मूलन और मनुवादी व्यवस्था के विरोध में महासंग्राम को आरम्भ किया। डा0 अम्बेडकर के भारत आगमन के समय मांटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार योजना (1918) प्रकाशित हुई थी, जिसके आधार पर 1919 का भारत शासन अधिनियम पारित हुआ। मांटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार योजना के अन्तर्गत ही साउथवरा कमेटी की स्थापना की गई थी जो भारत की विभिन्न जातियों से मताधिकार के सम्बन्ध में पूंछतांछ कर रही थी। अस्पृश्य वर्ग की ओर से कर्मवीर शिंदे और डा0 अम्बेडकर की उस कमेटी के समक्ष गवाही हुई।[1] डा0 अम्बेडकर ने कमेटी के सम्मुख एक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जिसमें हिन्दू समाज के भीतर सामाजिक विभाजन की विशद जानकारी दी और इस बात का विश्लेषण किया कि हिन्दू समाज के अलग–अलग विभागों में मतदाताओं की संख्या की दृष्टि से मतदान की पात्रता की जो शर्तें रखी गई हैं उसका क्या परिणाम होता है। बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि इन कठिन शर्तों के कारण ब्राह्मण मतदाताओं की संख्या बहुत कम होती है और दलित वर्गों के मतदाताओं की संख्या तो नगण्य होती हैं।

इस समस्या का क्या समाधान है? एक समाधान था जातियों या सामाजिक वर्गों के अनुसार निर्वाचक मंडल या पृथक निर्वाचक मंडल। दूसरा समाधान था– आरक्षित स्थानों के साथ संयुक्त निर्वाचक मंडल। बाबा साहेब का मत था कि मुसलमानों तथा गैर ब्राह्मणों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल उचित नहीं है। उनके हित तब सुरक्षित होंगे जब संयुक्त निर्वाचक मंडल और बहुसदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों में उनके लिए सीटें आरक्षित होंगी।[2]

अपने प्रतिवेदन में डा0 साहेब ने दलित वर्गों के सम्बन्ध में सुझाव दिया कि जनसंख्या के अनुपात में उनके लिए स्थान आरक्षित किये जांए, पृथक निर्वाचक मंडल हो तथा दलित मतदाताओं की संख्या बढ़ाने के लिए आय और सम्पत्ति सम्बन्धी शर्तों को

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 40
[2] बाबा साहेब अम्बेडकर, राइटिंग एण्ड स्पीचेज, खण्ड–1, पृ0सं0– 252

शिथिल किया जाय। बाबा साहेब ने उन सब बाधाओं का भी सिलसिलेवार जिक्र किया जिसका दलित वर्ग शिकार रहे हैं। उन्होंने बताया कि दलित वर्ग के लोग व्यापार नहीं कर सकते, उद्योग धन्धों के रास्ते उनके लिए बंद हैं, नौकरियों में उनके लिए जगह नहीं है। एक महार स्त्री का उदाहरण दिया जिसे तरबूज बेचने के कारण पुलिस पकड़ कर ले गई थी।

बाबा साहेब ने अपने प्रतिवेदन में यह भी मांग रखी थी कि दलित जातियों के सेना में भर्ती पर प्रतिबन्ध समाप्त किए जाए। अस्पृश्यों के लिए स्कूल में वरिष्ठ श्रेंणी के अध्यापक की जगह होती है तो सवर्णों में ही वह जगह भरी जा सकती थी लेकिन सवर्णों में जगह खाली होने पर अस्पृश्य उम्मीदवार वहाँ नहीं बनाया जा सकता था। बाबा साहेब ने अत्यन्त आवेश में कहा– ''हिन्दुओं के सामाजिक व्यवहार की यही नैतिकता है।[1]

डा0 अम्बेडकर ने समाचार पत्रों के माध्यम से भी अपनी बात रखी। 16 जनवरी 1919 को टाइम्स ऑफ इण्डिया में डा0 अम्बेडकर का यह वक्तव्य छपा– स्वराज्य जैसा ब्राह्मणों का जन्म सिद्ध अधिकार है, वैसा ही वह महारों का भी है, यह बात कोई भी स्वाकार करेगा, इसलिए उच्च वर्ग के लोगों का यह प्रथम कर्त्तव्य है कि वे दलितों को शिक्षा देकर उनका मनोबल और सामाजिक स्तर ऊँचा करने की कोशिश करें। जब तक यह नहीं होगा तब तक भारत की स्वतन्त्रता का दिन बहुत दूर रहेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है।[2]

डा0 अम्बेडकर ने कोल्हापुर के क्षत्रपति साहू जी महाराज के सहयोग से 31 जनवरी 1920 ई0 को 'मूकनायक' नामक प्रसिद्ध पाक्षिक का प्रकाशन शुरू किया। इस पत्र के संपादक पांडुरंग नंदराम भटकर थे लेकिन वास्तविक कर्ताधर्ता बाबा साहेब ही रहे। मनुवादियों ने इसका आरम्भ से ही विरोध किया। बाल गंगाधर तिलक के केसरी

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, राइटिंग एण्ड स्पीचेज, खण्ड–1, पृ0सं0– 262

[2] टाइम्स ऑफ इण्डिया, 16 जनवरी 1919

समाचार पत्र ने 'मूकनायक' के बारे में दो शब्द लिखना तो दूर रहा, पैसे लेकर उसका विज्ञापन छापने से भी इन्कार कर दिया।[1]

मूकनायक के पहले अंक में बाबा साहेब ने अपने क्रांतिकारी विचारों को इस प्रकार रखा– "हिन्दुस्तान एक ऐसा देश है जो विषमता का मायका है। हिन्दू समाज एक मीनार है और एक–एक जाति एक मंजिल लेकिन ध्यान रखने की जरूरत है कि मीनार में कोई सीढ़ी नहीं है। एक मंजिल से दूसरी मंजिल तक जाने के लिए काई मार्ग नहीं है, जिस मंजिल पर जो पैदा हो, उसी पर मरे। निचले मंजिल का व्यक्ति चाहे कितना ही योग्य क्यों न हो, उसे ऊपर की मंजिल में प्रवेश नहीं मिलता, ऊपर की मंजिल में पैदा हुआ व्यक्ति चाहे कितना ही नालायक क्यों न हो, नीचे ढकेलने की किसी की हिम्मत नहीं होती। सचेतन के साथ–साथ अचेतन वस्तुएं भी ईश्वर का रूप हैं, ऐसा मानने वाले स्वधर्मियों को अपवित्र मानते हैं। ब्राह्मणों की महत्वाकांक्षा ज्ञान का संचय करने में है प्रसार करने में नहीं । ब्राह्मणेतरो की अवनति का कारण सत्ता और ज्ञान का अभाव है..... युगों–युग से चली आ रही दासता, दरिद्रता से बहिष्कृत वर्ग की मुक्ति के लिए आकाश, पाताल एक करना होगा।[2]

मूकनायक मे लिखे एक दूसरे लेख में बाबा साहेब ने लिखा कि केवल भारत को स्वतन्त्र कराना ही पर्याप्त नहीं है, परन्तु यह एक श्रेष्ठ राष्ट्र बने, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को धार्मिक, सामाजिक और राजनीतिक समानता प्राप्त हो। प्रत्येक को अपना भविष्य उज्जवल बनाने और उन्नत करने का अवसर दिया जाए। प्रत्येक को विकसित, प्रफुल्लित होने की स्वतन्त्रता हो और उन्नति करने का सर्वसुलभ अवसर प्राप्त हो। यदि ब्राह्मणों को ब्रिटिश सरकार नहीं भाती, वे उसका विरोध करते हैं और उस पर पूर्ण प्रयत्न से हमला करते हैं तो क्या अछूत ब्राह्मणों का शासन सहन करेंगे? यदि कभी शासन उन्हें दिया गया तो जितना विरोध ब्राह्मण ब्रिटिश सरकार का करते हैं, अछूत

[1] बहिष्कृत भारत, 20 मई 1927

[2] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0–41

उससे सौ गुना अधिक विरोध ब्राह्मण सरकार का करेंगे और उनका विरोध पूर्णतया न्यायोचित होगा।[1]

मूकनायक के प्रकाशन के पूर्व ही 29 मार्च 1920 को कोल्हापुर रियासत के मांनगाँव में डा0 अम्बेडकर की अध्यक्षता में एक सभा हुई, जिसमें महान उदारवादी छत्रपति साहू जी महाराज स्वयं उपस्थित थे। उन्होंने अपने भाषण में कहा– मेरे राज्य के बहिष्कृत प्रजाजनों तुमने अपना सच्चा नेता खोज निकाला है, इसलिए मैं हृदय से तुम्हारा अभिनन्दन करता हूँ। मेरा विश्वास है कि डा0 अम्बेडकर तुम्हारा उद्धार किए बिना नहीं रहेंगे। इतना ही नहीं एक समय ऐसा आएगा कि वे समस्त हिन्दुस्तान के नेता होंगे।

डा0 अम्बेडकर ने मई 1920 के अन्त में नागपुर में अखिल भारतीय बहिष्कृत परिषद आयोजित की जिसकी अध्यक्षता करने के लिए छत्रपति साहू महराज सहर्ष तैयार हो गए। इस परिषद में डा0 अम्बेडकर का कर्मवीर शिन्दे से विवाद हो गया लेकिन जीत डा0 साहेब की ही हुई। सार्वजनिक जीवन में डा0 अम्बेडकर की यह पहली जीत थी।[2]

परिषद की समाप्ति के पश्चात् बाबा साहेब के प्रयास से ही महारों की 18 उपजातियों के नेताओं का सामूहिक प्रीतिभोज कराया जा सका।

डा0 अम्बेडकर इंग्लैण्ड की अपनी अपूर्ण पढ़ाई को पूर्ण करने के लिए कोल्हापुर नरेश के सहयोग से जुलाई 1920 में लंदन गए। अपने अध्ययन के दौरान ही उन्होंने दलितों के कष्टों, समस्याओं को ब्रिटिश सरकार के सम्मुख मुलाकात की और दलितों की समस्याओं से उन्हें अवगत कराया। डा0 अम्बेडकर ने इस वार्तालाप की सम्पूर्ण छत्रपति साहू जी महाराज को 3 फरवरी 1921 को पत्र के माध्यम से दी। अपना अध्ययन समाप्त कर वे जुलाई 1923 में भारत लौट आये और कुछ दिनों तक देश के

---

[1] डा0 अम्बेडकर जीवन और मिशन, एल0आर0 वाली, पृ0सं0– 48–49

[2] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 42

विभिन्न भागों में हो रहे अछूतोद्धार आन्दोलन का गम्भीरता पूर्वक अवलोकन और अध्ययन किया।

अस्पृश्य वर्ग के समस्याओं पर विचार विमर्श करने और उनकी मांगों को ब्रिटिश सरकार के सम्मुख रखने के लिए एक मध्यवती संगठन की स्थापना करने के उद्देश्य से बाबा साहेब ने 9 मार्च 1924 को दामोदर ठक्कर सभागार परेल, मुम्बई में एक सभा बुलाई। इस सभा के एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव के अनुसार 20 जुलाई 1924 को बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना की गई। वैसे इस सभा को फरवरी 1920 में पाण्डुरंग नंदराम भटकर ने आरम्भ किया था लेकिन धनाभाव के कारण यह बंद हो गई थी। इसका पुनः रजिस्ट्रेशन करवाया गया और उसके निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए।[1]

1. दलित वर्गों में शिक्षा का प्रचार–प्रसार करना, छात्रावासों की स्थापना करना और उन साधनों का विकास करना जो उनके उत्थान के लिए समयानुसार आवश्यक हों।
2. दलित वर्गों में वाचनालय, समाज केन्द्र और विद्या केन्द्र स्थापित करके संस्कृति का प्रचार करना।
3. दलित वर्गों की आर्थिक स्थिति को सुधारना तथा औद्योगिक और कृषि विद्यालयों की स्थापना करना।
4. दलित वर्गों की विभिन्न कठिनाइयों का प्रतिनिधित्व एवं निवारण करना।

1. बहिष्कृत हितकारिणी सभा नियम पत्रक

बहिष्कृत हितकारिणी सभा का अध्यक्ष सर चिमनलाल हरिलाल सीतलवाड थे, डा0 बी0पी0चावड और बी0जी0 खरे प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष, डा0 बी0आर0 अम्बेडकर उसके मंत्री कार्यकारिणी समिति के अध्यक्ष तथा शिवतकर कोषाध्यक्ष थ। सभा

---

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0–54

में सवर्ण हिन्दुओं को भी रखा गया, जिसके लिए वार्षिक रिपोर्ट में कारण स्पष्ट किया गया, जिस वर्ग के सुधार के लिए संस्थाएं स्थापित करनी हैं उस वर्ग के या उसी परिस्थिति से परेशान हुए लोगों के कार्यकर्ताओं के संस्था में आये बिना संस्था के ध्येय और उद्देश्य सफल नहीं हो सकते। यह स्वीकृत होने पर ही जिन्होंने यह संस्था स्थापित की है, उन्हें पक्का मालुम है कि उच्च वर्ग के धनिक और सहानुभूति रखने वाले लोगों की सहायता के अभाव में अस्पृश्य वर्ग के भव्य उन्नति कार्यक्रम की सार्थकता होना कदापि संभव नहीं है। वैसा न करने का अर्थ होगा कि हमने ही स्वरोजगार के महान कार्य का नुकसान किया है। इसलिए सिद्ध और साधक का मिलाप होकर इस राष्ट्र कार्य को सबकी मदद प्राप्त हो, यही उद्देश्य इस संस्था की स्थापना की नींव में है।[1]

इस सभा की स्थापना भारत के करोड़ों दलितों, अस्पृश्यों के लिए आत्मनिर्भरता, स्वाभिमान और आत्मोद्धार की सीख देकर देश में महान क्रांतिकारी परिवर्तन लाने वाले युग का प्रारम्भ था। सभा ने जनवरी 1925 में शोलापुर में अपना पहला छात्रावास खोला। दलित छात्रों में जागृति पैदा करने के लिए सरस्वती विलास नामक हस्तलिखित मासिक पत्र प्रकाशित किया गया। वाचनालय और हाकी क्लब स्थापित किए गए।

इस प्रकार बाबा साहेब ने अपने जीवित कार्य का आरम्भ किया और कुछ ही दिनों में आन्दोलन की जड़ें जमने लगीं। सभा के शत्रुओं ने उन्हें खूब बदनाम किया किन्तु डा० अम्बेडकर की ख्याति बढ़ने लगी और उन्होंने सभा को विरोध, आन्दोलन तथा सीधी कार्यवाही का मंच बना दिया।[2]

अस्पृश्यता उन्मूलन और मनुवादी व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष की दूसरी अवस्था 1927—28 में आती है। बाबा साहेब मात्र सिद्धान्तवादी ही नहीं थे बल्कि एक

---

[1] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृ०सं०— 17
[2] कीर धनंजय, डा० बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ०सं०— 66

कर्मनिष्ठ और जुझारू व्यक्ति भी थे। ऐतिहासिक महाड सत्याग्रह में में उनका जुझारू व्यक्तित्व सामने आता है। महाड सत्याग्रह का तात्कालिक कारण वोले का प्रस्ताव था। 4 अगस्त 1923 को बंबई विधान परिषद में समाज सुधारक राव बहादुर, सीताराम केशव वाले ने यह प्रस्ताव रखा कि सार्वजनिक तालाबों, सरायों, विद्यालयों, न्यायालयों आदि स्थल अस्पृश्यों के लिए खोले जाएं। बंबई विधान परिषद ने इसे स्वीकार कर लिया और बंबई सरकार ने एक पत्र निकाल कर समस्त जिलाधीश, नगर संस्था, जिला मंडल, मुंबई नगर परिषद के प्रधान अधिकारी, इम्प्रूमेंट ट्रस्ट के अध्यक्ष को प्रस्ताव कार्यान्वित करने का आदेश दिया। इसके अनुपालन में महाड़ नगर पालिका ने भी चोवदार तालाब को अस्पृश्यों लिए खुलाकर दिया लेकिन स्पृश्य हिन्दुओं के प्रबल विरोध और आतंक के कारण अस्पृश्य अपने अधिकार का उपभोग नहीं कर पा रहे थे। यहाँ अस्पृश्यों के अधिकारों के लिए बाबा साहेब ने 19–20 मार्च 1927 को महाड में एक सम्मेलन आहूत किया, इसका व्यापक प्रचार–प्रसार किया गया। सभा को सफल बनाने के लिए सुरेन्द्र नाथ सुत्वा टिपणिस, सूबेदार विश्राम, गंगाराम सवादकर, संभाजी तुकाराम गायकवाड, शिवराम गोपाल आदि ने कड़ी मेहनत की।[1] महाराष्ट्र, गुजरात सहित देश के विभिन्न भागों से लगभग 10 हजार अछूत इस सम्मेलन में भाग लेने आए। उस समय 10 हजार की भीड़ एक असाधारण भीड़ थी। स्पृश्य हिन्दुओं के विरोध के कारण पानी मिलना दुर्लभ था, इसलिए सम्मेलन के लिए 15 रु0 रोज का पानी खरीदना पड़ा।[2]

सम्मेलन के अध्यक्ष बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर थे, उन्होंने अपना क्रांतिकारी ऐतिहासिक भाषण दिया– ''इस अंग्रेजी राज और हिन्दू व्यवस्था में अछूतों की काई मदद नहीं करता, उनका कोई भी आदर नहीं करता और न ही उन्हें सुखी और सम्मानित जीवन जीने का ज्ञान देता है। आज से अछूत अपनी सहायता स्वयं करें, वे अपनी संतानों को शिक्षित, सुखी और सम्मानित बनायें। जो माता–पिता अपने बच्चों को शिक्षित और सम्मानित नहीं बनाता वह पशुओं से भी गया बीता है।''.....

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–4, 170

[2] प्रो0 विपिचन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ0सं0–20

बाबा साहेब ने अपने भाषण में आगे कहा– स्वयं अपना सुधार करो, गन्दी आदतों से दूर रहो, कपड़े साफ–सुथरे पहनों, मृत जानवरों का मांस मत खाओ.... शराब या अन्य नशा न करें......ही अछूतों का मुक्ति मार्ग है। अन्ततः बाबा साहेब ने विरोध की उपेक्षा कर अद्भुद साहस दिखाते हुए हजारों अनुयायियों के साथ चोवदार तालाब के पानी को लेकर पिया। इस प्रकार पैनी जैसे मानवीय अधिकारों के लिए किया गया बाबा साहेब का यह सत्याग्रह सफल रहा।

कालाराम मंदिर आन्दोलन

ऐतिहासिक महाड सत्याग्रह के पश्चात् बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने कालाराम मंदिर आन्दोलन किया। अछूतों के मंदिर में प्रवेश करने के अधिकार को लेकर मार्च 1930 में उन्होंने यह आन्दोलन आरम्भ किया। यद्यपि इसके पूर्व मार्च 1924 को त्रावनकोर के वायकोम नामक ग्राम से मंदिर प्रवेश को लेकर वायकोम सत्याग्रह हो चुका था। 30 मार्च 1924 को कांग्रेसियों के नेतृत्व में सवर्णों और अपृश्यों का एक जलूस छुआछूत कानून की अवहेलना करके मंदिर पहुँच गया था[1] और योगक्षेम सभा (नम्मूदरी ब्राह्मणों का संगठन) ने प्रस्ताव पारित कर अस्पृश्यों के मंदिर प्रवेश का समर्थन किया था लेकिन अस्पृश्यों की ओर से मंदिर प्रवेश को लेकर डा0 अम्बेडकर ने नेतृत्व में यह पहला आन्दोलन था।

नासिक के कालाराम मंदिर में प्रवेश के लिए 2 मार्च 1930 को सत्याग्रह डा0 अम्बेडकर ने आरम्भ किया, जिसमें समिति के आह्वान पर 15 हजार अछूत एकत्र हुए थे।[2] 2 मार्च को ही प्रातः 10 बजे डा0 अम्बेडकर की अध्यक्षता में एक विशाल सभा हुई जो दोपहर के 12 बजे तक चली। 1: 30 बजे विश्राम के बाद सभा पुनः आरम्भ हुई और 3 बजे सभा समाप्त हुई और सभी सत्याग्रही जलूस की शक्ल में मंदिर की ओर बढ़े। यह लगभग 1 मील लम्बा जलूस रहा था, जो नासिक के इतिहास में अभूतपूर्व था।

---

[1] डा0 राजेन्द्र मोहन भटनागर, डा0 अम्बेडकर जीवन दर्शन, पृ0सं0– 56

[2] हिमांशू राय, युग पुरुष बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, पृ0सं0– 36

जलूस के आगे बैण्ड बाजा बज रहा था, उसके पीछे डा0 अम्बेडकर समता दल के कुछ चुनिन्दा सदस्यों के साथ जलूस का नेतृत्व करते हुए चल रहे थे, उसके पीछे 500 औरतें थीं, अपार जन समूह पूर्ण अनुशासित रूप में चल रहा था। जलूस धीरे–धीरे कालाराम मंदिर की तरफ बढ़ रहा था। मंदिर के प्रबन्धकों ने सभी द्वार बन्द कर दिया और मुख्य द्वार पर नासिक के पुलिस सुपरिटिंडेंट स्वयं टेंट में बैठे थे, तथा भारी पुलिस बल मंदिर के चारो ओर तैनात था। सत्याग्रहियों के सामने बड़ी विषम परिस्थिति आ गई। सशस्त्र पुलिस बल के कारण मंदिर में बलात प्रवेश नहीं कर सकते थे, इसलिए विशाल जलूस गोदावरी के घाट की ओर चल पड़ा और सभा के रूप में वहाँ बदल गया। सभा में निर्णय लिया गया कि अहिंसा के तरीके से मंदिर के सामने सत्याग्रह किया जाएगा।[1] इसका फ्रांसीसी क्रांति में हुई टेनिस कोर्ट की शपथ की भाँति महत्व है। नासिक का वातावरण काफी तनावपूर्ण था। शंकराचार्य की अध्यक्षता में सनातन हिन्दुओं का मंदिर रक्षा के प्रश्न पर विचार–विमर्श हुआ।

3 मार्च से क्रमबद्ध सत्याग्रह आरम्भ हुआ, जिसमें सैकड़ों स्त्री–पुरुष मंदिर के द्वारपर बैठते थे। नासिक जिलाधीश और पुलिस सुपरिन्टेंट मंदिर के पास ही रहकर वस्तुस्थिति पर नजर रखे रहे। सत्याग्रह लगातार एक महीने तक चलता रहा। इस बीच रामनवमी आ गई और इस अवसर पर रथ में राम की मूर्ति रख कर जलूस निकालने की प्रथा थी। अंत में दोनो पक्षों में यह समझौता हो गया कि सवर्ण तथा अस्पृश्य दोनो के कुछ व्यक्ति श्रीराम के रथ को खीचेंगे। यह अद्भुद दृश्य देखने के लिए बड़ी संख्या में लोग इकट्ठा हो गए। डा0 अम्बेडकर स्वयं उपस्थित थे। स्पर्श हिन्दुओ ने बड़ी चालाकी से अस्पृश्यों को गुमराह करके रथ दूसरी ओर मोड़ दिया। अस्पृश्य रथ के पीछे भागने लगे, तभी पथराव शुरू हो गया और पुलिस ने भी लाठी चार्ज कर दिया। डा0 अम्बेडकर

---

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 138।

के अनुयायियों ने अपने प्राणों पर बाजी लगाकर अपने नेता के प्राणों की रक्षा की यद्यपि वे थोड़ा बहुत घायल भी हो गए थे।[1] बड़ी संख्या में लोग घायल हुए।

इस घटना के बाद नासिक सहित पूरे महाराष्ट्र में सवर्ण हिन्दुओं ने अछूतों पर और भी अत्याचार किया। अछूतों के बच्चों को स्कूलों से निकाल दिया गया, उनके रास्ते बंद कर दिए गए, लेकिन सत्याग्रह जारी रहा। मंदिर प्रबन्धकों ने मंदिर एक वर्ष के लिए बंद कर दिया।

डा0 अम्बेडकर ने बंबई के गवर्नर फ्रेडरिक साइक्स से मुलाकात की और घटना की जानकारी दी, लेकिन कोई हल नहीं निकल पाया। डा0 मंडने तथा कुर्तकोटी ने अस्पृश्य नेताओ से बिनती की कि संगठनी हिन्दुओं का ह्रदय परिवर्तन करने का हमें मौका दिया जाए। विडला ने भी डा0 अम्बेडकर से भेंट की। अंततः सत्याग्रह स्थगित कर दिया गया, लेकिन मंदिर प्रवेश के विषय में कोई फैसला नहीं हो पा रहा था, इसलिए पुनः सत्याग्रह शुरू हो गया और 1935 तक जारी रहा जब तक अक्टूबर महीने में मंदिर प्रवेश कानून बनाकर मंदिर सभी लोंगों के लिए खोल नहीं दिया गया। इसी दौरान डा0 अम्बेडकर का साहस देखकर उन्हें बाबा साहेब की उपाधि दी गई।[2]

साइमन कमीशन

बाबा साहेब ने अछूतों की समस्या को उनके दुःखों को तथा उनके साथ हो रहे अत्याचारों को साइमन कमीशन (1927 में नियुक्त तथा 1928 में भरत आया, इसे श्वेत कमीशन भी कहते हैं) के सम्मुख उठाया। साइमन कमीशन ने डा0 भीमराव अम्बेडकर तथा डा0 पी0जी0 सोलंगी को बुलाया और विभिन्न संवैधानिक बिन्दुओं पर विचार–विमर्श किया।[3] इसमें भारत में दलित वर्ग की कुल जनसंख्या के सम्बन्ध में विचार–विमर्श हुआ जिसमें डा0 अम्बेडकर ने बताया कि दलितों की संख्या 3 करोड़ 10 लाख बैठती है, अर्थात यह ब्रिटिश भारत कें हिन्दुओं और जनजातियों के लोगों की

---

[1] सुभाष चन्द्र, अम्बेडकर से दोस्ती – समता और मुक्ति, पृ0सं0– 32

[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड– 4, पृ0सं0– 181।

[3] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–4, पृ0सं0– 186

संख्या का 19 प्रतिशत है। उन्होंने कमीशन को यह भी बताया कि अस्पृश्य और दलित एक ही हैं।[1] डा0 अम्बेडकर ने कमीशन के सम्मुख यह भी स्पष्ट किया[2]– ''पहली बात तो मैं यह कहना चाहता हूँ कि हम दावा करते हैं कि हमें हिन्दुओं से अलग एक विशिष्ट अल्प संख्यक माना जाए। अभी तक हमें हिन्दुओं में शामिल करके हमारे अल्प संख्यक स्वरूप को छिपाया गया है, परन्तु वास्तव में दलित वर्गों और हिन्दुओं के बीच कोई संपर्क नहीं है। इसलिए सम्मेलन के सामने पहली बात मैं यह रखना चाहता हूँ कि हमें एक विशिष्ट और स्वतन्त्र अल्प संख्यक माना जाए। दूसरे मैं यह कहना चाहता हूँ कि ब्रिटिश भारत में दलित वर्गों के अल्प संख्यक वर्ग को किसी अन्य अल्प संख्यक वर्ग की अपेक्षा कहीं अधिक राजनैतिक संरक्षण की आवश्यकता है, क्योंकि शिक्षा की दृष्टि से दलितों का अल्प संख्यक वर्ग बहुत पिछड़ा है, सामाजिक दृष्टि से बधा हुआ है और ऐसी राजनैतिक विवशताओं से ग्रस्त है जिनसे कोई अन्य वर्ग ग्रस्त नहीं है। हम मुस्लिम अल्प संख्यक वर्ग की तरह का प्रतिनिधित्व चाहते हैं। हम आरक्षित सीटें चाहतें हैं, यदि वे वयस्क मताधिकार के साथ दी जाए।''

साइमन कमीशन के सदस्य मेजर एटली (बाद में ब्रिटेन के प्रधानमंत्री बने) को डा0 अम्बेडकर ने दलित श्रमिकों की समस्याओं से अवगत कराया था। वार्तालाप इस प्रकार है–

मेजर एटली :– क्या दलित वर्गों के लोग कपड़ा मिलों में या इस तरह के अन्य उद्योगों में काम करते हैं?

डा0 अम्बेडकर :– हाँ, सभी दलित मजदूरी करते हैं।

मेजर एटली :– आप मेरी बात नहीं समझे। मैं उद्योगों की बात कर रहा हूँ। दलित वर्गो के लोग अधिकांशतः गांवों में रहते हैं परन्तु क्या दलित वर्गों की बड़ी संख्या उद्योगों में कार्यरत है?

---

[1] वही, पृ0सं0– 188

[2] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0–

डा0 अम्बेडकर :– जी नहीं।

एटली :– क्या वे यहाँ आने पर किसी सीमा तक अस्पृश्य नहीं रहते?

डा0 अम्बेडकर :– जी नहीं। मैं यह बता दूँ कि दलित वर्ग के व्यक्ति को बुनाई विभाग में, जहाँ सबसे अधिक पैसा मिलता है, नहीं रखा जाता, उसे केवल कताई और अन्य विभागों में रखा जाता है।

एटली :– क्यो?

डा0 अम्बेडकर :– अस्पृश्यता के कारण।

एटली :– जब अस्पृश्य काम करता है तो सभी जातियों के लोगों के साथ ही काम करता है।

डा0 अम्बेडकर :– ऐसी बात नहीं है। विभागों में जातिगत भेदभाव होता है। एक विभाग में काम करने वाले सभी लोग केवल दलित वर्ग के हैं। दूसरे विभाग में जैसे बुनाई के विभाग में मुसलमान और सवर्ण हिन्दू।

इस प्रकार डा0 अम्बेडकर ने साइमन कमीशन के सम्मुख अछूत वर्गों की विभिन्न समस्याओं तथा उनकी मांगों को रखा।

गोलमेज सम्मेलन लन्दन में सम्पन्न हुए। तीनो गोल मेज सम्मेलन में भाग लेकर बाबा साहेब ने अस्पृश्यों के दुःखों को विश्व के सम्मुख रखा और उसे विश्व चर्चा का विषय बना दिया। प्रथम गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए ब्रिटिश सरकार ने भारत के सभी राजनैतिक दलों के प्रतिनिधियों तथा देशी रियासतों के प्रतिनिधियों को आमंत्रित किया था। बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर तथा रावबहादुर श्रीनिवासन को अस्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में बुलाया गया था।

सम्मेलन में भाग लेने की पूर्व सन्ध्या पर मुंबई में डा0 सोलंकी की अध्यक्षता में एक सम्मेलन बुलाया गया, जिसमें डा0 अम्बेडकर को सम्मान पत्र तथा कुछ

धनराशि भेंट की गई। डा0 अम्बेडकर ने अपने संक्षिप्त भाषण में कहा कि पिछले दो वर्षों में हमसे जो थोड़ा–बहुत काम हुआ वह हजारों महानुभावों की सहायता से ही हुआ।[1]

बाबा साहेब 4 अक्टूबर 1930 को वाइसराय ऑफ इण्डिया नामक जहाज से बंबई से लन्दन के लिए रवाना हुए। 18 अक्टूबर को लंदन पहुंचकर अपने साथ बड़ी संख्या में ले गए पुस्तकों की सहायता से सम्मेलन में होने वाले विचार–विमर्श की तैयारी आरम्भ कर दी। बाबा साहेब को लगा कि ब्रिटेन का वातावरण दलित वर्गों के लिए अनुकूल है।

12 नवम्बर 1930 को ब्रिटेन के सम्राट ने प्रथम गोल मेज सम्मेलन का उद्घाटन किया। अपने भाषण में सम्राट ने आशा व्यक्त की कि यहाँ पर निःसन्देह सर्व सम्मति से भारत सरकार के भावी रूप पर विचार हो सकेगा। सम्मेलन में कुल 89 सदस्य सम्मिलित थे।[2] जिसमें 16 सदस्य ब्रिटिश सरकार का प्रतिनिधित्व कर रहे थे, शेष 53 सदस्य भारतीय थे, जिसमें 13 प्रमुख उदारवादी नेता थे, इसमें तेजबहादुर सपरू, एम0आर0 जयकर, सर चीमनलाल सीतलवाड, श्री श्रीनिवास शास्त्री और श्री चिन्तामणि जैसे प्रसिद्ध नेता थे। मुसलमानों का प्रतिनिधित्व करने के लिए मुहम्मद अली जिन्ना, नवाब आगा खाँ, सर मुहम्मद शफी और फजलुल हक थे। सिक्खों के प्रतिनिधि के रूप में डा0 बी0एस0 मुन्जे और भारतीय ईसाइयों के प्रतिनिधि के रूप में के0डी0 पाल सम्मिलित थे। इसके अतिरिक्त अलवर, भोपाल, बड़ौदा, बीकानेर, कश्मीर तथा पटियाला की रियासतों के प्रतिनिधियों को भी आमंत्रित किया गया था। अन्य महत्वपूर्ण मुद्दों को ध्यान में रखकर श्री ए0पी0पन्नों तथा श्री भास्कर राव, श्री वी0 जाधव को भी शामिल किया गया था। सविनय अवज्ञां आन्दोलन छेड़ चुकी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सम्मेलन का बहिष्कार किया था।

[1] हिमाशू राय, युग पुरुष बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, पृ0सं0– 43--44
[2] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 145, 146

12 नवम्बर 1930 को सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए ब्रिटेन के सम्राट जॉर्ज पंचम ने कहा[1]– यह परिषद अभूतपूर्व है और इस परिषद के प्रतिनिधियों के नाम भारत के इतिहास में दर्ज हो जाएंगें। उद्घाटन के पश्चात् सम्मेलन के अध्यक्ष पद के लिए ब्रिटेन के प्रधानमंत्री रेम्ज मैक डोनाल्ड को सर्व सम्मति से चुन लिया गया।

उद्घाटन के पश्चात् सम्मेलन सेंट जेम्स राज महल में होने लगी। सम्मेलन में तेजबहादुर सपू, मंजू, जिन्ना, बीकानेर के महाराजा तथा डा0 अम्बेडकर ने महत्वपूर्ण भाषण दिया। परिषद में अनेक विद्वान थे लेकिन डाक्टर ऑफ साइन्स उपाधि प्राप्त करने वाले डा0 अम्बेडकर अकेले व्यक्ति थे जो भारत के बहिष्कृत समाज का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। डा0 अम्बेडकर ने अपना विस्मयकारी महान बौद्धिक भाषण आरम्भ किया– "सभापति महोदय, मैं इस सभा में संवैधानिक सुधारों के प्रश्न पर उन दलित वर्गों का पक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिनका मुझे और मेरे सहयोगी राव बहादुर श्रीनिवास को प्रतिनिधित्व करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यह ब्रिटेन भारत की 430 लाख जनता अथवा 1/5 जनसंख्या का पक्ष है। दलित वर्ग स्वयं में ऐसे लोगों का समूह है जो मुसलमानों से भिन्न एवं अलग हैं। यद्यपि उन्हें हिन्दू कहा जाता है किन्तु वे हिन्दू जाति का किसी भी अर्थ में अविभाज्य अंग नहीं है। वे न केवल उनसे अलग रहते हैं, अपितु उन्हें जो दर्जा प्राप्त है, वह भी भारत में अन्य जातियों के दर्जे से बिल्कुल भिन्न है। भारत में अनेक जातियां अत्यन्त दयनीय एवं गुलामी की स्थिति में रह रही हैं, किन्तु दलित वर्गों की स्थिति बिल्कुल भिन्न है। अन्तर केवल इतना है कि कृषि कर्मियों एवं नौकरों के साथ अस्पृश्यता का बर्ताव नहीं किया जाता, जबकि दलित वर्ग अस्पृश्यता के अभिशाप का शिकार हैं। उससे भी खराब बात यह है कि अस्पृश्यता के कारण उन पर लादी गई गुलामी से न केवल सार्वजनिक जीवन में उनके साथ भेदभाव बरता जाता है बल्कि उन्हें समान अवसरों और मानवीय जीवन के लिए आवश्यक नागरिक अधिकारों से भी वंचित रखा जाता है। मुझे विश्वास है कि इतने बड़े वर्ग जिनकी संख्या इंग्लैण्ड अथवा फ्रांस की जनसंख्या के बराबर है, जो अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करने के लिए

---

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 145, 146

भी सक्षम नहीं है, के दृष्टिकोंण को हृदयंगम करने से ही राजनैतिक समस्या का सही समाधान होगा।

भारत में नौकरशाही शासन प्रणाली को बदलकर एक ऐसी सरकार स्थापित की जाए जो ''जनता की हो, जनता द्वारा चलाई जाए और जनता के लिए हो''। मुझे विश्वास है कि दलित वर्गों के इस प्रश्न पर कुछ हलकों में लोगों को विस्मय होगा। दलित वर्ग और ब्रिटिश एक असाधारण बन्धन में बंधे हुए हैं। दलित वर्गों ने अंग्रेजों का रूढिवादी हिन्दुओं के सदियों पुराने जुल्मों और अत्याचारों से मुक्ति दिलाने वालों के रूप में स्वागत किया था। उन्होंने हिन्दुओं, मुसलमानों और सिक्खों के विरुद्ध युद्धों में लड़कर अंग्रेजों को भारत का यह विशाल साम्राज्य जीत कर दिया था, जिसके लिए उन्होंनें दलित वर्गों के संरक्षण की भूमिका ग्रहण की थी। दोनो में इस प्रकार के घनिष्ठ सम्बन्धों को दृष्टिगत रखते हुए भारत में अंग्रेजी साम्राज्य के प्रति दलित वर्गों के विचारों में इस प्रकार का परिवर्तन निःसन्देह एक अत्यन्त अद्भुद एवं महत्वपूर्ण घटना है। इस परिवर्तन के कारणों को जाननेके लिए दूर नहीं जाना होगा। हमने यह निर्णय इसलिए नहीं लिया कि हम बहुसंख्यक जाति के साथ अपना भाग्य अजमाना चाहते हैं, जैसा कि आप जानते हैं कि बहुसंख्यक और दलित वर्गों में कोई मधुर सम्बन्ध नहीं है, हमने यह निर्णय स्वतन्त्र रूप से लिया है। अपनी परिस्थितियों को ध्यान में रखकर हमने वर्तमान सरकार का मूल्यांकन किया है, और देखा है कि इसमें एक अच्छी सरकार के आवश्यक आधारभूत तत्वों का भी अभाव है। जब हम अंग्रेजी शासन से पहले की अपनी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति से अपनी वर्तमान स्थिति की तुलना करते हैं तो हम देखते हैं कि आगे की बढ़ने के बजाय हम वहीं के वहीं खड़े हैं। अंग्रेजी शासन से पहले असपृश्यता के अभिशाप के कारण हम घृणास्पद जीवन व्यतीत कर रहे थे। क्या अंग्रेजी शासन ने अस्पृश्यता को दूर करने के लिए कोई ठोस कदम उठाया है? अंग्रेजी शासन से पहले मंदिरों में हमारा प्रवेश वर्जित था, क्या अब हम मंदिरों में प्रवेश कर सकते हैं? अंग्रेजी शासन से पहले हमें पुलिस में नौकरी नहीं दी जाती थी, क्या अब हम पुलिस में जा सकते हैं? अंग्रेजी शासन से पहले हम सेना में भर्ती नहीं हो सकते थे, क्या सरकार ने हमारे लिए यह

रास्ता खोला? इन प्रश्नों में किसी प्रश्न का उत्तर हाँ में नहीं है।........ अंग्रेजी शासन के 150 वर्ष बीत जाने पर भी हमारी तकलीफें उन खुले घावों की तरह हैं, जिन पर मरहम लगाने का कोई प्रयास नहीं किया गया।

"हमारा आरोप यह नहीं है कि अंग्रेजी शासन ने हमारी उपेक्षा की है अथवा उनकी हमारे प्रति सहानुभूति नहीं है। हम इस निष्कर्ष पर पहुँचतें हैं कि वह हमारी समस्याओं का समाधान कर ही नहीं सकते! यदि उन्होंने हमारी उपेक्षा की होती तो बात इतनी गंभीर नहीं थी और उसके कारण हमारे विचारों में इतना गंभीर परितर्वन नहीं आता। स्थिति का गहन विश्लेषण कर हम यह जान गए हैं कि केवल उपेक्षा का मामला नहीं है।....... हम महसूस करते हैं कि हमारी तकलीफों को दूर करने के लिए हमारे अतिरिक्त अन्य कोई सक्षम नहीं है और जब तक राजनैतिक शक्ति हमारे हाथों में नहीं आती, हम भी उसे दूर नहीं कर सकते। जब तक अंग्रेजी सरकार बनी रहेगी, तब तक इस राजनैतिक सत्ता का अंशमात्र भी हमें मिलने वाला नहीं है। स्वराज्य के अन्तर्गत ही हमें राजनैतिक सत्ता में साझेदारी का कोई अवसर मिल सकता है। राजनैतिक सत्ता के बिना हमारे लोगों का उद्धार संभव नहीं है।"

"महोदय, मैं एक बात की ओर आपका विशेष ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ, मैंने दलित वर्गों का पक्ष प्रस्तुत करते समय डोमेनियन स्टेट शब्दावली का इस्तेमाल नहीं किया। मैंने इस शब्दावली का इस्तेमाल इसलिए नहीं किया कि मैं उसका अभिप्राय नहीं समझता और न ही इसका यह अर्थ है कि दलित वर्ग भारत को डोमेनियन स्टेट दिए जाने का विरोधी है। इस शब्दावली का इस्तेमाल न करने के पीछे मेरा मुख्य उद्देश्य यह है कि दलित वर्ग क्या चाहते हैं, इससे उसका संप्रेक्षण नहीं हो पाता। दलित वर्ग भारत के लिए सुरक्षा उपायों सहित डोमिनियन स्टेट चाहते हैं। किन्तु इस प्रश्न पर वे बल देना चाहते हैं कि डोमिनियन भारत का संचालन कैसे किया जाएगा? राजनैतिक सत्ता का केन्द्र कहाँ होगा? यह सत्ता किसके हाथों में होगी? क्या दलित वर्ग उसके वारिस होंगे? उनके लिए यह विचारणीय प्रश्न है। दलित वर्ग यह अनुभव करते हैं

कि जब तक नए संविधान की निर्मात्री राजनैतिक मशीनरी विशिष्ट प्रकार की नहीं होगी, दलित वर्गों की राजनैतिक सत्ता में भागीदारी रत्ती भर भी नहीं होगी। नए संविधान का निर्माण करते समय भारत की सामाजिक व्यवस्था के कुछ ठोस तथ्यों को ध्यान में अवश्य रखा जाना चाहिए। इस बात को मानकर चलना होगा कि यहाँ की सामाजिक व्यवस्था उच्च वर्ग के लिए आदर और निम्न वर्ग के लिए घृणा की अन्याय परक मान्यताओं पर आधारित है। इसलिए वर्ग और जाति पर आधारित इस व्यवस्था में लोकतांत्रिक शासन प्रणाली के लिए आवश्यक समता ओर बंधुत्व की मानवीय भावनाओं के विकास की कोई संभावना नहीं है।...... दलित वर्ग यह चाहते हैं कि राजनैतिक तंत्र ऐसा हो जो समाज के मनोविज्ञान के अनुकूल हो। अन्यथा आप एक ऐसे संविधान का निर्माण करेंगे, जो चाहे कितना ही संतुलित क्यो न हो, वह एक विकृत संविधान होगा और जिस समाज के लिए उसे बनाया जाएगा, उसके लिए उपयुक्त नहीं होगा।

इस विषय पर अपनी बात समाप्त करने से पहले मैं एक बात और कहना चाहता हूँ। हमें बार – बार याद दिलाया जाता है कि दलित वर्गों की समस्या एक सामाजिक समस्या है और उसका समाधान राजनीति में नहीं है। हम इस विचार का जोरदार विरोध करते हैं। हम यह महसूस करते हैं कि जब तक दलित वर्गों के हाथ राजनैतिक सत्ता नहीं आती, उनकी समस्या का समाधान नहीं हो सकता।..... हम चाहते हैं कि सत्ता का हस्तांतरण हो, चाहे स्वराज्य का विचार अतीत में हम पर किए गए जुल्म, अत्याचार और अन्याय की याद दिलाता हो और हो सकता है कि स्वराज्य प्राप्ति के पश्चात् पुनः उन जुल्मों एवं अत्याचारां का शिकार होना पड़े। हम उस आशा पर यह खतरा भी उठाने के लिए तैयार हैं कि अपने देशवासियों के साथ–साथ हमें भी राजनैतिक सत्ता में पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलेगा। उसे हम एक शर्त पर स्वीकार करेंगे कि हमारी समस्याओं के समाधान में विलम्ब नहीं किया जाएगा।...... हमारी समस्या के समाधान के लिए एक ऐसा अनुकूल राजनैतिक तंत्र हो जिससे हमारी भी उस पर कुछ अधिकार हो।...... इस समय मैं बस इतना कहना चाहता हूँ कि यद्यपि हम एक उत्तरदायी सरकार चाहते हैं, किन्तु हम ऐसी सरकार नहीं चाहते जिसमें केवल शासक बदल जाए।

अध्यक्ष महोदय, खेद है कि मुझे अपनी बात इतने स्पष्ट शब्दों में कहनी पड़ी, इसका कोई और विकल्प नहीं था। दलित वर्गों का कोई मित्र नहीं है, सरकार ने अपना अस्तित्व बना रखने के लिए अभी तक उनका इस्तेमाल किया है, हिन्दू उन पर अपना दावा उनको अधिकारों से वंचित करने, अथवा यो कहना चाहिए कि उनके अधिकारों को हड़पने के लिए करते हैं, मुसलमान उनके पृथक अस्तित्व को इसलिए मान्यता नहीं देते क्योंकि उनको भय है कि एक प्रतिद्वन्दी को शामिल करने से उनके अधिकार कम हो जाएंगे। सरकार द्वारा दबाए, हिन्दुओं द्वारा सताए और मुसलमानों द्वारा उपेक्षित दलित वर्ग बिल्कुल ऐसी निःसहाय एवं दयनीय स्थिति मे है, जिनकी कोई मिशाल नहीं है और इसकी ओर मुझे आपका ध्यान आकर्षित करना पड़ा।..... मुझे भय है कि इस बात को पूरी तरह से महसूस नहीं किया जा रहा है कि देश की वर्तमान मानसिकता को देखते हुए ऐसा कोई संविधान सफल नहीं होगा, जो अधिकांश जनता को मान्य न हो। वह दिन चले गए जब आप जैसा भी निर्णय लेते थे, भारत उसे मान लेता था। अब वह समय कभी वापस नहीं आएगा। यदि आप चाहते हैं कि आपका संविधान मान्य हो तो आप उसे तर्क पर नहीं, जनता की सहमति के आधारपर बनाएं।[1]

बाबा साहेब ने अपनी ओजस्वी वाणी में स्पष्टता और निर्भीकता के साथ तार्किक रूप में दलित वर्ग की विभिन्न समस्याओं और उनकी मांगों को ही नहीं रखा अपितु सदियों से उनके साथ हो रहे घृणित और अत्याचारपूर्ण व्यवहार एवं अस्पृश्यता के अभिशाप से अभिशप्त उनके अमानवीय जीवन के त्रासदी को विश्व के सम्मुख रखा। ब्रिटिश सरकार की कटु आलोचना से ओत–प्रोत यह ओजस्वी भाषण राष्ट्र–प्रेम से अभिभूत था, जिसे सुनकर सारा विश्व स्तब्ध हो गया। बाबा साहेब का यह भाषण सम्पूर्ण विश्व में चर्चा का विषय बन गया। ब्रिटेन के समाचार पत्रों ने इसे प्रमुखता से छापा था। सम्मेलन के अध्यक्ष ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने बाबा साहेब के भाषण की इस प्रकार प्रशंसा की– "अम्बेडकर का यह भाषण वक्तव्य काएक उत्कृष्ट नमूना है।" सम्मेलन में भाग ले

---

[1] प्रोसिंडिग्स ऑफ दि राउण्ड टेविल कांफ्रेंस (फर्स्ट सैशन) गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, पब्लिकेशन ब्रांच कलकत्ता, 1931, पृ0सं0– 123–129

रहे बड़ौदा के महाराज सायजी गायकवाड़ ने अपनी पत्नी से कहा– "हमारे सारे प्रयास और पैसा दोनो को उचित इस्तेमाल हुआ, आज एक महान कर्म की सफलता दिखाई पड़ी, यश का लाभ हुआ।"[1]

"गोलमेज सम्मेलन में अनेक उप समितियों का गठन किया गया जिसमें डा0 अम्बेडकर का चयन अल्पसंख्यक उप समिति, प्रान्त विषयक उप समिति, नौकरी विषयक उप समिति, सुरक्षा विषयक उप समिति आदि में किया गया। उन्हें केवल स्वतन्त्र राज्यसंघ निर्माण समिति में शामिल नहीं किया गया। इन सभी समिति में बाबा साहेब ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया, लेकिन अस्पृश्यों के हितों से सम्बन्धित सबसे महत्वपूर्ण योगदान अल्पसंख्यक उप समिति में था। इस उप समिति की दूसरी बैठक 31 दिसम्बर 1930 को हुई जिसमें डा0 अम्बेडकर ने सविस्तार दलित वर्ग की समस्याओं और उनकी मांगों पर चर्चा की। बाबा साहेब ने कहा– अध्यक्ष महोदय, मुझे विश्वास है कि आप इस बात से सहमत होंगे कि दलित वर्ग की समस्याएं रखने का जो दायित्व मुझे सौंपा गया है, वह काफी कठिन है। मैं समझता हूँ कि यह शायद पहला अवसर है जब दलितों की समस्याओं पर राजनैतिक दृष्टिकोंण से विचार किया जा रहा है....... भारत के सभी अल्प संख्यक वर्ग एक जैसे नहीं हैं। इनमें अनेक असमानताएं हैं, एक दूसरे से भिन्नताएं हैं। प्रत्येक अल्प संख्यक वर्ग की सामाजिक हैसियत अलग–अलग है....... वैसे मैं यह जानता हूँ कि कुछ मामलों में दलित वर्गों की हालत भारत के बाकी अल्पसंख्यको जैसी ही है। दलित वर्गों की तरह अन्य अल्पसंख्यक वर्गों को यह भय है कि भारत का भावी संविधान इस देश की सत्ता को जिन बहुसंख्यकों के हाथों में सौंपेगा, वे और कोई नहीं रूढ़िवादी हिन्दू ही होंगे। इन्हें आशंका है कि ये रूढ़िवादी हिन्दू अपने रूढ़िवादियों एवं पूर्वाग्रहों को नहीं छोंड़ेगे।"

"महोदय, अब मैं आपको यह बताने जा रहा हूँ कि भारत में दलित वर्ग की स्थिति अन्य अल्प संख्यक वर्गों से भिन्न है। पहली बात– इस देश में दलितों को कुछ

---

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0–149

भी नागरिक अधिकार प्राप्त नहीं है, जो कानूनी रूप में अन्य अल्प संख्यकों को प्राप्त हैं। दूसरी सबसे महत्वपूर्ण बात है– दलितों का सामाजिक उत्पीड़न। भारत में दलितों का जितना घृणित सामाजिक उत्पीड़न होता है, वैसा दुनिया में शायद ही कहीं होता है। तीसरी बात – दलितों को एक डर और है, नए विधान मंडल में दलितों को चाहे जितना प्रतिनिधित्व दिया जाए, कुल मिलाकर उनका स्वरूप एक छोटे वर्ग का ही रहेगा। विधान मंडल में प्रमुख बहु संख्यक रूढ़िवादियों का ही होगा। दलितों के प्रति इस वर्ग का जो व्यवहार है उसे देखते हुए दलितों के मन में यह भय है कि उनके हितों की अनदेखी की जाएगी। इन बातों का देखते हुए मैं दलितों के हितों की सुरक्षा के लिए कुछ उपाय सुझा रहा हूँ।''

सबसे पहले प्रस्तावित संविधान में कुछ मौलिक अधिकार की व्यवस्था की जाये। ये मौलिक अधिकार उस प्रतिवेदन में वर्णित हैं जिसे डा0 अम्बेडकर और श्रीनिवास ने अल्पसंख्यक उप समिति में प्रस्तुत कर दलित वर्गों के हितों की सुरक्षा के लिए शर्तों के रूप में मांग की थी। इसमें बहुसंख्यक शासन को स्वीकार करने के लिए दलित वर्ग ने जो शर्तें रखी थीं वे इस प्रकार थीं[1]–

शर्त नं0 :-1 समान नागरिकता

अस्पृश्यता को समाप्त करने और समान नागरिकता का अधिकार बहाल करने के लिए निम्नलिखित मौलिक अधिकारों को प्रस्तावित संविधान में सम्मिलित किया जाए–

मौलिक अधिकार

भारत के सभी नागरिक कानून की दृष्टि में एक समान हैं और सबके नागरिक अधिकार बराबर हैं। वर्तमान समय में अस्पृश्यता के बारे में लागू कोई भी अधिनियम, कानून, आदेश, व्याख्या या रिवाज जो किसी व्यक्तिको दण्डित करता है, असुविधा

---

[1] प्रोसिंडिग्स ऑफ दि सब कमेटी नं0 3 (माइनारटीज), पृ0सं0– 168–176

पहुँचाताहै, अयोग्य करार देता है या पक्षपात करता है तो उसे नया संविधान लागू होते ही समाप्त माना जाएगा।

शर्त नं० :-2 समान अधिकारों का स्वतन्त्र उपयोग

इसके लिए दलित चाहतें हैं कि भारत सरकार अधिनियम 1919 भाग– 11 जो अपराध प्रक्रिया एंव दण्ड प्रक्रिया परिभाषित करता है, उसके साथ निम्नखित धारा जोड़ दी जाए– ''यदि कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति को सार्वजनिक वास, लाभ, सुविधा, धर्मशाला में ठहरने के अधिकार, शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश, सड़क, रास्ता, गली, तालाब, कुँआ व पानी के उपयोग के अन्य स्थान, सार्वजनिक वाहन, भूमि, हवा अथवा पानी, नाटक गृहों अथवा कला व रंग कर्म से जुड़े अन्य सार्वजनिक स्थलों के उपयोग से रोकता है तो उसे अस्पृश्यता के बारे में पहले से चली आ रही शर्तों पर विचार किए बिना 5 वर्ष तक के कारावास की सजा अथवा दोनो दी जाएगी।

दलित वर्ग और सामजिक बहिष्कार

इसमें सामाजिक बहिष्कार पर प्रतिबन्ध लगाने और अपराध घोषित करने की मांग की गई थी।

शर्त नं० :-3 भेदभाव के खिलाफ संरक्षण

प्रस्तावित संविधान में निम्नलिखित प्रावधान शामिल होना चाहिए–

1. संविदा का अधिकार और उसके अनुपालन का अधिकार। मुकदमा दायर करने, पक्ष बनने, साक्ष्य देने, उत्तराधिकार पाने, खरीदने, पट्टे पर देने, बेचने, रखने और निजी सम्पत्ति का अधिकार।

2. नागरिक और सैनिक सेवाओं और शिक्षण संस्थाओं में भर्ती का अधिकार। सरकारी विभिन्न वर्गों को प्रतिनिधित्व देने के लिए शर्तें या प्रतिबन्ध लगा सकती है।

शंर्त नं० :-4 विधान मण्डल में समुचित प्रतिनिधित्व

दलित वर्ग अपने हितों की रक्षा के लिए विधायिका, कार्यपालिका पर अपना प्रभाव डाल सकें, इसके लिए उन्हें पर्याप्त राजनैतिक अधिकार मिलने चाहिए। इसके लिए चुनाव कानून में निम्नलिखितबातें जोड़ी जाएं–

1. प्रान्तीय ओर केन्द्रीय विधान मण्डलों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व का अधिकार
2. अपने ही लोगों को अपना प्रतिनिधि चुनने का अधिकार।

शंर्त नं० :-5 नौकरियों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व

नौकरियों में भर्ती की ऐसी पद्धति अपनाई जाए ताकि दलित सहित समाज के अन्य अल्प संख्यक वर्गों के लोग भी उचित हिस्सा प्राप्त कर सकें।

शंर्त नं० :-6 पक्षपात अथवा हितों की अनदेखी का निराकरण

शंर्त नं० :-7 विशेष विभागीय देखभाल

शंर्त नं० :-8 दलित वर्ग और मंत्रिमण्डल

गर्वनर या गर्वनर जनरल के मंत्रिमण्डल में दलितों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित कियाजाए।

बाबा साहेब ने दलित वर्गों द्वारा प्रस्तावित संविधान को स्वीकार करने के लिए यह महत्वपूर्ण ऐतिहासिक शर्तें रखीं थीं। यही नहीं उन्होंने लन्दन प्रवास के समय का सदुपयोग कर विभिन्न समाचार पत्रों, लेखों, भाषणों के द्वारा अस्पृश्य वर्ग के करुण

दास्तान को विश्व के सम्मुख रखने में सफलता प्राप्त की। डा0 अम्बेडकर के प्रयासों का परिणाम यह हुआ कि भारत के अस्पृश्य वर्ग की कहानी और उसकी दुर्गति अमेरिका के नीग्रो लोगों से भी बुरी है, इसकी जानकारी विश्व को हो गई।[1] ब्रिटेन के अनेक नेताओं यथा– मिस ऍलिनार, मिस ऐलन, नार्मल ऑवेन आदि ने लार्ड सैकी से मुलाकात कर यह निवेदन किया कि अस्पृश्य वर्ग को पूरी तरह मतदान का अधिकार दिया जाए और उनकी समस्याओं का समाधान किया जाए। ब्रिटिश संसद में भी अस्पृश्यों के दुःखों को दूर करने की बात उठी।

प्रथम गोलमेज सम्मेलन 19 जनवरी 1931 को स्थगित हो गया। अनेक बिन्दुओं पर मतभेद तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के बहिष्कार के कारण यह सम्मेलन सफल नहीं हो पाया था, लेकिन अस्पृश्य वर्ग की दृष्टि से यह सम्मेलन पूरी तरह सफल रहा था। भारत में सदियों–सदियों से अस्पृश्य वर्ग के साथ जो आमुनाषिक और अत्याचारपूर्ण व्यवहार किया जा रहा था उससे सम्पूर्ण विश्व को बाबा साहेब ने परिचित कराया।

सम्मेलन समाप्ति के पश्चात् बाबा साहेब अमेरिका जाकर अस्पृश्यो की समस्याओं पर वहाँ जनमत तैयार करना चाहते थे, लेकिन समयाभाव के कारण वहाँ जा नहीं पाए। लन्दन में रहते समय ही बाबा साहेब को यह शुभ समाचार मिला कि महाड के चावेदार तालाब के ऐतिहासिक मुकदमें का फैसला न्यायाधीशों ने दलित जातियों के हित में किया है। यह समाचार सुनकर बाबा साहेब बहुत प्रसन्न हुए। यहीं पर उन्हें यह भी सुखद समाचार प्राप्त हुआ कि मुंबई विधान परिषद में उनकी नियुक्ति हो गई है। एक और सुखद समाचार प्राप्त हुआ कि देवराव नाईक और कद्रेकर ने उनके निर्देशानुसार 'जनता' नामक पाक्षिक आरम्भ कियाहै। यह उनका चौथा समाचार पत्र है जो अस्पृश्यता–उन्मूलन और मनुवादी व्यवस्था विरोधी आन्दोलन के तहत आरम्भ हुआ था। पहला– 'मूकनायक', दूसरा– 'बहिष्कृत भारत' और तीसरा– 'समता' था।

---

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 153

"बाबा साहेब लन्दन के मार्सेलिस बन्दरगाह से 13 फरवरी 1931 को एस0स0 मुल्तान जहाज से भारत के लिए प्रस्थान किए और 27 फरवरी को मुम्बई पहुंचे। बन्दरगाह पर हजारों व्यक्तियों ने बाबा साहेब का जोरदार स्वागत किया। बाबा साहेब के सम्मान में 1 मार्च 1931 को परेल में एक बड़ी सभा आयोजित की गई, जिसमें उन्होंने कहा कि– "अपने अनुयायियों और सहयोगियो की सहायता और आन्दोलन से अस्पृश्य वर्ग के लिए कुछ अधिकार प्राप्त करने में मुझे सफलता प्राप्त हुई है।"[1]

इस बीच नासिक मे कालाराम मंदिर सत्याग्रह पुनः आरम्भ हो गया। डा0 अम्बेडकर इसमें सम्मिलित होने के लिए 14 मार्च 1931 को अपने सहयोगियों के साथ नासिक पहुँचे और सत्याग्रहियों का उत्साह बढ़ाया।

डा0 अम्बेडकर ने 19 अप्रैल 1931 को परेल की गोखले एजूकेशन सोसाइटी के सभागार में अस्पृश्य नेताओं का एक सम्मेलन बुलाया। सम्मेलन की अध्यक्षता एन0 शिवराज ने की। बाबा साहेब ने गोलमेज सम्मेलन का संक्षिप्त ब्योरा परिषद के सम्मुख रखा।

देश का राजनैतिक वातावरण बहुत तेजी से बदल रहा था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने महात्मा गाँधी के नेतृत्व में सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ कर किया था जो पूरे देश में व्यापक रूप से फैला हुआ था। ब्रिटिश सरकार आन्दोलन को समाप्त करने और कांग्रेस को गोलमेज सम्मेलन में शामिल होने के लिए सहमत करने के लिए लगातार प्रयास कर रही थी। गाँधी जी सहित कांग्रेस के अनेक नेताओं को ब्रिटिश सरकार ने रिहा कर दिया। अन्ततः कई चक्र की वार्ता के पश्चात् 5 अप्रैल 1931 को गाँधी–इर्विंग पैक्ट पर हस्ताक्षर हो गया। कांग्रेस आन्दोलन स्थगित कर गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए तैयार हो गई।

ब्रिटिश सरकार ने जुलाई के तीसरे सप्ताह में दूसरे गोलमेज सम्मेलन के लिए चुने गए लोगों के नाम प्रकाशित किए। इसमें डा0 भीमराव अम्बेडकर, शास्त्री,

---

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 156

तेजबहादुर सपरू, जयकर, सीतलवाड, मदनमोहन मालवीय, सरोजनी नायडू, मिर्जा इस्माइल, मुहम्मद अली जिन्ना, रामा स्वामी मुदलियार आदि नेताओं के नाम थे। संडे क्रानिकल तथा केसरी जैसे समाचार पत्रों ने डा0 अम्बेडकर के चुनाव पर प्रसन्नता व्यक्त की। सम्मेलन में महात्मा गाँधी कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित होंगे या नहीं, अभी स्पष्ट नहीं था। अन्ततः गाँधी जी कांग्रेस के प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित होने के लिए तैयार हो गए।

बाबा साहेब के सम्मेलन में जाने के पूर्व ही सन्ध्या पर दलित वर्ग ने बंबई में एक सभा आयोजित की। बाबा साहेब ने अपने भाषण में स्पष्ट किया कि दलित वर्ग के समस्याओं को रखने एवं उनके हितों की संरक्षा की जो जिम्मेदार मेरे ऊपर आई है, उसे मैं पूर्ण मनोयोग से पूर्ण करूँगा।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में शामिल होने के लिए बाबा साहेब 15 अगस्त 1931 को अन्य सदस्यों के साथ मुंबई से एस0एस0 मुलतान नामक जहाज से रवाना हुए ओर 29 अगस्त को लन्दन पहुँचे। गाँधी जी, मदन मोहन मालवीय, सरोजनी नायडू आदि के साथ एस0एस0 राजपूताना नामक जहाज से 29 अगस्त को मुम्बई से प्रस्थान कर 12 सितम्बर को लन्दन पहुंचे। इसी समय ब्रिटेन में आम चुनाव हुए थे और लेवर पार्टी के स्थान पर राष्ट्रीय सरकार सत्ता में आई थी। रेम्ज मैकडोनल्ड प्रधानमंत्री बने थे।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन 7 सितम्बर 1931 को आरम्भ हुआ। प्रथम गोलमेज सम्मेलन में कार्यरत सभी समितियां काम कर रही थीं। डा0 अम्बेडकर को संघीय संरचना, अल्पसंख्यक समिति सहित अनेक समितियों का सदस्य बनाया गया था। अल्प संख्यक समिति की 28 सितम्बर 1931 की सावतीं बैठक में डा0 अम्बेडकर ने कहा– "बैठक के स्थगित होने के पहले मैं एक बात कहना चाहता हूँ। जहाँ तक आपके सुझाव का प्रश्न है कि अन्य अल्प संख्यक वर्ग के साथ अपना–अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिए बातचीत चल रही है, मैं यह कहना चाहता हूँ कि जहाँ तक दलित वर्ग का सम्बन्ध है हम अपना पक्ष पिछली बार अल्प संख्यक उप समिति को प्रस्तुत कर चुके हैं।

.... जो लोग समझौता कर रहे हैं उनको यह जान लेना चाहिए कि उन्हें कोई पूर्णाधिकार प्राप्त नहीं है।[1] श्री गाँधी के कांग्रेस के लोग हैं, चाहे जिसके भी प्रतिनिधि हों, वह हमें बाँधकर रखने की स्थिति में नहीं है, बिल्कुल भी नहीं। मैं इस बैठक में ज्यादा से ज्यादा जोर देकर रहा हूँ।"[2]

इसी अल्प संख्यक समिति की 8 अक्टूबर 1931 को नवीं बैठक में बाबा साहेब ने कहा– "श्री गाँधी हमेशा से यह दावा करते आ रहे हैं कि कांग्रेस दलित वर्ग के लिए है और कांग्रेस दलित वर्गों का उससे ज्यादा प्रतिनिधत्व करती है, जितना मैं और मेरे साथी कर सकते हैं। इस दावे के बारे में इतना ही कह सकता हूँ कि यह भी एक ऐसा दावा है जो गैर जिम्मेदार लोग करते हैं या किया करते हैं, हाँलाकि जो लोग इनसे सम्बन्धित हैं, वे इन दावों को लगातार अस्वीकार करते आ रहे हैं।"[3]

अल्पसंख्यक समस्या पर लगातार विचार विमर्श चलता रहा, लेकिन परिणाम निराशाजनक रहा। 8 अक्टूबर 1931 को गाँधी ने स्वीकार किया कि "जातीय समस्या के बारे में सर्वसम्मत समझौता प्राप्त करने में हम पूरी तरह विफल रहे हैं। सम्मेलन के दौरान गाँधी जी एवं बाबा साहेब में चर्चा के दौरान झड़प हुई थी। डा0 अम्बेडकर ने अपनी ओजस्वी वाणी में तार्किक रूप से अस्पृश्य वर्ग के दुःखों को एवं उनकी मांगों को परिषद के सम्मुख पुनः रखा। ब्रिटेन के सम्राट सहित पूरा विश्व स्तब्ध था, लेकिन गाँधी जी का प्रबल विरोध करने के कारण बाबा साहेब को भारत के एक बडे विरोध का सामना करना पड़ा। कांग्रेस समर्थक समाचार पत्रों एवं मनुवादियों ने बाबा साहेब पर तीव्र हमले किए। अम्बेडकर जैसा अस्पृश्य नेता अगर उस समय न होता तो गोलमेज परिषद में दलितों की शिकायतों की गीता इतनी निर्भीकता एवं कर्त्तव्यनिष्ठा से कौन कह पाता।[4]

---

[1] प्रेसीडिंग्स ऑफ द फेडरल स्ट्रक्चर कमेटी ऐंड माइनारटीज कमेटी, खण्ड सं0–1, पृ0सं0– 1335–1338

[2] प्रेसीडिंग्स ऑफ द फेडरल स्ट्रक्चर कमेटी ऐंड माइनारटीज कमेटी, खण्ड सं0–1, पृ0सं0– 1338, 1356।

[3] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 184।

[4] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 184

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन के समाप्ति की घोषणा 1 दिसम्बर 1931 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने की। यह सम्मेलन भी अल्पसंख्यक समस्या का समाधान एवं अन्य मुद्दों पर मतभेद के कारण असफल रहा। बाबा साहेब लंदन से सीधे अमेरिका गए और एक महीना निवास कर दलित समस्याओं पर पर्याप्त चर्चा करके 4 जनवरी 1932 को अमेरिका से लंदन वापस लौटे। लंदन से 15 जनवरी को मार्सोलिस नामक जहाज से भारत के लिए रवाना हुए और 29 जनवरी को मुंबई पहुँचे। हजारों दलितों ने बाबा साहेब को जहाज से उतरते ही भव्य स्वागत किया। बाबा साहेब एक बड़े जलूस के साथ भायकला और परेल तक गए। उसी दिन 114 संस्थाओं ने बाबा साहेब को एक मानपत्र दिया, जिनमें कहा गया था कि "समानता का दर्जा और बर्ताव पर हमारे अधिकारों को आपने पूरी तरह से शाबित किया है। आपकी वीरता के अभाव में हमारे अधिकारों की ओर ध्यान नहीं दिया गया होता। हमारे हितों और अधिकारों की रक्षा के लिए आपने मानवीय प्रयत्नों की पराकाष्ठा की है।"[1]

बाबा साहेब के लन्दन से वापस लौटने के कुछ ही समय बाद लोथियन समिति भारत आई, जिसे भारतीय मताधिकार कमेटी भी कहते हैं। इस कमेटी का गठन गोलमेज सम्मेलन की मताधिकार उप–समिति की सिफारिशों पर दिसम्बर 1931 में किया गया था। कमेटी में डा0 अम्बेडकर सहित 18 सदस्य थे। पार्लियामेन्टरी अंडर सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फार इंडिया, मार्कवस ऑफ लोथयन, सी0एच0 इस कमेटी के अध्यक्ष थे। फरवरी 1932 में कमेटी ने कार्य आरम्भ किया। कमेटी के सदस्य के रूप में बाबा साहेब ने इसी फरवरी माह में बिहार प्रान्त का दौरा किया जहाँ अस्पृश्य समाज ने बड़े उत्साह के साथ स्वागत किया।

कमेटी के अन्य हिन्दू सदस्यों के साथ बाबा साहेब का विरोध हो गया, जिससे उन्होंने अपना अलग से प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इसमें उन्होंने मांग की थी कि

---

[1] वही, पृ0सं0– 191

दलित वर्ग शब्द को केवल अस्पृश्य तक ही सीमित रखा जाए।[1] यह भी स्पष्ट किया कि अस्पृश्यता समाप्त हो रही है, यह असत्य एवं मिथ्या प्रचार–प्रसार है। बाबा साहेब ने कहा-- इस विचार का व्यापक प्रचार–प्रसार किया जा रहा है कि अस्पृश्यता तेजी से समाप्त हो रही हे। मैं चेतावनी देना चाहता हूँ कि इस दृष्टिकोण को स्वीकार न किया जाए। बताना चाहता हूँ कि यह आवश्यक है कि तथ्य और प्रचार में भेद किया जाए।...... वस्तुतः हिन्दू समाज का इस्पाती ढाँचा वर्ण और अस्पृश्यता की व्यवस्था पर टिका हुआ है।''

अपने इसी प्रतिवेदन में बाबा साहेब ने अस्पृश्यों के नामकरण के सम्बन्ध में अपना यह मत प्रकट किया था[2] ''जिन जातियों को इस समय दलित वर्ग कहा जाता है, उन्हें इस शब्द के प्रयोग पर काफी आपत्ति है। कमेटी के सामने जो अनेक साक्षी उपस्थित हुए हैं, उन्होंने इस भावना को व्यक्त किया है............. यह धारणा पैदा करता है कि दलित वर्ग एक निम्न और असहाय समुदाय है जबकि वास्तविकता यह है कि हर प्रांत में उनमें से अनेक सुसम्पन्न और सुशिक्षित लोग हैं........... दलित वर्ग शब्द अनुपयुक्त और अनुचित है। असम के जनगणना अधीक्षक श्री मुल्तान ने अस्पृश्यों के लिए ''वाह्य जातियां'' नाम नए शब्द का प्रयोग किया है। इस वोध नाम के अनेक लाभ हैं......... मैं बिना किसी संकोच के कह सकता हूँ कि जब तक कोई और बेहतर नाम न मिल जाए तब तक अस्पृश्य वर्गों को अधिक व्यापक शब्द ''वाह्य जातियां'' या बहिष्कृत जातियों के नाम से पुकारा जाए, न कि दलित वर्गों के नाम से।''

बाबा साहेब ने यह मांग भी प्रमुखता से रखी कि अस्पृश्य वर्ग के लिए गोल मेज सम्मेलन से ही वे जिस पृथक प्रणाली की मांग कर रहे हैं, उसे लागू किया जाए।

बाबा साहेब के पृथक निर्वाचन प्रणाली की मांग का प्रबल विरोध महात्मा गाँधी और उनकी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तो कर ही रही थी साथ ही स्पृश्य वर्ग के गहरे षणयन्त्र के तहत कुछ अस्पृश्य नेता भी इसका विरोध कर संयुक्त निर्वाचन

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–4, पृ0सं0– 218
[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–4, पृ0सं0– 228–229

प्रणाली की मांग कर रहे थे। इस षड़यंत्र में अस्पृश्य नेता एम0सी0 राजा पूर्णतया उलझ गए थ। इस षड़यंत्र का एक परिणाम 20 फरवरी 1932 को सामने आया, जब हिन्दू महासभा के नेता डा0 वि0शि0 मुंन्जे और एम0सी0 राजा के बीच समझौता हो गया, जिसका प्रमुख अंग यह था कि अस्पृश्य वर्ग के लिए संयुक्त मतदाता संघ और आरक्षित सीटें हों। यह समझौता बाबा साहेब के अब तक किए गए सम्पूर्ण संघर्षों, प्रयासों पर पानी फेर देने वाला था। इस समझौते का अस्पृश्य समाज ने व्यापक विरोध आरम्भ किया। विधान मण्डल के सदस्य और बंगाल नामशूद्र एसोसिएशन के अध्यक्ष एम0बी0 मलिक, संयुक्त प्रान्त आदि हिन्दू एसोसिएशन के अध्यक्ष असम के डिप्रेस्ड क्लास एसोसिएशन आदि ने राजा–मुंजे समझौते का विरोध किया। बाबा साहेब और राजा के बीच गहरे तनाव उत्पन्न हो गए। राजा आरम्भ से ही बाबा साहेब के विरोधियों के हाथ में खेलते रहे। गोलमेज सम्मेलन में उन्हें आमंत्रित नहीं किया गया। उस समय उन्होंने ब्रिटिश सरकार को सूचित किया था कि ''अम्बेडकर अस्पृश्यों के एक अल्पसंख्यक गुट के नेता हैं। वे अल्पसंख्यक वर्ग के सच्चे प्रतिनिधि नहीं हैं।''

भारत के अस्पृश्य वर्ग ने भी राजा को अपना प्रतिनिधि नहीं माना, अपितु बाबा साहेब को ही अपना एक मात्र प्रतिनिधि ही नहीं अपितु मसीहा मानती रही। 20 फरवरी 1932 को मद्रास में बाबा साहेब के सम्मान में एक सभा आयोजित की गई जिसमें लगभग 10 हजार व्यक्ति विभिन्न समुदायों के सम्मिलित हुए। बाबा साहेब ने अपने भाषण में कहा[1]– ''अस्पृश्य समाज राजनैतिक सत्ता प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहे। मधुर भुलावे में न आए। जो उनके दुःख को समझते हैं, उनके ही विचार हमेशा सुनने चाहिए। अस्पृश्यता का कलंक धो डालना चाहिए। अस्पृश्यों की स्थिति सुधारने के लिए महान प्रयास करने वाले गौतम बुद्ध और रामानुज (विशिष्ट द्वैतवाद के संस्थापक) जैसे महानपुरुषों की हिन्दू समाज ने कैसे बुरी हालत कर दी, इसका वे स्मरण करें।''

---

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 192–193

लोथियन कमेटी ने 1 मई 1932 को अपना कार्य समाप्त किया। बाबा साहेब 4 मई को शिमला से वापस मुम्बई लौट आए। अखिल भारतीय डिस्प्रेस्ट क्लास परिषद नागपुर में 7 मई को आयोजित हो रही थी, जिसमें बाबा साहेब ने भाग लिया। सम्मेलन की अध्यक्षता मुनिस्वामी पिल्के ने की थी। इसमें राजा मुन्जे के समझौते का प्रबल विरोध किया और गगनभेदी आवाज में हजारों लोगों ने घोषणा की डा0 अम्बेडकर के पीछे पूरा अस्पृश्य समाज खड़ा है।

21 मई 1932 को पूणे में अस्पृश्य समाज का एक बड़ा सम्मेलन हुआ। अपने भाषण में डा0 अम्बेडकर ने कहा– "जिस समाज में मैं पैदा हुआ हूँ, और जिन लोगों में मैं अपना जीवन यापन कर रहा हूँ, उनमें ही मैं मरूँगा।" हिन्दुओं के हृदय ईट–पत्थरों की दीवारों की भाँति निर्जीव हैं।"

देश में यह आम चर्चा इस बीच हो रही थी कि ब्रिटिश प्रधान मंत्री भारत की जातीय समस्या पर शीघ्र ही निर्णय लेने वाले हैं। गोलमेज सम्मेलन में जातीय समस्या पर कोई आम राय नहीं बन पायी थी, और यह दायित्व ब्रिटिश प्रधानमंत्री पर छोंड़ दिया गया था कि वे उचित निर्णय लें। बाबा साहेब इस निर्णय के पूर्व एक बार और ब्रिटिश राजनेताओं से चर्चा कर लेना चाहते थे और इस कारण अति गोपनीय ढंग से 26 मई 1932 को लन्दन के लिए रवाना हुए, लेकिन बम्बई क्रोनिकल समाचार पत्र को यह समाचार कहीं से प्राप्त हो गया और उसने इसे छापा। लन्दन पहुँच कर बाबा साहेब ने अनेक ब्रिटिश राजनेताओं से गहन मंत्रणा की। कुछ दिन वर्लिन में रहे और 17 अगस्त 1932 को बंबई वापस लौट आये।

बाबा साहेब के भारत आने के दिन ही 17 अगस्त को ब्रिटिश प्रधानमंत्री रेम्ज मैक्डानल्ड ने अपना महत्वपूर्ण कम्युनल अवार्ड (साम्प्रदायी पंचाट) घोषित किया। यद्यपि महात्मा गाँधी ने 11 मार्च 1932 को जेल से ही भारत मंत्री सैमुअल हार को पत्र लिखकर अस्पृश्य वर्ग के लिए पृथक निर्वाचन प्रणाली का अपना पहले का विरोध पुनः

प्रकट किया था कि[1] "यदि दलितों को पृथक मतदान स्वीकार किया जाता है तो मै अपने प्राण की वाजी लगाकर उसका विरोध करूँगा।" फिर भी इस धमकी की अनदेखी कर ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने अपना निर्णय दे ही दिया।

बाबा साहेब का वर्षों का प्रयास सफल हुआ और अस्पृश्य वर्ग को पृथक निर्वाचन प्रणाली अन्य अल्प संख्यक वर्गों की भाँति प्राप्त हुई। अस्पृश्यों को पृथक अल्प संख्यक वर्ग माना गया। उन्हें दोहरे मतदान के अधिकार प्राप्त हुए। एक तो आरक्षित सीट देकर उन्हें अपना प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया गया, दूसरे उन्हें स्पृश्य हिन्दुओं के प्रतिनिधियों के चुनावों में भी वोट देने का अधिकार दिया गया।

साम्प्रदायिक निर्णय ने देश की राजनीति में एक भूचाल ला दिया। सभी प्रमुख राजनैतिक दलों और उनके समर्थक समाचार पत्रों ने इसकी कटु आलोचना की। बंबई क्रानिकल ने लिखा– निर्णय की मुख्य चालवाजी राष्ट्रीय बहु संख्यक हिन्दू समाज को अल्पसंख्यक बनाना ही है।[2] महात्मा गाँधी ने यर्वदा जेल (लन्दन से 4 जनवरी को वापस आने के पश्चात् सरकार ने उन्हें यर्वदा जेल मे डाल दिया था) से ही 18 अगस्त 1932 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर कड़ा विरोध प्रकट किया–

"प्रिय मित्र, इसमें कोई शक नहीं कि दलितों के प्रतिनिधित्व के बारे में सर सैमुअल हारे ने मेरा 11 मार्च का पत्र आपको और आपके मंत्रिमण्डल को दिखा दिया होगा..... मैं आपके निर्णय के विरोध में अपने प्राणों का बलिदान कर दूँगा। ऐसा करने के लिए केवल एक रास्ता है कि मैं नमक ओर सोड़ा पानी के अतिरिक्त कुछ न लेकर आमरण अनशन करूँ।.... प्रस्तावित अनशन आमतौर से 20 सितमबर के दोपहर से आरम्भ होगा।"

ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने निर्णय पर पुनर्विचार करने से इन्कार कर दिया, परिणाम स्वरूप निर्धारित समय 20 सितम्बर1932 से गाँधी जी ने यर्वदा जेल में अपना

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड– 16, पृ0सं0– 83

[2] बम्बई क्रानिकल, 18 अगस्त 1932

आमरण अनशन आरम्भ किया। उनके साथ महादेव देसाई और सरदार पटेल भी थे। श्री प्यारे लाल ने अपनी पुस्तक 'द एपिक फास्ट' में इस अनशन पर विस्तार से प्रकाश डाला है। यद्यपि गाँधी जी को आशंका थी कि उनके अपने आदमी ही इसे पसन्द न करें, फिर भी उन्होंने यह ऐतिहासिक कदम उठाया।

गाँधी जी के आमरण अनशन की पूर्व सन्ध्या पर डा0 अम्बेडकर ने एक विस्तृत पत्र जारी कर अनशन के औचित्य, अनौचित्य पर विस्तार से प्रकाश डाला। उन्होंने स्पष्ट लिखा[1]— कि समाचार पत्रों में छपे श्री गाँधी और सर सैमुअल होर तथा प्रधानमंत्री के मध्य हुए पत्र व्यवहार पर मुझे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है..... श्री गाँधी ने आमरण अनशन करने का संकल्प व्यक्त किया है, उसे पढ़कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ है। श्री गाँधी ने इस प्रकार की घोषणा कर मुझे जिस नाजुक परिस्थिति में डाल दिया, उसकी सहज में ही कल्पना की जा सकती है।

मैं सोचता हूँ कि श्री गाँधी जिन्होंने गोलमेज सम्मेलन में साम्प्रदायिक प्रश्न से उत्पन्न इस मुद्दे को व्यापक विषय की छोटी सी बात कहा था, जान की बाजी कैसे लगा बैठे। यदि श्री गाँधी इतना बड़ा कदम देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए उठाते, तो इसका औचित्य होता, जिसके लिए वह गोलमेज सम्मेलन में बराबर बल देते रहे। यह भी दुःखद आश्चर्य है कि सामूहिक निर्णय में दलित वर्गों के लिए दिए गए विशेष प्रतिनिधित्व को ही अलग करके आत्मबलिदान का बहाना ले रहे हैं। .... श्री गाँधी अमर व्यक्ति नहीं हैं और कांग्रेस पर कोई ऐसा नैतिक दबाव नहीं है, जो उनकी बात सदैव ब्रह्म वाक्य मानकर चले। भारत में बहुत से महात्मा आए जिनका एक मात्र उद्देश्य अस्पृश्यता मिटाना और अस्पृश्यों का उद्धार करना था। सभी महात्माओं को असफलता हाथ लगी। महात्मा लोग आए और चले गए, लेकिन अस्पृश्य सदैव अस्पृश्य ही बने रहे।.... मुझे आशा है कि श्री गाँधी ने जो अतिवादी कदम उठाने की ठानी है, वह उसका विचार छोंड़ देंगे।...... श्री गाँधी मुझे इस बात के लिए बाध्य नहीं करेंगे कि मैं

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड— 16, पृ0सं0— 323

उनके जीवन तथा अपने निस्सहाय लोगों के अधिकारों में से किसी एक को चुनूँ, क्योंकि भविष्य में अपने लोगों की आने वाली पीढ़ियों को हथकड़ी और बेड़ी में जकड़ कर पड़े रहने के लिए कोई कार्य मैं कभी नहीं करूँगा।"

महात्मा गाँधी ने अपने निर्णयानुसार अनशन आरम्भ किया। देश के सम्मुख सबसे बड़ी समस्या थी कि गाँधी जी के प्राणों को कैसे बचाया जाए? उनके प्राण बचाने का एक ही उपाय था, वह यह था कि साम्प्रदायिक पंचांग को रद्द कर दिया जाए। ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने स्पष्ट कर दिया था कि ब्रिटिश मंत्रिमण्डल उसे वापस नहीं लेगा और न ही उसमें अपने आप कोई परिवर्तन करेगा, परन्तु वे किसी ऐसे सिद्धान्त को जो सवर्ण हिन्दू और अस्पृश्यों को मान्य हो, उसके स्थान पर लाने को तैयार थे।

पूरे देश में गाँधी जी के प्राणों को बचाने के लिए बेचैनी थी। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने गाँधी जी को एक सन्देश भेजकर कहा[1]– भारत की एकता और उसकी सामाजिक अखण्डता के लिए यह उत्कृष्ट बलिदान है। हमारे व्यथित हृदय आपकी इस महान तपस्या का आदर और प्रेम के साथ अनुकरण करेंगे।

पं0 मदन मोहन मालवीय ने अनशन आरम्भ होने की पूर्व सन्ध्या पर ही एक पत्रक निकाल कर स्पष्ट किया कि गाँधी जी के प्राणों की रक्षा के लिए बम्बई में 19 सितम्बर को एक सम्मेलन आयोजित किया जाएगा। मालवीय जी की अध्यक्षता में सम्पन्न इस सम्मेलन में डा0 अम्बेडकर को भी बुलाया गया था, लेकिन कोई समाधान नहीं निकल सका। डा0 अम्बेडकर को मनाने के लिए बड़ी संख्या में राजनेता एवं उनके मित्र उनके आवास पर पहुँचने लगे। पूरे देश में बाबा साहेब विरोधी वातावरण बनने लगा। समाचार पत्रों ने उनके विरुद्ध आग उगलना आरम्भ किया। बम्बई क्रानिकल में डी0जी हार्निमन ने शेष पूर्ण लेख लिखा[2] – अम्बेडकर यह मानकर न चलें कि समस्त अस्पृश्य वर्ग उनकी मुठ्ठी में हैं..... अगर ऐसे संकट के समय अम्बेडकर ने अपना अहंकार और

---

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ0सं0– 264

[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 200

खापन दूर नहीं रखा, तो उस एकाकीपन में ही उन्हें दिन बिताने पड़ेंगे, यह वे ध्यान में रखें।''

देश के प्रमुख राजनेताओं जिनमें, मदन मोहन मालवीय, सरदार पटेल, राजेन्द्र प्रसाद, राजगोपालाचारी, जयकर, विडला, तेजबहादुर सप्पू आदि प्रमुख थे, अत्यन्त तत्परता से समस्या के समाधान के लिए डा0 अम्बेडकर से लगातार वार्ता चलाई। बाबा साहेब पर पूरे देश से दबाव पड़ रहा था, साथ ही कुछ लोगों ने हत्या करने तक की धमकी भी दी तथा देशद्रोही, अंग्रेजों का पिछलग्गू, शैतान आदि अपशब्दों का प्रयोग बाबा साहेब के लिए पुनः किया जाने लगा। ये अपशब्द तो गोलमेज सम्मेलन में बाबा साहेब द्वारा गाँधी जी का प्रबल विरोध करने के कारणी उसी समय से कहे जा रहे थे। मधु लिमये के अनुसार– ''अम्बेडकर ने इसे बहुत नापसंद किया, यह बदनामी उन्हें सालती रही, तथापि उन्होंने ओछापन नहीं दिखाया।''[1]

बाबा साहेब के सामने बड़ी विषम परिस्थिति थी। उन्होंने स्वयं कहा है– मेरे सामने दो ही रास्ते थे। मेरे सामने पहला कर्त्तव्य था, जिसे मैं मानवीय कर्त्तव्य मानता हूँ श्री गाँधी के प्राणों को बचाया जाए। दूसरी ओर मेरे सामने समस्या थी कि अस्पृश्यों के उन अधिकारों की रक्षा की जाए जो प्रधानमंत्री ने दिए थे। मैंने मानवता की पुकार को सुना और श्री गाँधी के प्राणों की रक्षा की।[2] 24 सितम्बर को ऐतिहासिक पूना समझौते पर हस्ताक्षर हुए। अस्पृश्य वर्ग की ओर से बाबा साहेब ने हस्ताक्षर किया, सवर्ण हिन्दुओं की ओर से पं0 मदन मोहन मालवीय ने हस्ताक्षर किया। हस्ताक्षर करने वाले अन्य नेताओं में जयकर, सपू, विडला, राजेन्द्र प्रसाद, राजगोपालाचारी, राजभोज, एम0जी0 राजा, श्रीनिवासन आदि प्रमुख नेता थे। राजगोपालाचारी खुशी से इतने पागल हो गए कि उन्होंने और बाबा साहेब ने कलम की अदला–बदली की।

---

[1] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर, एक चिंतन, पृ0सं0– 52

[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृ0सं0–92

पूना समझौते के तहत दलित वर्गों के लिए पृथक निर्वाचन मण्डल समाप्त कर दिया जाए गया। प्रान्तीय विधान मण्डलों में दलितों के लिए आरक्षित सीटों की सख्या 71 से बढ़ाकर 147 कर दी गई तथा केन्द्रीय विधान मण्डल में आरक्षित सीटों की संख्या में 18 प्रतिशत की बृद्धि की गई।

गाँधी जी ने अनशन समाप्ति के पश्चात् पूना समझौते के विषय में कहा– "मैं अपने हरिजन भाइयों को इसके पूरी तरह पालन का विश्वास दिलाता हूँ।" मधु लिमये ने लिखा– गाँधी जी ने सवर्ण हिन्दुओं की सोई हुई आत्मा जगा कर अपने को गौरान्वित किया, लेकिन मेरे विचार में डा0 अम्बेडकर का काम ज्यादा महान था। उन्होंने अपने को अन्याय के खिलाफ अनथक संघर्षिक व्यक्ति के साथ–साथ महान भारतीय भी सिद्ध किया।[1]

महात्मा गाँधी ने स्वयं हिंदू समाचार पत्र के संवाददाता को बताया– "हिन्दुओं को उनके सदियों के पाप का दंड देने के लिए अम्बेडकर अपनी बात पर अड़े रह सकते थे। अगर उन्होंने ऐसा किया होता तो मुझे उनसे कोई शिकायत न होती और मेरी मृत्यु हिन्दुओं द्वारा अगणित पीढ़ियों पर किए गए अत्याचारों की मामूली सी कीमत ही होती लेकिन उन्होंने उदारता का रवैया अपनाया और क्षमा का अनुसरण किया। जिसका सभी धर्मों में प्रावधान है। मैं उम्मीद करता हूँ कि सवर्ण हिन्दु अपने को इस क्षमा के पात्र सिद्ध करेंगे और समझौते का अपने तमाम निहितार्थों के साथ शब्दशः और भावता पालन करेंगे।[2]

यदि निष्पक्ष मूल्यांकन किया जाए तो स्पष्ट होता है कि पूना समझौता अस्पृश्य वर्ग के लिए हानकिारक था और बाबा साहेब ने भारी दबाव के कारण दुःखी मन से इस पर हस्ताक्षर किया था, लेकिन अस्पृश्यता उन्मूलन और मनुवादी व्यवस्था के विरुद्ध उनका संघर्ष तथा अस्पृश्य वर्ग के अधिकरों की मांग का आन्दोलन और तीव्र

---

[1] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृ0सं0– 52

[2] द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड– 51, पृ0सं07 144

गति से शुरू हुआ। बाबा साहेब ने मुंबई के बेतातीस रोड पर अक्टूबर 1932 में हुई एक सभा में अस्पृश्य वर्ग को झकझोर देने वाला भाषण दिया।

पूना समझौते के पश्चात् अस्पृश्यता उन्मूलन आन्दोलन ने जोर पकड़ा। महात्मा गाँधी और उनकी कांग्रेस ने अस्पृश्यता उन्मूलन कार्यक्रम में तीव्रता लाई। 28 सितम्बर 1932 को अखिल भारतीय अस्पृश्यता निवारण लीग की स्थापना की गई। दिसम्बर 1932 में इसका नाम बदलकर ''अस्पृश्य समाज सेवक'' रखा गया। यह नाम भी बदलकर ''हरिजन'' नामक नया नाम दिया गया। इस नाम को गाँधी जी ने नरसी मेहता के उपन्यास से ग्रहण किया था। बाब साहेब ने इस नाम पर कड़ी आपत्ति प्रकट की।

पूना समझौतो के बाद बड़ी संख्या में सार्वजनिक स्थलों यथा– तालाबों, कुओं, विद्यालयों को अस्पृश्य वर्ग के लिए खोल दिया गया। मंदिर प्रवेश आन्दोलन और तीव्र हो गया। गाँधी जी के हरिजन समाचार पत्र के 18 फरवरी 1933 के अंक में छपा-- मंदिर खाले गए, उत्तरी कलकत्ता में डेढ़ लाख की लागत से बना मंदिर। मद्रास मे रांजाम जिले में भापुर गांव का एक मंदिर। पंजाब में जालंधर नौरानिया का एक ठाकुरदास मंदिर।

कुंए खोले गए

उड़ीसा के जिला कटक के जयपुर कस्बा में गुरियापुर का नगर पालिका कुँआ। संयुक्त प्रान्त के बजीरपुरा और नम्की गली में दो कुंए।

स्कूल शुरू किए गए

संयुक्त प्रान्त के मेरठ जिले में बजरौठा में एक निःशुल्क स्कूल। राजपूताना के मेवाड़ जिले में एक स्कूल। राजपूताना के जयपुर रियासत में फतेहपुर, चेमन और अभयपुर में तीन स्कूल।

भारतीय रियासतें

अनेक रियासतों में भी स्कूल, तालाब, कुंए अस्पृश्यों के लिए खोल दिए गए। महात्मा गाँधी ने स्वयं मंदिर–प्रवेश आन्दोलन में भाग लिया। गाँधी जी में यह महत्वपूर्ण परिवर्तन क्यों आया, जबकि वे 1932 से पूर्व मंदिर प्रवेश के विरुद्ध थे? बाबा साहेब ने इसका कारण यह बताया कि गाँधी को यह लगा कि पूरा विभाजन न हो जाए। इसलिए श्री गाँधी की आँखें खुलीं और उन्होंने दोनो वर्गों को सांस्कृतिक और धार्मिक बंधन में बांधने के लिए मंदिर प्रवेश जैसा मार्ग अपनाया।[1]

बदले परिवेश में 4 फरवरी 1933 को बाबा साहेब ने गाँधी जी के आग्रह पर यर्वदा जेल में मुलाकात की। गाँधी जी ने डा0 सुत्वारायन और रंगा अय्यर द्वारा प्रस्तुत मंदिर–प्रवेश विधेयक का डा0 अम्बेडकर से समर्थन करने को कहा, लेकिन बाबा साहेब ने समर्थन करने में असमर्थता व्यक्त की। बाबा साहेब ने बाद में 14 फरवरी 1933 को मंदिर प्रवेश विधेयक पर लिखा गया विस्तृत बयान प्रेस में छपने को दे दिया। यह महत्वपूर्ण बयान इस प्रकार था[2]– "यद्यपि मंदिर प्रवेश से सम्बन्धित प्रश्न पर विवाद सनातनी हिन्दुओं तथा श्री गाँधी तक सीमित हैं, निःसन्देह दलित वर्गों को इस विषय में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है, क्योंकि वे निर्णायक पक्ष हैं। इस पर उन्हें गंभीरता से विचार करना है कि विधेयक के अंतिम निर्णय पर दलित वर्ग के लोग किस स्थिति में होंगे।

श्री रंगा ने मंदिर प्रवेश विधेयक का जो प्रारूप तैयार किया है दलित वर्ग के लोग संभवतः उसका समर्थन नहीं करेंगे। इस विधेयक का सिद्धान्त यह है कि यदि म्यूनिसियल और स्थानीय निकायों के मतदाता अपने पड़ोस के किसी मुख्य मंदिर क लिए जनमत संग्रह का निर्णय करत हैं कि उस मंदिर में दलित वर्ग के लोगों को जाने के लिए अनुमति दी जाए तब मंदिर के न्यासी अथवा प्रबन्धक उस फैसले को कार्यरूप

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड– 16, पृ0सं0– 114

[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड– 16, पृ0सं0– 115–119

में परिणत करेंगें। यह सिद्धान्त साधारणतया बहुमत के निर्णय पर आधारित है, इसमें मौलिक अथवा क्रांतिकारी कुछ भी नहीं है।

इस सिद्धान्त पर आधारित विधेयक को दलित वर्गों का समर्थन न मिलने के दो कारण हैं–

1. उस विधेयक से निकट भविष्य में अस्पृश्यों के मंदिर प्रवेश में शीघ्रता नहीं आ सकती।...... मंदिर प्रवेश मे बहुमत की आशा मुश्किल से पूरी होगी। निःसन्देह बहुमत आज विरुद्ध है।

2. विधेयक अस्पृश्यता को पापाचार नहीं मानता। विधेयक अस्पृश्यता को केवल सामाजिक दोष मानता है और अन्य प्रकार की सामाजिक बुराइयो की अपेक्षा अधिक दोषपूर्ण नहीं मानता। यह विधेयक अस्पृश्यता को गैर कानूनी घोषित नहीं करता। यदि बहुमत ऐसा करने का फैसला करे, तो उसमें कोई जोर नहीं होगा। पाप ओर अनैतिकता बर्दाश्त करने योग्य नहीं बन सकती, यदि बहुमत उसी के वशीभूत हो जाए अथवा उन अनैतिकताओं के अनुसार चलना पसंद करें। यदि अस्पृश्यता एक पापाचार एवं अनैतिकता है तो दलित वर्गों की दृष्टि में उसे निःसंकोच तिलांजलि दे देनी चाहिए। चाहे बहुसंख्यक अस्पृश्यता के पक्ष में

इस विधेयक में ऐसा कुछ भी नहीं है। विधेयक के लेखक ने अस्पृश्यता की प्रथा पर गंभीर रुख नहीं अपनाया है।...... यदि विधेयक में अस्पृश्यता को पाप मान लिया गया होता, तो दलित वर्ग उस विधेयक से कुछ आशा रखता।

सचमुच मेरी समझ में नहीं आता कि इस विधेयक से श्री गाँधी कैसे संतुष्ट हो गए जो अस्पृश्यता को पाप मानने पर जोर दिया करते थे। बहरहाल इस विधेयक से दलित वर्ग को सन्तोष नहीं हो सकता विधेयक बुरा है या अच्छा, पर्याप्त है या अपर्याप्त, यह प्रश्न गौण है।

मुख्य प्रश्न यह है कि दलित वर्ग के लोग सोचते है कि उनका उत्थान है या नहीं? इसे दलित वर्ग के लोग 2 दृष्टिकोण से देखते हैं–

पहला कारण है भौतिक दृष्टिकोण

दलित वर्ग के लोग सोचते हैं कि उनका उत्थान उच्च स्तर की शिक्षा, उच्च स्तर की नौकरियां और जीविका के अच्छे साधनों से ही संभव है। एक बार जब वे सामाजिक जीवन के उच्च स्तरपर पहुँच जाएंगे तो उनका सम्मान बढ़ेगा और जब समाज में उनका आदर–सम्मान होने लगेगा तो रूढ़िवादी हिन्दुओं में भी परिवर्तन आएगा और यदि ऐसा न हुआ तो उससे उन दलित वर्गों के भौतिक हितों की कोई हानि नहीं होने पायेगी। इन मार्गों पर चलते हुए दलित वर्ग के लोगों का कहना है कि वे मंदिर प्रवेश के थोथे आन्दोलन में अपनी शक्ति नष्ट नहीं करेंगे। एक दूसरा कारण भी है जिससे वे मंदिर प्रवेश के लिए नहीं झगड़ना चाहते हैं। यह तो आत्म–सम्मान का प्रश्न है।

अभी बहुत दिन नहीं हुए जब क्लबों के दरवाजों और भारत के सामाजिक स्थानों में यूरेपियन लोगों ने तख्तियां टांगी थीं और उस पर लिखा होता था– कुत्तों और भारतीयों को प्रवेश करने की अनुमति नहीं। हिन्दुओं के मंदिरों पर भी ऐसी ही तख्तियां लटकी हैं। अंतर केवल इतना है कि स्पर्श हिन्दू यहां तक कि जानवर और कुत्ते मंदिर में प्रवेश कर सकते हैं, केवल अस्पृश्य प्रवेश नहीं कर सकते। दोनो मामलों में स्थिति एक सी है परन्तु हिन्दुओं ने उन स्थानों पर प्रवेश करने की अनुमति कभी नहीं मांगी, जहाँ पर यूरोपियनों ने अपने प्रबन्ध से बहिष्कृत किया था। अस्पृश्य उस स्थान पर प्रदेश क्यों करना चाहता है, जहाँ हिन्दुओं ने दंभ से उन्हें बहिष्कृत कर रखा है। वे हिन्दुओं से यह कहने के लिए तैयार हैं कि तुम मंदिरों के दरवाजे खोलो या न खोलो, यह तुम्हारी मर्जी, मैं इस पर विचलित नहीं होता। यदि आप सोंचते हैं कि मानवीय व्यक्तित्व की पवित्रता को आदर का स्थान न देना बुरी बात है तो आप अपने मदिरों को खोलिए और इन्सानियत दिखाइए। यदि आप भले मानुष बनने की अपेक्षा हिन्दू ही बने रहना ठीक

समझते हैं तो मंदिरां के दरवाजे बन्द रखिए और भाड़ में जाइए, हमें मंदिरों में आने की कोई जरूरत नहीं है।

दूसरा आध्यात्मिक दृष्टिकोण है

धर्मभीरू लोगों की तरह दलित वर्ग के लोग भी मंदिर में प्रवेश चाहते हैं अथवा नहीं। इतना ही प्रश्न है। अध्यात्मिक दृष्टि से दलित वर्गों के लोग मंदिर प्रवेश के विरुद्ध भी नहीं है...... यदि मंदिर प्रवेश अंतिम उद्देश्य है तो दलित वर्ग के लोग उसेदूर से ही प्रणाम करते हैं। वास्तव में वे उसे केवल अस्वीकार ही नही करेंगे, वरन यदि वे अपने आपको हिन्दुओं द्वारा अस्वीकृत पाएंगे, तब वे अपना भाग्य कहीं और अजमाएंगे........ दलित वर्ग के लोग असमानता जनति अन्यायों ओर अत्याचारों का जुआ तो उतार कर नहीं फेंक सकते परन्तु अब उन्होंने पक्का इरादा कर लिया हे कि अब उस धर्म को नहीं सहन करेंगे जो अत्याचारों को जारी रखने का हामी हो। यदि उनका धर्म हिन्दू होता है तो उस धर्म को सामाजिक समानता का धर्म होना पड़ेगा।...... आवश्कता है चातुरवर्ण के सिद्धान्त से इसको मुक्त करने की। चातुरवर्ण व्यवस्था ही सारी असमानताओं की जननी है और जाति व्यवस्था तथा अस्पृश्यता का मूल भी जो असमानताओं के विभिन्न रूपों में व्याप्त है। जब तक वर्ण व्यवस्था रहेगी दलित वर्ग के लोग मंदिर प्रवेश ही नही वरन हिन्दू धर्म को भी अस्वीकार करेंगे। चातुरवर्ण और जाति व्यवस्था दोनो ही दलित वर्गो के आत्म सम्मान के विरुद्ध हैं। जब तक जाति व्यवस्था इस धर्म का मूल सिद्धान्त रहेगी, तब तक दलित वर्ग के लोग नीच समझे जाते रहेंगे। दलित वर्ग के लोग कह सकते हैं कि वे हिन्दू तभी हैं जब चतुरवर्ण और जाति व्यवस्था को दफन कर दिया जाए और हिन्दू शास्त्रों से उस व्यवस्था को पूरी तरह हटा दिया जाए।..... इससे कम से दलित वर्ग संतुष्ट नहीं होंगे और तभी वे मंदिर प्रवेश को स्वीकार करेंगे।

इस प्रकार बाबा साहेब ने अपने बयान में मंदिर प्रवेश के प्रश्न पर दलित वर्ग के दृष्टिकोंण को ही नहीं अपितु समानता और बन्धुत्व मूलक धर्म की बात भी सामने रखी।

रंगा अय्यर का विधेयक 24 मार्च 1933 को केन्द्रीय विधान मण्डल में रखा गया लेकिन पारित नहीं हो सका। बाबा साहेब ने मंदिर प्रवेश पर अपने दृष्टिकोंण को अनेक सभाओं में व्यक्त किया। 12 अप्रैल 1933 को मुम्बई के परेल में आयोजित एक सम्मान सभा में बाबा साहेब ने कहा– मेरा सारा जीवन विद्यार्थी के रूप में व्यतीत हो, ऐसी मेरी अभिलाषा थी.... परन्तु सौभाग्य कहो या दुर्भाग्य मुझे अस्पृश्यों के आन्दोलन में भाग लेना पड़ा। न पैसा, न व्यक्ति, न बुद्धिमत्ता ऐसी इस समाज की परिस्थिति होने से इस समाज का कार्य करना बड़ा कठिन है।[1]

इसी बीच ब्रिटिश सरकार ने मार्च 1933 में संविधान में सुधार व संशोधन हेतु श्वेत पत्र प्रकाशित किया। इसके पूर्व लन्दन में 17 नवम्बर 1932 को तृतीय गोलमेज सम्मेलन शुरु हुआ जो 24 दिसम्बर 1932 तक चला था। बाबा साहेब ने इसमें भाग लिया था। श्वेत पत्र पर अनेक नेताओं ने अपनी तीखी प्रतिक्रिया व्यक्त की थी। डा0 मुंजे ने इस काला मशौदा कहा, तो सुभाष चन्द्र बोस ने कहा– शांति को सुरंग लगाने वाही यह घटना है।[2]

श्वेत पत्र के साथ ब्रिटिश सरकार ने एक संयुक्त समिति का गठन भी किया था जिसमें बाबा साहेब सहित अनेक भारतीय नेता सम्मिलित थे। बाबा साहेब इस समिति में कार्य करने के लिए 24 अप्रैल 1933 को लन्दन रवाना हुए और 6 मई को लन्दन पहुँचे। इसी समय गवई ने यह समाचार फैला दिया कि डा0 अम्बेडकर इस्लाम धर्म स्वीकार करने वाले हैं। सवादकर ने बाबा साहेब को पत्र लिखकर कहा– अस्पृश्य जनता की समस्या हल किए बिना दलितों का राजा अम्बेडकर इस प्रकार का कोई निर्णय जल्दवाजी में नहीं लेंगे, ऐसा दलित समाज का विश्वास है। बाबा साहेब ने सवादकर को पत्र लिखकर शंका का समाधान किया और बताया कि अस्पृश्य वर्ग की समस्याओं को लेकर मैं इतना व्यस्त हो गया हूँ कि मेरा स्वयं का व्यक्तित्व और

---

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 228

[2] वही, पृ0सं0– 226

स्वतन्त्रता पूरी तरह भूल गया हूँ। उनकी समस्या हल किए बिना मुझे स्वयं के विषय में विचार करने का मौका नहीं मिलेगा।

बाबा साहेब लन्दन से 8 जनवरी 1934 को भारत आए। मुम्बई बन्दरगाह पर उनका भव्य स्वागत किया गया। संवाददाताओं ने बाबा साहेब से भावी कार्यक्रम के बारे में पूँछा। बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि "अब राजनीति में मुझे दिलचस्पी नहीं है। आर्मी इन इंडिया नामक पुस्तक मैं लिख रहा हूँ। किसी भी काम की तुलना में यह ग्रन्थ मुझे अधिक महत्व का लगता है।"[1]

बाबा साहेब एक महान योद्धा की भांति हार मानने वाले नहीं थे। अपने अभियान में लगे रहे और यवेला में 13 अक्टूबर 1935 को एक विशाल सम्मेलन बुलाकर अस्पृश्य वर्ग के लिए अब तक किए गए प्रयासों और भावी कार्यक्रम पर विचार विमर्श किया। इस सम्मेलन में 10 हजार से अधिक जन समुदाय एकत्र हुआ। देश के विभिन्न भागों से अस्पृश्य समुदाय अपार कष्ट, दुःख झेलता हुआ सभा में उपस्थित हुआ था। बाबा साहेब ने अस्पृश्य वर्ग की सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक दशा पर विस्तार से प्रकाश डाला। अस्पृश्यों को अपने ही सहधर्मियों द्वारा हजारों वर्षों से कितना तिरस्कार और अपमानजनक व्यवहार का सामना करना पड़ा है, विस्तार से बताया। कालाराम मंदिर सत्याग्रह पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कहा– "अपने इन्सानियत के मान्य अधिकार प्राप्त करने के लिए और हिन्दू समाज में समान दर्जा प्राप्त करने के लिए किया गया यह आन्दोलन भी विफल सिद्ध हो चुका है। उस आन्दोलन के लिए लगाया गया समय और पैसा सब व्यर्थ गया। यह बड़ी दुःखदायी स्थिति है। इसलिए हमें इस विषय में अंतिम निर्णय लेने का अवसर आ गया है अपनी यह दुर्बलता और अवनति की स्थिति इसलि हम पर आ पड़ी है कि हम हिन्दू समाज के अंग हैं। इसलिए जो धर्म हमें समानता का दर्जा दे सके, समान अधिकार दे और हमारे साथ उचित बर्ताव करे, ऐसे किसी दूसरे धर्म में प्रवेश करें, क्या ऐसा आपको नहीं लगता?

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 242

बाबा साहेब ने आगे आवेशपूर्ण शब्दों में कहा– ''हिन्दू समाज के साथ सम्बन्ध तोड़ दो। स्वाभिमान और शांति मिले, ऐसे किसी अन्य धर्म में प्रवेश करो.....। बाबा साहेब ने यह घोषणा कि मैं दुर्भाग्य से अस्पृश्य हिन्दू धर्म में पैदा हुआ हूँ, यह कोई मेरा अपराध नहीं है, लेकिन मरते समय मैं हिन्द के रूप में कभी नहीं मरूँगा।''

बाबा साहेब के धर्मान्तरण की इस घोषणा से देश में एक तूफान सा आ गया। देश के अनेक नेताओ तथा धार्मिक व्यक्तियों ने डा0 अम्बेडकर से अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने का आग्रह किया। गाँधी जी ने इसे बम विस्फोट कहा, तो डा0 राजेन्द्र प्रसाद न इस घोषणा पर दुःख प्रकट किया। बी0डी0 सावरकर ने डा0 अम्बेडकर से धर्मान्तरण न करने का निवेदन किया। हिन्दू धर्म के अतिरिक्त अन्य सभी धर्मों ने डा0 अम्बेडकर की इस घोषणा का स्वागत किया। इस्लाम, ईसाई, सिख तथा बौद्ध धर्मानुयायियों ने अपनी ओर आकृष्ट करने का प्रयास किया, लेकिन बाबा साहेब किसी जल्दवाजी में निर्णय नहीं लेना चाहते थे। बाबा साहेब ने मात्र अस्पृश्यता के कलंक को समाप्त करने तथा समानता, बन्धुत्व एवं स्वतन्त्रता की प्राप्ति के लिए ही इस प्रकार का क्रांतिकारी युग परिवर्तनकारी निर्णय लिया था। हिन्दुओं के सम्मुख यह एक महान चुनौती थी कि अपने धर्म को समानता और बन्धुत्व की नींव पर खड़ा करे अन्यथा उसका विनाश निश्चित है।

बाबा साहेब ने एक क्रांतिकारी एवं अति महत्वपूर्ण ऐतिहासिक लेख 1936 में लाहौर के जातिपात तोडक मंडल के अध्यक्षीय भाषण के लिए लिखा। लेख में हिन्दू धर्म और जाति व्यवस्था तथा अस्पृश्य वर्ग की दुःखद स्थिति एवं अस्पृश्यता एवं जाति प्रथा उन्मूलन आदि बिन्दुओ पर वैज्ञानिक और तार्किक विवेचना है। 12 दिसम्बर 1935 को जातिपात तोड़क मण्डल के मंत्री श्री संतराम का एक पत्र डा0 अम्बेडकर को प्राप्त हुआ, जिसमें लिखा था–[1] ''प्रिय डा0 साहेब आपके 5 सितम्बर के कृपा पत्र के लिए बहुत–बहुत धन्यवाद। आप एक महान चिंतक हैं औश्र यह मेरा सुविचारित मत है कि

[1] डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड– 1, पृ0सं0– 41–42

आपने जाति समस्या का जितनी गहराई से अध्ययन किया है, उतना किसी और ने नहीं किया है...... हमारी प्रबन्धकारिणी समिति का आग्रह है कि आप हमारे वार्षिक सम्मेलन का अध्यक्ष बनना स्वीकार करें। हम आपकी सुविधानुसार तारीखों में परिवर्तन कर सकते हैं।'' काफी हिचकिचाहट के बाद बाबा साहेब ने अध्यक्षता करना स्वीकार की, लेकिन बाबा साहेब के भाषण के कतिपय अंशों से आयोजक मण्डल का मतभेद था। अंततः मतभेद के कारण सम्मेलन आयोजित नहीं हो सका। बाबा साहेब ने अपने अध्यक्षीय भाषण की प्रति छपवा कर प्रेस को जारी किया। बाबा साहेब के सम्पूर्ण विचारों, सिद्धान्तों की झलक इस भाषण में मिलती है। भाषण के अंश इस प्रकार थे–[1] ''मुझे जात पात तोड़क के सदस्यों की स्थिति पर निश्चिय ही खेद है, जिन्होंने इस सम्मेलन की अध्यक्षता करने के लिए मुझे आमंत्रित करने की महती कृपा की है। मुझे यकीन है कि अध्यक्ष के रूप में मेरा चुनाव करने पर उनसे अनेक प्रश्न पूँछे भी जायेंगे।........ मैं कहना चाहूँगा कि मैंने इस निमंत्रण को अपनी तथा अपने अछूत साथियों की इच्छा के विरुद्ध स्वीकार किया है। मैं जानता हूँ कि हिन्दू मुझसे उखड़े हुए हैं। मैं जानता हूँ कि मैं उनके लिए स्वीकार्य व्यक्ति नहीं हूँ। यह सब कुछ जानते हुए मैंने जानबूझकर अपने आपको उनसे दूर रखा है। मेरी उन्हें कष्ट पहुँचाने की कोई इच्छा नहीं है।

भारत मे समाज सुधार का मार्ग स्वर्ग समान है और इस कार्य में अनेक कठिनाइयां हैं। भारत में समाज सुधार कार्य में सहायक मित्र कम और आलोचक अधिक हैं। अलोचकों के दो स्पष्ट वर्ग हैं। एक वर्ग में राजनैतिक सुधारक हैं और दूसरे वर्ग में समाजवादी।.......... समाज सुधार का राजनैतिक सुधार पर काई असर नहीं पड़ता...... मराठा राज्य में पेशवाओं के शासनकाल में यदि कोई हिन्दू सड़क पर आ रहा होता था तो किसी अछूत को इसलिए उस सड़क पर चलने की अनुमति नहीं थी कि उसकी परछाई से वह अपवित्र हो जाएगा। अछूत के लिए यह आवश्यक था कि वह अपनी कलाई व गर्दन में निशानी के तौर पर एक काला धागा बाँधे, जिससे कि हिन्दू गलती से उससे छूकर अपवित्र हो जाने से बच जाए। पेशावाओं की राजधानी पूना में किसी भी

---

[1] डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड– 1, पृ0सं0– 54

अछूत के लिए अपनी कमर में झाड़ू बांधकर चलना आवश्यक था, जिससे कि उसके चलने से पीछे की धूल साफ होती रहे और ऐसा न हो कि उस रास्ते से चलने वाला हिन्दू उससे अपवित्र हो जाए। पूना में अछूतों के लिए यह आवश्यक था कि जहाँ कहीं भी वे जायें, अपने थूकने के लिए मिट्टी का एक बर्तन अपनी गर्दन में लटका कर चलें, क्योंकि कहीं ऐसा न हो जाए कि जभीन पर पड़ने वाले उसके थूक से अनजाने में वहाँ से गुजरने वाले कोई हिन्दू अपवित्र हो जाए।............

मैं राजननैतिक प्रवृत्ति के हिन्दुओं से पूँछता हूँ– "जब आप अपने ही देश के अछूतों जैसे एक बहुत बड़े वर्ग को सार्वजनिक स्कूलों का प्रयोग नहीं करने देते तो क्या आप राजनैतिक सत्ता के योग्य हैं? जब आप उन्हें सार्वजनिक कुओं का प्रयोग नहीं करने देते तो क्या राजनैतिक सत्ता के योग्य हैं? जब आप उन्हें सड़कों का प्रयोग नहीं करने देते तो क्या आप राजनैतिक सत्ता के योग्य हैं? जब उन्हें अपनी पसन्द के आभूषणों और वेश–भूषा धारण नहीं करने देते तो क्या आप राजनैतिक सत्ता के योग्य हैं? जब आप उन्हें अपनी पसन्द का भोजन नहीं करने देते तो क्या आप राजनैतिक सत्ता के योग्य हैं?....... मुझे यकीन है कि कोई भी समझदार व्यक्ति हाँ में उत्तर देने का साहस नहीं करेगा। प्रत्येक कांग्रेसी को, जो इस सिद्धान्त को मानता है कि एक देश दूसरे देश पर शासन करने योग्य नहीं है, यह बात स्वीकार करनी चाहिए कि एक वर्ग दूसरे वर्ग पर भी शासन करने योग्य नही है।...........

"खेद है कि आज भी जाति प्रथा के समर्थक मौजूद हैं। इसका समर्थन इस आधार पर किया जाता है कि जाति प्रथा श्रम के विभाजन का एक अन्य नाम ही है। इस विचार के विरुद्ध पहली बात यह है कि जाति प्रथा केवल श्रम का विभाजन नहीं है, यह श्रमिकों का विभाजन भी है।..... श्रम का विभाजन स्वतः नहीं होता..... जाति प्रथा नकारात्मक तथ्य है..... जहाँ तक शारीरिक क्षमता का संबन्ध है, उसमें हिन्दू प्रजाति सबसे घटिया किस्म (सी–3) की है। यह छोटे आकार के बौनों की जाति है, जिनका शारीरिक विकास अवरूद्ध है और जिनमें 'दम' नहीं है। भारत ऐसा राष्ट्र है जिसकी 90

प्रतिशत जनसंख्या सैनिक सेवा के लिए अयोग्य है।..... जाति प्रथा एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जो हिन्दू समाज समाज के ऐसे विकृत समुदाय की झूठी शान और स्वार्थ की प्रतीक है, जो अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा के अनुसार इतने समृद्ध थे कि उन्होंने इस जाति प्रथा को प्रचलित किया और इस प्रथा को अपनी जोर–जबरदस्ती के बल पर अपने से निचले तबके के लोगों पर लागू किया।''

''हिन्दू समाज एक निथक मात्र है। हिन्दू नाम स्वयं विदेशी नाम है। यह नाम मुसलमानों ने भारतवासियों को दिया था ताकि उन्हें अपने से अलग कर सकें। मुसलमानों के भारत पर आक्रमण से पहले लिखे गए किसी भी संस्कृत ग्रन्थ में इस नाम का उल्लेख नहीं मिलता.... वस्तुतः हिन्दू समाज नामक कोई वस्तु है ही नहीं। यह अनेक जातियों का समवेत रूप है। प्रत्येक जाति अपने अस्तित्व से परिचित है। ..... जब तक जाति प्रथा रहेगी हिन्दुओं में संगठन नाम की कोई बात नहीं रहेगी और जब तक उनमें संगठन नहीं होगा हिन्दू कमजोर और डरपोक रहेंगे। हिन्दू कहते हैं कि उनकी कौम बड़ी सहनशील है। मेरे मत से यह बात सही नहीं है। अनेक अवसरों पर यदि उनका असहनीय रूप देखा जा सकता हैऔर कुछ अवसरों पर सहनशीलता देखी जाती है तो उसका कारण यह है कि या तो वे विरोध करने में अधिक अशक्त हैं या पूरी तरह उदासीन है।''.........

'''अगर आप मुझसे पूंछें तो मेरा आदर्श एक ऐसा समाज होगा हो स्वाधीनता, समानता और भाईचारे पर आधारित हो।.... प्रजातंत्र का मूल है अपने साथियों के प्रति आदर और मान की भावना। क्या स्वाधीनता पर किसी को भी आपत्ति हो सकती है? क्या समानता पर कोई आपत्ति हो सकती है.... चातुष्वर्ण दोषपूर्ण व्यस्था है... यह नया नहीं है। यह उतनी ही प्राचीन है, जितने कि वेद..... जब विभिन्न वर्गों के बीच प्रतिद्वंदिता और शत्रुता के इतने सारे उदाहरण मौजूद हैं तब मैं यह नहीं समझता कि कोई व्यक्ति चातुष्वर्ण व्यवस्था को ऐसे प्राप्य आदर्श या प्रतिमान के रूप में कैसे मान सकता है, जिसके आधार पर हिन्दू समाज की पुनः रचना की जाए।........

अब केवल एक प्रश्न रहता है, जिस पर विचार करना है। वह यह है कि हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में सुधार कैसे किया जाए? जाति प्रथा को कैसे समाप्त किया जाए?....... मुझे पूरा विश्वास हैं कि इसका वास्तविक उपचार अन्तर्जातीय विवाह ही है। केवल खून के मिलने से ही रिश्ते की भावना पैदा होगी और जब तक सजातीयता की भावना को सर्वोच्च स्थान नहीं दिया जाता, तब तक जाति व्यवस्था द्वारा उत्पन्न की गई पृथकता की भावना समाप्त नहीं होगी। हिन्दुओं में अन्तर्जातीय विवाह सामाजिक जीवन में निश्चित रूप से महान शक्ति का एक कारक सिद्ध होगा।......... जाति पात मानने में लोग दोषी नहीं है। मेरी राय में उनका धर्म दोषी है, जिसके कारण जाति व्यवस्था का जन्म हुआ। यदि यह बात सही है तो यह स्पष्ट है कि वह शत्रु जिसके साथ आपको संघर्ष करना है वे लोग नहीं है जो जाति पात मानते हैं बल्कि वे शास्त्र है जिन्होंने जाति–धर्म की शिक्षा दी है।........ वास्तविक उपचार यह है कि शास्त्रों से लोगों के विश्वास को समाप्त किया जाए........... प्रत्येक स्त्री–पुरूष को शास्त्रों में बंधन से मुक्त कराइए, शास्त्रों द्वारा प्रतिष्ठिापित हानिकारक धारणाओं से उनके मस्तिष्क का पिण्ड छुडाइए, फिर देखिए वह आपके कहे बिना अपने आप अन्तरार्जातीय विवाह का आयोजन करेगा, करेगी।......... आपको शास्त्रों की केवल उपेक्षा ही नहीं करनी चाहिए, बल्कि उनकी सत्ता स्वीकार करने से इन्कार करना होगा, जैसा कि बुद्ध और नानक ने किया था। आपको हिन्दुओं से यह कहने का साहस रखना चाहिए कि दोष उनके धर्म का है-- वह जिसने आपमें यह धारणा पैदा की है कि जाति व्यवस्था पवित्र है। क्या आप ऐसा साहस दिखाएंगे?........

लेकिन आपको यह नहीं भूलना चाहिए कि यदि आप जाति प्रथा में दरार डालना चाहते हैं तो इसके लिए आपको हर हालत में वेदों और शास्त्रों में डायनामाइट लगाना होगा क्योंकि वेद और शास्त्र किसी भी तर्क से अलग हटाते हैं और वेद तथा शास्त्र किसी भी नैतिकता से वंचित करते हैं। आपको श्रुति और स्मृति के धर्म को नष्ट करना ही चाहिए। यही मेरा सोचा विचारा हुआ विचार है।

बाबा साहेब का यह भाषण जाति व्यवस्था, अस्पृश्यता तथा नए समाज की रचना आदि पर बहुमूल्य निधि है। यद्यपि गाँधी जी ने अपने हरिजन पत्र (18 जुलाई 1936) में बाबा साहेब के भाषण का उत्तर दिया।[1] लेकिन उसमें यह तार्किकता और ग्राह्यता नहीं है जो बाबा साहेब के भाषण मे है। गाँधी जी का उत्तर अस्पष्ट और एक पक्षीय है। डा0 अम्बेडकर ने गाँधी जी के प्रश्नों का स्पष्ट उत्तर दिया है। बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि[2]– मेरे द्वारा उठाये गए मुद्दों को पूरी तरह छोड़ दिया है और उन्होंने जो मुद्दे उठाये हैं, वे मुद्दे उस भाषण से उत्पन्न नहीं होते, जिसे उन्होंने हिन्दुओं के लिए मेरा अभियोग–पत्र बताने में प्रसन्नता अनुभव की।

---

[1] महात्मा गाँधी, हरिजन, 18 जुलाई 1936

[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–1, पृ0सं0– 111–116

अध्याय

छः

अध्याय– छः

''बाबा साहेब का निजी जीवन-वैशिष्टपूर्ण जीवन शैली''

महाजनों येन गतः सः पन्थः की लोकोक्ति आम जनमानस व्याप्त है, लेकिन इसका अनुसरण करने वाले सामान्य जन ही बन पाते हैं और भीड़ में खो जाते हैं, परन्तु जो स्वनिर्मित मार्ग पर चलते हैं, आत्मदीपों भवः के आदर्श को सामने रखते हैं, परम्पराओं, रूढ़ियों को तोड़ते हैं, वही असाधारण मानव बन कर इतिहास पुरुष बनते हैं और इतिहास ऐसे ही व्यक्तियों का यशोगान करता है। युगपुरुष पोधिसत्व बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर स्वनिर्मित मार्ग पर चलकर, आत्मदीपो भवः के आदर्श को सामने रख समाज की रूढ़ियों, गलत मान्यताओं, असमानताओं के विरुद्ध आजीवन विरोध कर विश्व इतिहास के देवीप्यमान महापुरुषों की पंक्ति में अग्रिम स्थान के भागीदार बने। ऐसे विराट महामानव के जीवन का प्रत्येक पक्ष, आचार–विचार, रहन–सहन, वेश–भूषा आदि जनसमुदाय के बीच आकर्षक, कौतूहल और चर्चा का केन्द्र सदैव बनता है। बाबा साहेब का निजी जीवन और वैशिष्टपूर्ण जीवन शैली ही उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को विशिष्टता प्रदान करता है। उनके जीवन के सांगोपांग विवेचन से निम्नलिखित विशिष्टतायें सामने आती हैं–

1. महान अध्ययन प्रेमी

बाबा साहेब की प्रकाण्ड बौद्धिकता उनके गहन, गंभीर, कठिन एवं सतत अध्ययन का प्रतिफल थी। यद्यपि बाबा साहेब अपने शैशवकाल में या अध्ययन के आरम्भिक वर्षों में प्रतिभाशाली विद्यार्थी नहीं थे। अंग्रेजी की दूसरी, तीसरी कक्षा तक भीम का अध्ययन साधारण ही था।[1] बालक भीम का ध्यान पढ़ाई की अपेक्षा बागवानी, खेलने–कूदने में अधिक लगता था लेकिन बुआ के बटुआ चुराने की घटना ने बालक

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 16।

भीम के कोमल मस्तिष्क पर गंभीर असर डाला। अब बालक भीम ने परिश्रम से अध्ययन कर अपनी उन्नति का साध्य करना ही श्रेयस्कर समझा।[1] बालक भीम अब पूर्ण मनायोग एवं सच्ची लगन से अध्ययन के क्षेत्र में संलग्न हुआ। 1907 में मैट्रिक की परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की जो पूरे अस्पृश्य महार जाति के लिए गर्व की बात थी। एलफिस्टन कालेज से ही भीमराव अम्बेडकर ने इण्टरमीडिएट एवं स्नातक की परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की। उच्च शिक्षा के लिए बड़ौदा नरेश की छात्रवृत्ति पाकर वे अमेरिका गये। अमेरिका में अध्ययन के दौरान उन्होंने अपना सम्पूर्ण ध्यान कठिन परिश्रम करके अध्ययन पर ही केन्द्रित किया। भीमराव अम्बेडकर विद्यार्थिना कुतो सुखम् के सिद्धान्त में अब विश्वास करने लगे। सिनेमा देखना, प्राकृतिक दृष्यों को देखना, खेल खेलना आदि में उनका ध्यान ही नहीं जाता था। अपना अधिकांश समय वे पुस्तकालय में व्यतीत करते थे तथा प्रतिदिन 18 घण्टे की औसत से कठित अध्ययन में निमग्न रहे। उनकी साधना साकार हुई और 1915 ई0 में कोलम्बिया विश्वविद्यालय ने उन्हें ''प्राचीन भारत का व्यापार'' विषय पर एम0ए0 की डिग्री प्रदान की। वहीं से अम्बेडकर को पी–एच0डी0 की डिग्री ''भारत के राष्ट्रीय मुनाफे का बँटवारा– एक ऐतिहासिक और विवेचनात्मक अध्ययन'' विषय पर प्राप्त हुई। शैक्षणिक क्षेत्र में अम्बेडकर की यह सफलता असाधारण थी। कोलम्बिया विश्वविद्यालय के छात्रों ने प्रीतिभोज देकर उनका हार्दिक अभिनंदन किया।

डा0 अम्बेडकर की ज्ञान पिपासा अभी शांत नहीं हुई थी। विश्वविख्यात शिक्षा केन्द्र लंदन में शिक्षा प्राप्त करने का संकल्प लिया और बड़ौदा नरेश महाराज गायकवाड़ से इसकी अनुमति भी मिल गई। लंदन में कानून का अध्ययन करने के लिए ग्रेट इन में प्रवेश लिया तथा अर्थशास्त्र का अध्ययन करने के लिए लन्दन स्कूल ऑफ पोलिटकल साइंस में प्रवेश लिया। अत्यन्त विषम परिस्थिति में अपना अध्ययन जारी रखा और अंततः वार एट ला एवं डी0एस0सी0 की उपाधि प्राप्त करने में सफल रहे। लन्दन से ही जर्मनी में शिक्षा प्राप्त करने का निश्चय किया और मई 1922 में वोन

---

[1] महाराष्ट्रीय ज्ञान कोष, विभाग–7वाँ, पृ0सं0– 647।

विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया तथा 9 माह तक शिक्षा ग्रहण की। आर्थिक कठिनाइयों के कारण 14 अप्रैल 1923 को लन्दन से वापस भारत लौट आए। डा0 अम्बेडकर ने अपनी लगन, त्याग और कठोर परिश्रम से शिक्षा के क्षेत्र में एक कीर्तिमान स्थापित किया जो सदियों से उपेक्षित, शोषित समुदाय के लिए निःसन्देह अत्यन्त गौरव की बात थी।

बाबा साहेब का अध्ययन केवल डिग्री प्राप्ति तक ही नहीं रहा अपितु सच्चे उपासक की भाँति ज्ञान की खोज आजीवन चलती रही। देर रात्रि तक नियमित अध्ययन बाबा साहेब की दिनचर्या थी। वह दिनचर्या न केवल अध्यापन एवं वकालत के पेशी के दौरान रही अपितु राजनीति में अवतरण के बाद भी यही दिनचर्या बनी रही। बाबा साहेब अध्ययनशील राजनीतिज्ञों में सबसे प्रमुख रहे हैं। वे बंबई विधान सभा के सदस्य, वाइसराय के काउन्सिल में श्रम मंत्री, स्वतन्त्र भारत के प्रथम विधि मंत्री तथा संविधान प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में कार्य करते हुए भी नियमित रूप से अध्ययन करते रहे। उनका अध्ययन कक्ष अत्यन्त व्यवस्थित रहता था। मेज पर रखे ग्रन्थ या कागज थोड़ा सा भी यदि विखरे मिलते थे, वे शोर मचाते थे– ''अरे किताबें कहाॅ हैं'' यह कड़कदार आवाज सुनते ही उनकी डा0 पत्नी और नौकर के पांव तले जमीन खिसक जाती थी।[1]

बाबा साहेब अपने अध्ययन कक्ष में अध्ययन में इतने मग्न हो जाते थे कि यदि कोई भी व्यक्ति उनसे मिलने आता था तो उसके लिए समय नहीं निकाल पाते थे। मिलने वाले व्यक्ति की ओर एक बार देखकर पुनः पढ़ने में मग्न हो जाते थे। आगंतुक थोड़ी प्रतीक्षा करने के बाद चुपके से यह सोचकर निकल जाता था कि इस तपस्वी की तपस्या में विघ्न डालना पाप है। वैसे भी बाबा साहेब को अध्ययन में विघ्न बर्दास्त नहीं था। विश्व इतिहास का महान विद्वान अलेक्जेण्डर डुमास और बाबा साहेब में यही एक समानता थी। डुमास भी आने वाले मित्र का बाये हाथ से स्वागत करता था और दायें

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 444।

हाथ से लिखना जारी रखता था। बाबा साहेब एक बार पलक उठाकर देख लेते थे और फिर पलक भी नहीं उठाते थे।

बाबा साहेब अध्ययन में इतने तल्लीन हो जाते थे कि आगंतुक के आने का समय भी ध्यान नहीं रहता था। ऐसी ही एक घटना उल्लेखनीय है। 14 मार्च 1956 को शनिवार का दिन था और बाबा साहेब अपने अध्ययन कक्ष में अपनी प्रसिद्ध पुस्तक The Buddha and his Dhamma की प्रस्तावना लिख रहे थे और सायं 10:30 बजे नानक चंद रत्तू को 'कल सुबह जल्दी आना' कह कर विदा किया। रत्तू बाबा साहेब के आदेशानुसार रविवार को सुबह जल्दी आ गए। अध्ययन कक्ष में जाकर देखा कि बाबा साहेब कल कुर्सी पर जहाँ बैठे थे, वहीं बैठे लिख रहे थे। रत्तू के आश्चर्य की सीमा नहीं रही और वे 5 मिनट तक वैसे ही खड़े उस तपस्वी को देखने लगे फिर भी उस तपस्वी का ध्यान भग्न नहीं हुआ, तो उन्होंनें अपनी ओर ध्यान खींचने के लिए एक–दो किताबें हटाई। ध्यान भग्न होने पर तपस्वी ने कहा क्या तुम अभी घर नहीं गये? रत्तू ने उत्तर दिया मैं रात्रि में घर जाकर सुबह वापस आ गया हूँ, आपकी सेवा के लिए। इस पर बाबा साहेब ने आश्चर्य में कहा अरे मुझे ऐसा लगा कि घर नहीं गये हो, यहीं मेरे पास हो। मुझे मालुम ही नहीं हुआ कि सुबह हुई है।[1] इस प्रकार के घटनाओं की पुनरावृत्ति उनके जीवन में अनेक बार हुई थी।

बाबा साहेब ने स्वास्थ्य अत्यन्त खराब होने के बावजूद भी अध्ययन जारी रखा। 5 दिसम्बर की जिस रात्रि में बाबा साहेब का देहान्त हुआ, उस रात्रि में भी रत्तू से अपने पुस्तक की टंकणित प्रतियां मंगाकर देखी थी। ऐसा महान तपस्वी जिसने माँ सरस्वती की इतनी तल्लीनता से सेवा की, निःसन्देह असाधरण मानव था। विश्वामित्र की तपस्या तो भंग भी हो गई थी, लेकिन बाबा साहेब की ज्ञान की तपस्या कभी भंग नहीं हुई। इस पृथ्वी पर बाबा साहेब से बड़ा विद्या प्रेमी, ज्ञान प्रेमी शायद ही कोई हुआ हो। अमेरिका के दूसरे राष्ट्रपति थामस जैफरसन (जिन्हनोंने अमेरिकी स्वाधीनता का घोषणा

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 465।

पत्र तैयार किया था) भी कहते थे कि मेरी पहली पसन्द ज्ञानार्जन है। बाबा साहेब ने प्रत्येक मूल्यों, सिद्धान्तों, मान्यताओं को तर्क की कसौटी पर कसा और यदि खरा उतरा तो स्वीकार किया अन्यथा उसका विरोध किया। महात्मा बुद्ध ने भी अपने अनुयायियों से यही कहा था कि कोई बात इसलिए स्वीकार मत करों कि तुम्हारा शास्त्र ऐसा कहता है, बल्कि इसलिए स्वीकार करो कि बुद्धि ऐसा करने को कहती है। बाबा साहेब ने पूर्णतया भगवान बुद्ध के इन वचनों को स्वीकार किया। बाबा साहेब हर बात में तर्क की दृष्टि अपनाते थे। अपनी बात का औचित्य सिद्ध करने के वे पूर्णतया तर्काश्रित मार्ग ही अपनाते थे।[1] मधु लिमये आगे लिखते हैं कि अम्बेडकर की यह विचित्रता थी कि वे तर्क और विवेक को बहुत दूर तक खींच ले जाते थे। तर्क और विवेक का डा0 अम्बेडकर से बड़ा पुजारी मैंने नहीं देखा।[2]

2. बाबा साहेब का असीम पुस्तक प्रेम

बाबा साहेब विश्व इतिहास के उन महापुरुषों में सम्मिलित हैं, जिन्हें पुस्तकों के बीच में न केवल अलौकिक शांति मिलती थी अपितु पुस्तकों से असीम लगाव और प्रेम था। बाल्यावस्था से ही बाबा साहेब पुस्तकों के दीवाने थे। अपने निजी खर्चे के लिए प्राप्त राशि में से पेट काट-काट कर पैसा बचाकर पुस्तकें खरीदते थे। अमेरिका में अध्ययन के दौरान बड़ौदा रियासत से मिलने वाली छात्रवृत्ति में से पैसे बचाकर, भूखे रहकर बाबा साहेब ने बड़ी संख्या में पुस्तकें खरीदी। पेट काटकर ग्रन्थ खरीदने की धुन से लगभग दो हजार पुस्तकें उनके पास हो गई थीं।[3] नवम्बर 1917 में भारत वापस लौटते समय अधिकांश, पुस्तकें जहाज के डूब जाने से समुद्र में डूब गईं थी, जिस पर बाबा साहेब फूट-फूट कर रोये थे।

गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए लंदन प्रवास के दौरान भी बाबा साहेब ने बडी संख्या में पुस्तकें खरीदी थीं। इन पुस्तकों को 32 बक्सों में भर कर

---

[1] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृ0सं0- 86।
[2] मधुलिमये, वही, पृ0सं0- 88।
[3] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0- 31।

श्रीनिवास के साथ भारत भेजे और स्वयं कुछ समय के लिए बाबा साहेब लंदन से ही अमेरिका चले गये।

बाबा साहेब के पास एक विशाल पुस्तकालय हो गया, जिसमें विश्व के अनेक दुर्लभ ग्रन्थ भी थे। बाबा साहेब पुस्तकों को इस प्रकार सजाकर रखते थे कि जैसे कोई सुन्दर स्त्री अपने शरीर को सुन्दर वस्त्रों से सजाकर रखती है या केश–विन्यास से वणी सजाती हो। बाबा साहेब अपने पुस्तकों को उसी प्रकार प्यार करते थे, जिस प्रकार कोई मां अपने शिशु को प्यार करती है। ठीक ढंग से सजाकर रखी गई पुस्तकों को छूने को किसी को भी अनुमति नहीं थी। बाबा साहेब अपने पुस्तकों से इतना परिचित थे कि उसके आकार–प्रकार से ही वे जान जाते थे कि कौन सी पुस्तक है। इससे स्पष्ट होता है कि हजारों पुस्तकें केवल पुस्तकालय की शोभा ही नहीं बढ़ाती थीं अपितु बाबा साहेब उनका गहन अध्ययन करते थे। विश्व विख्यात रोमन कूटनीतिज्ञ सिसरो कहता था कि ग्रन्थों की संगति में रहने के लिए मैं अपना सर्वस्व त्याग कर सकता हूँ। महान इतिहासकार गिब्सन कहता था कि भारत की सारी सम्पत्ति मेरे ग्रन्थ प्रेम के सम्मुख क्षुद्र है। मृत्युशैया पर पड़ा महाकवि बाल्टर स्कॉट फूट–फूट कर रोया था कि मैं अब पढ़ नहीं पाऊँगा। बाबा साहेब भी एक बार फूट–फूट कर यह सोंच कर रोये थे कि उनकी आँखों की रोशनी चली जाएगी। वे कहते थे कि अगर दृष्टि चली जायेगी तो मैं जीवन का अन्त कर दूँगा।

बाबा साहेब का पुस्तकें प्रेम उनके कथन से स्पष्ट होता है कि यदि कभी कोई उन पर आक्रमण करके उनकी पुस्तकें लूटने लगे तो वे उस आक्रमणकारी का तत्क्षण हत्या करने में जरा भी देर नहीं लगायेंगे। बाबा साहेब को पुस्तकों के बीच असीम आनन्द प्राप्त होता था। वे पुस्तकें खरीद कर खुश होते थे, पढकर और भी खुश होते थे और पुस्तकें लिख कर सबसे अधिक प्रसन्न होते थे। जब कोई पुस्तक पूर्ण होकर प्रकाशित होती थी तबवे पुत्र जन्म के आनन्द से अधिक आनन्दित होते थे।

बाबा साहेब के विशाल और दुर्लभ पुस्तकालय की जानकारी सभी सुविज्ञ देशवासियों को थी। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक पं0 मदन मोहन मालवीय को भी इसकी जानकारी थी। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के पुस्तकालय के लिए 1940 में मालवीय जी ने दो लाख रुपयों में बाबा साहेब की सभी पुस्तकों को खरीदने का प्रस्ताव रखा। बाबा साहेब ने उत्तर दिया– ''ग्रन्थ संग्रह निकल जाने का मतलब है मेरे शरीर से प्राण निकल जाना।[1] मालवीय जी के प्रस्ताव को बाबा साहेब ने निर्दयता पूर्वक ठुकरा दिया।[2] इसी प्रकार एक बार उद्योगपति विडला ने बाबा साहेब को उनकी पुस्तकों की मुहमांगी कीमत देने की पेशकश की, लेकिन इसे भी बाबा साहेब ने ठुकरा दिया। बाद में उन्होंने अपने पुस्तकालय की पुस्तकों को स्वयं द्वारा स्थापित सिद्धार्थ कालेज को दान दे दिया था। कुछ ही दिनों बाद 26, अलीरोड दिल्ली स्थित आवास में पुनः पुस्तकालय की स्थापना की गई और बडी संख्या में पुस्तकें खरीदी गईं।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब में असीम पुस्तक प्रेम था और पुस्तकों के सानिध्य में उन्हें अपार नैसर्गिक सुख और शांति की अनुभूति होती थी। पुस्तकें केवल ग्रन्थालय की शोभा ही नहीं थीं, अपितु उनका वे गहन अध्ययन करते थे, जिसका उन्हें गर्व था। एक बार बाबा साहेब ने कहा था– मेरी कम्यूनिज्म सम्बन्धी पढ़ी हुई किताबों की संख्या सभी भारतीय कम्युनिस्टों द्वारा उस सम्बन्धी पढ़ी हुई पुस्तकों से अधिक होगी।[3]

3. बाबा साहेब एक प्रखर वक्ता

बाबा साहेब न केवल एक प्रकाण्ड विद्वान थे अपितु एक प्रखर वक्ता थे। देश–विदेश में बाबा साहेब ने अपने सम्पूर्ण जीवन में अनेक बार प्रखर वाणी से तर्कऔर विवेक के आधार पर विरोधियों को निरुत्तर कर दिया था। बाबा साहेब ने अछूतों के अधिकारों के लिए 1924 में महान सत्याग्रह किया। सत्याग्रहियों के सम्बोधन में

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 450।
[2] बुद्ध शरण हंस, बाबा साहेब अम्बेडकर (जीवन कथा), पृ0सं0– 102।
[3] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 282–287।

उनका महान वक्ता का रूप सामने आया। सत्याग्रहियों को सम्बोधित करते हुए बाबा साहेब ने कहा– "मृत जानवरों का मांस न खाने का संकल्प लो। आपस में ऊँच–नीच का भाव छोड़ दो....... बासी और जूठे टुकडों के लिए मनुष्यता को बेचना बड़ी लज्जा और शर्म की बात है। पिता जी की हाँ में हाँ मिलाने के महामंत्र को छोड़ दो। यह सोचना कि सभी पुराना सोना है, नया सुधार कभी भी नहीं होगा...... स्वावलम्बन सीखो, स्वाभिमान भी स्वीकार करो, तभी हमारा उद्धार होगा।" देषवासियों को बाबा साहेब के ओजमयी एवं जादुई वाणी की पहली बार झलक मिली।

विश्व स्तर पर बाबा साहेब की महान वक्ता और बौद्धिक चिंतन की झलक गोल मेज सम्मेलन में मिली। लन्दन में सम्पन्न तीनों के व्यक्तित्व गोलमेज सम्मेलन में बाबा साहेब ने अपने उत्कृष्ट बौद्धिक चिंतन एवं जादुई वाणी द्वारा सम्पूर्ण विष्व के सम्मुख भारत के अस्पृष्य वर्ग के पहाड़ सदृष्य दुःखों को न केवल प्रकट किया अपितु उनका ध्यान आकृष्ट करने में महान सफलता प्राप्त की। बाबा साहेब की यह उपलब्धि 1893 में षिकागो (अमेरिका) में सम्पन्न विष्व धर्म संसद में स्वामी विवेकानन्द के ऐतिहासिक भाषण से कम महत्वपूर्ण नहीं थी। स्वामी विवेकानन्द ने भारतीय संस्कृति का गुणगान कर उसकी पताका विष्व में फहराई थी, तो बाबा साहेब ने अस्पृष्य वर्ग के दुःखों को प्रकट कर विष्व चर्चा का विषय बना दिया था।

महान वक्ता के रूप में बाबा साहेब का परिचय भारत सहित सम्पूर्ण विष्व को हो गया था। संविधान सभा में प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में संविधान के सभी प्रमुख अनुच्छेदों, भागों पर चर्चा–परिचर्चा के दौरान बाबा साहेब के दिए गए भाषणों से न केवल संविधान सभा मुग्ध हुई थी अपितु सम्पूर्ण विष्व में महान विधि वेत्ता के रूप में उनकी धाक बनी थी। नेहरू मंत्रिमण्डल से त्याग पत्र के बाद सरकार और कांग्रेस की कटु आलोचना के दौरान महान वक्ता का स्वरूप और मुखरित हुआ था।

इतिहासकारों ने नाजीवाद के उदय का एक प्रमुखकारण एडोल्फ हिटलर की जादुई भाषण कला को माना है। उसकी वाणी में एक प्रकार का जादू था जो

श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर देता था।[1] उसी प्रकार बाबा साहेब को जो विष्व–इतिहास में महापुरुषों की पंक्ति में अग्रिम स्थान मिला, उसका एक प्रमुख कारण उनका एक महान वक्ता होना था। भगवान बुद्ध की भाँति बाबा साहेब भी प्रतिद्वन्दी को अपने तर्कों द्वारा निरुत्तर कर देते थे। बौद्ध धर्म के उत्थान के पीछे भी इतिहासकारों ने भगवान बुद्ध के भाषण कला को भी उत्तरदायी माना है। बाबा साहेब ने भगवान बुद्ध और हिटलर के महान वक्ता के गुण को अपने सम्मुख आदर्ष के रूप में रखा था। हिटलर भी शीषे के सम्मुख भाषण देने का अभ्यास करता रहता था, उसी प्रकार बाबा साहेब भी अपने भाषण कई बार लिखकर अभ्यास करते थे। इसका प्रमाण स्वयं बाबा साहेब का वह भाषण है, जिसे उन्होंने सिद्धार्थ कालेज के विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए 14 जनवरी 1948 को कहा था।[2] ''वक्तव्य एक कला है, जिसे दीर्घ उद्योग से हासिल किया जाता है। कुछ लोगों को जन्म से ही इसमें कुषलता मिली होती है। महाराष्ट्र में गोखले उत्कृष्ट वक्ता थे, इसमें कोई शंका नहीं कर सकता..... जो दुष्मन का भी अपने प्रभावी वक्तव्य से मत परिवर्तन करता है, वही महापुरुष (महा वक्ता)होता है।

''वक्तव्य कला को हासिल करने के लिए अथक परीश्रम की आवष्यकता होती है। मैं पहले बहुत घबड़ाता था। जब मैं सिडनहम कालेज में प्रोफेसर था तब विद्यार्थियों के समक्ष भाषण करते समय मन में घबड़ाहट होती थी। मैं सोंचता था कि उच्चवर्णीय मुझे एक अछूत का वेटा समझ कर मजाक उड़ायेंगे...... मैंने बहुत परीश्रम किया। मैं अपना भाषण 12–13 बार लिखता था। इससे ज्यादा और कछ कहने जैसा नहीं है, यह समझने के बाद जब मेरे मन को विष्वास होता था, तब मैं भाषण देता था। आज जो भी मैं बोल रहा सकता हूँ, या लिख सकता हूँ, वह मेरे परिश्रम से प्राप्त किये गये ज्ञान के कारण ही है।''

---

[1] प्रो0 वी0सी0 पाण्डेय, आधुनिक योरप का इतिहास, पृ0सं0–118

[2] जनता, दिनांक 17.01.1948।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब ने कठोर परीश्रम और तपस्या से अपनी भाषण शैली विकसित की थी, जिसमें भगवान बुद्ध तथा हिटलर जैसी मंत्रमुग्ध करने वाली क्षमता थी।

4. बाबा साहेब और उत्कृष्ट वेष-भूषा

व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण में वेष–भूषा का विषिष्ट योगदान होता है। भारतीय इतिहास में बलवन महत्वपूर्ण शासक था जो वेष–भूषा का विषेष ध्यान रखता था वह दरवार में कभी भी बिना पूर्ण पोषाक तथा जूते–मोजे के उपस्थित नहीं हुआ। बाबा साहेब भी भारत के उन महापुरुषों में शामिल हैं जो अपने वेष–भूषा के प्रति विषेष सावधान रहते थे। यद्यपि बाबा साहेब अपने वाल्यावस्था में गरीबी के जन साधारण के वस्त्र ही पहने थे। स्कूल जाते समय बालक भीम की पोषाक थी– शरीर पर कुर्ता और कमर में धोती।[1] समय के साथ बाबा साहेब की पोषाक भी परिवर्तित हुई। उन्होंने उच्च षिक्षा अमेरिका, ब्रिटेन तथा जर्मनी में पाई थी, इसलिए पष्चिमी विचार धारा मूल्य और संस्कृति से प्रभावित हुए। डा0 अम्बेडकर पष्चिमी विष्व के तीन अग्रणी देषों के सर्वोत्तम विचारों के सम्पर्क में आये।[2] बाबा साहेब ने भारतीय वेष–भूषा का परित्याग कर परिष्चमी वेष–भूषा धारण की। इसके पीछे एक अति महत्वपूर्ण कारण था। वह यह था कि भारतीय धर्म और संस्कृति अस्पृष्यों पर अनेक प्रतिबन्धों के साथ–साथ वस्त्राभूषण पर भी प्रतिबन्ध लगाती है। मनु जैसे स्मृतिकारों ने यह प्रावधान किया कि शूद्रों को जूता–चप्पल नहीं पहनना चाहिए, छाता नहीं लगाना चाहिए सोना– चाँदी को स्पर्ष नहीं करना चाहिए आदि। बाबा साहेब ने समस्त असमानताओं, वर्जनाओं, प्रतिबन्धों के विरुद्ध आजीवन संघर्ष छेड़ा था, इसलिए स्वाभाविक था कि वस्त्राभूषण पर लगे प्रतिबन्धों को तोड़ने के लिए पाष्चात्य वेष–भूषा धारण की, जिसमे कोई प्रतिबन्ध नहीं था। बाबा साहेब ने अस्पृष्य वर्गका आवाहन किया कि वे स्वच्छ और सुन्दर कपड़े पहनें। सिद्धार्थ कालेज

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 17।
[2] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृ0सं0– 35

में 14 जनवरी 1948 को विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए कहा था[1]– "आपको स्वच्छ रहना चाहिए। मुझे यहाँ कुछ विद्यार्थी अच्छे नये और साफ सुथरे कपड़े पहने हुए दिखाई दे रहे हैं। किसी एक लेख में महरों के टीप--टाप कपड़े के बारे मे लिखा है...... मेरे पास कितने शर्ट, पैंट और टाई हैं, मुझे भी अंदाज नहीं है। इतना सच है कि मेरे पास दर्जनों कपड़ें हैं, मैं इतना तंग आ चुका हूँ कि अब इनको नीलाम करने की इच्छा होती है।"

बाबा साहेब अपने वेष–भूषा के प्रति अत्यन्त सजग रहते थे और अच्छे से अच्छा कपड़ा पहनते थे। उन्हें इस बात का नाज था कि भारतीय राजनीतिज्ञों में केवल जिन्ना और स्वयं वे ही सुन्दर कपड़े पहनते हैं।[2] विदेषी पोषाक अपना लेने से कुछ लोग आलोचना भी करते हैं। वे कहते हैं कि महात्मा गाँधी ने देष के गरीबों की दीन–हीन दषा पर द्रवित होकर कपड़ों का परित्याग कर अध नंगे फकीर की भाँति रहने लगे, लेकिन दलितो के मशीमा, रहनुमा, निर्धनों की खिल्ली उड़ाते हुए सूट, कोट, टाई ही हमेषा पहनते रहे। यह आलोचना भी मात्र सवर्ण मानसिकता का ही द्योतक है। त्याग तो अभावग्रस्त व्यक्ति नहीं कर सकता अपितु साधन सम्पन्न व्यक्ति का त्याग ही त्याग है। भिखारी क्या त्याग कर सकता है? महात्मा गाँधी सवर्ण जाति के थे। सवर्णों के पास सब कुछ था– अधिकार, साधन, भूमि, सम्पत्ति सभी कुछ। अस्पृष्यों के पास कुछ भी नहीं था, था तो केवल दुःख, आँसू,, प्रतिबन्ध, गरीबी जो जानवरों से भी बत्तर स्थिति में थे। इसी वर्ग के एक मात्र नेता डा0 अम्बेडकर क्या त्याग कर सकते थे? उन्होंने तो अपने अस्पृष्य समुदाय के सम्मुख एक उदाहरण पेष किया कि वे स्वच्छ और अच्छे कपड़े पहनें।

उन्हें पाष्चात्य पोषाक पहनने के कारण अनेक बार अपमानित भी होना पड़ा। एक बार बाबा साहेब बंबई हाईकोर्ट के बार चैम्बर में कुर्सी पर बैठे थे, निकट ही देषी पोषाक का अभिमान लिए पगड़ी पहने दूसरा वकील बैठा था। उसने बाबा साहेब से कुछ अपमान जनक शब्द कहे– "क्या डा0 अम्बेडकर तुम्हारे बाप दादा ऐसी ही अंग्रेजी

---

[1] जनता, दिनांक 17.01.1948,

[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 447

पोषाक पहनते थे? बाबा साहेब ने उत्तर दिया, तुम्हारे बाप–दादा प्रचीन काल में नंगे रहते थ, तुम कोर्ट में नंगे ही क्यों नहीं रहते।"

इसी प्रकार बाबा साहेब ने एक बार वार्तालाप में बताया– "एक बार मुझसे एक भारतीय वेष–भूषाधारी ने पूँछा– मैंने पोषाक के विषय में विदेषियों का आदर्ष क्यों लिया है? मैं अपने पूर्वजों की पोषाक क्यो नहीं पहनता? मैने उनसे पूँछा-- तुम्हारे किस पूर्वज का आदर्ष लूँ, तुम्हारे सबसे पुराने पूर्वज आदम और हौवा थे, जो नंगे रहते थे, क्या उनका आदर्ष ग्रहण करूँ? महाषय बिलकुल चुप हो गये।[1]

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब ने पाष्चात्य वेष–भूषा को ग्रहण किया और अपने अस्पृष्य समुदाय का आह्वान किया कि वे स्वच्छ और अच्छे पकड़े पहने, गन्दे और नंगे न रहें।

5. बाबा साहेब का खेल प्रेम

व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास के लिए बाबा साहेब खेलों के महत्व को स्वीकार करते थे। वे स्वयं क्रिकेट सहित अनेक खेलों के प्रेमी थे। बाबा साहेब को वाल्यावस्था में ही क्रिकेट का शौक लग गया था। एलफिस्टन कालेज में अध्ययन के दौरान वे क्रिकेट के खेल में विषेष रुचि लेते थे। वे अपने मित्रों के साथ क्रिकेट का मैच खेलते थे। मैच के दौरान उनके मित्रों में अक्सर मामूली विवाद और मारपीट हो जाती थी। झगड़ा शुरू होने पर दोस्त लड़ते थे और भीम की रक्षा करते थे, ऐसा चलता था।[2] इसके लिए अपने पिता जी सकपाल से उन्हें डांट भी पड़ती थी।

बड़े होने पर बाबा साहेब ने अपना सम्पूर्ण ध्यान एवं समय अध्ययन एवं अछूतोद्धार आन्दोलन में लगा दिया, जिससे खेलों के लिए वे समय नहीं दे सके। जब कभी समय मिलता तो उन्होंन अवष्य खेलों में रुचि दिखाई। एक बार उनकी पहली धर्म पत्नी रमाबाई स्वास्थ्य सुधार के लिए धाखाड़ गई थीं तो वहाँ बाबा साहेब ने अपने द्वारा

---

[1] दयाल,देवी, डा0 अम्बेडकर की दिनचर्या, पृ0सं0– 05

[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 22

स्थापित दलित छात्रावास के छात्रों के साथ क्रिकेट खेला था। बाबा साहेब ने सिद्धार्थ कालेज के छात्रों के सम्बोधन तथा अन्य कई अवसरों पर अपने भाषणों मे अपने खेल प्रेम को स्पष्ट किया था और छात्रों को खेलने का सुझाव दिया। क्रिकेट के अलावा बाबा साहेब ब्रिज के खेल में भी अभिरुचि रखते थे।

इसप्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब स्वस्थ शरीर के लिए खेलों के महत्व को स्वीकार करते थे। स्वामी विवेकानन्द, बाल गंगाधर तिलक, एडोल्फ हिटलर जैसे व्यक्ति भी स्वस्थ शरीर के लिए व्यायाम, खेल आदि आवष्यक मानते थे।

6. बाबा साहेब की कला प्रियता

बाबा साहेब महान कला प्रेगी भी थे। गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर के अनुसार– "मन के भावों को अधिकतम सौन्दर्य के साथ व्यक्त करना ही कला है।" कला के विविध रूपो में बाबा साहेब का कला प्रेम व्यक्त हुआ है। बाब साहेब चित्रकला के प्रेमी थे। लियोनार्डो द विन्सी (इटली का विष्व विख्यात चित्रकार) के बाबा साहेब विषेष प्रषंसक थे। उन्होंने अपने आवास गृह को अनेक चित्रों से सुसज्जित किया था। अनेक दुर्लभ चित्रों को संकलित कर बाबा साहेब ने अपने आवास में सजोकर रखा था।

बाबा साहेब चित्रकला प्रेमी ही नहीं थे अपितु मुगल बादषाह जहाँगीर की भाँति कुशल चित्रकार भी थें वे मनोयोग से चित्र बनाते थे और जब नौकर यह कहते थे कि चित्र हू–ब–हू बन बया है, बाबा साहेब हाँ–हाँ कहते हुए अपार खुष होते थे।[1] चित्र बनने के बाद वे सुन्दर रंगों से रंगते थे लेकिन यदि कभी समयाभाव होता था तो यह कार्य उनकी पत्नी और नानकचन्द रत्तू आदि करते थे।

बाबा साहेब कई वाद्ययंत्र भी कुषलतापूर्वक बजाते थे। गाना–संगीत उन्हें बेहद प्रिय था। कई अच्छे गाने वे स्वयं गुनगुनाते थे। महात्मा कबीर के भजन, गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर के गीतांजलि की कुछ पंक्तियां, बुद्ध वचन, बुदं शरण गच्छामि......

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 अम्बेडकर साहेब जीवन चरित, पृ0सं0– 446।

गुनगुनाते रहते थे। बाबा साहेब का संगीत प्रेमही उन्हें कतिपय अवसरों पर सिनेमा घर तक खींच ले गया था। वे अपनी पहली पत्नी रमाबाई के साथ अंकल टॉम फिल्म देखे थे। कुछ समय बाद 'अछूत कन्या' नामक फिल्म देखी थी, जिसने उनके जीवन पर गहरा प्रभाव डाला था। यह अस्पृष्यता के अभिषाप पर आधारित फिल्म थी। बाबा साहेब ने अपनी दूसरी पत्नी डा0 सविता अम्बेडकर के साथ ऑलिव्हर ट्रविरट नामक अंग्रेजी फिल्म देवी थी।[1]

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब चित्रकला, संगीत कला के अनुरागी थे। विष्व इतिहास में ऐसे अनेक महापुरुष हुए है जो कालानुरागी रहे हैं। पराक्रमांक समुद्रगुप्त (335A.D. – 375A.D.) जिसे भारत का नेपोलियन कहा जाता हैं, महान वीणा वादक था।[2] नेपालियन वोनापार्ट और एडोल्फ हिटलर तथा औरंगजेब भी कलानुरागी रहे हैं।

7. बाबा साहेब और आहार-विचार

बाबा साहेब ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उच्च नैतिक मापदण्ड स्थापित किए। वे पौष्टिक और सुपाच्य भोजन ग्रहण करते थे। सुबह के नाष्ते में उन्हें कॉफी और अंकुरित अनाज प्रिय थे। कॉफी के वे विषेष शौकीन थे। रात्रि में अध्ययन करते समय वे नियमित रूप में कॉफी लेते थे। बाबा साहेब के जीवन की जो आखिरी रात्रि 5 दिसम्बर 1956 की रही, उस रात्रि में भी उनके रसोइए सुदामा ने टेबुल पर कॉफी से भरा थरमस रखा था। बाबा साहेब को मिठाई भी बेहद पसन्द थी यद्यपि बाद में वे मधुमेह रोग से पीड़ित रहे, लेकिन मिठाई खाने का लोभ छोंड़ नहीं सके। खुषी के मौकों पर वे जी भरके मिठाई खाते थे। यद्यपि उनकी डाक्टर पत्नी इसके लिए विषेष तौर पर मना करती थीं, लेकिन इस गर्वीले और अपनी धुनके पक्के तपस्वी को कौन रोक सकता था।

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 447।

[2] समुद्र गुप्त के वीणा वादक प्रकार के उपलब्ध सिक्के।

बाबा साहेब शाकाहारी और मांसाहारी दोनो प्रकार का भोजन ग्रहण करते थे। यद्यपि बाबा साहेब ने मांसाहार के विरुद्ध व्यापाक आन्दोलन चलाया था और अस्पृष्य समुदाय का आह्वान किया था कि मृत पषुओं का मांस खाना छोंड़ दें तथापि वे स्वच्छ और ताजा मांस खाने के विरोध में नही थे। बाबा साहेब ने गोमांस खाने का प्रबल विरोध किया। बाबा साहेब ने जब उच्च षिक्षा के अध्ययन के लिए कोलंबिया विष्वविद्यालय में प्रवेष लिया तो वहाँ के छात्रावास में मिलने वाले अध पक्के और गोमांस के व्यंजनों के कारण छात्रावास छोंड़कर उस स्थान में रहने लगे जहाँ भारतीय विद्यार्थी रहते थे।[1]

बाबा साहेब ने जीवन में कभी भी मदिरा पान नहीं किया। वे मदिरा के पान के सख्त विरोधी रहे। इस दष्टि से महात्मा गाँधी से उनकी समानता थी। गाँधी जी ने मद्यनिषेध का आन्दोलन चलाया था। पाष्चात्य संस्कृति से ओत प्रोत होने के बावजूद भी बाब साहेब मद्यपान से अछूत रहे। यही नहीं बाबा साहेब ने जीवन में कभी भी सिगरेट नहीं पी।[2]

इसके अतिरिक्त बाबा साहेब में एक विषेष गुण था, वह थी पाक कला में निपुणता। बाबा साहेब स्वयं स्वादिष्ट से स्वादिष्ट भोजन तैयार कर लेते थे। एक बार वकालत के पेषे के दौरान घर के लोग बाहर गये थे और बाबा साहेब के पास कुछ मेहमान आ गये। बाबा साहेब ने उनका नाष्ता स्वयं तैयार किया और शाम को न्यायालय से लौट कर भौजन भी तैयार किया। रात्रि में भोजन करते समय जब यह बात अतिथियों के ध्यान में आई तो उनकी आखें भर गई।[3]

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब ने अपने निजी जीवन में खान पान के क्षेत्र में भी कतिपय उत्कृष्ट प्रतिमान स्थापित किए।

बाबा साहेब की निजी जीवन का ऊपरी तौर पर अध्ययन करने से कुछ विसंगतियाँ या अन्तर्विरोध दिखाई देता है। सूक्ष्म एंव गहन अध्ययन इसका समर्थन नहीं

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 28।
[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 447।
[3] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 63।

करते। बाबा साहेब के व्यक्तितत्व में कुछ अन्य अच्छाईयां भी थी यथा उन्होंने जीवन में कभी भी किसी को धोखा नही दिया, उनके आचरण और सिद्धान्त में समानता थी, वे एक अच्छे मित्र और एक अच्छे नेतृत्व गुण से युक्त थे। यद्यपि उनका व्यवहार यदा–कदा रूखा भी हो जाता था, जिससे उनके अति घनिष्ठ भी नाराज हो जाते थे, लेकिन गुस्सा शान्त होते ही बाबा साहेब अपने गलती का अनुभव कर अपने मित्रों या सम्बन्धियों को मना भी लेते थे।

इस प्रकार बाबा साहेब के व्यक्तित्व एवं निजी जीवन से स्पष्ट होता है कि एक महान व्यक्ति जीवन के अनुरूप उनका जीवन एवं आचरण था। उनका आचरण शील और विनय पर आधारित था।

अध्याय सात

अध्याय– सात

''बाबा साहेब का भारतीय राजनीति में अवतरण''

बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर का जन्म भारत के अस्पृश्य समझी जाने वाली महार जाति में हुआ था लेकिन उनका पारिवारिक वातावरण काफी जागरूक था। उनके पूर्वज ब्रिटिश सेना से जुड़े हुए थे साथ उनके पिता सुबेदार रामजी सकपाल का सम्बन्ध भारत के महान समाज सुधारक महादेव गोविन्द रानाडे से था। जस्टिस रानाडे ने ही सुबेदार रामजी के निवेदन पर वह महत्वपूर्ण आवेदन तैयार करवाया था, जिसे महारों ने ब्रिटिश सरकार को सौपा था, जिसमें ब्रिटिश सरकार द्वारा महारों की ब्रिटिश सेना में भर्ती पर प्रतिबन्ध लगाया गया था। संक्षेप में बाबा साहेब को यह राजनैतिक जागरुकता विरासत में मिली हुई थी।

बाबा साहेब ने विद्यार्थी जीवन में अपना सम्पूर्ण ध्यान गहन अध्ययन, चिंतन और मनन में लगाया। वे शिक्षा के क्षेत्र में एक अद्वितीय कीर्तिमान स्थापित कर यह उदाहरण पेश करना चाहते थे कि शिक्षा केवल द्विजो के लिए ही नहीं है अपितु अवसर और सुविधा प्राप्त होने पर एक अछूत भी ज्ञान के शिखर तक पहुंच सकता है। बाबा साहेब अपने विद्यार्थी जीवन में ही भारत सहित विश्व के समस्त राजनैतिक, सामजिक और आर्थिक परिद्रश्य का अध्ययन कर ज्ञान प्राप्त कर रहे थे बाबा साहेब के अमेरिका में अध्ययन के दौरान भारत में क्रांतिकारी आन्दोलन प्रथम चरण में था, जिसके क्रम में अमेरिका के सेनफ्रान्सिस्को शहर में नवम्बर 1913 ई0 में लाला हरदयाल ने गदर पार्टी की स्थापना की, जिसमें बाबा रामचन्द्र और बरकतुल्ला ने सहायता प्रदान की।[1] उन्हीं दिनों पंजाब केशरी लाला लाजपत राय अमेरिका गये और वे बाबा साहेब से मुलाकात

---

[1] प्रो0 बी0एल0ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास एक नवीन मूल्यांकन, पृ0सं0–432

किये। लाला लाजपत राय ने उन्हें अध्ययन के साथ–साथ राजनीति में भी सक्रिय होने की सलाह दी। बाबा साहेब ने उनके इस सलाह को स्वीकार करने में अपनी असमर्थता व्यक्त करते हुए कहा "अन्य सब बातों का विचार छोंड़ दिया जाए तो भी बड़ौदा नरेश ने मेरी बड़ी सहायता की है, उन्हें दिया हुआ वचन न तोड़ते हुए अपना अध्ययन पूरा करना मेरा पहला फर्ज है।"[1]

अमेरिका और लन्दन में अपना अध्ययन समाप्त कर बाबा साहेब 21 अगस्त 1917 को भारत वापस आ गये। उस समय भारत में संवैधानिक प्रश्नों पर विचार–विमर्श करने के लिए भारतमंत्री मांटेग्यू भारत आये थे। भारत के विभिन्न दलों के प्रतिनिधियों ने नवम्बर 1917 से दिसम्बर 1917 तक अपने–अपने शिकायतें, मांग उनके सम्मुख रखीं। डिप्रेस्ड क्लासेस मिशन ऑफ इण्डिया नामक संस्था की ओर से सर नारायण चन्दावरकर ने मांटेग्यू महोदय से मुलाकात की और अस्पृश्यों की समस्याओं से सम्बन्धित मांग--पत्र उन्हें सौंपा। बाबा साहेब इस समय मांटेग्यू महोदय से मुलाकात नहीं किये, जिसके पीछे दो प्रमुख कारण थे।

1. बड़ौदा रियासत के साथ किए गए इकरारनामें के अनुसार उन्हें तत्काल अपनी सेवा बड़ौदा रियासत को देनी थी।
2. कुछ ही दिन पहले वे भारत लौटे थे और जल्दबाजी में कोई कदम न उठाकर एक बड़े संघर्ष के लिए सामाजिक, राजनैतक परिदृश्य का अध्ययन कर रहे थे।

महात्मा गांधी भी 1915 में गोपाल कृष्ण गोखले के निमंत्रण पर भारत आये थे और तत्काल कोई बड़ा आन्दोलन अपने हाथ में नहीं लिए। ठीक इसी प्रकार बाबा साहेब ने भी अत्यन्त सुनियोजित तरीके से भारतीय राजनीति में कदम रखा। मांटेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार योजना के तहत साउथवरा कमेटी का गठन किया गया; जिसे भारत की विभिन्न जातियों के मताधिकार के सम्बन्ध में सुझाव देना था। इस कमेटी में अस्पृश्य वर्ग की ओर से कर्मचारी शिन्दे और प्रो0 अम्बेडकर को बुलाया गया। डा0 अम्बेडकर ने

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब जीवन चरित्र, पृ0सं0–32

भारत में अस्पृश्य वर्ग की दयनीय स्थिति पर विस्तार से प्रकाश डाला। इसमें बाबा साहेब ने यह सवाल भी उठाया था कि "स्वराज्य जैसा ब्राह्मणों का जन्मसिद्ध अधिकार है, वैसा ही अस्पृश्य जातियों का भी...... उच्च वर्ग के लोगों का यह प्रथम कर्तव्य है कि वे दलितों को शिक्षा देकर उनका सामाजिक स्तर ऊँचा करने और मनोबल बढ़ाने का कार्य करें।"[1]

इसी समय महाराष्ट्र में साहूजी महाराज समाज सुधार के महान काम में लगे हुए थे। साहूजी महाराज का जन्म 26 जुलाई 1874 को हुआ था। उनका जन्म कागल घाटगे उपनाम धारी जमीदारों के कुल में हुआ था। साहू जी का बचपन का नाम यशवन्त राव था, जिन्हें करबीर 'कोल्हापुर' के छत्रपति वंश ने गोद ले लिया था। इसी कोल्हापुर रियासत के शासक के रूप में 2 अप्रैल 1894 को यशवंत राव का साहू जी के रूप में राजतिलक हुआ। साहूजी महाराज एक उदारवादी महामानव थे, जिन्होंने अपने राज्य में गरीबों, पिछड़ों के दुःखों को दूर करने, उनमें जागरूकता लाने का प्रयास किया। 26 जुलाई 1902 को पिछड़ी जातियों को अपने राज्य की सेवा में 50 प्रतिशत आरक्षण दिया, स्कूल खोले तथा छात्रावास स्थापित करवाये। पुनर्विवाह का कानून पारित किया, प्राथमिक शिक्षा पर विशेष बल दिया।

बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर का 1919ई0 में दत्तोवा पवार नामक महापुरुष के माध्यम से साहूजी महाराज के साथ परिचय हुआ। साहूजी महाराज ने बाबा साहेब को न केवल लंदन में शिक्षा पूर्ण करने के लिए आर्थिक सहायता दी अपितु अछूतों में जागरुकता लाने के उद्देश्य से एक समाचार पत्र प्रकाशित करने के लिए डा0 अम्बेडकर को आर्थिक सहायता प्रदान की। डा0 अम्बेडकर ने साहूजी महाराज की सहायता से 21 जनवरी 1920 को 'मूकनायक' नामक समाचार पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया, जो पाक्षिक था। डा0 अम्बेडकर ने इस पत्र का सम्पादक पाण्डुरंग नन्दराम भटकर को नियुक्त किया।[2] तिलक के केसरी जैसे समाचार पत्र ने मूकनायक के विषय में दो

---

[1] द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 16 जनवरी 1919।

[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 40

शब्द लिखना तो दूर रहा, पैसे ले करके उनका विज्ञापन छापने से भी इनकार कर दिया।[1]

डा0 अम्बेडकर ने मूकनायक के पहले अंक में लिखा– ''हिन्दुस्तान एक ऐसा देश है जो विषमता का मायका है, हिन्दू समाज एक बहुमंजली मीनार की तरह है, जिसमें प्रवेश करने के लिए न कोई सीढ़ी है, न दरवाजा, जो जिस मंजिल में पैदा होता है, उसे उसी मंजिल में मरना होता है। ब्राह्मणों की महत्वाकांक्षा ज्ञान का संचय करने में है, प्रसार करने में नहीं। युगों–युगों से चली आ रही दासता, दरिद्रता से बहिष्कृत वर्ग की मुक्ति के लिए आकाश–पाताल एक करना होगा।[2]

साहूजी महाराज की आर्थिक सहायता से डा0 अम्बेडकर अपने लंदन की अधूरी पढ़ाई पूरी करने के लिए जुलाई 1920 में पुनः लंदन रवाना हुए, जिस समय लंदन पहुंचे उस समय भारत में बाल गंगाधर तिलक का देहांत हो गया था। यह घटना अगस्त 1920 की है। इसी के साथ कांग्रेस में गांधी युग आरम्भ हुआ। उसी दौरान लन्दन में बाबा साहेब ने भारत मंत्री मांटेग्यू से मुलाकात की और उन्हें अस्पृश्य वर्ग की दयनीय स्थिति से अवगत कराया। भारतमंत्री मांटेग्यू के साथ अपनी मुलाकात और विचार–विमर्श की सूचना बाबा साहेब ने 3 फरवरी 1921 को पत्र लिखकर साहूजी महाराज को दी। उस पत्र में उन्होंने लिखा– ''मांटेग्यू भारत के नरम दल की सूचना के अनुसार कार्य करते हैं तथा मुझे विश्वास है कि इस विचार–विमर्श के बाद वे ब्राह्मणेत्तर आन्दोलन के विषय में तिरस्कार से नहीं बोलेंगे। यहाँ ब्राह्मणेत्तर आन्दोलन जानने की कोई परवाह नकीं करता। लन्दन टाइम्स के सम्पादक के साथ मेरी दोस्ती हो गई है।[3]

बाबा साहेब सहित अस्पृश्य वर्ग पर कठोर आघात उस समय हुआ जब 6 मई 1922 ई0 को उनके उद्धारक साहूजी महाराज का देहान्त हो गया। बाबा साहेब को इस दुखद घटना की जानकारी लंदन में एक समाचार पत्र के माध्यम से हुई, जिससे

---

[1] बहिष्कृत भारत, 20 मई 1927

[2] बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16 का प्रवेश

[3] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 46–48।

उन्हें घोर आघात पहुंचा और वे दुःख में डूब गये। साहूजी महाराज उनके केवल एक सहयोगी ही नहीं अपितु मार्गदर्शक और संरक्षक भी थे। बाबा साहेब ने 10 मई 1922 को राजाराम महाराज को पत्र लिखकर अपनी शोक संवदेना इस प्रकार व्यक्त की– "महाराज के निधन की सूचना अंग्रेजी समाचार पत्रों में पढ़ी, इससे मुझे गहरा सदमा लगा, इस दुःखद घटना से मुझे दोतरफा दुःख हुआ है, उनके निधन से अपने एक खास मित्र से वंचित हुआ हूँ। अस्पृश्य वर्ग तो अपने एक बड़े हितकर्ता से वंचित हुआ है। मैं दुःख से व्याकुल होकर आपके तथा विधवा महारानी के दुःखद समय में तहे दिल से अपनी संवेदना व्यक्त करता हूँ।"[1]

बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना

लंदन में अपनी पढ़ाई पूर्ण कर बाबा साहेब 14 अप्रैल 1923 को भारत लौट आये और उच्च न्यायालय में वकालत आरम्भ किया, लेकिन अस्पृश्य वर्ग की समस्या पर गम्भीरता से विचार कर रहे थे। अछूत वर्ग की सामाजिक और राजनैतिक समस्याओं के समाधान के लिए एक बड़े संगठन की स्थापना की दिशा में विचार–विमर्श करने हेतु 9 मार्च 1924 को बम्बई के दामोदर ठाकरसी सभागार में एक विशाल सभा आहूत की गई, इसमें अस्पृश्य समाज के सभी नेताओं, कार्यकर्ताओं, समाज--सेवकों ने भाग लिया। सभा की अध्यक्षता चिंमनलाल हरीलाल शीतलवाड़ ने की। इस सभा के प्रस्ताव के अनुसार 20 जुलाई 1924 को 'बहिष्कृत कृतकारिणी सभा' की स्थापना की गई। इस सभा के कार्यकारिणी समिति के अध्यक्ष स्वयं डा0 अम्बेडकर थे। इस सभा ने अस्पृश्य वर्ग में शिक्षा के प्रचार–प्रसार तथा उनकी समस्याओं के निराकरण की दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया। बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना भारत के पददलितों के लिए आत्म–निर्भरता, स्वाभिमान और आत्मोद्धार की सीख देकर देश में महान परिवर्तन लाने वाले युग के आरम्भ था।[2]

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 48
[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0' 58

रॉयल कमीशन के सम्मुख गवाही

डा0 अम्बेडकर का भारत के राजनीति के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण कदम रॉयल कमीशन के सम्मुख गवाही था। यह कमीशन भारतीय मुद्रा के विषय में विचार–विमर्श कर रहा था, जिसके सम्मुख डा0 अम्बेडकर ने कहा कि "मुद्रा विनियम के अदल–बदल में स्वर्ण परिमाण जारी रखना भारत के हित में नही है क्योंकि स्वर्ण परिमाण को भारत में मूलतः स्थिर नहीं किया गया है। उन्होंने बेसिल ब्लैकेट द्वारा प्रस्तुत किये गये मुद्रा सुधार विधेयक का देशहित में प्रबल विरोध किया। इस सम्बन्ध में उन्होंने तत्कालीन संसद सदस्य केलकर के साथ पत्राचार किया तथा इसके विरोध में समाचार पत्रों में कई लेख लिखा।

बायकोम सत्याग्रह

उस समय अस्पृश्यों के मंदिर प्रवेश से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण सत्याग्रह कांग्रेस के नेतृत्व में चल रहा था, जिसे 'बायकोम सत्याग्रह' कहा गया। केरल के त्रावनकोर में बायकोम नामक एक गांव था, वहां पर एक मंदिर था, जिसमें प्रवेश के लिए मार्च 1924 को कांग्रेस के नेतृत्व में सत्याग्रह आरम्भ हुआ। ई0वी0 रामाश्वामी नायकर इस आन्दोलन का नेतृत्व करते हुए जेल गये।[1]अन्ततः बायकोम सत्याग्रह सफल रहा।

बाबा साहेब ने अछूत वर्ग में जागरूकता लाने के लिए जुलाई 1927 में महाराष्ट्र के कोरे गांव में एक विशाल सभा का आयोजन किया। सभा में भाषण देते हुए बाबा साहेब ने ब्रिटिश सरकार की आलोचना की। उन्होंने स्पष्ट कहा कि जिस महारजाति ने अनेक युद्धों में ब्रिटिश सरकार को सफलता दिलाई है, अब उसके प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगाकर ब्रिटिश सरकार विश्वासघात कर रही है। इस प्रतिबन्ध को समाप्त कर देना चाहिए।[2]

मुम्बई विधान परिषद में डा0 अम्बेडकर

[1] प्रो0 विपिनचन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ0सं0– 202

[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 65

इसी समय बाबा साहेब को बंबई विधान परिषद का सदस्य मनोनीत किया गया। इस खुशी के उपलक्ष्य में अस्पृश्य समाज ने फरवरी 1927 को बाबा साहेब का अभिनन्दन करने के लिए एक समारोह आयोजित किया। यह समारोह परेल के दामोदर सभागृह में आयोति हुआ, जिसकी अध्यक्षता मुम्बई नगर पालिका के शिक्षा विभाग के एक अधिकारी सीताराम भिक्खाजी के पंडूरकर ने की थी। डा0 अम्बेडकर हार्दिक अभिनन्दन कर यह विश्वास प्रकट किया गया कि विधायी कार्य में उन्हें अपार सफलता प्राप्त होगी।

नई विधान परिषद का काम–काज 12 फरवरी 1927 से शुरू हुआ। डा0 अम्बेडकर का पहला भाषण बजट प्रस्ताव पर था, जिसमें उन्होंने सरकार की नीतियों की आलोचना की। इसके अतिरिक्त डा0 अम्बेडकर ने मुम्बई विश्वविद्यालय सुधार अधिनियम पर भी अपना बौद्धिक भाषण दिया और इतनी जबरदस्त आलोचना की कि ब्रिटिश सरकार काफी असन्तुष्ट हुई। मुम्बई के गवर्नर सर लेस्ली विल्सन से उनकी झड़प भी हो गई। गवर्नर ने बाबा साहेब को राजभवन बुलाया और कहा कि उन्हें ब्रिटिश सरकार के सदस्य के रूप में मनोनीत किया गया है और इस प्रकार ब्रिटिश सरकार की आलोचना करना उचित नहीं है। डा0 अम्बेडकर ने गवर्नर को उत्तर दिया कि विधान परिषद में अपनी बुद्धि को जो भी उचित लगा, वह मैं बोल चुका हूँ। उन्होनें बड़ी निर्भीकता से यह भी कहा कि ब्रिटिश राज शासन में अस्पृश्य वर्ग का तनिक भी कल्याण नहीं हुआ है।[1]

विधान परिषद में कार्य करते हुए डा0 अम्बेडकर ने अस्पृश्य वर्ग के लिए अविस्मरणीय कार्य किया। उन्होंने महार वतन विधेयक 19 मार्च 1928 को पेश किया, इसमें 1874 के महार वतन सुधार कानून में संशोधन का प्रावधान किया गया था। महार वतन कानून में यह प्रावधान था कि महारों द्वारा गावों के मुखियाओं के घर में पारंपरिक रूप से सेवा कार्य किया जायेगा।[2] इस कानून की वजह से महारों की स्थिति बड़ी दयनीय हो गई थी। इस सुधार कानून को पेश करने के पूर्व डा0 अम्बेडकर ने कई

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 108

[2] सुमित सरकार, आधुनिक भारत, पृ0सं0– 263

स्थानों पर अस्पृश्य वर्ग की सभा आयोजित कर विधेयक के पक्ष में वातावरण निर्माण करने का प्रयास किया था।

विधेयक को प्रस्तुत करते समय डा0 अम्बेडकर ने इस प्रकार अपना मत रखा– "आज महारों से अधूरे वेतन पर दिन–रात गुलामों की तरह काम लिया जा रहा है........ महारों की जनसंख्या में बृद्धि हुई है फिर भी उन्हें वाले भूमि के क्षेत्रफल में काई वृद्धि नहीं हुई है। वतन के रूप मे मिली भूमि के पीढ़ी दर पीढ़ी होने वाले बटवारे से टुकड़े होते गये हैं अब उनकी जीविका की समस्या है। गांव द्वारा मिलने वाले जूठे भोजन पर ही वे जिन्दा हैं। यह वतन पद्धति अत्यन्त आमुनाषिक है। अतः इसे समाप्त किया जाये। सरकार उनके जीविका की पूरी व्यवस्था करे। बाबा साहेब ने आवेश में यह भी कहा कि इस विधेयक को मंजूर करा लेने का महारों ने निश्चय किया है अगर यह विधेयक विधान परिषद ने न मंजूर किया तो महार आम–हड़ताल करेंगे, और मुझे भी विधान परिषद से त्याग–पत्र देना होगा।[1]

संक्षेप में बम्बई विधान परिषद के सदस्य के रूप में बाबा साहेब ने अविस्मरणीय कार्य करके देश में एक चर्चित व्यक्ति के रूप में एक ख्याति बना ली थी।

महाड़ सत्याग्रह

बाबा साहेब ने अस्पृश्य वर्ग के अधिकारों और समस्याओं को लेकर विधान परिषद के बाहर भी जुझारू संघर्ष किया, जिसमें उनका महाड़ सत्याग्रह उल्लेखनीय है। महाड़ महाराष्ट्र के कोलावा जिले में एक नगर पालिका है, जहां पर चोबदार नामक एक विशाल सार्वजनिक तालाब था, लेकिन इसका पानी पीने का अधिकार केवल स्पृश्य वर्ग को ही था। अस्पृश्य वर्ग इसक पानी का उपयोग नहीं कर सकता था। ब्रिटिश सरकार ने 1927 में आदेश जारी कर इस सार्वजनिक तालाब के उपयोग का अधिकार समस्त जनता को प्रदान कर दिया लेकिन सवर्ण हिन्दुओं ने इसका प्रबल विरोध किया और

---

[1] बम्बई, लिजिटलेटिव काउन्सिल डिवेट्स वैल्यूम – 23, भाग–11, पृ0सं0– 708–721

अछूतों को इस अधिकार का उपभोग नहीं करने दिया। महाड़ के अछूतों ने डा0 अम्बेडकर को अपनी वेदन बताई जिसे दूर करेन के लिए डा0 अम्बेडकर ने महाड़ सत्याग्रह आरम्भ किया। 19–20 मार्च 1927 को महाड़ में एक विशाल सभा बुलाई गई, जिसमें सुदूरवर्ती गांवों से अत्यन्त कष्ट सहते हुए हजारों नर–नारियों ने भाग लिया। बाबा साहेब ने अपने उत्तेजक भाषण में अस्पृश्य वर्ग को शिक्षित बनने, गन्दे कार्यों को छोंड़ने और साफ–सुथरा रहने, मरे जानवरों का मांस न खाने का आह्वान किया। महाड़ के सनातनी हिन्दुओं ने विरोध किया, कुछ हिसंक संघर्ष भी हुआ लेकिन अंततः बाबा साहेब ने अपने हजारों अनुयायियों के साथ चोबदार तालाब के पानी को पिया। इसका उद्देश्य केवल यह था कि सार्वजनिक वस्तुओं का उपभोग करने का अस्पृश्यों को भी मानवीय अधिकार है। यहीं पर असमता, असमानता पूर्ण वर्ण–व्यवस्था की पोषक 'मनु स्मृति' को 25 दिसम्बर 1927 को 9:30 रात्रि मे पहली बार जलाया गया। मनु स्मृति को जलाना वर्ण व्यवस्था के खिलाफ एक प्रतीकात्मक विरोध था, इसकी तुलना मार्टिन लूथर के द्वारा 14 अक्टूबर 1520 को पोप के क्षमा पत्रों तथा उसके धर्म से निष्कासन सम्बन्धी आदेश को जलाने की घटना से की जा सकती है।

बाबा साहेब का यह विरोध मार्टिन लूथर के विद्रोह से कम महत्वपूर्ण नहीं था। वर्ण–व्यवस्था को इतनी जबरदस्त चुनौती भगवान बुद्ध के बाद पहली बार डा0 अम्बेडकर ने दी थी।

कालाराम मन्दिर सत्याग्रह

अस्पृश्य वर्ग के मंदिर प्रवेश जैस अधिकार को लेकर बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने यह सत्याग्रह किया था, जो लम्बे समय तक चला और अन्ततः 1935 में यह सत्याग्रह समाप्त हुआ।

साइमन कमीशन के सम्मुख प्रतिवेदन

बाबा साहेब ने भारतीय संवैधानिक प्रश्न पर विचार करने के लिए भारत आये इस कमीशन के सम्मुख अस्पृश्य वर्ग की समस्याओं से सम्बन्धित एक विस्तृत ज्ञापन सौंपा और इस कमीशन के एक सम्मानित सदस्य मेजर एटली जो बाद में ब्रिटिन के प्रधानमंत्री बने, से अस्पृश्य वर्ग की समस्याओं पर लम्वी चर्चा की।

गोलमेज सम्मेलन

भारतीय संवैधानिक समस्या के समाधान के लिए लंदन में सम्पन्न तीनों गोलमेज सम्मेलनों में बाबा साहेब ने भाग लेकर अपने विद्वतापूर्ण, ओजस्वी भाषण द्वारा हजारों वर्षों से दुःखों, यातनाओं को झेल रहे अस्पृश्य वर्ग की दारुण दशा विश्व के सम्मुख प्रकट की।

स्वतन्त्र मजदूर दल की स्थापना

बाबा साहेब ने 1935ई0 के अधिनियम के तहत 1937ई0 में हो रहे चुनाव में भाग लेने के लिए 1936ई0 में स्वतन्त्र मजदूर दल की स्थापना की। स्वतन्त्र मजदूर दल घोषणा पत्र के अनुसार कार्य करते हुए महान श्रमिक नेता की भूमिका अदा की।

इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब ने भारतीय राजनीति में किन परिस्थितियों में प्रवेश किया और आरम्भिक रूप में किस–किस प्रकार कार्य किया, जिनके द्वारा अस्पृश्य वर्ग मे ही नहीं पूरे देश में उनकी एक महान नेता के रूप में छवि बनी।

अध्याय आठ

अध्याय– आठ

''बाबा साहेब का भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से सम्बन्ध''

बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 ई0 को ऐसे समय हुआ भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (दिसम्बर 1885 में बंबई मे ए0ओ0 ह्यूम द्वारा स्थापित) के नेतृत्व में राष्ट्रवाद का उत्तरोत्तर विकास हो रहा था। इसी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सदैव दावा किया कि वह सम्पूर्ण राष्ट्र तथा सभी वर्गों का प्रितिनिधित्व करती ही नहीं अपितु भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का एकमात्र नेतृत्व उसने ही किया। भारतीय जनमानस में एक स्वाभाविक प्रश्न होता है कि बाबा साहेब का भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से किस प्रकार का सम्बन्ध था? कांग्रेस तथा उसकी नीतियों, कार्यक्रमों, उद्देश्यों से बाबा साहेब कितना सहमत थे? कांग्रेस की अहूतोद्धार की नीतियों तथा अस्पृश्यता उन्मूलन कार्यक्र के प्रति बाबा साहेब का दृष्टिकोंण क्या था? कांग्रेस क्या सम्पूर्ण भारत और सभी वर्गों विशेषकर अस्पृश्य, दलित वर्ग का भी प्रतिनिधित्व करती है? भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में कांग्रेस की भूमिका के सम्बन्ध में बाबा साहेब का क्या विचार था? बाबा साहेब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा स्थापित स्वतन्त्र के प्रथम मंत्रिमण्डल में क्यो शामिल हुए? बाबा साहेब ने मंत्रिगण्डल से त्यागपत्र क्यो दिय? कांग्रेस सरकार की नीतियों से बाबा साहेब कितना असहमत थे? आदि प्रश्न भारतीय जनमानस में गहरे अन्तर्द्वन्द के साथ उभरते हैं।

भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस का संक्षिप्त इतिहास

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध से भारत में राष्ट्रवाद का उद्‌भव हुआ और देश के अनेक भागों में छोटे–छोटे संगठन स्थापित होने आरम्भ हुए। ऐसी पहली संस्था लैण्ड

होल्डर सोसाइटी थी जो जुलाई 1938 में बंगाल के जमीदारों द्वारा स्थापित की गई थी।[1] 1343 ई0 में बंगाल ब्रिटिश इण्डियन सोसाइटी की स्थापना हुई। इन दोनो संस्थाओं ने मिल कर 28 अक्टूबर 1851 को ब्रिटिश इण्डियन एसोसियेशन की स्थापना की। 26 अगस्त 1852 को बंबई में एसोसियेशन की स्थापना हुई। इसी क्रम में दादा भाई नौरोजी (1825–1917) ने 1866 ई0 में लंदन में ईस्ट इण्डियन एसोसियेशन की स्थापना की। 1870 में महादेव गोविन्द रानाडे ने पूना सार्वजनिक सभा की स्थापना की। इन सभी संस्थाओं मे 1876 में सुरेन्द्रनाथ बनर्जी तथा आनन्द मोहन बोस द्वारा स्थापित इण्डियन एसोसियेशन सबसे महत्वपूर्ण थी। इन सभी संस्थाओं ने एक राष्ट्रीय संगठन की आवश्कता को स्पष्ट किया। इस दिशा में पहला प्रयास इण्डियन एसोसियेशन ने ही किया। इस संगठन ने 1883 ई0 में कलकत्ता में अखिल भारतीय नेशनल कांग्रेस आयोजित किया जिसमें देश के विभिन्न भागों में कार्यरत संगठनों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। लेकिन राष्ट्रीय संगठन की दिशा में आम सहमति नहीं बन सकी। यह निर्णय लिया गया कि दो वर्ष बाद 1885 ई0 में बंबई में दूसरा अखिल भारतीय नेशनल कांग्रेस होगी और तब तक सारे नेता पारस्परिक विचार विमर्श के द्वारा एक आम सहमति बनाने का प्रयास करेंगे। मगर इस विचार को मूर्त और अंतिम रूप देने का श्रेय एक ब्रिटिश अवकाश प्राप्त आई0सी0एस0 अधिकारी ए0ओ0ह्यूम को मिला जिसने दिसम्बर 1885 में बंबई में कुछ प्रबुद्ध भारतीयों को साथ लेकर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना कर दी। डब्ल्यू0सी0 बनर्जी की अध्यक्षता में 28 दिसम्बर 1885 को बंबई के गोकुलदास तेजपाल संस्कृत कालेज में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन आरम्भ हुआ जिसमें 100 व्यक्ति सम्मिलित हुए जिसमें गैर सरकारी 72 सदस्य थे।[2]

एक महत्वपूर्ण प्रश्न है कि लार्ड रिपन तथा लार्ड डफरिंग के गैर सरकारी राजनैतिक सलाहकार ह्यूम साहेब को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना की क्या आवश्यकता थी? इस प्रश्न का उत्तर उनके जीवनी लेखक वेडरर्वन ने दिया है–

---

[1] प्रो0 बी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 408।

[2] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृष्ठ सं0– 127

वाइसराय लार्ड लिटन के शासन के अंतिम वर्ष ह्यूम महोदय को पक्का विश्वास हो गया कि बढ़ती अशांति का मुकाबला करने के लिए सुनियोजित कार्यवाही आवश्यक हो गई है....... भारत के भावी कल्याण के लिए खतरा पैदा हो गया है।[1]

इससे लगता है कि ह्यूम महोदय ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा के लिए सुरक्षा कवच तैयार कर रहे थे। लाला लाजपत राय के अनुसार यह संस्था इसलिए बनी थी कि वह अंग्रेजी साम्राज्य की रक्षा हेतु अभयकपाट (Safety value) के रूप में कार्य कर सके।[2]

कांग्रेस का दूसरा अधिवेशन 1886 में दादा भाई नौरोजी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ, तथा तीसरा अधिवेशन 1887 में मद्रास में वदरुद्दीन तैयवजी की अध्यक्षता में हुआ। आरम्भ में ब्रिटिश सरकार का दृष्टिकोंण कांग्रेस के प्रति अच्छा रहा। कलकत्ता में 1886 में सम्पन्न हुए दूसरे अधिवेशन में सम्मिलित हुए प्रतिनिधियों को वाइसराय ने उद्यान भोज दिया था। इसी प्रकार तीसरे अधिवेशन में भी मद्रास के गवर्नर ने उद्यान भोज दिया, लेकिन इसके बाद ब्रिटिश सरकार का दृष्टिकोंण बदलता गया और लार्ड कर्जन (1889–1905) के आते–आते सम्बन्ध अत्यन्त कटु हो गए। लार्ड कर्जन ने 1899 में महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया– ''कांग्रेस अपने पतन की ओर लड़खड़ाती जा रही है.... वह उसकी (कांग्रेस की) शांतिपूर्ण मृत्यु में सहयोग कर सके।''

कांग्रेस के इतिहास को संक्षेप में 3 भागों में विभक्त किया जा सकता है–

1. नरम दल का काल– 1885–1905– प्रथम चरण
2. गरम दल का काल– 1905–1916 द्वितीय चरण
3. महात्मा गाँधी का काल– 1917–1947 तक तृतीयचरण

कांग्रेस का प्रथम जो नरमपंथ का काल था, राष्ट्रवाद के उदय का काल था। इस काल के सभी प्रमुख नेताओं– सुरेन्द्र नाथ बनर्जी, दादा भाई नौरोजी, आनन्द

---

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, भारत का स्वन्त्रता आन्दोलन, पृष्ठ स0– 35
[2] प्रो0 वी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 412

मोहन बोस, शिशिर कुमार घोष, गोपाल कृष्ण गोखले, तैयव जी, तेलांग आदि में राजभक्ति और राष्ट्र भक्ति साथ–साथ थी। अनुनय, विनय, निवेदन करके संवैधानिक सुधारों की उन्होंने मांग की।

कांग्रेस का दूसरा चरण गरमपंथ काल था जिसके प्रमुख नेता बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय, विपिन चन्द्र पाल तथा अरविन्द घोष आदि थे, जिनमें नरम दल की नीतियो, कार्यक्रमों, उद्देश्यों में आस्था नहीं थी।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के इतिहास में ही नहीं अपितु भारत के इतिहास में 1916 एक महत्वपूर्ण वर्ष था क्योंकि दो महत्वपूर्ण घटनायें घटित हुई–

1. 1916 के लखनऊ अधिवेशन में बाल गंगाधर तिलक के प्रयासों से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग में समझौता हुआ।

2. कांग्रेस के दोनो गुट नरम तथा गरम दल 1907 में सूरत अधिवेशन में पड़ी फूट के बाद एनीवेसेन्ट के सहयोग से लखनऊ समझौते मे एकता के सूत्र में बंधे हैं। बाद में बाबा साहेब ने लखनऊ समझौते की कटु आलोचना की और उनके तर्कों के आधार पर बताया कि इसमें गम्भीर त्रुटियां है और इसे रद्द करना चाहिए।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस अपने प्रथम और द्वितीय चरण में सामाजिक सुधार के मुद्दों पर मौन रही लेकिन तीसरे चरण या गाँधी के कांग्रेस में प्रवेश करते ही (महात्मा गाँधी 1915 में गोपाल कृष्ण गोखले के निमंत्रण पर भारत आए और 1916 में कांग्रेस लखनऊ अधिवेशन में भाग लिए, जहाँ बिहार के लोकप्रिय नेता राजकुमार शुक्ला ने उनसे मुलाकात कर चम्पारन आने का निवेदन किया जिसे स्वीकार कर महात्मा गाँधी 1917 में अपने कुछ सहयोगियों के साथ चम्पारन गए, जहाँ उनका भारत में पहला सत्याग्रह चम्पारन सत्याग्रह शुरू हुआ और इसी के साथ महात्मा गाँधी कांग्रेस पर पूरी तरह छा गये) उसका काया पलट हो गया। महात्मा गाँधी से पहले कांग्रेस की गतिविधियाँ केवल विभिन्न स्थानों पर वार्षिक बैठकें कर लेने और भारत में ब्रिटिश प्रशासन सम्बन्धी प्रस्ताव पास करने तक ही सीमित थी, तथापि 1905 में वंग–भंग जैसा

बड़ा आन्दोलन कांग्रेस ने किया था, लेकिन वह भारत की सामान्य जनता को उसमें जोड़ नहीं सकी। महात्मा गाँधी द्वारा कांग्रेस की वागडोर 1919 में संभालने के बाद वह एक जीवित दल बन गई। बाबा साहेब का मत है कि जिन कार्यों से कांग्रेस को जन समर्थन मिला और उसने एक के बाद एक हथियार प्रयोग किये वे इस प्रकार थे[1]–

1. असहयोग आन्दोलन, 2. बहिष्कार, 3. संविधान अवज्ञा 4. अनशन।

असहयोग का उद्देश्य था सरकारी स्कूलों, कालेजों, न्यायालयों में सरकारी नौकरियों से त्याग पत्र देकर सरकार को पंगु बना देना।

बहिष्कार कांग्रेस का दूसरा हथियार था जिसका उद्देश्य था– कांग्रेस के आदेशों के अनुसार ही लोगों को सरकार को सहयोग देने से रोकना।

सविनय अवज्ञा तीसरा हथियार था जिसका सीधा हमला ब्रिटिश सरकार पर था। न्यायिक हिरासत में जेल भरो और सरकार को नीचा दिखाने के लिए जान बूझकर कानून का उल्लंघन करना कांग्रेस का हथियार था।

चौथा हथियार अनशन था लेकिन यह व्यक्तिगत क्षेत्र तक ही सीमित था। बाबा साहेब मानते थे कि यह वह अमोघ अस्त्र है जिसे श्री गाँधी ने अपने लिए सुरक्षित कर रखा है।[2][1]

ये वे चार हथियार हैं जिन्हे कांग्रेस ने भारत की स्वतन्त्रता की मांग करने में इस्तेमाल किया। 1920–1942 के मध्य देश ने देखा कि कांग्रेस ने उन्हीं हथियारों में से किसी न किसी एक का सहारा लेकर देश में प्रदर्शन, आन्दोलन किए हैं।

काग्रेस के इतिहास में 1917 के कलकत्ता के वार्षिक अधिवेशन में एक अनोखी घटना घटी जिसमें कांग्रेस ने यह महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किया– कांग्रेस का

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बडकर, सम्पूर्ण वांडगय, खण्ड– 16, पृष्ठ सं0– 179
[2] बाबा साहेब, डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड– 16, पृष्ठ सं0– 180

भारत की जनता से अनुरोध है कि भारत के दलित वर्गो परजो रूढ़िगत अयोग्यतायें लगाई गई हैं, उन्हें हटाने की आवश्यकता है, जिस कारण इन्हें बहुत अधिक कठिनाइयां एवं असुविधाएं सहनी पड़ती हैं।[1]

इस अधिवेशन की अध्यक्षता मिसेज एनी वेसेन्ट ने की थी। थूला भाई देसाई, रामा आयर तथा आसफ अली ने इस प्रस्ताव का समर्थन किया था। यह एक अनोखी घटना थी क्योंकि इसके पूर्व कांग्रेस ने सामाजिक सुधार के प्रश्न पर कभी विचार नहीं किया था। यह महत्वपूर्ण प्रश्न है कि ऐसा महत्वपूर्ण परिवर्तन कांग्रेस में 1917 में क्यों आया? अस्पृश्यों के लिए कांग्रेस में यह उदार भावना कैसे आई? इसका वास्तविक कारण था दलित वर्ग का नवम्बर 1917 में हुआ सम्मेलन, जिसमें दलित हितों के लिए लम्बी–चौड़ी मांग रखी गई थी। इससे लगा कि दलित वर्ग में जागृति आ रही है। अब कांग्रेस दलित वर्ग का समर्थन लखनऊ समझौते पर प्राप्त करने के लिए इस प्रकार की नीति अपनाई थी।

गाँधी जी के कांग्रेस पार्टी का सर्वे सर्वा बनने से इस नीति में विस्तार हुआ क्योंकि वे कांग्रेस के साथ सभी वर्गों, समुदायां को जोड़ना चाहते थे। यह कांग्रेस के इस दावे कि वह सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व करती है, के लिए आवश्यक एवं अनिवार्य था।

गाँधी जी ने हिन्दुस्तान में व्यापक स्तर पर जो पहला आन्दोलन शुरू किया था वह असहयोग आन्दोलन था। असहयोग आन्दोलन महात्मा गाँधी ने खिलाफत आन्दोलन के प्रश्न पर किया था। वास्तव में प्रथम विश्व युद्ध में तुर्की पराजित राष्ट्रों की सूची में शामिल था। प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति के पश्चात् पेरिस शांति सम्मेलन में जर्मनी के साथ की गई अन्यायपूर्ण वर्साय की सन्धि को देखकर भारतीय मुसलमानों में भी यह शंका हुई कि ऐसी ही अन्यायपूर्ण सन्धि तुर्की के खलीफा के साथ की जा सकती है। इसलिए ब्रिटिश सरकार पर दबाव बनाने के लिए (क्योंकि ब्रिटेन का प्रधानमंत्री जार्ज लायड पेरिस शांति सम्मेलन के 4 महा चुनावों में प्रमुख था) खिलाफत कमेटी बनाई

[1] बाबा साहेब, डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड– 16, पृष्ठ सं0– 1

गई। खिलाफत कमेटी की स्थापना दिल्ली में नवम्बर 1918 में हुई।[1] मुहम्मद अली, शौकत अली, डा0 अंसारी हकीम अजमल खाँ, अबुल कलाम आजाद आदि इस आन्दोलन के प्रमुख नेता थे। खिलाफत आन्दोलन 27 अक्टूबर 1919 को आरम्भ हुआ, जब सम्पूर्ण भारत में यह दिन खिलाफत दिवस के रूप में मनाया गया।[2] 09 जून 1920 को खिलाफत कमेटी का इलाहाबाद की बैठक में गाँधी जी को इस आन्दोलन की अगंवाई करने का अधिकार सौंपा।[3] सितम्बर 1920 के कलकत्ता में कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में खिलाफ के प्रश्न पर असहयोग आन्दोलन आरम्भ करने का प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया गया और दिसम्बर 1920 में नागपुर में सम्पन्न हुए कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशन में इसे मंजूरी दे दी गई। यह प्रस्ताव सी0आर0दास ने पेश किया और लाला लाजपत राय ने उसका समर्थन किया।[4]

असहयोग आन्दोलन 31 अगस्त 1920 से आरम्भ हुआ। बाबा साहेब का मत है कि खिलाफत आन्दोलन का समर्थन करने के कारण कांग्रेस बहुत शक्तिशाली हो गई। यह स्थिति वास्तव में हिन्दुओं के कारण नहीं अपितु मुसलमानों के कारण हुई।[5] इस आन्दोलन में अभूतपूर्व हिन्दू मुस्लिम एकता स्थापित हुई। बाबा साहेब ने कहा– चाहे वह अस्थाई ही क्यों न हो, इस महत्वपूर्ण एकता का श्रेय वास्तव में गाँधी को मिलना ही चाहिए।[6] गाँधी जी इस एकता को किसी भी कीमत पर बनाये रखने को तैयार थे। आन्दोलन के दौरान मालवार के मोपलाओं ने हिन्दुओं पर जो अत्याचार किये, उसकी महात्मा गाँधी और कांग्रेस पार्टी ने स्पष्ट निंदा नहीं की।

यह तथाकथित हिन्दू–मुस्लिम एकता बहुत दिनों तक कायम नहीं रही और जैसे ही चौरी–चौरा काण्ड के कारण (5 फरवरी 1922) बारदोली प्रस्ताव के द्वारा असहयोग आन्दोलन को महात्मा गाँधी वापस करने का निर्णय लिया, यह एकता समाप्त

---

[1] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृष्ठ सं0– 414
[2] डा0 बी0आर0 अम्बेडकर, थॉट ऑफ पाकिस्थान, पृष्ठ सं0– 150
[3] प्रो0 विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता आन्दोलन, पृष्ठ सं0– 155
[4] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड–16, पृष्ठ सं0– 251–252।
[5] वही, पृष्ठ सं0– 154।
[6] डा0 बीर0आर0 अम्बेडकर, थॉट ऑफ पाकिस्तान, पृष्ठ सं0– 153।

हो गई और देश में भीषण साम्प्रदायिक दंगों का दौर आरम्भ हो गया। बाबा साहेब ने अपनी पुस्तक थॉट ऑफ पाकिस्तान में इन दंगों की लम्बी सूची दी है। गाँधी जी को असहयोग आन्दोलन समाप्त होते ही 19 मार्च 1922 को गिरफ्तार कर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया और 06 वर्ष की सजा हुई। स्वास्थ्य खराब होने के कारण सरकार ने 1924 में ही उन्हें रिहा कर दिया। रिहा होते ही गाँधी जी ने इन आमनुषिक सम्प्रदायिक दंगों के खिलाफ प्रयश्चित रूप में अनशन करने का निर्णय लिया जो उनका अमोध अस्त्र था। उन्होंने मौलाना आजाद के दिल्ली स्थित आवास पर मई 1924 में 21 दिन का आमरण अनशन किय इस अनशन के फलस्वरूप कई एकता सम्मेलन हुए लेकिन इन सम्मेलनों में पारित प्रस्तावों के अलावा और कुछ नहीं हुआ तथा ये प्रस्ताव भी घोषणा के बाद भंग हो गये।[1] गाँधी जी का प्रयास निष्फल रहा और बाबा साहेब ने अपनी थॉट ऑफ पाकिस्तान नामक पुस्तक में विस्तार में देश के विभिन्न भागों में छोटी–छोटी बातों को लेकर हो रहे भीषण साम्प्रदायिक दंगो का विस्तार से उल्लेख किया है।

1924 से 1930 के मध्य कांग्रेस ने कोई बड़ा आन्दोलन नहीं छेड़ा। उस अवधि में गाँधी जी और उनकी कांग्रेस ने अस्पृश्यता निवारण के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाया और न ही कोई ऐसा कार्य किया जिससे अस्पृश्यों का उपकार हो।[2]

कांग्रेस ने समाज सुधार की दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास 11 फरवरी 1922 के वारदोली प्रस्ताव द्वारा किया। कार्यक्रम का ब्योरा इस प्रकार था[3]–

1. चरखे को लोक प्रिय बनायें तथा खादी जनसाधारण में प्रचार कर उसे बढ़ावा दिया जाये।
2. राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना की जाये।

---

[1] डा० बी०आर०अम्बेडकर, थॉट ऑफ पाकिस्तान, पृष्ठ सं०– 167।
[2] बाबा साहेब डा० अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड– 16, पृष्ठ सं०– 253।
[3] कांग्रेस के कम से कम 1 करोड़ सदस्य बनाये जायें।

3. दलित वर्गों को बेहतर जीवन यापन करने के लिए संगठित करना, उनकी सामाजिक, मानसिक एवं नैतिक उन्नति करना, उन्हें अपने बच्चों को राष्ट्रीय स्कूल में भेजने के लिए प्रेरित करना और उन्हें वे सभी सुविधायें उपलब्ध कराई जायें जो अन्य नागरिकों को उपलब्ध हैं।

4. सभी वर्गों और जातियों के बीच एकता और आपसी सद्भाव लाने पर जोर दिया जाये जिसका उद्देश्य असहयोग आन्दोलन को बल देना है। इस प्रकार की समाज सेवा बीमार और दुर्घटना की स्थिति में बिना किसी भेद–भाव के सबको सहायता दे आदि।

20 फरवरी 1922 को दिल्ली में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने वारदोली प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया तथा दलित वर्गों की समस्याओं पर विचारकरने के लिए एक उप समिति का गठन किया। इसमें स्वामी श्रद्धानंद, श्रीमती सरोजनी नाइडू, आई0के0 याज्ञिक, जी0वी0देश पाण्डेय सम्मिलित थे।

कांग्रेस कार्य समिति की मई 1923 में बंबई में हुई बैठक में यह प्रस्ताव पारित किया गया[1]– प्रस्ताव पारित किया जाता है कि जबकि कांग्रेस की नीतियों के अनुसरण में अस्पृश्यों की दशा में कुछ सुधार हुआ है फिर भी यह समिति इस बात के प्रति सचेत है कि इस दिशा में अभी बहुत कुछ करना बाकी है और जहाँ तक अस्पृश्यता के प्रश्न का संबंध है, यह समिति हिन्दू सभा विशेषकर अखिल भारतीय हिन्दू महासभा से अनुरोध करती है कि वह इस समस्या को अपने हाथ में लेकर हिन्दू समाज से इस कलंक को मिटाने के लिए जी–तोड़ प्रयत्न करे।[2] बाबा साहेब का मत है कि इस प्रस्ताव से स्पष्ट है कि कांग्रेस ने इस समस्या से अपना हाथ खींच लिया। अस्पृश्यों की समस्या का समाधान करने में सबसे अयोग्य अगर कोई संस्था है तो वह हिन्दू महा सभा ही है।[3]

---

[1] बाबा साहेब ड0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड– 16, पृष्ठ सं0– 22।
[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृष्ठ सं0– 25
[3] वही, पृ0सं0– 25

वास्तव में वारदोली प्रस्ताव में अस्पृश्यता निवारण की कोई योजना नहीं थी। वह कार्यक्रम उन्नति सुधार का कार्यक्रम था, जो ब्रिटिश प्रधानमंत्री जिङरैली के शब्दों में प्राचीन संस्थाओं एवं आधुनिक प्रगति के सम्मिश्रण जैसा कार्यक्रम था।[1] कार्यक्रम में अस्पृश्यता की समस्या को मान्यता दी गई और योजना बनाई गई कि अस्पृश्यों के लिए पृथक कुंए और स्कूलों का प्रबन्ध किया जाए। कांग्रेस कार्य समिति ने इस प्रकार टिप्पणी की– ''बहरहाल जहाँ अस्पृश्यों के प्रति भेदभाव बरता जाता है वहाँ कांग्रेस कोष से उनके लिए पृथक स्कूल तथा पृथक कुओं की व्यवस्था अवश्य की जाये। साथ–साथ उनके बच्चों को स्कूलों में पढ़ने के लिए भेजने के भरसक प्रयत्न किये जायें तथा लोगों को समझाया जाये कि अस्पृश्यों को सार्वजनिक कुओं से पानी भरने दें।'' बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने कहा कि इस टिप्पणी से स्पष्ट है कि कांग्रेस अस्पृश्यता को समाप्त नहीं करना चाहती थी।[2]

कांग्रेस ने 1921 में तिलक स्वराज फंड स्थापित किया, जिसमें जनता ने 1 करोड़ तीस लाख रुपये की राशि चंदा में दी। तिलक स्वराज फंड का लेखा–जोखा निम्न तालिका से स्पष्ट होता है[3]–

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृष्ठ सं0– 26
[2] वही, पृष्ठ सं0– 256
[3] इण्डियन एनेअल रजिस्टर, 1923, पृठ सं0– 112

तिलक स्वराज फण्ड

कलेक्शन का विवरण	1921			1922			1923			कुल धनराशि		
	रु0	आना	पाई	रु0	आना	पाई	रु0	आना	पाई	रु0	आना	पाई
जनरल कलेक्शन अनुबन्ध–1	64311779	13	16	39243	2	6½	264288	9	1	7088498	11	5½
विशेष (निश्चित धन) अनुबन्ध–2	37322	30	210	945552	1	4½	710801	10	3	5388583	13	6
	101640	10	26½	1337982	3	11	975090	3	4	12477082	9	11½
										542332	5	7.5
योग										13019415	15	7

कांग्रेस ने इस फण्ड का उपयोग अत्यन्त मनमानी से किया और अस्पृश्यों के लिए बहुत कम धनराशि खर्च की जो इस तालिका से स्पष्ट होता है[1]–

क्रम सं0	प्रयोजन	धनिराशि रु0
1.	राजमुन्द्री डिप्रेस्ट क्लास मिशन	1000
2.	अन्त्यज कार्यालय अहमदाबाद	5000
3.	अन्त्यज कार्यालय अहमदाबाद	17381
4.	आंध्र में डिप्रेस्ड क्लासेज वर्क्स	7000
5.	नेशनल सोसल कांफ्रेंस फार डीप्रेस्ट क्लासेज वर्क्स	3000
6.	तमिल जिला प्रान्ती कांग्रेस कमेटी फार डीप्रेस्ट क्लासेज वर्क्स	10000
	योग	43381

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड– 16, पृष्ठ सं0– 40

बाबा साहेब के अनुसार कांग्रेस ने अस्पृश्योत्थान का जो प्रचार किया था वह इस तालिका से स्पष्ट है होता है कि अस्पृश्य समाज को धोखा देने के अलावा और कुछ नहीं था।

साइमन कमीशन

ब्रिटिश सरकार ने 1919 में अधिनियम की समीक्षा करने तथा भावी संवैधानिक सुधारों की योजना प्रस्तुत करने के लिए 1927 में सर साइमन की अध्यक्षता में एक आयोग नियुक्त किया जिसकी सदस्यता से सारे भारतीयों को पृथक रखने की घोषणा भारत मंत्री वर्किनहेड ने किया। इसे श्वेत कमीशन कहा जाता है। भरतीय राष्ट्रीय कांग्रेस सहित अनेक दलों ने साइमन कमीशन का बहिष्कार करने का निर्णय लिया और जब 03 जनवरी 1928 को सर साइमन तथा उनके मित्र बम्बई में जहाज से उतरे तो उसी समय साइमन गो बैक नारों से उनका स्वागत किया गया।[1] सारे देश में इसके विरुद्ध प्रदर्शन हुआ। बाबा साहेब ने दलित समस्या को ब्रिटिश साम्राज्य तक पहुँचाने के लि इस समय का उपयोग किया और आयोग के सम्मुख अस्पृश्य वर्ग की समस्याओं से सम्बन्धित एक ज्ञापन प्रस्तुत किया। 23 अक्टूबर 1928 को साइमन कमीशन के सम्मुख बाबा साहेब ने दलित वर्ग की समस्यायें रखीं। कमीशन के सदस्य लार्ड एटली से बाबा साहेब की दलित वर्ग की समस्याओं पर अलग से चर्चा हुई।[2]

एटली- दलित वर्ग के लोग कपड़ा मिलों में, अन्य शहरी उद्योग धन्धों में काम करते हैं क्या?

डॉ० अम्बेडकर- दलित वर्ग के तमाम लोग श्रमिक हैं।

एटली- उनकी अस्पृश्यता वहां कुछ मात्रा में कम होती है क्या?

---

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृष्ठ सं0– 230

[2] Indian Statutory Commission, Vol XVI, P.P.- 56

डॉ0 अम्बेडकर- नहीं, सबसे फायदेमंद जो विभाग हैं, उसमें अस्पृश्य श्रमिकों को प्रवेश नहीं मिलता, डाक विभाग जैसे अन्य विभाग हैं जनमें उन्हें प्रवेश नहीं मिल सकता है।

गोल मेज सम्मेलन

ब्रिटिश सरकार ने भारत के संवैधानिक प्रश्नों पर विचार विमर्श के लिए भारतीय प्रतिनिधियों का सम्मेलन लन्दन में बुलाया, जिसमें कांग्रेस सहित सभी भारतीय दलों, रियासतों, वर्गों के प्रतिनिधियों को बुलाया गया। लन्दन में कुल 3 गोल मेज सम्मेलन हुए, जिसमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने केवल द्वितीय सम्मेलन में भाग लिया। प्रथम गोल मेज सम्मेलन का उद्घाटन 12 नवम्बर 1930 को ब्रिटिश सम्राट जार्ज पंचम ने किया। इस गोल मेज सम्मेलन का महत्व इस बात से है कि इसमें ब्रिटिश सरकार ने भारत के लिए संविधान निर्माण मे भारतीयों से परामर्श करने के लिए उनके अधिकार को मान्यता दी। अस्पृश्यों के लिए यह मतत्वपूर्ण घटना थी क्योंकि यह पहला अवसार था कि अस्पृश्यों को अपने दो प्रतिनिधि अलग से भेजने की अनुमति मिली। यदि बाबा साहेब ने साइमन कमीशन के सम्मुख दलित वर्ग की समस्या इतने जोरदार ढंग से न उठाई होती तो दलित वर्ग को यह सौभाग्य न प्राप्त होता। दलित वर्ग की ओर से डा0 अम्बेडकर और दीवान बहादुर आर श्रीनिवास ने भाग लिया।

गोल मेज सम्मेलन का कार्य 9 समितियों में विभाजित था। उसमें से एक अल्पसंख्यक (माइनरटीज कमेटी), समिति जिसे साम्प्रदायिक समस्याओं का हल निकालने की जिम्मेदारी दी गई थी। अति महत्व की समिति होने के कारण ब्रिटिश प्रधानमंत्री रेमसे मैकडोनाल्ड स्वयं इसके अध्यक्ष थे। बाबा साहेब ने इस समिति को अस्पृश्य वर्ग से सम्बन्धित एक ज्ञापन दिया, जिसमें कहा गया था[1]– स्वायतशासी भारत के भावी संविधान में दलित वर्गों के राजनैतिक अधिकारों की सुरक्षा के लिए व्यवस्था क्रिया जाए। इसे गोल मेज सम्मेलन में पेश किया गया–

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृष्ठ सं0–47

स्वायतशासी भारत में बहुमत वाले शासन में शामिल होने के लिए दलित वर्ग निम्नलिखित शर्त पर अपनी सहमति देंगे–

शर्त सं0 1– समान नागरिकता, मूल अधिकार।

शर्त सं0 2– समान अधिकारों का अवाध उपयोग।

शर्त सं0 3– भेद–भाव के विरुद्ध संरक्षण।

शर्त सं0 4– विधान मण्डलों में समुचित प्रतिनिधित्व।

शर्त सं0 5– नौकरियों में यथोचित प्रतिनिधित्व।

शर्त सं0 6– पक्षपात अथवा हितों की उपेक्षा को दूर करना।

शर्त सं0 7– विशेष विभागीय सुरक्षा।

शर्त सं0 8– दलित वर्ग और मंत्रिमण्डल।

प्रथम गोल मेज सम्मेलन में राजनैतिक एवं संवैधानिक मामलों में अस्पृश्य वर्ग का पृथक अस्तित्व आम सहमति से स्वीकार कर लिया गया था।[1] केवल कांग्रेस की सहमति नहीं बन पाई थी क्योंकि वह सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ की थी और सम्मेलन का बहिष्कार किया था।

1931 में द्वितीय गोल मेज सम्मेलन लन्दन में सम्पन्न हुआ, जिसमें 04 अप्रैल 1931 के गाँधी–डर्विन समझौते के अनुसार कांग्रेस ने भाग लेना स्वीकार किया था। कांग्रेस ने अपने प्रतिनिधि के रूप में महात्मा गाँधी को भेजा। बाबा साहेब ने कहा कि दुर्भाग्यवश सभा के लिए कांग्रेस ने अपना प्रतिनिधि श्री गाँधी जैसे कुपात्र को नहीं चुनना चाहिए था।[2] गाँधी जी ने सम्पूर्ण गैर कांग्रेसियों के प्रति अपमानजनक व्यवहार किया। जब कभी देश का प्रतिनिधित्व करने का अवसर आया तो श्री गाँधी ने यह कह

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृष्ठ सं0–61

[2] वही, पृष्ठ सं0– 61

कर दूसरों का अनादर किया कि उन लोंगों की कोई हस्ती नहीं है, केवल वही उस कांग्रेस के प्रतिनिधि हैं जो सारे देश का प्रतिनिधित्व करती है।

गोल मेज सम्मेलन में अनेक समितियां कार्य कर रही थीं, उसमें से एक संघीय ढांचा समिति थी, जिसकी बैठक 17 सितम्बर 1931 को हुई। इसमें गाँधी जी ने निम्नलिखित महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया।[1] मैं इस उप शीर्ष (पांच) विशेष हितों में विशेष नर्वाचन क्षेत्रों द्वारा प्रतिनिधित्व पर आता हूँ। मैं कांग्रेस के पक्ष में बोलूँगा, कांग्रेस ने हिन्दू–मुसलमान तथा सिख एकता पर विशेष जोर दिया है। जहाँ तक अस्पृश्यों का सम्बन्ध है, मैं पूरी तरह से सही समझ गया था कि डा0 अम्बेडकर क्या कहना चाहते हैं परन्तु अस्पृश्यों के हित में उसके प्रतिनिधत्व के लिए कांग्रेस डा0 अम्बेडकर के साथ हे। अस्पृश्यों के हित कांग्रेस के सामने उतने ही स्पष्ट हैं, जितने पूरे देश के किसी अन्य व्यक्ति को स्पष्ट हो सकते हैं। अतः किसी और विशेष प्रतिनिधित्व का मैं पूरी ताकत से विरोध करूँगा।

बाबा साहेब के अनुसार गाँधी जी की योजना थी कि हिन्दू, मुसलमान और सिखों में समझौता कराकर साम्प्रदायिक समस्या का पटाक्षेप करते हुए अस्पृश्यों को अलग छोंड़ दिया जाये। यह गाँधी जी द्वारा अछूतों के विरुद्ध कांग्रेस की युद्ध घोषणा` अतिरिक्त और कुछ नहीं था। बाबा साहेब ने अल्पसंख्यक समिति के समक्ष यह महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया– "जब तक दलित वर्गों को अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में मान्यता नहीं होगी तब तक मैं नहीं समझता कि इस सम्बन्ध में श्री गाँधी द्वारा प्रस्तावित कमेटी में मेरे शामिल होने से कोई मतलब हल होगा।[2]

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन असफल रहा जिसका मूल कारण बाबा साहेब के अनुसार श्री गाँधी की हठधर्मिता थी।[3] लन्दन से वापस आकर गाँधी जी ने अपना सविनय अवज्ञा आन्दोलन पुनः आरम्भ किया और इसी के साथ ब्रिटिश सरकार का दमन

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृष्ठ सं0–63
[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृष्ठ सं0–67
[3] वही, पृष्ठ सं0– 62

चक्र और तीव्र हो गया। महात्मा गाँधी सहित अनेक नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। जेल से ही 11 मार्च 1932 में उन्होंने पत्र लिखकर भारत मंत्री सर सैमुअल होर को अस्पृश्यों की मांग पर अपना विरोध प्रकट किया था। गोल मेज सम्मेलन की समाप्ति पर जब अल्पसंख्यकों का दावा प्रस्तुत किया गया था, तब मैंने जो भाषण दिया था, शायद आपको याद हो। उसमें मैंने कहा था कि यदि दलितों को पृथक मतदान स्वीकार किया जाता है तो मैं अपने प्राणों की वाजी लगाकर उसका विरोध करूँगा।[1]

गाँधी जी के इस धमकी के बावजूद भी 17 अगस्त 1932 को प्रधानमंत्री रेम्ज मैक्डानल ने साम्प्रदायिक प्रश्न पर अपने निर्णय की घोषणा की, जिसे कम्युनल अवार्ड या साम्प्रदायिक पंचाट या साम्प्रदायिक निर्णय कहा जाता है। साम्प्रदायिक निर्णय के द्वारा दलित वर्ग को पृथक समुदाय के रूप में स्वीकार कर पृथक निर्वाचन मण्डल प्रदान किया गया।

गाँधी जी ने इसके विरुद्ध 20 सितम्बर 1932 को आमरण अनशन यर्वदा जेल में शुरू किया, क्योंकि गाँधी जी को सविनय अवज्ञा आन्दोलन के तहत गिरफ्तार करके यर्वदा जेल में डाल दिया गया था। इस अनशन ने सारे देश में तूफान ला दिया और अब सभी के सामने गाँधी जी के प्राणों के रक्षा की चिंता थी। उनके प्राण बचाने का एक ही उपाय था– वह था कि साम्प्रदायिक पंचाट को रद्द किया जाये लेकिन ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने स्पष्ट कर दिया था कि ब्रिटिश मंत्रिमण्डल उसे वापस नहीं लेगा, परन्तु वे ऐसे किसी सिद्धान्त को जो सवर्ण हिन्दुओं और अस्पृश्यों को मान्य हो, उसके स्थान पर लाने के लिए तैयार है। चूँकि डा0 अम्बेडकर को गोल मेज सम्मेलन में दलितों का प्रतिनिधित्व करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, इसलिए यह मान लिया गया कि अस्पृश्यों की सहमति डा0 साहेब कें उसमें शामिल हुए बिना मान्य नहीं होगी।

बाबा साहेब के सामने अत्यन्त कठिन परिस्थिति आ गई थी। उनके सामने एक ओर गाँधी जी के प्राण को बचाने के लिए सारे राष्ट्र का दबाव था तो दूसरी ओर

---

[1] वही, पृष्ठ सं0– 63

अस्पृश्यों के हितों की रक्षा का प्रश्न था। अंततः बाबा साहेब ने अत्यन्त मानवीय दृष्टिकोण अपनाते हुए पूना समझौते पर 24 सितम्बर को हस्ताक्षर कर गाँधी के प्राणों की रक्षा की। पूना समझौते पर अस्पृश्य वर्ग की ओर से डा0 बाबा साहेब ने हस्ताक्षर किया तथा सवर्णों की ओर से मदन मोहन मालवीय ने हस्ताक्षर किया। हस्ताक्षर करने वाले अन्य नेताओं में जयकर, राजगोपालाचारी, राजभोज, श्रीनिवास, सी0वी0 मेधा आदि थे।[1] बाबा साहेब ने अपने हृदय पर पत्थर रखकर पूना समझौता पर हस्ताक्षर किया था। इस समझौते के तहत दलित वर्ग को केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान सभाओं में स्थान आरक्षित किये गये और पृथक निर्वाचन प्रणाली समाप्त किया गया। प्रान्तीय विधान सभा में 148 सीटे दलित वर्ग को आरक्षित की गई।

इस समझौते की सूचना तत्काल ब्रिटिश सरकार को दी गई और 26 सितम्बर 1932 को ब्रिटिश मंत्रिमण्डल ने इस करार को स्वीकार कर लिया। इस समझौते का समाचार तत्काल पूरे देश में फैल गया, जिस पर मिश्रित प्रतिक्रिया हुई। तेजबहादुर सपू ने बाबा साहेब की प्रशंसा करते हुए कहा– अम्बेडकर भविष्यकाल मे देश के एक ओजस्वी नेता बनेंगे। अयोध्या सिंह ने कहा कि यही अनशन राष्ट्रीय आन्दोलन की मांग के लिए क्यों नहीं किया गया। इससे राष्ट्रीय आन्दोलन में वह ज्वार आता कि ब्रिटिश शासकों को झुकना पड़ता।[2] धनंजय कीर ने लिखा– ''गाँधी जी की यह विजय इतनी परिणामकारी और निर्णायक बनी कि जिस तरह इन्द्र कर्ण का कवच कुण्डल तरकीब से छीन कर उसे दुर्बल बना दिया उसी तरह गाँधी ने अस्पृश्य समाज से अलग मतदाता संघ के कवच कुडल निकाल कर अम्बेडकर को दुर्बल किया।''[3] फर भी इस समझौते से कांग्रेस ने यह स्वीकार कर लिया कि अस्पृश्य वर्ग के एकमात्र नेता बाबा साहेब अम्बेडकर ही हैं।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेदकर जीवन चरित, पृष्ठ सं0– 207।
[2] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृष्ठ सं0– 597।
[3] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृष्ठ सं0– 208

कुछ समय के लिए लग रहा था कि गाँधी और अम्बेडकर में मेल हो गया है, और दोनो मिलकर हिन्दू समाज की बुराइयों को समाप्त करने में अपनी शक्ति लगायेंगे लेकिन यह अधिक दिन नहीं चल सका।[1]

पूना पैक्ट पर हस्ताक्षर के पश्चात् निर्वाचन क्षेत्र निर्धारित करने के लिए हेमंड समिति नियुक्त की गई जिसने अपना कार्य आरम्भ किया। उधर भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और उसके कर्ताधर्ता गाँधी जी अपने अस्पृश्य उन्मूलन कार्यक्रम पर पूना पैक्ट के बाद तन्मयता से संलग्न हुए। उन्होंने मंदिर प्रवेश आन्दोलन आरम्भ किया और बाबा साहेब का इसमें समर्थन मांगा जिसे बाबा साहेब ने स्वीकार नहीं किया। बाबा साहेब ने इसके पीछे सम्पूर्ण तथ्यों को समाचार पत्रों को दिया।

गाँधी जी ने अस्पृश्य उन्मूलन कार्यक्रम को संचालित करने के लिए सितम्बर 1932 में हरिजन सेवक संघ की स्थापना की। यह गाँधी जी द्वारा अस्पृश्यों को दिया गया नया नाम था, जिसे गाँधी जी ने नरसी मेहता के उपन्यास से ग्रहण किया है। घनश्याम दास विडला और अमृतलाल ठक्कर ने इस संस्था का कार्यक्रम और उद्देश्य समाचार पत्रों में प्रकाशित किया। हरिजन सेवक संघ का कार्य चलाने के लिए गाँधी जी ने धन इकट्ठा करने के लिए 07 नवम्बर 1933 से 09 जुलाई 1934 के मध्य देश भर की यात्रा की और 08 लाख रु0 इकट्ठा किये।[2] संघ का अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य इस प्रकार था–

1. शिक्षा के क्षेत्र में
2. पेयजल के क्षेत्र में,
3. कल्याणकारी कार्य के क्षेत्र में,
4. आर्थिक सहायता के क्षेत्र में।

बाबा साहेब के अनुसार गाँधी और हरिजन सेवक संघ ने अस्पृश्य वर्ग का बहुत व्यापक अहित किया है।

---

[1] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0– 52
[2] हरिजन, 03 अगस्त 1934, पृष्ठ सं0– 52

बाबा साहेब ने कांग्रेस के इस दावे को जिसे वह आरम्भ से अंत तक करती आई है, कि वह सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व करती है, कभी भी स्वीकार नहीं किया और इसे कांग्रेस का झूठा दावा बताया। बाबा साहेब ने 1937 के प्रान्तीय विधान सभाओं के चुनाव के आधार पर कांग्रेस के दावे के झूठेपन को स्पष्ट किया है कि वह देश के दलित वर्ग का प्रतिनिधित्व तो करती ही नहीं है। यह निम्नलिखित तालिका से स्पष्ट होता है[1]–

प्रान्त	अस्पृश्यों के लिए सुरिक्षित सीटें	कांग्रेस ने कुल कितनी सीटें प्राप्त कीं
संयुक्त प्रान्त	20	16
मद्रास	30	26
बंगाल	30	06
मध्य प्रदेश	20	07
बम्बई	15	04
बिहार	15	11
पंजाब	08	00
असम	07	04
उडीसा	06	04
	151	78

इससे स्पष्ट है कि दलित वर्ग के लिए आरक्षित सीटों में से कांग्रेस ने 151 में 78 सीटें (51%) ही प्राप्त कर सकी, शेष गैर कांग्रेसी दलों ने जीती। वोटों की संख्या

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड 16, पृष्ठ सं0– 101

के आधार पर यदि देखा जाये तो कांग्रेस को गैर कांग्रेसी दलों की तुलना में काफी कम मत प्राप्त हुए जो इस तालिका से स्पष्ट होता है[1]–

प्रान्त	कांग्रेस के पक्ष में मत	कांग्रेस के विरोध में मत	चुनाव में अस्पृश्य वर्ग द्वारा डाले गये कुल मत
संयुक्त प्रान्त	52609	79571	132181
मद्रास	126152	195464	321616
बंगाल	59646	624797	684443
मध्य प्रदेश	19507	115354	134861
बम्बई	12971	158076	171047
बिहार	8654	22187	30841
पंजाब	शून्य	69126	69126
असम	5320	22437	27757
उडीसा	5878	8707	14585
	296737	1295714	1586456

इससे स्पष्ट है कि कुल मतों की सं0 1586456 में से 290737 अर्थात 18 प्रतिशत मत ही कांग्रेस के पक्ष में पड़े और 80 प्रतिशत मत कांग्रेस के विरुद्ध पड़े। कांग्रेस अस्पृश्यों का प्रतिनिधित्व करती है, इस झूठ के लिए इससे बड़ा और क्या प्रमाण हो सकता है? 1937 के निर्वाचन की समीक्षा से स्पष्ट होता है कि कांग्रेस का अस्पृश्यों

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड 16, पृष्ठ सं0– 167

का प्रतिनिधित्व करने का दावा तो दूर अस्पृश्य कांग्रेस को बिल्कुल अस्वीकार कर चुके थे।

कांग्रेस के इस झूठे प्रचार के लिए निम्नलिखित कारण उत्तरदायी हैं--

1. भारतीय प्रेस

कांग्रेस ने प्रेस के माध्यम से इस झूठ का प्रचार किया कि वह सम्पूर्ण भारत और उसके सभी वर्गों का प्रतिनिधित्वकरती है। प्रेस की यह मान्यता है कि कांग्रेस कभी गलती नहीं कर सकती है। प्रेस किसी ऐसे समाचार को प्रकाशित नहीं करते जो कांग्रेस की प्रतिष्ठा तथा उसकी विचारधारा के विरुद्ध होते हैं।

2. अस्पृश्यों के पास साधन का अभाव

अस्पृश्य वर्ग के पास अपना कोई साधन नहीं है, जिससे वे कांग्रेस के मुकाबले में अपना दावा जता सकें। अस्पृश्यों के इस कमजोरी का एक प्रमुख कारण प्रेस का अभाव है।[1]

कांग्रेस का स्वाधीनता संग्राम और बाबा साहेब

बाबा साहेब ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध किये गये किसी भी आन्दोलन में न तो भाग लिया और न ही समर्थन किया। यही नहीं देश के बहुसंख्यक अस्पृश्य वर्ग ने भी कांग्रेस के तथाकथित स्वाधीनता संग्राम में भाग नहीं लिया। अस्पृश्य वर्ग ने ऐसा क्यों किया? कांग्रेस के अनुसार अस्पृश्य वर्ग ब्रिटिश साम्राज्य की कठपुतली और पिट्ठू है, जिसके कारण देश के स्वाधीनता संग्राम में भाग नहीं लेते। बाबा साहेब ने इसे कांग्रेस का असत्य एवं भ्रामक प्रचार बताया। बाबा साहेब के अनुसार अस्पृश्य वर्ग को यह डर है कि भारत की स्वतन्त्रता से हिन्दू राज्य स्थापित हो जाएगा। अस्पृश्यों के लिए सभी दरवाजे बंद हो जायेंगे और सदा के लिए उनकी

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड-- 16, पृष्ठ सं0-- 216

आशाओं, स्वतन्त्रता और खुशियों के रास्ते बंद हो जायेंगे तथा वे केवल लकड़ी चीरने वाले और पानी भरने वाले ही बना दिये जायेंगे।[1]

इसका अभिप्राय यह नहीं कि अस्पृश्य वर्ग ब्रिटिश साम्राज्य की दासता में रहना चाहते हैं। वे ब्रिटिश साम्राज्य से निःसन्देह मुक्ति चाहते हैं लेकिन मुक्ति ही काफी नहीं है अपितु स्वतन्त्र भारत को लोकतन्त्र के योग्य बनाया जाना चाहिए। यदि हिन्दू साम्प्रदायिक बहुमत के जहरीले दाँत को तोड़ने के लिए भावी संविधान में प्रावधान नहीं किया जाता तो भारत लोकतंत्र के लिए सुरक्षित नहीं रह पायेगा। संक्षेप में अस्पृश्य वर्ग संवैधानिक संरक्षण चाहते हैं, जिससे कि हिन्दू साम्प्रदायिक बहुमत के अत्याचारों से बच सकें। कांग्रेस ने अस्पृश्य वर्ग को किसी भी प्रकार की संवैधानिक गारन्टी देने से इनकार कर दिया। यदि कांग्रेस अस्पृश्य वर्ग को पहले से ही गारन्टी दे देती तो अस्पृश्य वर्ग कांग्रेस के साथ सहयोग किया होता।

एक अन्य महत्वपूर्ण प्रश्न बाबा साहेब ने उठाया कि कांग्रेस स्वाधीनता संग्राम किसके लिए लड़ रही है? देश की आजादी के लिए या देश के सभी निवासियों की आजादी के लिए? कांग्रेस किसके लिए स्वाधीनता की लड़ाई लड रही है? क्या कांग्रेस शासक वर्ग की लड़ाई लड़ रही है अथवा भारत के सभी लोगों की आजादी की लड़ाई लड रही है? भारत नें शासक वर्ग मुख्यता ब्राह्मण है।[2] प्राचीन काल तथा मध्यकाल में ब्राह्मणों ने क्षत्रियों से सम्बन्ध जोड़कर जनता पर अत्याचार किया। ब्राह्मणों अपनी कलम से तथा क्षत्रियों ने तलवार से अत्याचार और शोषण किया। वर्तमान नें ब्राह्मणों ने बनिया वर्ग (वैश्य) को भी अपने साथ जोड़ लिया है। बाबा साहेब यह मानते थे कि कांग्रेस ने बनिया वर्ग को साथ केवल धन के लिए लिया है। इसके लिए प्रमाण के रूप में बाबा साहेब के गाँधी जी और लई फिशर के मध्य 6 जून 1942 को हुई वार्ता तथा लुई फिशर के गाँधी जी को लिखे गये पत्र को उल्लिखित किया है।

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड– 16, पृष्ठ सं0– 181

[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृष्ठ सं0– 214

ब्रिटिश साम्राज्य से भारत के मुक्त होने के बाद भी शासक वर्ग वैसे ही बना रहेगा। यही नहं अपितु उसमें और भी शक्ति तथा प्रबलता आ जायेगी। इसीलिए बाबा साहेब ने अस्पृश्य वर्ग को सदैव सावधान किया कि वे कांग्रेस के भ्रामक प्रचार से भ्रमित न हों।

बाबा साहेब का कांग्रेस के प्रति यह दृष्टिकोण सदैव नहीं बना रहा अपितु जैसे–जैसे देश की आजादी नजदीक आती गई, बाबा साहेब और कांग्रेस की नजदीकिया बढ़ती गई। 1945 में जेल से रिहा होते ही सरदार पटेल पूरी तरह से बदल गये और 1946 में बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर से वार्ता चलाई महात्मा गाँधी का दृष्टिकोंण वार्ता के प्रति ढुलमुल बना रहा। गाँधी जी ने 21 जुलाई 1946 को सरदार पटेल को पत्र लिखकर इस वार्ता के प्रति सावधान किया।[1] सरदार पटेल गाँधी जी को लगातार समझाते रहे और अंततः गाँधी जी सहमत हो गये। गाँधी जी ने 03 अगस्त 1946 को पटेल को पत्र लिखा, अगर तुम्हें इसमें कोई जोखिम दिखाई देता तो मैं इसमें क्या कह सकता हूँ? उनसे समझौता कर लो। मुझे इस विषय में और कुछ नहीं कहना है।[2]

भारत विभाजन के साथ ही बाबा साहेब की संविधान सभा की सदस्यता बंगाल के विभाजन के साथ ही खतरे में पड़ गई। इसी समय बंबई से श्री जयकर ने संविधान सभा से त्याग पत्र दे दिया। सरदार पटेल ने एक मौका देखा और जयकर के स्थान पर बाबा साहेब के उम्मीदवारों का समर्थन किया। पटेल जी ने बंबई के प्रधानमंत्री खरे को लिखकर अम्बेडकर को जितवाने के लिए कहा, अंततः डा0 अम्बेडकर जीत गये।

सरदार पटेल के प्रयास से पं0 जवाहर लाल नेहरू ओर डा0 अम्बेडकर की वार्ता हुई और अंततः डा0 अम्बेडकर ने पं0 नेहरू के मंत्रिमण्डल में विधिमंत्री बनना स्वीकार किया। भारत के केन्द्रीय मंत्रिमण्डल में एक अस्पृश्य को यह महत्वपूर्ण पद प्राप्त होना भारतीय इतिहास की अद्वितीय घटना थी। अब तक कांग्रेस के लोगों ने डा0

---

[1] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिन्तन, पृष्ठ सं0– 93

[2] द क्लेक्टिड वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड– 85, पृष्ठ सं0– 120

अम्बेडकर को अंग्रेजों का पिठ्ठू कहा था, उन्हीं कांग्रेस के लोगों ने अब उनका कूटनीतिज्ञ के रूप में स्वागत किया।

बाबा साहेब कांग्रेसी मंत्रिमण्डल में क्यों स्वीकार किए, यह न केवल देश व्यापी चर्चा का विषय बना अपितु अनेक आशंकाओं को भी जन्म दिया। कुछ आलोचकों ने इसे बाबा साहेब की सत्ता लोलुपता कहा। इन अनेक प्रश्नों, शंकाओं का उत्तर बाबा साहेब ने 25 अप्रैल 1948 को अनुसूचित जाति संघ के लखनऊ में दिये गये भाषण में दिया।[1] "सभी प्रकार की सामाजिक उन्नति की मूल कुंजी राजनैतिक शक्ति है। दलित जाति ने संगठित होकर तीसरी राजनैतिक शक्ति पैदा की और कांग्रेस तथा समाजवादियों में एक तृतीय शक्ति के रूप में खड़े हो गये तो वे अपने मुक्ति के द्वार खोल सकते हैं।

दलित जाति यदि कांग्रेस में सम्मिलित हो जाये तो वह राजनैतिक शक्ति प्राप्त नहीं कर सकती। कांग्रेस बहुत बड़ा संगठन है। यदि हम उसमें प्रवेश करेंगे तो समुद्र में बूँद डालने जैस होगा। कांग्रेसी लोग अत्यन्त अहंकारी हैं। उस संगठन में प्रवेश लेकर आप उच्च पदों पर नहीं पहुँच सकते। यदि आप कांग्रेस में गये तो उससे आपके शत्रु की शक्ति बढ़ेगी।

कांग्रेस एक जलता हुआ घर है। उसमें रहकर आपका किसी प्रकार का कल्याण नहीं हो सकता। मुझे आश्चर्य नहीं होगा यदि कुछ ही वर्षों में यह (कांग्रेस) नष्ट हो जायें सोशलिस्टों ने कांग्रेस छोंड दी है, उसमें फूट पड़ गई है। इससे कांग्रेस की शक्ति कमजोर हो गई है....। मैं कांग्रेस सरकार में सम्मिलित हुआ हूँ इसलिए अनुसचित जाति में मेरे बारे में अनेक गलत धारणायें पैदा हो गई हैं.......... विगत 25 वर्षों से मैं कांग्रेस से संघर्ष कर रहा हूँ किन्तु इस समय मैं चुप क्यों बैठा हूँ? ऐसा कुछ लोग सवाल करते हैं। मेरा उत्तर यह है कि हर समय युद्ध करते रहने में युद्ध कुशलता नहीं है। आपको अन्य मार्गों से अपनी उन्नति करनी चाहिए।

[1] पुणे मिकाल में प्रकाशित दिनांक , 27.04.1948

अंग्रेजों ने हमें आधे मार्ग पर छोंड़ कर हमारी दशा खराब की है। हमारे समाज में एकता नहीं थी। हममें पंचमार्गी जयचन्द्र बहुत थे। इस परिस्थिति में एक मजबूत संगठन से लोहा लेना अपने समाज के हित लिए उचित नहीं था। इसलिए हमने समझौते की नीति अपनाई...... वर्तमान में कांग्रेस से संघर्ष करने की जरूरत नहीं है। समझौते की नीति से हमें जितना मिल सकता है, उतना लेकर रहना चाहिए।

मैं केन्द्रीय शासन में सहभागी हुआ हूँ, लेकिन मैंनें कांग्रेस के टिकट पर चुनाव नहीं लड़ा या कांग्रेस का सदस्य नहीं बना। मुझे केन्द्रीय सरकार में शामिल होने का कांग्रेस ने निमंत्रण दिया था, तब किसी भी प्रकार की शर्तों से मैंने अपने को बाँधा नहीं था। बिना शर्त मैंने यह निमंत्रण स्वीकार किया था। वहाँ रहने से जब मुझे यह मालूम होगा कि हमारा हित नहीं साध्य हो रहा है, तब मैं उसी समय यह पद छोंड़ दूँगा। मैं कांग्रेस में चट्टान की भांति हूँ और पानी में मिट्टी की भाँति घुलूँगा नहीं, इसे ध्यान में रखिये............।

इस भाषण से देश के राजनैतिक वातावरण में तुफान आ गया। पं0 नेहरू ने तत्काल डा0 अम्बेडकर को पत्र लिखा कि उन्हें उनके भाषणों से आश्चर्य एवं दुःख हुआ है। पं0 नेहरू ने लिखा– ''यदि मंत्री इस तरह की भावना रखें और बातें करें तो मंत्रिमण्डल का सामूहिक उत्तरदायित्व कहाँ रह जाएगा। प्रधानमंत्री को अपनी दुकान बन्द कर लेगी पड़ेगी।[1] सरदार पटेल ने पं0 नेहरू से कहा कि मैं नहीं समझता अम्बेडकर इस भाषण के बाद मंत्रिमण्डल में कैसे रह सकते हैं। कांग्रेस हाई कमान ने एक पत्र लिखकर डा0 अम्बेडकर से स्पष्टीकरण मांगा। 30 अप्रैल 1948 को बाबा साहेब अपना स्पष्टीकरण दिया और कहा– ''मैंने वह वक्तव्य नहीं दिया जो मेरा बताया जाता है, अखबारों ने शब्दों को तोड़ा–मरोड़ा है और प्रसंग से काट कर प्रस्तुत किया है। समाचार पत्र मेरे साथ कभी न्यायपूर्ण वर्ताव नहीं करते।[2] इस स्पष्टीकरण के साथ सम्पूर्ण विवाद समाप्त हो गये। लेकिन बाबा साहेब का अपने प्रधानमंत्री के साथ कभी

---

[1] करेस्पोंडेट्स, खण्ड– 5, पृष्ठ सं0– 328– 329

[2] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिन्तर, पृष्ठ सं0– 97।

मधुर सम्बन्ध नहीं स्थापित हो सका था। सरकार की आन्तरिक और विदेश नीति के अनेक मुद्दों पर बाबा साहेब का गंभीर मतभेद था।

इस विवेचन से स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब का भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की नीतियों, कार्यक्रमों से गम्भीर मतभेद था, जिसके कारण वे काग्रेस का साथ नही दे सके। आजादी के नजदीक आते ही कांग्रेस और बाबा साहेब के बीच दूरियां कम हुई और बाबा साहेब ने दलित वर्ग के हितों के लिए कांग्रेस मंत्रिमन्डल को स्वीकार कर लिया लेकिन अपने प्रधान मंत्री जवाहर लाल नेहरू के साथ उनके गम्भीर मतभेद बने रहे और अन्ततः हिन्दू कोडबिल बिबाद पर क्षुब्ध होकर त्याग पत्र दे दिया।

अध्याय
नौ

अध्याय– नौ

''बाबा साहेब का महात्मा गाँधी के साथ सम्बन्ध और वैचारिक अन्तर्विरोध''

आधुनिक भारत के इतिहास में महात्मा गाँधी और बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर ने अपने कर्तव्य और व्यक्तित्व से न केवल अपने युग को प्रभावित किया अपितु भविष्य में उनकी उपादेयता और प्रासंगिकता और भी बढ़ा दिया है। यह इतिहास का अद्‌भुद संयोग रहा कि इन दो महापुरुषों को एक ही काल में कार्य करने तथा एक दूसरे को समझने का अवसर प्राप्त हुआ। दोनो महापुरुषों की अपनी विशिष्ट कार्यशैली, विशिष्ट सिद्धान्त तथा विशिष्ट जीवन दर्शन थे, जिसमें समानता और असमानता दोनो की स्वर लहरियां प्रवाहित हैं, फिर भी उनमें असमानता की खाई अधिक गहरी हैं। गाँधी नाम की जो आंधी 1920–21 ई से आरम्भ हुई। उसके सम्मुख बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर एक अडिग चट्‌टान की भाँति डटे रहे। गाँधीवाद से अप्रभावित चंद लोगों में अम्बेडकर और जिन्ना आते हैं।[1]

आम जनमानस में यह प्रश्न सदैव कौतूहल का रहा है कि इन दोनो महापुरुषों के पारस्परिक सम्बन्ध कैसे रहे? क्या यह सम्बन्ध वैमनस्यपूर्ण ही रहा या कभी अच्छे सम्बन्ध भी रहे? दोनो के सिद्धान्तों, जीवन दर्शन में क्या समानता ही थी या गहरी असमानता भी थी? बाबा साहेब महात्मा गाँधी की कांग्रेस में आजादी के बाद नेहरू मंत्रिमण्डल में सम्मिलित क्यों हो गए आदि चिरन्तर उभरते हुए यक्ष प्रश्न हैं!

दोनो महापुरुषों का भारतीय राजनीति में अवतरण एक अन्तराल से हुआ। महात्मा गाँधी इग्लैण्ड में कानून की पढ़ाई पूर्ण (1893 ई0) करके दक्षिणी अफ्रीका में

[1] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर, एक चिंतन, पृ0सं0– 35

भारतीयों के साथ हो रहे अमानुषिक अत्याचार के प्रति एक सफल संघर्षोपरान्त अपने राजनैतिक गुरु गोपाण कृष्ण गोखले के निमंत्रण पर 1915 ई0 में भारत आये।[1] भारतीय जनता ने बड़ी गर्मजोशी से गाँधी जी का स्वागत किया। दक्षिणी अफ्रीका में उनके संघर्षों और उनकी सफलताओं ने उन्हें भारत में बहुत लोकप्रिय बना दिया था। इस समय बाबा साहेब बड़ौदरा नरेश सायजी महाराज की छात्रवृत्ति पर अमेरिका में उच्च शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। अमेरिका के मुक्त वातारण ने उनके जीवन पर गहरा प्रभाव डाला। वहां वे ऐसे दोस्तों के बीच रहते थे जिनमें छुआछूत की भावना का लेशमात्र भी नहीं था।

गाँधी जी भारत आकर राजनैतिक गतिविधियों का सूक्ष्म अध्ययन कर कांग्रेस की सदस्यता स्वीकार कर कांग्रेस के सदस्य के रूप में पहली बार ऐतिहासिक लखनऊ अधिवेशन (1916ई0) में भाग लिया। यहीं पर बिहार के लोकप्रिय नेता राजकुमार शुक्ल ने गांधी से मुलाकात कर उन्हें चम्पारन (बिहार) आने का निमंत्रण दिया, जहाँ निहिलिस्टों द्वारा नील उत्पादक किसानों का शदियों से शोषण किया जा रहा था। वह गाँधी जी के पीछे–पीछे तब तक घूमते रहे जब तक कि गाँधी जी चम्पारन आकर किसानों की समस्याओं का अध्ययन करने को राजी नहीं हो गए।[2] दूसरी ओर इसी वर्ष बाबा साहेब 9 मई 1916 ई0 को अमेरिका में अपने अध्ययन के दौरान ही डा0 गोल्डेन वाइजर द्वारा आयोजित एन्थ्रोपोलोजी सेमिनार में भाग लेकर "कास्ट इन इन्डियन देयर मैकेनिज्म, जीनियस एंड डेवलपमेंट" नामक अपना ऐतिहासिक शोध पढ़ा।" इस शोध में उन्होंने अपने वय की तुलना में आश्चर्यजनक परिपक्वता तथा आकलन शक्ति दिखाई.....। गुणवत्ता की दृष्टि से यह उच्चकोटि का है। यदि उन्होंने निबन्ध के अतिरिक्त और कुछ न लिखा होता तो भी उनकी गणना अच्छे विचारकों में होती।[3]

---

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र चटर्जी, भारत में स्वाधीनता संघर्ष, पृ0सं0– 147
[2] प्रो0 विपिन चन्द्र, वही, पृ0सं0– 149
[3] मधुलिमये, वही, पृ0सं0– 20–25

गाँधी जी ने अपने पूर्व वादे के अनुसार 1917 में चम्पारन सत्याग्रह किया। यह भारत में उनका प्रथम सत्याग्रह था जो सफल रहा था। गाँधी जी ने 1918 ई0 में "अहमदाबाद मिल मजदूर आन्दोलन" किया। यहाँ लेग वोनस को लेकर मिल मालिकों और मजदूरों में तकराह थी, अन्ततः गाँधी जी ने नेतृत्व संभाला और आन्दोलन सफल रहा। इसी वर्ष गाँधी जी ने गुजरात के खेड़ा तालुके के किसानों के हितों के लिए खेड़ा सत्याग्रह शुरू किया। गुजरात सभा ने इस आन्दोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह आन्दोलन भी सफल रहा था। "इन तीन आन्दोलनों ने संघर्ष के गाँधीवादी तरीके को अपनाने का अवसर दिया था, साथ ही साथ गाँधी जी को देश की जनता के नजदीक आने, उनकी समस्याएं समझने का भी अवसर मिला था"।

गाँधी जी ने इसके बाद रौलट एक्ट के विरुद्ध फरवरी 1919 ई0 में बम्बई में "सत्याग्रह सभा" की स्थापना की। इसमें अधिकांश होमरूल लीग के युवा सदस्य थे, जो ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ संघर्ष करने के लिए बेताब थे।[1] सत्याग्रह सभा ने 6 अप्रैल 1919 ई0 से आन्दोलन करने का एलान किया था, लेकिन कुछ गलतफहमी के कारण 30 मार्च को ही दिल्ली में आन्दोलन आरम्भ हो गया। पूरे देश में आन्दोलन आरम्भ हुआ और इसी क्रम में 13 अप्रैल को वैशाखी के दि मानवता को कलंकित करने वाला जलियावाला बाग कांड हो गया। गाँधी जी ने 1921–22ई0 में खिलाफत के प्रश्न पर असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया जो पूर्ण उत्साह के साथ पूरे देश में चला। गाँधी जी अली बन्धुओं के साथ पूरे देश का दौड़ा कर जन उत्साह बढ़ाने का कार्य किया लेकिन 5 फरवरी 1922ई0 को हुए चौरी–चौरा काण्ड के कारण 11 फरवरी के वारदोली प्रस्ताव द्वारा गाँधी जी ने असहयोग आन्दोलन को वापस ले लिया, जिसकी देश में तीव्र प्रतिक्रिया हुई।

डा0 अम्बेडकरने भी असहयोग आन्दोलन की निंदा की। यद्यपि उस समय वे विदेश में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रहे थे। लन्दन में शाहू जी महाराज की सहायता से

---

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, वही, पृ0सं0– 152

अपना अध्ययन पूर्ण कर डा0 अम्बेडकर 14 अप्रैल 1923 को भारत लौट आए। भारत आकर उन्होंने बम्बई उच्च न्यायालय में वकालत शुरू की तथा साथ–साथ भारत की सम्पूर्ण परिस्थितियों का सूक्ष्म अवलोकन कर अछूत उद्धार के महान लक्ष्य के लिए एक विराट संघर्ष कर सिंहनाद किया। डा0 अम्बेडकर ने 20 जुलाई 1924 को बहिष्कृत हिकारिणी सभा की स्थापना की और इसी के साथ बाबा साहेब ने हजारों वर्षों से पद्दलित मानवों को मानवीय अधिकार दिलाने के संघर्ष का शुभारम्भ किया। इस प्रकार बाबा साहेब ने अपने कार्य का आरम्भ उस समय किया जब गांधी जी के नाम की आंधी सम्पूर्ण भारत में छा गई थी। बाबा साहेब उस आंधी में बहे नहीं अपितु उससे बड़ी आंधी दलित–शोषित वर्ग के मध्य पैदा किया। महाराष्ट्र के कोरे गांव में जुलाई 1927 में अस्पृश्यों की एक विशाल सभा में बोलते हुए बाबा साहेब ने कहा जिस महार जाति ने अनेक युद्धों में ब्रिटिश सरकार को सलता दिलाई, अब उसके प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगाकर (1892 में सेना में महारों के प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगाया गया था) ब्रिटिश सरकार विश्वासघात कर रही है। इस प्रतिबन्ध को समाप्त कर देना चाहिए।[1]

ब्रिटिश सरकार ने 1927 में डा0 अम्बेडकर का मुम्बई विधान परिषद का सदस्य मनोनीत किया। विधान परिषद सदस्य के रूप में उन्होंने जो असाधारण कार्य किया उससे उनकी ख्याति बढ़ गई।

इस बीच बाबा साहेब ने अस्पृश्यों के मानवीय अधिकार के लिए ऐतिहासिक महार सत्याग्रह तथा कालाराम मंदिर सत्याग्रह किया। इन आन्दोलनों से दलित वर्गो के मध्यबाबा साहेब की प्रतिष्ठा एक महान उद्धारक की बनी। साइमन कमीशन के सम्मुख गवाही देकर तथा लन्दन में आयोति गोलमेज सम्मेलन (1930ई0) में भाग लेकर डा0 अम्बेडकर ने अस्पृश्यों के दुःखों को विश्व के सम्मुख जाहिर किया। प्रथम गोलमेज सम्मेलन में दिए गए अद्भुत बौद्धिक भाषण की सम्पूर्ण विश्व में चर्चा हुई। विश्व के प्रमुख समाचार पत्रों तथा राजनेताओं ने डा0 अम्बेडकर की प्रशंसा की।

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 65।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने प्रथम गोलमेज सम्मेलन में भाग नहीं लिया था क्योंकि उसने सविनय अवज्ञा आन्दोलन छेड़ रखा था। लाहौर अधिवेशन 1929 के अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू ने घोषणा की कि आज हमारा सिर्फ एक लक्ष्य है स्वाधीनता का लक्ष्य। हमारे लिए स्वाधीनता का अर्थ है ब्रिटिश आधिपत्य और ब्रिटिश साम्राज्यवाद से पूर्ण स्वतन्त्रता।[1] दाण्डी मार्च (12 मार्च से 6 अप्रैल 1930) से आरम्भ हुआ सविनय अवज्ञा आन्दोलन तीव्र गति से सम्पूर्ण देश में फैला। अंततः 5 अप्रैल 1931 में गांधी इर्विंग पैक्ट होने के कारण कांग्रेस ने सविनय अवज्ञा आन्दोलन को स्थगित कर दिया। पैक्ट के तहत कांगेस द्वितीय गोजमेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए सहमत हो गई। एक बार फिर भारतीय बुर्जुआवर्ग के स्वार्थ के लिए सारे देश के स्वार्थ की बली दे दी गई।[2]

कांग्रेस ने अपने प्रतिनिधि के रूप में गांधी जी को भेजने का निश्चय किया। गांधी जी ने अपने स्वभाव के अनुसार तुमार बांधकर बड़ा रहस्यमय वातावरण तैयार कर लिया। गांधी जी ने लन्दन जाने के पूर्व बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर से मिलकर उनके विचारों को जाने का निश्चय किया। भारत के दोनो महापुरुषों की पहली बार मुलाकात हो रही थी। यद्यपि दोनो एक दूसरे के विचारों, कृत्यों से अवगत थे लेकिन औपचारिक परिचय नहीं हुआ था। गाँधी जी ने 9 अगस्त 1931 को पत्र लिखकर डा0 अम्बेडकर से पूँछा कि यदि समय हो तो आज शाम 8 बजे मुलाकात कर लें। गाँधी जी ने यह भी लिखा कि यदि डा0 को यहां आना सुविधाजनक न हो तो वे ही अम्बेडकर के घर आ जाएंगे।[3] डा0 अम्बेडकर उस दिन संगाली से लौट थे और बुखार से पीड़ित थे। पत्र पाकर डा0 अम्बेडकर ने काफी सोच विचार कर उन्होंने इसके जवाब में लिखा कि वे 8 बजे शायं उनके निवास पर ही पहुंच जाएंगे।[3] उस दिन शायं तक डा0 अम्बेडकर को और तीव्र बुखार (106^0F) हो गया, अतः उन्होंने गांधी जी के पास समाचार भेज

---

[1] पट्टाभिसीता रमैया, हिस्ट्री ऑफ इण्डियन नेशनल कांग्रेस, पृ0सं0– 603

[2] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृ0सं0– 590

[3] कीर धनंजय, वही, पृ0सं0– 162

[3] डा0 राजेन्द्र मोहन भटनागर, डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृ0सं0– 69

दिया कि तीव्र बुखार के कारण मुलाकात करना संभव नहीं हो पा रहा हे और ठीक होनेके बाद तत्काल मिलने के लिए आ जाउँगा।

डा0 अम्बेडकर स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर 14 अगस्त को गांधी जी के घर पर मणि भवन दोपहर 2 बजे अपने विश्वस्त मित्र देवराव नाइक, सीतारामपंत शिवतकर, भास्कर गायकवाड़, भास्कर राव केदकर, अमृतराव राणखावे, पी0जी0काणेकर, गणपतबुवा पागरे के साथ पहुंचे। गांधी जी उस समय अपने कपिय सहयोगियो के साथ मणिभवन की तीसरी मंजिल पर वार्तालाप करते हुए नाश्ता कर रहे थे। बाबा साहेब और उनके मित्रों ने गांधी जी का अभिवादन कर बैठ गए। गांधी जी ने कुछ देर तक डा0 अम्बेडकर को अनदेखा किया। वे एक महिला मित्र स्लेड और अन्य लोगों के साथ गपशप करते रहे। अम्बेडकर के सहयोगियों को डर लगा कि यदि और थोड़ा समय गांधी जी ने अम्बेडकर की ओर ध्यान नहीं दिया तो झगड़ा आरम्भ हो सकता है। उनमें तनिक हलचल शुरू हुई। यह ध्यान में आते ही गांधी जी ने अम्बेडकर की ओर दृष्टि घुमाई।[1]

दोनो महापुरुषों की यह पहली मलाकात हो रही थी। कुछ औपचारिक बातचीत के पश्चात् दोनो लोग महत्वपूर्ण मुद्दों पर आ गए। "कहो डाक्टर उस मामलें में आपको क्या कहना है?" गाँधी जी ने बाबा साहेब से प्रश्न किया। बाबा साहेब ने कहा–"आपने मुझे अपना विचार सुनाने के लिए आमंत्रित किया था......... आप मुझसे कुछ प्रश्न कर सकते हैं, मैं उसका उत्तर दूँगा।" गांधी ने बाबा साहेब की ओर ध्यान देते हुए अपनी मूल बात आरम्भ की। मैं समझता हूँ कि तुम्हें मुझसे और कांग्रेस से शिकायतें है। मैं तुमको बता देना चाहता हूँ कि मैं दलित की समस्याओं पर तब से चिंतन कर रहा हूँ जब मैं स्कूल में पढ़ता था। तब तुम पैदा भी नहीं हुए थे.............. कांग्रेस नेता तुम्हारे कार्यक्रम का विरोध इसलिए करते हैं क्योंकि यह धार्मिक तथा सामाजिक प्रश्न है। उसको राजनीति से नहीं जोड़ा जाना चाहिए। कांग्रस दलित उत्थान के लिए अब तक 20 लाख रु0 खर्च कर चुकी है। वास्तव में यह आश्चर्य की बात है कि कांग्रेस औरमेरा

---

[1] कीर धनंजय, वही, पृ0सं0– 163

कड़ा विरोध कर रहो हो। इस सम्बन्ध में तुम्हें वह सब कुछ कहना चाहिए जिससे तुम्हारा मत पुष्ट होता हो, उसके लिए तुम पूर्ण स्वतन्त्र हो।"[1]

गाँधी जी के इस बातों का उत्तर बाबा साहेब ने इस प्रकार दिया– यह पूर्ण सत्य है कि जब से मेरा जन्म नहीं हुआ था तब से आप यह कार्य करते आ रहे हैं। वृद्ध लोग हमेशा ही आयु को बीच में लाते हैं। यह भी सच है कि आप मुझसे बड़े हैं। आपने ही कांग्रेस के कार्यक्रम में अस्पृश्यता निवारण को सम्मिलित कराया है लेकिन औपचाकिर स्वीकृति देने के अतिरिक्त कांग्रेस ने अस्पृश्यता निवारण की दिशा में और कुछ नहीं किया है– यह मेरी मुख्य शिकायत है। आप कहते हैं कि कांग्रेस ने 20 लाख रु0 अस्पृश्यता उन्मूलन के लिए अब तक खर्च किए हैं, इसलिए मैं यह बात स्वीकार करता हूँ, लेकिन मैं आपको यह बात साफ–साफ बताता हूँ आपके ए सारे रुपये पानी में गए। अगर इतनी राशि मुझे मिली होती तो मैं अधिक कारगर तरीके से अस्पृश्यता उन्मूलन कार्य सम्पन्न किया होता। आपके अनुसार कांग्रेस का सदस्य होने के लिए खादी के कपड़े जैसी शर्त आपने लागू की है, वैसी शर्त अस्पृश्य निवारण के लिए आपको कांग्रेस का सदस्य बनने वालों लोगों के लिए लगा देनी चाहिए।..... कांग्रेस का कहना है कि अंग्रेज सरकार का हृदय परिवर्तन और चित्तशुद्धि नहीं हुई है। हम अपने अनुभव के बल पर कह सकते हैं कि कांग्रेस की अस्पृश्यता की समस्या के बारे में चित्तशुद्धि नहीं हुई है। जब तक इस तरह की शुद्धि नहीं होती है तब तक हम कांग्रेस या स्पर्श हिन्दुओं पर भरोसा नहीं करेंगे। आप जैसे महात्मा पर भी हम भरोसा नहीं करेंगे। आज तक का इतिहास इस बात का साक्षी है कि महात्मा दौड़ते आभास जैसे होते हैं........ कांग्रेस और कांग्रेसीजल मेरे और मेरे कार्य का विरोध करते है।

बाबा साहेब के इस ओजस्वी ओर निर्भीक वाणी से मणिभवन का वातावरण काफी गंभीर हो गया। बाबा साहेब ने और भी आवेशपूर्ण शब्दों में गांधी जी से कहा–"गांधी जी मेरे पास मात्रभूमि नहीं है।" बाबा साहेब के इस उग्र रूप को देखकर

[1] डा0 राजेन्द्र मोहन भटनागर, डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृ0सं0– 70

गांधी जी स्तब्ध हो गए और बाबा साहेब को बीच में रोकते हुए कहे– डाक्टर साहेब आपके पास मातृभूमि है। उसकी सेवा किस तरह की जाए, यह आपके यहां के कार्य से नहीं, तो गोलमेज परिषद के प्रथम अधिवेशन के कार्य का वृत्तान्त मेरे कान पर पड़ा है, उससे सिद्ध हो गया है।

बाबा साहेब ने अपनी बात जारी रखी– आप कहते हैं कि मेरे मातृभूमि है, लेकिन मैं फिर कहता कि मेरे पास मातृभूमि नहीं है। जिस देश में कुत्ता जिस तरह जिन्दगी जीता है, उस तरह की भी जिन्दगी हम नहीं गुजार सकते। कुत्ते, बिल्लियों को तिजनी सुविधाए प्राप्त होती है, उतनी सुविधाएं भी हमें हर्ष के साथ जिस देश में नहीं मिलती हैं, उस भूमि को मेरी जन्मभूमि और उस भूमि के धर्म को मेरा धर्म कहने के लिए मैं ही क्या, परन्तु जिसे इन्सानियत का ज्ञान हुआ है, और जिसे स्वाभिमान की परवाह है– ऐसा कोई भी अस्पृश्य तैयार न होगा। इसी देश ने हमारे बारे में इतना अक्षम्य अपराध किया है, कि हमने उसका किसी भी प्रकार का और कोई भी भयंकर द्रोह किया, तो भी उरासे होने वाली पाप की जिम्मेदारी हमारे सिर नहीं पड़ेगी। ऐसा होने के कारण मुझे अराष्ट्रीयता कहकर कोई कितना भी गालियां दे, तो भी उसके बारे में विषाद मान लने का मेरा कोई प्रयोजन नहीं है, क्योंकि मेरे तथाकथित अराष्ट्रीयता की जिम्मेदारी मुझ पर न होकर, मुझे अराष्ट्रीय कहने वाले लोगों पर तथा उस राष्ट्र पर है। मेरे पाप के भागीदार वे हैं, मैं नहीं। मेरे पास मातृभूमि नहीं है लेकिन सद्सद विवेक बुद्धि है.......... मेरे हाथ से आपके कहने के अगर सचमुच कोई राष्ट्र सेवा हुई है, तो उसका श्रेय मेरे दिल में समायी राष्ट्रभक्ति न होकर, मेरी सद्विवेक बुद्धि पर की भक्ति को है। जिस राष्ट्र में मेरे अस्पृश्य बन्धुओं की मनुष्यता धूल की भांति रौंद दी जाती है, उस मनुष्यता को प्राप्त करने के लिए उस राष्ट्र का मैं कितना भी नुकसान करूँ, वह पाप नहीं पुण्य होगा। उस राष्ट्र का अगर मैंने नुकसान नहीं किया है, या नहीं करने वाला हूँ तो उसका श्रेय मेरी सद्प्रसद विवेक बुद्धि को है।''

बाबा साहेब के इस तीखे ओर सुस्पष्ट गर्मागर्म भाषण से गांधी जी के आवास का सम्पूर्ण वातावरण अत्यन्त गंभीर हो गया। वार्ता के समय उपस्थित सभी महानुभाव भी गंभीर हो गए। गांधी जी ने वार्तालाप को दूसरी ओर मोड़ना चाहा, लेकिन बाबा साहेब ने अपनी बात आगे जारी रखी। "सभी को ज्ञात है कि मुसलमान और सिक्ख अपेक्षाकृत अछूतों के सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक क्षेत्र में आगे हैं। प्रथम गोलमेज सम्मेलन में मुसलमानों को राजनैतिक सुरक्षा प्रदान की गई थी। कांग्रेस उनकी मांग को स्वीकर कर ली थी। प्रथम गोलमेज सम्मेलन में अस्पृश्यों का अल्पसंख्यकों मे अन्तर्भाव किया गया है और राजनैतिक दृष्टि से इन्हें मुसलमान, सिक्ख आदि के समान स्वतन्त्र घटक के रूप में स्वीकार किया गया है। उन्हें सुविधाएं और आवश्यकतानुसार प्रतिनिधित्व देने के विषय में सिफारिश की गई है। हमारे मतानुसार वह हमारे लिए हितकर है। इस सम्बन्ध में आपका मत क्या है?"

डा0 अम्बेडकर के इस प्रश्न पर गांधी जी ने उत्तर दिया कि "अस्पृश्य समाज हिन्दू समाज का एक अंग है और उसके हिन्दुओं से अलग करने के मैं खिलाफ हूँ। उन्हें पृथक आरक्षित सीटें देने के भी मैं खिलाफ हूँ।"[1]

गाँधी जी के इस वक्तव्य से बाबा साहेब बहुत दुःखी हुए और कहे– "आपका यह मत प्रत्यक्षता आपके मुख से मालुम हुआ, अच्छा हुआ। मैं आपसे विदा लेता हूँ।"[2]

बाबा साहेब यह कहते हुए और गांधी जी को प्रणाम करके मणि भवन से प्रस्थान किए। इस प्रकार बाबा साहेब और गाँधी जी की यह प्रथम मुलाकात कडुता भरे गंभीर वातावरण में समाप्त हुई। यह बात गाँधी जी की कल्पना की सीमा के बाहर थी

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 166

[2] जनता, 17 अगस्त 1931

कि एक हिन्दू नेता इस तरह मुंहतोड़ ओर कटुता से युक्त प्रत्युत्तर उनसे करे। यह मुलाकात मानो अम्बेडकर और गाँधी जी के बीच हुए युद्ध की पहली सलामी ही थी।[1]

डा0 अम्बेडकर और गांधी जी की यह वार्ता सम्पूर्ण देश में विशाल चर्चा का विषय बनी। इससे एक बात तो स्पष्ट हो गई कि डा0 अम्बेडकर का चिन्तन जितना बुनियादी है, उतना ही निर्भीक और स्वाभिमानी भी है।[2] बाबा साहेब के कार्यों, चिन्तन, संघर्ष से विवश होकर गाँधी जी ने उनसे मिलने का निर्णय लिया था। इस वार्ता से एक बात और स्पष्ट हो गई कि डा0 अम्बेडकर ही अस्पृश्यों के वास्तविक राजा है।

इस बीच द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए सभी आमंत्रित सदस्य लंदन जाने की तैयारी करने लगे। बाबा साहेब को विदा करने के लिए बम्बई के कावासाजी जहाँगीर सभागृह में एक सभा आयोजित की गई, जिसमें भाषण देते हुए बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि दलित वर्ग की समस्याओं को रखने एवं उनके हितों के संरक्षा की जो जिम्मेदारी मेरे ऊपर आई है, उसे मैं पूर्ण मनोयोग से पूर्ण करूँगा।

बाबा साहेब 15 अगस्त 1931 को मुंम्बई से एस0एस0 मुल्तान नामक जहाज से लन्दन के लिए रवाना हुए। गाँधी जी थोड़ा विलम्ब से 29 अगस्त को एस0एस0 मुल्ताना जहाज से प्रस्थान कर 12 सितम्बर को लन्दन पहुंचे। तब तक द्वितीय गोलमेज सम्मेलन आरम्भ हो चुका था। इस सम्मेलन में भी प्रथम गोलमेज सम्मेलन में स्थापित सभी समितियां कार्य कर रही थीं। 17 सितम्बर से सम्मेलन आरम्भ हुआ। डा0 अम्बेडकर को संघी संरचना समिति, अल्प संख्यक समिति सहित अनेक समितियों का सदस्य बनाया गया। अनेक समितियों में कार्य करने के दौरान डा0 अम्बेडकर का गाँधी जी के साथ गंभीर मतभेद पैदा हुआ। संघीय ढांचा समिति में 15 सितम्बर 1931 को गांधी जी ने अपना पहला भाषण दिया, जिसमें अस्पृश्यों की समस्या पर अपना वक्तव्य इस प्रकार दिया– "कांग्रेस ने अस्तित्व में आते ही अस्पृश्यों की समस्या अपने हाथों में ले ली है। कोई समय था जबकि सामाजिक सम्मेलन कांग्रेस के वार्षिक अधिवेशनों का प्रमुख अंग

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 166
[2] डा0 राजेन्द्र भटनागर, वही, पृ0सं0– 71

हुआ करता था, जिसके लिए स्व0 रानाडे ने अपनी शक्ति लगा दी थी। अस्पृश्यों से सम्बन्धित सुधार के विषय को प्रमुख स्थान दिया गया था। परन्तु 1920 में कांग्रेस ने अस्पृश्यता निवारण के प्रश्न के लिए बड़ा कदम उठाया, जिससे कि अस्पृश्यता निवारकण कांग्रेस मंच का एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम बन जाए। कांग्रेस ने सभी वर्गों में एकता लाने के लिए हिन्दू और मुस्लिम एकता को स्वराज्य प्राप्त करने के लिए जितना आवश्यक समझा, उतना ही सभी वर्गों में एकता और अस्पृश्यता निवारण पर बल दिया था। कांग्रेस की अस्पृश्यों के हित में जो स्थिति 1920 में थी वही आज भी है। इस प्रकार आप देखेंगे कि कांग्रेस ने शुरू से ही राष्ट्रीय हित के प्रश्नों पर कार्य किया है।"[1] उसी दिन डा0 अम्बेडकर ने संघीय समिति में अपना भाषण दिया था जिसमें उन्होंने स्पष्ट किया था कि "रियासतों की मांगे अंधेपन से यह समिति स्वीकार नहीं गरेगी।"[2] संघीय ढाँचा समिति की 17 सितम्बर की बैठक में समिति की 17 सितम्बर की बैठक में समिति के सदस्यों के चुनाव का बिन्दु भी था। इस विषय में गाँधी जी के निम्न विचार थे– "मैं इस 34 शीर्ष (पांच) विशेष हितों में विशेष निर्वाचन क्षेत्रों द्वारा प्रतिनिधित्व पर आता हूँ। मैं कांग्रेस के पक्ष में बोलूँगा। कांग्रेस ने हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख एकता पर विशेष जोर दिया है। इसके लिए ठोस ऐतिहासिक कारण है, परन्तु कांग्रेस किसी भी रूप में इस सिद्धान्त को जारी नहीं रखेगी। मैंने विशेष हितों की सूची सुनी है। जहां तक अस्पृश्यों का सम्बन्ध है, मैं पूरी तरह से सही समझ गया था कि डा0 अम्बेडकर क्या कहना चाहते हैं, परन्तु अस्पृश्यों के हित में उनके प्रतिनिधित्व के लिए कांग्रेस डाक्टर के साथ है। अस्पृश्यों के हित कांग्रेस के सामने उतने ही स्पष्ट हैं, जितने पूरे देश के किसी अन्य व्यक्ति को स्पष्ट हो सकते हैं। अतः किसी ओर विशेष प्रतिनिधित्व का मैं पूरी तरह से विरोध करूँगा।[3]

---

[1] बाबा साहेब सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृ0सं0– 62

[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 171

[3] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड– 16, पृ0सं0– 63।

गाँधी जी का यह वक्तव्य अस्पृश्य समाज के प्रति उनके सम्पूर्ण विचारों का प्रतिबिम्ब है। श्री गाँधी की योजना थी कि हिन्दू, मुसलमान और सिक्खों में समझौता कराकर साम्प्रदायिक समस्या का पटाक्षेप करते हुए अस्पृश्यों को अलग छोंड़ दिया जाए। बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने अल्पसंख्यक समिति की 28 सितम्बर 1931 को हुई 7वीं बैठक में अपना मत रखते हुए कहा– बैठक के स्थगित होने से पहले मैं एक बात कहना चाहता हूँ । जहाँ तक आपके सुझाव का प्रश्न है कि अन्य अल्पसंख्यक वर्ग के साथ अपना–अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिए बातचीत चल रही है, मैं यह कहना चाहता हँ कि जहाँ तक दलित वर्ग का सम्बन्ध है, हम अपना पक्ष पिछलीबार अल्पसंख्यक उप समिति को प्रस्तुत कर चुके हैं.......... जो लोग समझौता कर रहे हें, उनको यह जान लेना चाहिए कि उन्हें कोई अधिकार प्राप्त नहीं है। श्री गाँधी के कांग्रेस के लोग, चाहे जिसके भी प्रतिनिधि हों, वह हमें बाध्य कर रखने की स्थिति में नहीं है, बिल्कुल भी नहीं। मैं इस बैठक में अधिक से अधिक जोर देकर कह रहा हूँ।"[1]

इस प्रकार अपने इस बयान में बाबा साहेब ने गाँधी और उनके कांग्रेस की कटु आलोचना की यद्यपि इस सातवीं बैठक के पूर्व सन्ध्या पर गाँधी जी के बेटे देवदास गाँधी ने मध्यस्तता कर दोनो में बातचीत भी कराई थी। यह बातचीत सरोजनाइडू के आवास पर हुई थी, लेकिन इस वार्ता का कोई सकारात्मक परिणाम सामने नहीं आया। बाबा साहेब को ऐसा लगा कि गाँधी जी ने अपना अन्तःकरण नहीं खोला है।[2]

अल्पसंख्यक समिति की बैठक 1 अक्टूबर को पुनः आरम्भ हुई। बैठक के आरम्भ में गाँधी जी ने कहा– "प्रधानमंत्री जी पिछली रात आगा खाँ तथा अन्य मुस्लिम नेताओं से वार्तालाप करने के पश्चात् हम इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि जिस उद्देश्य से यहां एकत्र हुए हैं, उस निर्णय में एक सप्ताह का स्थगन काल होना चाहिए। इस विषय में मुझे अपने साथियों से विचार करने का कोई समय नहीं मिला।" गांधी जी के इस प्रस्ताव का आगा खाँ सहित अनेक सदस्यों ने समर्थन किया लेकिन बाबा साहेब ने

---

[1] प्रोसीडिंग्स ऑफ द फडरल स्ट्रक्चरल कमेटी ऐण्ड माइनारिटीज कमेटी, पृ0सं0– 1335–38।
[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 174

इसका विरोध किया। डा0 अम्बेडकर ने कहा– "धन्यवाद परन्तु पता नहीं है कि आज मैं जिस स्थिति में हूँ, उसमें क्या प्रस्तावित समिति में काम करने में मुझे कोई लाभ होगा। जो इस संघीय ढांचा समिति के सामने यह कह चुके हैं कि वह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रतिनिधि होने के नाते मुसलमानों और सिखों के अतिरिक्त किसी दलित वर्गों और भारतीय इसाइयों को राजनैतिक मान्यता देने के लिए तैयार नहीं हैं........... मैं कहना चाहूँगा कि जब तक दलित वर्गों को उस अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में मान्यता नहीं होगी तब तक मैं यही समझता हूँ कि इस संबन्ध में श्री गाँधी द्वारा प्रस्तावित कमेटी में शामिल होने से कोई मतलब हल नहीं होगा। इसलिए जब तक हमें आश्वासन नहीं मिल जाता कि समिति इस ढंग से कार्य करती है कि सभी समुदाय जिनके लिए पिछले वर्ष अल्पसंख्यक उप–समिति ने भारत के भावी संविधान में शामिल करने की सिफारिश की थी, मैं नहीं समझता कि मैं सथगन के प्रस्ताव का समर्थन हृदय से कर सकूँ।"

बाबा साहेब के इस आपत्ति का स्पष्टीकरण देते हुए गाँधी जी ने कहा– "प्रधानमंत्री और मित्रो– मैं समझता हूँ कि हम लोगों ने अपने कार्य की जो रूप–रेखा बनाई है, उसके विषय में कुछ लोगों को भ्रम है। मैं सोचता हूँ कि डा0 अम्बेडकर, कर्नल गिडेन तथा अन्य मित्रगण जो कुछ होने जा रहा है उससे बिना बात परेशान हो रहे हैं। किसी भी वर्ग के राजनैतिक हितों को नकारने वाला मैं कौन होता हूँ। यदि मैं एक भी राष्ट्रीय हित की अनदेखी करता हूँ, तो मैं उस विश्वास के योग्य नहीं हूँ जो कांग्रेस ने मुझमें कांग्रेस का प्रतिनिधि होने के नाते प्रकट किया है।........... मैंने केवल राष्ट्रहित में अपने विचार प्रकट किये थे और जब–जब अवसर आएगा, मैं अपने विचार पेश करूँगा।[1]

गाँधी जी का एक सप्ताह का कार्य स्थगन प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया, इस विश्वास के साथ कि एक सप्ताह में आपसी विचार विमर्श कर समस्या का निर्णायक समाधान हो जाएगा। वार्ता सफल नहीं हो पाई और 8 अक्टूबर को अल्पसंख्यक समिति की बैठक में गाँधी जी ने आरम्भ में स्थिति स्पष्ट करते हुए कहा– "प्रधानमंत्री और

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड--16, पृ0सं0– 68

मित्रो! बड़े खेद और दुःख के साथ मुझे कहना पड़ रहा है कि विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधियों के मध्य आपसी वार्तालाप के द्वारा साम्प्रदायिक प्रश्न को पारस्परिक सहमति के आधार पर हल करने की दिशा में एकदम नाकाम रहा.......... मुझे धैय और सन्तोर्ष इसी बात पर है कि मैंने इसका हल ढूंढ़ने निकालने में कोई कसर नहीं उठा रखी। .... मेरी असफलता का अर्थ यह नहीं है कि साम्प्रदायिक समस्या का सर्वमान्य हल तलाश करने की सभी आशाएं धूमिल हो गई हैं। मेरी असफलता का अर्थ मेरी घोर पराजय भी नहीं है। मेरे शब्दकोष में ऐसा शब्द है ही नहीं। .... इसलिए मेरा सुझाव है कि अल्पसंख्यक समिति अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दी जाए।''

इसी बैठक में बाबा साहेब ने अपने भाषण में कहा– ''प्रधानमंत्री जी पिछले रात जब औपचारिक बैठक की समाप्ति के बाद हम लोग बैठक से विदा हुए थें तो हम सबकी कम से कम यह राय थी कि जब हम लोग अगली बैठक में शामिल होंगे, तो हममें से कोई भी इस प्रकार का भाषण नहीं देगा जिसमें आरोपों की भावना हो। मुझे यह देखकर अफसोश होता है कि श्री गाँधी जी ने उस आपसी समझौते का गला घोंट दिया। मुझे क्षमा करें, मुझे यह कहने का मौका मिला है कि श्री गाँधी ने वहीं से अपनी बात प्रारम्भ की जो उनकी नजर में असफलता का कारण था।........... अल्पसंख्यक समिति की बैठक अनिश्चित काल तक स्थगित करने के प्रसताव में भी श्री गाँधी की जो बाते मुझे खटकी, वह यह थी कि उन्होंने अपनी सीमाएं लाँधी, उन्होंने अपने को अपनी स्थिति में सीमित नहीं रखा, उन्होंने विभिन्न सम्प्रदायों के प्रतिनिधियों पर जो यहाँ गोलमेज सम्मेलन में बैठे थे, छीटाकशी की। श्री गाँधी ने कहा था कि सभी प्रतिनिधि सरकार द्वारा नामजद किए गए हैं और वे अपने संबन्धित समुदाय का प्रतिनिधित्व नहीं करते। हम इस बात से इन्कार नहीं करते हैं कि हम सरकार द्वारा नामजद किए गए हैं, परन्तु जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, इस बात में तनिक भी संदेह की गुंजाइश नहीं है कि यदि इस सभा के लिए दलित वर्ग को अपने प्रतिनिधि चुनने का अवसर दिया जाता तो निश्चय ही मैं ही यहाँ चुनकर आता।.......... गांधी जी हमेशा से यह दावा करते आए हैं कि कांग्रेस दलित वर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं, जितना मैं तथा मेरे साथी नहीं कर सकते। इस दावे के

विषय में इतना ही कह सकता हूँ कि यह भी एक ऐसा दावा है जो गैर--जिम्मेदार लोग करते हैं या किया करते हैं, हांलाकि जो लोग इनसे सम्बन्धित हैं, वे इन दावों को लगातार अस्वीकार करते रहे हैं।"

.... गाँधी जी ने जो मुख्य बात रखी वह यह थी कि यह समिति अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दी जाए। इस प्रस्ताव के सम्बन्ध में मैं पूर्णता सर मुहम्मद शफी के विचारों से सहमत हूँ। इसके लिए केवल दो विकल्प हैं– या तो अल्प संख्यक कमेटी कोई हल खोजे और यदि संभव न हो तो ब्रिटिश सरकार इस समस्या का समाधान स्वयं करे। हम ऐसे किसी तीसरे दल के पंच–निर्णय पर इसे छोड़ देने के लिए सहमत नहीं हो सकते, जिसका ब्रिटिश सरकार जेसा जिम्मेदाराना भाव न हो।"[1]

गतिरोध पैदा हो जाने के कारण द्वितीय गोल मेज सम्मेलन सफल नहीं हो सका और दिसम्बर 1931 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने सम्मेलन के समाप्ति की घोषणा कर दी। इस सम्मेलन में अनेक समितियों के कार्य करने के दौरान बाबा साहेब और गाँधी जी में तीव्र मतभेद पैदा हुए और अनेक बार झड़पें भी हुई। बाबा साहेब ने सम्मेलन के दौरान ब्रिटेन और भारत के कई समाचार पत्रों में अपना वक्तव्य देकर पूरी स्थिति को स्पष्ट करने का प्रयास किया था। भारत के प्रमुख समाचार पत्र टाइम्स ऑफ इण्डिया को लिखकर 12 अक्टूबर के पत्र में लिखा– "मुसलमानों के साथ सौदा करते समय उनकी 14 सूत्रीय मांगे स्वीकार करने के बारे में गाँधी जी ने जो शर्तें लगाई थी, उनमें एक शर्त यह थी कि अस्पृश्य वर्ग और अन्य छोटे अल्पसंख्यक गुटों की मांगों का मुसलमान विरोध करें।.......... उन मांगों को अस्वीकार करने के लिए तैयार होने वालों को खरीदना यह नीति हमारी राय में महात्मा को शोभा नहीं देती।"[2]

बाबा साहेब द्वारा गाँधी जी का तीव्र विरोध करने के कारण उन्हें भारत में एक बड़े विरोध का सामना करना पड़ा। कांग्रेस समर्थक समाचार पत्रों एवं मनुवादियों ने बाबा साहेब पर तीव्र हमला किया। बाबा साहेब को शैतान, जनता के दुश्मन नम्बर एक,

---

[1] प्रोसीडिंग्स ऑफ द फेडरल स्ट्रक्चरल कमेटी एंड माइनारटीज कमेटी, पृ0सं0 1356

[2] टाइम्स ऑफ इण्डिया, 12 अक्टूबर 1931

ब्रिटिश सरकार का पिट्ठू, देशद्रोह, हिन्दू धर्म का दुश्मन आदि निन्दनीय शब्दों का प्रयोग किया गया। टाइम्स ऑफ इण्डिया ने 18 अगस्त 1931 को लिखा– " The times of India wrote in defumce of Gandhi that though Amedakar conuenced of the insincere attitude of the congress toward the grievances of the untouchables, what can the poor Mahatma do when the whole country simply believes in untouch ability."[1]

डा0 अम्बेडकर के विरुद्ध भारत में बड़े रोषपूर्ण वातावरण का निर्माण हुआ था। टी0ए0 रामन नाम के एक प्रसिद्ध भारतीय संवाददाता को जहाज के एक सहयात्री ने कहा कि "अगर मैंने कभी किसी की हत्या की तो वह व्यक्ति डा0 अम्बेडकर होगा" दूसरे किसी भी 10 व्यक्तियों की अपेक्षा लोग अम्बेडकर के ही बारे में अधिक बुरा बोलते हैं।"[2] बाबा साहेब और गाँधी जी के विवाद पर प्रकाश डालते हुए ग्लोर्न वाल्टन नामक ग्रन्थकार कहते हैं– "अम्बेडकर की कीर्ति दिन प्रतिदिन बढ़ रही. थी। भारत के अस्पृश्यों का पक्ष प्रस्तुत करने के साथ मजदूर दल अथवा समाजवादी दल की सभाओं में अस्पृश्यों की भयावह दुःखद स्थिति का वे उल्लेख करने लगे। उस मामलें में व्यवहार की अपेक्षा भावना पर अधिक बल था अस्पृश्यों के प्रतिनिधि के रूप में गांधी जो इंग्लैण्ड में हरएक व्यासपीठ पर प्रशंसा प्राप्त कर सकते थे, लेकिन अम्बेडकर ने उनकी सभाओं का रंग बेरंग कर दिया। शुरू–शुरू में मुसलमानों को ही गाँधी जी की धज्जियाँ उड़ती देखकर संतोष होता था, लेकिन बाद में प्रत्येक प्रतिनिधि को तहेदिल से यह लगने लगा कि अम्बेडकर अब गाँधी जी के लौकिक अनुरूप बर्ताव करे तो ठीक होगा। सिर्फ लार्ड रिडिंग ही अम्बेडकर के झगड़े की ओर सहानुभूति से देख रहे थे।"[3]

देश में एक वर्ग द्वारा बाबा साहेब की कटु आलोचना हो रही थी तो अस्पृश्य वर्ग द्वारा उनका व्यापक समर्थन किया जा रहा था। अस्पृश्य समुदाय ने गाँधी जी का प्रबल विरोध किया। लन्दन से भारत लौटने पर 28 दिसम्बर 1931 को मुंबई

---

[1] टाइम्स ऑफ इण्डिया, 12 अक्टूबर 1931
[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 181
[3] Bolton, Glormey, the tragedy of Gandhi, P.P. 266-267

बन्दरगाह पर हजारों अस्पृश्यों ने काले झण्डे दिखाए, जबकि उस समय गाँधी जी का भव्य स्वागत हो रहा था। गाँधी समर्थकों और अस्पृश्य वर्ग के मध्य समर्थन–विरोध को लेकर बन्दरगाह पर खूनी संघर्ष हो गया। अहिंसा के पोषक गाँधी जी का यह देव दुर्लभ स्वागत स्वदेश में इस तरह हुआ।[1]

बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर 29 जनवरी 1932 को मुम्बई बन्दरगाह पर उतरे जहाँ हजारों–हजारों अस्पृश्य नर–नारियों ने फूलों की वर्षा कर अपने मसीहा का भव्य स्वागत किया। इस उत्साह भरे वातावरण में अपना बैरभाव भूलकर गाँधीवादी पी0बालू और नारायणराव काजलेकर ने भी बाबा साहेब का स्वागत किया। उसी दिन 114 संस्थाओं ने बाबा साहेब को एक मानपत्र दिया जिसमें कहा गया था– समानता का दर्जा और बतार्व पर हमारे अधिकारों को आपने पूरी तरह से साबित किया है। आपकी वीरता के अभाव में हमारे अधिकारों की ओर ध्यान नहीं दिया गया होता। हमारे हितों और अधिकारों की रक्षा के लिए आपने मानवीय प्रयत्नों की पराकाष्ठा की है।[2]

इस बीच देश में यह आम चर्चा थी कि ब्रिटिश प्रधानमंत्री भारत की जातीय समस्या पर शीघ्र ही निर्णय लेने वाले हैं। गोल मेज सम्मेलन में जातीय समस्या पर कोई आम सहमति नहीं बन पाई थी और यह दायित्व ब्रिटिश प्रधानमंत्री पर छोंड़ दिया गया था कि वे उचित निर्णय लें। महात्मा गाँधी ने 11 मार्च 1932 को जेल (यर्वदा) से पत्र लिखकर भारत मंत्री सैमुअल होर को अपना पहले वाला विरोध प्रकट किया कि अस्पृश्य वर्ग को पृथक निर्वाचन प्रणाली न दिया जाए और कहा यदि दलितों का पृथक मतदान स्वीकार किया जाता है तो मैं अपने प्राणों की बाजी लगाकर इसका विरोध करूँगा।[3] गाँधी जी की इस धमकी का ब्रिटिश प्रधानमंत्री पर असर हीं हुआ और उन्होंने 17 अगस्त 1932 को अपना महत्वपूर्ण कम्यूनल अवार्ड (साम्प्रदायिक पंचाट) घोषित कर दिया। बाबा साहेब का वर्षों का प्रयास सफल रहा। अस्पृश्य वर्ग को पृथक निर्वाचन

---

[1] कीर, धनंजय वही, पृ0सं0– 188
[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 191
[3] बाबा साहेब, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड– 16, पृ0सं0– 83

प्रणाली अन्य अल्पसंख्यक वर्गों की भाँति प्राप्त हुई। अस्पृश्यों को पृथक अल्पसंख्यक वर्ग माना गया। उन्हें दोहरे मतदान के अधिकार प्राप्त हुए। एक तो आरक्षित सीटें देकर उन्हें अपना प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया गया, दूसरे उन्हें स्पृश्य हिन्दुओं के प्रतिनिधियों के चुनावों में भी वोटे देने का अधिकार दिया गया। इस पंचाट में व्यवस्था की गई कि "मतदान करने वाले दलित वर्ग के सदस्य सामान्य निर्वाचन क्षेत्र में मतदान करेंगे। इस तथ्य को दृष्टि में रखते हुए इसएक मात्र साधन के द्वारा एक वर्ग काफी लम्बी अवधि तक किसी विधान मंडल मे कोई पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं कर सकेंगे, उनके लिए विशेष स्थानों की व्यवस्था करनी पड़ेगी।"[1]

ब्रिटिश प्रधानमंत्री रेम्ज मैकडोनल के इस साम्प्रदायिक निर्णय ने देश की राजनीति में भूचाल ला दिया। कांग्रेस सहित अनेक दलों तथा उनके समर्थक समाचार पत्रों ने इसकी निंदा की। बाम्बे क्रानिकल ने लिखा – "निर्णय की मुख्य चालबाजी राष्ट्रीय बहु संख्यक हिन्दू समाज को अल्प संख्यक बनाना ही है।"[2] महात्मा गाँधी ने यर्वदा जेल से तत्काल 18 अगस्त को ब्रिटिश प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर कड़ा विरोध प्रकट किया।

प्रिय मित्र!

इसमें कोई शक नही है कि दलितों के प्रतिनिधित्व के बारे में सर सैमुअल होर ने मेरा 11 मार्च का पत्र आपको तथा आपके मंत्रिमण्डल को दिखा दिया होगा...... मैं आपके निर्णय के विरोध में अपने प्राणों का बलिदान कर दूँगा। ऐसा करने के लिए केवल एक रास्ता है कि मैं नमक और सोडा पानी के अतिरिक्त कुछ न लेकर आमरण अनशन करूँ। .... प्रस्तावित अनशन आमतौर से 20 सितम्बर के दोपहर से आरम्भ होगा।[3]

ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने निर्णय पर पुनर्विचार करने से इन्कार कर दिया, परिणाम स्वरूप निर्धारित समय 20 सितम्बर 1932 से गाँधी जी ने यर्वदा जेल में अपना

---

[1] संसदीय प्रालेख, क्रमांक 4147
[2] बम्बई क्रानिकल, 18 अगस्त 1932
[3] बाबा साहेब सम्पूर्ण बाङमय खण्ड 16 पृ0सं0232

आमरण अनशन आरम्भ किया। श्री प्यारेलाल ने अपनी पुस्तक द एपिक फास्ट मे गाँधी जी के अनशन पर विस्तार से प्रकाश डाला है। गाँधी जी को यद्यपि स्वयं आशंका थी कि उनके अपने समर्थन की इसे प्रसन्न न करें, फिर भी उन्होंने यह ऐतिहासिक कदम उठाया।

गाँधी जी के आमरण अनशन की पूर्व सन्ध्या पर डा0 अम्बेडकर ने विस्तृत पत्र जारी करके अनशन के औचित्य पर प्रकाश डाला। उन्होंने लिखा– समाचार पत्रों में छपे श्री गाँधी और सर सैमअल होर तथा प्रधानमंत्री के मध्यहुए पत्र व्यवहार पर मुझे कुछ कहने की आवश्यकता नही है.......... श्री गाँधी ने आमरण अनशन करने का संकल्प व्यक्त किया है, उसे पढ़ कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ है। श्री गाँधी ने इस प्रकार की घोषणा कर मुझे जिस नाजुक परिस्थिति में डाल दिया है, उसकी सहज में ही कल्पना की जा सकती है।

..... मैं सोंचता हूँ कि श्री गाँधी जिन्होंने गोलमेज सम्मेलन में साम्प्रदायिक प्रश्न से उत्पन्न इसका मुद्दे को व्यापक विषय की छोटी सी बात कहा था, जान की बाजी कैसे लगा बैठे। यदि श्री गाँधी इतना बड़ा कदम देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए उठाते, तो इका औचित्य होता, जिसके लिए वह गोलमेज सम्मेलन में बराबर बल देते रहे। यह भी दुःखद आश्चर्य है कि सामूहिक निर्णय में दलित वर्गों के लिए दिए गए विशेष प्रतिनिधित्व को ही अलग करके आत्म बलिदान का बहाना बना ले रहे हैं।......... श्री गाँधी अमर व्यक्ति नहीं है और कांग्रेस पर कोई ऐसा नैतिक दबाव नहीं है, जो उनकी बात सदैव ब्रह्मवाक्य मानकर चले। भारत में बहुत से महात्मा आए जिनका एक मात्र उद्देश्य अस्पृश्यता मिटाना और अस्पृश्यों का उद्धार करना था। सभी महात्माओं को असफलता हाथ लगी। महात्मा लोग आए और चले गए लेकिन अस्पृश्य सदैव अस्पृश्य ही बने............ मुझे आशा है कि श्री गाँधी ने जो अतिवादी कदम उठाने की ठानी है, वह उसका विचार छोंड़ देंगे.......... श्री गाँधी मुझे इस बात के लिए बाध्य नहीं करेंगे कि मैं

उनके जीवन तथा अपने निस्सहाय लोगों के अधिकारों में से किसी एक को चुनूँ, क्योंकि भविष्य मे अपने लोगों की आने वाली पीढ़ियों को हथकड़ी और बेड़ी में जकड़कर पड़े रहने के लिए मैं कभी नहीं करूँगा।"[1]

गाँधी जी के अनशन से सम्पूर्ण देश में एक भूचाल सा आ गया। देश के सम्मुख सबसे बड़ी समस्या थी कि गाँधी जी के प्राण कैसे बचाए जाएं। उनके प्राण बचाने का एक ही उपाय था कि साम्प्रदायिक पंचाट को समाप्त कर दिया जाए। ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने स्पष्ट कर दिया कि ब्रिटिश मंत्रिमंडल उसे वापस नहीं लेगा और न ही अपने आप कोई परिवर्तन करेगा परन्तु वे किसी ऐसे सिद्धान्त को जो सवर्ण हिन्दू और अस्पृश्यों को मान्य हो उसके स्थान पर लाने को तैयार हैं।

कई राजनीतिज्ञों ने अनशन को राजनैतिक आन्दोलन की सही राह से विमुख होना कहा। प्रारम्भ में पं0 जवाहर लाल नेहरू की प्रतिक्रिया थी "इस तरह के सुरक्षित और पवित्र काम को बृद्ध महिलाओं के लिए छोंड़ देना चाहिए।"[2] लेकिन आरम्भिक आलोचना के बाद तत्काल पूरे देश का वातावरण गंभीर हो गया। गाँधी जी के प्राणों की रक्षा के लिए पूरे देश में बेचैनी व्याप्त हो गई। गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर ने गाँधी जी को संदेश भेज कर कहा– "भारत की एकता और उसकी सामाजिक अखण्डता के लिए यह उत्कृष्ट बलिदान है। हमारे व्यथित हृदय आपकी इस महान तपस्या का आदर और प्रेम के साथ अनुकरण करेंगे।"[3]

पं0 मदन मोहन मालवीय ने अनशन आरम्भ होने की पूर्व सन्ध्यापर ही एक पत्रक निकाल कर स्पष्ट किया कि गाँधी जी के प्राणों की रक्षा के लिए 19 सितम्बर को मुम्बई में एक सम्मेलन आयोजित करेंगे। इस सम्मेलन में डा0 राजेन्द्र प्रसाद, ठक्कर बागा, डा0 सी0डी0 देशमुख, वीर सावरकर, पी0वालू, कमला नेहरू, सी0 गिडवानी, तेजबहादुर सपरू, एम0सी0राजा, सीतल्खाड सहित डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, डा0 मुंजे

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृ0सं0– 323
[2] प्रो0 विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ0सं0– 264
[3] प्रो0 विपिन चन्द्र, वही, पृ0सं0– 264

तथा डा0 सोलंकी ने भी भाग लिया।[1] सेठ बालचन्द्र हीराचन्द्र ने सम्मेलन के अध्यक्ष मदन मोहन मालवीय से आग्रह किया कि डा0 अम्बेडकर को बोलने का अवसर दें। डा0 अम्बेडकर ने गंभीर आवाज में अपनी बात रखी— "यह अफसोस की बात है कि गाँधी जी अस्पृश्यों के हित के खिलाफ प्राणान्तक अनशन करें। यह ठीक है कि गाँधी जी अस्पृश्यों के अमूल्य प्राण बचाने के लिए प्रत्येक व्यक्ति भरसक प्रयत्न करें। परन्तु गाँधी जी द्वारा दूसरी योजना स्पष्ट न सुझाये जाने के कारण इस घटना से मार्ग निकालना मुश्किल हो गयाहै। गाँधी जी की ओर से आप दूसरी योजना लाए, तो उस पर विचार किया जाएगा परन्तु एक बात अटल है कि केवल गाँधी जी के प्राण बचाने के लिए मेरे भाइयों के हित के खिलाफ जो योजना होगी, उस योजना मे मैं शरीक नहीं होऊँगा।[2]

एक शिष्टमंडल जेल जाकर गाँधी जी से विचार—विमर्श करेगा, यह कहकर परिषद स्थगित कर दी गई— कल तक के लिए। चुन्नीलाल की अध्यक्षता में एक प्रतिनिधि मण्डल जेल में गाँधी जी से मिला और बाबा साहेब के विचारों से उन्हे अवगत कराया। 20 सितम्बर को पुनः परिषद आरम्भ हुई। शिष्टमण्डल के नेता चुन्नीलाल ने परिषद को बताया कि अस्पृश्यों के लिए आरक्षित सीटें देने के बारे में गाँधी जी का व्यक्तिगत विरोध नहीं है। उनका विरोध केवल अस्पृश्य समाज को हिन्दू समाज से पृथक करने को लेकर है। सम्मेलन के नेताओं ने डा0 अम्बेडकर का मत जानना चाहा। बाबा साहेब ने कहा— मैं घटना का खलपुरुष बनूँ, यह मेरा नसीब ही नहीं लेकिन आप ध्यान रखें कि मैं अपने पुनीत कर्तव्य से तनिक भी टस से मस नहीं होऊँगा। मेरे अस्पृश्य वर्ग के न्याय और विधिक अधिकारों का नाश मैं नहीं करूँगा, फिर भले ही आप मुझे नजदीकी बिजली के खंभे पर फांसी दे दें। अच्छा हो आप गाँधी जी से निवेदन करें कि वे अपना अनशन एक सप्ताह के लिए स्थगित कर दें और समस्या का समाधान ढूढ़ें।[3]

---

[1] डा0 राजेन्द्र मोहन भटनागर, डा0 अम्बेडकर जीवन दर्शन, पृ0सं0— 19

[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0— 202।

[3] वही, पृ0सं0— 202।

पूरे देश में डा0 अम्बेडकर विरोधी वातावरण बन रहा था। यही नहीं कुछ लोगों ने पत्र लिखकर बाबा साहेब की हत्या करने तक की धमकी दी। उन्हें देशद्रोही, अंग्रेजो का पिठ्ठू, शैतान, मानवता का दुश्मन आदि पूरे जोर–शोर से कहा गया। समाचार पत्रों में उनके विरुद्ध कठोर, निन्दनीय समाचार प्रकाशित किए जाने लगे। बम्बई क्रानिकल में जी0जी0 डार्निमन ने रोषपूर्ण लेख लिखा– " अम्बेडकर यह मानकर न चलें कि समस्त अस्पृश्य वर्ग उनकी मुठ्ठी में हैं....... अगर ऐसे संकट के समय अम्बेडकर ने अपना अहंकार और रूखापन दूर नहीं रखा तो एकाकीपन में ही उन्हें दिन व्यतीत करने पड़ेंगे, यह वे ध्यान रखें।"

बाबा साहेब पर गाँधी जी के प्राणों की रक्षा के लिए लगातार दबाव पड़ रहा था। मदन मोहन मालवीय, सरदार पटेल, राजेन्द्र प्रसाद, सपू आदि नेता वार्ता में गतिरोध के बावजूद डा0 अम्बेडकर से लगातार वार्ता करते रहे। अंततः 21 सितम्बर को सायंकाल बाबा साहेब, जयकर, बिडला, चुन्नीलाल मेथा और राजगोपालाचारी के साथ गाँधी जी से मिलने यर्वदा जेल गए। भारतीय इतिहास की यहएक असाधारण घटना थी। गाँधी जी उस समय लोहे की चारपाई पर चटाई बिछाए लेटे थे। विश्व के अत्यन्त श्रेष्ठ कर्मवीर नेता के साथ उस समय के अत्यन्त रहस्यवादी और प्रभावी पुरुष के साथ रूढ़िभंजक, मूर्तिभंजक और क्रांतिकारी अम्बेडकर का सामना हुआ था।[1] गाँधी जी के पास सरोजनी नाइडू, और सरदार पटेल बैठे हुए थे। गाँधी जी थके हुए लेटे थे। तेज बहादुर सरू ने वार्ता आरम्भ की और गाँधी जी को वार्ता का निष्कर्ष बताया। बाबा साहेब ने अत्यन्त धीमें स्वर में कहा– "महात्मा जी आप हम पर बड़ा ही अन्याय करते आ रहे हैं यह मेरी तकदीर है कि मैं अन्यायी दिखाई पडू। इस तरह की नौबत मुझे हमेशा आती है। मेरे पास इसका कोई इलाज नहीं है।"

गाँधी जी हमेशा डा0 अम्बेडकर के प्रश्नों को तार्किक आधार पर नहीं अपितु घुमाकर ईश्वरीय इच्छा बताकर या हिन्दू समाज का दुर्भाग्य कह कर टाल देते थे,

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 204

लेकिन इस बार बाबा साहेब अपनी पूरी स्थिति संक्षेप में स्पष्ट कर देना चाहते थे। बाबा साहेब ने दलित वर्ग की स्थिति कांग्रेस के अछूतोद्धार आन्दोलन, गोलमेज सम्मेलन के निर्णयों पर संक्षेप में प्रकाश डाला। अंत में गाँधी जी ने बाबा साहेब से कहा– मेरी तुम्हारे साथ पूरी सहानुभूति है। मैं तुम्हारे साथ हूँ डाक्टर। डाक्टर आप जो कहते हैं, उनमें से बहुत सी बातों से मैं पूर्णता सहमत हूँ परन्तु आपने कहा था कि मेरे जिन्दा रहने का आपको भी कुछ उपयोग है?

बाबा साहेब ने इसके उत्तर में कहा– जी हाँ, महात्मा जी अगर आपने अपनी जिन्दगी अस्पृश्य वर्ग के कल्याण के लिए व्यतीत की तो आप हमारे वीर पुरुष बन जाएंगे।

गाँधी जी ने कहा– "ठीक है, मेरे प्राण कैसे बचाए जाए, यह तो आप जानते ही हैं। अतः आप उसके अनुसार मेरे प्राण बचाएं। मैं जानता हूँ कि जातीय निर्णय के अनुसार अस्पृश्य लोगों को प्राप्त हुए अधिकार आप छोंड़ने को तैयार नहीं है। आपके द्वारा सुझाई गई पैनल की पद्धति मैं स्वीकारता हूँ परन्तु मेरी यह बात आप स्वीकार करें कि आपकी यह पैनल पद्धति आपकी सभी आरक्षित सीटों पर लागू की जाए। आप जन्म से अस्पृश्य हैं और मैं हृदय से, हम सब एक हैं, अभंग–अविभाज्य हैं। हिन्दू समाज में होने वाली इस फूट को टालने के लिए मै अपने प्राण गवाने को तैयार हूँ।"

इस वार्ता के साथ मुलाकात समाप्त हुई। अगले दिन 23 सितम्बर को अस्पृश्य वर्ग को दिए जाने वाले आरक्षित सीटों के निर्धारण को लेकर मदन मोहन मालवीय, सप्रू आदि के साथ बाबा साहेब की लम्बी चर्चा हुई। बाबा साहेब ने स्पष्ट रूप से कहा– अगले 20 सालों में अस्पृश्यता समाप्त होगी, इस बात पर मेरा विश्वास नहीं है, परन्तु इस लटकती तलवार के भय से सवर्ण हिन्दुओं को अस्पृश्यों के बारे में अपनी निर्दय और कलंकित दृष्टि और कृति में फर्क जरूर करना पड़ेगा।[1]

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ०सं०– 205

सीटों को लेकर सहमति नहीं बन पा रही थी। उसी समय गाँधी जी के स्वास्थ्य खराब होने का समाचार मिला। गाँधी जी के पुत्र देवदास ने अश्रुपूरित नेत्रों से डा0 अम्बेडकर को देखा और कहा कि पिता जी की तबियत अधिक खराब हो रही है। बाबा साहेब कुछ और मुद्दों पर चर्चा करने के लिए गाँधी जी से मिलने उसी समय जेल गए। सर्वमत की समस्या पर गाँधी जी ने कहा कि सर्वमत 5 वर्षों के बाद लिया जाए। इससे बाबा साहेब सहमत नहीं थे तभी जेल के डाक्टर ने गाँधी जी के तबियत खराब हो रहे स्वास्थ्य के कारण बातचीत बन्द करने को कहा। इस प्रकार निराशमयी गंभीर वातावरण में मुलाकात समाप्त हुई।

गाँधी जी के स्वास्थ्य को लेकर पूरे देश में व्याकुलता थी। अगले दिन 24 अक्टूबर को प्रातः से ही बाबा साहेब के साथ वार्ता आरम्भ हुई, यद्यपि 23 अक्टूबर की रात्रि बाबा साहेब के लिए स्वयं बेचैनी भरी थी। उनके सम्मुख दोहरा संकट था– एक तो अस्पृश्य समुदाय के अधिकारों की रक्षा का प्रश्न था तो दूसरी ओर गाँधी जी के प्राण रक्षा के लिए राष्ट्र व्यापी दबाव था। इस दुविधा में बाबा साहेब सारी रात सो नहीं पाए थे। राष्ट्रीय नेताओं के साथ विचार–विमर्श के बाद 24 अक्टूबर को दोपहर तक यह तय हुआ कि केन्द्रीय विधान सभा के 10प्रतिशत सीटों तथा प्रान्तीय विधान सभाओं की 148 सीटें अस्पृश्य समुदाय के लिए आरक्षित की जाएं, लेकिन सर्वमत के समय को लेकर समस्या बनी रही। अंततः बाबा साहेब ने कारागार में गाँधी जी से पुनः मिलने का निश्चय किया। डा0 सोलंकी ओर राजगोपालाचारी के साथ बाबा साहेब गाँधी से मिलने कारागार पहुंचे। गाँधी जी ने वार्तालाप के दौरान बाबा साहेब से कहा कि हिन्दू धर्म को अपने विगत पापों का प्रक्षालन करने के लिए एक मौका दिया जाए। अस्पृश्यों का सर्वमत पाँच वर्षों में लिया जाए। यह कहकर गाँधी जी ने निर्णायक स्वर मे कहा– पाँच वर्षों के बाद सर्वमत लो या अभी मेरे प्राण लो।

गाँधी जी के इस निर्णय को सुनकर सभी स्तब्ध रह गए। बाबा साहेब अपने इस निर्णय से कि सर्वमत 10 वर्ष बाद लिया जाए, बदलने को तैयार नहीं थे।

अंततः बीच का मार्ग निकालने हुए तय हुआ कि सर्वमत की समय–सीमा न निर्धारित किया जाए। गाँधी जी भी इस योजना से सहमत हो गए। अंततः शायंकाल 24 अक्टूबर को ऐतिहासिक समझौता सम्पन्न हुआ, जिसे पूना समझौता कहा जाता है। बाबा साहेब ने पूना समझौता स्वीकार करने के पीछे अपनी विवशता को इस प्रकार व्यक्त किया– "मेरे सामने दो ही रास्ते थे, मेरे सामने पहला कर्तव्य था, जिसे मैं मानवीय कर्तव्य मानता हूँ कि श्री गाँधी के प्राणों को बचाया जाए दूसरी ओर मेरे समस्या थी कि अस्पृश्यों के उन अधिकारों की रक्षा की जाए, जो प्रधानमंत्री ने दिए थे। मैंने मानवता की पुकार को सुना और श्री गाँधी के प्राणों की रक्षा की।[1]

पूना समझौते पर अस्पृश्य वर्ग की ओरसे बाबा साहेब डा अम्बेडकर ने हस्ताक्षर किया। सवर्ण हिन्दुओं की ओर से पंडित मदन मोहन मालवीय ने हस्ताक्षर किया। हस्ताक्षर करने वाले अन्य नेताओं में जयकर, सपू, विडला, राजेन्द्र प्रसाद, राजगोपालाचारी, राजभोज, एम0सी0राजा, श्रीनिवास आदि प्रमुख थे। राजगोपालाचारी इतने अधिक मुग्ध हो गए कि उन्होंने बाबा साहेब के साथ कलम की अदला–बदली कर ली। पूना समझौते केप्रमुख प्रमुख प्रावधान इस प्रकार थे–

1. प्रान्तीय विधान सभाओं में सामान्य निर्वाचित सीटों में से दलित वर्गों के लिए सीटें सुरक्षित की जायेंगी जो निम्न प्रकार होंगी–

	प्रान्त	सं0
1.	म्रदास	30
2.	मुम्बई और सिन्ध मिलाकर	15
3.	पंजाब	8
4.	बिहार एवं उड़ीसा	18
5.	मध्य प्रान्त	20

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, वही, पृ0सं0– 95

6.	असम	7
7.	बंगाल	30
8.	संयुक्त प्रान्त	20
	योग	148

यह संख्या प्रान्तीय विधान सभाओं में कुल सीटों की सख्या पर आधारित थी, जिन्हें प्रधानमंत्री ने अपने फैसले में घोषित किया था।

2. इन सीटों पर संयुक्त निर्वाचन प्रणाली द्वारा निम्नलिखित तरीके से चुना होगा–

   किसी निर्वाचन क्षेत्र में सामान्य मतदाता सूची में दर्ज दलित वर्ग के सभी सदस्यों को मिलाकर एक निर्वाचक मंडल का गठन होगा, जो ऐसे प्रत्येक स्थान के लिए एकल मत प्रणाली द्वारा दलित वर्गों के चार उम्मीदवारों के एक पैनल का चुनाव करेंगे, ऐसे प्राथमिक चुनाव में सर्वाधिक मत पाने वाले चार व्यक्ति सामान्य मतदाताओं द्वारा चुनाव के उम्मीदवार होंगे।

3. केन्द्रीय विधान मंडल में दलित वर्गों के प्रतिनिधि का निर्धारण इसी प्रकार संयुक्त मतदाताओं और आरक्षित स्थानों द्वारा जैसा कि प्रान्तीय विधान मडलों में उनके प्रतिनिधित्व के लिए उपरोक्त खण्ड–2 में दिए गए परिशिष्ट के समान प्राथमिक चुनाव पद्धति द्वारा किया गया।

4. ब्रिटिश भारत में केन्द्रीय विधान मंडल में सामान्य मतदाताओं को आवंटित स्थानों का 18 प्रतिशत स्थान दलित वर्गों के लिए आरक्षित होगी।

5. उम्मीदवारों के पैनल की प्राथमिक चुनाव व्यवस्था केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान मंडलो के लिए, जिसका उल्लेख किया गया है, प्रथम दस वर्ष के बाद समाप्त हो जाएगी। दोनो वर्गों के आपसी सहमति से पैरा–6 के अनुसार इसे पहले भी समाप्त किया जा सकता है।

6. प्रान्तीय तथा केन्द्रीय विधान मंडलों में दलितों के लिए सीटों का प्रतिनिधित्व जैसा

कि ऊपर खण्ड–1 और खण्ड–4 में दिया गया है, तब तक जारी रहेगा, जब तक कि दोनो सम्बन्धित पक्षों में पारस्परिक समझौते द्वारा उसे समाप्त करने पर सहमति नहीं हो जाती।

7. केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान मंडलों में चुनाव के लिए दलितों को मताधिकार, लोथियन समिति के अनुसार होगा।

8. स्थानीय निकायों के लिए चयन अथा सरकारी सेवाओं में नियुक्ति के सम्बन्ध में किसी व्यक्ति का दलित वर्गों से सम्बन्धित होना कोई अयोग्यता नहीं होगी। सरकारी सेवाओं में नियुक्ति के लिए यथा निर्धारित शैक्षिक योग्यताओं के तहत इनके संबंध में दलित वर्गों को उचित प्रतिनिधित्व देने का हर संभव प्रयास किया जाएगा।

9. प्रत्येक प्रान्त में शैक्षिक अनुदान में से दलित वर्गों के सदस्यों को शैक्षिक सुविधाएं प्रदान किए जाने के लिए समुचित धनराशि नियत की जाएगी।

गाँधी जी ने अनशन समाप्ति के बाद पूना समझौते के विषय में कहा[1]– "मैं अपने हरिजन भाइयों को समझौते का पूरी तरह पालन करने का विश्वास दिलाता हूँ।" समाजवादी चिन्तक मधुलिमये ने लिखा– "गाँधी जी ने सवर्ण हिन्दुओं की सोई हुई आत्मा जगाकर अपने को गौरान्वित किया, लेकिन मेरे विचार में डा0 अम्बेडकर का काम ज्यादा महान था। उन्होंने अपने को अन्याय के खिलाफ अनअथक संघर्षशील व्यक्ति के साथ–साथ महान भारतीय भी सिद्ध किया।"[2] बाद में गाँधी जी ने हिन्दू समाचार पत्र के संवादाता को बताया– हिन्दुओं को उनके सदियों के पाप का दण्ड देने के लिए अम्बेडकर अपनी बात पर अड़े रह सकते थे। अगर उन्होंने ऐसा किया होता तो मुझे उनसे कोई शिकायत न होती और मेरी मृत्यु हिन्दुओं के द्वारा अनगिनत पीढ़ियों पर किए

---

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, वही, पृ0सं0– 264
[2] मधुलिमये, वही, पृ0सं0– 52

गए अत्याचारों की मामूली सी कीमत होती, लेकिन उन्होंने उदारता का रवैया अपनाया और क्षमा का अनुसरण किया, जिसका सभी धर्मों में प्रावधान है। मैं उम्मीद करता हूँ कि सवर्ण हिन्दू अपने को इस क्षमा का पात्र सिद्ध करेंगे ओर समझौते का अपने तमाम निहितार्थों के साथ शब्दशः और भावतः पालन करेंगे।[1]

यदि निष्पक्ष मूल्यांकन किया जाए तो स्पष्ट होता है कि पूना समझौता अस्पृश्य वर्ग के लिए हानिकारक था जिसे भारी दबाववश बाबा साहेब ने दुःखी मन से स्वीकार किया था लेकिन अस्पृश्यता उन्मूलन एवं मनुवादी व्यवस्था के विरुद्ध उनका संघर्ष तथा अस्पृश्य वर्ग के अधिकारों की मांग का आन्दोलन और तीव्र गति से शुरू हुआ।

कुछ समय के लिए लगा कि गाँधी जी और डा0 अम्बेडकर में मेल हो गया हो और दोनो मिलकर हिन्दू–समाज की बुराइयों को समाप्त करने में अपनी शक्ति लगाएंगे। महात्मा गाँधी ओर उनकी कांग्रेस पार्टी ने अस्पृश्यता उन्मूलन कार्यक्रम को जोर–शोर से आगे बढ़ाया। कांग्रेस के तत्वाधान में 26 सितम्बर 1932 को "अखिल भारतीय अस्पृश्यता निवारण लीग" की स्थापना की गई। दिसम्बर 1932 में इसका नाम बदलकर "अस्पृश्य समाज सेवक" रखा गया। 1932 में यह नाम भी बदलकर "हरिजन सेवक संघ" कर दिया गया। अस्पृश्यों के लिए हरिजन शब्द का प्रयोग गाँधी जी ने आरम्भ किया, जिसे गुजराती उपन्यासकार नरसी मेहता के उपन्यास से ग्रहण किया था। बाबा साहेब ने आरम्भ में ही इस नाम का घोर विरोध आरम्भ किया।

हरिजन सेवक संघ ने अपना कार्य आरम्भ किया। श्री बिडला और श्री ठक्कर ने 3 नवम्बर 1932 को एक प्रेस विज्ञप्ति जारी की जिसमें इस संस्था के कार्यक्रम को बताया गया– संस्था का विश्वास है कि सनातनी हिन्दुओं में सूझबूझ वाले लोग अस्पृश्यता निवारण के लिए उतना विरुद्ध नहीं है, जितना कि अन्तर्जातीय भोज और अन्तर्जातीय विवाह के, चूँकि संस्था की यह आकांक्षा नहीं है कि अपनी सीमा के बाहर के

[1] द क्लेटिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड–51, पृ0सं0– 144

सुधारों को हाथ में ले, यह स्पष्ट कर देना उचित होगा कि संस्था सवर्ण हिन्दुओं में अस्पृश्यता के चिन्हों को समझा बुझाकर समाप्त करने का कार्य करेगी, उसका मुख्य कार्य रचनात्मक होगा जैसे-- शैक्षिक, आर्थिक, सामाजिक क्षेत्र में दलित वर्गो का उत्थान, जिसने अस्पृश्यता निवारण को बहुत अधिक बल मिलेगा। ऐसे कार्य से कट्टरपंथी सनातनी हिन्दू भी विरोध करने के स्थान पर सहानुभूति दिखाएंगे। इस संस्था का निर्माण मुख्यतः इसीलिए किया गया है। सामाजिक सुधार जैसे जाति व्यवस्था को समाप्त करना और अन्तर्जातीय सहभोज इस संस्था की परिधि से बाहर रखे गए हैं।[1]

हरिजन सेवक संघ के कार्य को सुचारु रूप से संचालित करने के लिए एक कोष गठन का प्रस्ताव किया। देश के प्रत्येक प्रान्त एवं जिलों में संस्था की शाखाएं खोलने का भी निर्णय किया गया और देश के विभिन्न अंचलों में बड़ी संख्या में शाखाएं खोली गईं। सदस्यता अभियान चालू कर चंदा वसूला गया। गाँधी जी ने कोष एकत्र करने के लिए 7 नवम्बर 1933 से 29 जुलाई 1934 के मध्य देश भर की यात्रा कर 8 लाख रुपये एकत्र किए।[2]

हरिजन सेवक संघ ने अपना कार्य आरम्भ किया। अस्पृश्य वर्ग में शिक्षा के प्रचार–प्रसार हेतु बड़ी संख्या में स्कूल खोला तथा छात्रावासों की स्थापना एवं छात्रवृत्तियां प्रदान की। संघ ने अस्पृश्यों को चिकित्सकीय सुविधाएं प्रदान कराने की व्यवस्था की, लेकिन सबसे महत्वपूर्ण कार्य पेयजल की सुविधा उपलब्ध कराना था इस दिशा में संघ ने निम्नलिखित कार्य किया–

1. नए कुए खोदवाकर अथवा नलकूप और पम्प लगवाकर
2. पुराने कुओं, नलकूपों, पम्पों की मरम्मत कराकर
3. स्थानीय निकायों को नए–नए कुए खोदवाने के लिए प्रोत्साहित करना।[3]

---

[1] बाबा साहेब डा० अम्बेडकर, वही, पृ०सं०–136

[2] हरिजन, अगस्त– 3, 1934

[3] बाबा साहेब डा० अम्बेडकर, वही, सम्पूर्ण वांङमय, खण्ड– 16, पृ०सं०– 139

इन कार्यों को देखकर लग रहा था कि संघ अस्पृश्यता उन्मूलन और सामाजिक परिवर्तन की दिशा में महान क्रांतिकारी कार्य कर रहा है। इससे प्रभावित होकर बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर सहित बड़ी संख्या में अस्पृश्यों ने संघ की सदस्यता ग्रहण कर ली। बाबा साहेब को संघ के आठ सदस्यीय केन्द्रीय बोर्ड का सदस्य बनाया गया था। केन्द्रीय बोर्ड के सदस्यों में घनश्यामदास विडला, पुरुषोत्तमदास ठाकुर, सर लल्लू भाई सामलदास, डा0 बी0आर0 अम्बेडकर, सेठ अम्बालाल साराभाई, डा0वी0सी0राय, लालश्रीराम, एम0सी0राजा, श्री निवासन, डा0 टी0 एस0 एस0 राजन और ए0वी0 ठक्कर थे।

बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर अधिक समय तक संघ मे कार्य न कर सके और उनको लगा कि संघ अस्पृश्य वर्ग का वास्तविक हितैषी नहीं है अपितु अस्पृश्यों के आन्दोलन को गलत दिशा में मोड़ रहा है। वास्तव में बाबा साहेब का संघ से आरम्भ से ही विरोध शुरू हो गया। बाबा साहेब ने कहा कि संघ के केन्द्रीय बोर्ड के अधिकांश सदस्य अस्पृश्य होने चाहिए। उन्होंने गांधी जी से मुलाकात कर अपनी मांग और प्रमुखता से रखी। बढ़ते हुए मतभेद के कारण उन्होंनें संघ से अपना सम्बन्ध समाप्त कर लिया। उनके बोर्ड से हटते ही अस्पृश्य समुदाय के दो अन्य सदस्य एम0सी राजा और श्रीनिवासन ने भी त्यागपत्र दे दिया। बाबा बाबा साहेब ने अपने तयाग पत्र देने के कारणों को स्पष्ट किया कि पैक्ट के बाद मैंने भूलो और क्षमा करो की भावना अपनाई। मैंने बहुत से मित्रों के कहने पर श्री गाँधी के संस्था की सदस्यता स्वीकार कर ली। उसी भावना में मैंने संघ की सदस्यता स्वीकार की थी। मैं इसके जरिए कुछ करना चाहता था। वास्तव में मैं श्री गाँधी से संघ की योजना के विषय में चर्चा करना चाहता था लेकिन तीसरे गोलमेज सम्मेलन में बुलावा आने के कारण चर्चा का समय नहीं मिल पाया। मैं इतना ही कर सकता था कि मैं संघ के महामंत्री श्री ठक्कर को अपने विचारों से अवगत कराने हेतु पत्र लिख सकूँ। मैंने स्टीमर पर से उन्हें पत्र लिखा–

"एन0एन0 विक्टोरिया पोर्ट सईद

नवम्बर 14, 1933

प्रिय श्री ठक्कर–

लंदन की यात्रा आरंभ करने के पहले मुझे आपका तार मिला जिसमें केन्द्रीय बोर्ड के लिए रायबहादुर श्रीनिवासन तथा बम्बई प्रान्तीय बोर्ड के लिए श्री डी0वी0नायक के नामजद करने की मेरी सलाह स्वीकार कर ली गई। मैं इस बात से भी प्रसन्न हूँ कि इस प्रश्न को शांतिपूर्ण ढंग से हलकर लिया गया और अब हम एंटी अंनटचेविलिटी लीग की योजना को मिल–जुलकर चला सकते हैं। मैं सेन्ट्रल बोर्ड के सदस्यों से मिलकर उनसे उन सिद्धान्तों पर चर्चा करना चाहता था, जो लीग की योजना से सम्बद्ध है परन्तु दुर्भाग्यवश अल्प सूचना पर लन्दन के लिए रवाना होने के कारण मुझे वह अवसर गवांना पड़ रहा है। तथापि मैं दूसरा सर्वोत्तम विकल्प लिखित रूप में आपके विचार से भेज रहा हूँ। इस अनुरोध के साथ कि इन विचारों को केन्द्रीय बोर्ड के समक्ष विचाणार्थ प्रस्तुत कर सकेंगे।

मेरे विचार से दलित वर्गों के उत्थान के लिए दो विभिन्न पद्धतियां हो सकती हैं। एक वर्ग ऐसा है जो यह सोचता है कि दलित वर्ग के सदस्यों की स्थिति उनके व्यक्तिगत आचरण पर निर्भर करती है। यदि वे कंगाली और मुसीबतों में फंसें हैं, तो इसका कारण यही है कि वे स्वयं दुष्ट और पापी हैं। सामाजिक कार्यकर्ताओं का यह वर्ग, योजना को हाथ में लेते हुए उन सभी प्रयत्नों और साधनों पर अपना ध्यान केन्द्रित करता है इस योजना की सफलता में आवश्यक है जैसे इसमें संयम, व्यायाम, सहयोग, पुस्तकालय, पाठशालाएं इत्यादि शामिल की जा सकती है, जो किसी व्यक्ति के उत्थान के लिए आवश्यक है। मेरे विचार से इस समस्या से निपटने का एक और भी तरीका है। वह तरीका इस भावना से पैदा होता है कि कोई मनुष्य किस प्रकार की परिस्थितियों और वातावरण में रहता है, उसी पर उसका भाग्य निर्भर करता है। यदि कोई मनुष्य गरीब और मुसीबत से सदैव पीड़ित रहता है, तो उसका कारण यही है कि वातावरण

उसके लिए अनुकूल और हितकारी नहीं है। मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं है कि दूसरा विचार अधिक सही है। पहला विचार कुछ लोगों का स्तर उठाने में सहायक हो सकता है परन्तु पूरा वर्ग इससे ऊँचा नहीं उठ सकता। .... मैं चाहता हूँ कि बोर्ड अपनी सारी शक्तियों को ऐसी योजना पर केन्द्रित करे, जिससे दलित वर्ग के लोगों को स्वच्छ सामाजिक वातावरण मिल सके।''

बाबा साहेब ने अपने इस पत्र में दलित वर्गों के उत्थान हेतु कतिपय ठोस प्रस्ताव भी पेश किया। इसमें नागरिक अधिकारों को प्राप्त करने का आन्दोलन, अवसर की समानता, सामाजिक मेलजोल तथा इन योजनाओं को लागू करने हेतु बड़ी संख्या में स्वयं सेवकों को तैयार करने पर बल दिया गया। बाबा साहेब ने पत्र को समाप्त करते हुए लिखा– ''मुझे अफसोश है कि मैंने पत्र की सीमा का उल्लंघन किया है। मैं आगे कोई और गलती नहीं करूँगा और इसे हनुमान की पूँछ की तरह आगे नहीं बढ़ाऊँगा...... वेल्फर ने कहा था ब्रिटिश राज्य को कानून ने नहीं अपितु प्रेम की डोर ने ही बांध कर रखा था। मैं समझता हूँ कि यह बात हिन्दू समाज पर भी लागू होती है। अस्पृश्यों और सवर्णों में कानून द्वारा एकता नही लाई जा सकती– संयुक्त मतदान से भी नहीं यदि कोई बात उनमें समरसता ला सकती है, तो वह है परस्पर प्रेम। मेरे विचार से पारिवारिक बंधन तोड़कर ही ऐसा प्रेम करना संभव होगा और अस्पृश्यता निवारण लीग का कर्तव्य होना चाहिए कि वह देखे कि सवर्ण अस्पृश्यों से प्रेम और न्याय करते हैं या नहीं। मेरे विचार से लोगों का अस्तित्व और उसकी योजना का औचित्य इसी बात में निहित है।[1]

हरिजन सेवक संघ के शीर्ष नेतृत्व ने बाबा साहेब के इन सुझावों की पूर्ण उपेक्षा की जिससे दुःखी होकर उन्होंने संघ से त्याग–पत्र दे दिया। इसी के साथ साथ बड़ी संख्या में अस्पृश्यों ने संघ को छोंड़ दिया। इन स्थानों में गाँधी जी ने सवर्णों को नियुक्त किया। इस नियुक्ति का स्पष्टीकरण गाँधी जी ने इस प्रकार दिया– ''अस्पृश्यो

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, वही, खण्ड सं0-- 16, पृ0सं0– 150

के लिए कल्याणकारी कार्य करना। हिन्दुओं द्वारा अस्पृश्यता के पाप का प्रायश्चित करना है। जो धन एकत्र किया गया है, वह हिन्दुओं के चंदे से एकत्र किया गया है।"[1] बाबा साहेब ने इसे अस्पृश्यों का अपमान कहा। "श्री गाँधी को इस बात का अहसास नहीं हुआ कि उन्होंने अपने इस उपदेश से अस्पृश्यों को कितना अपमानित किया।"

हरिजन सेवक संघ के समस्त कार्यों के मूल्यांकन के सम्बन्ध में बाबा साहेब का निष्कर्ष यह रहा कि हरिजन सेवक संघ केवल नाम के लिए धमार्थ संस्था है और उसका मुख्य उद्देश्य लक्ष्य अस्पृश्यों को कांग्रेसी जाल में फंसाना है, उन्हें हिन्दुओं और कांग्रेस के पिठ्ठू बनाना, उनके उस आन्दोलन को रोकना, जिसका लक्ष्य है अपने आपको सामाजिक – आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्रों में हिन्दुओं के प्रभुत्व से छुटकारा दिलाना। क्या इस बात में कोई आश्चर्य है कि अस्पृश्य हरिजन सेवक संघ को इस कारण घृणा की निगाह से देखते हैं कि संघ उन्हें पुचकार कर मारना चाहता है।"[2]

इसके बावजूद पूना समझौते के बाद कांग्रेस और हरिजन सेवक संघ के प्रयासों से देश में बड़ी संख्या में अस्पृश्यों के लिए सार्वजनिक स्थान खोले गए, मंदिर खोले गए, स्कूल, छात्रावास आदि खोल गए। गांधी जी के हरिजन समाचार पत्र के 18 फरवरी 1933 के अंक में छपा–[3]

मंदिर खोले गए

उत्तरी कलकत्ता में 36 लाख रुपये की लागत से हाल ही में बना मंदिर।

मद्रास के गांजम जिले में भागलपुर गांव का एक मंदिर।

पंजाब में जालंधर नौरनिया का एक ठाकुरद्वार मंदिर।

---

[1] वही, पृ0सं0– 152

[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, वही, खण्ड सं0– 16, पृ0सं0– 155

[3] हरिजन, 18 फरवरी 1933

कुएं खोले गए

उड़ीसा का कटक में जयपुर कस्बा में गुरियापुर का नगरपालिका कुँआ। संयुक्त प्रान्त के आगरा में बजीरपुरा और नक्की गली में दो कुंए।

स्कूल खोले गए

संयुक्त प्रान्त के मेरठ जिले में बछरौता में एक निःशुल्क स्कूल खोला गया।

राजपूताना के मेताह जिले में एक स्कूल।

जयपुर रियासत में फतहपुर, चेमन और अभयपुर में तीन स्कूल।

संयुक्त प्रान्त के फतेहपुर जिले में एक स्कूल।

संयुक्त प्रान्त के गोरखपुर में तीन रात्रि स्कूल।

आदि स्थानों पर स्कूल, छात्रावास खोले गये। एक महत्वपूर्ण प्रश्न आम जनता में पैदा होता है कि गाँधी जी और उनके कांग्रेस तथा हरिजन सेवक संघ ने यह कार्य क्यों किया। क्या गाँधी जी और उसकी कांग्रेस आरम्भ से ही अस्पृश्यता उन्मूलन, मंदिर प्रवेश का समर्थन करती थी? या बाद में अपनाया। ऐतिहासिक तथ्यों की निष्पक्ष समीक्षा से स्पष्ट होता है कि गांधी जी और उनके कांग्रेस की आरम्भ में यह नीति नहीं थी। सर्व प्रथम 1917 और 1922 में वारदोली प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस ने दलित वर्ग के उत्थान का कार्यक्रम अपनाया लेकिन वारदोली प्रस्ताव में भी अछूतोद्धार की बात स्वीकार की गई थी, अस्पृश्यता उन्मूलन की नहीं। 1932 के पूर्व गांधी जी स्वयं अस्पृश्यों के मंदिर प्रवेश करने के विरुद्ध थे। श्री गाँधी के शब्दों में– यह कैसे संभव हो सकता है कि आन्व्यज (अस्पृश्य) के पास सभी वर्तमान हिन्दू मंदिरों में प्रवेश करने के अधिकार हो? जब तब वर्ण व्यवस्था विद्यमान है, हिन्दू धर्म और हिन्दू धर्म ग्रन्थों को प्रमुख स्थान मिला

हुआ है। यह कहना कि प्रत्येक व्यक्ति हिन्दू मंदिरों में प्रवेश कर सकता है आज कल असंभव है।[1]

यह एक बड़े चिन्तन का प्रश्न है कि गाँधी जी में 1932 के बाद यह रहस्यमयी परिवर्तन क्यों आया? यदि तथ्यों की विवेचना किया जाए तो ज्ञात होता है कि इसका प्रमुख कारण बाबा साहेब द्वारा अस्पृश वर्ग के उत्थान हेतु किया जाने वाला आन्दोलन ही था। बाबा साहेब ने इस परिवर्तन का कारण यह बताया कि गाँधी जी को यह लगा कि कहीं सवर्ण हिन्दुओं और अस्पृश्यों मे पूरा विभाजन न हो जाए। इसलिए श्री गाँधी की आंखें खुली और उन्होंने दोनो वर्गों को सांस्कृतिक और धार्मिक बन्धन में बांधने के लिए मंदिर प्रवेश जैसा मार्ग अपनाया।[2]

गाँधी जी ने स्वयं मंदिर–प्रवेश आन्दोलन में भाग लिया उन्होने केरल के ऐतिहासिक गुरुवायूट मंदिर सत्याग्रह (1932) में भाग लेने की घोषणा की। 5 नवम्बर 1932 को गाँधी जी ने यह वक्तव्य दिया– केरल के गुरुवयूट मंदिर में प्रवेश के लिए यह दूसरा अनशन होने वाला है। श्री केलप्पन ने मेरे तत्कालिक अनुरोध पर तीन महीने के लिए अनशन स्थगित किया था, वह अनशन उन्हें मौत के दरवाजे तक ले जाने वाला था। यदि 1 जनवरी 1933 तक अथवा उसके पूर्व अस्पृश्यों के लिए उन्हीं शर्तों पर मंदिर नहीं खोला गया, जिन शर्तों पर सवर्णों के लिए खुला है, तो मुझे विवश होकर श्री केलप्पन के साथ ही अनशन करना पड़ेगा।

देश के दलित समुदाय को इस घोषणा से बड़ी उम्मीद थी कि इसी के साथ देश के सभी मंदिर के द्वार उनके लिए खोल दिये जायेगे लेकिन गाँधी जी ने उसकी आशाओं पर तुषारापात करते हुए अनशन नहीं किया और 29 दिसम्बर 1932 को प्रेस को अपना एक वक्तव्य दिया– "इस शासकीय घोषणा को ध्यान में रखते हुए कि मद्रास विधान परिषद में मंदिर प्रवेश के विषय में डा0 सुब्बानारायन द्वारा विधेयक पेश किए जाने की अनुमति वायसराय के निर्णय की घोषणा सम्भवतः 15 जनवरी से पूर्व नहीं की

---

[1] गाँधी शिक्षण भग–2, पृ0सं0– 232

[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृ0सं0– 156

जा सकती। अतः नव वर्ष के दूसरे दिन से आरम्भ किया जाने वाला अनशन अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दिया जाएगा और सरकारी फैसले तक के लिए स्थगित रहेगा। श्री केलप्पन इस स्थगन से सहमत है।"[1]

इसी समय गाँधी जी के परामर्श से मद्रास विधान सभा के सदस्य डा0 सुत्वानारायण ने केन्द्रीय सभा में मंदिर प्रवेश विधेयक पेश किया। श्री रंगा अय्यर ने भी एक मंदिर प्रवेश विधेयक पेश किया इसके अतिरिक्त श्री हरि विलास शारदा, लालचन्द्र नवलराय और एम0आर0 जयकर ने भी ऐसा ही विधेयक प्रस्तुत किया। इन सभी विधेयकों में से श्री अय्यर द्वारा प्रस्तुत विधेयक को मद्रास एसेम्बली में प्रस्तुत करने की अनुमति 23 जनवरी 1933 को भारत के वाइसराय लार्ड विलिगटन ने दे दी। श्री रंगा अय्यर ने 24 मार्च 1933 को मद्रास विधान सभा में विधिवत विधेयक पेश किया। गाँधी जी ने राजागोपालाचारी और घनश्यामदास विड़ला को विधेयक पास कराने की जिम्मेदारी सौंपी। गाँधी जी यह चाहते थे कि डा अम्बेडकर भी इस विधेयक का समर्थन करें। गाँधी जी ने पत्र लिखकर बाबा साहेब से मिलने की इच्छा व्यक्त की। बाबा साहेब ने गाँधी जी को तार द्वारा सूचित किया कि वे 4 फरवरी 1933 ई0 को मिलने के लिए आ रहे हैं। बाबा साहेब पूर्व निर्धारित तिथि पर 4 फरवरी 1933 ई0 को शिवातकर, डालेस, शांताराम उपशाम, कांबले, धोर पेड और केशवराम जेधे के साथ यर्वदा जेल में गाँधी जी से मुलाकात की। गाँधी जी ने खड़े होकर प्रसन्न मुद्रा में अतिथियों का स्वागत किया।[2] गाँधी जी ने मंदिर प्रवेश विधेयक पर चर्चा आरम्भ की और डा0 अम्बेडकर से विधेयक का समर्थन करने की अपील की। बाबा साहेब ने गाँधी जी अपील को विनम्रता के साथ अस्वीकार कर दिया। उन्होंने विधेयक की मंशा और उसके प्राविधानों पर आपत्ति की। बाबा साहेब ने वार्ता के दौरान कहा– अस्पृश्यों को अब चतुर्वण्य के शूद्र के रूप में जीवन व्यतीत नहीं करना है। हिन्दू धर्म मेरा बौद्धिक समाधान नहीं कर सकता। मुझे उससे संतोष नहीं हो सकता............. जिस धर्म में मुझे नीच का दर्जा दिया गया है, मेरा

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, वही, खण्ड सं0– 16, पृ0सं0 124।

[2] रामलाल विवेक, डा0 अम्बेडकर जीवन और आदर्श, पृ0सं0– 112

धर्म है, ऐसा मैं कैसे मान लूँ, अगर यह निकृष्ट पद्धति चलती रहती है तो मंदिर–प्रवेश का क्या होगा?

गाँधी जी ने इसके उत्तर मे कहा– चातुर्वण्य कल्पना में असमानता नहीं है। उसमें अनुचित कुछ भी नहीं है। सवर्ण हिन्दुओं द्वारा किए गए पाप का अंत करने और प्रायश्चित करने के लिए तथा हिन्दू धर्म को शुद्ध करने के लिए यह आन्दोलन हाथ में लिया गया है......... मुझे लगता है कि धर्म और सुधार होने से अस्पृश्यों का दर्जा स्वयं बढ़ जायेगा। इसके उत्तर में बाबा साहेब ने कहा यदि अस्पृश्य वर्ग का राजनैतिक, धार्मिक और शैक्षिक दर्जा बढ़ेगा, तो उनका मंदिर प्रवेश अपने आप होगा।"[1] अंततः वार्ता असफल रही और बाबा साहेब ने इस विधेयक को समर्थन देने में अपनी असमर्थता व्यक्त की। बाबा साहेब ने कुछ समय बाद 14 फरवरी 1933 को मंदिर विधेयक पर लिखा गया अपना विस्तृत बयान प्रेस में छपने के लिए दे दिया और उसकी एक प्रति महात्मा गाँधी को यर्वदा जेल में भेज दी। इसमें बाबा साहेब ने लिखा[2] "यद्यपि मंदिर प्रवेश से सम्बन्धित प्रश्न पर विवाद सनातनी हिन्दुओं तथा गाँधी तक सीमित है, फिर भी दलित वर्गों को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है, क्योंकि वे निर्णायक पक्ष हैं। इस पर उन्हें गम्भीरता से विचार करना है कि विधेयक के अंतिम निर्णय पर दलित वर्ग के लोग किस स्थिति में होंगे।

श्री रंगा ने मंदिर–प्रवेश विधेयक का जो प्रारूप तैयार किया है, दलित वर्ग के लोग संभवता उसका समर्थन नहीं करेगें। इस विधेयक का सिद्धान्त यह है कि यदि म्यूनिसिपल और स्थानीय निकाय मतदाता अपने पड़ोस के किसी मुख्य मंदिर के लिए जनमत संग्रह का निर्णय करते हैं कि उस मंदिर में दलित वर्ग के लोगों को जाने के लिए अनुमति दी जाए, तब मंदिर के न्यासी अथवा प्रबन्धक उस फैसले को कार्य रूप में परिणत करेंगे। यह सिद्धान्त साधारणतया बहुमत के निर्णय पर आधारित है। इसमें मौलिक अथवा क्रांतिकारी कुछ भी नहीं है।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, वही, पृ0सं0– 218–219

[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, वही, खण्ड सं0– 16, पृ0सं0– 115–119

इस विधेयक को दलित वर्गों का समर्थन न मिलने के दो कारण हैं–

1. इस विधेयक से निकट भविष्य में अस्पृश्यों के मंदिर प्रवेश में शीघ्रता नहीं आ सकती............... मंदिर प्रवेश में बहुमत की आशा कठिनता से पूरी होगी निःसन्देह बहुमत आज विरुद्ध है।

2. विधेयक अस्पृश्यता को पापाचार नहीं मानता अपितु इसे मात्र सामाजिक दोष मानता है। .... यह विधेयक अस्पृश्यता को गैर–कानूनी घोषित नहीं करता। यदि बहुमत ऐसा करने का फैसला न करे तो उसमें कोई जोर नहीं होगा। पाप और अनैतिकता बर्दास्त करने योग्य नहीं बन सकती, यदि बहुमत उसी के वशीभूत हो जाए अथवा दन अनैतिकताओं के अनुसार चलना पसंद करे। यदि अस्पृश्यता एक पापाचार एवं अनैतिक है, तो दलित वर्ग की दृष्टि में उसे निःसंकोच तिलांजलि दे देनी चाहिए, चाहे बहुसंख्यक अस्पृश्यता के पक्ष में ही क्यों न हों...... इस विधेयक में ऐसा कुछ भी नहीं है। विधेयक के लेखक ने अस्पृश्यता की प्रथा पर गम्भीर रुख नहीं अपनाया है......... यदि विधेयक में अस्पृश्यता को पाप मान लिया गया होता, तो दलित वर्ग उस विधेयक से कुछ आशा रखता।

सचमुच मेरी समझ में नहीं आता है कि इस विधेयक से श्री गाँधी जी कैसे संतुष्ट हो गए जो अस्पृश्यता को पाप मानने पर जो दिया करते थे। बहरहाल इस विधेयक से दलित वर्ग को संतोष नहीं हो सकता। विधेयक बुरा है या अच्छा, पर्याप्त है या अपर्याप्त, यह प्रश्न गौण है। मुख्य प्रश्न यह है कि दलित वर्ग के लोग मंदिर प्रवेश चाहते हैं या नहीं? इसे दलित वर्ग के लोग दो दृष्टिकोण से देखते हैं।

पहला भौतिक दृष्टिकोण है दलित वर्ग के लोग सोचते है कि उनका उत्थान उच्च स्तर की शिक्षा, उच्च स्तरीय नौकरियों और जीविका के अच्छे साधनों से ही संभव है। एक बार जब वे सामाजिक जीवन के अच्छे स्तर पर पहुंच जाएंगे तो उनका सम्मान बढ़ेगा और जब समाज में उनका आदर–सम्मान होने लगेगा तो रुढ़िवादी हिन्दुओं में भी परिवर्तन आएगा और यदि ऐसा न हुआ तो उससे उन दलित वर्गों के

भौतिक हितो की कोई विशेष हानि नहीं होने पाएगी इन मार्गो पर चलते हुए दलित वर्ग के लोगों का कहना है कि वे मंदिर–प्रवेश के थोथे आन्दोलन में अपनी शक्ति नष्ट नहीं करेंगे।

दूसरा कारण आत्म सम्मान का है...... अभी बहुत दिन नहीं हुए जब क्लबों के दरवाजों और भारत के सामाजिक स्थानों में यूरोपियन लोगों ने तख्तियां टांगी थी, जिस पर लिखा होता था– कुत्तों और भारतीयों को प्रवेश करने की अनुमति दी है। हिन्दुओं के भी मंदिरों पर ऐसी ही तख्तियां लटकी। अतंर केवल इतना है कि स्पृश्य हिन्दू, यहां तक कि जानवर और कुत्ते मंदिर में प्रवेश कर सकते हैं। केवल अस्पृश्य प्रवेश नहीं कर सकते। दोनो मामलों में स्थिति एक सी है। परन्तु हिन्दुओं ने उन स्थानों पर प्रवेश करने की अनुमति कभी नहीं मांगी, जहां पर यूरोपियनों ने अपने प्रबन्ध से उन्हें बहिष्कृत किया था। अस्पृश्य उन स्थानों पर प्रवेश क्यों करना चाहते हैं। जहां हिन्दुओं ने देश से उन्हें बहिष्कृत कर रखा है। वे हिन्दुओं से यह कहने के लिए तैयार हैं तुम मंदिरों के दरवाजे खोलो या न खोलो, यह तुम्हारी मर्जी है, मैं इस पर विचलित नहीं होता। यदि आप सोंचते हैं कि मानवीय व्यक्तित्व की पवित्रता को आदर का स्थान न देना बुरी बात है तो आप अपने मंदिरों को खोलिए और इन्सानियत दिखलाइए। यदि आप भले मानुष बनने की अपेक्षा हिन्दू ही बने रहना ठीक समझते हैं तो मंदिरों के दरवाजे बंद रखिए और भाड़ में जाइए, हमें मंदिरों में आने की कोई जरूरत नहीं है।

इसमें एक आध्यात्मिक दृष्टिकोंण भी है। धर्म भीरू लोगों की तरह दलित वर्ग के लोग भी मंदिर प्रवेश चाहते हैं, अथवा नहीं, इतना ही प्रश्न है। आध्यात्मिक दृष्टि से दलित वर्गों के लोग मंदिर प्रवेश के विरुद्ध भी नहीं हैं...... यदि मंदिर प्रवेश अंतिम उद्देश्य है तो दलित वर्ग के लोग इसे दूर से ही प्रणाम करते हैं। वास्तव में वे उसे केवल अस्वीकार ही नहीं करेंगे, वरन यदि वे अपने आपको हिन्दुओं द्वारा अस्वीकृत पाएंगे तब वे अपना भाग्य कहीं और आजमाएंगे......... दलित वर्ग के लोग असमानता जनित अन्यायों और अत्याचारों का जुआ तो उतार कर नहीं फेंक सकते, परन्तु अब उन्होंने

पक्का इरादा कर लिया है, अब उस धर्म को नहीं सहन करेंगे जो अत्याचारों को जारी रखने का हामी हो।......... आवश्यकता है चातुरर्वण्य के सिद्धान्त को समाप्त करने की। चातुर्वण्य व्यवस्था ही सारी असमानताओं की जननी है .... जब तक वर्ण–व्यवस्था बनी रहेगी, दलित वर्ग के लोग मंदिर प्रवेश ही नहीं वरन हिन्दू धर्म को भी अस्वीकार करेंगे।

इस प्रकार बाबा साहेब ने मंदिर प्रवेश विधेयक पर दलित वर्गों के दृष्टिकोंण को स्पष्ट किया। साथ ही यह भी स्पष्ट किया यदि हिन्दू धर्म की विकृतियां जो चातुर्वण्य के कारण हैं समाप्त नहीं होती तो दलित वर्ग के लोग उसका परित्याग कर देंगे, यद्यपि धर्म परिवर्तन विधिवत घोषणा बाबा साहेब ने 13 अक्टूबर 1935 में यवेला मे किया।

बाबा साहेब के इस पत्रक के उत्तर में महात्मा गाँधी ने उत्तर दिया– "ऐसी बात नहीं है कि मैं हिन्दू परिवार में पैदा हुआ इसलिए हिन्दू हूँ, मैं श्रद्धा से और अपनी खुशी से भी हिन्दू हूँ। मैं जिस हिन्दू धर्म को मानता हूँ, उसमें ऊँच–नीच नहीं है। लेकिन डा0 अम्बेडकर को वणाश्रमी झगड़ा करना है, इसलिए मैं उनके पक्ष में नही रह सकता। मेरी यह श्रद्धा है कि वर्णाश्रम हिन्दू धर्म का अभिन्न अंग है।"[1] इस प्रकार बाबा साहेब और गाँधी जी में हिन्दू धर्म के मूल स्वरूप, वर्ण–व्यवस्था को लेकर तीव्र मतभेद पैदा हुआ, इसलिए पूना पैक्ट के बाद पूरे देश को जो आशा थी कि दोनो महामानव एक साथ कार्य कर मानवता का उद्धार करेंगे, धूमिल हुई। फिर भी पिछले कुछ वर्षों में महात्मा गाँधी के संपर्क में आने के वाद ये यह कल्पना नहीं कर सकते कि गाँधी जी राष्ट्र की दृष्टि से न सोंचकर सवर्ण हिन्दुओं की दृष्टि से या किसी और दृष्टि से सोंचते हैं। राष्ट्रवाद उनके लिए अलंकारिक शब्द नहीं है, यह उनकी प्राण वायु है।[2]

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 222

[2] सोंर्स, मैटिरियल, क्रमांक– 1, खण्ड–1, पृ0सं0– 97

इस बीच ब्रिटिश सरकार ने भारतीय संविधान में सुझाव व संशोधन हेतु श्वेत पत्र प्रकाशित किया तथा तथा एक संयुक्त समिति का गठन किया जिसके सदस्यों में जयकर, मिर्जा, इस्माइल, आगाखान, सर अकबर हैदरी और डा0बी0आर0 अम्बेडकर सम्मिलित थे। बाबा साहेब संयुक्त समिति में भाग लेने के लिए लन्दन जाने से पूर्व महात्मा गाँधी से भेंट करना चाहा। 23 अप्रैल 1933 में डा0 अम्बेडकर ने गाँधी जी से यर्वदा जेल में मुलाकात की। बाबा साहेब के साथ सर्व श्री मोरे, शिंदे, चित्रे, गायकवाड़ और चौहान भी थे। बाबा साहेब ने गाँधी जी से प्रस्तावित चुनावो में दलित वर्ग की अनेक समस्याओं पर चर्चा की। गाँधी जीने बाबा साहेब को तत्काल अपना कोई मत स्पष्ट नहीं किया अपितु बताया कि मैं लन्दन में पत्र के माध्यम से अपने मत से अवगत करा दूँगा। बाबा साहेब ने गाँधी जी से यह भी कहा कि सनातनी हिन्दू मुझे दैत्य (भीमासुर) कहते हैं, आप क्या कहेंगे? इस पर गाँधी जी ने कहा– अस्पृश्यों के नेता अम्बेडकर भी स्वयं मेरे कार्य पर कहां खुश हैं? वार्ता के अन्त में गाँधी जी ने बाबा साहेब को सुखद लन्दन यात्रा की शुभकामना दी और फूलों का गुच्छा भेंट किया।[1]

बाबा साहेब 24 अप्रैल को लंदन के लिए रवाना हुए और 6 मई को लन्दन पहुंचे। गाँधी जी ने 8 मई से आत्मशुद्धि अनशन नए सिरे से आरम्भ किया, जिसकी जानकारी बाबा साहेब को ब्रिटिश समाचार पत्रों से प्राप्त हुई। बाबा साहेब ने भारत में अपने मित्रों को पत्र लिखकर आत्मशुद्धि अनशन की विस्तृत जानकारी उपलब्ध कराने को कहा। उनके मित्रों ने बताया कि अनशन की चर्चा पूरे देश में है और सनातनी हिन्दू मंदिरों, तालाबों को अस्पृश्यों के लिए बड़ी संख्या में खोल रहे हैं। समिति के कार्य की समाप्ति के बाद बाबा साहेब 8 जनवरी 1934 को भारत लौट आए।

14 अक्टूबर 1935 को सम्पन्न हुई यवेला सम्मेलन भारतीय इतिहास की क्रांतिकारी घटना थी। इस सम्मेलन में देश विभिन्न भागों से 10 हजार से अधिक अस्पृश्य जन अपार कष्ट सहते हुए आए थे। सम्मेलन में भाषण देते हुए बाबा साहेब ने

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 228

अस्पृश्य वर्ग और हिन्दू धर्म में उनकी स्थिति पर विस्तार से प्रकाश डाला। उन्होंने अस्पृश्य वर्ग की आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक और राजनैतिक क्षेत्रों में दयनीय स्थिति पर चर्चा के साथ–साथ कालाराम मंदिर आन्दोलन पर भी चर्चा की और कहा– "हमें अंतिम निर्णय लेने का समय आ गया है । अपनी यह दुर्बलता और अवनति की स्थिति इसलिए हम पर आ पड़ी है कि हम हिन्दू समाज के अंग है। इसलिए जो धर्म हमें समान दर्जा दे सके, समान अधिकार दे और हमारेसाथ उचित व्यवहार करे, ऐसे किसी दूसरे धर्म में प्रवेश करें, क्या ऐसा आपको नहीं लगता .... हिन्दू समाज के साथ के सम्बन्ध को तोड़ दो। स्वाभिमान और सम्मान मिले ऐसे किसी अन्य धर्म में प्रवेश करो। बाबा साहेब ने अपने विषय में घोषणा की कि मैं दुर्भाग्य से अस्पृश्य हिन्दू धर्म में पैदा हुआ हूँ, यह कोई मेरा अपराध नहीं है, लेकिन मरते समय मैं हिन्दू के रूप में कभी नहीं मरूँगा।"

बाबा साहेब ने गाँधी जी और उनके हरिजन सेवक संघ द्वारा अस्पृश्यता उन्मूलन में व्यय किए जाने वाले कोष के सम्बन्ध में कहा– उस निधि का इस्तेमाल अस्पृश्य वर्गियों को स्पृश्य हिन्दुओं का गुलाम बनाने में होने वाला है। स्पृश्य हिन्दू सहायता करें या विरोध हम धर्मान्तरण का फैसला कर चुके हैं। अगर अब साक्षात परमात्मा भी अवरित हों ओर मैं हिन्दू धर्म न छोडू, इस प्रकार से मेरा मन परिवर्तित करने लगे, तो भी मैं अपने दृढ़ संकल्प से तनिक भी टस से मस नहीं होऊँगा।[1]

बाबा साहेब की धर्मान्तरण की इस घोषणा से देश में एक तूफान सा आ गया। राजनेताओं से लेकर धार्मिक नेताओं तक ने अलग–अलग प्रतिक्रिया व्यक्त की। महात्मा गाँधी ने कहा– "धर्म एक मकान या अंगारखे की भाँति नहीं है कि जब इच्छा हो बदला जा सके। यह शरीर से अधिक आत्मा का अभिन्न अंग है। धर्म एक ऐसा बन्धन है जो आदमी को ईश्वर से जोड़ता है....... यदि डा0 अम्बेडकर की ईश्वर में आस्था हो तो मैं उनसे कहना चाहूँगा कि वे क्रोध को शांत करें, अपनी स्थिति पर पुनर्विचार करें तथा अपने पूर्वजों के धर्म पर आस्थाहीन अनुयायियों की कमजोरी के आधार पर नहीं धर्म के

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 251–252

गुणों के आधार पर पुनर्विचार करें।[1]

महात्मा गाँधी ने बाबा साहेब को यह नसीहत भी दी कि सीधे-सादे करोड़ों अस्पृश्य उनकी बात स्वीकार नहीं करेंगे। गाँधी जी ने बाबा साहेब को यह भी विश्वास दिलाने का प्रयास किया कि छिट-पुट अत्याचारों के बावजूद अस्पृश्यता का अंत अब निकट आ चुका है। गाँधी जी ने अपने वक्तव्य के अंत में कहा- "मेरा विश्वास है कि धर्मान्तरण से अम्बेडकर और उनके प्रस्ताव का समर्थन करने वाले लोगों को जो चाहिए, वह प्राप्त नहीं होगा।"[2]

महात्मा गाँधी के इस वक्तव्य के उत्तर में बाबा साहेब ने पत्र से सूचित किया- जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, मैं अपने इरादे पर अड़िग हूँ और मुझे इस इस बात की चिन्ता नहीं कि लोग मेरे पीछे आते हैं या नहीं।[3] बाबा साहेब ने महात्मा गाँधी के सुझाव, निवेदन, धमकी की परवाह नहीं की और अंतत नागपुर में बौद्ध धर्म की दीक्षा लाखों अनुयायियों के साथ ले ली और इसी के साथ यवेला में किया गया उनका संकल्प पूरा हुआ।

बाबा साहेब और महात्मा गाँधी के सम्बन्ध में एक नई कड़ी 1936 में जुड़ी। बाबा साहेब ने एक क्रांतिकारी ऐतिहासिक बौद्धिक लेख 1936 में लाहौर के जातिपात तोड़क मंडल के अध्यक्षीय भाषण के लिए लिखा यद्यपि यह अधिवेशन विवादों एवं अन्तर्विरोधों के कारण सम्पन्न नहीं हो सका लेकिन बाबा साहेब ने अत्यन्त श्रम पूर्वक तैयार किए गए अपने लेख को छपवाकर प्रेस में छपने के लिए दिया जिससे भारत के लोग उनके विभिन्न विचारों से अवगत हो सकें। इस भावना में बाबा साहेब के सम्पूर्ण विचारों एवं सिद्धान्तों का सार रूप में समावेश था। इसके कतिपय अंश इस प्रकार हैं[4]- मित्रो मुझे जातपात तोड़क मंडल के सदस्यों की स्थिति पर निश्चय ही खेद है, जिन्होंने इस

---

[1] द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड- 62, पृ0सं0- 62-65

[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0- 245

[3] द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड- 62, पृ0सं0- 37-38

[4] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, वही, खण्ड- 1, पृ0सं0- 54

सम्मेलन की अध्यक्षता करने के लिए मुझ आमंत्रित करने की महती कृपा की है ..... भारत में समाज सुधार कार्य में सहायक कम और आलाचक अधिक है....... मैं राजनैतिक प्रवृत्ति के हिन्दुओं से पूँछता हूँ "जब आप अपने ही देश के अछूतों जैसे एक बहुत बड़े वर्ग को सार्वजनिक स्थानों (स्कूलों, कुओं, तालाबों, सड़कों आदि) का प्रयोग नहीं करने देते तो क्या आप राजनैतिक सत्ता के योग्य हैं?......... जब आप उन्हें अपनी पसन्द के आभूषण और वेशभूषा धारण नहीं करने देते तो क्या राजनैतिक सत्ता के योग्य हैं? जब आप उन्हें अपने पसंद का भोजन नहीं करने देते तो क्या आप राजनैतिक सत्ता के योग्य हैं? मुझे पूरा विश्वास है कि कोई भी समझदार व्यक्ति हाँ में उत्तर देने का साहस नहीं करेगा..... जाति प्रथा नकारात्मक तथ्य है ..... जहाँ तक शारीरिक क्षमता का सम्बन्ध है उसमें हिन्दू प्रजाति सबसे घटिया किस्म (सी–3) की है। यह छोटे आकार के बौनो की जाति है, जिसका शारीरिक विकास अवरुद्ध है और जिसमें 'दम' नहीं है। भारत एक ऐसा राष्ट्र है, जिसकी 90 प्रतिशत जन संख्या सैनिक सेवा के लिए अयोग्य है।

हिन्दू समाज एक मिथक मात्र है........ वस्तुतः हिन्दू समाज नामक कोई वस्तु है ही नहीं। यह अनेक जातियों का समवेत रूप है..... जब तक जाति प्रथा रहेगी, हिन्दुओं में संगठन नामक कोई बात नहीं रहेगी और जब तक उनमें संगठन नहीं होगा, हिन्दू कमजोर और डरपोक रहेंगे।....... अगर आप मुझसे पँछें तो मेरा आदश एक ऐसा समाज होगा जो स्वतन्त्रता, समानता और भाईचारे पर आधारित हो।......... प्रजातंत्र का मूल है– अपने साथियों के प्रति आदर और मान की भावना .... चातुर्रवर्ण्य व्यवस्था दोषपूर्ण व्यवस्था है...... जब विभिन्न वर्गों के बीच प्रतिबद्धता और शत्रुता के इतने सारे उदाहरण मौजूद है, तब मैं यह नहीं समझता कि कोई व्यक्ति चातुरवर्ण्य व्यवस्था को ऐसे प्राप्य आदर्श या प्रतिमान के रूप में कैसे मान सकता है, जिसके आधार पर हिन्दू समाज की पुनः रचना की जाए।......

अब केवल एक प्रश्न है जिस पर विचार करना है, वह है हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में कैसे सुधार किया जाए....... जाति पात मानने में उनका धर्म दोषी है........

वास्तविक उपचार यह है कि शास्त्रों से लोगों के विश्वास को समाप्त किया जाए...... आपको केवल शास्त्रों की उपेक्षा ही नहीं करनी है बल्कि उसकी सत्ता को स्वीकार करने से इनकार करना होगा, जैसा कि बुद्ध और नानक ने किया था........ यदि आप जाति व्यवस्था में दरार डालना चाहते हैं तो इसके लिए हर हालत में वेदों और शास्त्रों में डायनामाइट लगाना होगा।''

बाबा साहेब के इस लेख पर देश में तीव्र प्रतिक्रिया हुई। महात्मा गाँधी ने अपने समाचार पत्र हरिजन में 18 जुलाई 1936 को अपनी प्रतिक्रिया इस प्रकार व्यक्त की– पाठकों को याद होगा कि डा0 अम्बेडकर को लाहौर के जातपात तोड़क मंडल के वार्षिक सम्मेलन की अध्यक्षता विगत माह में करनी थी लेकिन स्वागत समिति ने डा0 अम्बेडकर का भाषण अस्वीकार होते ही सम्मेलन का आयोजन ही स्थगित कर दिया........ समिति ने जनता को एक ऐसे व्यक्ति के विचार सुनने से वंचित किया है जिसने अपने लिए समाज में एक अद्वितीय स्थान बना लिया है। चाहे वह भविष्य में कोई भी आवरण ओढ़ ले, डा0 अम्बेडकर अपने आपको भुलाने का अवसर नहीं देंगे।.......... कोई भी सुधारक इस भाषण की उपेक्षा नहीं कर सकता। रूढ़िवादी लोग इसे पढ़कर लाभान्वित होंगे। इसका तात्पर्य यह नहीं कि भाषण पर आपत्ति उठाने का अवसर खुला नहीं है। डा0 अम्बेडकर हिन्दू धर्म के लिए एक चुनौती हैं। एक हिन्दू के रूप में उनका पालन–पोषण हुआ, एक हिन्दू राजा द्वारा पढ़ाये गये हैं लेकिन वे तथाकथित सवर्णों से घृणा करते हैं, क्योंकि उन्होंने उनके साथ एवं उनके लोगों के साथ दुर्व्यवहार किया है। डा0 अम्बेडकर ने उसी धर्म को छोड़ने का फैसला कर लिया है, जो सबकी सामूहिक धरोहर है। उन्होंने अपनी घृणा को उस धर्म के मानने वालों के एक हिस्से के विरुद्ध दिया है।

भाषण में लेखक ने अपने कथन के समर्थन में अध्याय और श्लोक के प्रमाण देकर तीन अरोप लगाये हैं–

1. पहला– अमानवीय व्यवहार करना। 2. दूसरा अत्याचार करने वालो ने उसे निर्लज्जता से सही बताया। 3. तीसरा– यह कहना कि धर्मशास्त्रों में उसे उचित माना गया है।

कोई भी हिन्दू जो अपनी आस्था को जीवन से अधिक मानता है, वह दोषारोपण के महत्व को कम करके आँकलन नहीं कर सकता है। डा0 अम्बेडकर इस अमानवीय व्यवहार से घृणा करने वाले अकेले व्यक्ति नहीं है। लेकिन वह इसके सबसे अधिक दृढ़ प्रतिज्ञ प्रतिपादक हैं तथा इसका प्रतिपादन करने वालों में सबसे योग्य हैं। भगवान का धन्यवाद है कि अगली पंक्ति के नेताओं में से वे सबस अकेले हैं और तब भी वे थोड़ से अल्पसंयक वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं लेकिन वे जो भी कहते हैं वह थोड़ा कम या ज्यादा जोर से दलित वर्ग के नेताओं द्वारा दुहराया जाता है..........

रामायण और महाभारत सहित वेद, उपनिषद, स्मृतियां और पुराण हिन्दू धर्म शास्त्र है, लेकिन यही अंतिम सूची नहीं है........ सही धर्म ग्रन्थ उन्हें ही कहा जा सकता है, जो शाश्वत है तथा अंतःकरण को छूते हैं। उसे ईश्वर की वाणी नहीं माना जा सकता जो तर्क की कसौटी पर खरा न उतरे या जिसे अत्याधिक प्रयोग में लाया न जा सके।.... जाति पात का धर्म से कोई मतलब नहीं है। जाति एक रीति–रिवाज है, जिसके उद्गम को मैं नहीं जानता और न ही अपनी आध्यात्मिक क्षुधा की संतुष्टि के लिए जानना चाहता हूँ। मैं नहीं मानता कि जाति अध्यात्मिक व राष्ट्रीय विकास के लिए हानिकारक है। वर्ण और आश्रम–व्यवस्था ऐसी संस्थाएं है, जिनको जाति पांत से कुछ लेना देना नहीं है। वर्ण–व्यवस्था का नियम सिखाता है कि पैतृक धंधा अपनाकर हम अपनी रोजी–रोटी कमा सकते हैं। यह हमारे अधिकार को ही नहीं बल्कि कर्तव्य को भी परिभाषित करता है। वर्ण–व्यवस्था अवश्य ही व्यवसाय के संदर्भ में बनी है, जो केवल मानवता के कल्याण के लिए है और अन्य किसी के लिए नहीं। इसका अर्थ यह भी है कि कोई व्यवसाय न तो अत्याधिक नीचा है और न ही अत्याधिक ऊँचा है...... वर्ण व्यवस्था के विकृत स्वरूप की जांच करना गलत और अनुचित होगा, जब उसके नियम

का उल्लंघन होता है। किसी वर्ण में रहकर श्रेष्ठता का दावा झूठा होगा और इस कानून को नकारात्मक माना जाएगा। वर्ण व्यवस्था के कानून में छुआछूत की मान्यता निहित नहीं है। मुझे पता है कि हिन्दू धर्म में मेरी स्थिति पर कोई फर्क नहीं पड़ेगा। इस व्याख्या के आधार पर मैं लगभग आधी शताब्दी तक जिया हूँ तथा मैंने भरसक इन्हीं मान्यताओं को जीवन में उतारने का प्रयास किया है।

मेरे विचार से डा0 अम्बेडकर ने अपने भाषण में सन्देहपूर्ण प्रमाणिकता और मूल्य तथा गिरे हुए हिन्दुओं के शोंचनीय मिथ्या निरूपण को जो धर्म के सही उदाहरण नहीं है, चुनकर गंभीर गलती की है। जिन मानकों को डा0 अम्बेडकर ने अपनाया है, उससे तो प्रत्येक विद्यमान धर्म संभवतः असफल हो जाएगा। अपने योग्यतापूर्ण भाषण में डा0 ने अपने मुद्दे को अत्याधिक सिद्ध करने की कोशिश की है। क्या चैतन्य, ज्ञानदेव, तुकाराम, तिरुवल्लूवर व अन्य विद्वानों द्वारा सिखाया धर्म, पूरी तरह गुण रहित है। कोई धर्म अपने सबसे खराब उदाहरण से नहीं बल्कि सबसे अच्छे परिणाम से परखा जाना चाहिए। यदि हम इसे सुधार न पाए तो केवल इस प्रकार के मानक की आकांक्षा की जा सकती है।[1]

महात्मा गाँधी ने 15 अगस्त 1936 को अपने हरिजन पत्र में पुनः अपना विचार व्यक्त किया कि यहाँ यह पूँछना उचित है कि यदि शास्त्रों को अस्वीकार करता है तो मंडल किस बात में विश्वास करता है। कुरान को अस्वीकार कर कोई मुसलमान कैसे बना रह सकता है तथा बाइबिल का अस्वीकार करके कोई इसाई कैसे बना रह सकता है। यदि जाति और वर्ण एक दूसरे के पर्याय है जो वर्ण शास्त्रों का अंगभूत हिस्सा है, जिसमें हिन्दू धर्म की परिभाषा निहित है तो मैं नहीं समझता कि जाति अर्थात वर्ण को अस्वीकार कर कोई हिन्दू कैसे कहला सकता है।

श्री संतराम शास्त्रों को कीचड़ मानते हैं। जहाँ तक मुझे याद है– डा0 अम्बेडकर ने शास्त्रों को ऐसा विलक्षण नाम नहीं दिया है। मेरा अर्थ निश्चित रूप से यही

---

[1] हरिजन, 18 जुलाई 1936

है कि यदि शास्त्र छुआछूत का समर्थन करते हैं, तो मैं अपने को हिन्दू कहलाना नहीं चाहूँगा। इसी प्रकार यदि शास्त्र जाति–पांत का समर्थन करते हैं तो मैं अपने आपको हिन्दू कहलाना या हिन्दू रहना नहीं चाहूँगा। क्योंकि सहभोज और अन्तर्जातीय विवाह से मुझे बिल्कुल भी संकोच नहीं है।[1]

महात्मा गाँधी के इस वक्तव्य का बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने विद्वतापूर्ण अत्यन्त वैज्ञानिक तरीके से सविस्तार उत्तर दिया, जिसके कतिपय अंश इस प्रकार हैं– मैं महात्मा का बड़ा आभारी हूँ कि उन्होंने जातपात तोड़क मंडल के लिए लिखे गए मेरे भाषण पर अपने समाचार पत्र 'हरिजन' में विचार व्यक्त करके मुझे सम्मानित किया है।.... मुझे इस बात पर आश्चर्य है कि महात्मा ने मुझ पर यह आरोप लगाया है कि भाषण न देने के बाद भी भाषण इसलिए प्रकाशित किया है कि मेरा प्रचार हो और लोग इसे भूल न जाए। महात्मा चाहे जो कहें, भाषण प्रकाशित करने का मेरा उद्देश्य केवल यह था कि हिन्दू सोंचे और अपनी स्थिति को जाने। अगर मैं ऐसा कहूँ कि अपने प्रचार के पीछे नहीं हूँ क्योंकि मेरी इच्छा और आवश्यकता से अधिक मेरी प्रसिद्धि पहले से ही है। लेकिन यदि मान भी लिया जाए कि भैंनें प्रसिद्धि पाने के उद्देश्य से भाषण छापा है तो मेरे ऊपर पत्थर कौन फेंक सकता था? निश्चित रूप से वे नहीं जो महात्मा की तरह कांच के मकान में रहते हैं।

प्रयोजन के अलावा भाषण में उठाये गए प्रश्नों के बारे में महात्मा को क्या कहना है? पहली बात यह है कि जो भी मेरा भाषण पढ़ेगा, उसे अहसास होगा कि महात्मा ने मेरे द्वारा उठाए गए मुद्दों को पूरी तरह छोंड़ दिया है और उन्होंने जो मुद्दे उठाये हैं वे मुद्दे उस भाषण से उत्पन्न नहीं होते .... मैं महात्मा द्वारा उठाए गए प्रश्नों के सार को जाँचना चाहूँगा। महात्मा ने पहला प्रश्न उठाया कि मेरे द्वारा उदृत उदाहरण प्रमाणिक नहीं है। मैं स्वीकार करता हूँ कि मैं इस विषय का विशेषज्ञ नहीं हूँ,

[1] हरिजन, 15 अगस्त 1936

लेकिन मैं कहना चाहता हूँ कि जो उदाहरण मैंने उद्धृत किये हैं वे श्री तिलक के लेखों से लिए गए हैं..... ।

जहाँ तक सन्तों का प्रश्न है तो मानना पड़ेगा कि विद्वान लोगों की तुलना में संतों के उपदेश कितने ही अलग ओर उच्च हों, वे सोंचनीय रूप से निष्प्रभावी रहे हैं,,,,,, संत अनुसरण करने का उदाहरण नहीं बने। वह सम्मान योग्य धर्मपरायण व्यक्ति बने रहे........ शास्त्रों की सत्ता को समाप्त किए बिना और कैसा व्यवहार किया जाए, जो आज भी लोगों के आचरण को संचालित करते हैं, इस प्रश्न पर विचार नहीं किया है। लेकिन शास्त्रों की जकड़ से मुक्त कराने की जो प्रभावशाली योजना महात्मा बताएं, उन्हें यह माना चाहिए कि किसी संत के धर्मपरायण जीवन से वह स्वयं ऊँचे उठ सकते हैं, लेकिन आम आदमी की संत और महात्माओं के प्रति यही मनोवृत्ति है कि उनका सम्मान नहीं करते हैं।

एक अन्य प्रश्न महात्मा ने उठाया है कि चैतन्य, नामदेव, तुकाराम, तिरुवल्लूर, रामकृष्ण परमहंस आदि द्वारा स्थापित धर्म गुण रहित नहीं हो सकता, जैसा कि मैंने बताया है कि किसी भी धर्म को सबसे खराब नमूने से नहीं, बल्कि सबसे अच्छे परिणाम से परखन होगा। मैं इस वाक्य के प्रत्येक शब्द से सहमत हूँ। लेकिन मैं बिलकुल नहीं समझ पाया कि महात्मा इससे क्या सिद्ध करना चाहते हैं?......... प्रश्न अभी भी उठता है कि सबसे खराब इतने अधिक क्यों और सबसे अच्छे इतने कम क्यों?...... मैंने अपने भाषण मे दलील दी थी कि वर्ण और जाति पर आधारित समाज एक ऐसा समाज है जो गलत संबंधो पर आधारित है। मैंने आशा की थी कि महात्मा मरे दलीलों को नष्ट कर देंगे, लेकिन ऐसा करने के बजाय उन्होंने पृष्ठभूमि बताए बिना केवल चातुर्वण्य में अपना विश्वास दोहराया है।

महात्मा जो उपदेश देते हैं, क्या उसी के अनुसार आचरण करते हैं?...... किसी भी स्थिति में उन्होंने अपने आचरण को परीक्षण के लिए खोलकर रख दिया है, और मुझे दोष नहीं दिया जाना चाहिए, यदि मैं पूछूँ कि अपने आदर्श को अपने जीवन में

उतारने के लिए उन्होंने कितना प्रयास किया है। महात्मा जन्म से बनिया हैं। उनके पूर्वजों ने मंत्री पद पाने के लिए व्यापार करना छोंड़ दिया था जो कि ब्राम्हण का पेशा है। अपने जीवन में महात्मा बनने से पहले जब पेशा चुनने का अवसर आया तो उन्होंने तराजू के बजाय वकालत के पेशे को प्राथमिकता दी। वकालत का परित्याग कर वह आधे संत और आधे राजनीतिज्ञ बन गए। उन्होंने व्यापार को कभी छुआ तक नहीं, जो उनका पैतृक पेशा है........ क्या आदमी को अपना पैतृक पेशा अपनाना ही चाहिए, चाहे वह अनैतिक ही क्यों न हो। यदि प्रत्येक को अपना पैतृक पेशा ही जारी रखना पड़े तो इसका अर्थ होगा कि किसी आदमी को दलाल का पेशा इसलिए जारी रखना पड़ेगा क्योंकि उसके दादा दलाल थे? और किसी स्त्री को इसलिए वैश्या का पेशा अपनाना पड़ेगा क्योंकि उसकी दादी एक वैश्या थीं। क्या महात्मा अपने सिद्धान्त के इस तार्किक परिणाम को स्वीकार करने के लिए तैयार हैं? मेरे लिए उनका पैतृक पेशा अपनाने का आदर्श न केवल असंभव बल्कि अव्यवहारिक आदर्श भी है, इसके अलावा नैतिक रूप से भी यह अरक्षणी आदर्श है।..........

जाति और वर्ण में क्या अन्तर है, जो महात्मा ने समझा है। जो परिभाषा महात्मा ने दी है उसके अनुसार वर्ण ही जाति का दूसरा नाम है।....... वर्ण की वैदिक धारणा की व्याख्या करके उन्होंने जो उत्कृष्ट था उसे वास्तव में उपहास्पद बना दिया है..... वर्ण के बारे में महात्मा के विचार न केवल वैदिक वर्ण को मूर्खतापूर्ण बनाते हैं, बल्कि घृणाष्पद भी बनाते हैं। वर्ण और जाति दो अलग–अलग धारणायें हैं। वर्ण इस सिद्धान्त पर टिका हुआ है कि प्रत्येक को उसकी योग्यता के अनुसार जबकि जाति का सिद्धान्त है कि प्रत्येक को उसके जन्म के अनुसार।.......... मेरा मानना है कि सारी भ्रांति इस कारण से है कि महात्मा की धारणा निश्चित और स्पष्ट नहीं है कि वर्ण क्या है और जाति क्या है तथा हिन्दूवाद के संरक्षण के लिए इसमें से किसकी जरूरत है। ..... वह प्रत्येक बात में बच्चे जैसी सरलता और बच्चे जैसी स्वयं को धोखा देने वाला स्वभाव रखते हैं..... महात्मा के रूप में वह शायद राजनीति का आध्यात्मीकरण करने की कोशिश

कर रहे हैं। इसमें वह सफल हुए हो या न हुए हों, राजनीति ने उनका व्यापारीकरण कर दिया है।

.......मैं महात्मा को आश्वासन देना चाहता हूँ कि यह केवल हिन्दू और हिन्दू धर्म की असफलता नहीं है, जिसने मेरे मन में घृणा और अवमानना की भावना भर दी है, जिसका मुझ पर आरोप लगाया गया है। मैं मानता हूँ कि यह दुनिया एक अपूर्ण दुनिया है और जो भी इसमें जीना चाहता है, उसे अपूर्णता को सहन करना चाहिए। लेकिन जबकि मैं समाज की अपूर्णता तथा कमियों मे जीने के लिए तैयार हूँ, जिसमें मुझे कठिनाई से आगे बढ़ना मेरी नियति है, तो मैं महसूस करता हूँ कि उस समाज में जीने के लिए मैं सहमत नहीं हूँ, जो गलत आदर्शों को सजोए रखता है..... अगर मुझे हिन्दू और धर्म से ऊब पैदा होती है तो यह इसलिए है क्योंकि मुझे विश्वास है कि वे गलत सिद्धान्तों और गलत सामाजिक जीवन का पोषण करते हैं।

मुझे प्रतीत होता है कि हिन्दू समाज को नैतिक पुनरुद्धार की आवश्यकता है, जिसे विलंबित करना खतरनाक होगा।..... मैथ्यू अर्नोल्ड के शब्दों में–"हिन्दू दो दुनिया में विचर रहे हैं, एक है मृत दुनिया और दूसरी शक्ति रहित जन्म लेने वाली।" उन्हें क्या करना चाहिए महात्मा जिससे वे मार्गदर्शन की अपील करते हैं, वही सोचने में विश्वास नहीं करते, इसलिए मार्गदर्शन नहीं कर सकते जो अनुभव की कसौटी पर खरा उतरे। बुद्धिजीवी वर्ग जिसकी ओर लोग मार्गदर्शन के लिए जिसकी ओर निहारते हैं, वे या तो अधिक बेईमान है या उदासीन हैं। इसलिए सही दिशा की ओर जाने की शिक्षा उन्हें नहीं मिल पाती है। इस त्रासदी की स्थिति में हम विलाप करते हुए कह सकते हैं– अरे हिन्दुओ तुम्हारे नेतागण ऐसे हैं।"[1]

इस प्रकार बाबा साहेब ने गाँधी जी के उठाए गए बिन्दुओं का तार्किक रूप में उत्तर दिया। यह प्रत्युत्तर बाबा साहेब और गाँधी जी के सम्बन्धों का एक निर्णायक बिन्दु है।

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, वही, खण्ड–1, पृ0सं0–122

1935 के भारत शासन के अधिनियम के तहत 1937 में होने वाले चुनावों की तैयारी हेतु बाबा साहेब ने भी सभी राजनैतिक दलों की भाँति 1936 में स्वतन्त्र मजदूर दल नामक पार्टी का गठन कर व्यापक स्तरपर तैयारी आरम्भ की। बम्बई विधान सभा मे उनके दल को बड़ी सफलता प्राप्त हुई और अपनी पार्टी के घोषणा पत्र के अनुसार श्रमिकों के शोषण को समाप्त करने तथा उनके हितों की रक्षा हेतु लम्बा संघर्ष आरम्भ किया। इसी दौरान 16 मई 1938 को महाराष्ट्र के चिपलूण नामक स्थान पर एक सभा को सम्बोधित करते हुए बाबा साहेब ने कहा– गाँधी की मोहिनी विद्या मुझ पर प्रभाव नहीं डाल सकती। जवाहर लाल नेहरू और सुभाषचन्द्र बोस गाँधी जी की शरण में गए लेकिन मैं गाँधी जी की शरण में कभी नहीं जाऊँगा और अगर किसी समय में कांग्रेस में गया तो स्वयं गुणवत्ता से वहां भी प्रभाव डालूँगा।[1]

उस समय तक बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर और महात्मा गाँधी के सम्बन्ध काफी कटु हो चुके थे। अगर कोई भी व्यक्ति गाँधी जी की प्रशंसा करते हुए उन्हें पवित्र व्यक्ति बाबा साहेब के सम्मुख कह देता था तो वे तुरन्त कहते थे– गाँधी जी उल्लू जैसे अपवित्र ओर अशुभ सूचक हैं। उसी समय एक बार वार्तालाप में बाबा साहेब ने कहा आदमी को अगर महात्मा कहा जाए तो मोहनदास महात्मा है।[2] बाबा साहेब की यह टिप्पणी गोलमेज सम्मेलन में गाँधी जी के वर्ताव ने गाँधी जी पर की थी। इससे बाबा साहेब का मनुवादियों द्वारा और तीव्र विरोध आरम्भ हुआ।

वर्ष 1939 के आरम्भ में राजकोट रियासत में राजनैतिक सुधार के लिए तीव्र आन्दोलन आरम्भ हुआ। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के 1939 के त्रिपुरी अधिवेशन में अपने प्रतिनिधि पट्टाभि सीता रमैय्या के सुभाष चन्द्र बोस के हाथों 1377 के मुकाबले 1580 मतों से पराजित होने के बाद गाँधी जी जिसे वे कहते थे– सीतारमैया की हार उनसे अधिक मेरी हार है,[3] के बाद अपने स्वभावानुसार गाँधी जी राजकोट रियासत के

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 249
[2] वही, पृ0सं0– 296
[3] प्रो0 विपिन चन्द्र, वही, पृ0सं0– 441

आन्दोलन में कूद पड़े। वहाँ की अस्पृश्य जनता के आमंत्रण पर बाबा साहेब भी 18 अप्रैल को राजकोट पहुंचे। 19 अप्रैल को बाबा साहेब की महात्मा गाँधी के साथ मुलाकात हुई लेकिन गाँधी जी को बुखार होने के कारण लम्बी और सार्थक चर्चा नहीं हो पाई।

1 सितम्बर 1939 को जर्मनी द्वारा पोलैण्ड पर आक्रमण करने के साथ द्वितीय विश्व युद्ध आरम्भ हो गया और वाइसराय लार्ड लिनलीथगो ने भारत की ओर से युद्ध की घोषणा करदी जिससे क्षुब्ध होकर कांग्रेस ने अनन्तः गाँधी जी के निर्देशानुसार कांग्रेस मंत्रिमडलों ने अक्टूबर 1939 को त्याग पत्र दे दिया।[1] बम्बई विधान सभा में युद्ध प्रस्ताव पर चर्चा करते हुए डा0 अम्बेडकर ने इसकी कटु आलोचना की।

पूना की दक्कन सभा ने महादेव गोविन्द रानाडे का 18 जनवरी 1940 में 101 वें जन्मदिन मनाने का कार्यक्रम बनाया जिसमें बाबा साहेब को भी आमंत्रित किया गया। बाबा साहेब ने इस सभा में एक विस्तृत भाषण दिया जो डेढ़ घण्टे तक चला। बाबा साहेब ने इस सभा का यह भाषण बाद में प्रकाशित किया गया। इस भाषण की देश भर में तीव्र प्रतिक्रिया हुई। बड़ी संख्या में कांग्रेस समर्थक समाचार पत्रों ने इसकी घोर निन्दा की। बाबा साहेब ने अपने इस ऐतिहासिक महत्व के भाषण में झकझोर देने वाले तथ्य प्रस्तुत किए। भाषणके कुछ अंश इस प्रकार हैं–" मैं आपको यह बता दूँ कि मैं इस निमंत्रण से बहुत प्रसन्न नहीं हूँ मुझे यह आशंका है कि हो सकता है कि मैं इस अवसर के साथ न्याय न कर सकूँ।....... रानाडे के साथ मेरा सम्बन्ध बहुत ही कम रहा है, यहाँ तक कि मैंने उनको कभी देखा भी नहीं था। रानाडे के सम्बन्ध में केवल दो घटनाएं मुझे याद हैं। पहली घटना का सम्बन्ध उनके निधन से है। मैं सतारा हाईस्कूल में पहली कक्षा का विद्यार्थी था। 16 जनवरी 1909 को स्कूल बन्द कर दिया गया और उस दिन हम लड़कों ने छुट्टी मनाई थी। हमने जब पूँछा कि स्कूल बंद क्यों कर दिया गया तो हमें बताया गयाकि रानाडे की मृत्यु हो गई है। एक और घटना जो मुझे रानाडे

[1] प्रो0, राम लखन शुक्ला, आधुनिक भारत का इतिहास, पृ0सं0– 438

की याद दिलाती है, वह पहली घटना के बहुत बाद की है। एक बार मैं अपने पिता के पुराने कागजों के कुछ बडलों को देख रहा था। उस समय उसमें मुझे एक ऐसा कागज मिला जिससे यह आभास मिला कि वह महार जाति के कमीशंड तथा नान कमीशंड अधिकारियों द्वारा भारत सरकार को 1892 में जारी किए गए उन आदेशों के विरुद्ध भेजी गई एक याचिका थी, जिन आदेशों में सरकार सेना में महारों की भर्ती पर रोक लगा दी थी..... इस याचिका को रानाडे ने लिखा थ। इन दो घटनाओं के अलावा मुझे रानाडे के विषय में कोई बात याद नहीं है। उनके विषय में मेरी जानकारी का आधार केवल पुस्तकें हैं।

जैसा कि आप भली भाँति जानते हैं कि रानाडे के कुछ मित्र हैं जो उनको एक महापुरुष के रूप में चित्रित करने में झिझक नहीं करते और अन्य कुछ लोग ऐसे ऐसे हैं, जो उसी समान आग्रह से उनको वह स्थान प्रदान नहीं करते। फिर सच्चाई क्या है? ..... महापुरुष किसे कहा जा सकता है..... एक महापुरुष में सच्चाई तो होनी चाहिए, क्योंकि समूचे नैतिक गुणों के संगम के बिना कोई भी व्यक्ति महान नहीं बन सकता।.... एक व्यक्ति इसलिए महान होता है कि वह समाज को संकट की घड़ी से उबारने के लिए मार्ग ढूंढ लेता है। ......एक महान व्यक्ति को समाजिक उद्देश्य की गतिशीलता से प्रभावित होना चाहिए और उसे समाज के अंकुश तथा अपमार्जक के रूप में काम करना चाहिए ये तत्व हैं, जिनसे एक महान व्यक्ति की एक प्रसिद्ध व्यक्ति से अलग पहचान की जा सकती है और इन्हीं में सर्वोत्तम कार्यों के सम्मान तथा आदर मे उनके अधिकार निहित हैं।

क्या रानाडे एक महापुरुष थे? उनका व्यक्तित्व निःसन्देह महान था। वह भीमकाय व्यक्ति थे। वह आशावादी स्वभाव, मिलनसार तथा हंसमुख मनोवृत्ति एवं बहुमुखी क्षमता वाले व्यक्ति थे...... वह उच्च न्यायालय के मात्र एक वकील तथा न्यायाधीश ही नहीं थे, बल्कि वह प्रथम श्रेंणी के अर्थशास्त्री, प्रथम श्रेंणी के इतिहासकार, प्रथम श्रेंणी के शिक्षाविद तथा प्रथम श्रेंणी के धर्मतत्वज्ञ भी थे।

बाबा साहेब ने अपने भाषण में रानाडे की तुलना महात्मा ज्योवितोफूले (1827–1890) से की तथा वर्तमान समय के प्रमुख व्यक्तियों महात्मा गाँधी तथा मुहम्मद जिन्ना से भी की। बाबा साहेब ने अपने भाषण में कहा– "आज भारत भारत के क्षितिज पर दो महापुरुष हैं और वे इतने महान हैं कि उन्हें बिना नाम लिए पहचाना जा सकता है। वे हैं गाँधी और जिन्ना। वे कैसे इतिहास की रचना करेंगे, इसे तो भावी पीढ़ी ही बताएगी। हमारे लिए तो इतना ही काफी है कि निर्विवाद रूप से वे अखबारों की सुर्खियों पर छाए हुए हैं। उनके हाथ में बागडोर है। एक हिन्दुओं का नेता है तो दूसरा मुस्लिमों का। वे आज के आदर्श पुरुष और नायक हैं .... सबसे पहली बात मेरे मन में यह कौंधती है कि जहाँ पर उनके विष्ट अहं भाव का संबन्ध है, उन जैसे अन्य दो व्यक्तियों को खोज पाना कठिन ही है। उनके लिए व्यक्तिगत प्रभुत्व ही सब कुछ है और देश हित तो शतरंज की गोट है। उन्होंने भारतीय राजनीति को निजी मल्ल युद्ध का अखाड़ा बना रखा है।....... वे अपने से घटिया लोगों से मेज जोल पसन्द करते हैं। आलोचना से वे बड़े क्षुब्ध और व्यग्र हो जाते है, पर चाटुकारों की चाटुकारिता की चाट वे बड़े प्रेम से खाते हैं। दोनो ने एक अद्भुद रंगमंच तैयार किया है और वे चीजों को इस ढंग से प्रस्तुत करते हैं कि जहां भी वे जाते हैं, वहाँ सदा उनकी सर्वोच्चिता तथा अछूकत्व की इस भावना को समाचार पत्रों ने हवा दी है.......... समाचार पत्रों की वाहवाही का कवच धारण करके इन दोनो महानुभावों की प्रभुत्ता जमाने की भावना ने तो सभी मर्यादाओं को तोड़ डाला है। अपने प्रभुत्व से उन्होंने न केवल अपने अनुयायियों को बल्कि भारतीय राजनीति को भी भ्रष्ट किया है।.........

इन दोनो महापुरुषों के हाथों में राजनीति बेतुके कार्यों की होड बन कर रह गई है। यदि गाँधी जी को महात्मा गाँधी कहा जाता है, तो जिन्ना को कायदे आजम कहा ही जाना चाहिए। यदि गाँधी की कांग्रेस है तो जिन्ना की मुस्लिम होना ही चाहिए... जिन्ना का आग्रह है कि गाँधी स्वीकार करें कि वह हिन्दू हैं। गाँधी का अग्रह है कि जिन्ना स्वीकार करें कि वह भी मुस्लिम नेता हैं। कूटनीतिज्ञता का ऐसा खोखला और

दयनीय दिवालियापन तो कभी देखने में नही आया जैसे कि भारत में इन दोनो नेताओं के आचरण में दीख रहा है।

वे वकीलों की भाँति लम्बे, चौड़े, अनन्त भाषण दे रहे हैं .... प्रसिद्ध वाणिज्यिक उक्त के अनुसार उनके चक्कर में फंस कर राजनीति का "दिवाला" पिट गया है और कोई भी राजनैतिज्ञ लेन–देन नही हो सकता.............।

भारत में नायक पूजा ने दम नही तोड़ा है। मूर्ति पूजा के क्षेत्र में वह आज भी अद्वितीय है। यहां धर्म में मूर्ति पूजा है। यहां राजनीति में मूर्ति पूजा है। भले ही दुर्भाग्य की बात हो, पर भारत के राजनीतिक जीवन में नायक और नायक पूजा एक जीता जागता तथ्य है। मैं मानता हूँ कि नायक पूजा भक्त को भ्रष्ट और देश को नष्ट करती है...................। महापुरूषों की पूजा के पक्षधर कार्लाइल ने भी अपने पाठको को सचेत करते हुए कहा था कि "इतिहास में ऐसे ढेर सारे महापुरूष गिनाए गए हैं जो झूठे और स्वार्थी हैं। उन्होने गहरा खेद व्यक्त करते हुए कहा– "विश्व का (श्रृद्धान्जली रूपी) वेतन (इन तथाकथित महापुरूषों) की जेबों में चला जाता है। विश्व का कार्य नही सधता। नायक तो बाहर निकल गये है नीम, हकीम भीतर घुस आये हैं।"[1]

बाबा साहेब का यह भाषण जिन्ना साहेब और गांधी जी के प्रति उनके सम्पूर्ण विचार को स्पष्ट करता है। इन दोनो महापुरूषों की इतनी तीखी आलोचना शायद ही किसी ने व्यक्त की थी। बाबा साहेब के इस भाषण की देश में तीखी प्रतिक्रिया हुई। बाबा साहेब ने स्वयं अनुभव किया था कि तीव्र आलोचना होगी। बाद में उन्होने कहा "मेरी निन्दा इसलिए की जाती है कि मैने श्री गांधी और श्री जिन्ना की उस गड़बड़ी के लिए आलोचना की, जो उन्होंने भारतीय राजनीति में फैलाई है। अतः मुझ पर यह आरोप लगाया कि ऐसा करके मैने उनके प्रति घृणा और अनादर की भावना व्यक्त की है। इस आरोप के उत्तर में मुझे कहना है कि मैं एक आलोचक रहा हूँ और मुझे एक आलोचक ही रहना चाहिए। हो सकता है कि मैं गलती कर रहा हूँ परन्तु मैने हमेशा यह महसूस

[1] बाबा साहेब सम्पूर्ण बांडमय खण्ड1 पृसं0 253–282

किया कि गलती करना बेहतर है, बजाय इसके कि दूसरों से मार्ग दर्शन किया जाए या चुपचाप बैठा जाए यथास्थिति को बिगड़ने दिया जाए................। मैं अन्याय, अत्याचार, आडम्बर तथा अनर्थ से घृणा करता हूँ और मेरी घृणा उन सब लोगों के प्रति है जो इन्हे करते है। वे इनके दोषी है। मैं अपने आलोचकों को यह बताना चाहता हूँ कि मैं अपने घृणाभाव को वास्तविक बल व शक्ति मानता हूँ.............. श्री गांधी तथा श्री जिन्ना की मैने जो आलोचना की है उसके लिए मैं कोई क्षमायाचना या खेद प्रकट नही करूंगा, क्योंकि इन दोनो महानुभावों ने भारत की राजनैतिक प्रगति को ठप्प कर दिया है।................. मुझे आशा है कि मेरे देश वासी किसी न किसी दिन यह सीख लेगें कि देश, व्यक्ति कहीं महान होता है।[1]

कांग्रेस द्वारा द्वितीय विश्व युद्ध आरम्भ होने के साथ अपने प्रान्तीय मंत्रीमन्डलों को त्यागपत्र देने का आदेश दिया गया, जिसके अनुपालन में अनुशासित सिपाहियों की भाँति कांग्रसी सरकारों ने अक्टूबर, नवम्बर 1939 के मध्य त्याग पत्र दे दिया। महात्मा गांधी ने 1940 में व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ किया जिसकी बाबा साहेब ने आलोचना की। कांग्रेस द्वारा भारत छोड़ो आन्दोलन आरम्भ करने का भी बाबा साहेब ने समर्थन नही किया।

भारतीय स्वाधिनता समीप आते देख कांग्रेस और बाबा साहेब की नीतियों में परिवर्तन आया। सरदार पटेल ने बाबा साहेब से वार्ता चलायी जिसके प्रति गांधी ने आरम्भ में विरोध प्रकट किया लेकिन बाद में उनका विरोध शान्त हो गया और बाबा साहेब पण्डित नेहरू के मंत्रीमन्डल में शामिल हो गये।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि आधुनिक भारत के इन दो महापुरूषों में कभी सामन्जस्य और मधुर संबंध स्थापित नही हुआ जिसका कारण इनका वैचारिक विरोध रहा है।

---

[1] बाबा साहेब सम्पूर्ण वांडमय खण्ड 1 पृ0सं0 250–51

वैचारिक अन्तर्विरोध:

आधुनिक भारत के इन दो महापुरूषों को एक साथ कार्य करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। दोनो ही राष्ट्रीय प्राथमिकताओं की असीमितता के संदर्भ से परिचित थे। राष्ट्रीय परतंत्रता, सामाजिक विषमता, आर्थिक विच्छिन्नता, एवं परिगणित मानसिकता से मुक्ति का अभियान किसी एकाकी दृष्टि एवं कथन की अभिव्यक्त से प्रभावित नही था। मानवतावाद से परिपूर्ण कल्याण तथा स्वाभिमानी अस्तित्व की प्राथमिकताओं से अनुप्राणित होकर गांधी जी एवं बाबा साहेब दोनो ने राष्ट्रीय आन्दोलन की अर्थपूर्णता को नव–निवर्चन प्रदान किये। यद्यपि दोनो महापुरूषों में गम्भीर मतभेद रहे। डा0 अम्बेडकर ने गांधी और उनके गांधीवाद को कोई महत्व नही दिया, न ही कभी स्वीकार किया। गांधी जी ने भी डा0 अम्बेडकर के विचारों से कभी अपनी सहमति व्यक्त नही किया, फिर भी दोनो एक दूसरे को सम्मान देते थे और दोनो में कतिपय वैचारिक समानता भी थी जो इस प्रकार थी।

गांधी जी एवं डा0 अम्बेडकर दोनो समता, स्वतन्त्रता एवं सामाजिक न्याय के प्रबल पक्षधर थे। राजनीति की प्राथमिकताओं के बावजूद सामाजिक उन्नयन की बिरासत को नव दृष्टि प्रदान कर दोनो ने राष्ट्रीय आन्दोलन के दर्शन एवं कार्यक्रम प्रधान दायित्वों को जनसहभागीदारी की निर्णायक भूमिका से जोड़ा। यदि गांधी जी ने इस संदर्भ में मूलभूत रूपान्तरण हेतु एकादश महाव्रत तथा सत्याग्रही अनुपालन एवं व्यक्तित्व स्थायित्व को निर्णायक माना तो अम्बेडकर ने संस्थानात्मक परिवर्तन के रचनात्मक परिप्रेक्ष्य में व्यक्तिक सामाजिक एवं दृष्टिकोणीय व्यवहारिक कारकों की गव्यात्मकता को प्राथमिकता प्रदान की।

श्री गांधी जी एवं बाबा साहेब दोनो ने अस्पृश्यता उन्मूलन तथा शोषित दलित वर्गों के उन्नयन हेतु अपने जीवन को समर्पित किया लेकिन उनके स्वरूप को लेकर दोनो में सर्वाधिक विवाद बना रहा।

दोनो महापुरूषों का पारिवारिक वातावरण उदारवादी था। गांधी जी का लालन–पालन काठियावाड़ के वैष्णव जैन वातावरण में हुआ था और उनकी माँ का उनके व्यक्तित्व निर्माण में महत्वपूर्ण भमिका रही। गांधी जी पर दूसरा प्रमुख प्रभाव सोसाइटी आफ फ्रेन्ड्स द्वारा प्रचारित इसाई प्रचारकों का पड़ा। इसके अतिरिक्त थोरो रस्किन तथा टालस्टॉय जैसे विचारकों का में गांधी जी पर प्रभाव पड़ा। दूसरी ओर डा0 अम्बेडकर का भी पारिवारिक वातावरण उदारवादी था। उनका परिवार कबीरपंथी और पाण्डारपुर आन्दोन से प्रभावित था। विदेशों में शिक्षा ग्रहण करने के कारण वे पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति से विशेष प्रभावित हुए थे।

गांधी जी और बाबा साहेब दोनो में सर्व धर्म सम्भाव था। गांधी जी का पूरा जीवन सर्वधर्म सम्भाव को समर्पित था तो डॉ0 अम्बेडकर ने भी उन सभी विश्वास और परम्पराओं के प्रति सम्मान देना आवश्यक गाना जिनमें लोक कल्याण की भावना निहित है।

दोनो महापुरूषों ने धर्म को मानव जीवन में आवश्यक माना। गांधी जी ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में धर्म की अनिवार्यता और उपयोगिता को स्वीकार किया। गांधी जी ने धर्म को आत्मा का अभिन्न अंग माना जिसे बदला नही जाना चाहिए। गांधी जी के शब्दों में– "धर्म एक मकान या अंगरखे की तरह नही है कि जब मर्जी हो बदला जा सके। वह शरीर से अधिक आत्मा का अभिन्न अंग है। धर्म एक ऐसा बन्धन है जो आदमी को ईश्वर से जोड़ता है और शरीर के नष्ट होने के बाद भी वह आत्मा के साथ बचा रहता है।"[1] डा0 अम्बेडकर की भी मान्यता थी की मानव जीवन में धर्म आवश्यक है। सच्चा धर्म समाज की नीव है जिस पर सब नागरिक सरकारें टिकी हुई हैं।[2] लेकिन बाबा साहेब ऐसे धर्म के समर्थक थे जो समानता, स्वतन्त्रता और भाईचारे की नीव पर खड़ा हो। वे आवश्यक होने पर धर्म परिवर्तन के भी समर्थक थे और 1935 में येबेला में धर्म परिवर्तन की घोषणा की जिसे नागपुर में 14 अक्टूबर 1956 को साकार किया।

---

[1] द् क्लेक्टिव वर्क्स आफ महात्मा गांधी नई दिल्ली, खण्ड 62 पृ0सं0 64–65

[2] बाबा साहेब सम्पूर्ण वाडमय खण्ड 1 पृ0सं0 101

दोनो महापुरूषों ने सत्य और अंहिसा का प्रबल समर्थन किया। गांधी जी सत्य और अंहिसा को अपने साध्य की प्राप्ति का साधन मानते थे। बाबा साहेब भी सत्य और अंहिसा के पुजारी थे। बौद्ध धर्म के प्रति आकर्षण बढ़ने के साथ–साथ सत्य और अंहिसा में उनकी आस्था प्रबल होती गई। बुद्ध के अंहिसावादी मार्ग में ही उन्होने विश्व कल्याण देखा।

दोनो महापुरूषों साध्य और साधन, दोनो के पवित्रता पर बल दिया, दोनो ने ही शिक्षा को व्यक्ति के संवार्गीण विकास के लिए आवश्यक और अनिवार्य माना और उसे सर्वसुलभ होने का समर्थन किया।

इन कुछ समानताओं के बावजूद दोनो में गहरी असामनता थी। वास्तव में वैचारिक विरोध्र इतना गहरा था कि समानता के स्वर दब गये। वैचारिक विरोध का प्रमुख कारण सामाजिक अनुभूति और प्रेरणा स्रोत था। बाबा साहेब ने सामाजिक असमानता, घृणित व्यवहार, अमानवीय व्यवहार की पीड़ा आँख खोलते ही देखी और आजीवन अनुभव के जबकि गांधी जी ने इस पीड़ा को देखा था। साथ ही बाा साहेब का प्रेरणा स्रोत पश्चिमी सभ्यता थी। पश्चिम के लोकतांत्रिक आदर्श का सार है प्रत्येक व्यक्ति की प्रतिष्ठा और उसके महत्व पर आस्था। गांधी जी के वैचारिक प्रेरणा स्रोत हिन्दू धर्म दर्शन थे।

इन दो महापुरूषों मे पहला मूल अन्तर हिन्दू धर्म के स्वरूप को लेकर था। गांधी जी हिन्दू धर्म, उसकी वर्णाश्रम व्यवस्था तथा सभ्यता संस्कृति के समर्थक थे जबकि बाबा साहेब की हिन्दू धर्म में तनिक भी आस्था नही थी। उन्होने हिन्दू धर्म को विश्व का सबसे असमान और असहिष्णु धर्म कहा तथा हिन्दू सभ्यता को घोर असभ्यता कहते हुए उसे कलंक कहा। उनके शब्दो में "हिन्दू सभ्यता का असली नाम कलंक होना चाहिए था। ऐसी सभ्यता को और कहा ही क्या जा सकता है, जिसने मनुष्यों का एक वर्ग पैदा किया, जिसे जीवकोपार्जन के लिए अपराधवृत्ति की मान्यता प्राप्त है, एक दूसरा मानव समुदाय है, जिसे मानव सभ्यता के मानव सभ्यता के युग में आदिम बरर्बता के साथ

फलने–फूलने के लिए छोड़ दिया गया है। तीसरा वह समुदाय है जिसका मानवेत्तर अस्तित्व है और जिसके छूने भर से छूत लग जाती है।" जबकि गांधी जी की भारतीय सभ्यता और संस्कृति में घोर आस्था थी।

गांधी जी और बाबा साहेब में मूलभूत अन्तर हिन्दू धर्म की वर्ण व्यवस्था एवं जाति व्यवस्था को लेकर थी। बाबा साहेब ने वर्ण व्यवस्था की घोर आलोचना ही नही की अपितु आजीवन इसके विरूद्ध संघर्ष किया क्योंकि वे इसे सभी बुराइयों की जड़ मानते थे। उनका मानना था कि इसी के कारण अस्पृश्यता का उदय हुआ जिससे हजारों वर्षों से करोंड़ों अस्पृश्यों को घोर अमानवीय यातना का भागीदार बनना पड़ा। वे मानते थे कि इसका आधार धर्म और शास्त्र हैं इसलिए उन्होंने वेदो और धर्मशास्त्रों की अवहेलना करने, उनसे मुक्त होने तथा उनमें डायनामाइट लगाने तक का आह्वन किया। जबकि गांधी जी वर्ण एवं जाति व्यवस्था के समर्थक थे। गांधी जी ने गुजराती पत्र नव जीवन में 1921–21 में लिखा था "मुझे विश्वास है कि हिन्दू समाज आज तक इसी कारण जीवित रह सका है कि वह वर्ण व्यवस्था पर आधारित है।"[1] गांधी जी ने आगे भी लिखा– "जो समाज वर्ण व्यवस्था का सृजन कर सकता है, उसे निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि उनमें अनोखी संगठन क्षमता है।"[2]

गांधी जी ने वर्ण व्यवस्था के अनेक अच्छाईयों को समय–समय पर जनमानस के सम्मुख रखा। उन्होने 1925 में कहा "वर्ण व्यवस्था का उद्देश्य है प्रतियोगिता और बराबरी करने की प्रवृत्ति को रोकना तथा वर्ग संघर्ष से बचाना। मैं वर्ण व्यवस्था में विश्वास करता हूँ, क्योंकि इससे लोगों के कर्तव्यों और व्यवसायों का निर्धारण होता है।" वर्ण जाति व्यवस्था के सम्बन्ध में बाबा साहेब और गांधी जी के विचारों का पूर्ण दर्शन 1936 में लाहौर के जाति–पति तोड़क मन्डल के लिए डॉ0 अम्बेड़कर के लिखे गये भाषण और उस पर महात्मा गांधी का उत्तर तथा गांधी जी के उत्तर का बाबा साहेब द्वारा पुनः दिये गये उत्तर में प्राप्त होता है। डॉ0 अम्बेडकर और गांधी जी के बीच अन्त

---

[1] बाबा साहेब सम्पूर्ण वाङमय खण्ड 16 पृ0सं0 282
[2] बाबा साहेब सम्पूग्र वाङमय खण्ड 16 पृ0सं0 283

तक चले संघर्ष का मूल कारण यही वर्ण व्यवस्था का विरोध था।[1] गांधी जी वर्णव्यवस्था को उसके शुद्धम रूप में स्थापित करना चाहते थे। जिसका अभिप्राय था कि वर्णव्यवस्था का निर्धारण जन्म से न होकर कर्म से होना चाहिए गांधी जी ने गीता में प्रतिपादित जीवन दर्शन को अपना आदर्श माना। जबकि डॉ0 अम्बेडकर ने इसकी घोर आलोचना की।

गांधी जी और बाबा साहेब में अस्पृश्यता उन्मूलन को लेकर गम्भीर मतभेद था। गांधी जी अस्पृश्यता को भारतीय समाज तथा धर्म पर लगा हुआ कलंक मानते थे जो भारतीय संस्कृति के पतन का द्योतक है।[2] बाबा साहेब अस्पृश्यता को कलक ही नही अपितु पाप भी मानते थे। दोनो ने अस्पृश्यता उन्मूलन को अपने जीवन का लक्ष्य माना और उसके विरूद्ध संघर्ष चलाया लेकिन दोनो एक साथ कार्य नही कर सके। इसका मूल कारण था कि बाबा साहेब की मान्यता थी अस्पृश्यता का उन्मूलन बिना वर्ण व्यवस्था के उन्मूलन के नही हो सकता है जबकि गांधी जी ह्रदय परिवर्तन द्वारा इसका समाधान चाहते थे। डॉ0 अम्बेडकर के ह्रदय परिवर्तन में तनिक भी आस्था नही थी अपितु वे संवैधानिक व्यवस्था द्वारा इसका समाधान करना चाहते थे।

दोनो महापुरूषों में व्यक्ति के सम्बन्ध में भी अन्तर था। गांधी दर्शन, व्यक्ति को सभी गतिविधियों का केन्द्र मानता है। गांधी जी के अनुसार सत्य एवं अहिंसा पर आधारित व्यक्तिगत, सामाजिक एवं राजनैतिक आचरण, व्यक्ति के आध्यात्मिक लक्ष्य की प्राप्ति की पूर्व शर्त है। बाबा साहेब ने गांधी जी के इस धारणा की आलोचना करते हुए कहा कि गांधी जी ने व्यक्ति के लिए आध्यात्मिकता, सत्य, अंहिसा की अनिवार्यता बताकर व्यक्ति को अन्ध विश्वासी एवं निष्क्रय बना देते हैं जिससे व्यक्ति गतिशील समाज तथा परिस्थियों में अपने को समायोजित करने में असमर्थ पाता है।[3] व्यक्ति के

---

[1] मधुलिमय, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिन्तन पृ0सं0 36

[2] डॉ0 श्याम माहेन अग्रवाल, गांधी एवं अम्बेडकर, राजनैतिक एवं सामाजिक चिन्तन पृ0सं0 288

[3] मोहन लाल अवस्थी डॉ0 अम्बेडकर और गांधी आलेख पृ0सं0 164

निर्माण में एकादश महावृत के पालन पर बल दिया जबकि डॉ0 अम्बेडकर इसे अनुपयोगी मानते हैं।

राज्य के सम्बन्ध में भी दोनो महापुरूषो में मतभेद रहा। गांधी जी के अनुसार राज हिंसा के घनीभूत एवं संगठित रूप का प्रतिनिधित्व करता है। व्यक्ति के तो आत्मा होती है लेकिन राज्य आत्माहीन यंत्र है, इसे हिंसा से जिस पर उसका अस्तित्वि ही निर्भर है, हिंसा से कभी मुक्त नही हो सकता है।[1] इस प्रकार गांधी जी राज्य को संगठित हिंसा का प्रतीक बताते हुए अपने आदर्श समाज में राज्य के लिए कोई स्थान नही रखते। जबकि बाबा साहेब राज्य को एक अनिवार्य संस्था के रूप में स्वीकार करते हुए उन्होने कहा– "राज्य का मुख्य कार्य समाज के आन्तरिक व्यवस्था बनाये रखना और वाह्य आक्रमण से रक्षा करना है।"[2]

गांधी जी ने संसदीय व्यवस्था, लोकतंत्रीए व्यवस्था एवं निर्वाचन राजनीति की कटु निन्दा की तथा उन्होने ब्रिटिश संसद को वेश्या तक कहा। वहीं डॉ0 अम्बेडकर लोक सेवा, लोकहित, सामाजिक न्याय, लोक कल्याण, आर्थिक नियमन आदि के लिए संसदीय लोकतंत्र को महत्वपूर्ण व्यवस्था के रूप में स्वीकार किया। बाबा साहेब लोकतंत्र के महान समर्थक थे।

दोनो महापुरूषों में आर्थिक क्षेत्र में भी गम्भीर मतभेद था। गांधी जी मशीनों एवं आधुनिकीकरण के विरोधी थे। गांधी जी ने 19 जनबरी 1931 को अपने प्रसिद्ध पत्र यंग–इण्डिया में लिखा था– "क्या मैं उन्नत के पथ पर आरूढ़ घड़ी की सुई को पीछे घुमा देना चाहता हूँ? क्या मैं मिलों के स्थान पर करघा और चरखा लाना चाहता हूँ? क्या मैं रेलवे के स्थान पर बैलगाड़ी चलाना चाहता हूँ? क्या मैं मशीनों को पूर्णतः नष्ट कर देना चाहता हूँ? इस प्रकार के प्रश्न पत्रकार और जनता के लोग मुझसे पूछते हैं। मेरा उत्तर है यदि मशीने पूर्णतया नष्ट कर दी जाती हैं तो मै इसे कोई परेशानी नही समझूगां और न ही इसे कोई संकट मानूंगा।"

---

[1] महात्मा गांधी मार्डन रिव्यू अक्टूबर 1935

[2] डॉ0 बी0आर0 अम्बेडकर, स्टेट एण्ड माईनार्टिज पृ0सं0 3

इसके विपरीत बाबा साहेब मशीनीकरण तथा औद्योगिककरण के प्रबल समर्थक थे। वे आर्थिक क्षेत्र में राजकीय समाजवाद के समर्थक थे। मार्च 1947 में उन्होने संविधान सभा में कहा था– "हमारे यहां बिना तानाशाही के राजकीय समाजवाद हो। हमारा समाजवाद संसदीय प्रणाली के साथ हो।"[1]

आर्थिक क्षेत्र में गांधी जी ट्रस्टीशिप के समर्थक थे जिसे उन्होने जॉन रस्किन के अन टू द् लास्ट नाम पुस्तक से लिया था। वे हड़ताल के भी समर्थक नही थे। बाबा साहेब ने गांधी जी के इस ट्रस्टीशिप सिद्धान्त की कटु आलोचना करते हुए इसे हास्यास्पद बताया और कहा– "ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त हास्यास्पद है, जिसे गांधीवाद सीभी विकारों को दूर करने का रामबाण नुक्सा होने की बात करता है...............। सिद्धान्तकार को वास्तविक कठिनाईयों का ज्ञान नही है........। नैतिकता एवं सदाचार के उपदेश मात्र से सम्पत्ति के मालिक जो अपनी असीम तृष्णा की प्राप्ति के लिए सदा से गरीबों की दुनिया को आँसुओं की सौगात देते रहे हैं, उपदेश द्वारा स्वेच्छा से अपनी तृष्णा कम करके परोपकारी और त्यागी बन जायेगें।"[2]

आरम्भ में गांधी जी किसान आन्दोलन के विरोधी थे और जमीदारों के समर्थक थे। असहयोग आन्दोलन के दौरान उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ जिले से बाबा रामचन्द्र के नेतृत्व में एका आन्दोलन चला उसके प्रति गांधी जी ने अपने 18 मई 1921 के हरिजन पत्र में इसका विरोध किया था। जबकि डॉ0 अम्बेडकर जमीदारी व्यवस्था सामन्ती व्यवस्था के प्रबल विरोधी थे। उन्होने प्रस्ताव किया कि कृषि राज्य का उद्योग बने और न कोई जमीदार हो, न काश्तकार, न भूमिहीन मजदूर हो,[3]

गांधी जी की ग्राम्य स्वराज में आस्था थी जबकि डॉ0 अम्बेडकर इसके विरोधी थे क्योंकि उनका अनुभव रहा कि भारतीय समाज लोकतांत्रिक नही बन पाया है। ग्राम

---

[1] फ्रेमिंग ऑफ इण्डियाज् कानस्ट्रीट्यूशन खण्ड 2 पृ0सं0 140
[2] बाबा साहेब सम्पूर्ण वाडमय खण्ड 16 पृ0सं0 249
[3] मधुलिमय बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिन्तन पृ0सं0 106

संस्थाओं को अधिक अधिकार प्राप्त होने से दलित शोषित वर्गों की उत्पीड़न की सम्भावना अधिक होगी।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब और गांधी जी में कुछ समानताओं के बावजूद असमानता के स्वर अधिक गहरे थे। बाबा साहेब ने गांधी वाद की कटु आलोचना करते हुए कहा– "गांधीवाद उस समाज के लिए सर्वाधिक अनुकूल बनता है जो प्रजातंत्र को अपना आदर्श नही मानता................। गांधीवाद की प्रकृति की ओर वापसी की पुकार का अर्थ का बहुसंख्यक जनता को नग्ना अवस्था, मलीनता, निर्धनता और अज्ञानता की ओर वापस लाना।"

इस विवेचन से स्पष्ट होता है कि गांधी जी और बाबा साहेब के सिद्धान्तों में गम्भीर मतदभेद था जिसके कारण वे एक साथ कार्य नही कर सके। यद्यपि पूना समझौते के बाद कुछ समय लगा कि दोनो एक साथ मिलकर कार्य करेंगे लेकिन यह आशा शीघ्र ही धूमिल हो गई।

अध्याय

दस

अध्याय– दस

"बाबा साहेब का अंग्रेजी सरकार से सम्बन्ध"

बाबा साहेब डा० भीमराव अम्बेडकर का जन्म ऐसे समय में हुआ जब ब्रिटिश सरकार 23 जून 1757 के प्लासी युद्ध के बाद स्थापित होकर औपनिवेशिक साम्राज्य की नीतियों को पूर्ण रूपेण लागू कर रही थी तथा उसकी नीतियों के परिणाम स्वरूप 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध से भारत में राष्ट्रवाद का उदय हुआ जो दिसम्बर 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना (मुंबई मे ए0ओ0 ह्यूम द्वारा ग्वालियर टैंक मैदान में स्थापित) के साथ तीव्र रूप में मुखरित हुआ। ब्रिटिश सरकार ने भारतीय समाज के विभिन्न वर्गों एवं विभिन्न राजनैतिक दलों एवं भारतीय रियासतों के साथ अपनी नीतियों में समयानुसार परिवर्तन किया। बाबा साहेब ने ब्रिटिश सरकार की इन नीतियों का किस प्रकार मूल्यांकन किया? तथा ब्रिटिश सरकार के साथ किस प्रकार का संबंध बनाया? ब्रिटिश सरकार को वरदान माना या अभिशाप आदि महत्वपूर्ण प्रश्न हैं, जिसका उत्तर भारतीय जनमानस अपने–अपने दृष्टिकोण से देता हैं।

बाबा साहेब का पारिवारिक वातावरण कुछ अलग किस्म का था जिसका असर बाबा साहेब के व्यक्तित्व पर गहन रूप से पड़ा था। उनका जन्म भारत में अस्पृश्य समझी जाने वाली महार जाति में हुआ था। महार जाति का इतिहास भारत की अन्य अस्पृश्य जातियों से भिन्न था। भारत की अनेक अस्पृश्य जातियों में जागरूकता का अभाव था लेकिन महार जाति जागरूक जाति थी। अंग्रेजों के आगमन (1600 ई0 में ईस्ट इण्डिया कम्पनी की स्थापना हुई और 1907 ई0 में सूरत में पहला कारखाना खुला) के साथ ही महार जाति ने उनसे घनिष्ट संबन्ध विकसित किए। ईस्ट इण्डिया कम्पनी को भारत में अपनी शक्ति की विस्तार के लिए सैनिकों की आवश्यकता थी। महार जाति

के लोग बड़ी संख्या में ब्रिटिश सेना में भर्ती हुए। स्वयं बाबा साहेब के पिता रामजी सकपाल और पितामह मालोजी ब्रिटिश सेना में सम्मिलित थे। महार सैनिकों ने भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार में अत्यन्त प्रमुख भूमिका निभाई। इसमें कोरेगांव की प्रसिद्ध लड़ाई भी सम्मिलित है, जिसमें महार सैनिकों ने अपने अद्‌भुद पराक्रम और कौशल का परिचय देते हुए मराठा सेना को हरा दिया था।

अंग्रेजों से सम्पर्क के कारण महार जाति के लोग पाश्चात्य सभ्यता और संस्कृति से प्रभावित हुए थे। पाश्चात्य सभ्यता के समानता, बन्धुता, स्वतन्त्रता और वैज्ञानिक सोंच से महार लोग बहुत प्रभावित हुए जबकि भारतीय संस्कृति और सभ्यता में इन मूल्यों का नितान्त अभाव रहा। यद्यपि वेदों से लेकर उपनिषदों तथा भारतीय दर्शन के षडदर्शन सहित अन्य ग्रन्थों में कण–कण में ईश्वर का वास है, वसुधैव कुटुम्बकम, अहिंसा परमोधर्मः, आदि उदान्त मूल्यों, आदर्शों की बात की जाती रही है लेकिन ए मूल्य मनुष्यों (द्विज) जानवरों, कुत्तों, सर्पों, वृक्षों आदि पर तो लागू होती थी लेकिन भारतीय समाज के एक बड़े भाग का प्रतिनिधित्व करने वाले शूद्रों, अस्पृश्यों पर लागू नहीं होती थी। उनके साथ जिस घृणित और लज्जास्पद अमानवीय व्यवहार को किया जाता था उसका रंचमात्र उल्लेख भारतीय संस्कृति के इन तथाकथित मूल्यों में घृणा पैदा करने में पर्याप्त है।

पाश्चात्य सम्पर्क में आने के बाद महार जाति में भारतीय संस्कृति के इन तथाकथित मूल्यों, आदर्शों में वितिष्णा हो गई थी।

बाबा साहेब की शिक्षा–दीक्षा भी पाश्चात्य देशों में हुई थी। उनकी इण्टरमीडिएट तक की शिक्षा बंबई के एल्फिस्टन कालेज में हुई थी तथा आगे की उच्च शिक्षा बड़ौदा नरेश महाराज सायजी गायकवाड़ की सहायता से अमेरिका में हुई। अत्यन्त उत्वाह एवं उमंग तथा ज्ञान की प्यास लिए डा0 अम्बेडकर 15 जून 1913 को एस0एस0 मार्डोना नामक जहाज से बंबई से अमेरिका के लिए रवाना हुए।[1] उन्होंने कोलम्बिया

[1] डा0 अम्बेडकर पर बंबई सरकार का विवरण।

विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया। बाबा साहेब के लिए अमेरिका का जीवन एक नया अनुभव था। अब उनको चैन की सांस लेने का मौका मिला। वहां वे ऐसे दोस्तों के बीच रहते थे जिनमें छुआछूत की भावना का लेशमात्र भी नहीं था। उनमें भ्रातृत्व और समानता की भावना थी। उनके सामने नया उत्साही समाज था, जिसकी गति बहुत तेज थी, जिसका चिंतन क्रांतिकारी था और जिसके लिए स्वतन्त्रता सजह उपलब्धि थी। बाबा साहेब ने अपने अमेरिका वास की अनुभूतियों को अपने पिता के मित्र को पत्र में लिखकर व्यक्त किया।

अमेरिका में रहते हुए उन्होंने एक बार डा0ए0ए0 गोल्डन विजर द्वारा आयोजित नृतत्व विज्ञान विषयक गोष्ठी में एक निबन्ध पढ़ा। निबन्ध का विषय था– "भारत में महार जाति प्रथा का उद्‌गम, विकास और स्वरूप। यह गोष्ठी 9 मई 1916 को अयोजित हुई थी। इस निबन्ध में उन्होंने अपनी वय की तुलना में आश्चर्यजनक परिपक्वता तथा आंकलन शक्ति दिखाई.... उनके निबन्ध में स्पष्टता और साहस के गुण थे।[1]

बाबा साहेब ने अपने अथक परिश्रम से कोलंबिया विश्वविद्यालय से एम0ए0 तथा पी–एच0डी0 की डिग्री प्राप्त की। यहीं पर उनकी ज्ञान पिपासा शान्त नहीं हुई अपितु विश्वविख्यात शिक्षा केन्द्र लन्दन में वे कानून और अर्थशास्त्र का अध्ययन करना चाहते थे। इसके लिए बड़ौदा नरेश ने सहमति भी प्रदान कर दी। लन्दन में कानून का अध्ययन करने के लिए डा0 अम्बेडकर ने स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स एण्ड पोलिटकल साइंस में प्रवेश लिया।

इसी बीच बड़ौदा रियासत द्वारा प्रदान की गई छात्रवृत्ति की अवधि समाप्त हो गई, जिससे बाबा साहेब को अपनी शिक्षा पूर्ण किए बिना भारत वापस लौटना पड़ा। बाद में कोल्हापुर नरेश महाराज छत्रपति साहू जी के सहयोग से पूर्ण किया।

---

[1] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृ0सं0– 20

यूरोप में रहकर डा0 अम्बेडकर ने न केवल विश्वविद्यालयीय अध्ययन किया, अपित यूरोप के समाज, परिवेश, संस्कृति, रीति–रिवाज सभी संसदीय व्यवस्था से विशेष प्रभावित हुए। उन्होंने हिन्दू समाज को विश्व के उन्नत समाज के सम्बद्ध करने का इरादा कर लिया था।[1]

इस प्रकार बाबा साहेब का पारिवारिक वातावरण तथा उनकी विदेशों में हुई शिक्षा–दीक्षा ने उनके व्यक्तित्व और विचारधारा के निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

बाबा साहेब का ब्रिटिश सरकार से सम्बन्धों का आरम्भ साउथवरा कमेटी से हाता है। भारत में संवैधानिक सुधारों के क्रम में 1918 में मांटेग्यू–चम्सफोर्ड सुधार योजना प्रकाशित हुई जिसके आधार पर 1918 का भारत शासन अधिनियम पारित हुआ। इसी के तहत प्रतिनिधित्व के प्रश्न पर विचार विमर्श करने के लिए साउथवरो कमेटी का गठन किया गया। डा0 अम्बेडकर ने दलित वर्ग की ओर से इस कमेटी को एक प्रतिवेदन सौंपा। डा0 अम्बेडकर ने अपने प्रतिवेदन में हिन्दू समाज के भीतर सामाजिक विंभाजन की विशद जानकारी दी और इस बात का विश्लेषण किया कि हिन्दू समाज के अलग–अलग विभागों में मतदाताओं की संख्या की दृष्टि से मतदान की पात्रता की जो शर्तें रखी गई हैं उनका क्या परिणाम होगा? बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि इन कठिन शर्तों के कारण ब्राह्मण मतदाताओं की संख्या उनकी जनसंख्या के अनुपात में बहुत अधिक होगी ब्राह्मणेत्तर मतदाताओं की सख्या बहुत कम होगी तथा दलित वर्ग के मतदाताओं की संख्या तो नगण्य होती है। बंबई प्रान्त के रत्नगिरि के कोलावा जिले का उदाहरण देकर बाबा साहेबे ने स्पष्ट किया कि प्रति हजार जनसंख्या में मतदाताओं की संख्या ब्राह्मणों में 367.4, मराठों में 300.9, मुसलमानों में 95.9, महारों में 2.7 और अन्य अस्पृश्य जातियों में 300.9 होगी।[2] बाबा साहेब ने दलित मतदाताओं की संख्या बढ़ाने के लिए आय और सम्पत्ति सम्बन्धी शर्तों को शिथिल करने की मांग की।

---

[1] डी0आर0 जाटव, थॉन ऑन डा0 अम्बेडकर, पृ0सं0– 33

[2] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर, एक चिंतन, पृ0सं0–13

बाबा साहेब ने इसके बाद ब्रिटिश सरकार द्वारा भारतीय समस्याओं पर विचार करने के लिए नियुक्त लगभग सभी आयोगों, कमेटियों की कार्यवाहियों में सक्रिय रूप से भाग लिया। इसके पीछे उनका एकमात्र उद्देश्य हजारों वर्षों से घोर आमुनाषिक पीड़ा को झेल रहे अपने समाज का उद्धार करना ही था। इसी क्रम में ब्रिटिश सरकार ने 1925 में भारतीय मुद्रा के सम्बन्ध में विचार–विमर्श करने के लिए रायल कमीशन की नियुक्ति की। उस कमीशन के सम्मुख बाबा साहेब ने 15 दिसम्बर 1925 को अपनी गवाही दी। बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि मुद्रा विनियम के अदल–बदल में स्वर्ण परिमाण जारी रखना भारत के हित में नहीं है क्योंकि स्वर्ण–परिमाण भारत में मूलतः स्थिर नहीं है। देशहित में दक्ष डा0 अम्बेडकर ने इस सम्बन्ध में आगे बेसिल ब्लैकट द्वारा प्रस्तुत मुद्रा सुधार विधेयक का प्रबल विरोध किया।

बाबा साहेब का अंग्रेजी सरकार के साथ सम्बन्धों की अगली कडी वर्ष 1927 में आरम्भ होती है। बाबा साहेब को इस वर्ष बम्बई विधान परिषद का सदस्य बनाया गया। इस खुशी के उपलक्ष्य में अस्पृश्य समाज के अध्यापकों ने फरवरी 1927 में बंबई स्थित परेल के दामोदर सभागार में एक अभिनन्दन सभा आयोजित की। इसकी अध्यक्षता सीताराम भिकाजी पांडुरकर ने किया। डा0 अम्बेडकर का हार्दिक अभिनन्दन कर यह विश्वास प्रकट किया गया कि विधियी कार्यों में उन्हें अपार सफलता प्राप्त होगी।[1]

बंबई विधान सभा सदस्य के रूप में डा0 अम्बेडकरने अविस्मरणीय कार्य किया। नई विधान परिषद का कामकाज 12 फरवरी 1927 से आरम्भ हुआ। डा0 अम्बेडकर का पहला भाषण 24 फरवरी 1927 को हुआ जो 'बजट' जैसे महत्वपूर्ण विषय पर था। डा0 अम्बेडकर ने कहा[2]– ''अध्यक्ष महोदय बजट पर काफी समय से बहस चल रही है और मैं महसूस करता हूँ कि जो कुछ भी इस संबंध में कहा जा सकता था वह पहले ही कहा जा चुका है। इसलि मेरे जैसे नए सदस्य के लिए चुप रहना ही उचित

---

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित,पृ0सं0– 60, 65।

[2] बाम्बे लेजिस्लेटिव काउंसिल डिवेट्स, खण्ड 19, पृ0सं0–164–168, 2फरवरी 1927

होता लेकिन मुझे लगता है कि अब भी एक ऐसा दृष्टिकोण है, जिसे सदन के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है। चूँकि मैं उस दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करता हूँ अतः उस दृष्टिकोण को अभिव्यकत करना मैं अपना कर्त्तव्य समण्ता हूँ।....... बजट में कुल अनुमानित व्यय लगभग 36 प्रतिशत है। प्रेसीडेंसी का कुल अनुमानित राजस्व 15 करोड़ 50 लाख रुपये है और इसमें से 9 करोड़ 50 लाख रुपये के कर कार्य पालिका द्वारा परिषद की स्वीकृति के बिना लगाए गए हैं। मेरा मतलब भू–राजस्व और उत्पाद शुल्क से है.....। महोदय राजस्व की इन्हीं मदों पर करदाताओं के दृष्टिकोंण से विचार करते हुए मैं मानता हूँ कि इस प्रान्त की कर प्रणाली अनुचित है और इसका समर्थन नहीं किया जा सकता.......।''

''महोदय अब मैं बजट के व्यय के बारे में विचार प्रस्तुत करूँगा। मैं जानता हूँ कि इस सदन में अधिकांश सदस्य घाटे से व्याकुल हो गए होंगे। मुझे जिस बात ने व्याकुल किया है, वह यह है कि बजट का घाटा किसी सामाजिक विकास की बड़ी नीति को अपनाए जाने के परिणाम स्वरूप नहीं हुआ है, बल्कि घाटा पूर्णतया प्रशासन के अनुत्पादक खर्च में बढ़ोत्तरी के कारण हुआ है।.... प्रेसीडेंसी के व्यय की जो वृद्धि हुई है, क्या वह न्यायोचित है और क्या शासन की गुणवत्ता के आधार पर उसे न्याय संगत सिद्ध किया जा सकता है?''[1]

डा0 अम्बेडकर के इस भाषण से स्पष्ट होता है कि वे गलत बिन्दुओं पर ब्रिटिश सरकार की आलोचना करने से नहीं चूकते थे।

डा0 अम्बेडकर ने सदस्य के रूप में अन्य विधेयकों पर भी अपना तार्किक विवेचन दिया। यथा– बंबइ्र विश्वविद्यालय अधिनियम संशोधन विधेयक पर 27 जुलाई 1927 को अपना वक्तव्य दिया– ''अध्यक्ष महोदय मैंने अपने माननीय मित्र, बंबई विश्वविद्यालय के सदस्य का भाषण बहुत रुचि के साथ सुना...... महोदय, मैं अपने माननीय मित्र, विश्वविद्यालय के सदस्य के प्रति सम्मान व्यक्त करते हुए यह कहना

---

[1] बाम्बे लेजिस्लेटिव काउंसिल डिवेट्स, खण्ड 20, पृ0सं0–825–833,

चाहता हूँ कि अगर हम विश्वविद्यालय की तीनों संस्थाओं के बीच वही सम्बन्ध कायम करने में सफल होते हैं, जैसा मेरे माननीय मित्र चाहते हैं, तो भी मुझे भय है कि अंत में हमें छाया ही मिलेगी, मूल तत्व नहीं। महोदय, अगर मैं माननीय शिक्षामंत्री की बात को ठीक तरह से समझ पाया हूँ तो इस विधेयक का मूल उद्देश्य बम्बई विश्वविद्यालय को शिक्षा प्रदान करने वाले एक अच्छे विश्वविद्यालय के रूप में व्यवस्थित करना है। मैं समझता हूँ कि यह इस विधेयक के मूल उददेश्यों में से एक है। महोदय, जब मैं इस विधेयक में शामिल प्रावधानों का विश्लेषण कर रहा हूँ तो मुझे कहना पड़ेगा कि मैं महसूश करता हूँ कि शामिल प्रावधानों में निराशा ही मिलेगी। अपनी स्थापना के बाद से इस विश्वविद्यालय का सबसे बड़ा दोष यह रहा हे कि इसका गठन परीक्षाएं लेने वाली संस्था के रूप में हुआ है।''

''महोदय, हमें इस बात को ध्यान में रखना चाहिए कि किसी भी विश्वविद्यालय को अनुसंधान कार्यों या उच्च शिक्षा को प्रोत्साहन देने में सफलता नहीं मिल सकेगी, अगर वह परीक्षा प्रणाली को ही अपने अस्तित्व का एकमात्र ध्येय मान लेता है।... विश्वविद्यालय अन्य कालेजों की तुलना में अपने आपको अधिक ऊँचा और श्रेष्ठ समझते हैं तो एक दूसरे के प्रति ईर्ष्याभाव अवश्य होगा। महोदय, मेरा यह निवेदन है कि जब कालेजों और विश्वविद्यालय के प्रोफेसरों के बीच आपसी सम्बन्ध ही अच्छे नहीं है तो अनुसंधान करने और ज्ञान–प्राप्ति के लिए कैसे प्रोत्साहन मिलेगा और इससे कालेजों, विश्वविद्यालयों या अंततः जनता को कैसे लाभ मिलेगा।

महोदय, मेरा दूसरा निवेदन यह है कि जब तक विश्वविद्यालय पूर्व स्नातक शिक्षा का काम अपने हाथ में नहीं लेता, तब तक स्नातकोत्तर शिक्षण का कितना ही भार उन पर डालने से कोई लाभ नहीं होगा। महोदय, विभिन्न कालेजों की स्थिति क्या है? मैं यह निवेदन करना चाहता हूँ कि सरकारी कालेजों को छोंड़कर अधिकांश कालेजों की स्थापना निजी प्रयत्नों से की गई है। मैं उन लोगों का निरादर नहीं कर रहा हूँ, जो इसमें काम कर रहे हैं जब मैं यह कहने की धृष्टता करता हूँ कि वे पूर्व स्नातक स्तर

की शिक्षा संतोषजनक ढंग से नहीं दे पा रहे हैं। पहली बात तो यह है कि उनमें पर्याप्त स्टाफ नहीं है। उदाहरण के लिए दो विषय लें– इतिहास और राजनैतिक अर्थव्यवस्था, जो मेरे विशेष विषय थे। मैं जानता हूँ कि एक कालेज में इन विषयों को पढ़ाने के लिए आमतौर पर एक प्रोफेसर होते हैं। यह मानना हास्याष्पद होगा कि एक कालेज में केवल दो प्रोफेसर इतिहास और राजनैतिक अर्थव्यवस्था जैसे इतने विशाल विषय को ठीक ढंग से पढ़ा सकते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि प्रत्येक प्रोफेसर को एक सप्ताह में लगभग 13 घण्टे व्याख्यान देना होता है। मेरा कहना है कि जिस प्रोफेसर को गुलाम जैसे काम करना पड़ता है, वह कभी भी सच्चे अर्थों मे अध्यापक नहीं बन सकता। वह एक साधारण अध्यापक ही बन सकता है और तैयार कुंजी की मदद से ही अपना काम करेगा। हम उससे मौलिकता की कोई उम्मीद नहीं कर सकते और वह उन विद्यार्थियों को जिन्हें पढ़ाता है मात्र एक यांत्रिक प्रक्रिया बन कर रह जाता है।...... वर्तमान शिक्षा पद्धति पूर्णतः निरर्थकता है।

इस प्रकार बाबा साहेब ने ब्रिटिश सरकार की शिक्षा नीति की कटु आलोचना की। इसी प्रकार प्रसूति लाभ विधेयक पर 28 जुलाई 1928 को चर्चा में भाग लेते समय बाबा साहेब ने कहा[1]– महोदय इसलिए मैं यह स्वीकार करता हूँ कि इसकी अधिकांश जिम्मेदारी सरकार को ही निभानी होगी। मैं इस सच्चाई को स्वीकार इसलिए करने को तैयार हूँ क्योंकि सामान्य जनता के कल्याण की चिन्ता करना बुनियादी तौर पर सरकार की जिम्मेदारी है। प्रत्येक देश में जहाँ प्रसूति लाभ लिए जाते हैं, वहाँ प्रसूति लाभके लिए सरकार कुछ राशि व्यय करती है।

यही नहीं अपने कार्यकाल के दौरान बाबा साहेब ने सदन में प्रस्तुत सभी विधेयकों का भारत के आम नागरिकों के हितों के आधार पर ही समर्थन किया। यदि इसके लिए ब्रिटिश सरकार की कटु आलोचना भी करनी पड़ी तो निडर होकर उन्होंने यह कार्य किया। पूर्व वर्णित भाषण इसके प्रमाण हैं। बाबा साहेब का अनेक बार बम्बई के

---

[1] बाम्बे लेजिस्लेटिव काउंसिल डिवेट्स, खण्ड 23, पृ0सं0– 381 – 382

गवर्नर सर लेस्ली विल्सन से झड़प भी हो गई थी। एक बार सदन में झडप अधिक हो गई तो गर्वनर साहेब ने उन्हें राजभवन बुलाया और कहा[1]– ''ब्रिटिश सरकार ने उन्हें विधान परिषद का सदस्य मनोनीत किया है और इस प्रकार से ब्रिटिश सरकार की आलोचना करना उचित नहीं है। बाबा साहेब ने गवर्नर को उत्तर दिया कि विधान परिषद में अपनी बुद्धि को जो उचित लगा, वह मैं बोल चुका हूँ। ब्रिटिश शासन काल में अस्पृश्य वर्ग का तनिक भी कल्याण नहीं हुआ है।''

ब्रिटिश सरकार ने 1919 के भारत सरकार अधिनियम के कार्य की समीक्षा करने के लिए 1927 में एक आयोग जिसे प्रायः साइमन कमीशन कहा जाता है, नियुक्त किया।[2] साइमन कमीशन को इसके अतिरिक्त भावी संवैधानिक सुधार की रूप रेखा प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी भी सौपी गई। 8 नवम्बर 1927 को घोषित किए गए इस कमीशन के सारे सदस्य गोरे थे। सारे देश में इसकी तत्काल और व्यापक प्रतिक्रिया हुई कि जिस आयोग को भारत का राजनैतिक भविष्य निश्चित करना है उसकी सदस्यता के लिए एक भी भारतीय को काबिल नहीं माना गया। यह भारत के लिए अपमान जनक बात थी कि इसमें कोई भी भारतीय सदस्य नहीं था। इस आयोग के बहिष्कार का आह्वान किया गया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, हिन्दू महासभा, लिवरल फेडरेशन, औद्योगिक और वाणिज्य संगठनों तथा जिन्ना के नेतृत्व वाली मुस्लिम लीग ने बहिष्कार किया। लेकिन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ही वह संगठन था, जिसने इस बहिष्कार को आन्दोलन का रूप दिया।[3]

बाबा साहेब ने इसे ऐसे सुअवसर के रूप में देखा कि हजारों वर्षो से जुल्मो एवं अत्याचारों का सामना कर रहे दलित वर्ग की करुण स्थिति को ब्रिटिश सरकार के सम्मुख प्रकट कर सकते थे और कुछ सुविधाएं प्राप्त कर सकते थे। साइमन कमीशन 1928 में भारत आया और बाबा साहेब ने 23 अक्टूबर 1928 को इस कमीशन के सम्मुख

---

[1] कीर, धनंजय, बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 108
[2] प्रो0 वी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारतीय इतिहास, पृ0सं0– 437
[3] प्रो0 विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ0सं0– 230।

अस्पृश्य वर्ग की समस्याओं से सम्बन्धित अपना महत्वपूर्ण प्रतिवेदन सौंपा। यह बयान डा0 अम्बेडकर ने डिप्रेस्ट क्लासेज इन्स्टीट्यूट ऑफ बांबे की ओर से प्रस्तुत किया। बाबा साहेब ने सबसे पहले अयोग में भारत में अस्पृश्य जातियों की कुल जनसंख्या के विषय में वास्तविक जानकारी दी। डा0 अम्बेडकर ने कहा[1]– जी हाँ और इन अनुसूचियों के अनुसार दलितों की संख्या 3 करोड 10 लाख बैठती है, अर्थात यह ब्रिटिश भारत के हिन्दुओं और जनजातियों के लोगों की संख्या का 19 प्रतिशत है।

इसमें बाबा साहेब ने अस्पृश्य वर्ग के विशेष हितों की मांग की– कमीशन के सदस्य कर्नल लेन फौक्स के साथ बाबा साहेब की वार्ता हुई जो इस प्रकार है– कर्नल लेन फौक्स : जो दो ज्ञापन हमें मिले हैं, वे किन ऑकड़ों पर आधारित हैं? प्रत्येक ज्ञापन में आपने दलितों के लिए विशेष प्रतिनिधित्व मांगाहै। एक ज्ञापन में आप वयस्क मताधिकार की मांग करते हैं और आपने सेना, नौसेना और अन्य नौकरियों में विशेष भर्ती की मांग की है। यदि आप यह आदिम जातियों और जरायम पेशा जातियों के लिए भी मांगते हैं, तो स्पष्टतया यह बहुत बड़ी बात है। यह सुविधा आपने बड़ी संख्या के लिए मांगी है या छोटी संख्या के लिए ?

डा0 अम्बेडकर– मैंने यह दलित वर्गों के लिए मांगी है।

बाबा साहेब ने कमीशन के सम्मुख और बताया– पहली बात तो मैं यह स्पष्ट करना चाहता हूँ कि हम दावा करते हैं कि हमें बिन्दुओं से अलग एक विशिष्ट अल्पसंख्यक माना जाए। अभी तक हमें हिन्दुओं में शामिल करके हमारे अल्पसंख्यक स्वरूप को छिपाया गया परन्तु वास्तव में दलित वर्गों और हिन्दुओं के बीच कोई सम्पर्क नहीं है। इसलिए सम्मेलन में सबसे पहली बात मैं यह रखना चाहता हूँ कि हमें एक विशिष्ट और स्वतन्त्र अल्पसंख्यक माना जाए। दूसरे मैं यह कहना चाहूँगा कि ब्रिटिश भारत में दलित वर्गों के अल्पसंख्यक वर्ग को किसी अन्य अल्पसंख्यक वर्ग की अपेक्षा कहीं अधिक राजनैतिक संरक्षण की आवश्यकता है, क्योंकि शिक्षा की दृष्टि से दलितों

---

[1] भारतीय संवैधानिक आयोग, खण्ड 16, पृ0सं– 52–75।

का अल्पसंख्यक वर्ग बहुत पिछड़ा है, अर्थात आर्थिक दृष्टि से निर्धन है, सामाजिक दृष्टि से बंधा हुआ है और राजनैतिक दृष्टि से विवशताओं से ग्रस्त है, जिनसे अन्य कोई वर्ग ग्रस्त नहीं है। हम मुस्लिम अल्पसंख्यक वर्ग की तरह का प्रतिनिधित्व चाहते हैं। हम आरक्षित सीटें चाहते हैं, यदि वे वयस्क मताधिकार के साथ दी जाएं।

साइमन कमीशन के सदस्य के रूप में मेजर एटली भी भारत आये थे। डा0 अम्बेडकर ने मेजर एटली को अस्पृश्य मजदूरों के स्थिति की जानकारी दी। यही नहीं अस्पृश्यों की शिक्षा, पेशा, आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्थिति आदि पर भी विस्तार से चर्चा की। कमीशन के अध्यक्ष सर साइमन ने कहा– "मैं समझता हूँ कि आप दलितों के उत्थन में बहुत रुचि ले रहे हैं। इस प्रचार कार्य मे उच्च जातियों के लोगों की सहायता के सम्बन्ध में आपका क्या अनुभव है?" डा0 अम्बेडकर ने कहा– दुर्भाग्य से इस मामलें में मेरा अनुभव बहुत कटु है। दलित वर्गों की उनकी कतिपय अस्वच्छ आदतों के कारण पास नहीं फटकने दिया जाता, कहा जाता है कि दलित वर्गों के लोग मृत पशुओं का मांस खाते है और साफ सुथरे नहीं रहते। पिछले दो वर्षों में मैंने इस प्रेसीडेंसी में दलित वर्गों को साफ–सुथरा रहने और गंदी आदतों को छोड़ने हेतु राजी करने के लिए एक अभियान आरम्भ किया। यह मेरा दुर्भाग्य था कि सारे सवर्ण हिन्दु मेरे विरुद्ध हो गए, जबकि ऐसे मामलों में मैं उनसे पूरे सहयोग की उम्मीद कर रहा था।

इस प्रकार डा0 अम्बेडकर ने साइमन कमीशन के सम्मुख अस्पृश्य वर्ग के साथ हो रहे घृणित व्यवहार और दुःखद स्थिति की न केवल विस्तार से चर्चा की अपितु उनके हितों के लिए पृथक निर्वाचन प्रणाली सहित नौकरियों में विशेष सुविधा की मांग की। हजारों–हजारों वर्षों से गुलमों एवं जानवरों से वद्तर जीवन यापन कर रहे अस्पृश्य वर्ग की स्थिति में सुधार लाने के लिए यह एक छोटा सा उपाय मात्र ही था।

सामइन कमीशन के सम्मुख गवाही देने के बाद बाबा साहेब श्रमिक समस्या तथा अस्पृश्य वर्ग की समस्याओं के समाधान के लिए संघर्ष और तीव्र किया। मंदिर सत्याग्रह बाबा साहेब हजारों अनुयायियों के साथ कर रहे थे। इसी समय बंबई सरकार

ने सर ओ0वी0 एच0 स्टार्ट की अध्यक्षता में एक कमेटी गठित की, जिसे अस्पृश्य वर्ग की सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक स्थिति की जानकारी कर उनकी दिशा सुधारने के लिए उपाय सुझाने का दायित्व सौंपा गया था।[1] डा0 सोलंकी के साथ डा0 अम्बेडकर भी इस समिति के सदस्य थे। समिति के साथ डा0 अम्बेडकर ने बम्बई प्रेसीडेन्सी का विशद दौड़ा किया। मार्च 1930 में समिति ने अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इसमें कहा गया– यद्यपि अस्पृश्य समुदाय हिन्दुओं के ही धर्मकृत्य, कानून और व्यवहार मानती है और स्वीकार करती है, फिर भी उसे बहिष्कृत स्थिति में दूर अलग रहना पड़ता है। प्रतिरोध के कारण वह समाज में सम्मिलित नहीं हो पाती, इसलि वह दासता की बुरी हालत में फंसी हुई है। समिति ने अस्पृश्य वर्ग की दशा सुधारने के लिए महत्वपूर्ण सिफारिशें भी की थीं।

इसी बीच अखिल भारतीय बहिष्कृत वर्ग की परिषद 8 अगस्त 1930 को नागपुर में डा0 अम्बेडकर की अध्यक्षता में आयोजित की गई, जिसमें उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में अस्पृश्य समाज की अनेक समस्याओं का उल्लेख करते हुए राजनैतिक स्थिति परभी प्रकाश डाला कि जब यूगोस्लाविया, चैकोरलाविया, हंगरी, एस्टोनिया, लाटोनिया, लेटविया, लिथुआनिया तथा रूस जैसे विभिन्न भाषी, भिन्न जाति, विभिन्न संस्कृति और अन्य बहुत से मत–मतान्तरों के होते हुए भी एक हैं, उनकी अपनी सरकार है और वे पारस्परिक मेल–जोल के आधार पर सफलता पूर्वक अपने–अपने शासनों को चला रहे हैं, तब भारत में यह सब क्यों नहीं संभव है? उन्होंने जोर देकर कहा कि भारत के लोग भी मिल–जुल कर अपना शासन चलाने में आज पूरी तरह समर्थ हैं, उन्हें अपनी क्षमता सिद्ध करने का अवसर दिया ही जाना चाहिए।

बाबा साहेब ने शासन व्यवस्था पर प्रहार करते हुए कहा– हिन्दुस्तान की दरिद्रता से तुलना करने लायक दरिद्रता विश्व के किसी भी कोने में कहीं भी मिलेगी क्या? ब्रिटिश सत्ता स्थापित होने के बाद भारत में पिछली शताब्दी में कुल 31 अकाल

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 132

पड़े थे और उसमें से लगभग ढ़ाई से तीन करोड़ लोग भूख से मारे गये। इसका कारण भारतका औद्योगीकरण न होना तथा ब्रिटिश सरकार की नीतियां हैं।[1]

इस प्रकार नागपुर के इस सम्मेलन में बाबा साहेब ने ब्रिटिश सरकार की नीतियों की तीखी आलोचना की। उनकी इस आलोचना के कारण केसरी जैसे समाचार पत्र (इसे 1886 में बाल गंगाधर तिलक ने जी0जी0 आगरकर के साथ मिलकर आरम्भ किया था) ने टिप्पणी की कि जैसे जूलियस सीजर पर उसका मित्र ब्रूट्स उलट गया, वैसे अम्बेडकर ब्रिटिशों पर उलट गए, ऐसा ब्रिटिशों को लगेगा।[2]

साइमन कमशीन की रिपोर्ट मई 1930 में आने के बाद तथा भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा दाण्डी मार्च के द्वारा सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ करने के बाद उत्पन्न परिस्थितियों पर विचार करने के बाद भारत के भावी संवैधानिक सुधारों पर विचार–विमर्श करने के लिए लन्दन में गोल मेज सम्मेलन आयोजित करने की घोषणा की। ब्रिटिश सरकार ने भारत के सामाजिक, राजनैतिक जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले सभी दलों, संगठनों, रियासतों के प्रतिनिधियों को आमंत्रण पत्र भेजा।[3] शेष अस्पृश्यता उन्मूलन अध्याय से।

प्रथम गोल मेज सम्मेलन में बाबा साहेब ने जहां दलित वर्ग के दुःखों को विश्व में जाहिर किया, वहीं ब्रिटिश सरकार की नीतियों की जमकर आलोचना की। गोलमेज सम्मेलन में पूर्ण अधिवेशन की 20 नवम्बर 1930 को हुई पाँचवीं बैठक में बाबा साहेब ने अपना ऐतिहासिक भाषण दिया।[4] "भारत में नौकरशाही शासन प्रणाली को बदल कर एक ऐसी सरकार स्थापित की जाए जो जनता द्वारा चलाई जाए और जनता के लिए हो। मुझे विश्वास है कि दलित वर्गों के इस पक्ष पर हलकों में लोगों को विस्मय होगा। दलित वर्ग और ब्रिटिश एक असाधारण बंधन में बंधे हुए हैं। दलित वर्गों ने

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 141

[2] केशरी, 30 अगस्त, 1930

[3] हिमांशू राय, युग पुरुष बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, पृ0सं0– 39

[4] बाबा साहेब सम्पूर्ण वाडमय खण्ड 16 पृ0सं0

अंग्रेजों का रूढ़िवादी हिन्दुओं के सदियों पुराने जुल्मों और अत्याचारों से मुक्ति दिलाने वालों के रूप में स्वागत किया था। उन्होंने हिन्दुओं, मुसलमानों एवं सिखों के विरुद्ध युद्धों में लड़कर अंग्रेजों को भारत का यह विशाल साम्राज्य जीत कर दिया था, जिसके लिए उन्होंने दलित वर्गों के संरक्षक की भूमिका ग्रहण की थी। दोने में इस प्रकार के घनिष्ट सम्बन्धों को दृष्टिगत रखते हुए भारत में अंग्रेजी साम्राज्य के प्रति दलित वर्गों के विचारों में इस प्रकार का परिवर्तन निःसन्देह एक अत्यन्त अद्भुद एवं महत्वपूर्ण घटना है। इस परिवर्तन के कारणों को जानने के लिए दूर नहीं जाना होगा। हमने यह निर्णय इसलिए नहीं लिया है कि हम बहुसंख्यक जाति के साथ अपना भाग्य अजमाना चाहते हैं, जैसा कि आप जानते हैं कि बहुसंख्यकों और दलित वर्गों में कोई मधुर सम्बन्ध नहीं है, हमने यह निर्णय स्वतन्त्र रूप से लिया है। अपनी परिस्थितियों को ध्यान में रख कर हमने वर्तमान सरकार का मूल्यांकन किया और देखा कि इसमें एक अच्छी सरकार के आवश्यक आधारभूत तत्वों का अभाव है। जब हम अंग्रेजी शासन से पहले की अपनी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति की तुलना करते हैं तो हम देखते हैं कि आगे बैटने के बजाय हम वहीं के वहीं खड़े हैं। अंग्रेजी शासन के पहले अस्पृश्यता के अभिशाप के कारण हम घृणास्पद जीवन व्यतीत कर रहे थे । क्या अंग्रेजी शासन ने अस्पृश्यता को दूर करने के लिए कोई कदम उठाया है? अंग्रेजी शासन से पहले मंदिरों में हमारा प्रवेश वर्जित था, क्या अब हम मंदिरों में प्रवेश कर सकते हैं? अंग्रेजी शासन से पहले हमें पुलिस में नौकरी नहीं दी जाती थी, क्या अब हम पुलिस में जा सकते हैं? अंग्रेजी शासन से पहल हम सेना में भर्ती नहीं हो सकते थे, क्या सरकार ने हमारे लिए यह रास्ता खोला है? इन प्रश्नों में से किसी प्रश्न का उत्तर हाँ में नहीं है। हम पर अंग्रेजी शासन का लम्बे अरसे तक काफी प्रभाव रहा है। उन्होंने हमारा जो भी भला किया, हम उसे स्वीकार करते हैं किन्तु हमारी स्थिति में निश्चय ही कोई मूलभूत अन्तर नहीं आया है। वस्तुतः जहाँ तक हमारा संबंध है ब्रिटिश सरकार ने सामाजिक व्यवस्थाओं को ज्यों का त्यों स्वीकार कर लिया और विश्वासपूर्वक उन्हें उस चीनी दर्जी की भाँति सुरक्षित रखा जिसे पुराने कोट के नमूने पर जब नया कोट सिलने दिया गया तो उसमें गर्व से पैक्ट खाँच आदि सभी लगा दिए।

अंग्रेजी शासन के 150 वर्ष बीत जाने पर भी हमारी तकलीफें उन खुले घावों की तरह हैं, जिस पर मलहम लगाने का कोई प्रयास नहीं किया गया।

हमारा आरोप यह नहीं कि अंग्रेजी शासन ने हमारी उपेक्षा की है अथवा उनकी हमारे प्रति सहानुभूति नहीं है। हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वह हमारी समस्याओं का समाधान कर ही नहीं सकते.......... हम यह महसूस करते हैं कि हमारे अतिरिक्त हमारे दुःख–दर्द को कोई भी दूर नहीं कर सकता और जब तक राजनैतिक शक्ति हमारे हाथ में नहीं आती, हम भी उसे दूर नहीं कर सकते। जब तक अंग्रेजी सरकार बनी रहेगी, तब तक इस राजनैतिक सत्ता का अंशमात्र भी हमें मिलने वाला नहीं है। स्वराज्य के अन्तर्गत ही हमें राजनैतिक सत्ता में साझेदारी का कोई अवसर मिल सकता है, राजनैतिक सत्ता के बिना हमारे लोगों का उद्धार संभव नहीं है।......

दलित वर्ग भारत के लिए सुरक्षा उपायों सहित डेमिनियन स्टेट चाहते हैं। किन्तु इस प्रश्न पर वे बल देना चाहते हैं कि डेमिनियन भारत का कैसे संचालन किया जायेगा? राजनैतिक सत्ता का केन्द्र कहाँ होगा? यह सत्ता किसके हाथों में होगी? क्या दलित वर्ग उसके वारिस होंगे? उने लिए यह विचारणीय प्रश्न है। .... जब जब अंग्रेजी सरकार ने सरकार में और प्रतिनिधित्व देने के लिए कदम उठाया है, हर बा दलित वर्गों को जानबूझ कर छोंड़ दिया गया। जब आप जैसा भी निर्णय लेते थे, भारत उसे मान लेता था। अब वह समय कभी वापस नहीं आएगा। यदि आप चाहते हैं कि आपका संविधान मान्य हो तो आप उसे तर्क पर नहीं, जनता की सहमति के आधार पर बनाइये।

बाबा साहेब ने गोलमेज सम्मेलन के उप–समिति संख्या–6 (मताधिकार) की दूसरी बैठक जो 22 दिसम्बर 1930 को सम्पन्न हुई मे अनेक तर्कों के आधार पर भारत में वयस्क मताधिकार तथा नारी मताधिकार की मांग की। बाबा साहेब ने कहा– "इसलिए मेरा यह अनुरोध है कि यदि यह सम्मेलन ओर इस मेज के इर्द–गिर्द जो सदस्य बैठे है, वे अपने विश्वास के प्रति सच्चे हैं यह धारणा रखते है कि भारत को

उत्तरदायी सरकार, अधिकार मिलना चाहिए और शासन को जनता के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए, तो मेरा विनम्र निवेदन है कि वयस्क मताधिकार का कोई विकल्प है ही नहीं।''

तीनों गोलमेज सम्मेलनों मे भाग लेकर बाबा साहेब ने न केवल दलित वर्ग के दुःखों को विश्व के सम्मुख पेश किया अपितु ब्रिटिश सरकार की नीतियों की जबरदस्त आलोचना कर एक सच्चे राष्ट्रभक्त का उदाहरण पेश किया, यद्यपि बाबा साहेब का राष्ट्रभक्ति का वह अभिप्राय कभी नहीं रहा जो कांग्रेस ने देश मे प्रचारित कर रखा था।

गोल मेज सम्मेलनों में हुए विचार–विमर्श के पश्चात् ब्रिटिश सरकार ने मार्च 1933 में भारतीय संवैधानिक सुधार के स्वरूप को स्पष्ट करने वाले श्वेत पत्र को जारी किया। इस श्वेत पत्र पर विचार–विमर्श करने के लिए एक संयुक्त समिति का गठन ब्रिटिश सरकार ने किया। इसमें ब्रिटिश कूटनीतिज्ञों, राजनेताओं के अतिरिक्त भारत के जयकर, मिर्जा, इस्माइल, सर अकबर हैदरी के साथ डा0 अम्बेडकर की नियुक्ति की गई।[1] डा0 अम्बेडकर इस समिति में कार्य हेतु लन्दन जाने से पूर्व 23 अप्रैल 1933 को यर्वदा जेल में महात्मा गाँधी से मुलाकात की और अस्पृश्यों के प्राथमिक चुनाव सहित अनेक मुद्दों पर चर्चा की। गाँधी जी ने डा0 अम्बेडकर को फूलों का गुच्छा अर्पित किया और बताया कि इस सन्दर्भ में मेरा निश्चित मत क्या है, यह मैं तुम्हें लन्दन के पते पर सूचित करूँगा।[2]

बाबा साहेब के लन्दन जाने की पूर्व सन्ध्या पर 23 अप्रैल को शायं बम्बई के दामोदर हाल परेल में अस्पृश्य वर्ग की ओर से एक समारोह आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में बोलते हुए बाबा साहेब ने कहा– ''दूसरी गोलमेज परिषद के समय मैं दोहरे दुविधा में था। पहला यह कि यदि अंग्रेजों के खिलाफ झगड़ा करें तो गाँधी जी से प्रत्यक्ष कुछ भी नहीं प्राप्त होगा। दूसरा यह कि यदि गाँधी जी की सहायता करें तो जो

---

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 227

[2] कीर धनंजय, वही, पृ0सं0–228–229

कुछ अधिकार ब्रिटिश सरकार से प्राप्त हो रहा है, वह नहीं मिलेगा......कुछ कमियां रह गई हैं, उन्हें पूरी करने की मैं कोशिश करूँगा। मुझे विदा करने के लिए गरीब लोग अपनी रोजी–मजदूरी छोंड़कर बन्दरगाह पर न आयें। यह बात मुझे अच्छी नहीं लगती।''

बाबा साहेब 24 अप्रैल 1933 को लन्दन रवाना हुए और 6 मई को लन्दन पहुँचे। 3 अक्टूबर 1933 को संयुक्त समिति का अगला सत्र आरम्भ हुआ। इस दौरान बाबा साहेब ने बिस्टर्न चर्चिल से ब्रिटिश संसदीय व्यवस्था, मताधिकार पद्धति, पृथक भारतीय सामाजिक संरचना आदि मुद्दों पर चर्चा की और अपने अद्भुद तार्किक और बौद्धिकता से इस ब्रिटिश कूटनीतिज्ञ को पराजित किया। नवम्बर में संयुक्त समिति का कार्य समाप्त हुआ और अधिकांश भारतीय सदस्यों ने स्वदेश लौटने का निश्चय किया लेकिन डा0 अम्बेडकर भारतीय सैन्य व्यवस्था पर ग्रन्थ लिखने के लिए सामग्री एकत्र करने के उद्देश्य से कुछ समय इग्लैण्ड में रुके रहे। दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में भारत लौटने के लिए जहाज पकड़ा और 8 जनवरी 1934 को बंबई आ गये। बन्दरगाह पर उनका भव्य स्वागत किया गया। उसी समय समाचार पत्रों के संवाददाताओं ने बाबा साहेब से उनके भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में प्रश्न किया, बाबा साहेब ने उत्तर दिया – ''राजनीति में मुझे दिलचस्पी नहीं है। आर्मी इन इण्डिया नामक पुस्तक लिख रहा हूँ। किसी भी काम की तुलना में यह ग्रन्थ मुझे अधिक महत्व का लगता है। यह ग्रन्थ कब पूरा होगा, इसकी मुझे इस समय कल्पना नहीं, फिर भी यह ग्रन्थ जल्द पूरा होगा, ऐसी मुझे आशा है।[1]

इस बीच बाबा साहेब के स्वभाव में रहस्यात्मक परिवर्तन आया। वे सन्यासियां की सी वेषभूषा धारण करने लगे तथा सिर भी मुण्डित करवा लिया, लेकिन यह स्थिति लम्बे समय तक नहीं रही और वे शीघ्र ही सक्रिय राजनीति में वापस आ गये। दिसम्बर 1934 में ब्रिटिश सरकार ने संयुक्त समिति का प्रतिवेदन प्रकाशित किया। बाबा साहेब ने इसकी आलोचना करते हुए कहा कि यह प्रतिगामी और भारत की उन्नति

---

[1] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 232

में सबसे बड़ी रुकावट डालने वाला है।[1] भारत के अनेक समाचार पत्रों ने बाबा साहेब के इस ब्रिटिश विरोधी वक्तव्य की प्रशंसा की।

27 मई 1935 को बाबा साहेब की जीवन संगिनी रामाबाई का देहान्त हो गया। यह बज्रपात से कम आघात नहीं था। दुःख से व्याकुल इस हृदय विदारक घटना से बाबा साहेब अन्दर से खोखले हो गए और पुनः सन्यासियों की भाँति जीवन यापन आरम्भ किया, लेकिन संसारिक वैराग्य की यह भावना दीर्घकालिक नहीं थी। 2 जून 1935 को बंबई सरकार ने उनकी नियुक्ति विधि महाविद्यालय के प्राचार्य पद पर की। इस समय सारे देश में यह आम चर्चा थी कि डा0 अम्बेडकर को ब्रिटिश सरकार न्यायाधीश बनाने वाली है, लेकिन यह पद प्राप्त करने का कभी अवसर नहीं आया। न्यायाधीश का पद डा0 अम्बेडकर का कभी लक्ष्य भी नहीं रहा। न्यायाधीश क्या गवर्नर एवं गवर्नर जनरल का पद भी उनकी महत्वाकांक्षा एवं मिशन के आगे अधूरा था।

विधि महाविद्यालय के प्राचार्य के रूप में डा0 अम्बेडकर ने महाविद्यालय की गरिमा बढ़ाने के लिए पूर्ण प्रयास किया। महाविद्यालय के विद्यार्थियों तथा शिक्षकों का अपार स्नेह और सम्मान उन्हें प्राप्त हुआ। उन्होंने 1937 में नई राजनैतिक पार्टी खोलने के कारण महाविद्यालय के प्राचार्य पद से त्याग पत्र दे दिया।

ब्रिटिश सरकार ने 1935 में भारत शासन अधिनियम पारित किया। इस अधिनियम के लिए निम्नलिखित मसविदों की सहायता ली गई–[2]

1. साइमन कमीशन की रिपोर्ट, 2. सर्वदलीय कांफ्रेंस रिपोर्ट, 3. तीनों गोलमेज सम्मेलनों में वाद–विवाद, 4. श्वेत पत्र, 5. संयुक्त प्रवर समिति रिपोर्ट।

यह अधिनियम ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत में अब तक पेश किये गये सभी संवैधानिक सुधारों से अधिक विस्तृत था। इसमें कतिपय शर्तों सहित एक संघीय ढांचे का

---

[1] डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाडमय खण्ड 16 पृ0सं0– 236
[2] डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाडमय खण्ड 16 पृ0सं0– 236

निर्माण और प्रान्तीय स्तर पर पूर्ण स्वायत्तता की स्थापना का प्रावधान था। साथ ही संघीय न्यायालय की स्थापना का भी प्रावधान था। इस अधिनियम को अगस्त 1935 में ब्रिटिश सम्राट की स्वीकृति मिल गई। ब्रिटिश सरकार ने घोषणा की कि संघ को कार्यान्वित न करके, प्रान्तीय स्वायत्तता को 1 अप्रैल 1937 से लागू कर दिया जायेगा। वास्तव में तो संघ अस्तित्व में आया ही नहीं। चुनाव की कार्यविधि 3 जुलाई 1936 को आरम्भ हो गई और 1 अप्रैल 1937 को प्रान्तीय स्वायत्तता लागू कर दी गई।

इस अधिनियम की कांग्रेस सहित मुस्लिम लीग तथा अनेक दलों ने आलोचना की। तत्कालीन कांग्रेस अध्यक्ष पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने इसे अनैच्छिक, अप्रजातीय और अराष्ट्रवादी संविधान की संज्ञा दी जो कि सारे देश पर और सर्व सम्मत के इच्छा के विरुद्ध लाद दिया जाएगा।[1] मुहम्मद जिन्ना ने इसे पूर्णतया सड़ा हुआ, मूल रूप से बुरा और बिल्कुल अस्वीकृत बताया। डा0 अम्बेडकर ने इसे अधिनियम का समर्थन किया। उनको लगा कि अब तक किए गये सभी प्रयत्नों, प्रयासों का लाभ भारत के अस्पृश्य समाज को प्राप्त होने वाला है। इसलिए उन्होंने उस संविधान को कार्यान्वित होने के लिए सहायता का फैसला लिया। आश्चर्य की बात है कि कांग्रेस सहित मुस्लिम लीग आदि दलों ने इस अधिनियम की आलोचना के बावजूद होने वाले चुनाव में भाग लेने का फैसल किया। यह इन दलों के कथनी–करनी में अन्तर को दिखाता है। जब कि बाबा साहेब की कथनी–करनी एक थी।

भारत के सभी दलों ने चुनाव की तैयारियां आरम्भ कर दीं। डा0 अम्बेडकर ने भी अपने नये सहयोगियों से विचार–विमर्श कर अगस्त 1936 में स्वतन्त्र मजदूर दल नामक एक नया राजनैतिक दल स्थापित किया। 17 फरवरी 1937 में हुए आम चुनावों मं बाबा साहेब की पार्टी को महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त हुई। डा0 अम्बेडकर ने बम्बई से भारी बहुमत से जीत कर 19 जुलाई 1937 को विधान सभा सदस्य के रूप में शपथ ग्रहण

---

[1] प्रो0 वी0एल0ग्रोवर, आधुनिक भारतीय इतिहास– एक नवीन मुल्यांकन, पृ0सं0–562

की।[1] कांग्रेस पार्टी को बहुमत प्राप्त हुआ था और डा0 खेर के नेतृत्व में कांग्रेस सरकार बनी।

बाबा साहेबे मजदूर, शोषित, दलित वर्गों के हितों के लिए नई विधान सभा में संघर्ष करते रहे। इस उद्देश्य से न केवल अनेक विधेयकों की चर्चा में भाग लिया अपितु अनेक विधेयक पेश किया। बाबा साहेब ने मंत्रियों के वेतन विधेयक पर विस्तार से चर्चा की।[2] 21 अक्टूबर 1937 को प्ररतुत खोती व्यवस्था के उन्मूलन हेतु विधेयक संख्या 20 पर महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किया। बाबा साहेब ने कहा–"जबकि यह उचित और आवश्यक है कि कृषि से राजस्व प्राप्त करने की जो व्यवस्था है, जिसे खोती व्यवस्था कहा जाता है, उसका उन्मूलन होना चाहिए और रैयतवाड़ी व्यवस्था के सिद्धान्तों को लागू करना चाहिए, क्योंकि यह उस क्षेत्र के लिए अधिक लाभप्रद है, जहाँ खोती व्यवस्था चालू है।"[3]

इसी प्रकार औद्योगिक विवाद अधिनियम, बम्बई और पुलिस अधिनियम संशोधन विधेयक, मंत्रियों के वेतन विधेयक, वंशानुगत कार्य अधिनियम विधेयक आदि सभी विधेयकों पर चर्चा में भाग लेते हुए डा0 अम्बेडकर ने गरीब, शोषित जनता के हितों का समर्थन करते हुए अपने महान मानवतावादी स्वरूप का परिचय दिया।

जर्मनी के महान तानाशाह एडोल्फ हिटलर ने 1 सितम्बर 1939 को पोलैण्ड पर आक्रमण कर दिया और इसी के बाद द्वितीय विश्व युद्ध आरम्भ हो गया। इस घटना ने विश्व सहित भारत की राजनीति में भी भूचाल ला दिया। इसी समय गवर्नर जनरल लार्ड लिनलीथिगो ने 3 सितम्बर को यह घोषणा कर दी कि ब्रिटेन के साथ भारत भी जर्मनी आदि धुरी राष्ट्रों के विरुद्ध मित्र राष्ट्रों की ओर से युद्ध में सम्मिलित हो गया है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इसका जोरदार विरोध किया लेकिन उसके दक्षिणपंथी और वामपंथी धड़ के बीच स्पष्ट अन्तर भी दिखाई दे रहा था। वामपंथी इस साम्राज्यवादी

---

[1] प्रो0 वी0एल0ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास एक नवीन मुल्यांकन पृ0सं– 569
[2] बाम्बे लेजिस्टलेटिव असेम्बली डिवेट्स, खण्ड–1, पृ0सं0– 247–254
[3] बाम्बे गवर्नमेंट गजट, भाग–5, पृ0सं0– 88–94

युद्ध को भारत के मुक्ति युद्ध में बदल देना चाहते थे लेकिन दक्षिणपंथी नेता इससे फायदा उठाकर दबा डालकर ब्रिटिश शासकों से अधिक अधिकार प्राप्त कर लेना चाहते थे।[1] उनके रवैये से भारतीय बुर्जुआवर्ग का दोहरा चरित्र सामने आ गया।

कांग्रेस कार्य समिति ने 14 सितम्बर 1939 को वर्धा बैठक में युद्ध सम्बन्धी अपनी नति स्पष्ट की कि– ब्रिटिश शासकों ने भारतीय जनता की राय लिए बिना ही भारत को युद्धरत देश घोषित किया है, अतः भारत युद्ध के संचालन में ब्रिटेन का साथ नहीं दे सकता। इसमें जोर देकर कहा गया था कि भारत ऐसे युद्ध में शामिल नहीं हो सकता जो कहने को तो जनतांत्रिक स्वतन्त्रता के लिए लड़ा जा रहा है, लेकिन उसी स्वतन्त्रता से भारतीयों को वंचित रखा जा रहा है।

बाबा साहेब ने स्वतन्त्र मजदूर दल की ओर से एक पत्रक निकाल कर अपनी नीति स्पष्ट की। उसमें कहा गया था कि–[2] "पोलैण्ड के पक्ष मे विशेष न्याय है, ऐसी बात नहीं है क्योंकि पोलैण्ड ने भी उन लोगों के साथ अत्याचार किया है, पोलैण्ड की समस्या केवल इस युद्ध की एक घटना जितनी ही है। लेकिन हमारे साथ जो सहमत नहीं होंगे, उन पर अपना मत हम लाद ही देंगे, जर्मनी का यह दावा सारे विश्व में व्याप्त एक बड़ी समस्या है।" अंग्रेजो की कठिनाई हमारा मौका है, यह मानने वाले भारतीयों का मत डा0 अम्बेडकर को मान्य नहीं था। उन्होंने यह मत व्यक्त किया कि जिस कारण भारतीय लोग पुनः नई गुलामी में पड़ जायेंगे उस तरह के मार्ग में वे न जाए।"

द्वितीय विश्व युद्ध में भारत का सहयोग प्राप्त करने के लिए वाइसराय लार्ड लिनलीथिगो ने अक्टूबर के प्रथम और द्वितीय सप्ताह में अनेक भारतीय नेताओं से मुलाकात की। 9 अक्टूबर को वाइसराय ने बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर से मुलाकात की। डा0 अम्बेडकर ने वाइसराय से यह जानने का प्रयास किया कि भारत की भावी संवैधानिक योजना में दलित वर्ग की क्या स्थिति रहेगी? उन्होंने यह भी बताया कि पूना समझौते का परिणाम संतोषजनक नहीं रहा है।

---

[1] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृ0सं0– 671
[2] कीर धनंजय, डा0 बाब साहेब अम्बेडकर, एक जीवन चरित, पृ0सं0– 309

भारतीय नेताओं से चर्चा के पश्चात् वाइसराय लार्ड लिनलीथिगो ने 17 अक्टूबर 1939 को अपना बयान जारी किया। इसमें उन्होंने कहा कि भारत में डोमिनियन स्टेट्स (अधिराज्य) स्थापितकरना ब्रिटिश नीति का लक्ष्य है, लेकिन फिलहाल 1935 का कानून लागू रहेगा।[1] भारतीयों को युद्ध संचालन में शामिल करने के लिए उन्होंने ब्रिटिश भारत की सभी बड़ी राजनैतिक पार्टियों और भारतीय रियासतों के प्रतिनिधियों को लेकर एक सलाहकार समिति की स्थापना का प्रस्ताव किया। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस वाइसराय के इस बयान से पूर्ण असंतुष्ट हुई और इसे साम्राज्यवादी नीति का दुहराया जाना बताया। 23 अक्टूबर 1939 को कांग्रेस कार्यकारिणी की बैठक में सभी कांग्रेसी प्रान्तीय सरकारों को इस्तीफा देने का आदेश दिया गया। इस आदेश के अनुपालन में अनुशासित सिपाहियों के रूप में कांग्रेस सरकार ने 25 अक्टूबर से 15 नवम्बर के मध्य त्याग पत्र दे दिया।[2] मुम्बई विधान सभा में कांग्रेस के युद्ध विषयक प्रस्ताव पर चर्चा में भाग लेते हुए बाबा साहेब ने कहा–[3] मेरा मानना है कि प्रस्ताव का अन्तिम भाग न केवल अस्पष्ट है, बल्कि अत्यधिक अस्पष्ट है। प्रस्ताव का वह भाग जिसका मैं उल्लेख कर रहा हूँ, कहता है कि ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत की परिस्थिति को ठीक ढंग से नहीं समझा गया है..... मंत्रिमण्डल के इस्तीफे का प्रश्न पार्टी का मामला है। यह सदन का मामला नहीं है। यह पार्टी को निर्णय लेना है कि उन्हें पद पर बने रहना चाहिए या नहीं । तब यह पूर्णतः एक अलग मामला होगा, यदि मंत्रिमण्डल कहता है कि इस देश के लोगों को युद्ध में भाग नहीं लेना चाहिए। इस मुद्दे पर सदन अपना विचार प्रकट कर सकता है...... सबसे पहले मैं यह जानना चाहूँगा कि ये मांगे किसने की हैं? स्पष्टतः महामहिम वाइसराय से की गई मांगें इस सदन द्वारा नहीं की गई थीं.....मांगे जैसा कि हम जानते हैं कि उनके द्वारा प्रस्तुत की गई, जिन्हें माननीय प्रधानमंत्री 'आलाकमान' कहेंगे। मैं कहता हूँ कि यह आलाकमान और कुछ नहीं केवल मंत्रियों की कठोर कार्यवाही के रोकने के लिए नियुक्त निगरानी समिति है।

---

[1] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृ0सं0– 672
[2] प्रो0 विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ0सं0– 416
[3] बाम्बे लेजिस्लेटिव असेम्बली डिवेट्स, खण्ड–7, पृ0सं0– 1968–1982

मैं प्रारम्भ में ही सदन को बताना चाहूँगा कि मैं किन बातों में प्रस्ताव से सहमत हूँ। जहाँ जहाँ प्रस्ताव कहता है कि भारत को बिना भारत के लोगों की राय के ब्रिटेन और जर्मनी के बीच हो रहे युद्ध में भागीदार बनाया गया है, मैं पूर्ण रूप से इसका समर्थन करता हूँ। वास्तव में मुझे एक कदम और आगे जाना चाहिए था, क्योंकि स्थिति वास्तव में बहुत असमान्य है। यहाँ हम ब्रिटिश मंत्रिमण्डल के रथ के पहिए से बाँध दिये गये हैं। ब्रिटिश मंत्रिमण्डल अंग्रेज साम्राज्य की विदेश नीति को नियंत्रित करता है। विदेश नीति के निर्धारण ओर युद्ध की घोषणा में इस देश की कोई आवाज नहीं होती।.... दुर्भाग्यवश हमें स्वशासन का दर्जा प्राप्त नहीं है। हमें अपने आपको निरपेक्ष घोषित करने का अधिकार नहीं है। बिना हमारी इच्छा के और बिना हमारी सहमति के हमें इस हत्याकाण्ड में धकेल दिया जाता है।

एक दूसरी बात भी है, जिसका मैं संक्षिप्त उल्लेख करना चाहूँगा। यद्यपि इस देश को बिना इसकी सहमति के युद्ध में शामिल कर दिया गया है, तथापि जैसा कि यह प्रस्ताव ठीक कहता है, सुरक्षा के दृष्टिकोण से यह देश सर्वाधिक सुरक्षाहीन स्थिति में है। मानलीजिए इस देश की सुरक्षा का प्रश्न उठा तो हमारी सेना कहाँ है? नौ सेना कहाँ है? हवाई जहाज कहाँ है? जो इस देश की रक्षा कर सकें। गोलमेज सम्मेलन के सदस्य के रूप में मुझे याद है कि हम एक सिद्धान्त के लिए लड़े थे और वह सिद्धान्त यह था कि भारत की रक्षा ग्रेट ब्रिटेन की जिम्मेदारी के रूप में जानी जाए और भारतीयों को अपनी सुरक्षा करने की शिक्षा दी जाए। मुझे यह कहते हुए दुःख होता है कि जहाँ तक मैंने भारत सरकार की रक्षा नीति का अवलोकन किया है, उस विषय में उन्होंने कोई सन्तोषजनक उपाय नहीं किया है। जहाँ तक उस सिद्धान्त पर अमल करने का प्रश्न है, मैं उनकी नीतियों में कुछ भी नहीं पाता। इसलिए मैं यह समझता हूँ यह एक वाजिब शिकायत है, जो भारत कर सकता है।

बाबा साहेब ने आगे अपने भाषण में दलित वर्गों के साथ हो रहे अत्याचारों का उल्लेख करते हुए उनके लिए विशेष रक्षा उपायों की मांग की और कहा– अछूत जो

संरक्षण पाते हैं, उस पर विचार होना चाहिए, यही निवेदन है जिसे मैं सदन से कर रहा हूँ।..... जैसा कि मैं इस देश की परिस्थितियों को देखता हूँ जैसा कि मैं पूरे भारत में बने अलग–अलग मंत्रिमण्डलों के राजनैतिक गठन को देखता हूँ, तो मैं पाता हूँ कि जब कि हम अछूत सामाजिक रूप से शूद्र या आदि शूद्र है, वही कांग्रेस सरकार, अगर कांगेस नहीं तो परिस्थितियों की मांग इस प्रकार की है कि अंततः ये हमें राजनैतिक शूद्र बना कर ही छोंड़ेगे। मैं इसे बर्दास्त नहीं करूँगा। इस परिस्थिति को निर्मूल करने के लिए मेरे खून की अंतिम बूँद भी गिरेगी। मैं इसे बर्दाश्त नहीं करूँगा कि हिन्दुओं द्वारा प्रयुक्त मेरे ऊपर जो सामाजिक दबदबा, आर्थिक दबदबा और धार्मिक दबदबा है, उसमें राजनैतिक दबदबा जुड़ जाए........ मैं उस संविधान को अनुमति नहीं दूँगा, जिसमें मैं स्वतन्त्रता और बराबर का हिस्सेदार नहीं हूँ.........अंत में मैं एक शब्द कहूँगा कि मैं जानता हूँ कि इस देश में मेरी स्थिति को ठीक से नहीं समझा गया है। इसे अक्सर गलत समझा गया है। इसलिए इस अवसर पर मुझे अपनी स्थिति स्पष्ट करनी चाहिए। महोदय! मैं यह कहता हूँ कि जब भी मेरे व्यक्तिगत हितों और समूचे देश के हितों के बीच टकराव हुआ है, तब तब मैंने देश के दावे को अपने व्यक्तिगत दावों के ऊपर रखा है। (सुनो.......सुनो) मैने कभी भी निजी लाभ का रास्ता नहीं पकड़ा। अगर मैंने अपने पत्ते ठीक से खोले होते, जैसा कि दूसरे कहते हैं तो मैं किसी अन्य जगह पर हो सकता था। मैं इसके बारे में कुछ नहीं कहना चाहता, लेकिन मैंने ऐसा नहीं किया। गोलमेज सम्मेलन में मेरे सहयोगी थे, जो मुझे विश्वास था कि ऐसी बात का समर्थन करेंगे कि जहाँ तक देश की मांग का संबन्ध है, मैं कभी पीछे नहीं रहा हूँ। सम्मेलन में कई योरोपीय समुदाय ऐसी परेशानी महसूस कर रहे थे कि जैसे मैं सम्मेलन में कोई डरावना व्यक्ति होऊ। लेकिन मैं इस देश के लोगों के दिमाग में यह शंका नहीं रहने दूँगा कि मेरी दूसरी वफादारी भी है, जिससे मैं बंधा हूँ और जिसे मैं कभी नहीं छोंडूँगा और मैं इस सदन से यथा संभव जोर से यह कहता हूँ कि जब भी इस देश के और अछूतों के हितों में टकराव होगा, जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, अछूतों के हितों को देश के हितों के ऊपर स्थान मिलेगा। केवल इसीलिए मैं अत्याचारी बहुसंख्यकों का समर्थन इसलिए नहीं करने

जा रहा हूँ क्योंकि यह देश के नाम पर बोलती है। मैं ऐसा नहीं करूँगा। यहाँ के और हर जगह के लोग समझ लें कि यही मेरा दृष्टिकोण है देश और मेरे बीच में देश का स्थान ऊपर रहेगा तथा देश और दलित वर्ग के बीच दलित वग का स्थान ऊपर रहेगा, देश का स्थान ऊपर नहीं रहेगा।

बाबा साहेब ने चर्चा के अन्त में कहा कि – ''यह सदन के निर्णय का मामला नहीं है। मंत्रिमण्डल को भंग होना चाहिए या नहीं, यह मामला पूरी तरह उनकी पार्टी के लिए है। वे इसके भंग होने के लिए मेरा समर्थन क्यों चाहते हैं।''

इस प्रकार युद्ध विधेयक पर चर्चा के दौरान विस्तार पूर्वक बाबा साहेब ने अपने और अपने समाज की स्थिति स्पष्ट की।

कांग्रेस कार्यकारिणी के आदेशानुसार कांग्रेस सरकारां ने सभी प्रान्तों में इस्तीफा दे दिया। इसके खुशी में मुस्लिम लीग ने 23 दिसम्बर 1939 को मुक्ति दिवस के रूप में मनाया। बाबा साहेब स्वयं मुहम्मद जिन्ना के साथ कई जलसों में सम्मिलित हुए।[1] इसका अर्थ यह नहीं था कि वे मुस्लिम लीग के निकट आ गये थे या समर्थक बन गये थे। इसका अर्थ मात्र इतना ही था कि जैसे मुस्लिम लीग समझती थी कि कांग्रेस ने हिन्दू शासन स्थापित कर मुस्लिम वर्ग के साथ भेद–भाव कर रही है वैसे ही बाबा का मत भी था कि कांग्रेस सरकारों ने दलित वर्गों के हितों का ध्यान नहीं रखा और शोषण को रोकने का कोई सार्थक प्रयास नहीं किया है।

भारतीय राजनीति में 1940 का वर्ष बड़ा निर्णायक था। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन 20–22 मार्च 1940 को रामगढ़ में मौलाना अबुल कलाम आजाद की अध्यक्षता में हुआ, जिसमें कुछ क्रांतिकारी प्रस्ताव पारित किए गये। मुस्लिम लीग का 1940 में लाहौर में सम्मेलन हुआ जिसमें मुहम्मद अली जिन्ना की अध्यक्षता में लीग ने

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 313

पाकिस्तान का प्रस्ताव पारित किया। 8 अगस्त 1940 को वायसराय लार्ड लिनलिथगो ने अगस्त अगस्त प्रस्ताव पेश किया, जिसमें तीन मुख्य बाते थीं–[1]

1. युद्ध के बाद नये संविधान का ढ़ाँचा तय करने के लिए भारत के राष्ट्रीय जीवन के मुख्य तत्वों की प्रतिनिधि संस्था बनाई जायेगी।
2. अतिरिक्त मनोनीत भारतीयों को शामिल कर वाइसराय की एक्जिक्यूटिव कौंसिल का आकार बड़ा कर दिया जायेगा।
3. देशी रियासतों और अन्य भारतीयों के प्रतिनिधियों की युद्ध मंत्रणा परिषद नियुक्त की जायेगी।

कांग्रेस ने इस अगस्त प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया और व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन महात्मा गाँधी ने आरम्भ कर दिया। यह 17 अक्टूबर 1940 से आरम्भ हुआ था। इसी वर्ष बाबा साहेब ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "थॉट्स ऑन पाकिस्तान" लिखा जो देश–विदेश में चर्चा का केन्द्र बिन्दु बनी।

इसी बीच द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। धुरी राष्ट्रों (जर्मनी, इटली, अवीसीनिया, जापान) ने रूस पर भी आक्रमण कर दिया और उन्हें विजय पर विजय मिल रही थी। मित्र राष्ट्रों की स्थिति खराब हो रही थी। इससे ब्रिटेन को भारतीयों के अधिकाधिक सहयोग की आवश्यकता हो रही थी। इसी वातावरण में बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने मई 1941 में बम्बई के गवर्नर रोजर लम्ले से मुलाकात की और सेना भर्ती के महत्वपूर्ण मुद्दे पर विस्तार से चर्चा की। ब्रिटिश सरकार ने अस्पृश्यों की बड़ी संख्या में भर्ती करने तथा एक महार पलटन का निर्माण करने का निर्णय किया। बाबा साहेब ने अस्पृश्य समुदाय का आह्वान किया कि अपने देश की सुरक्षा और हित के लिए इस मौके का लाभ उठाकर बड़ी संख्या में ब्रिटिश सेना में भर्ती हों।[2]

---

[1] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृ0सं0– 384
[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 322

अनेक सभाओं में भाषण करते हुए बाबा साहेब ने कहा– "यद्यपि केन्द्रीय सरकार ने अपनी कार्यकारिणी में अस्पृश्य वर्ग का प्रतिनिधि लेने से इन्कार किया है, फिर भी जिन लोगों को ऐसा लगता है कि सरकार की मदद नहीं करनी चाहिए, उन्होंने अपनी विवेक बुद्धि छोड़ दी है। वे लोग यह ध्यान में रखें कि नाजियों ने अगर यह देश हासिल किया, तो कार्यकारिणी समिति भी संघर्ष के लिए शेष नहीं रहेगी।...... महार युवक अपना विद्याध्यन संप्रति स्थापित करके सैनिक अधिकारियों की परीक्षा दे कर उसमें उत्तीर्ण हो और महारों की सैनिक परम्परा निरन्तर जारी रखें।"[1] बाबा साहेब का प्रयास सफल रहा और बड़ी संख्या में अस्पृश्य वर्ग के युवक ब्रिटिश सेना में भर्ती हुए।

जुलाई 1941 में वाइसराय ने अपनी कार्यकारिणी समिति में आठ भारतीय सलाहकार प्रतिनिधियों को लेकर उसका विस्तार किया। इसी के साथ एक सुरक्षा सलाहकार समिति का गठन भी किया, जिसमें जमनादास मेघा, रामराव देशमुख, एम0सी0 राजा आदि के साथ बाबा साहेब को चुना गया। इस सुरक्षा सलाहकार समिति की तीन बैठकें क्रमशः जुलाई 1941, दिसम्बर 1941 तथा फरवरी 1942 में सम्पन्न हुई, जिसमें बाबा साहेब ने सक्रिय रूप से भाग लिया।

तेजी से बदलते हुए अन्तर्राष्ट्रीय घटना चक्र के कारण ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों को अधिकाधिक सहयोग प्राप्त करने के लिए मार्च 1942 में क्रिप्स मिशन भारत भेजने की घोषणा की। इसके लिए अमेरिकी राष्ट्रपति फ्रैंकलिन रुजवेल्ट, आस्ट्रेलिया के विदेश मंत्री तथा चीनी राष्ट्रपति च्यांगकाई शेक ने ब्रिटिश सरकार पर दबाव डाला था। यह घोषणा ब्रिटिश सरकार ने 11 मार्च 1942 को की थी।[2] क्रिप्स मिशन के नेता सर स्टेफर्ड क्रिप्स थे और उसके अन्य सदस्यों में ए0बी0 एलेक्जेण्डर तथा पैथिक लारेंस थे। क्रिप्स मिशन योजना के 2 मुख्य भाग थे–

1. युद्धोत्तर कालीन प्रस्ताव।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 323

[2] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृ0सं0– 706

2. युद्धकालीन तात्कालिक प्रस्ताव।

युद्धोत्तर कालीन प्रस्ताव में मुख्य चार बातें थीं–

(क) नए भारतीय संघ को डोमेनियन स्टेटे का दर्जा दिया जायेगा। यदि वह चाहेगा तो उसे ब्रिटिश कामनवेल्थ से अलग होने का अधिकार होगा।

(ख) भारत का संविधान बनाने के लिए युद्ध के तुरन्त बाद एक संविधान सभा बनाई जायेगी। उसके कुछ सदस्यों का चुनाव प्रान्तीय विधान सभायें करेंगी, जिसका चुनाव युद्ध के बाद सानुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर किया जायेगा और कुछ सदस्यों को भारतीय रियासतें अपनी जनसंख्या के अनुपात में मनोनीत करेंगे।

(ग) ब्रिटिश भारत के किसी भी प्रान्त या किसी भी देशी रियासतों को अलग रहने का अधिकार होगा।

(घ) ब्रिटेन और संविधान सभा के मध्य सन्धि में उन वादों के अनुसार व्यवस्था होगी जो महामहिम की सरकार ने जातीय और धर्मीय अल्पमतों के संरक्षण के लिए किये हैं।

युद्ध कालीन तात्कालीन प्रस्ताव बहुत छोटा थ। उसमें कहा गया था कि सत्ता ब्रिटेन के हाथ में रहेगी। भारतीय प्रतिनिधियों का सहयोग सलाहकार के रूप में लिया जायेगा।

क्रिप्स मिशन प्रस्ताव किसी भी भारतीय दल को संतुष्ट नहीं कर सकी। महात्मा गाँधी ने इसे अन्तर्राष्ट्रीय चेक कहा। मुस्लिम लीग ने भी इसका विरोध किया। बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर ने भी इसका प्रबल विरोध किया। क्रिप्स मिशन के प्रस्ताव पर विचार करने के लिए नागपुर में दलित वर्ग का एक सम्मेलन बुलाया गया। इस सम्मेलन में बाबा साहेब ने क्रिप्स प्रस्ताव के सम्बन्ध में अपना लम्बा भाषण प्रेस को जारी किया– " युद्ध मंत्रिमण्डल के प्रस्ताव महामहिम की सरकार के दृष्टिकोण में

एकाएक परिवर्तन प्रदर्शित करते हैं। ये प्रस्ताव जिनकी उन्होंने अल्पसंख्यकों के अधिकारों पर हमला कह कर भर्त्सना की थी, ताकत के आगे उनका आत्मसमर्पण दर्शाते हैं। यह म्यूनिख मानसिकता है जिसका सार यह है कि अन्य व्यक्तियों की बली चढ़ाकर अपने को बचा लिया जाए और यह ऐसी मानसिकता है जो इन प्रस्तावों मे पूरी तरह झलकती है। यह कहा गया है कि अमेरिका और अंग्रेज इस कारण भारतीयों से नाराज है कि उन्होंने इन प्रस्तावों का स्वागत नहीं किया जिसका संबंध भारत की संवैधानिक उन्नति से है और इस प्रकार सर स्टैफर्ड क्रिप्स के मिशन को असफल कर दिया है। अमेरिकनों की प्रवृत्ति को तो क्षमा किया जा सकता है पर निश्चय ही अंग्रेजों और सर स्टैफर्ड क्रिप्स को जानकारी कुछ अधिक होना चाहिए। ऐसा नहीं लगता कि ये प्रस्ताव जो सर्वोत्तम बताये जाकर अब प्रस्तुत किए गये हैं, वे ही प्रस्ताव हैं, जिन्हें महामहिम की सरकार में कछ ही महीने पूर्व सबसे निकृष्ट बताकर रद्द किया गया था और उसकी भर्त्सना की थी। जो लोग यह महसूस करते हैं वे ये अवश्य कहेंगे कि संवैधानिक प्रगति के कार्य का यह सबसे भद्दा भाग है, जिसे महामहिम की सरकार अब प्रारम्भ करने की जल्दी में है।.............

यह नितान्त स्पष्ट है कि संविधान सभा का प्रस्ताव कांग्रेस की संतुष्टि के लिए था ओर पाकिस्तान का प्रस्ताव मुस्लिम लीग को अपने साथ करना था। दलित वर्गों के लिए प्रस्ताव क्या है? यदि संक्षेप में कहा जाए तो उनके हाथ–पांव बंधे हो और उन्हें हिन्दू जातियों को सौंप दिया गया था। हिन्दुओं ने उन्हें कुछ भी नहीं दिया। उन्हें रोटी के स्थान पर पत्थर दिये। जहाँ तक संविधान सभा का प्रश्न है, दलित वर्ग को धोखा देने के अलावा यह कुछ नहीं है। इस बारे में कोई सन्देह नहीं है कि संविधान सभा में उनकी स्थिति क्या होगी और संविधान सभा के राजनैतिक कार्यक्रम के बारे में कोई सन्देह नहीं है। संविधान सभा में दलित वर्ग के कोई प्रतिनिधि नहीं हो सकते क्योंकि इन प्रस्तावों में कोई भी साम्प्रदायिक कोटा निर्धारित नहीं किए गए हैं। यदि संविधान सभा में शामिल किए जाते हैं तो उन्हें मुक्त, स्वतन्त्र और निर्णायक मत देने का अधिकार नहीं होगा।......... इसलिए दलितों के लिए यह सन्धि खोखली है और उनके प्रति एक क्रूर

मजाक है। .... एक महान साम्राज्य की सरकार कैसे सारी सोच समझ खो बैठी है।.... मेरी ब्रिटिश सरकार को यह सलाह है कि वह उन प्रस्तावों को वापस ले ले। यदि वह अधिकारों तथा न्याय और अपने वादों के लिए लड़ नहीं सकती तो उसे चाहिए कि वह शांति ही बनाए रखे। इस प्रकार वह कम से कम अपना सम्मान तो बचा सकती है।[1]

इस प्रकार डा0 अम्बेडकर ने क्रिप्स प्रस्तावों को अल्पसंख्यकों, दलितों के लिए विनाशकारी बताया और उनकी निन्दा की। इस प्रकार भारत के सभी दलों ने क्रिप्स मिशन की आलोचना की, जिससे वह असफल रहा।

क्रिप्स मिशन के असफलता के पश्चात् ब्रिटिश सरकार ने वाइसराय की कार्यकारिणी का विस्तार करने का निश्चय किया। 1 जुलाई 1942 को लार्ड लिन लिथगो ने भारत मंत्री श्री एम0टी0 को तार द्वारा सूचित किया कि महामहिम सम्राट ने गवर्नर जनरल ऑफ इण्डिया की कार्यकारिणी परिषद में सर पी0सी0 रामास्वामी अय्यर, डा0 बी0आर0 अम्बेडकर, सर ई0सी0 वेथाल, सर जोगेन्द्र सिंह, सर जे0पी0 श्रीवास्तव ओर मोहम्मद उस्मान को नियुक्त करने का अनुमोदन किया है। इसमें भी फिरोज खाँ नून के स्थान पर श्रम विभाग के प्रभारी के रूप में डा0 बी0आर0 अम्बेडकर को नियुक्त किया गया।[2]

इस प्रकार बाबा साहेब को श्रम मंत्री बनाया गया। भारतीय इतिहास की यह अनोखी घटना थी कि एक अस्पृश्य को इतना उच्च पद प्राप्त हुआ। बाबा साहेब की नियुक्ति से आलोचना और प्रशंसा दोनो हुई। कांग्रेस समर्थक कुछ समाचार पत्रों ने थोड़ी बहुत आलोचना की। उनकी प्रशंसा में बंबई के अंग्रेजी समाचार पत्र सण्डे स्टैडर ने लिखा – " अम्बेडकर को मन्त्री पद मिलना उचित ही है क्योंकि उनकी सारी आयु गरीबों और मजदूरों के हित के लिए ही व्यतीत हुई है।" टाइम्स ऑफ इण्डिया ने

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–19, पृ0सं0– 52–59

[2] द ट्रान्सफर ऑफ पावर, खण्ड–2 संख्या– 211, पृ0सं0– 1000–1001

लिखा–''देश के इतिहास का यह पहला ही उदाहरण है जब एक अस्पृश्य हिन्दू की भारत सरकार की कार्यकारिणी में नियुक्ति हुई है।[1]

भारत के अनेक राजनेताओं ने भी बधाई सन्देश भेजा, जिनमें वी0डी0 सावरकर, तेजबहादुर सपरू, लोक नायक माधव राज अने, सीतलवाड आदि प्रमुख थे। अखिल भारतीय दलित परिषद की 18–19 जुलाई 1942 को नागपुर में विशाल परिषद आयोजित हुई, जिसमें डा0 अम्बेडकर का श्रम मंत्री बनने के लिए अभिनन्दन किया गया। इसमें दिये गये अपने भाषण में बाबा साहेब ने द्वितीय विश्व युद्ध में बिना शर्त समर्थन देने का आह्वान किया। उन्होंने कहा कि यह युद्ध तानाशाही और लोकतन्त्र के बीच लड़ा जा रहा है। यह तानाशाही किसी भी नैतिक नीव पर आधारित नहीं है। नाजीबाद में मानव मात्र के भविष्य के लिए खतरा पैदा किया है, इसलिए दलित समुदाय को ब्रिटिश सरकार का समर्थन करना चाहिए।

बाबा साहेब ने शिमला सम्मलेन में भी अस्पृश्य वर्ग के हितों को उठाया तथा मार्च 1946 में भारत आये कैबिनेट मिशन के प्रस्तावों से संतुष्ट नही हुए और कैबिनेट मिशन की आलोचना की लेकिन उसके तहत बनने बाले संविधान सभा तथा अन्य प्राविधानों को स्वीकार किया।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब ने ब्रिटिश सरकार का समर्थन केबल उन्हीं बिन्दुओं पर किया जहाँ वह दलित वर्गों के हितों के अनुरूप थी। यदि उनको लगा कि ब्रिटिश सरकार की कोई भी नीति अस्पृश्य वर्ग तथा देश के विरूद्ध है, तो उसकी आलोचना की।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 330

अध्याय
ग्यारह

अध्याय– ग्यारह

"बाबा साहेब का मुस्लिम लीग विशेषकर जिन्ना साहेब से सम्बन्ध"

भारतीय जन मानस और इतिहास की एक आमधारणा के अनुसार मुहम्मद जिन्ना और उनकी मुस्लिम लीग के कारण भारत का विभाजन हुआ। एक स्वाभाविक प्रश्न होता है कि युग पुरुष बाबा साहेब का जिन्ना साहेब और उनकी मुस्लिम लीग के साथ क्या सम्बन्ध था? जिन्ना के विषय में बाबा साहेब की व्यक्तिगत धारणा क्या थी? क्या दोनो में कोई व्यक्तिगत सम्बन्ध था? ब्रिटिश सरकार और मुस्लिम लीग के जो सम्बन्ध थे उस पर बाबा साहेब की क्या धारणा थी? भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और मुस्लिम लीग के पारस्परिक सम्बन्धों पर बाबा साहेब का क्या मत था, आदि स्वाभाविक प्रश्न हर प्रबृद्ध व्यक्ति के मन में उत्पन्न होते हैं। यह महत्वपूर्ण या यक्ष पश्न ही नहीं है अपितु आधुनिक भारतीय इतिहास का एक महत्वपूर्ण विवेचन भी है।

ऑल इण्डिया मुस्लिन लीग के जन्म की परिस्थितियां और पृष्ठभूमि शुरू से ही शोध का विषय रहा है। दिसम्बर 1906 में मुस्लिम लीग का जन्म आकस्मिक नहीं था अपितु दीर्घकालिक सुनियोजित योजना का प्रतिफलन था। सर सैय्यद अहमद खाँ (1817–1898) और उनके अलीगढ़ आन्दोलन ने एक ओर जहाँ मुस्लिम वर्ग में जागरूकता लायी वहीं दूसरी ओर पृथकवादी भावना का बीजारोण भी किया। 1857 के विद्रोह के समय सैय्यद अहमद खाँ बिजनौर में सदर अमीन के पद पर नियुक्त थे। विद्रोह के दमन के पश्चात् मुस्लिम धर्म और समाज में सुधार के लिए उन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किए। 1864 ई0 में उन्होंने अलीगढ़ में साइंटफिल सोसाइटी की स्थापना की[1] और इसी क्रम में मुस्लिम समाज में शिक्षा के प्रचार–प्रसार हेतु 1875 में अलीगढ़ में ही

---

[1] प्रो0 आर0एन0 शुक्ला, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 693

मुहम्मडन एग्लो ओरियेंटल स्कूल की स्थापना महारानी विक्टोरिया के जन्म दिन 24 मई को किया। स्कूल से कालेज के रूम में परिवर्तन 8 जनवरी 1877 ई0 को हुआजब भारत के गवर्नर – जनरल लार्ड लिटन ने इसकी नींव रखी।[1] इस संस्था को ब्रिटिश सरकार का भरपूर सहयोग और समर्थन मिला।

सर सैय्यद अहमद खाँ आरम्भसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (दिसम्बर 1885 में ए0ओ0 ह्यूम द्वारा स्थापित) का विरोध आरम्भ किया और मुसलमानों का आह्वान किया कि वे कांग्रेस और उसके आन्दोलन से दूर रहें। सौतिया डाह से पीड़ित सैय्यद अहमद खाँ को कांग्रेसपर आरम्भ में ब्रिटिश शासकों की मेहेरवानी जरा भी अच्छी न लगती थी।[2] रेवरेड, सी0एफ0 एंड्रूज और प्रो0 गिरजा मुकर्जी ने अपनी पुस्तक कांग्रेस का उदय और विकास में लिखा है– "कांग्रेस का विरोध करने के सैय्यद अहमद खाँ के फैंसले और इससे अलग रहने की उनकी सलाह ने 1898 ई0 में उनकी मृत्यु के बाद धार्मिक प्रतिबन्ध का रूप धारण कर लिया।"[3]

कांग्रेस विरोधी अभियान में थियोडोर बैक के रूप में एक दुर्लभ सहयोगी मिला वह अलीगढ़ मुहम्मडन एग्लो ओरियण्टल कालेज का प्रिंसिपल रहा। कांग्रेस विरोधी प्रसार को तीव्र करने के उद्देश्य से सैय्यद अहमद खाँ ने अंग्रेजपरस्त मुसलमानों और हिन्दुओं को साथ लेकर 1888 में यूनाइटेड पौट्रियाटिक ऐसोसियेशन की स्थापना की। 1890 में सैय्यद अहमद खाँ ने अपने कुछ सहयोगियों के साथ एक प्रस्ताव वाइसराय के सम्मुख पेश किया जिसमें मुस्लिम वर्ग के लिए विशेष सुविधाओं और पदों की मांग की गई थी। इसका जिम्मेदार मुस्लिम नेताओं ने भी विरोध किया। मुस्लिम हेराल्ड ने उसकी

---

[1] वही, पृष्ठ सं0– 694

[2] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृष्ठ सं0– 211

[3] सी0एफ0 एण्ड्रज और गिरजा मुखर्जी, दि राइडिंग ऐंण्ड ग्रोथ ऑफ द कांग्रेस (1938) मजूमदार एण्ड मजूमदार– कांग्रेस एण्ड कांग्रेस मैन इन द पी–गाँधियन, इरा– 1985–1917, पृष्ठ सं0– 80

निंदा करते हुए लिखा कि–"यह ऐसा प्रस्ताव है जो सुनिश्चित तौर पर जिलों और गांवों के सामाजिक जीवन के लिए जहर साबित होगा और भारत को नरक बना देगा।"[1]

उस समय इस प्रस्ताव को दफना दिया गया था लेकिन कुछ ही समय बाद ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने इसे हथियार के रूप में अपनाया। अलीगढ़ मुहम्मडन एंग्लो ओरियण्टल कालेज के दूसरे प्रिंसिपल अर्चेवोल्ड ने इस दिशा में अग्रणीय भूमिका निभाई। इसने अल्पसंख्यक मुसलमानों के मस्तिष्क में बहुसंख्यक हिन्दुओं का भय भरने के साथ अलीगढ़ आन्दोलन के नेताओं का एक ग्रुप तैयार किया कि वे मुस्लिम हितों के संरक्षण की मांग सरकार से करें। मौलवी सैय्यद तैफुल अहमद मंगलौरी ने विस्तार से बताया कि अलीगढ़ कालेज के प्रिंसिपल अर्चवोल्ड और वाइसराय लार्ड मिण्टो के प्राइवेट सेक्रेटरी सर डनलप स्मिथ के बीच शिमला में बातचीत के दौरान मुसलमानों का एक डेपुटेशन भेजने का फैसला हुआ था। इस बातचीत के बाद अर्चवोल्ड ने अलीगढ़ कालेज के सेक्रेटरी नवाब मोहसिन–उल–मुल्क को 10 अगस्त 1906 को जो पत्र लिखा उसका संक्षिप्त रूप इस प्रकार है– "कर्नल डनलप स्मिथ ने अब मुझे लिखा है कि वाइसराय मुसलमानों के डेपुटेशन से मिलने को तैयार हैं और मुझे सूचित किया है कि इसके लिए विधिवत आवेदन पत्र भेजा जाना चाहिए लेकिन नवाब साहेब कृपया याद रखिए कि अगर कोई बड़ा और असरदार काम करना है तो आपको जल्दी कदम उठाना पड़ेगा।"[2]

1898 ई0 में सैय्यद अहमद खाँ के देहान्त के पश्चात् अलीगढ़ आन्दोलन का नेतृत्व नवाब मोहसिन–दल–मुल्क ने संभाला था। अर्चवोल्ड का पत्र प्राप्त होने के पश्चात् 1 अक्टूबर 1906 को आगा खाँ के नेतृत्व में 36 मुसलमानों का एक प्रतिनिधि मण्डल ने शिमला में वाइसराय लार्ड मिण्टो से मुलाकात की। प्रिंसिपल अर्चवोल्ड ने न केवल मुलाकात की व्यवस्था करवाई थी अपितु प्रतिनिधि मण्डल द्वारा प्रस्तुत किया गया ज्ञापन को भी तैयार किया था। इसमें यह मांग की गई थी कि मुसलमानों के पृथक निर्वाचन प्रणाली प्रदान की जाए तथा भविष्य में कोई भी संवैधानिक सुधार उनकी

---

[1] रजनी पाम दत्त, इण्डिया टडे, पृष्ठ सं0– 459
[2] डा0 राजेन्द्र प्रसाद, इण्डिया डिवाइडेड, पृष्ठ सं0– 112–113

जनसंख्या नहीं अपितु उनके राजनैतिक महत्व को देखते हुए किया जाए। लार्ड मिण्टो ने उनके आवेदन की सराहना की, उनकी मांगों को उचित बताया और कहा– "आपका यह दावा बिल्कुल वाजिब है कि आपके स्थान का अनुमान सिर्फ आपकी जनसंख्या के आधार पर नहीं बल्कि आपके समाज के राजनैतिक महत्व और उसके द्वारा की गई साम्राज्य की सेवा के आधार पर लगाना चाहिए।"[1]

यह प्रतिनिधि मण्डल स्वयं सरकार द्वारा संगठित किया गया था, इसका प्रमाण लेडी मिण्टो की डायरी भी है, जिसमें नोट है कि यह डेपुटेशन सरकारी सृष्टि था।

वाइसराय से भेंट के बाद कुछ मुस्लिम नेताओं ने एक अखिल भारतीय संगठन बनाने का विचार किया और इस दिशा में महत्वपूर्ण पहल नवाब सलीमुल्ला ने किया। दिसम्बर 1906 में मुहम्मडन एजूकेशनल कांफ्रेंस के सिलसिले में बहुत से प्रमुख मुस्लिम नेता ढाका में उपस्थित थे। इसका फायदा उठाकर नवाब सलीमुल्ला ने मुसलमानों के अलग राजनैतिक संगठन के निर्माण पर विचार करने के लिए मुस्लिम नेताओं की सभा बुलाई। सभा में उनकी योजना मंजूर की गई और कांफ्रेंस का अधिवेशन समाप्त होते ही 30 दिसम्बर 1906 को नवाब बकर–उल–मुल्क की अध्यक्षता में सभा कर ऑग्ल इण्डिया मुस्लिम लीग बनाने का फैसला लिया गया।[2] मुस्लिम लीग के संविधान का मसौदा तैयार करने के लिए एक कमेटी बनाई गई, जिसके संयुक्त सचिव नवाब मोहिसिन–उल–मुल्क तथा बकर–उल–मुल्क नियुक्त किये गए। इस कमेटी ने लीग के लिए जो संविधान बनाया उसे दिसम्बर 1907 में करांची अधिवेशन में स्वीकार कर लिया गया। इसके निम्नलिखित लक्ष्य और उद्देश्य निर्धारित किए गए–

---

[1] रमेश चन्द्र मजूमदार, हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेनट इन इण्डिया, भाग–2, पृष्ठ सं0– 223

[2] लाल बहादुर वर्मा, दि–मुस्लिम लीग, पृष्ठ सं0– 43

1. भारत के मुसलमानों में ब्रिटिश साम्राज्य के प्रति वफादारी की भावना बढ़ाना और किसी भी सरकारी कार्यवाही को लेकर सरकार की नीयत के बारे में पैदा हुई शंका को दूर करना।

2. भारत के मुसलमानों के राजनैतिक और अन्य अधिकारों की रक्षा और उन्हें आगे बढ़ाते हुए उनकी आवश्यकताओं तथा आकांक्षाओं को सरकार के सामने अदब के साथ पेश करना।

3. भारत के मुसलमानों में अन्य समाजों के प्रति शत्रुता भावना की वृद्धि को लीग के अन्य पूर्वोक्त उद्देश्यों को नुकसान पहुचाए बगैर रोकना।[1]

1908 में आगा खाँ को मुस्लिम लीग का स्थाई अध्यक्ष बनाया गया। उस समय बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर का विद्यार्थी जीवन था। मुस्लिम लीग की स्थापना (दिसम्बर 1906) के कुछ ही महीने बाद 1907 में बाबा साहेब ने हाई स्कूल की परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की थी। बाबा साहेब के महान भावी जीवन की आधारशिला रखी जा रही थी।

जिस समय मुस्लिम लीग की स्थापना हुई उसी समय (दिसम्बर 1906) में मुहम्मद जिन्ना विश्व के प्रसिद्ध विश्वविद्यालय कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से शिक्षा पूरी करके भारत वापस लौटे। वहाँ से वे बार–एट–लॉ की उपाधि प्राप्त करके बैरिस्टर के रूप में भारत लौटे थे। बाबा साहेब भी पहले बड़ौदा के गायकवाड़ महाराज की सहायता से तथा बाद में साहू जी महाराज के सहयोग से इसी विश्वविद्यालय में शिक्षा प्राप्त की थी और अनके उपाधियों के साथ भारत लौटे थे। इस प्रकार दोनो में (बाबा साहेब और जिन्ना साहेब) यह अवश्य समानता थी कि कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के मेधावी छात्र थे। दोनो ने बार–ए–लॉ की उपाधि प्राप्त की थी, दोनो ही योरप के लोकतांत्रिक, धर्मनिर्पेक्ष तथा स्वतन्त्रा, समानता एवं भ्रातृत्व की भावना से ओत–प्रोत वातावरण से प्रभावित हुए थे। दोनो ने ब्रिटिश पार्लियामेण्ट तथा राजशाही के मध्य लम्बे समय तक चले संघर्षों का

---

[1] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्त संग्राम पृ0सं0 178

अच्छा ज्ञान प्राप्त किया था। दोनो ही फ्रांसीस क्रांति (1789 मई) तथा अमेरिकी स्वाधीनता संग्राम (1774–83) के कारणों, उद्‌देश्यों, उपलब्धियों से पूरी तरह परिचित थे।

जिन्ना साहेब ने 1906 में जब लंदन छोंड़ा तो उसके एक वर्ष पूर्व 1905 में प्रथम रूसी क्रांति हो चुकी थी, जिसमें लाखों मजदूरों ने सदियों से चली आ रही निरंकुश जार शाही के विरुद्ध वगावत किया था और उन्हें आपेक्षित सफलता भी प्राप्त हुई थी, लेकिन अस्थायी थी। बाबा साहेब जब दूसरी बार लंदन में अपनी अधूरी पढ़ाई पूर्ण करने के लिए जुलाई 1920 में पहुँचे तब तक नवम्बर 1917 में रूस में पुनः क्रांति हो चुकी थी और लेलिन के नेतृत्व में वोल्शेविक दल ने निरंकुश जार शाही को उखाड़ फेंक कर जार निकोलस द्वितीय को हटा कर सत्ता प्राप्त कर ली थी और इस प्रकार विश्व में लेनिन के नेतृत्व में पहली बार साम्यवादी सरकार की स्थापना हुई थी। बाबा साहेब समाजवादी विचारधारा को मानते हुए भी कभी मार्क्स पुत्र नहीं हो सके। यही नहीं मार्क्सवादी विचारधारा में उनकी तनिक भी आस्था नहीं थी। मजदूरों, श्रमिकों को तथा सर्वहारा के प्रति बाबा साहेब में न केवल हमदर्दी थी अपितु उनके हितों के लिए वे लम्बा संघर्ष भी किए, लेकिन मार्क्स के साधनों में उनकी आस्था नहीं थी।

इस प्रकार बाबा साहेब के बहुत पहले जिन्ना भारत आकर भारतीय राजनीति में सक्रिय हुए थे। लंदन में अध्ययन के दौरान ही वे भारतीय राजनीति सहित सभी गतिविधियों से अवगत थे। भारत आते ही जिन्ना साहेब ग्राण्ड ओल्ड मैन ऑफ इण्डिया के नाम से विख्यात दादा भाई नौरोजी (1828–1917) के संपर्क में आए और कांग्रेस में शामिल हो गए। 30 वर्ष के नवजवान जिन्ना 1906 में उस वर्ष के कांग्रेस के अध्यक्ष दादा भाई नौरोजी के व्यक्तिगत सचिव के रूप में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में शामिल हुए थे।[1] कांग्रेस मंच से उनका पहला भाषण मुसलमानों के लिए पृथक निर्वाचन प्रतिनिधित्व या विशेष सुविधाओं के विरोध में था। इस कांग्रेस अधिवेशन के 9वें प्रस्ताव में उन समाजों के लिए कुछ संरक्षणों की व्यवस्था करने को

---

[1] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृष्ठ सं0– 227

कहा गया था जो शिक्षा की दृष्टि से पिछडे थे। इस प्रस्ताव में संशोधन पेश करते हुए अपने भाषण में जिन्ना ने कहा–

"मैं समझता हूँ कि पिछड़े वर्ग से मतलब मुस्लिम समाज से है। अगर इसका मतलब मुसलमान है तो मैं आपका ध्यान इस बात की तरफ खींचना चाहता हूँ कि मुसलमान समाज के साथ वही सलूक करना चाहिए जैसा हिन्दू समाज के साथ किया जा रहा है। इंडियन कांग्रेस जिस बुनियाद पर खड़ी है, वह यह है कि हम सब समान हैं, किसी भी वर्ग या समाज के लिए कोई संरक्षण न होना चाहिए और मेरा सारा उद्देश्य यह है कि संरक्षण हटा लिया जाए।[1]

मुस्लिम लीग के पहले अध्यक्ष आगा खाँ ने जिन्ना का विरोध करते हुए लिखा कि जिन्ना ने उन सब कामों का विरोध किया है, जो मैंने मेरे मित्रों ने किया था और करने की कोशिश कर रहे थे। 1906 के बाद जिन्ना साहेब ने जितनी भी सभाएं की, उनमें राष्ट्रीय एकता पर ही बल दिया गया था जिससे प्रभावित होकर सरोजनी नायडू ने उन्हें हिन्दू–मुस्लिम एकता का राजदूत की उपाधि दी। जिन्ना 1913 तक कांग्रेसी बने रहे। 1913 में सुप्रीम लेजिस्लेटिव कौंसिल में भाषण देते हुए उन्होंने कहा था– "महोदय मुझे यह कहने में अभिमान होता है कि कांग्रेस पार्टी का हूँ।" किन्तु अफसोस है कि जिन्ना साहेब बहुत दिनों तक कांग्रेस में नहीं रह सके।

इस दृष्टिकोंण से बाबा साहेब और जिन्ना में गहरा अंतर्विरोध है। जिन्ना भारत लौटते ही (इंग्लैण्ड से) कांग्रेस और उसके आन्दोलन में शरीक हो गये जबकि बाबा साहेब कांग्रेस की विनाशकारी नीतियों, विशेषकर अस्पृश्यों के साथ उसकी नीतियों के कारण कांग्रेस से अलग अस्पृष्यों के दुःखों को समाप्त करने तथा उनके मानवीय अधिकारों को लेकर संघर्ष का विगुल बजाया। महाड़ सत्याग्रह उनका ऐतिहासिक आन्दोलन था, जिसने दलितों में न केवल चेतना, जागरूकता पैदा की अपितु अछूतों के

[1] मजूमदार, मजूमदार कांग्रेस एंड कांग्रेस मैन इन दी प्री० गाँधियन, पृष्ठ सं०–96

साथ किये जा रहे अमानवीय व्यवहार को विश्व के सामने प्रकट किया और विश्व का ध्यान आकृष्ट कराया।

जिन्ना साहेब 1906 में कांग्रेस में शामिल होकर 1913 तक उसमें रहे और बाबा साहेब 1947 से 1951 तक कांग्रेस के साथ रहे लेकिन कांग्रेसी नहीं बने। बाबा साहेब ने केवल दलित वर्गों के हितों के लिए कांग्रेस के साथ सहयोग किया था। जिन्ना साहेब अपने अल्पसंख्यक वर्ग के हितों के लिए कांगेस में शामिल नहीं हुए थे अपितु अपने राजनैतिक जीवन के शुरुआत तथा उससे भी उदान्त राष्ट्रवाद की भावना लेकर शामिल हुए थे, जबकि बाबा साहेब अपने जीवन के एक मात्र उद्देश्य दलित, अछूत वर्ग की सेवा के लिए कांग्रेस से सहयोग कर विधिमंत्री बने थे। इस प्रकार दोनो के (बाबा साहेब और जिन्ना साहेब) उद्देश्य अलग–अलग थे।

जिन्ना साहेब कांग्रेस छोंड़कर 1913 में मुस्लिम लीग के निमंत्रण को स्वीकार करके उसमें शामिल हुए, वैसे अभी भी वे राष्ट्रवादी ही थे। मुस्लिम लीग भी अभी राष्ट्रवादी थी। यद्यपि अपने पूर्व के वायदे को निभाते हुए (शिमला में लार्ड मिंटो द्वारा दिया गया वादा) ब्रिटिश सरकार ने मिंटो--मारले सुधार योजना 1909 में मुसलमानों को पृथक निर्वाचन मण्डल प्रदान किया था, तथापि जिन्ना साहेब उसका अभी भी विरोध कर रहे थे। पृथक निर्वाचन मण्डल का बाबा साहेब ने भी विरोध किया था। जिन्ना साहेब का मत था कि पृथक निर्वाचन प्रणाली से देश स्पष्ट दो खेमों में बंट जायेगा।[1] लेकिन अब जिन्ना साहेब मुस्लिम समुदाय के प्रवक्ता या नेता की भूमिका भी अख्तियार करने लगे थे, इस प्रकार वे दोहरी भूमिका में आ गये थे।

1913 से मुस्लिम लीग के दृष्टिकोंण में राष्ट्रवादी रुझान अधिक दिखाई पड़त है और वह काग्रेस की ओर आकृष्ट हो रही थी,[2] जिसका मूल कारण अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति थी। वाल्कान युद्धों (1912–1913) और युवा तुर्क आन्दोलन के कारण भारतीय मुसलमानों में सर्व इस्लाम की विचारधारा की लोकप्रियता बढ़ी, जिसके परिणाम स्वरूप

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संधर्ष, पृष्ठ सं0–401।
[2] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण बांडमय, खण्ड–4, पृष्ठ सं0– 8

ब्रिटिश शासन के प्रति लीग के ब्रिटिश राजभक्ति के दृष्टिकोंण में परिवर्तन होने लगा। मुस्लिम समुदाय का युवा वर्ग कांग्रेस के उद्देश्यों के प्रति सहानुभूति रखने लगा और 1913 में लीग ने अपने संविधान में परिवर्तन करके अपना उद्देश्य भारत में औपनिवेशिक स्वशासन (Dominiton Status) की मांग करना निश्चित किया।[1]

प्रथम विश्व युद्ध में ब्रिटेन मित्र राष्ट्रों की ओर से जर्मनी–तुर्की के विरुद्ध युद्ध कर रहा था, जिससे भारतीय मुसलमानों की भावनाएं और आहत हुई और उनको लगा कि इस्लाम का हित ब्रिटेन के साथ नहीं अपितु भारत और कांग्रेस के साथ है।इसी वातावरण में कांग्रेस और लीग में समझौते की वार्ता चली और अंततः बाल गंगाधर तिलक और जिन्ना साहेब के वार्ता के फलस्वरूप 1916 ई0 को ऐतिहासिक लखनऊ समझौता कांग्रेस और लीग में हो गया। मुस्लिम लीग और कांग्रेस का अधिवेशन एक साथ लखनऊ में हुआ, जिसमें लीग के अध्यक्ष जिन्ना और कांग्रेस के अध्यक्ष अम्बिका चरण मजूमदार साहेब थे। इस ऐतिहासिक समझौते में कांग्रेस ने पृथक निर्वाचन प्रणाली को स्वीकार कर लिया जिसका वह 1909 से विरोध करती चली आ रही थी। कांग्रेस लीग समझौता एक राजनैतिक मोलभाव का परिणाम था।[2] यह समझौता कुछ दृष्टिकोंण से प्रगतिशील था, लेकिन इसके द्वारा कांग्रेस ने साम्प्रदायिक राजनीति को स्वीकार भी कर लिया। समझौते में यह निहित था कि भारत विभिन्न समुदायों का देश है और उनके हित अलग–अलग हैं, इसके खतरनाक परिणाम निकले।[3] तात्कालिक रूप से इससे देश में उल्लास का वातावरण था। जिन्ना साहेब ने लीग के इस लखनऊ अधिवेशन में अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा– " मैं अपनी जिन्दगी भर पक्का काँग्रेस मैन रहा हूँ और संकीर्णतावादी नारों का मैं प्रेमी नहीं रहा लेकिन मुझे लगता है कि मुसलमानों पर अलगाववाद का जो इल्जाम कभी–कभी लगाया जाता है, वह बिल्कुल अनुचित और बेतुका है, जब मैं यह देखता हूँ कि वह महान साम्प्रदायिक संगठन तेजी के साथ बढ़कर ऐक्यवद्ध भारत के जन्म का शक्तिशाली राष्ट्र बन रहा है।"

---

[1] प्रो0 आर0एल0 शुक्ला, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 700
[2] प्रो0 आर0एल0 शुक्ला, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 70
[3] प्रो0 विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृष्ठ सं0– 389

लखनऊ समझौते की कतिपय नेताओं तथा इतिहासकरों ने आलोचना की है। मदनमोहन मालवीय, सी0वाई0 चिन्तामणि जैसे माडरेट (उदारवादी) नेताओं को लगा कि इस पैक्ट में मुसलमानों को ज्यादा सुविधाएं दे दी गई हैं। कुछ इतिहासकारों ने इसकी कटु आलोचना करते हुए इसे कांग्रेस द्वारा पाकिस्तान की स्वीकृति बताया है। डा0 रमेश चन्द्र मजूमदार लिखते हैं– ''लेकिन वाद की घटनाओं की रोशनी में कोई भी संदेह नहीं कर सकता कि 1916 में कांग्रेस के कार्य ने सचमुच तीस साल बाद के पाकिस्तान की बुनियाद डाली थी।''[1]

बाद में बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर ने भी लखनऊ समझौते की जबरदस्त आलोचना की। बाबा साहेब ने साम्प्रदायिक निर्वाचन मण्डल ने स्थान पर संयुक्त निर्वाचन क्षेत्र रखे जाने की वकालत की और लखनऊ समझौते को समाप्त करने की मांग की। उन्होंने इसके लिए निम्नलिखित तर्क पेश किया–[2]

1. मेरा पहला तर्क यह है कि जो करार लखनऊ समझौते के अनुसार किया गया वह गलत है। सभी स्थानीय सरकारें इसे स्वीकार करती हैं। मताधिकार कमेटी की सिफारिशों की समीक्षा करने वाले भारत मंत्री के नाम अपने डिस्पैच में भारत सरकार ने कहा था– ''हमने नोट किया है कि स्थानीय सरकारों ने समझौते पर सहमति सर्व सम्मति से व्यक्त नहीं की। मध्य प्रान्त के चीफ कमिश्नर ने पृथक मुस्लिम निर्वाचन मण्डलों का विरोध किया और विचार प्रकट किया कि इस समझौते में जो प्रतिशत रखा गया है– 'वह इस सम्प्रदाय की संख्या के और स्थिति के अनुपात में तनिक भी अनुरूप नहीं है।' बंबई सरकार ने हालाकि इसे स्वीकार कर लिया पर उसने कहा कि जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व की योजना पर विचार होना चाहिए। भारत सरकार ने भी प्रान्तीय सरकारों की इस आमराय के साथ मतभेद नहीं प्रकट किया है। लखनऊ समझौते के परिणामों का विभिन्न प्रान्तों में मूल्यांकन करते समय भारत सरकार ने कहा– ''नतीजा यह है

---

[1] रजनी यामदत्त, इण्डिया टुडे, पृष्ठ सं0– 466
[2] रमेश चन्द्र मजूमदार, हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेंट, भाग–2, पृष्ठ सं0– 330

कि जनसंख्या के आधारपर उन्हें जो मिलता, बंगाल के मुसलमानों को उसका केवल तीन चौथाई और पंजाब के मुसलमानों को दस में से नौ भाग ही मिल पाता है। अन्य प्रान्तों के मुसलमानों को अधिक हिस्सा मिला है, और कुछ प्रान्तों में तो अप्रत्याशित रूप से अधिक। सर विलियम विसेंट ने तो अपने नियमित टिप्पणी में यहाँ तक कह डाला– लखनऊ समझौते के ब्यौरे की परवाह न करते हुए हमें अपने वचनों को पूरा करने के लिए उस रीति से कार्यवाही करनी चाहिए जिसे हम स्वयं सर्वोत्तम रीति समझते हैं।

2. लखनऊ समझौते में इतनी ही गलती नहीं है कि मुसलमानों के साथ उसमें अलग–अलग प्रान्तों में अलग–अलग व्यवहार किया गया है। कुछ में उनके साथ उदारती बरती गई और कुछ अन्य में कंजूसी।

लखनऊ समझौते की मुख्य त्रुटि यह है कि मुसलमानों के लि सीटें एलाट करते समय इस बात का ध्यान नहीं रखा गया कि इससे दूसरों के हितों पर क्या प्रभाव पड़ेगा? जैसा कि भारत सरकार ने कहा है– समझौते के रचनाकारों ने यह बात ध्यान में नहीं रखी कि जो कुछ लाभ मुसलमानों को दिया जा रहा है वह दूसरों के हित या हितों से छीना जा रहा है। सर विलियम विसेंट ने अपनी असहमतिपूर्ण टिप्पणी में कहा है– आज इस समझौते का आलोचना से कहीं अधिक समर्थन मिल रहा है, लेकिन बाद में जब मतों और प्रतिनिधित्व के महत्व का अहसास होगा, तो यह आशा करनी ही होगी कि जिन हितों को इससे गहरी चोंट पहुँची है, शिकायत करेंगे कि भारत सरकार ने इसका समर्थन करके कुछ उचित कार्य नहीं किया है।

लखनऊ समझौते के नतीजे के प्रति जितना व्यापक असंतोष अनुभव किया गया है, इस बात का जरूरत से ज्यादा प्रमाण हैं कि लखनऊ समझौते में जो करार है वह गलत करार है। यह आपत्ति करने में कोई औचित्य नहीं है कि

जो गलत तरीके से किया गया है, उसे फिर से तय किया ही जाना होगा। इस कार्य का मुसलमान विरोध तो करेंगे ही।

3. यह भी याद रखा जाना चाहिए कि लखनऊ समझौता न केवल इसलिए महत्वपूर्ण है, यदि भारत सरकार के शब्दों में कहाजाय कि उनकी शर्तें राजनैतिक वार्ता की उपज हैं न कि सुविचारित तर्क की बल्कि इसलिए भी यह समझौता उन संगठनों ने किया है जिनमें से किसी को भी उन लोगों के नाम पर बोलने का कोई वास्तविक आधार नहीं था, जिसकी ओर से वे बोलने का दावा करते थे। आल इण्डिया मुस्लिम लीग का सभी मुसलमानों के लिए बोलने का कोई अधिकार नहीं था। यह भारत सरकार का दृष्टिकोंण था, जिसे उसने साउथ्वरा कमेटी की रिपोर्ट में भेजा था।

जहाँ तक कांग्रेस का सम्बन्ध है– यह एक निर्विवाद तथ्य है कि यह गैर ब्राह्मणों तथा दलित वर्गों के बहुत बड़े जन समूह का प्रतिनिधित्व नहीं करती।

बाबा साहेब ने सप्रमाण कांग्रेस के इस दावे का खण्डन किया कि वह सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व करती है साथ ही कांग्रेस द्वारा खिलाफत के प्रश्न पर असहयोग आन्दोलन आरम्भ करने की नीति की आलोचना भी की बाबा साहेब ने 1927 में नियुक्त साइमन कमीशन का समर्थन किया और उसे दलित वर्गों की समस्याओं को प्रकट करने के एक अवसर के रूप में देखा, जबकि कांग्रेस, मुस्लिमलीग सहित सभी दलों ने विरोध और बहिष्कार करने का निर्णय किया यद्यपि मो0 शफी के नेतृत्व वाला मुस्लिम लीग का एक गुट साइमन कमीशन का समर्थन किया और इसी आधार पर मुस्लिमलीग का विभाजन भी हुआ।

तीनो गोलमेज सम्मलेनों में भी बाबा साहेब ने मुस्लिमलीग की नीति का समर्थन नही किया। 1930 में गोलमेज सम्मलेन आरम्भ होने के पूर्व इलाहाबाद में मो0 इकबाल की अध्यक्षता में मुस्लिमलीग का सम्मेलन हुआ जिसमें मुस्लिम वर्ग के विशेष हितों से सम्बन्धित प्रस्ताव पारित किया गया। इसमें इकबाल साहेब ने एक मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्रों

के स्थापना पर बल दिया था जिसे जिन्ना ने एक कवि की कल्पना कह कर अस्वीकार कर दिया था लेकिन कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय का एक मेद्यावी छात्र चौधरी रहमत अली इस विचारधारा से प्रभावित हुआ और 1935 में पाकिस्तान शब्द की व्युत्पत्ति की।

द्वितीय विश्व युद्ध आरम्भ होने पर मुस्लिमलीग की नीति में परिवर्तन आया तथा कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार की नीतियों से क्षुब्ध होकर अक्टूबर–नवम्बर 1939 में सभी प्रान्तीय सरकारों से अपना त्याग पत्र दे दिया। जिन्ना ने इसे मुक्त दिवस के रूप में मनाया और कई स्थानों पर सम्मेलन किया जिसमें कुछ सम्मेलनों में बाबा साहेब भी सामिल हुए। ऐसे ही एक सम्मेलन में बाबा साहेब ने कहा "जिन्ना का प्रत्रक पढ़ा उन्होने अनजाने में मुझे पीछे धकेल देने का मौका दिया जिसकी मुझे शर्म आती है। जिन्ना ने जो भाषा और भावना व्यक्त की उसको इस्तेमाल करने का सच्चा अधिकारी उनकी अपेक्षा मैं ही था।" बाबा साहेब ने कहा– "अगर जिन्ना द्वारा लगाये गये इल्जाम के अनुसार मुस्लमानों पर जुल्म होने के पाँच प्रतिशत उदाहरण साबित किया तो मैं अस्पृश्य समाज पर हुए जुल्म के सौ में से सौ उदाहरण किसी भी छीर–नीर विवेकी न्यायालय के सामने साबित करूंगा।[1] बाबा साहेब ने यह स्पष्ट किया कि मुस्लिमलीग का यह मुक्त दिवस हिन्दू विरोधी नही अपितु कांग्रेस विरोधी है। साथ ही बाबा साहेब यह भी मानते रहे कि कांग्रेस मंत्रीमण्डलों ने प्रन्तो में अस्पृश्य वर्ग की समस्याओं का सामाधान नही किया, अपितु शासक वर्ग के हितों की पूर्ति में लगी रही। इस कारण बाबा साहेब मुस्लिमलीग के नजीद आये। लेकिन मुस्लिमलीग की नीतियों के समर्थक नही बने।

मुस्लिमलीग ने 1940 में अपने लाहौर अधिवेशन में चौधरी रहमत अली के प्रस्ताव को साकार करते हुए पाकिस्तान की मांग की। जिन्ना ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि भारत का मुस्लमान पाकिस्तान से कम स्वीकार करने के लिए किसी भी कीमत पर तैयार नही होगा। लीग की इस मांग ने भारतीय राजनीति में तूफान ला दिया। गांधी जी ने इसे राष्ट्रीय एकता पर आघात बताया। बड़ी संख्या में राजनेताओं और समीक्षकों ने

---

[1] कीर धनंजय, बाबा साहेब अम्बेदकर जीवन चरित्र पृ0सं0 313

अपनी प्रतिक्रियाएं व्यक्त की। बाबा साहेब ने उसी वर्ष इस जटिल समस्या पर अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "थाट आन पाकिस्तान" में अपना विचार और समाधान प्रस्तुत किया। बाबा साहेब ने सम्पूर्ण समस्या पर तटस्थ भाव से एक शल्य चिकित्सक की भूमिका अपना कर एतिहासिक आधार पर बौद्धिक विवेचना कर भारत विभाजन को अनिवार्य और अपरिहार्य बताया जिसे अधिक दिनों तक टाला नही जा सकता। भारतीय नेताओ ने अकेले डा0 अम्बेदकर ही थे, जिन्होने दावों, सूत्रों और समाधानो के जंगल में एक स्पष्ट दिशा देखी। कालान्तर में भारत की आजादी और संवैधनिक समाधान ठीक वैसे ही हुआ जैसा डा0 अम्बेदकर ने सुझाया।[1]

बाबा साहेब ने मो0 जिन्ना के सम्बनध में अपने महत्वपूर्ण विचार महादेव गोविन्द रानाडे की एक सौ एकवें जन्म दिन पर 18 जनवरी, 1940 को पुणे की दकन सभा में आयोजित एक सम्मेलन में अपने भाषण में व्यक्त किया। बाबा साहेब ने अपने लम्बे भाषण में कहा "आज वे कौन से राजनीतिज्ञ है जिके साथ राना डे की तुलना की जा सकती है? रानाडे अपने समय के महान राजनीतिज्ञ थे अतः उनकी तुलना आज के सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति से करनी चाहिए। भारत की छितिज पर दो महापुरूष हैं और वे इतने महान हैं कि उन्हें बिना नाम लिये ही पहचाना जा सकता है, वे हैं – गांधी और जिन्ना। वे कैसे इतिहास की रचना करेंगे, इसे तो भावी पीढ़ी ही बताएगी.......... एक हिन्दुओं का नेता है तो दूसरा मुस्लिमों का। वे आज के आदर्श पुरूष और नायक हैं......... .... सबसे पहली बात मेरे मन में यह कौंधती है कि जहां पर उनके विराट अहम भाव का सम्बन्ध है, उन जैसे दो अन्य व्यक्तियों को खोज पाना कठिन ही है। उनके लिए व्यक्तिगत प्रभुत्व ही सबकुछ है और देश हित तो शतरंज की गोट है। उन्होने भारतीय राजनीति को निजी मलयुद्ध का अखाड़ा बना रखा है, परिणामों की उन्हें कोई प्रवाह नही है........... आलोचना से वे क्षुब्ध तथा व्यग्र हो जाते हैं। वे अपने बराबरी वालों से ओट खड़ी कर लेते हैं। वे अपने से घटिया लोगों से मेल–जोल पसन्द करते हैं। दोनो ने एक अद्भुत रंगमंच तैयार कर लिया है और वे चीजों को इस ढंग से प्रस्तुत करते हैं कि

---

[1] लिमये मधु, बाबा साहेब एक चिन्तन पृ0सं0 67

जहा भी वे जाते हैं, वहां सदा उनकी जय–जय कार होती है। निश्चय ही दोनों सर्वोच्च होने का दावा करते हैं............... समाचार पत्रों की वाह–वाही का कवच धारण करके इन दोनों महानुभावों कि प्रभुत्व जमाने की भावना ने तो सभी मर्यादाओं को तोड़ डाला है। उन्होने अपने प्रभुत्व से न केवल अनुयायिओं को बल्कि, भारतीय राजनीति को भी भ्रष्ट किया है। अपने प्रभुत्व से उन्होने अपने आधे अनुयाइयों को मूर्ख तथा शेष आधे को पाखन्डी बना दिया है। अपनी सर्वोच्चता के दुर्ग को सुदृढ करने में उन्होने बड़े व्यापारिक घरानो तथा धनकुवेरों की सहायता ली है। हमारा देश में पहली बार पैसा संगठित शक्ति कें रूप में मैदान में उतरा है.....................।''

इन दो महापुरूषों के हाथों में राजनीति बेतुके कार्यों की होड़ बनकर रह गई है। यदि गांधी को महात्मा कहा जाता है तो जिन्ना को कायदे–आजम कहा ही जाना चाहिए। यदि गांधी की कांग्रेस है तो जिन्ना की मुस्लिमलीग होनी ही चाहिए...............। जिन्ना का आग्रह है कि गांधी स्वीकार करें वह हिन्दू नेता हैं। गांधी का आग्रह है कि जिन्ना स्वीकार करें कि वह भी एक मुस्लिम नेता है।

कूटनितिज्ञता का ऐसा खोखला और दैनीय दिवालियापन तो कभी देखने में नही आया, जैसा कि भारत में इन दोनो नेताओ के आचरण में दिख रहा है। वे वकीलों की भाँति लम्बे, चौड़े, अनन्त भाषण दे रहे हैं .... प्रसिद्ध वाणिज्यिक उक्त के अनुसार उनके चक्कर में फंस कर राजनीति का ''दिवाला'' पिट गया है और कोई भी राजनैतिज्ञ लेन–देन नही हो सकता...............।

भारत में नायक पूजा ने दम नही तोड़ा है। मूर्ति पूजा के क्षेत्र में वह आज भी अद्वितीय है। यहां धर्म में मूर्ति पूजा है। यहां राजनीति में मूर्ति पूजा है। भले ही दुर्भाग्य की बात हो, पर भारत के राजनीतिक जीवन में नायक और नायक पूजा एक जीता जागता तथ्य है। मैं मानता हूँ कि नायक पूजा भक्त को भ्रष्ट और देश को नष्ट करती है..................। महापुरूषों की पूजा के पक्षधर कार्लाइल ने भी अपने पाठको को सचेत करते हुए कहा था कि ''इतिहास में ऐसे ढेर सारे महापुरूष गिनाए गए हैं जो झूठे और

स्वार्थी हैं। उन्होने गहरा खेद व्यक्त करते हुए कहा विश्व का (श्रृद्धान्जली रूपी) वेतन (इन तथाकथित महापुरूषों) की जेबों में चला जाता है। विश्व का कार्य नही सधता। नायक तो बाहर निकल गये है नीम, हकीम भीतर घुस आये हैं।"[1]

बाबा साहेब का यह भाषण जिन्ना साहेब और गांधी जी के प्रति उनके सम्पूर्ण विचार को स्पष्ट करता है। इन दोनो महापुरूषों की इतने तीखी आलोचना शायद ही किसी ने व्यक्त की थी। बाबा साहेब के इस भाषण की देश में तीखी प्रतिक्रिया हुई। बाबा साहेब ने स्वयं अनुभव किया था कि तीव्र आलोचना होगी। बाद में उन्होने कहा "मेरी निन्दा इसलिए की जाती है कि मैने श्री गांधी और श्री जिन्ना की उस गड़बड़ी के लिए आलोचना की, जो उन्होंने भारतीय राजनीति में फैलाई है। अतः मुझ पर यह आरोप लगाया गया कि ऐसा करके मैने उनके प्रति घृणा और अनादर की भावना व्यक्त की है। इस आरोप के उत्तर में मुझे कहना है कि मैं एक आलोचक रहा हूँ और मुझे एक आलोचक ही रहना चाहिए। हो सकता है कि मैं गलती कर रहा हूँ परन्तु मैने हमेशा यह महसूस किया कि गलती करना बेहतर है, बजाय इसके कि दूसरों से मार्ग दर्शन किया जाए या चुपचाप बैठा जाए यथास्थित को बिगड़ने दिया जाए................। मैं अन्याय, अत्याचार, आडम्बर तथा अनर्थ से घृणा करता हूँ और मेरी घृणा उन सब लोगों के प्रति है जो इन्हे करते है। वे इनके दोषी है। मैं अपने आलोचकों को यह बताना चाहता हूँ कि मैं अपने घृणाभाव को वास्तविक बल व शक्ति मानता हूँ.............. श्री गांधी तथा श्री जिन्ना की मैने जो आलोचना की है उसके लिए मैं कोई क्षमायाचना या खेद प्रकट नही करूंगा, क्योंकि इन दोनो महानुभावों ने भारत की राजनैतिक प्रगति को ठप्प कर दिया है।................. मुझे आशा है कि मेरे देश वासी किसी न किसी दिन यह सीख लेगें कि देश, व्यक्ति कहीं महान होता है। श्री गांधी या जिन्ना की पूजा और भारत की सेवा में आकाश–पाताल का अन्तर है, और वे परस्पर विरोधी भी हो सकते हैं।"[2]

---

[1] बाबा साहेब डॉ0 अम्बेदकर सम्पूर्ण वांडमय खण्ड एक पृ0सं0 253– 282
[2] बाबा साहेब डॉ0 अम्बेदकर सम्पूर्ण वांडमय खण्ड एक पृ0सं0 250–51

बाबा साहेब ने मार्च 1942 में भारत आये क्रिप्स मिशन तथा मार्च 1945 में शिमला सम्मेलन में मुस्लिमलीग की नीतियों का समर्थन नही किया। मार्च 1946 में भारतीय संवैधानिक समस्या का समाधान प्रस्तुत करने के लिए आये कैबिनेट मिशन योजना पर भी मुस्लिमलीग के विचारों की आलोचना की।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब ने मुस्लिमलीग और उसके सर्वे–सर्वा मो0 जिन्ना की नीतियों कार्यक्रमों की कभी प्रशंसा या समर्थन नही किया। फिर भी 1940 में अपने प्रसिद्ध पुस्तक में मुस्लिमलीग के पाकिस्तान के लक्ष्य का समर्थन यह कह कर प्रस्तुत किया की भातर विभाजन अनिवार्य है। पाकिस्तान अपिहार्य है। यद्यपि भारत विभाजन उनकी इस आशा के अनुरूप नही रहा कि शान्तिपूर्ण होगा और अस्थाई होगा।

अध्याय
बारह

अध्याय– बारह

"बाबा साहेब का भारतीय रियासतों से सम्बन्ध"

समय–समय पर ऐसे महापुरुषों का अवतरण धरती पर होता रहा है, जिन्होंने अपने कृतित्व और व्यक्तित्व से अपने युग के समस्त जीवन को प्रभावित किया है। महापुरुषों की लम्बी श्रृंखला में भगवान बुद्ध (563&487 B.C) सर्वाधिक उल्लेखनीय है जिन्होंने छठी सदी ई0पूर्व में भारत के धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं आर्थिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया। जाति मत पूँछ आचरण पूँछ का घोष करके भगवान बुद्ध ने राजा से लेकर रंक तक करोड़ों मानवों को अपने धर्म (धम्म) में शरण दिया। भगवान बुद्ध के अनुयायियों में जहाँ मगध साम्राज्य के संस्थापक बिम्बसार, कौशल नरेश, अवत्ति नरेश पद्योत आदि महाराधिराज रहे, वहीं सुनीत जैसे भंगी (अस्पृश्य) भी थे। भगवान बुद्ध की भांति बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने भी वर्तमान युग के सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं आर्थिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया। साथ ही बड़ौदा नरेश गायकवाड़, कोल्हापुर नरेश छत्रपति साहू जी महाराज जैसे राजाओं तथा करोड़ों दलितों, अछूतों से घनिष्ट सम्पर्क स्थापित किया। एक स्वाभाविक प्रश्न आम जनमानस में उत्पन्न होता है कि भारत में बड़ी संख्या में विद्यमान राजाओं महाराजाओं से बाबा साहेब का किस प्रकार का सम्बन्ध था? उनकी रियासतों में अस्पृश्ता की क्या स्थिति थी? भारतीय रियासतों के सम्बन्ध में बाबा साहेब के क्या विचार थे?

भारतीय रियासतों का संक्षिप्त इतिहास

देश के एक छोर से दूसरे छोर तक बड़ी संख्या में रियासतों का जाल बिछा हुआ था। भारतीय इतिहास में सामन्तवाद का उदय सातवाहन काल (प्रथम सदी ई0 से

तीसरे सदी ई0 तक) से माना जाता है।[1] यद्यपि 'सामन्त' शब्द का सर्व प्रथम उल्लेख गुप्तवंशीय शासक वैन्य गुप्त के गुनैधर अभिलेख में मिलता है।[2] गुप्तोत्तर काल में सामन्तवाद का व्यापक स्तर पर विकास हुआ। मध्यकाल में भी बड़ी संख्या में रियासतें न केवल बनी रहीं अपितु राजनैतिक और सामाजिक जीवन में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका भी निभा रहीं थीं। स्वतन्त्रता की पूर्व सन्ध्या पर भारत में रियासतों की कुल संख्या 562 थी।[3] इनमें से कुछ बड़ी आकार की रियासतें थी जैसे हैदराबाद जसकी जनसंख्या 140,00,000 थी और वार्षिक आय 8.5 करोड़ रुपये थी। और कुछ इतनी छोटी थी जिनकी जनसंख्या केवल 27 थी और आय 8 रुपये वार्षिक थी।[4]

आधुनिक काल की अधिकांश रियासतें ब्रिटिश संतति थीं और उन्हीं के प्रति वफादार थीं। गोलमेज सम्मेलन में देशी रियासतों के प्रतिनिधि मण्डल के सलाहकार और राजाओं महाराजाओं के मुख्य सरकारी प्रचारक प्रोफेसर रशब्रुक विलियम्स ने 1930 में कहा– देशी रियासतों के शासक अपने ब्रिटिश सम्बन्ध के प्रति बहुत वफादार हैं। उनमें से बहुत से अपने अस्तित्व के लिए ब्रिटिश न्याय और सेना के ऋणी हैं। बहुतों का आज अस्तित्व ही न होता अगर 18वीं सदी के अन्त और 19वीं सदी के आरम्भ के संघर्षों में ब्रिटिश सत्ता ने उनका समर्थन न किया होता। उनका स्नेह और स्वामी भक्ति वर्तमान संकटों में और पुनर्व्यवस्था में, जो अवश्य होगी.... ब्रिटेन के लिए महत्वपूर्ण पूंजी है।..... भारत में अंग्रेजों के खिलाफ आम विद्रोह का फैलना शक्तिशाली स्वामी भक्त देशी रियासतों के इस जाल की वजह से मुश्किल होगा।[5]

---

[1] एन0सी0आर0टी0, प्राचीन भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 94
[2] प्रो0 यू0एन0राय, गुप्त राजवंश, पृष्ठ सं0–382
[3] प्रो0 वी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 336
[4] वही, पृष्ठ सं0– 336
[5] रजनी यामदत्त, इण्डिया टुडे, पृष्ठ सं0– 445।

निःसन्देह भारतीय रियासतें ब्रिटिश स्वामी भक्त रहीं हैं। यद्यपि यह स्थिति आरम्भ से ही नहीं रही। ब्रिटिश सरकार और भारतीय रियासतों के बीच निम्नलिखित अवस्थाएं दिखाई पड़ती हैं[1]–

1. कम्पनी का भारतीय रियासतों के साथ समानता प्राप्त करने के लिए संघर्ष (1740–1765)
2. घेरे की नीति– (1765–1813)
3. अधीनस्थ पार्थक्य नीति-- (1813–1858)
4. अधीनस्थ संघ की नीति– (1858–1935)
5. समानता संघात्मक नीति– (1935–1947)

बाबा साहेब को भारतीय रियासतों से सम्बन्ध

यद्यपि भारतीय रियासतों में सामन्ती दुष्प्रवृत्तियां पूर्ण स्वरूप में विद्यमान थीं, तथापि कुछ रियासतों में उदारवादी शासक भी हुए जिनके साथ बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर के मधुर सम्बन्ध थे। इसमें प्रमुख रियासतें इस प्रकार थीं–

1. बड़ौदा रियासत

शिवाजी (1527–1580) ने जिस मराठा साम्राज्य की स्थापना की थी, शनैः शनैः उसके अनेक शक्ति केन्द्र विकसित हुए। इसमें बड़ौदा के गायकवाड़ अत्यन्त महत्वपूर्ण रहे। प्रथम ऑग्ल–मराठा युद्ध (1775–1782) के दौरान बड़ौदा गायकवाड तटस्थ रहे।[2] गायकवाड़ लार्ड वेलेडली के सहायक सन्धि प्रणाली से बाहर रहे। बाद में सहायक सन्धि प्रणाली स्वीकार कर लिया और अंग्रेजों का संरक्षित राज्य बन गया। तृतीय आंग्ल–मराठा युद्ध (1817) में मराठों को पराजित कर लार्ड हेस्टिंग्स ने मराठा संघ समाप्त कर दिया।

---

[1] प्रो0 बी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 337।
[2] प्रो0 बी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 114।

यद्यपि बड़ौदा रियासत में भी सामंतशाही विद्यमान था लेकिन बड़ौदा का सौभाग्य था कि सायजी जैसे उदारवादी महाराजा उसे प्राप्त हुए। साय जी महाराज अपने पूर्वजों की तुलना में उदारवादी थे। उन्होंने प्रजा के हित के लिए कुछ कल्याणकारी कार्य किया। उन्होंने 1906 ई0 में अपने रियासत में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा आरम्भ की थी।[1] उन्होंने अस्पृश्यों के लिए भी शिक्षा का द्वार खोल दिया था जिसकी पूरे देश में चर्चा थी। बड़ौदा नरेश ने बाबा साहेब की शिक्षा के लिए ऐतिहासिक एवं अविस्मरणीय सहयोग दिया। बाबा साहेब ने 1907 ई0 में मैट्रिक की परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीर्ण की। एक अछूत महार जाति का बालक मैट्रिक की परीक्षा अच्छे अंकों से उत्तीण की, यह सम्पूर्ण महार जाति के लिए गर्व का विषय था। अपनी विकट गरीबी के बावजूद सूबेदार रामजी सकपाल ने अपने होनहार बेटे का नाम बंबई के एलफिस्टन कालेज में लिखाया जहाँ से बाबा साहेब ने अच्छे अंकों से इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण की। आगे की पढ़ाई के लिए शिक्षा का व्यय उठाने में अब उनके पिता सूबेदार रामजी असमर्थ थे। इसी समय गुरुवर केलुसकर सामने आये। उन्होंने बड़ौदा के दीवान सर नारायण की मध्यस्तता से बड़ौदा नरेश से उनके मुंबई स्थित आवास में भेंट की। अस्पृश्यों को प्रोत्साहनार्थ सहयता देने की जो घोषणा बंबई नगर भवन में बड़ौदा नरेश ने की थी, उसकी याद दिलाकर गुरुवर केलुसकर ने भीमराव को सामने खड़ा किया। बड़ौरा नरेश ने भीमराव से जो भी प्रश्न पूँछे उसका सन्तोषजनक उत्तर उन्होंने दिया। बड़ौदा नरेश ने अपनी सरकार की 25 रुपये की प्रतिमाह की छात्रवृत्ति भीमराव को देना स्वीकार किया। इस छात्रवृत्ति से बाबा साहेब ने अपनी आगे की शिक्षा पूर्ण मनोयोग से जारी की। उनकी सच्ची साधना एवं कठिन परिश्रम सफल रहा और 1912 में एलफिस्टन कालेज से उन्होंने अच्छे अंकों से बी0ए0 (स्नातक) की परीक्षा उत्तीर्ण की।

बाबा साहेब की उच्च शिक्षा प्राप्त करने की उत्कृष्ट अभिलाषा थी लेकिन आर्थिक समस्या उनकी राह में बाधा डाल रही थी। अंत में काफी विचार विमर्श करने के पश्चात् बड़ौदा रियासत में नौकरी कर लो। बड़ौदा सरकार में डा0 साहेब की नियुक्ति

[1] प्रो0 बी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 360।

लेफ्टिनेंट पद पर हुई।[1] उन्होंने 1913 में यह पद स्वीकार किया लेकिन यहाँ भी अस्पृश्यता का दंश उन्हें भोगना पड़ा! पिता की बीमारी के कारण 15 दिन के अन्दर ही बाबा साहेब को यह पद छोंड़कर घर आ जाना पड़ा। 2 फरवरी 1913 को बाबा साहेब को पिता जी के देहान्त का असीम कष्ट का सामना करना पड़ा।

बाबा साहेब के मन में उच्च शिक्षा प्राप्त करने की अभिलाषा बनी रही और उन्होंने बड़ौदा नरेश से पुनः मुलाकात की और उदारवादी महाराज के सम्मुख उच्च शिक्षा उच्च शिक्षा प्राप्त करने की इच्छा व्यक्त की एवं सहयोग की प्रार्थना की। उस समय बड़ौदा सरकार 4 मेधावी छात्रों को छात्रवृत्ति देकर अमेरिका में शिक्षा ग्रहण कराने की योजना बना रही थी। महाराज सायजी गायकवाड ने अम्बेडकर से छात्रवृत्ति के लिए आवेदन करने को कहा। बाबा साहेब ने आवेदन पत्र भेजा और अंततः उन्हें उन 4 छात्रों में चुन लिया गया। बाबा साहेब बड़ौदा गये और सरकार के उपशिक्षा मंत्री के सम्मुख 4 जून 1913 को एक इकरारनामे पर हस्ताक्षर किया। इस इकरारनामें में यह व्यवस्था थी कि वे मनोनीत विषयों का अध्ययन अमेरिका में करें और शिक्षा के बाद दस वर्ष की सेवा बड़ौदा रियासत में करें।[2]

महाराज बड़ौदा की छात्रवृत्ति प्राप्त कर बाबा साहेब 15 जून 1913 को एम0एस0 मार्डोना नाम जहाज से बंबई से अमेरिका के लिए प्रस्थान किए।[3] अमेरिका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय में अध्ययन आरम्भ किए और वहीं से एम0ए0 तथा पी–एच0डी0 की डिग्री हासिल की। शैक्षणिक जगत में बाबा साहेब की यह असाधारण उपलब्धि थी। कोलम्बिया विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों ने प्रीतिभोज देकर उनका हार्दिक अभिनन्दन किया। बाबा साहेब की इस उपलब्धि का समाचार जब बड़ौदा रियासत पहुँचा तो

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 26।
[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 28।
[3] रामलाल विवेक, डा0 अम्बेडकर जीवन और आदर्श, पृष्ठ सं0– 26।

महाराज के खुशी की सीमा नहीं रही। महाराज सायजीराव गायकवाड़ ने इस असाधारण सफलता के लिए डा0 अम्बेडकर को तार द्वारा बधाई संदेश भेजा।[1]

कोलम्बिया विश्वविद्यालय में अध्ययन पूर्ण कर डा0 अम्बेडकर विश्वविख्यात शिक्षा केन्द्र लंदन में शिक्षा प्राप्त करना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने बड़ौदा महाराज से अनुमति का निवेदन किया जिसे उदारचित सहृदय महाराज ने सहर्ष स्वीकार कर लिया और छात्रवृत्ति की अवधि एक वर्ष और बढ़ा दी। डा0 अम्बेडकर जून 1916 में न्यूयार्क से लंदन के लिए रवाना हुए और लंदन पहुँच कर ग्रेट इन में प्रवेश लेकर कानून का तथा लंदन स्कूल आफ इकोनोमिक्स एंड पोलिटकल साइंस में प्रवेश लेकर अर्थशास्त्र का अध्ययन आरम्भ किया। इसी बीच बड़ौदा के दीवान पद पर मनुभाई मेहता की नियुक्ति हुई। नए दीवान अस्पृश्य वर्ग के प्रति अनुदारवादी और रूढ़िवादी दृष्टिकोंण रखते थे। उन्होंने तत्काल पत्र लिख कर डा0 साहेब को सूचित किया कि छात्रवृत्ति की निर्धारित कालावधि समाप्त हो गई है, इसलिए आप तत्काल भारत लौट आइए। इस पत्र को पढ़कर बाबा साहेब को गहरा धक्का लगा, लेकिन विवश होकर अध्ययन को बीच में छोंड़कर अत्यन्त दुःखी मन से भारत लौटने का निर्णय करना पड़ा। 4 वर्ष के अन्दर अध्ययन पूर्ण करने की अनुमति लंदन विश्वविद्यालय ने उन्हें प्रदान कर दी।

भारत वापस आकर बड़ौदा रियासत के साथ किए गए इकरारनामें के अनुसार बड़ौदा रियासत में सेवा करने के लिए अपने बड़े भाई आनन्दराव के साथ 20 सितम्बर 1917 को बड़ौदा के लिए प्रस्थान किए और इसकी सूचना बड़ौदा महाराज को दी। बड़ौदा महाराज ने आदेश दिया कि डा0 अम्बेडकर को रेलवे स्टेशन से लाने तथा रुकने आदि की समुचित व्यवस्था की जाए। लेकिन एक अस्पृश्य को लेने रेलवे स्टेशन कोई नहीं गया।[2]

---

[1] डा0 भटनागर, राजेन्द्र मोहन, डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृष्ठ सं0– 37।
[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 28।

बड़ौदा नरेश के मन में अम्बेडकर को वित्तमंत्री बनाने की इच्छा थी लेकिन अनुभव न होने के कारण सेना सचिव के पद पर उनकी नियुक्ति हुई।[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर सम्पूर्ण बांडमय के खण्ड 18 में बड़ौदा रियासत की सेवा के सम्बन्ध में उल्लेखनीय है– " भारत लौट कर उन्होंने अपनी सेवायें उस व्यक्ति को अर्पित की जिसने उनकी मदद की थी और उन्हें बड़ौदा के एकाउन्टेन्ट जनरल के कार्यालय में प्रावेशनर (परिविद्यार्थी) के रूप में नियुक्त किया गया।[2]

बड़ौदा रियासत की सेवा के दौरान बाबा साहेब को अस्पृश्यता का कटु अनुभव हुआ जो रोंगटे खड़े कर देने वाला था। चपरासी तक फाइल या कागज दूर से डा0 अम्बेडकर के पास फेंकता था। कार्यालय में बिछी हुई दरी डा0 अम्बेडकर के आने पर बटोर ली जाती थी और बाद में पुनः फैलाया जाता था। अंत में स्थिति यहाँ तक आ गई कि शहर में हिन्दू या मुसलमान कोई भी उन्हें आश्रय देने को तैयार नहीं हुआ। डा0 अम्बेडकर ने अपनी व्य था महाराज सायजीराव से बतायी लेकिन शीघ्र मैसूर प्रस्थान कर रहे थे, इसलिए उन्होंने दीवान से मिलने को कहा। दीवान से डा0 अम्बेडकर ने सारी स्थिति बताई लेकिन दीवान ने कोई ध्यान नहीं दिया। अंत में असहाय स्थिति में निराश होकर नवम्बर 1917 में बाबा साहेब ने बड़ौदा रियासत की सेवा छोंड़कर बंबई वापस आ गए। महाराज गायकवाड़ निःसन्देह उदारवादी और सहृदय थे लेकिन उनके कर्मचारी उतने ही प्रतिक्रियावादी और रूढ़िवादी थे।

कोल्हापुर के साहू जी महाराज से सम्बन्ध

बाबा साहेब का कोल्हापुर के महाराज शाहू से घनिष्ठ सम्बन्ध था शाहू जी महाराज का जन्म 26 जुलाई 1874 को हुआ था। उनका जन्म कागल घाटगे उपनामधारी जमीदारों के कुल में हुआ था। उन्हें करवीर(कोल्हापुर) की छत्रपति वंश में गोद ले लिया था। कागल के जमीदार घराने में जन्में उदारमना शाहू जी का बचपन का

---

[1] वही, पृष्ठ सं0– 34।
[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर– सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड–18, पृष्ठ सं0– 11

नाम यशवंत राव था। उनके पिता आवसाहेब घाटगे एक लोकहितकारी, कुशल जगीरदार थे।

ताराबाई, जीजाबाई द्वारा स्थापित कोल्हापुर राजवंश का उत्तराधिकारी शाहू जी महाराज 2 अप्रैल 1894 को हुए। वे अत्यन्त उदारवादी शासक थे, जिन्होने अपने शासन की नीतियां गरीबो, शेषितो, दलितों के उत्थान में निर्धारित किया। शाहू जी महाराज ने 26 जुलाई 1902 को पिछड़ी जातियों के लिए अपने राज्य की सेवा में 50 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया। गरीबों, पिछड़े वर्ग के क्षात्रों में शिक्षा के प्रचार–प्रसार हेतु बड़ी संख्या में स्कूल, कालेजों की स्थापना करवाई तथा छात्रावास खोले। सामाजिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य करते हुए छत्रपति शाहू जी महाराज ने अपने राज्य में विद्यवा पुनर्विवाह कानून उचित रूप में लागू किया। प्राथमिक शिक्षा पर बल दिया तथा महात्मा ज्योतिबाफुले के बिचारों और आन्दोलन से प्रभित होकर उनके सत्यशोधक समाज के कार्यों को आगे बढ़ाया।

बाबा साहेब डॉ0 भीमराव अम्बेडकर 1914 में ही कोल्हापुर महाराज से सर्वप्रथम मुलाकाता की थी।[1] कोल्हापुर के महाराज साहू एक सुधारवादी एवं उदार शासक थे। अपनी रियासत में उन्होंने अस्पृश्य वर्ग के लिए अनेक प्रयास आरम्भ किया। उनके मन में गरीब तथा दलित वर्ग के लिए दर्द था। बाबा साहेब 1914 ई0 में ही कोल्हापुर के महाराज के संपर्क में आए थे।[2] लेकिन वास्तविक परिचय दत्तोवा पवार नामक व्यक्ति के सहयोग से साउथबरा कमेटी में गवाही देते समय हुई थी।[3] साहू जी महाराजने डा0 अम्बेडकर को एक मासिक समाचार पत्र निकालने को कहा और इसके लिए पूर्ण आर्थिक सहायता प्रदान की। साहू जी महाराज की सहायता से बाबा साहेब ने 31 जनवरी 1920 को 'मूकनायक' नामक समाचार पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया।

[1] डॉ0 राजेन्द्र मोहन भट्नागर, डॉ0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन पृ0स0 45
[2] डा0 राजेन्द्र मोहन भटनागर, डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृष्ठ सं0– 45
[3] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 40

उन्होंने नंदराम भटकर को इस पत्र का संपादक नियुक्त किया यद्यपि मख्य कर्ताधर्ता बाबा साहेब ही रहे।[1]

कोल्हापुर नरेश छत्रपति साहू जी महाराज अस्पृश्यों के दुःखों के उन्मूलन के लिए प्रयास कर रहे थे। उन्होंने 17 भई 1920 में नागपुर में अखिल भारतीय बहिष्कृत परिषद आयोजित की। इसमें सम्मिलित होने के लिए बाबा साहेब भी नागपुर गए। इसमें अछूतों की अनेक समस्याओं पर विचार हुआ। कोल्हापुर महाराज ने इसी परिषद में बोलते हुए कहा कि अम्बेडकर आपके नए नेता हैं।

बाबा साहेब के मन में अपनी ब्रिटेन में अधूरी पढ़ाई को पूर्ण करने की उत्कृष्ट इच्छा थी। इस बार उन्होंने कोल्हापुर महाराज से सहायता की याचना की और कुछ पैसा निजी तौर पर प्रबन्ध किया। छत्रपति साहू जी महाराज ने आर्थिक सहायता प्रदान करना सहर्ष स्वीकार कर लिया। डा0 अम्बेडकर जुलाई 1920 में पुनः लंदन के लिए रवाना हुए। लंदन में शिक्षा के दौरान बाबा साहेब ने भारत मंत्री गांटेग्यू सहित अनेक ब्रिटिश नेताओं से मुलाकात कर अस्पृश्य वर्ग की समस्या के प्रति ध्यान आकृष्ट कराया। भारत मंत्री मांटेग्यू के साथ हुई बातचीत का ब्योरा बाबा साहेब ने छत्रपति साहू जी महाराज को 3 फरवरी 1921 को पत्र लिख कर दिया कि मांटेग्यू भारत के नरम दल के लोगों की सूचना के आधार पर काम करते हैं तथापि मुझे विश्वास है कि अब वह ब्राह्मणेत्तर आन्दोलन के बारे में तिरस्कार पूर्ण वक्तव्य नहीं देंगे। सच तो यह है कि यहाँ ब्राह्मणेतर आन्दोलन जानने की कोई परवाह ही नही करता। अब यहाँ सुधार विधेयक बन रहा है, लेकिन इस महत्वपूर्ण समय मं ब्राह्मणेत्तर आन्दोलन का महत्व बताने वाला कोई ठोस संस्था यहा नहीं है।........ आपके मार्गदर्शन के अनुसार यहाँ कोई संस्था स्थापित करना संभव होगा या नहीं? इस सम्बन्ध में मैंने यहाँ के कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों से चर्चा की। उन्होंने सर्व सम्मति से मेरी इस कल्पना का स्वागत किया। तथापि उनके मतानुसार वेतन आदि कार्यवाहक के बिना इस प्रकार की संस्था टिक नहीं सकती।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 42

इसका मतलब यह है कि कम से कम 500 पौण्ड वार्षिक इस संस्था पर व्यय होगा। यह संस्था अस्पृश्य वर्ग के लिए कल्याणकारी होगी। लेकिन मेरा विश्वास है कि यह व्यय उनकी (बाबा साहेब की) शक्ति से बाहर होगा।.... यह सुनकर आपको प्रसन्नता होगी कि भारत मंत्री ने मुझे पुनः वार्ता के लिए बुलाया है...... उस प्रयास से अगर कुछ फल प्राप्त होगा तो मैं उसकी जानकारी आपको दूँगा।[1]

4 सितम्बर 1921 को डा0 अम्बेडकर ने छत्रपति साहू महाराज को पत्र लिखकर अपने अध्ययन के लिए 200 पौण्ड की राशि भेजने की बिनती की। महाराज का स्वास्थ ठीक होगा, ऐसी आशा बाबा साहेब ने पत्र में व्यक्त करते हुए अंत में लिखा– "हमें आपकी बहुत जरूरत है, क्योंकि हिन्दुस्तान में जो व्यापक आन्दोलन सामाजिक लोकतन्त्र की दिशा में प्रगति कर रहा है, उसके आधार स्तम्भ आप ही हैं।" यह पत्र प्राप्त होते ही महाराज ने उक्त राशि तत्काल डा0 अम्बेडकर को भेज दी जिससे उनका अध्ययन सुचारु रूप से चल सका।[2]

इस बीच छत्रपति साहू जी महाराज का स्वास्थ अधिक खराब हुआ और अंततः 6 मई 1922 को उनका देहान्त हो गया। इस दुःखद समाचार से देश का अस्पृश्य दलित वर्ग शोक में डूब गया। डा0 साहेब को इस दुःखद समाचार की जानकारी ब्रिटिश समाचार पत्रों से लंदन में हुई। इस समाचार से बाबा साहेब को गंभीर आघात लगा और 10 मई 1922 को नए महाराज को पत्र लिखकर अपनी संवेदना इस प्रकार व्यक्त की– "महाराज के निधन का समाचार अंग्रेजी समाचार पत्रों में पढ़ा और मुझे सदमा पहुँचा। इस दुःखद घटना से मुझे दोतरफा दुःख हुआ। उनके निधन से मैं अपने एक खास मित्र से वंचित हूँ। अस्पृश्य वर्ग तो अपना एक बड़ा हितैषी खो दिया है.......। मैं दुःख से व्याकुल होकर आपके और विधवा महारानी के दुःखद समय में तहेदिल से अपनी हमदर्दी व्यक्त कर रहा हूँ।[3]

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 46, 47।
[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडर– जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 48।
[3] वही, पृष्ठ सं0– 48।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बड़ौदा नरेश सायजीराव गायकवाड़ तथा कोल्हापुर के छत्रपति साहू जी महाराज के साथ बाबा साहेब का घनिष्ट मधुर सम्बन्ध था और उन्होंने बाबा साहेब की अविस्मरणीय सहायता भी की।

इसका मतलब यह अभिप्राय नहीं है कि बाबा साहेब राजा–महाराजाओं और उनकी सामन्ती व्यवस्था के समर्थक थे। वास्तव में वे सामन्ती व्यवस्था, जो शोषण, उत्पीड़न का पर्याय बनी हुई थी, के कट्टर विरोधी थे। सभी भारतीय रियासतों में जनता का शोषण और अस्पृश्य वर्ग के साथ बर्बर व्यवहार चरम पर था। यहाँ तक कि बड़ौदा और कोल्हापुर जैसे रियासतें भी इसका अपवाद नहीं थीं। जनता को किसी प्रकार के जनतांत्रिक अधिकार प्राप्त नहीं थे। स्वेच्छाचारी प्रशासन, करों का बोझ, धार्मिक उत्पीडन और गुलामी की दशा में प्रजा को जीवन व्यतीत करना पड़ता था।[1] इन रियासतों के अत्याचार के कतिपय समाचार पत्रों में भी प्रकाशित हुए। यथा– "3 अप्रैल 1932 को प्रताप नामक पत्र में बड़ौदा रियासत की एक घटना छपी– बड़ौदा राज्य के नवगाँव से समाचार मिला है कि जब से हरिजनों के स्कूल बन्द कर दिये गये हैं और हरिजनों के बच्चों को गाँव के सामान्य स्कूलों में दाखिला लेने की अनुमति दे दी गई है, गाँव वालों ने हरिजनों को निरन्तर सताना शुरू कर दिया है। बताया गया है कि हरिजन किसानों के भूसे के ढ़ेर के ढ़ेर जला दिए गए हैं। उनके कुओं में मिट्टी का तेल डाल दिया गया है और उनके घरों में आग लगाने की कोशिश की गई हैं जब एक हरिजन बच्चा स्कूल जा रहा था तो उसे रास्ते में मारा पीटा गया और खुले आम हरिजनों का बहिष्कार किया जा रहा है।"[2]

दूसरा उदाहरण जोधपुर रियासत का है 26 फरवरी 1928 को प्रताप नामक समाचार पत्र में यह घटना छपी– "जोधपुर रियासत में एक जगह है चंदयाल। यहाँ आपको अभी भी ऐसे लोग मिलेंगे जो यह सोंचते हैं कि हरिजनों को हलवा खाने तक का अधिकार नहीं है। यहाँ अनुसुचित जातियों में एक जाति है सरगारी। कुछ दिन पहले

---

[1] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृष्ठ सं0– 600।

[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, भाग–9, पृष्ठ सं0– 72, 73।

वहाँ दो–तीन लड़कियों की शादी के मौकेपर हलवा बनवाया गया था। इस काम के लिए ठाकुर साहेब के यहाँ से मैदा लाया गया। खाना खाने के वक्त बाराती खाना खाने आये, तभी चंदयाल के कुँवर साहेब ने सरगारों के लिए यह हुकुम कहलवाया कि वे हलवा नहीं खा सकते हैं। इस पर कुछ दरवारी चापलूसों ने बातचीत कर यह तय किया कि कुँवर साहेब को 200 रुपये नजर किए जाए तो हलवा खाने की इजाजत दे दी जायेगी। इस पर सरगारों लोग भड़क उठे और उन्होंने रुपया नजर करने से इनकार कर दिया।"[1]

तीसरा उदाहरण मालावार का है। 4 नवम्बर 1936 के बंबई समाचार पत्र में यह घटना छपी– "मालावार नें उत्तपलम में एझवा जाति का शिवराम नामक 17 वर्षीय युवक एक सवर्ण हिन्दू की दुकान से नमक खरीदने गया और उसने नमक के लिए 'उत्दू' कहा जो मलयालम भाषा का शब्द है। अस्पृश्य होने के नाते उसे 'पुलिचाहन' शब्द का उच्चारण करना चाहिए था। इस पर ऊँची जाति के दुकानदार को बड़ा क्रोध आया और कहा जाता है कि उसने शिवरामन को इतना मारा कि वह परलोक सिधार गया।[2]

इसी प्रकार लगभग सभी भारतीय रियासतों में अस्पृश्यों के साथ होने वाले जुल्मों की घटना देश के सभी प्रमुख समाचार पत्रों में लगातार छपती रहीं। 9 मई 1931 को टाइम्स ऑफ इण्डिया में बड़ौदा रियासत के पदरास तालुका की घटना, 24 जून 1945 को लाहौर के सिविल एंड मिलिट्री गजट में ग्वालियर रियासत के एक गाँव की घटना आदि प्रमुखता से छपीं।

ये घटनाएं प्रमाण है कि भारतीय रियासतों में सामन्ती उत्पीड़न और अस्पृश्यों के साथ अमानुषिक वर्ताव व्यापक पैमाने पर चल रहा था। बाबा साहेब ने स्वयं बड़ौदा रियासत की सेवा के दौरान अस्पृश्यता का बड़ा कटु अनुभव किया था। बाबा साहेब ने आजीवन अस्पृश्यता के विरुद्ध तथा उनके मानवीय अधिकारों के लिए लिए

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, भाग–9, पृष्ठ सं0– 87, 88।
[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, भाग–9, पृष्ठ सं0– 91।

संघर्ष किया। उन्होंने भारतीय रियासतों में अस्पृश्यों के साथ हो रहे आमनुषिक व्यवहार को समाप्त करने तथा जनता के अधिकारों के लिए संघर्ष किया। बाबा साहेब ने 1928 में महाराष्ट्र में खोती प्रथा के उन्मूलन के लिए महान संघर्ष किया और जमीदारों के उत्पीड़न एवं शोषण के विरुद्ध काश्तकारों के अधिकारों की मांग की।

गोल मेज सम्मेलन में रियासतों के सम्बन्ध में बाबा साहेब का मत

बाबा साहेब ने भारतीय रियासतों के सम्बन्ध में अपना मत विस्तार से गोल मेज सम्मेलन (1930 प्रथम) में व्यक्त किया। उन्होंने 16 सितम्बर 1931 को संघीय ढाँचा समिति की बैठक में भाग लेते हुए अपना वक्तव्य इस प्रकार दिया– क्या हम भारत के भावी संघ मे भारत के हर राज्य को एक स्ट्रेट इकाई के रूप में मान्यता देंगे? या हम अपने संघ में उन्हीं इकाईयों को शामिल करेंगे जिनमें न्यूनतम सामर्थ्य होगी।..... अध्यक्ष महोदय आपकी अनुमति से मैं यहाँ एक संक्षिप्त अंश पढ़ रहा हूँ, जिसमें मौजूदा देशी रियासतों का वर्णन किया गया है...... कुल 454 राज्य ऐसे हैं जिनका क्षेत्रफल 1000 वर्ग मील से कम है, 452 राज्यों की आवादी एक लाख से कम है और 374 राज्यों का राजस्व एक लाख से कम है। ब्रिटिश भारत का क्षेत्रफल 10,94,300 वर्ग मील है, आवादी लगभग 23.2 करोड़ है। इसमें 273 जिले हैं। इस प्रकार ब्रिटिश भारत में एक जिले का औसत क्षेत्रफल 4000 वर्ग मील और यहाँ की औसत आवादी लगभग 8 लाख है। अगर यह सुझाव दिया गया होता कि ब्रिटिश भारत के हर जिले को एक राज्य बना दिया जाए, तब विचार करने पर यह कितना भौंड़ा लगेगा? हमारे 562 राज्यों में से सिर्फ 30 ऐसे राज्य हैं जिनका क्षेत्रफल, जिनकी आवादी और राजस्व तथा साधन ब्रिटिश भारत के एक औसत जिले के बराबर हैं। कुछ राज्य तो इतने छोटे हैं कि उन्हें राज्य कहने में संकोच होता है। लगभग 15 ऐसे राज्य हैं जिनका क्षेत्रफल मुश्किल से एक वर्ग मील भी नहीं है।

डा0 अम्बेडकर ने महाराज बीकानेर का उत्तर देते हुए यह भी कहा कि संघीय संरचना समिति आँख बंद कर राज्यों को वह सब कुछ नहीं दे सकती, जो वे मांगते हैं....... । मैं समझता हूँ कि भारत के राजाओं को इस तरह से खुश करने से कोई लाभ नहीं होगा वह भी केवल इसलिए कि वह अपने राज्य को एक अलग इकाई मानने से अपने को राजा–महाराजा कहे जाने पर खुश होते हैं, चाहे इससे उनकी प्रजा को काई लाभ हो या न हा।

भारतीय राज्यों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि "वे भारतीय संघ मे तभी शामिल होंगे, जब उन्हें संघीय विधान मंडल में अपने प्रतिनिधियों को नामजद करने की छूट दी जाएगी। भारतीय राज्यों के राजा–महाराजाओं के प्रति अत्यन्त आदर व्यक्त करते हुए मैं यह कहना चाहता हूँ कि मैं उनकी इस बात से सहमत नहीं हूँ और मैं इस बात पर जोर दूँगा कि उनके राज्यों का प्रतिनिधित्व चुनाव के द्वारा होगा।.... मेरी समझ में यह नहीं आता कि राजा महाराजा चुनाव के सिद्धान्त का विरोध क्यों करते हैं..... हम तो सिर्फ इतना कह रहे हैं कृपया हमें अपने राज्यों को चुनाव क्षेत्र में बांटने की अनुमति दीजिए और आप अपनी जनता को अपने प्रतिनिधि चुनने दीजिए।"

बाबा साहेब ने आगे कहा– हम सभी जानते हैं कि राजा–महाराजा अपने–अपने राज्यों में प्रशासन जिस प्रणाली के आधार पर चलाते हैं, उसे सर्वोच्चता की प्रणाली कहा जाता है। मेरा ख्याल है कि सर्वोच्चता के सिद्धान्त के पक्षों में से एक यह भी है कि सर्वोच्च सत्ता को महत्वपूर्ण नियुक्तियों के मामलें मे राजा – महाराजाओं को सलाह देने का अधिकार होता है।[1]

बाबा साहेब ने भारतीय रियासतों में स्थापित हो रहे प्रजा मंडल और उनके आन्दोलनों का समर्थन किया। बीकानेर, जम्मू काश्मीर (1931–32 में विद्रोह किसानों के), अलवर (1932), बिजार, रामगढ़, गोविन्दगढ़ आदि रियासतों में विद्रोह हुए जिनके प्रति बाबा साहेब का समर्थन था। बाबा साहेब सामन्ती, पूँजीवादी व्यवस्था के प्रबल विरोधी

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, भाग–9, पृष्ठ सं0– 129–135।

थे। वे समाजवादी विचारधारा में विश्वारा करते थे लेकिन वे राजकीय समाजवाद के समर्थक थे। संविधान सभा की अल्पसंख्यकों और दलित वर्गों से संबंधित सलाहकार समिति के सामने बाबा साहेब ने मार्च 1947 में एक ज्ञापन प्रस्तुत किया जिसमें कहा– इस योजनाके दो पहलू हैं एक यह है कि इसमें आर्थिक जीवन के महत्वपूर्ण क्षेत्रों में राजकीय समाजवाद का सुझाव दिया गया है। इसकी दूसरी विशेषता है कि इसमें राजकीय समाजवाद की स्थापना का काम विधान मंडल की इच्छा पर नहीं छोंडा गया है। अतः हमारी समस्या है कि हमारे यहाँ बिना तानाशाही के राजकीय समाजवाद हों। हमारा समाजवाद संसदीय प्रणाली के साथ हो।[1]

बाबा साहेब ने यह भी महत्वपूर्ण सुझाव दिया कि कार्य क्षेत्र में जमींदारों, तालुकेदारों, काश्तकारों आदि को मुआवजा देकर राज्य भूमि का अधिग्रहण करें और उस पर सामूहिक खेती करायें।[2]

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि भारतीय रियासतों में से कुछ के साथ बाबा साहेब का घनिष्ठ सम्बन्ध था। कोल्हापुर के छत्रपति शाहू जी महाराज जैसे शासकों के साथ उनका न केवल मैत्री पूर्ण सम्बन्ध था अपितु वे उनको अपना मार्ग दर्शक भी मानते थे। इसकें बावजूद बाबा साहेब सामन्ती व्यवस्था के पक्षधर नही रहे और उन्होने आजीवन सामन्ती व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष किया। स्वाधिनता के बाद भी उन्होने जमीदारी प्रथा के उन्मूलन का प्रयास किया क्योंकि उनका मानना था कि जमीदार, जागीरदार, सामन्त, शाहूकार, गरीबों, शोषितों और पिछड़ो के शोषक हैं।

---

[1] फ्रेमिंग ऑफ इंडियन कांस्टीच्यूशन, खण्ड–2, पृष्ठ सं0– 90, 99।

[2] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0– 106।

अध्याय तेरह

अध्याय– तेरह

"बाबा साहेब और भारतीय स्वाधीनता"

मानव सभ्यता के ऊषाकाल से लेकर अद्यावधि तक स्वतन्त्रता को उच्चतम् गुण के रूप में निर्विवाद रूप से स्वीकार किया जाता रहा है लेकिन स्वतन्त्रता के स्वरूप तथा सीमा को लेकर विवाद भी बना रहा है। ईशा के हजारों वर्ष पूर्व भगवान बुद्ध ने स्वतन्त्रता समानता और भ्रातृत्व का सन्देश मानवता को दिया, बाद में जॉन रूसो ने अपनी विश्व प्रसिद्ध पुस्तक सोशल कांट्रेक्ट में मानवीय स्वतन्त्रता के प्रश्न को मुखरित किया– "मानव स्वतन्त्र पैदा हुआ लेकिन वह पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा हुआ है" रूसो की यह उक्ति जनमानस को झकझोरती रही, बाद में फ्रांसीसी क्रांति (1789) ने स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व को विश्व में प्रसारित किया। विश्व के हर समय के धर्म गुरुओं, सन्तों, महात्माओं ने इन उदात्त् मानवीय मूल्यों का यशोगान किया है। भारत भूमि में भी बुद्ध, महावीर, नानक, चैतन्य, कबीर, दादू, रैदास, राजा राम मोहनराय, हेनरी विवियन डेरोजियो, स्वामी विवेकान्द, महात्मा ज्योविता फूले, शाहू जी महाराज, महात्मा गाँधी तथा डा0 बीर0 आर0 अम्बेडकर आदि ने इन्हीं शाश्वत मूल्यों की स्थापना में अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित दिया। इन महापुरुषों के सर्वांगीण व्यक्तित्व के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इन शाश्वत मूल्यों की स्थापना हेतु संघर्ष करने एवं सफलता प्राप्त करने वाले महापुरुषों में बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर उच्चतम स्थान के भागीदार हैं। डा0 अम्बेडकर ने अपना सम्पूर्ण जीवन इन्हीं मूल्यों की स्थापना में समर्पित कर दिया तथा हजारों–हजारों वर्षों से असमानता, शोषण, परतन्त्रता तथा घृणास्पद

जीवन व्यतीत करने के लिए अभिशप्त करोड़ों पद्दलितों को परतन्त्रता से मुक्ति दिलाकर आत्म सम्मान का जीवन व्यतीत करने का सुअवसर प्रदान किया।

परतन्त्रता अन्यायकारी, विभेदकारी एवं विनाशकारी होती है। परतन्त्रता केवल राजनैतिक ही नहीं अपितु सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक भी होती है। प्रत्येक प्रकार के परतन्त्रता का विरोध ही वास्तविक स्वतन्त्रता है। मनुष्य के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास हेतु परिस्थितियों का निर्माण कर अवसर प्रदान कराना ही सच्ची स्वतन्त्रता है। मानव ने सदैव अन्यायकारी विभेदकारी व्यवस्था का विरोध कर स्तवन्त्रता के लिए संघर्ष किया है और जब–जब मानवीय प्रयास सफल हुआ है उसे स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है। ऐसा ही एक संघर्ष भारत में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध 19वीं सदी के उत्तरार्ध से आरम्भ होता है। बड़ी संख्या में विचारक तथा इतिहासकारों ने 1857ई0 की क्रांति को देश का प्रथम स्वाधीनता संग्राम कहते हैं। यह स्वाधीनता संग्राम राष्ट्रवाद के उदय के साथ बढ़ता गया और दिसम्बर 1885 में सेवानिवृत्त आई0सी0एस0 अंग्रेज अधिकारी ए0ओ0 ह्यूम द्वारा बम्बई में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ तीव्र से तीव्रतर होता गयां कांग्रेस का आरम्भिक इतिहास उदारवादियों का रहा है, जो बंग भंग 1905 तक चला। इस कालावधि में सभी उदारवादी नेता यथा– नौरोजी, तैयवजी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, गोपाल कृष्ण गोखले आदि ने ब्रिटिश सम्राज्य की जय–जयकार की ओर ब्रिटिश साम्राज्ञी के प्रशंसा के गीत गाये। आनन्द मोहन बोस ने कांग्रेस के अध्यक्ष के रूप में 1899 में यह घोषणा की कि "शिक्षित वर्ग इंग्लैण्ड का शत्रु नहीं अपितु सम्मुख बड़े कार्य में उसका प्राकृतिक और आवश्यक सहयोगी है।"[1] इसके पूर्व 1887 में इसी भाव को प्रकट करते हुए विपिन चन्द्र पाल ने कहा था– "मैं अंग्रेजों का राजभक्त हूँ, क्योंकि मेरे लिए अंग्रेजी साम्राज्य के प्रति राजभक्ति वास्तव में अपने देश और उसके वासियों के प्रति राजभक्ति

---

[1] प्रो0 बी0एल0 ग्रोवर, वही. पृ0सं0– 414

दोनो अभिन्न हैं।........ मैं अंग्रेजों के प्रति राजभक्त हूँ, क्योंकि मैं स्वशासन को प्यार करता हूँ।[1]

कांग्रेस में उदारवाद का अंत 1905 में बंग–भंग आन्दोलन के साथ हो गया और 1905 से 1916 तक का कालखंड गरम दल के नाम से जाना जाता है! गरम दल के लाल, बाल, पाल तथा अरविन्दों आदि ने ब्रिटिश सरकार से नागरिक अधिकारों की मांग, संवैधानिक सुधारों की मांग, शिक्षा का विकास आदि की मांग की और जुझारू तेवर दिखया। उनकी राजभक्ति में आस्था नहीं थी। लाला लाजपत राय ने कहा– "हम लोगों ने राजनिवास (Government House) से मुख मोड़ कर निर्धनों की झोपड़ियों की ओर कर लिया है।[2] ऐतिहासिक तथ्य स्पष्ट करते हैं कि कांग्रेस ने इस कालावधि में जन समस्याओं के प्रति विशेष ध्यान नहीं दिया। डोनियल आर्गोविन इनका मूल्यांकन इस प्रकार किया– उदारवादी तथा उग्रवादी दोनो ही दल मध्यम वर्ग से संबंधित थे और उन्हीं की समस्याओं को उठा रहे थे।

कांगेस का 1916 ई0 का लखनऊ अधिवेशन कई दृष्टिकोण से ऐतिहासिक रहा। श्री तिलक के प्रयास से कांग्रेस और मुस्लिम लीग में समझौता हुआ तथा मिसेज एनी बेसेन्ट के प्रयास से कांग्रेस के 1907 ई0 में सूरत अधिवेशन में विभाजित नरम और गरम दोना गुट एक हुए। गाँधी जी पहली बार एक सामान्य सदस्य की हैसियत से इस लखनऊ अधिवेशन में सम्मिलित हुए थे। इसी अधिवेशन में बिहार के लोकप्रिय नेता राजकुमार शुक्ला ने गांधी जी से मुलाकात कर चम्पारन आने का निमंत्रण दिया जिसे स्वीकार कर 1917 में गांधी जी अपने चुनिंदा सहयोगियों के साथ चम्पारन जाकर नील उत्पादक किसानों के शोषण को समाप्त करने के लिए सत्याग्रह किया। यह भारत में उनका पहला सत्याग्रह था। कुछ ही वर्षों में गाँधी जी ने अपने व्यक्तित्व को इतना बढ़ा लिया कि वे कांग्रेस पर छा गए और गाँधी युग आरम्भ हुआ, जिसे बाबा साहेब ने तार्किक आधार पर तमोयुग की संज्ञा दी है।

---

[1] प्रो0 बी0एल0ग्रोवर, वही, पृ0सं0– 416
[2] प्रो0 बी0एल0 ग्रोवर, वही, पृ0सं0– 424

गांधी जी ने 1918 में गुजरात में खेड़ा सत्याग्रह तथा अहमदाबाद मिल मजदूर आन्दोलन किया। उन्होंने रौलट एक्ट (काला कानून) के विरोध में मुम्बई में फरवरी 1919 में सत्याग्रह सभा स्थापित किया। खिलाफत के प्रश्न पर हिन्दू–मुस्लिम एकता स्थापित करने के उद्देश्य से असहयोग आन्दोलन आरम्भ किया जिसे कांग्रेस ने 1920 में नागपुर अधिवेशन में अपनी स्वीकृत दे दी। खिलाफत के प्रश्न पर असहयोग आन्दोलन आरम्भ करने के निर्णय के औचित्य पर केई नेताओं ने प्रश्न चिन्ह खड़ा किया। 31 अगस्त 1920 से असहयोग आन्दोलन आरम्भ हुआ। बाबा साहेब ने अनेक कारणों से इस आन्दोलन की निन्दा की थी। खिलाफत के नेताओं ने अफगानिस्तान के अमीर को भारत में आक्रमण करने का निमंत्रण दिया, लेकिन गाँधी जी ने इसका विरोध नहीं किया। बाबा साहेब ने इसके विषय में कहा– "यह बताने की आवश्यकता नही है कि भारत पर आक्रमण कराने की योजना सबसे खतरनाक योजना थी और प्रत्येक समझदार व्यक्ति ऐसे पागलपन की योजना से अपने को अलग कर लेगा। गाँधी जी ने इस योजना में कौन सी भूमिका निभाई थी, यह पता लगाना संभव नहीं है, लेकिन जतना जरूर है कि उन्होंने अपने को इस योजना से अलग नहीं किया....... उन्होंने अमीर को न केवल यह सलाह दी थी कि वे ब्रिटिश सरकार के साथ कोई समझौता न करें बल्कि यह घोषणा की थी कि यदि वे ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध युद्ध छेंड़ दें तो मैं उनकी (अफगानिस्तान के अमीर की) निश्चित रूप से सहायता करूँगा।.... क्या हिन्दू–मुस्लिम एकता के लिए कोई समझदार व्यक्ति इस सीमा तक जा सकता है।[1]

बाबा साहेब ने गाँधी जी की इस बात के लिए भी आलोचना की जब मोपलाओं ने 1920 में विद्रोह के दौरान बड़ी संख्या में बर्बरता पूर्व हिन्दुओं की हत्या की तब भी गाँधी जी चुप रहे। गाँधी जी ने हिन्दुओं से यह कहा था– "मेरा विश्वास हैकि एक सम्प्रदाय के रूप में हिन्दुओं ने मोपला लोगों का पागलपन धीरज के साथ बर्दास्त

[1] डा0 बी0आर0 अम्बेडकर, थॉट ऑन पाकिस्तान, पृ0सं0– 157–158

किया है और सुसंस्कृत मुसलमानों को मोपला लोगों के द्वारा पैगम्बर के उपदेश का गलत इस्तेमाल करने के लिए हार्दिक खेद है।[1]

असहयोग आन्दोलन गाँधी जी ने 5 फरवरी 1922 के चौरी चौरा काण्ड के कारण 11 फरवरी 1922 के बारदोली प्रस्ताव द्वारा वापस ले लिया गया और इसी के साथ स्थापित हुई तथा कथित हिन्दू–मुस्लिम एकता भंग हो गई और देश में पुनः भीषण साम्प्रदायिक दंगों का दौर आरम्भ हो गया।

असहयोग आन्दोलन के बाद कांग्रेस ने 1930 में व्यापक स्तर पर सविनय अवज्ञा आन्दोलन पूर्ण स्वराज की प्राप्ति के लिए आरम्भ किया। पूर्ण स्वराज्य का प्रस्ताव कांग्रेस ने 1929 के ऐतिहासिक रावी के तट पर सम्पन्न हुए लाहौर अधिवेशन में जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में पास किया था। पूर्ण स्वराज्य के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए गाँधी जी को आन्दोलन का पूर्ण दायित्व सौंप दिया गया था। कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने 26 जनवरी 1930 को पूर्ण स्वाधीनता दिवस सारे देश में मनाने का निर्णय लिया। आदेश दिया गया कि उस दिन जगह–जगह लोक इकठ्ठा होकर कांग्रेस का झंडा फहराएं और स्वाधीनता का प्रतिज्ञा पत्र सामूहिक रूप से पढ़ें।[2]

गाँधी जी ने एक विवादस्पद बयान 9 जनवरी 1930 को न्यूयार्क वर्ल्ड में दिया कि "स्वाधीनता के प्रस्ताव से किसी को डरने की जरूरत नहीं है।[3] इसके बाद 30 जनवरी 1930 को अपने पत्र यांग इण्डिया में उन्होंने 11 सूत्री प्रस्ताव पेश किया और कहा कि अगर सरकार उन्हें मांग लेती है तो सविनय अवज्ञा आन्दोलन नहीं किया जायेगा। ब्रिटिश सरकार द्वारा इन मांगों को अस्वीकार कर देने के बाद गाँधी जी ने 12 मार्च 1930 को दाण्डी मार्च द्वारा आन्दोलन को आरम्भ किया। इसी के साथ सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ हुआ, लेकिन 5 अप्रैल 1931 को गाँधी–इर्विंग पैक्ट पर हस्ताक्षर के बाद आन्दोलन को वापस ले लिया गया। गाँधी जी द्वितीय गोल मेज सम्मेलन में भाग

---

[1] डा0 बी0आर0 अम्बेडकर, वही, पृ0सं0– 161
[2] अयोध्या सिह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृ0सं0– 574
[3] रजनीपाम दत्त, इण्डिया टुडे, पृ0सं0– 362

लेने के लिए लन्दन 1931 में गए लेकिन सम्मेलन असफल रहा और गाँधी जी स्वदेश लौट कर पुनः आन्दोलन आरम्भ किया, लेकिन कांग्रेस ने 1933 में आन्दोलन की असफलता के कारण स्थगित कर दिया और 1934 में औपचारिक रूप से वापस ले लिया।

ब्रिटिश सरकार ने 1935 में भारत शासन अधिनियम पारित किया। इस अधिनियम के लिए निम्नलिखित मशविदों की सहायता ली गई–

1. साइमन कमीशन की रिपोर्ट, 2. सर्वदलीय कार्फेंस रिपोर्ट, 3. तीनों गोलमेज सम्मेलनों में हुए वाद विवाद, 4. श्वेत पत्र, 5. संयुक्त प्रवर समिति रिपोर्ट, 6. लेथिया रिपोर्ट। यह अधिनियम ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत में पेश किये गए सभी संवैधानिक सुधारों से अधिक विस्तृत था। इसमे कतिपय शर्तो के साथ एक संघीय ढांचे का निर्माण और प्रान्तीय स्तर पर पूर्ण स्वायत्ता की स्थापना का प्रावधान था। संघीय न्यायालय की स्थापना भी की गई। इस अधिनियम को अगस्त 1935 में ब्रिटिश सम्राट की स्वीकृति मिल गई। ब्रिटिश सरकार ने घोषणा की कि संघ को क्रियान्वित न करके प्रान्तीय स्वायत्ता को 1 अप्रैल 1937 से लागू कर दिया जाएगा।

इस अधिनियम की कांग्रेस तथा अन्य दलों ने आलोचना की लेकिन बाबा साहेब ने इसका समर्थन किया। बाबा साहेब को यह पूर्ण विश्वास था कि अब तक किये गये सभी प्रयत्नों, प्रयासों का लाभ भारत के अस्पृश्य समाज को प्राप्त होने वाला है। इसलिए उन्होंने इस संविधान को क्रियान्वित करने में ब्रिटिश सरकार का सहयोग करने का फैसला किया। आश्चर्य की बात है कि कांग्रेस सहित मुस्लिम लीग आदि दलों ने इस अधिनियम की आलोचना के बावजूद होने वाले चुनाव में भाग लेने का फैसला किया। यह उनका सैद्धान्तिक अन्तर्विरोध है।

भारत के सभी दलों ने चुनाव की तैयारी आरम्भ कर दी। बाव साहेब ने भी अपने सहयोगियों से विचार–विमर्श कर अगस्त 1936 में स्वतन्त्र मजदूर दल (Independent Labour Party) की स्थापना की स्थापना की और उनकी पार्टी को

मुम्बई विधान सभा में उल्लेखनीय सफलता प्राप्त हुई। कांग्रेस पार्टी को भारत के कुल 7 प्रान्तों में बहुमत प्राप्त हुआ, जिसमें मुम्बई भी सम्मिलित थी। कांग्रेस सरकारों ने अपना कार्य आरम्भ किया लेकिन द्वितीय विश्व युद्ध 1 सितम्बर 1939 को आरम्भ होते ही भारतीय राजनीति में भी भूचाल आ गया। कांग्रेस कार्य समिति ने 14 सितम्बर 1939 को वर्धा बैठक में विश्व युद्ध सम्बन्धी अपनी नीति स्पष्ट की– "ब्रिटिश शासकों ने भारतीय जनता की राय लिए बिना ही भारत को युद्धरत राष्ट्र घोषित किया है, अतः भारत युद्ध के संचालन में ब्रिटेन का साथ नहीं दे सकता। इसमें जोर देकर कहा गया था कि भारत ऐसे युद्ध में शामिल नही हो सकता जो कहने के लिए तो जनतांत्रिक स्वतन्त्रता के लिए लड़ा जा रहा है लेकिन उसी स्वतन्त्रता से भारतीयों को वंचित किया जा रहा है।"

बाबा साहेब ने स्वतन्त्र मजदूर दल की ओर से एक पत्रक निकाल कर युद्ध विषयक अपनी नीति स्पष्ट कीं उसमे कहा गया था कि पोलैण्ड के पक्ष में विशेष न्याय है, ऐसी बात नहीं है क्योंकि पोलैण्ड ने भी लोगों के साथ अत्याचार किया है। पोलैण्ड इस युद्ध की एक घटना जितनी ही है, लेकिन हमारे साथ जो सहमत नहीं होंगे, उन पर अपना मत हम लाद ही देंगे, जर्मनी का यह दावा सारे विश्व में व्याप्त एक बड़ी समस्या है।[1]" अंग्रेजों की कठिनाई हमारा मौका है, यह मानने वाले भारतीयों का मत बाबा साहेब को मान्य नहीं था। उन्होंने यह मत व्यक्त किया कि जिस कारण से भारतीय लोग पुनः नई गुलामी में पड़ जायेंगे, उस तरह के मार्ग में वे न जाए।

ब्रिटिश सरकार की नीतियों से क्षुब्ध होकर कांग्रेस ने 23 अक्टूबर 1939 को अपनी कार्यकारिणी की बैठक में सभी कांग्रेसी प्रान्तीय सरकारों को त्याग पत्र देने का आदेश दिया जिसके अनुपालन में अनुशासित सिपाही की भांति कांग्रेस सरकारां ने 25 अक्टूबर से 15 नवम्बर 1939 के मध्य त्याग पत्र दे दिया। बम्बई विधान सभा में कांग्रेस ने युद्ध विषयक प्रस्ताव पेश किया, जिस पर चर्चा में भाग लेते हुए बाबा साहेब ने अपनी ओर असपृश्य समाज की पूरी स्थिति स्पष्ट की।

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 309

1940–1941 के वर्ष बेहद उथल–पुथल पूर्ण रहे। कांग्रेस ने अगस्त प्रस्ताव के अस्वीकार के बाद गाँधी के नेतृत्व में व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ किया। इसी वातावरण में बाबा साहेब ने मई 1941 में मुम्बई में गवर्नर रोजर लम्ले से मुलाकात की और सेना भर्ती के मुद्दे पर विस्तार से चर्चा की। ब्रिटिश सरकार ने सेना में बड़ी संख्या में अस्पृश्यों को भर्ती करने तथा महार पलटन के निर्माण करने का वचन दिया। बाबा साहेब ने अस्पृश्य समुदाय का आह्वान किया कि अपने देश की सुरक्षा ओर हित के लिए मौके का लाभ उठाकर बड़ी संख्या में ब्रिटिश सेना में प्रवेश करें।[1]

भारतीय संवैधानिक समस्या का हल प्रस्तुत करने तथा युद्ध में भारतीयों का अधिकाधिक सहयोग प्राप्त करने के लिए मार्च 1942 में क्रिप्स मिशन भारत आया, लेकिन उसका प्रस्ताव किसी भी भारतीय दल को संतुष्ट नहीं कर सका। बाबा साहेब ने भी क्रिप्स प्रस्ताव की कटु आलोचना की। उन्होंने इसे अस्पृश्य समाज के लिए क्रूर मजाक बताया। इस बीच जुलाई 1942 में वाइसराय की कार्यकारिणी का विस्तार किया गया, जिसमें बाबा साहेब श्रम विभाग के सदस्य (मंत्री) बनाए गए। दलित वर्ग परिषद ने 18–19 जुलाई 1942 को नागपुर में एक विशाल सभा में डा0 अम्बेडकर का अभिनन्दन किया। इस सम्मेलन में बाबा साहेब ने अपने भाषण में द्वितीय विश्व युद्ध में ब्रिटेन का बिना शर्त समर्थन देने का आह्वान किया। बाबा साहेब ने कहा– "यह युद्ध तानाशाही ओर लोकतन्त्र के बीच लड़ा जा रहा है। यह तानाशाही किसी भी नैतिक नींव पर आधारित नहीं है। नाजीवाद ने मानवमात्र के भविष्य के लिए खतरा पैदा किया है।........

इस बीच बदलते घटना क्रम में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने 8 अगस्त 1942 को मुम्बई के ग्वालिया टैंक मैदान में अपनी कार्यकारिणी की बैठक में भारत छोंड़ो का प्रस्ताव पास किया। गाँधी जी ने करो या मरो का नारा दिया। इस प्रस्ताव के प्रथम भाग की मुख्य बात यह थी....... भारत की भलाई और संयुक्त राष्ट्रों के पक्ष की सफलता दोनो के लिए भारत में ब्रिटिश हुकूमत को फौरन खत्म करना निहायत जरूरी है।............ भारत

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 322

की स्वतन्त्रता की घोषणा के बाद एक अस्थायी और मित्र राष्ट्रों के बीच भावी संबंध इन सब स्वतन्त्र देशों के प्रतिनिधियों द्वारा तय किये जायेंगे जो परस्पर सुविधा और आक्रमण को रोकने के सम्मिलित काम में अपने सहयोग के सम्बन्ध में आपस में राय–मशविरा के लिए इकठ्ठा होगे।[1]

अगस्त प्रस्ताव का द्वितीय भाग इस प्रकार था– "अतः कमेटी भारत के स्वतन्त्रता और स्वाधीनता के अविच्छेद अधिकार की रक्षा के लिए व्यापकतम संभव पैमाने पर अहिंसक जन संघर्ष के आरम्भ करने का फैसला करती है। ताकि देश उस अहिसंक बल का प्रयोग कर सके जो उसने शांतिपूर्ण संघर्ष के पिछले 22 वर्षों में संग्रह किया है। यह संघर्ष अवश्य गाँधी जी के नेतृत्व में चलेगा। कमेटी उनसे नेतृत्व करने तथा जो भी कदम अपनाए जायेंगे, उनमें राष्ट्र का पथ प्रदर्शन करने का अनुरोध करती है।[2]

8 अगस्त को भारत छोड़ो प्रस्ताव पास किया गया और 9 अगस्त को रात्रि (प्रातः होने से पूर्व) में ही कांग्रेस वर्किंग कमेटी के सारे सदस्य तथा अनेक नेता गिरफ्तार कर लिए गए। कांग्रेस गैर कानूनी घोषित कर दी गईं। गाँधी जी और सरोजनी नाइडू पूना के आगा खाँ पैलेस में तथा राजेन्द्र प्रसाद को छोंडकर वर्किंग कमेटी के अन्य सदस्य अहमद नगर के दुर्ग में नजरबन्द कर दिए गए। राजेन्द्र बाबू बम्बई नहीं गए थे, इसलिए वे पटना में ही गिरफ्तार कर नजरबन्द कर दिए गए।[3] इस गिरफ्तारी के विरोध में देश में स्वतः स्फूट तीव्र जनाक्रोश फूट पड़ा और जनता ने जिस रूप में चाहा अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की ब्रिटिश सरकार ने कठोर दमन चक्र चलाया।

गाँधी जी सहित वर्किंग कमेटी के सदस्यों की रिहाई के लिए वाइसराय की कार्यकारिणी के सदस्यों पर इस्तीफे का दबाव पड़ रहा था। माधोराव अणे, होमी मोदी ओर नृपेन्द्र नाथ सरकार ने त्याग पत्र दे दिया लेकिन डा0 अम्बेडकर दबाव के सामने झुकने वाले महापुरुष नहीं थे। सरकारी दमनचक्र सफल रहा और 1943 के अंत तक

---

[1] अबुल कलाम आजाद, इण्डिया वीन्स फ्रीडम, पृ0सं0– 238–239

[2] अबुल कलाम आजाद, वही, पृ0सं0– 241–432

[3] अयोध्या सिंह, वही, पृ0सं0– 716

आन्दोलन मंद पड़ गया और 6 मई 1944 को रिहा होते ही गाँधी जी ने आन्दोलन को वापस ले लिया।

भारत छोड़ो आन्दोलन की अनेक नेताओं और दलों ने आलोचना की थी। बाबा साहेब ने भी इसकी निन्दा की। स्वयं कांग्रेस के उच्च श्रेंणी के नेता इसके विरोधी थे। अनेक बयान जारी करके हिंसा के प्रयोग की निन्दा की गई। स्वयं गाँधी जी ने गृह विभाग के पास लिखे अपने पत्र में 13 जुलाई 1943 को लिखा कि कांग्रेस ने कोई भी आन्दोलन शुरू नहीं किया। इसी प्रकार जवाहर लाल नेहरू, बल्लभ भाई पटेल और गोविन्द बल्लभ पंत ने कांग्रेस की तरफ से एक संयुक्त वक्तव्य 21 दिसम्बर 1945 को देकर कहा– "कोई भी आन्दोलन आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी या गाँधी जी द्वारा आरम्भ नहीं किया गया था।[1] यदि कांग्रेसी नेताओं के ये शब्द सही थे, तो प्रश्न होता है कि इतना बड़ा आन्दोलन कैसे हो गया? गाँधी जी ने 23 दिसम्बर 1942 को वाइसराय को लिखा था, लगता है कि कांग्रेस नेतााओं की एक तरफ से गिरफ्तारी ने लोगों को गुस्से से पागल बना दिया ओर वे आत्मनियंत्रण खो बैठै। मुझे लगता है कि जो भी तोड़–फोड़ हुई है उसके लिए सरकार जिम्मेदार है, कांग्रेस नहीं।"[2] गाँधी जी ने हिसंक घटनाओं की निन्दा करने से इंकार कर दिया।

भारत छोड़ो आन्दोलन को स्वाधीनता संग्राम का अंतिम पड़ाव माना जाता है। इस आन्दोलन में आम जनता की भागीदारी तथा समर्थन एक नई सीमा तक पहुंच गई थी। इस आन्दोलन में युवा वर्ग, छात्रों, छात्राओं, महिलाओं, किसानों, मजदूरों ने अपने बलिदान और त्याग तथा शौर्य एवं पराक्रम से आन्दोलन को असीम शक्ति ओर ऊर्जा प्रदान की थी। भारत छोड़ो आन्दोलन के सम्मोहन की सूचना इस बात से भी मिलती है कि यद्यपि कम्युनिस्ट पार्टी का निर्णय आन्दोलन बहिष्कार का था, फिर भी स्थानीय स्तर के सैकड़ों कम्युनिस्टों ने इसमें हिंस्सेदारी की।[3]

---

[1] रजनी पामदत्त, इण्डिया टुडे, पृ0सं0– 572–573
[2] रजनी पामदत्त, वही, पृ0सं0– 572
[3] प्रो0 विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ0सं0– 431

इस ऐतिहासिक आन्दोलन की एक बड़ी खूबी यह रही कि इसके द्वारा आजादी की मांग राष्ट्रीय आन्दोलन की पहली मांग बन गई। इस आन्दोलन के बाद अब्र पीछे नहीं मुड़ा जा सकता था। ब्रिटिश सरकार से भविष्य में जो भी बातचीत होनी थी, उसमें सत्ता के हस्तांतरण का सवाल आना ही था और इस सवाल पर कोई मोलभाव नहीं किया जा सकता था।[1]

भारत छोड़ो आन्दोलन के बाद कांग्रेस ने कोई बड़ी लड़ाई नहीं लड़ी जिसे आजादी के तीन पड़ाओं (असहयोग, सविनय अवज्ञा तथा भारत छोड़ो) के समकक्ष रखा जा सके। इन आन्दोलनों से ब्रिटिश शासकों को भारतीय राष्ट्रवाद का बोध हुआ। भारत छोड़ो आन्दोलन को तो डा0 ईश्वरी प्रसाद जैसे इतिहासकार वैस्टील दुर्ग के पतन (फ्रांसीसी क्रांति की प्रमुख घटना) के समान महत्वपूर्ण मानते हुए कहा कि इस आन्दोलन के आग की भट्ठी में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की छाती जल गई।

अंततः परिवर्तितत परिस्थितियों मे ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली ने 20 फरवरी 1947 को ब्रिटिश हाउस ऑफ कामन में भारत सम्बन्धी अपने महत्पूर्ण नीति घोषित की– "अनिश्चितता की वर्तमान हालात खतरे से भरी है और अनिश्चित काल तक जारी नहीं रखी जा सकती। महामहिम की सरकार यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि जून 1948 के पूर्व ही जिम्मेदार भारतीयों के हाथों में सत्ता के हस्तांतरण को पूरा करने के लिए आवश्यक कदम उठाने का उसका निश्चित इरादा है।[2]

प्रधानमंत्री एटली का यह बयान स्वीकार करता था कि राष्ट्रीय मुक्ति क्रांति का खतरा बढ़ता जा रहा था और इसलिए उस अनिश्चित हालात को ज्यादा दिन बनाये रखना ठीक नहीं था।

कांग्रेसी नेताओं ने एटली के बयान का स्वागत किया। वे अब इस निष्कर्ष पर पहुंच चुके थे कि सत्ता का संघर्ष काल समाप्त हो चुका है और ब्रिटिश सरकार के

---

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, वही, पृ0सं0– 432
[2] डा0 धीरेन्द्र सेन, रिवोल्यूशन वार कांसेट, विद्योदय लाइब्रेरी, कलकत्ता, प्रथम संस्करण।

साथ अब मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित किए जाए। माउंटबेटन नए वाइसराय के रूप में 24 मार्च 1947 को अपना कार्यभार संभाल लिया और बड़ी चालाकी से भारत विभाजन की ओर बढ़ना आरम्भ किया। 3 जून को माउन्टवेटन योजना प्रस्तुत की गई जिसे जनसाधारण में मन--वाटन योजना के नाम से जाता है। इसमें देश के विभाजन की बात थी, जिसे बाबा साहेब ने 1940 में ही अपनी विश्व प्रसिद्ध पुस्तक थॉट ऑन पाकिस्तान मे स्पष्ट कर दिया था कि भारत--विभाजन अवश्यसंभावी है और इसे टाला नहीं जा सकता। जैसा बाबा साहेब ने सुझाया था, उसी के अनुरूप भारत विभाजन हुआ। बाबा साहेब ने अपनी पुस्तक में लिखा था– ''पहले प्रभुसत्ता सम्पन्न अस्थायी सरकार बनाकर बंटवारे का काम उसको सुपुर्द करने की बात जिन्ना किसी भी कीमत पर कबूल नहीं करेंगे। संवैधानिक परिवर्तन करने का एक मात्र रास्ता है ब्रिटिश संसद अधिनियम बनाए, जिसमें ब्रिटिश भारत के राष्ट्रीय जीवन के महत्वपूर्ण घटकों द्वारा स्वीकृत प्रावधान शामिल किए जाए।[1]

क्या इससे अच्छी भविष्यवाणी कोई कर सकता है? कालान्तर में भारत की आजादी और संवैधानिक समाधन ठीक वेसे ही हुआ, जैसा कि डा0 अम्बेडकर ने सुझाया था।[2]

कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने उसी दिन बैठक कर माउन्टबेटन योजना को स्वीकार कर लिया। मुस्लिम लीग ने अपनी 10 जून 1947 को दिल्ली बैठक में माउन्टबेटन योजना को स्वीकार कर लिया। 4 जुलाई 1947 को ब्रिटिश संसद में भारतीय स्वाधीनता विधेयक पेश किया गया। यह विधेयक 15 जुलाई को हाउस ऑफ कामन में तथा 16 जुलाई को हाउस ऑफ लार्डस में पारित हो गया। ब्रिटिश सम्राट ने उसपर 18 जुलाई को हस्ताक्षर कर दिया। घोषणा कर दी गई कि 15 अगस्त 1947 को हिन्दुस्तान के दो भाग कर दिए जाएगे, जिसके तहत 14 अगस्त को पाकिस्तान और 15 अगस्त को भारत अधिराज्य की स्थापना हुई। भारतीय संघ की संविधान सभा की बैठक

---

[1] अम्बेडकर, वही, पृ0सं0– 410
[2] मधुलिमये, वही, पृ0सं0– 67

14 अगस्त की आधी रात को हुई। ज्यों ही रात्रि के 12 बजे और 15 अगस्त आरम्भ हुआ, प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने संविधान सभा को संबोधित करते हुए कहा– "आधीरात की इस घड़ी में जब दुनिया सो रही है, भारत जागकर जीवन और स्वतन्त्रता प्राप्त करके एक क्षण ऐसा आता है, जो इतिहास में बहुत ही कम आता है, जब हम पुराने युग से नए युग में कदम रखते हैं, जब एक युग खत्म होता है, और एक राष्ट्र की अरसे से दवी आत्मा बोल उठती है। यह बहुत ही अच्छी बात हे कि इस पवित्र क्षण में हम भारत और उसकी जनता की सेवा और उससे भी बढ़ कर मानवता की सेवा करे की सौगन्ध लेते हैं।[1]

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना से लेकर 1947 तक उसके आन्दोलन तथा क्रिया कलापों को स्वाधीनता संग्राम की संज्ञा दी जाती है। इस तथ्य को प्रचारित–प्रसारित किया गया कि देश के स्वाधीनता संग्राम का नेतृत्व केवल कांग्रेस ने ही किया और कांग्रेस ने देश के सभी वर्गो, धर्मो, जातियो का प्रतिनिधित्व किया है। यह प्रचारित किया गया तथायह मिथक रूप से जन सामान्य में स्थापित कर दिया गया कि कांग्रेस के अलावा किसी दल या व्यक्ति का इस स्वाधीनता संग्राम में कोई योगदान नहीं है। बाबा साहेब तथा अस्पृश्य वर्ग पर यह आरोप विशेष तौरपर लगाया जाता है कि स्वाधीनता संग्राम में उनका कोई योगदान नहीं रहा। वे स्वाधीनता संग्राम के विरोधी, राष्ट्रद्रोही और ब्रिटिश सरकार के पिट्ठू थे। यह आरोप बाबा साहेब पर द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में गाँधी जी के प्रबल विरोध करने के कारण उसी समय से लगता आ रहा है। कांग्रेस ने बाबा साहेब की यह छवि उभारकर अपने समर्थक समाचार पत्रों के माध्यम से जन सामान्य के बीच लगातार प्रचारित की। यह दुष्प्रचार सच्चाई से पूर्णतः दूर है बल्कि विपरीत भी।

कांग्रेस की नीतियों से असंतुष्ट होकर बाबा साहेब ने लगातार उसका विरोध किया। बाबा साहेब यह हमेशा मानते रहे कि कांग्रेस एक राजनैतिक संगठन है

---

[1] मजूमदार, रमेशचन्द्र, हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेंट इन इण्डिया, पृ0सं0– 816

जिसका उद्देश्य केवल राजनैतिक सत्ता प्राप्त करना है। देश के सामाजिक, आर्थिक मुद्दों से उसका कोई लेना–देना नहीं था। साथ ही कांग्रेस देश के सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व नहीं करती, कम से कम अछूत वर्ग का तो नहीं करती। बाबा साहेब ने पर्याप्त तथ्यों के आधार पर यह स्पष्ट किया कि कांग्रेस का सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व करने का दावा नितान्त असत्य और झूठा है। बाबा साहेब ने कहा– केवल प्रेस के ही कारण कांग्रेस यह शोर मचाती रहती है कि वह ही सबका प्रतिनिधित्व करती है...... वास्तव में भारत का सम्पूर्ण प्रेस उन्हीं की मुठ्ठी में है और वह पूर्णतया कांग्रेस की पिठ्ठू है जो कांग्रेस के विरुद्ध किसी समाचार को छाप नहीं सकती।...... 1937 के चुनाव में कांग्रेस के दावे की परीक्षा हुई ..... और उसका परिणाम प्रतिनिधित्व करने का दावा झूठा साबित हुआ।[1]

बाबा साहेब ने कांग्रेस के स्वाधीनता संग्राम पर लगातार प्रश्न चिन्ह खड़ा किया। बाबा साहेब का यह दृढ़ विश्वास रहा कि देश की आजादी के संघर्ष के नाम पर कांग्रेस को विदेशों तथा देश में समर्थन मिल रहा है। बाबा साहेब के अनुसार – "वे (विदेशी) देखते हैं कि कांग्रेस सविनय अवज्ञा आन्दोलन करके विदेशी सरकार द्वारा बनाए गए कानूनों का उल्लंघन करके करों का भुगतान रुकवा कर, अदालतों में गिरफ्तारी देकर, सरकार से असहयोग करने का प्रचार करके, कार्यालयों का बहिष्कार करके तथा पूरे देश की आजादी के लिए आत्म–बलिदान एवं त्याग का प्रचार करे ब्रिटिश सरकार से लडने में जुटी है। विदेशियों की निगाह में कांगेस के अतिरिक्त अन्य पार्टियां नगण्य हैं। इन सबसे विदेशी यह निष्कर्ष निकालते हैं कि जब कांग्रेस स्वतन्त्रता प्रेमी के रूप में देश की आजादी के लिए लड़ रही है तो फिर स्वतन्त्रता संग्राम में अन्य पार्टियों ने साथ क्यों नहीं दिया।"[2]

बाबा साहेब ने सबेस महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया कि कांग्रेस किसके आजादी के लिए लड़ाई लड़ रही है। आजादी की यह लड़ाई देश की आजादी के लिए है या सभी

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–16, पृ0सं0– 10
[2] बाबा साहेब अम्बेडकर, वही, खण्ड–16, पृ0सं0– 211

निवासियों की आजादी के लिए। वास्तविक अर्थों में आजादी देश के सभी निवासियों के लिए होनी चाहिए। किसी वर्ग, जाति या सम्प्रदाय विशेष के लिए नहीं। डा0 अम्बेडकर ने कांग्रेस से लगातार यह प्रश्न किया, वह किसके आजादी के लिए लड़ रही है? कम से कम अस्पृश्य वर्ग के लिए यह लड़ाई कांग्रेस नहीं लड़ रही है। अस्पृश्य वर्ग के समस्याओं को कांग्रेस ने कभी वास्तविक रूप से नहीं उठाया। कांग्रेस का अछूतोद्धार आन्दोलन केवल भ्रमित करने के लिए था, जिससे अस्पृश्य वर्ग उससे जुड़ नहीं सका। यद्यपि असहयोग आन्दोलन में अभूतपूर्व हिन्दू–मुस्लिम एकता स्थापित हुई, लेकिन वह क्षणिक मात्र थी, और आन्दोलन के समाप्त होते ही यह एकता भंग हो गई।

बाबा साहेब ने पर्याप्त तर्को के आधार पर सिद्ध किया कि अस्पृश्यों, मुसलमानों तथा ईसाई ने कांग्रेस के स्वतन्त्रता संग्राम में भाग नहीं लिया। कांग्रेस ने इसका कारण यह बताया कि अस्पृश्य ब्रिटिश साम्राज्य की कठपुतली है और यही कारण है कि वे स्वाधीनता संग्राम में भाग नहीं लेते। बाबा साहेब ने कांग्रेस के इस स्पष्टीकरण की कटु आलोचना की है "कांग्रेस का स्पष्टीकरण बाहियात झूठा एवं आधारहीन है। केवल धूत ही ऐसा स्पष्टीकरण देने का साहस कर सकता है और बेवकूफ के सिवा और कोई उसको सही नहीं मान सकता।...... अस्पृश्यों ने स्वतन्त्रता संग्राम में भाग नहीं लिया, तो इसका कारण यह नहीं है कि वे ब्रिटिश साम्राज्य के पिठ्ठू थे, बल्कि कारण यह है कि उन्हें डर है कि भारत की स्वतन्त्रता से हिन्दू राज्य स्थापित हो जायेगा। अस्पृश्यों के लिए सभी दरवाजे बन्द हो जायेंगे और सदा के लिए उनकी आशाओं, स्वतन्त्रता और खुशियों के रास्ते बन्द हो जायेंगे।..... अस्पृश्य ब्रिटिश साम्राज्य से मुक्ति प्राप्त करने के विरुद्ध नहीं है परन्तु वे ब्रिटिश साम्राज्य से केवल मुक्ति प्राप्त करने में ही संतुष्ट नहीं रहना चाहते। वे जोर देकर कहते हैं कि देश का स्वतन्त्र होना ही काफी नहीं है। स्वतन्त्र भारत को लोकतन्त्र के योग्य बनाया जाना चाहिए।"[1]

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, वही, खण्ड–16, पृ0सं0– 181–182

बाबा साहेब का विश्वास था कि भारतीय समाज लोकतांत्रिक नहीं है और लोकतंत्र के अनुरूप भी नहीं है। उसे लोकतान्त्रिक बनाने के लिए शासक जातियों के उत्पीड़न के विरुद्ध शोषित जातियों के लिए संवैधानिक प्रावधान या संरक्षण की आवश्यकता पर उन्होंने लगातार बल दिया, मांग की और संघर्ष चलाया। इन संवैधानिक संरक्षणों का उद्‌देश्य केवल विधायिका, कार्यपालिका और प्रशासन में अस्पृश्यों का प्रतिनिधित्व दिलाना ही नहीं वरन ऐसे संरक्षण दिलाना है जिसका वास्तव में एक धरातल हो और जिनके नीचे अस्पृश्य गिरकर बहुसंख्यक स्पर्श हिन्दुओं द्वारा कुचले न जाए।

अस्पृश्यों के द्वारा पहले संवैधानिक संरक्षणकी मांग किए जाने पर कांग्रेस ने स्पष्टीकरण दिया कि पहले आजादी प्राप्त हो जाए, फिर संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया जाएगा। बाबा साहेब और अस्पृश्य समाज का कहना था कि यदि कांग्रेस पहले ही गारंटी दे देती है तो इसमें कांग्रेस का क्या नुकसान है? यदि कांग्रेस पहले ही संरक्षण देने पर सहमत हो जाती है तो इससे दो लाभ होंगे–

1. जो अस्पृश्य आशंकित है, उन्हें विश्वास दिलाना होगा कि बहुसंख्यक हिन्दू साम्प्रदाय के अन्तर्गत उनके भाग्य का निपटारा कैसे किया जाएगा।
2. दूसरी बात यह कि इस प्रकार का आश्वासन कांग्रेस का सहयोग करने के लिए अस्पृश्यों को प्रेरित करने के अभिप्राय से किया जाता है।

संक्षेप में पहले गारण्टी से अस्पृश्यों में व्याप्त भय समाप्त हो जाएगा कि बहुसंख्यक हिन्दू उन्हें पुनः गुलाम नहीं बना लेंगे।

बाबा साहेब ने अस्पृश्य समाज की इस आशंका को भी व्यक्त किया कि संसार के अनुभवों से इस आशा की पुष्टि नहीं होती कि स्वतन्त्रता संग्राम की समाप्ति के बाद शक्तिशाली वर्ग कमजोर वर्ग को सुरक्षा देने की उदारता दिखाते हों। इस प्रकार के विश्वासघात के विश्व इतिहास में बहुत सारे उदाहरण भी हैं यथा– अमेरिका। इसीलिए पहले संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया जाए। यह मांग बराबर अस्पृश्य समाज उठाता रहा है।

इस प्रकार कांग्रेस और बाबा साहेब के बीच यह गंभीर मतभेद का प्रश्न बना रहा। कांग्रेस लगातार यह भी कहती रही कि आजादी क बाद वह अस्पृश्य वर्ग के लिए आश्चर्यजनक कार्य करेगी। बाबा साहेब का यह मत था कि "कांग्रेस का यह वादा वाग जाल है, जिसमें विदेशी पड़ जाए।.............. यह पूँछा जा सकता है कि जब भारत आजाद हो जाएगा, तब वास्तव में क्या होगा? स्वराज्य के पास जादू की ऐसी छड़ी नहीं होगी, जिससे शासक वर्ग छू–मंतर हो जाएगा। ब्रिटिश साम्राज्य के चंगुल से निकलने पर भी शासक वर्ग ज्यों का त्यों बना रहेगा। यही नहीं उसमें और अधिक शक्ति और प्रबलता आ जायेगी। शासक वर्ग वैसे ही सत्ता में हावी हो जायेगा, जैसा कि अन्य देशों में होता है।[1]

बाबा साहेब ने इस प्रश्न को भी जनता के सामने लाया कि आजादी के बाद शासक वर्ग क्या करेगा? उन्होंने कहा– "कुछ लोगों को आशा है कि शासक वर्ग काश्तकारी कानूनों में सुधार करेगा, कारखानों का विस्तार करेगा, प्राथमिक शिक्षा का प्रसार करेगा, नशाबन्दी लागू करेगा, चरखा चलाना सिखाया जाएगा, सड़के और नहरें बनाई जाएगी, मुद्राकोष में बढ़ोत्तरी की जाएगी, मापतौल को विनियमित किया जाएगा, अस्पताल खोले जाएंगे और शासित वर्ग की दशा में सुधार करने के उपाय किए जाएंगे।"[2] ऐसी योजनाओं से भी शासित वर्ग में अधिक उत्साह का संचार न होगा। पहली बात तो यह है कि इस योजना में कोई बड़ी बात नहीं की गई है। आज कल की दुनिया में कोई भी शासक वर्ग ये आवश्यक सुधार करने की उपेक्षा नहीं कर सकता। व्यक्तिगत रूप से मैं भारत के शासक वर्ग पर इस बात का संदेह करता हूँ कि सामाजिक उत्थान की ऐसी मामूली योजना को चलाने के लिए आगे आएंगे। बहुत से लोग भूल जाते हैं कि कांग्रेस का नेतृत्व आज–कल जिनके हाथों में है और जैसी योजनायें चलाने का प्रचार किया जा रहा है उनसे ऐसा प्रतीत होता है कि ब्रिटिश नौकरशाही से बेहतर कांग्रेस है परन्तु नौकरशाही से मुक्त हो जाने से क्या अधिकतर

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, वही, खण्ड–16, पृ0सं0– 221
[2] बाबा साहेब अम्बेडकर, वही, खण्ड–16, पृ0सं0– 221

जनता के भाग्य को संवारने के लिए वही प्रोत्साहन बना रहेगा? इस बात पर मुझे सन्देह है। इसके अतिरिक्त इसमें क्या स्वराज्य का लक्ष्य समाजोत्थान होगा? शासित वर्ग के सम्बन्ध में मुझे संदेह है कि स्वतन्त्र भारत में वे आशा के अनुरूप ब्राह्मणवाद का, जो समाज का जीवन दर्शन है, पूर्ण उन्मूलन कर देंगे। .... साधनों की कमी और निर्धनता ही जिनका भाग्य है, वह उनके उस अपमान और तिरस्कार की तुलना में कुछ भी नहीं हे जो दूषित सामाजिक व्यवस्था के फलस्वरूप सभी प्रकार के कष्ट सहन कर रहे हैं, वे दौलत नहीं इज्जत चाहते हैं। इसलिए प्रश्न यह है कि क्या स्वतन्त्र भारत में सत्ता में आने के बाद शासक वर्ग सामाजिक व्यवस्था में सुधार करने के लिए कोई योजना चलाएगा।[1]

बाबा साहेब ने इस अतिमहत्वपूर्ण मुद्दे पर अपना विचार प्रकट किया कि कांग्रेस का यह आजादी की लड़ाई केवल शासक वर्ग के हितों के लिए ही है। भारतीय समाज का ऐतिहासिक विवेचन कर बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि ब्राह्मण ही वास्तविक शासक वर्ग है, जिसने अपने स्वार्थों के लिए क्षत्रियों और वैश्यों को भी समय–समय अपने साथ जोड़ा है। बाबा साहेब ने कहा– ब्राह्मण ही शासक वर्ग है, इसपर प्रश्न वाचक चिन्ह नही लगाया जा सकता। इसकी दो प्रकार से परीक्षा की जा सकती है।

प्रथम परीक्षा लोगों की भावना के अनुसार ब्राह्मण पवित्र है। प्राचीनकाल में ब्राह्मण चाहे जितना जघन्य अपराध कर दे, उसे मृत्युदण्ड नहीं दिया जा सकता था। उसे पवित्र मनुष्य मानकर ही सारी सुविधाएं प्राप्त थी। प्रथम फल प्राप्त करने का वही अधिकारी था..... ब्रिटिश शासन के कारण के और कानून के समक्ष समानता के कारण ब्राह्मणों के विशेषाधिकार ओर दण्डित न किये जाने की सुविधा नहीं दी गई फिर भी समाज उसे पवित्र मानता है। आज भी उसे स्वामी कह कर पुकारते हैं, जिसका अर्थ है भगवान।

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, वही, खण्ड–16, पृ0सं0– 221

दूसरे दावे में भी पूर्ण सच्चाई है कि प्राचीनकाल से लकर वर्तमान समय तक प्रशासन में ब्राह्मणों का ही दबदबा है।

बाबा साहेब ने यह भी स्पष्ट किया कि ब्राह्मण वर्ग ने अपने हितों की पूर्ति के लिए समय – समय पर क्षत्रिय और वैश्य को अपने साथ जोड़ता रहा है। प्राचीन काल मे तथा मध्यकाल में ब्राह्मणों ने क्षत्रियों अथवा सैनिक वर्ग से सम्बन्ध जोड़ा और दोनो ने जनता पर शासन किया। वास्तव में उन्होंनें जनता को कुचल डाला। ब्राह्मणों ने अपनी कलम से और क्षत्रियों ने तलवार से अत्याचार और शोषण किया। बाद में वैश्य वर्ग को भी धन के लिए अपने साथ जोड़ लिया।[1] बाबा साहेब ने यह सवाल भी उठाया– "यदि कांग्रेस जो शासित वर्गों का भी संरक्षक बनने का दावा करती है, अपने कार्य व्यवहार में सब तरह से ईमानदार है तो उसे स्पष्ट करना चाहिए कि वह शासक वर्ग की शक्ति का क्षीण करने के लिए क्या कदम उठाएगी?..... क्या इस कथन में कोई सन्देह बचा है कि इस देश में ब्राह्मण ही शासक हैं? क्या इसमें भी संदेह है कि कांग्रेस जो स्वतन्त्रता की लड़ाई लड रही है, वह केवल शासक वर्ग के लिए लड़ रही है ? क्या इसमें कोई सन्देह है कि कांग्रेस ही शासक वर्ग है और शासक वर्ग ही कांग्रेस है?[2]

बाबा साहेब ने दुनिया के के आधार पर विश्व के सम्मुख यह स्पष्ट किया कि 1937 में प्रान्तों में सत्ता आने के बाद कांग्रेस ने शासक वर्ग को ही पदों पर बैठाया, मंत्री और मुख्यमंत्री बनाया। प्रमाण रूप में यह तालिका प्रस्तुत है–

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाडमय, खण्ड–16 पृ0सं0– 222

[2] वही, पृ0सं0– 227–228

प्रान्तीय विधान सभाओं में जातियों के आधार पर कांग्रेस सदस्यों का वर्गीकरण

प्रान्त	ब्राह्मण	गैर ब्राह्मण	अनुसूचित जाति	अवर्णित	योग
असम	6	21	1	5	33
बंगाल	15	27	6	6	54
बिहार	31	39	16	12	98
मध्य प्रान्त	28	35	7	—	76
मद्रास	38	98	26	5	159
उड़ीसा	11	20	5	—	36
संयुक्त प्रान्त	39	54	16	24	133

इस तालिका से स्पष्ट है कि कांग्रेस ने अनुसूचित जातियों की पूरी उपेक्षा की और शासक वर्ग को ही टिकट दिया और सदस्य बनाया। कांग्रेसशासित प्रान्तों में मंत्रियों और मुख्यमंत्रियों की स्थिति इस तालिका से स्पष्ट होती है।[1]

कांग्रेसी प्रान्तों में मंत्रिमण्डल का गठन

प्रान्त	मंत्रिमण्डल में मंत्रियों की सं0	गैर हिन्दू मंत्रियों की सं0	मंत्रिमण्डल में हिन्दू मंत्रियों की स्थिति				
			कुल योग हिन्दू मंत्री	ब्राह्मण	गैर ब्राह्मण	अनुसूचित जाति	मुख्यमंत्री
असम	8	3	5	—	—	शून्य	ब्राह्मण
बंगाल	4	1	3	—	—	1	ब्राह्मण
बिहार	7	2	5	3	2	शून्य	ब्राह्मण
मध्य प्रान्त	5	1	4	3	1	शून्य	ब्राह्मण
मद्रास	9	2	7	3	3	1	ब्राह्मण
उड़ीसा	3	शून्य	3	—	—	—	—
संयुक्त प्रान्त	6	2	4	4	शून्य	शून्य	ब्राह्मण

[1] इण्डियन इनफारमेशन– 15 जुलाई 1939 का अंक

इस तालिका से स्पष्ट होता है कि सभी प्रान्तों में ब्राह्मण मुख्यमंत्री बने थे। बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि कांग्रेस की इसी नीति के कारण अस्पृश्य वर्ग ने स्वाधीनता आन्दोलन में कांग्रेस का साथ नहीं दिया। उन्होंन कहा– शासक वर्ग भारत की जिस आजादी के नाम पर लड़ रहा है, उसका उद्देश्य विदेशियों से सत्ता छीनकर शासित दास वर्गों पर शासन करना है।[1]

इसका अभिप्राय यह नहीं कि बाबा साहेब और अस्पृश्य वर्ग का देश की स्वाधीनता संग्राम में कोई योगदान नहीं है। बाबा साहेब ओर अस्पृश्य वर्ग की स्वाधीनता में प्रबल आस्था थी। उनका सम्पूर्ण जीवन स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व की भावना के प्रसार में ही समर्पित रहा। बाबा साहेब के स्वतन्त्रता का अर्थ अति व्यापक रहा है, जो कांग्रेस के अर्थ से बिल्कुल भिन्न है। कांग्रेस की स्वतन्त्रता का अर्थ केवल राजनैतिक है और ब्रिटिश शासकों के शासन से मुक्ति का उद्देश्य है। बाबा साहेब के अनुसार स्वतन्त्रता का अर्थ केवल राजनैतिक स्वतन्त्रता ही नहीं अपितु सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक स्वतन्त्रता भी है। बाबा साहेब ने आजीवन सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनैतिक स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष किया। सामाजिक स्वतन्त्रता के बिना राजनैतिक स्वतन्त्रता का कोई मूल्य नहीं है। धार्मिक स्वतन्त्रता के बिना भी राजनैतिक स्वतन्त्रता का कोई मूल्य नहीं है। आर्थिक स्वतन्त्रता के बिना भी राजनैतिक स्वतन्त्रता निरर्थक है। शासक चाहे अंग्रेज हो या हजारों वर्षों से शासक बने ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्ग (शासक वर्ग) हो यदि सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक स्वतन्त्रता नहीं है तो शासित वर्ग की स्थिति में कोई फर्क पड़ने वाला नहीं है। वह तो केवल यही विलाप करेगा– कोई नृप होय हमें का हानी, चेरी छोड़ न होइव रानी। शासक का केवल चेहरा बदलेगा और शासित वर्ग अन्याय, अत्याचार, शोषण की चक्की में पिस कर तिरस्कार और अपमान का घूँट पीकर पाशविक अभिशप्त जीवन व्यतीत करने के लिए विवश होता रहेगा।

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, वही, खण्ड– 16, पृ0सं0– 237

कांग्रेस और उसके शासक वर्ग ने केवल 190 वर्षों से विद्यमान अंग्रेजां के शासन काल के विरुद्ध स्वतन्त्रता आन्दोलन चलाया, लेकिन बाबा साहेब ने लगभग 3000 वर्षो से अधिक समय से शासक बने शासकों के अत्याचार, उत्पीड़न, शोषण उत्पीड़न के विरुद्ध आन्दोलन चलाय।। यदि कांग्रेस को अंग्रेजों के शासन से मुक्त कराने में सफलता मिली तो बाबा साहेब को हजारों वर्षों के शासकों के घृणित, अन्यायी शासन से शासित, दलित, दमित, शोषित वर्ग को आजाद कराने में सफलता प्राप्त हुई।

एक दूसरे अर्थ में भी बाबा साहेब की आजादी का संघर्ष कांग्रेस के आजादी के संघर्ष से अधिक महत्वपूर्ण था। कांग्रेस ने जिस वर्ग को लेकर आन्दोलन किया, वह राजनैतिक रूप से जागरूक, आर्थिक रूप से सम्पन्न तथा सामाजिक रूप से आत्म गौरव से युक्त था, जबकि बाबा साहेब ने जिस वर्ग को लेकर संघर्ष किया, तथा जिस वर्ग के लिए संघर्ष किया वह मनुवादी व्यवस्था के कारण पौरुष विहीन, जीने के लिए मृत जानवरों का मांस खाने, पशुओं के गोवर के दाने निकाल कर, जूठन खाकर भूख की ज्वाला बुझाने के लिए अभिशप्त, तिरस्कृत और बहिष्कृत थे। ऐसे मृत प्राय समाज को जगाना और उनके बीच संघर्ष करना, भगीरथ प्रयास से कम महत्वपूर्ण नहीं था।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब और अस्पृश्य समाज का स्वाधीनता संग्राम कांग्रेस और उसके शासक वर्ग के स्वाधीनता संग्राम से कहीं अधिक महान और विराट था। यह भारत भूमि का सौभाग्य था कि बाबा साहेब जैसा स्वतन्त्रता का पुजारी और आजादी का महानायक प्राप्त हुआ। वे महान देशभक्त भी थे जिसका प्रमाण गोलमेज सम्मेलन में दिया गया उनका ऐतिहासिक भाषण है। उनमें देश–प्रेम की भावना कूट–कूट कर भरी थी। वे ऐसा कोई भी कृत्य न कर सकते थे और न सोच सकते थे, जो देश के लिए हानिकारक है। अपनी इसी सोंच के कारण उन्होंने एक ऐसे धर्म को दीर्घकालिक सोच–विचार के पश्चात् अंगीकार किया जो ऐसी देश की मिट्टी में पेदा हुआ और पुष्पित–पल्वित हुआ। बौद्ध धर्म ग्रहण करने के पूर्व विभिन्न धर्मों के

तुलनात्मक अध्ययन के दौरान बाबा साहेब ने एक बार यह कहा था– "इस्लाम या ईसाई धर्म अपनाने पर दलित वर्ग अपनी राष्ट्रीयता खो देगा। अगर वे इस्लाम में जायेंगे तो मुसलमानों की संख्या दुगुनी हो जाएगी और मुसलमानों के प्रभुत्व का खतरा भी वास्तविक हो जायेगा। यदि वे ईसाई धर्म स्वीकार करेंगे तो ईसाइयों की संख्या 5 से 6 करोड़ हो जाएगी। इससे अंग्रेजों का देश पर कब्जा बनाये रखने में बड़ी सहायता मिलेगी। इसके विपरीत यदि वे सिख बनेंगे तो देश की नियत को काई नुकसान नहीं पहुचेंगा, बल्कि उसमें सहायक ही होंगे।[1]

बाबा साहेब अपनी राष्ट्र–प्रेम की भावना के कारण ही अपने ही देश के धर्म बौद्ध धर्म को स्वीकार किया। अपने उदात्त राष्ट्र प्रेम की भावना से अभीभूत होकर बाबा साहेब ने सशक्त केन्द्र का समर्थन किया और भारतीय संविधान में इसकी समुचित व्यवस्था भी कराई। वे चाहते थे कि केन्द्रीय कार्यपालिका के पास इतनी शक्ति हो कि वह सामाजिक न्याय के हक में अपनी प्रशासनिक इच्छा को अमल में ला सके।[2] बाबा साहेब का मानना था कि केन्द्रीय विधान मण्डल के पास कानून का लागू करने की व्यापक शक्ति होनी चाहिए।

बाबा साहेब ने महान राष्ट्र–प्रेम की भावना से ओत–प्रोत होकर 1938 में बंबई विधान सभा में पृथक कर्नाटक के गठन के प्रस्ताव पर बोलते हुए कहा– "मुझे अच्छा नहीं लगता, जब कुछ लोग कहते हैं कि हम पहले भारतीय हैं और बाद में हिन्दू अथवा मुसलमान। मुझे यह स्वीकार नहीं है। धर्म, संस्कृति, भाषा आदि की प्रतिस्पर्धा निष्ठा के रहते हुए भारतीयता के प्रति निष्ठा नहीं पनप सकती। मैं चाहता हूँ कि लोग पहले भी भारतीय हों और अंत तक भारतीय रहें, भारतीय के अलावा कुछ भी नहीं।[3]

राष्ट्र प्रेमी की इससे अधिक अभिव्यक्ति क्या हो सकती है? मुंबई विधान सभा में 1939 में प्रस्तुत युद्ध विधेयक पर बोलते हुए बाबा साहेब ने कहा था– "इसमें

---

[1] सोर्स मैटिरियल, खण्ड–1, पृ0सं0– 149
[2] मधु लिमये, वही, पृ0सं0– 74
[3] राइटिंग एण्ड स्पीचिज, खण्ड– 2, पृ0सं0– 195 (मुंबई 1982) संपादन–बसंतमून

कोई सन्देह नहीं होना चाहिए कि मैं अपने देश को प्यार करता हूँ।...... मेरे अपने हित और देश के हित में जब कभी टकराव होगा तो मै देशहित को सर्वोपरि महत्व दूँगा''।

बाबा साहेब देश की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए भी चिन्तित थे। इस चिंता को उन्होंने 25 नवम्बर 1949 को संविधान सभा में भाषण देते हुए व्यक्त किया– ''मुझे जिस बात से बहुत परेशानी होती है, वह है कि भारत न केवल अनेक बार स्वतन्त्रता खो चुका है, वरन उसे यह स्वतन्त्रता अपने देशवासियों के देशद्रोह, विश्वासघात, धोखेबाजी, बेईमानी के ही कारण खोनी पड़ी है...... क्या इतिहास की पुनरावृत्ति होगी? यही विचार मुझे चिन्तातुर बना रही है।''

बाबा साहेब ने आगे कहा– यदि विभिन्न दल धर्म को देश की अपेक्षा अधिक महत्व तथा लाभ देंगे तो हमारी स्वतन्त्रता दूसरी बार खतरे में पड़ जाएगी और हम शायद सदा के लिए गुलाम बन जाएंगे।....... हमें अपने रक्त की अंतिम बूँद बहाकर अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने के लिए संकल्प कर लेना चाहिए।[1]

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि कांग्रेस ने अपने स्थापनाकाल 1885 से लेकर 1947 तक जो संघर्ष किया उसे स्वतन्त्रता संग्राम कहा गया। कांग्रेस राजनैतिक स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष कर रही थी जिससे अस्पृश्य वर्ग में भय हुआ कि अंग्रेजी शासन की समाप्ति के बाद पुनः सवर्ण हिन्दुओं का शासन आरम्भ हो जाएगा, इसलिए बाबा साहेब ने लगातार संवैधानिक संरक्षणों की मांग की साथ ही बाबा साहेब डॉ0 अम्बेडकर ने कांग्रेस की स्वतन्त्रता से अधिक व्यापक, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक स्वतन्त्रता के लिए अनवतर, अविराम संघर्ष किया। उनका संघर्ष हजारों वर्षों के शासक वर्ग के दमनकारी, अन्यायकारी एवं शोषणवादी व्यवस्था के विरुद्ध था। उनके रग–रग में देश–भक्ति भरा था और आजीवन निजी स्वार्थो। के स्थान पर देश हित को सर्वोपरि माना । निःसन्देह बाबा साहेब स्वतन्त्रता के महानायक और महान देशभक्त थे। ऐसे महामानव के प्रति अपने सच्ची श्रृद्धांजलि अर्पित करते हुए राष्ट्रीय मोर्चा की वी0पी0 सिंह

---

[1] गुरुप्रसाद मदन, बाबा साहेब अम्बेडकर और सामाजिक न्याय की चुनौतियां, पृ0सं0– 18

सरकार ने वर्ष 1990 में देश के सर्वोच्च सम्मान भारत–रत्न से सम्मानित किया और 14 अप्रैल 1990 से लेकर 14 अप्रैल 1991 तक डॉ0 भीमराव अम्बेडकर जन्म शताब्दी समारोह आयोजित किया।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब ने कांग्रेस द्वारा संचालित तथाकथित स्वाधीनता संग्राम के स्वरूप तथा उद्देश्य को लेकर अपनी गम्भीर असहमति के कारण उसमें सम्मलित नही हुए। बाबा साहेब स्वतंत्रता का व्यापक अर्थ में उपयोग करते थे। उनके अनुसार स्वतंत्रता केवल राजनैतिक ही नही होनी चाहिए अपितु सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक भी होनी चाहिए। बाबा साहेब इसी व्यापक स्वतंत्रता को लेकर दीर्घकालीक संघर्ष चलाया। उनमें कूट–कूट कर देश भक्ति भरी हुई थी। ऐसे महान देश भक्त और स्वतंत्रता संग्राम के महानायक के प्रति सरकार ने सच्ची श्रृद्धांजली देते हुए उन्हे भारत तत्न से सम्मानित किया।

अध्याय चौदह

अध्याय– चौदह

"बाबा साहेब और श्रमिक आन्दोलन में उनकी सहभागिता"

विश्व इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों में अंकित अनेक महापुरुषों की पंक्तियों में बाबा साहेब निःसन्देह अग्रिम पंक्ति के भागीदार हैं, जिन्होंने अपने कृतित्व और व्यक्तित्व में से न केवल वर्तमान पर अमिट छाप छोंड़ी है अपितु करोड़ों शोषित पद दलित जनों का भिश्क बनकर सदियों–सदियों के उनके दारुण दुःखों का उन्मूलन किया है। इन्हीं शोषित जनों में एक बहुत बड़ा वर्ग श्रमिकों का था जो पूँजीवाद की भट्ठी में तप कर विश्व के अन्य देशों के मजदूरों की भाँति आमुनाषिक जीवन व्यतीत करने के लिए अभिशप्त था। अपने जीवन के शैशवकाल में ही बाबा साहेब को श्रमिक बस्ती में अपने परिवार के साथ निवास करते हुए विकट गरीबी एवं उनके आमुनाषिक जीवन का दर्शन हो गया था। भारतीय राजनीति में अवतरण के साथ ही बाबा साहेब ने श्रमिक हितों के लिए न केवल एक दीर्घकालिक संघर्ष छेड़ा अपितु उनके विधिक अधिकारों के संरक्षण हेतु विधान निर्मित करवाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

ब्रिटेन से 18वीं सदी में जिस औद्योगिक क्रांति का जन्म हुआ उसका शनैः शनैः विश्व के अन्य देशों में विकास होता गया। औद्योगिक क्रांति ने मानव जीवन को सर्वाधिक प्रभावित किया। सामाजिक क्षेत्र में 2 नये वर्ग का जन्म हुआ–

1. पूँजीपति वर्ग
2. भजदूर वर्ग या सर्वहारा वर्ग

भारत में 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध से औद्योगिक करण की प्रक्रिया आरम्भ हुई। यद्यपि भारत में अत्यन्त प्राचान काल से ही उद्योग–धन्धों की प्रधानता रही। भारतीय कुटीर उद्योगों की विश्व में पहचान थी लेकिन ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना के

बाद उसकी औपनिवेशिक नीतियों के कारण भारत के कुटीर उद्योगों का विनाश हुआ। भारत में आधुनिक अर्थों में उद्योगों का आरम्भ 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में ही आरम्भ हुआ। भारत में 1853 में रेलवे के विकास के साथ ही औद्योगीकरण की प्रक्रिया आरम्भ हुई। कार्ल मार्क्स ने 1853 ई0 में न्यूयार्क के डिली ट्रिब्यून में भारत में रेलवे के विकास ओर उसके प्रभाव के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया[1]– ''मैं जानता हूँ कि अंग्रेज उद्योगपति केवल इसलिए भारत में रेल लाइन बिछाना चाहते हैं कि रुई और अन्य कच्चा माल अपने कारखानों के लिए कम खर्च पर प्राप्त कर सकें। मगर जिस देश में लोहा और कोयला हो, उसके यातायात के साधनों में जब एक बार मशीनों को ले आयेंगे तो उसे खुद मशीन बनाने से आप नहीं रोक सकेंगे। यह नहीं हो सकता कि आप एक विशाल देश में रेलों का जाल बिछाए रहे और औद्योगिक प्रक्रियाओं को वहाँ शुरु न होनें दें, जिनके बिना रेलों की तात्कालिक जरूरतों को पूरा नहीं किया जा सकता और जिसके परिणाम स्वरूप मशीनों का प्रयोग उद्योगों में भी शुरू हो जायेगा जिनका रेलों के साथ कोई सीधा संबंध नहीं हे। इसलिए रेल व्यवस्था भारत में आधुनिक उद्योगों की जननी बनेगी।''

कार्ल मार्क्स की यह भविष्यवाणी सत्य सिंद्ध हुई और भारत में औद्योगीकरण की प्रक्रिया आरम्भ हुई। 1854ई0 में बंबई में भारत की पहली सूती कपड़ा मिल खुली।[2] इसी वर्ष कलकत्ता में प्रथम पटसन मिल भी खुली। 1886 ई0 तक कपड़ा उद्योग में श्रमिकों की सं0 74000 थी जो 1905 ई0 में बढ़कर 195000 हो गई। पटसन उद्योग में भी 1879–80 में 27494 श्रमिक थे, जो 1906 में बढ़कर 154962 हो गये। कोयला खान में भी 1904 में 75799 श्रमिक लगे थे। देश में अनेक उद्योग खुल रहे थे

---

[1] काल मार्क्स, न्यूयार्क डेली रिब्यून के 8 अगस्त 1853 के अंक में प्रकाशित ''भारत ब्रिटिश राज के भावी परिणाम'' शीर्ष्रक लेख, कार्ल मार्क्स– एंगेल्स, संकलित रचनाएं भाग–1, प्रगति प्रकाशन मास्को।

[2] बी0एल0 ग्रोबर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 476।

यथा– शीश उद्योग, कागज उद्योग आदि। 1902 ई0 तक देश में कुल 541634 श्रमिक विभिन्न उद्योगों में कार्यरत थे।

भारत में नये–नये उद्योग स्थापित हुए, नए मजदूर वर्ग का जन्म हुआ और उनकी संख्या दिन–प्रतिदिन बढती चली गयी, किन्तु प्रथम विश्वयुद्ध के पूर्व उनके काम, की अवधि, रहने के घर, पीने का पानी, सफाई आदि की दशा आज की पीढ़ी के लिए आश्चर्य की बात है। आसाम की पहाड़ियों में अज्ञात स्थानों में दफनाये गये वे चीनी मजदूर जिन्हें यहाँ चाय की खेती कराने के लिए ब्रिटिश सरमायेदार चीन से पकड़ कर ले आये थे, या बंगाल के हावड़ा जिले के वावडिप की कपड़ा मिल की पुराने स्थान के पास एक छोटे से कब्रिस्तान में दफनाई गई मजदूरिनें अगर कब्र से निकल कर बोल सकते तो वे उस समय के मजदूरों के नरकीय हालत का सच्चा चित्र प्रस्तुत करते। वे बताते कि किस तरह दिन–रात काम करवा कर मजदूर–मजदूरिनें को जल्द ही मौत के मुँह में ढकेल दिया जाता था और किस तरह 6–7 वर्ष के लड़के–लड़कियों से 13–14 घण्टे रोज काम करवा कर उनकी जिन्दगी का सफर जल्दी ही खत्म कर दिया जाता। वे सब रक्त शून्य होकर जल्द ही विदा हो जाते ओर उनका रक्त सोना–चाँदी के सिक्कों का रूप ग्रहण कर मिल मालिकों की तिजोरियों में पहुँच जाता।

भारतीय श्रमिकों की दशा में सुधार के लिए 1881 में प्रथम फैक्ट्री ऐक्ट (First Factory Act) पारित हुआ लेकिन यह कानून केवल बाल श्रम तक सीमि था। यह प्रावधान किया गया कि 7 वर्ष से कम उम्र के बच्चों को कारखानों में नहीं लगाया जा सकता। 12 वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिए कार्य के घण्टे सीमित किए गए। 1891 में दूसरा फक्ट्री एक्ट लागू किया गया, जिसमें बच्चों के लिए कार्य करने की न्यूनतम आयु 7 से बढ़ाकर 9 वर्ष कर दी गई। 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के लिए कार्य के घण्टे कम किए गए। स्त्रियों के लिए भी 11घण्टे काम निर्धारित किया गया, जिसमें से 1½ का मध्यावकाश घोषित किया गया। इसी प्रकार 1909 तथा 1911 में पटसन के कारखानों के श्रमिकों के लिए कानून बने।

इन कानूनों के बावजूद श्रमिकों के दयनीय दशा में कोई सुधार नहीं हुआ। नव जागरण तथा राष्ट्रवाद के विकास के साथ--साथ श्रमिकों में भी जागृति आई, उनमें असंतोष बढ़ा तथा उनकी स्थिति में सुधार के लिए आवाजें उठने लगीं। 1870 में बंगाल में एक ब्रह्म समाजी शारीपद सर्जी ने मजदूरों का एक क्लब स्थापित किया और भारत श्रमजीवी नामक एक पत्रिका भी निकाली।[1] 1880 में बंबई मे नारायण मेधाजी लोखंडी ने दीनबन्धु नामक अंग्रेजी, मराठी साप्ताहिक पत्र निकाला और 1890 में उन्होंने बंबई मिल हैड्स एसोसियेशन शुरू किया। श्रमिकों ने अपनी स्थिति में सुधार करने के लिए हडताल करना भी आरम्भ किया। उनकी छुट–पुट हड़तालें 1827 से ही होनी शुरु हो गईं। मजदूरी बाधने के सरकारी कानून के खिलाफ कलकत्ता के हजारों पालकी वालों की एक महीने से अधिक हड़ताल 1827 में हुई।[2] लेकिन वास्तविक अर्थो में पहली संगठित हड़ताल ब्रिटिश स्वामित्व व प्रबन्ध में चलने वाली रेलों में हुई। ग्रेड इण्डिया पेनिसुलार (G.I.P.) रेलवे में 1899 ई0 में सिग्नल पर काम करने वाले मजदूरों ने काम के घण्टे को कम करने तथा अन्य सेवा शर्तों को लेकर की थी।[3] स्वदेशी आन्दोलन के दौरान व्यापक पैमाने पर श्रमिक हड़तालें हुईं। 1905–08 के मध्य पटसन कारखानों में प्रायः हड़तालें हुई। 1907 ई0 में पूरे देश में रेलवे हड़ताल हुई। 22 जुलाई 1908 ई0 को बाल गंगाधर तिलक को दिए गए 6 वर्ष के कारावास के विरोध में मुम्बई के मजदूरों ने 6 दिन की हड़ताल की और ब्रिटिश सेना के साथ मुम्बई की सड़कों पर मोर्चा संभाला।[4]

इस बीच देश के विभिन्न भागों में अनेक श्रमिक संघों की स्थापना हुई, जिनमें कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं–

---

[1] प्रो बिपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृष्ठ सं0– 181।
[2] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृष्ठ सं0– 383।
[3] प्रो बिपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृष्ठ सं0– 183।
[4] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृष्ठ सं0– 389।

1. जी0आई0पी0 रेलवे सिग्नल यूनियन, 1896
2. प्रिन्टर्स एण्ड कम्पोजीटर्स लीग कलकत्ता, 1906
3. चटकल यूनियन बंगाल, 1906
4. सीमेन्स अन्जुमन कलकत्ता, 1908
5. मुम्बई कामगार हितवर्धनी सभा, 1910
6. सोसल सर्विस लीग मुम्बई, 1910

नवम्बर 1917 में रूस में लेनिन के नेतृत्व में हुई सफल बोल्सविक क्रांति ने विश्व के मजदूरों में अभूतपूर्व उत्साह एवं उमंग पैदा किया। भारत में भी श्रमिक वर्ग में नई अंगड़ाइयों आनी शुरू हुई और बड़े पैमाने पर हड़ताल हुए और उनके संगठन स्थापित हुए। कुछ महत्वपूर्ण संगठनों की सूची इस प्रकार है।[1]

1. प्रेस इम्पलाइज एसोसियेशन कोलकता, 1919
2. एन0 डब्लू0 रेलवे यूनियन, 1919
3. केमिकल वर्क्स यूनियन, 1919
4. कानुपर मजूदर सभा, 1919
5. जमशेदपुर लेवर एसोसियेशन, 1920
6. अहमदाबाद वर्क्स यूनियन, 1920
7. आल इण्डिया पोस्टल एण्ड आर0एम0एस0 यूनियन, 1920
8. वर्मा लेबर एसोसियेशन, 1920,
9. मुम्बई पोर्ट ट्रस्ट इम्पलाइज यूनियन, 1920
10. बंगाल मेरीनर्स यूनियन, 1920

अनेक संगठनो के बावजूद एक अखिलभारतीय संगठन की आवश्यकता हुई और अंततः 31 अक्टूबर 1920 को मुम्बई में लाला लाजपत राय की अध्यक्षता में आल

---

[1] वही, पृष्ठ सं0– 396–397।

इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस (A.I.T.U.C.- इंटक) की स्थापना हुई। लाला लाजपत राय पहले अध्यक्ष हुए तथा चमनलाल पहले महामंत्री बने।

असहयोग आन्दोलन (1920–1922) में श्रमिकों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। मुंबई, कानपुर, सोलापुर तथा बंगाल सहित देश के अनेक भागों में श्रमिक हड़तालें हुईं। वामपंथ के उदय के पश्चात् श्रमिक संघों का झुकाव वामपंथ की ओर हो गया। ब्रिटिश सरकार ने 1926 में व्यापार संघ अधिनियम (ट्रेड यूनियन एक्ट) पारित किया, जिसमें यह स्वीकार किया गया कि हड़ताल संघों का वैध अधिकार है परन्तु उस पर कुछ प्रतिबन्ध लगा दिया गया था लेकिन यह अधिकार श्रमिक संघों को अधिक समय तक प्राप्त नहीं हो सका।

बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर ने भारतीय राजनीति में प्रवेश करते ही श्रमिक हितों के लिए लम्बे संघर्ष की रूप–रेखा तैयार की। 1926ई0 में मुंबई विधान परिषद का सदस्य मनोनीत होते ही बाबा साहेब ने श्रमिक हितों के लिए भरपूर प्रयास आरम्भ किया।

प्रसूति लाभ विधेयक

मुंबई विधान परिषद में 28 जुलाई 1928 को महिला श्रमिकों के लिए प्रसूति लाभ विधेयक पेश किया गया। बाबा साहेब ने इस विधेयक का जोरदार समर्थन किया। विधेयक पर चर्चा में हिस्सा लेते हुए बाबा साहेब ने कहा कि "मुझे पूरा विश्वास है कि सभी सदस्य इस बात से सहमत होंगे कि माँ के लिए प्रसव पूर्व दशाएं तथा प्रसव के पश्चात् बच्चों के लालन–पालन की समस्या विधेयक का महत्वपूर्ण हिंस्सा है। मै नहीं समझता कि कोई इस सिद्धान्त के विरुद्ध होगा। महोदय, अतएव मेरा यह विश्वास है कि यह राष्ट्रीय हित में होगा कि जच्चा को कुछ समय के लिए प्रसव पूर्व और कुछ समय के लिए प्रसव के पश्चात् विश्राम दिया जाय। महोदय,

इसलिए मैं स्वीकार करता हूँ कि अधिकांश जिम्मेदारी सरकार को ही निभानी होगी। मैं इस सच्चाई को स्वीकार करने को तैयार हूँ क्योंकि समान्य जनता के कल्याण के लिए चिन्ता करना बुनियादी तौर पर सरकार की जिम्मेदारी है। प्रत्येक देश में जहाँ प्रसूति लाभ दिये जाते हैं वहाँ प्रसूति लाभ के लिए सरकार कुछ राशि व्यय करती है। महोदय, लेकिन ऐसा होते हुए भी मैं स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हूँ कि महिला का कोई नियोक्ता प्रसूत की अवस्था में महिला के हितों की रक्षा के लिए अपनी जिम्मेदारी से पूरी तरह मुक्त होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इसका कारण यह है कि नियोक्ता महिला को किसी उद्योग विशेष में इसलिए काम पर लगाता है क्योंकि उसको पुरुष की अपेक्षा महिला को काम पर लगाने से अधिक लाभ होता है। इस कारण यह कहना पूर्णतः उचित है कि इस प्रकार का लाभ प्रदान करने के लिए नियोक्ता की कुछ सीमा तक जिम्मेदारी बनती है। खासतौर पर उस समय जबकि उसे पुरुषों को काम पर लगाने पर मिलने वाले मुनाफे की तुलना में महिलाओं को रखने से अधिक लाभ होता है। अतएव मेरा यह कहना है कि यद्यपि प्रसूति लाभ के मामलें में निश्चित रूप से कुछ जिम्मेदारी सरकार को सौंपी गई तथा आप मेरे विचार से यदि इस हालत में विधेयक में नियोक्ता को भी कुछ दायित्व सौंपा गया है तो उससे विधेयक पूरी तरह गलत नहीं हो जाता। अतएव इस कारण मैं विधेयक का समर्थन करता हूँ।''[1] बाबा साहेब के पाण्डित्यपूर्ण तर्कों के कारण अन्ततः यह विधेयक पारित कर दिया गया।

मुबई कपड़ा मिल हड़ताल

1928 में मुबई के कपड़ा मिलों में जोरदार हड़ताल हुई। बाबा साहेब ने इसका विरोध किया।[2] इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं कि बाबा साहेब हड़ताल के विरोधी थे वास्तव में वह हड़ताल के प्रबल समर्थक थे और उसे स्वाधीनता का पर्याय मानते थे। बाबा साहेब का विचार था कि श्रमिक आन्दोलन कम्युनिस्टों तथा कांग्रेस के प्रभाव के

---

[1] सुभाषचन्द्र, अम्बेडकर से दोस्ती समता और मुक्ति, पृष्ठ सं0– 164–165।

[2] डा0 विष्णु दत्त नागर एवं डा0 बल्लभ पंत नागर, डा0 अम्बेडकर के आर्थिक विचार और नीतियाँ, पृष्ठ सं0– 112।

कारण भ्रमित हो गया है। साम्यवादियों और हड़ताल के बीच का सम्बन्ध न टूटने योग्य जुडवा है। बाबा साहेब को यह पूर्ण विश्वास हो गया था कि श्रमिक आन्दोलन भ्रमित होकर श्रमिकों के आर्थिक कल्याण को अपना मुख्य उद्देश्य मानने के स्थान पर राजनैतिक क्रांति को अपना मुख्य उद्देश्य मान रहा है। अब हड़ताल की शक्ति का उपयोग श्रमिक हितों के स्थान पर राजनैतिक उद्देश्यों के लिए किया जा रहा है।[1] बाबा साहेब का निष्कर्ष था कि कि साम्यवादियों और कांग्रेस पार्टी ने अपने हितों की पूर्ति के लिए श्रमिक आन्दोलन को गलत मार्ग पर मोड़ दिया है। कम्युनिस्टों के साथ बाबा साहेब का संबंध रखना कभी संभव नहीं हुआ वे कम्यूनिष्टों के कट्टर दुश्मन थे। उनका यह मत था कि कम्युनिस्ट अपने राजनैतिक उद्देश्य के लिए मजदूरों का शोषण करते हैं। कम्युनिस्ट किसी भी समस्या का व्यवहारिक पक्ष कभी नहीं देखता। बाबा साहेब का मत था कि विश्व में दो ही वर्ग हैं– गरीब और अमीर, शोषित और शोषक तीसरा मध्यम वर्ग है लेकिन वह बहुत ही छोटा है किसानों और मजदूरों को अपने दरिद्रता के कारणों पर विचार विमर्श करना चाहिए। निःसन्देह उनकी दरिद्रता का कारण उनका शोषण करने वालों की अमीरी में है। उनकी समस्याओं का एक ही समाधान है वह है कि वे जाति धर्म वर्ग के निरपेक्ष भाव से ऊपर उठकर संगठित होकर अपना वास्तविक कल्याण करने वाले नेता चुनकर विधान मण्डलों में भेजें। अगर श्रमिक इस प्रकार के प्रतिनिधि चुन सके तो उन्हें आवास और वस्त्र का लाभ होगा तथा वे कभी भूखे और कंगाल नहीं होगे।[2]

प्रथम गोल मेज सम्मेलन

लंदन में (1930 में) सम्पन्न हुए प्रथम गोल मेज सम्मेलन में भाग लेते हुए बाबा साहेब ने जोरदार ढंग से श्रमिक हितों के लिए आवाज उठाई। "गोल मेज सम्मेलन में बोलते हुए बाबा साहेब ने कहा– यह वह सरकार है जो यह जानती है कि पूँजीपतियों ने मजदूरों को अच्छी तनख्वाह तथा काम की अच्छी स्थितियों का निषेध कर रखा है।

---

[1] वही, पृष्ठ सं0– 112।
[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 282–287।

वह यह भी अनुभव करती है कि जमीदार जनता का खून चूस रहे हैं और फिर भी उनसे उन सामाजिक बुराइयों का अंत नहीं किया जिन्होंने पद्दलितों के जीवन को वर्षों से धूमिल कर रखा है। यद्यपि सरकार के पास उन बुराइयों को समाप्त करने की कानूनी शक्तियाँ हैं तथापि उसने सामाजिक एवं आर्थिक जीवन की वर्तमान संहिता को नहीं बदला क्योंकि उसे भय था कि वैसा करने से उसके प्रति वरोध पैदा हागा।"[1]

कांग्रेस द्वारा श्रमिक हितों के लिए किए जा रहे संघर्ष के सम्बन्ध में बाबा साहेब ने 17 दिसम्बर 1937 को दलित वर्ग द्वारा मैसूर में आयोजित जिला परिषद के अध्यक्ष पद से भाषण करते हुए कहा कि मेरा यह ठोस मत बना है कि गाँधी जी के हाथों मजदूर और दलित वर्ग का कभी हित नहीं होगा। अगर कांग्रेस क्रांतिकारी संस्था होती तो मैं कांग्रेस में गया होता, लेकिन मैं आपसे विश्वास के साथ कहता हूँ कि कांग्रेस क्रांतिकारी संस्था नहीं है।.... जब तक उत्पादन के साधन थोड़े से व्यक्ति अपने स्वार्थ के लिए कार्यान्वित कर रहे हैं, तब तक साधारण मनुष्य की उन्नति होने की आशा नहीं है। गाँधीवाद के तत्व के अनुसार अगर देखा जाये तो किसान खेत का तीसरा बैल ही होगा। हल के दो बैलों के साथ वह भी एक वैसा ही निर्बुद्धि और कष्टमय जीवन का प्रतीक सिद्ध होगा।[2]

बाबा साहेब ने श्रमिकों के वास्तविक हितों के लिए संघर्ष करने के लिए 7 अगस्त 1936 में इण्डिपेण्डेण्ट लेवर पार्टी (स्वतन्त्र मजदूर पार्टी) की स्थापना की। बाबा साहेब इस पार्टी के अध्यक्ष और कोषाध्यक्ष थे। म0बा0 समर्थ को मुख्य कार्यवाहक चुना गया। कमलाकांत मित्रे को अस्थायी संघटक चुना गया। स्वतन्त्र भजदूर दल का उद्देश्य और कार्यक्रम प्रस्तुत करने वाला एक विस्तृत घोषणा पत्र जारी किया गया। इसमें भूमिहीन कृषकों, गरीब काश्तकारों, किसानों और मजदूरों की अत्यावश्यक जरूरतें आर शिकायतें प्रस्तुत की थी। इसमें यह घोषणा की गई कि हमारे दल का यह ठोस मत हुआ है कि खेती की भूमि के टुकड़े करना और उस पर बढ़ती हुई जनसंख्या का

---

[1] डा0 अम्बेडकर, दस स्पोक, खण्ड–1, पृष्ठ सं0– 22।

[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन–चरित्र, पृष्ठ सं0– 282।

बोझ बढ़ना, ये सही अर्थों में किसानों की दरिद्रता का मुख्य कारण है। इसका समाधान यह है कि पुराने कुटीर उद्योग आरम्भ किए जाए और नये उद्योग बड़े पैमाने पर खोले जाए। जनता की उत्पादन शक्ति और उसकी कार्य क्षमता में बृद्धि हो। तकनीकी शिक्षा का विकास हो। आवश्यक उद्योगों का स्वामित्व और नियंत्रण सरकार अपने हाथ में ले।

काश्तकारों को जमीदारों, तालुकेदारों के शोषण से मुक्त किया जाए। घोषणा पत्र में श्रमिकों के हितों के लिए कानून बनाने तथा उनके शोषण को खत्म करने की आवश्यकता पर बल दिया गया था। इसके अतिरिक्त श्रमिकों के काम के घण्टे कम करना, वेतन में वृद्धि करना, अच्दे और सस्ते आवासों की व्यवस्था करना, अवकाश देना आदि के लिए भी कानून बनाने का प्रयास किया जाएगा।

बेरोजगारी को समाप्त करने के लिए औद्योगीकरण तीव्र किया जाए तथा सार्वजनिक निर्माण कार्य किए जाएं।

ग्रामीण विकास की योजना बनायी जाए, जिसके अन्तर्गत गावों में सड़क, बिजली, नाली, पुस्तकालय, कुओं, तालाबों आदि का विकास किया जाए।

घोषणा पत्र में सामाजिक क्षेत्र में समाज सुधार के क्षेत्र में काय्ररत संस्थाओं को सहयोग देने एवं विकास करने की आवश्यकता पर बल दिया गया था।

बाबा साहेब की इस इण्डिपेण्डेण्ट लेवर पार्टी के उद्देश्यों को स्पष्ट करने वाले घोषणा पत्र के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि शोषित, दलित वर्ग के हितों का संरक्षण और उनके कष्टों को दूर करना मूल उद्देश्य था। इस घोषणा पत्र पर एक अंग्रेजी दैनिक समाचार पत्र ने इस प्रकार टिप्पणी की थी– "यद्यपि हमारा मत है कि राजनैतिक दलों की संख्या में वृद्धि न हो फिर भी अम्बेडकर द्वारा स्थापित नया दल इस प्रान्त का जीवन समृद्धि करने और देश की भवितष्यता में मोड़ उपस्थित करने की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण होगा।"[1]

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन--चरित्र, पृष्ठ सं0– 272

बाबा साहेब 1935 के भारत शासन अधिनियम के तहत होने वाले चुनावों की तैयारी में पूरी तरह समर्पित हो गए। एक बार कुछ लोंगों ने बाबा साहेब से सवाल किया कि उन्होंने नई पार्टी क्यों बनायी है? इस पर बाबा साहेब ने उत्तर दिया कि प्रान्तीय लेजिस्लेटिव असेम्बली में 175 सीटों में से केवल 15 सीटें सुरक्षित हैं। 15 सदस्यों की संख्या विरोध करने के लिए अपर्याप्त है।[1] बम्बई प्रान्त के सभी जिलों में बाबा साहेब ने व्यापक चुनाव प्रचार आरम्भ किया। नासिक, अहमदनगर, खानदेश, सोलापुर, सराय आदि स्थानों पर बाबा साहेब ने छोटी–छोटी सभाएं की। उन्होंने गर्व से कहा कि–"मुझमें सैकड़ों स्नातकोत्तरों की बुद्धि और शक्ति होने से विधान सभा में अपने दल के सदस्यों का मैं उचित मार्ग दर्शन कर सकता हूँ।"[2]

बंबई विधान सभा में कांग्रेस पार्टी की सरकार बनी और और खेर मुख्यमंत्री बने। बाबा साहेब ने अपनी पार्टी के घोषणा पत्र पर ईमानदारी के साथ कार्य आरम्भ किया। सबसे पहले उन्होंने किसानों की समस्याओं को लेकर आन्दोलन किया और इसके लिए कोंकण की खोती का उन्मूलन करने के लिए उन्होंने बंबई विधान सभा में 17 सितम्बर 1937 को एक विधेयक पेश किया। इस विधेयक का प्रमुख उद्देश्य था–कि खोती उन्मूलन होकर काश्तकारों को भूमि का स्वामित्व मिले।[3] विधेयक के समर्थन में बाबा साहेब ने किसानों से बड़ी संख्या में बंबई विधान सभा पहुँचने का आह्वान किया। बड़ी संख्या में किसान ठाणे, रायगढ़, रत्नगिरि, सतारा, नासिक आदि जिलों से बंबई आए। हजारों की संख्या में किसान बाबा साहेब के नेतृत्व में तीन मोर्चा बनाकर विधान सभा घेरने पहुँचे। सम्पूर्ण वातावरण इस गगन भेदी नारोंसे गूँज रहा था–

खोती का विना हो
अम्बेडकर के विधेयक का साथ दो।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन–चरित्र, पृष्ठ सं0– 272
[2] राजेन्द्र मोहन, डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृष्ठ सं0–96।
[3] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 277।

अन्ततः 20 सदस्यी प्रतिनिधि मंडल जिसमें शामराव पेकलेकर, इंदुलाल याज्ञिक, दत्तोपंतराउट, सी0चि0 जोशी आदि सम्मिलित थे, बाबा साहेब की अध्यक्षता में मुख्यमंत्री से मुलाकात की प्रतिनिधि मंडल ने वार्ता के दौरान ये प्रमुख मांगे रखीं–

1. कृषक मजदूरों का न्यूनतम वेतन निर्धारित किया जाए।
2. खोती व्यवस्था को तत्काल नष्ट किया जाए। सरकार चाहे तो स्वामियों को क्षति पूर्ति दे या न दे।
3. छोटो किसानों के लिए नहर के पानी की दरें आधी की जाएं।

मुख्यमंत्री खरे ने प्रतिनिधि मंडल को आश्वासन दिया कि उनकी सरकार सभी मांगों पर सहानुभूति पूर्वक विचार करेगी।

बाबा साहेब ने रेलवे मजदूरों के कल्याण के लिए भी संघर्ष आरम्भ किया। उन्होंने 12 फरवरी 1938 को मानगढ़ में रेलवे मजदूरों की एक बड़ी सभा आयोजित की, जिसमें 20 हजार रेलवे मजदूर सम्मिलित हुए। बाबा साहेब ने अपने भाषण में कहा कि किशोरावस्था में मैंने अपने रिश्तेदारों के खाने के डिब्बे पहुँचानें का काम किया था और इसलिए मजदूरों के समस्याओं के विषय में मुझे सूक्ष्म जानकारी है।.... आज तक यह माना जाता था कि मैं देश का दुश्मन हूँ। अब यह कहा जाता है कि मैं मजदूरों का दुश्मन हूँ। वास्तव में ब्राह्मणों को मिली हुई सत्ता, उनके विशेष अधिकार व कल्याण के रूप में नहीं करता। उस अर्थ में मैं ब्राह्मणशाही शब्द का प्रयोग नहीं करता। मेरे मतानुसार स्वतन्त्रता, समानता और बंधुत्व का अभाव ही ब्राह्मणशाही हैं। ब्राह्मणशाही के उत्पादक ब्राह्मण ही हैं, तथापि उसकी सीमा ब्राह्मण समाज तक ही सीमित नहीं हैं।....... मजदूरों में यदि वास्तविक एकता का निर्माण करना है तो उन्हें ब्राह्मणशाही का उन्मूलन करना चाहिए तभी मजदूरों में सच्ची एकता स्थापित होगी।[1]

बंबई विधान सभा में सितम्बर 1938 में औद्योगिक विवाद विधेयक पेश किया गया, जिसका बाबा साहेब तथा जमनादास मेथा ने व्यापक विरोध किया। 5 सितम्बर

---

[1] The Times of India, 14-Februry-1938.

1938 को बंबई विधान सभा में इस विधेयक पर बहस में हिस्सा लेते हुए बाबा साहेब ने[1] हड़ताल के अधिकार का समर्थन करते हुए इसे स्वतन्त्रता का पर्याय कहा। बाबा साहेब ने चर्चा में हिस्सा लेते हुए कहा सर्व प्रथम मैं यह स्पष्ट कर दूँ कि हम 'हड़ताल' शब्द से क्या समझते हैं? सामान्य प्रचलित भाषा में हड़ताल शब्द सेवा अनुबन्ध के उलंघन के सिवाय कुछ नही हैं। मैं अगला प्रश्न यह पूँछना चाहता हूँ कि इस सेवा के उलंघन पर कानून द्वारा क्या विचार किया जाता है?। क्या भारतीय कानून हड़ताल के अधिकार को मान्यता देता है या नहीं? और अगर वह देता है तो किस रूप में और अगर वह दण्ड देता है तो किस रूप में?......... यह केवल दीवानी किस्म का मामला है, यह अपराध नहीं है।.... भारतीय विधान मण्डल सेवा के अनुबंध के उलंघन को इसलिए अपराध नहीं मानता क्योंकि वह सोचता है कि इसको अपराध मानने का अर्थ है किसी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध कार्य करने के लिए बाध्य करना और उसको दास बनाना। इसलिए मेरा दावा है कि हड़ताल पर प्रतिबन्ध लगाना एक मजदूर को दास बनाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। दासता क्या है? संयुक्त राज्य के संविधान में इसे इस तरह परिभाषित किया गया है कि दासता कुछ नहीं बल्कि पराधीनता है। यह नैतिकता के विरुद्ध है, यह विधि शास्त्र के विरुद्ध है।"

बाबा साहेब ने विधेयक पर चर्चा जारी रखी और सदन को बताया कि "हड़ताल का अधिकार सिर्फ स्वतन्त्रता के अधिकार का दूसरा नाम है......। हड़ताल मजदूरों की स्थितियों को बेहतर बनाने का सरल संयोजन है, और वे सामान्य विधि से अवैधानिक नहीं है।"[2] बाबा साहेब ने इस विधेयक को वास्तव में मजदूरों की नागरिक स्वतन्त्रता हनन विधेयक कहा। उन्होंने कहा कि जो सरकार यह दावा करती है कि वह मजदूरों के वोटों पर चुनी गई है, उस सरकार ने चुनाव के समय मजदूरों को दिए गए आश्वासनों पर प्रतिबन्ध लगा दिया है। जो लोकतनत्र मजदूरों को गुलामी में डाल रहा है, वह कैसा लोकतन्त्र है।

---

[1] सुभाषचन्द्र, अम्बेडकर से दोस्ती–समता और मुक्ति, पृष्ठ सं0– 177–182।
[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृष्ठ सं0–298

बाबा साहेब ने इसे काला कानून कह कर न केवल असेम्बली में इसका जोरदार विरोध किया अपितु सदन के बाहर भी इसके खिलाफ जबर्दस्त जनमत तैयार किया। बाबा साहेब और उनकी पार्टी के साथ इस मुद्दे पर सहयोग के लिए अनेक मजदूर दल सामने आए। 7 नवम्बर 1938 को एक दिन की सांकेतिक हड़ताल इसके विरोध में हुई। हड़ताल की पूर्व संध्या (6 नवम्बर) पर 80 हजार मजदूरों की एक विशाल सभा मजदूर मैदान पर जमुनादास मेधा की अध्यक्षता में हुई। इस सभा मे बाबा साहेब तथा इंदु लाल याज्ञिक ने अपने जोरदार भाषण में इस विधेयक का विरोध किया और उसे श्रमिक हितों के लिए काला कानून बताया।

7 नवम्बर 1938 को हड़ताल के दिन बाबा साहेब तथा जमुनादास मेधा ने साथ–साथ सम्पूर्ण मुंबई के हड़ताल प्रभावित क्षेत्रों का दौरा किया। हड़ताल के दौरान परेल में एक दुःखद घटना हुई। एक व्यक्ति ने गृहमंत्री के0एम0मुंशी की गाड़ी पर हमला किया, जिसमें गाड़ी के कांच टूट गये। मुंशी के साथ गाड़ी में सरदार पटेल, मथुरादास त्रिकमजी और भगवान जी अर्जुन भी थे, लेकिन किसी को भी चोंट नहीं आई। जिससे क्षुब्ध होकर पुलिस ने वर्वर बल प्रयोग किया और बड़ी संख्या में गिरफ्तारिया कीं।[1]

हड़ताल पूरे बंबई प्रान्त में फैल गई और इसी के साथ व्यापक स्तर पर जलूस और प्रदर्शन आरम्भ हुए। प्रदर्शनकारियों ने गृहमंत्री तथा इस काले कानून का पुतला फूँका। सरदार पटेल ने हड़ताली नेताओं से हड़ताल समाप्त करने का निवेदन किया तथा यह भी आरोप लगाया कि हड़ताल नेताओं ने जबरदस्ती का मार्ग स्वीकार किया है। इस पर बाबा साहेब ने टिप्पणी की कि पटेल का निवेदन अथ से इति तक असत्य से बुना हुआ जाल है।[2] तत्कालीन समाचार पत्रों ने जो अधिकांशतः कांग्रेसी तथा पूँजीवादी थे, हड़ताल के प्रति दुष्प्रचार आरम्भ किया।

इस हड़ताल का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव यह रहा कि श्रमिक वर्ग में बाबा साहेब की लोकप्रियता बढ़ी। प्रथम श्रेंणी के श्रमिक नेता के रूप में बाबा साहेब की

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृष्ठ सं0–298, 300।
[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृष्ठ सं0– 306।

ख्याति बनी। प्रसिद्ध किसान नेता स्वामी सहजानन्द ने दिसम्बर 1938 को बाबा साहेब से उनके मुंबई स्थित आवास पर मुलाकात की। स्वामी जी ने बाबा साहेब से आग्रह किया कि वे ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध एकता के लिए कांग्रेस से सहयोग करें। बाबा साहेब ने कहा कि यदि कांग्रेस ने ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध युद्ध का आह्वान किया होता तो मैं उस दल में मिल जाता, लेकिन यथार्थ वैसा नहीं है। कांग्रेस दल अपने हाथ में आये संवैधानिक शासन तंत्र को पूँजीवादी और निरन्तर स्वार्थ में लिप्त लोगों के कल्याण के लिए ही कार्यान्वित कर रहा है। उसने किसानों–मजदूरों के हितों की बलि दे दी है। इस तरह के संघर्ष में मैं सम्मिलित नहीं हो सकता।[1]

द्वितीय विश्व युद्ध आरम्भ होने पर ब्रिटिश सरकार ने भारतीयों का अधिकाधिक सहयोग प्राप्त करने के लिए वाइसराय की कौंसिल का विस्तार कर भारतीयों को सम्मिलित करने का निर्णय लिया। जुलाई 1942 में यह विस्तार किया गया। बाबा साहेब ने 20 जुलाई 1942 को वाइसराय की कौसिल में श्रम सदस्य के रूप में कार्यभार ग्रहण किया। उन्हें श्रम–विभाग का कार्य सौंपा गया।[2] श्रम सदस्य की हैसियत से बाबा साहेब ने श्रमिकों, कृषकों के हितों के लिए अनेक ऐतिहासिक कार्य किया। बाबा साहेब ने 7 अगस्त 1942 को नई दिल्ली में हुए संयुक्त श्रम अधिवेशन में भारत सरकार के श्रम सदस्य की हैसियत से भाग लेकर श्रमिक हितों पर विस्तार से चर्चा की।3 बाबा साहेब ने कहा[2]– जैसा कि आप जानते हैं कि अब तक भारत सरकार के तत्वाधान में नई दिल्ली में तीन श्रम अधिवेशन हो चुके हैं। इनमें से प्रथम 22–23 जनवरी 1940 को, दूसरा 27–28 जनवरी 1941 को और तीसरा 3–31 जनवरी 1942 को हुआ था। इस श्रृंखला में वर्तमान अधिवेशन चौथा हैं अन्य अधिवेशनों की अपेक्षा इस अधिवेशन की प्रमुख विशेषता इसके स्थायित्व में निहित है।

---

[1] जनता, 31 दिसम्बर 1938।

[2] खैर मौड़, सी0वी0, डा0 भीमराव अम्बडकर (मराठी जीवन चरित्र), खण्ड–9, पृष्ठ सं0–113।

[2] इंडियन इन्फार्मेशन, सितम्बर 15, 1942।

श्रम संबंधी अधिवेशनों के इतिहास में ऐसा पहली बार हुआ कि संयुक्त अधिवेशन में नियोजकों और कर्मचारियों को आमने–सामने ला कर खड़ा किया गया है।''

बाबा साहेब ने आगे बताया कि श्रम कानूनों में एक रूपता लाना एक प्रमुख उद्देश्य है। इस सम्मेलन के तीन प्रमुख उद्देश्य हैं–

1. श्रम सम्बन्धी विधानों में एकरूपता को बढ़ावा देना।
2. औद्योगिक विवादों के निपटारे की प्रक्रिया को निर्धारित करना।
3. कर्मचारियों और नियोजकों के बीच के अखिल भारतीय महत्व के मामलों पर विचार–विमर्श करना।

इस सम्मेलन में बाबा साहेब ने सभी प्रतिनिधियों से निम्नलिखित मुद्द पर अपना मत देने का आग्रह किया–

1. स्थायी संगठन के रूप में एक ऐसे स्थायी श्रमिक सम्मेलन की स्थापना की आवश्यकता है जिसकी कम से कम एक वर्ष में एक बार बैठक हो।
2. इस सम्मेलन के लिए एक ऐसी स्थायी समिति के गठन की आवश्यकता है जो सरकार के कहने पर तत्काल अपनी बैठक बुलाये और सरकार द्वारा रखे गये मुददों पर अपनी सलाह दे।
3. इन निकायों के गठन की प्रक्रिया को सामान्य रूप से परिभाषित करनां।

बाबा साहेब ने और स्पष्ट किया कि हमारा विचार दो और निकायों की स्थापना करने का है :–

1. खुला सम्मेलन 2. स्थायी सलाहकार समिति।

खुला समेलन में केन्द्रीय सरकार, प्रान्तों, राज्यों, कर्मचारियों और नियोजकों के प्रतिनिधि होंगे।

स्थायी सलाहकार समिति मे प्रतिनिधित्व का बँटवारा निम्नलिखित रूप में होगा– 1. भारत सरकार के प्रतिनिधि, 2. प्रान्तों के प्रतिनिधि, 3. राज्यों के प्रतिनिधि,

4. नियोजकों के प्रतिनिधि एवं 5 कर्मचारियों के प्रतिनिधि। केन्द्र सरकार का श्रमप्रतिनिधि इसका अध्यक्ष होगा।[1]

इंटक के अध्यक्ष श्री वी0वी0 गिरि ने सम्मेलन के गठन का स्वागत किया। भारतीय श्रम संगठन के अध्यक्ष जमुनादास मेहता ने कहा कि सम्मेलन के जरिये शांति सुनिश्चित होनी चाहिए और उद्योगों में इस संकट की घड़ी में स्थिरता आनी चाहिए।[2]

भारतीय सैनिक युद्ध जीतने के लिए क्यों दृढ संकल्प हैं?

बाबा साहेब ने द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान आकाशवाणी के मुंबई केन्द्र से 'भारतीय श्रमिक युद्ध जीतने के लिए क्यों दृढ़ संकल्प हैं? विषय पर 13 नवम्बर 1942 को बोलते हुए कहा[3]– यहाँ उन लोगों द्वारा वार्ता की एक श्रृंखला प्रस्तुत की जायेगी जो श्रमिकों से जुड़े हैं और उसमें रुचि रखते हैं। इस श्रृंखला में आज रात यह मेरी प्रथन वार्ता है। मेरे विषय का सम्बन्ध युद्ध के प्रति भारतीय श्रमिकों के लगाव से है। भारत में युद्ध के प्रति अचानक उत्पन्न हुई असहयोग और विरोध की भावना हम देख रहे हैं। इसके बावजूद श्रमिक सदस्य सक्रिय रूप से युद्ध प्रयासों को अंजाम देने में लगा हुआ है।..... श्रमिक स्वतन्त्रता, समानता और बंधुता चाहता है। स्वतन्त्रता में समान अवसर का अधिकार भी शामिल है और जिसमें राज्य का यह कर्तव्य होगा कि वह प्रत्येक व्यक्ति को उसकी आवश्यकता के अनुसार आगे बढ़ने की पूरी सुविधा प्रदान करे।

श्रमिक समानता चाहता है। समानता से श्रमिक का अभिप्राय सिविल सेवा, काराधन, व्यवसाय और उद्योग में हर प्रकार के विशेषाधिकार समाप्त करना।

श्रमिक, बन्धुता या भाईचारा चाहता हैं। भाईचारे से उसका अर्थ है कि भाईचारे के सभी मानव उद्देश्य जो श्रमिकों को ओर राष्ट्रों को पृथ्वी पर मनुष्य मात्र के प्रति शांति और सद्भावना के लक्ष्य की ओर ले जाते हों।

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बडकर, सम्पूर्ण वांडमय, भाग–18, पृष्ठ सं0– 7–8।
[2] वही, पृष्ठ सं0– 9।
[3] इंडियन इनफार्मेशिन, जनवरी 1, 1943, पृष्ठ सं0– 16–19।

ये हैं श्रमिकों के आदर्श। इन्हीं से नई व्यवस्था का स्वरूप बनता है। इनकी स्थापना से ही मानवता विनाश से बच सकती है। यदि मित्र राष्ट्र युद्ध में हार जाते हैं तो यह नई व्यवस्था कैसे स्थापित होगी।... यदि मित्र राष्ट्र विफल हो जाते हैं तो निश्चय ही नई व्यवस्था कायम होगी। किन्तु यह नई व्यवस्था नाजी व्यवस्था ही होगी। यह व्यवस्था ऐसी होगी जिसमें स्वतन्त्र दवा दी जायेगी, समानता नहीं होगी और भाईचारे को घातक सिद्धान्त मानकर समाप्त कर दिया जायेगा।

नाजी दर्शन भारतीयों की स्वाधीनता के लिए प्रत्यक्ष खतरा है। यह एक ऐसा कारण है जिसके लिए भारतीयों को युद्ध में नाजीवाद से लड़ने के लिए आगे आना चाहिए।

वाइसराय के कौंसिल के श्रम सदस्य के रूप में बाबा साहेब ने निरन्तर श्रमिक हितों के लिए संघर्ष किया। सरकार ने 21 जनवरी 1943 को श्रमिकों के लिए मंहगाई भत्ते की घोषणा की जिसे बाबा साहेब ने अपर्याप्त बताया और वृद्धि की मांग की।[1] बाबा साहेब ने चर्चा में भाग लेते हुए कहा– भारत सरकार घोषित मंहगाई भत्ता कम और अपर्याप्त है।

केन्द्रीय विधान मंडल में 20 मार्च 1943 को श्रम विभाग की स्थायी समिति के लिए सदस्यों का निर्वाचन से सम्बन्धित प्रस्ताव पेश किया गया। श्रम सदस्य डा0 अम्बेडकर ने प्रस्ताव पेश करते हुए कहा कि यह सभा ऐसी रीति से जो माननीय अध्यक्ष निर्दिष्ट करे, स्थायी समिति में कार्य करने के लिए 3 गैर सरकारी सदस्य निर्वाचित करे जो उन विषयों पर जिनसे श्रम विभाग संबंधित है, सलाह दे।[2] विचार–विमर्श के बाद स्थायी समिति का गठन हुआ।

---

[1] विधान सभा वाद–विवाद (केन्द्रीय), खण्ड–1, 12.02.1943, पृष्ठ सं0–443, 446।
[2] विधान सभा वाद–विवाद (केन्द्रीय) खण्ड–2, पृष्ठ सं0– 1278–1280।

भारतीय चाय नियंत्रण (संशोधन) विधेयक

23 मार्च 1943 को यह विधेयक केन्द्रीय विधान सभा में प्रस्तुत हुआ, जिस पर चर्चा करते हुए बाबा साहेब ने विभिन्न मुद्दों पर विस्तार से प्रकाश डाला।[1] जोशी महोदय ने श्रम समस्याओं संबंधित रायल कमीशन की रिपोर्ट को 12 वर्ष बाद भी लागू न हो पाने के लिए सरकार को कटघरे में खड़ा किया। बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि सरकार पर दोषारोपण करना न्यायसंगत नहीं है। वास्तव में भारत सरकार ने इस दिशा में कदम भी उठाया था। 1938 में ज़ब चाय नियंत्रण अधिनियम को उसकी अवधि बढ़ाने के लिए विधान मंडल में पेश किया गया तो भारत सरकार ने पहल करके चाय बागान उद्योग के समक्ष प्रस्ताव रखा कि वह बागान श्रमिकों की दशा की जाँच पड़ताल करे।

युद्ध आहत (मुआवजा बीमा) विधेयक

31 मार्च 1943 को यह विधेयक केन्द्रीय विधान सभा में रखा गया। श्रम सदस्य बाबा साहेब ने प्रस्ताव किया कि युद्ध से आहत होने वाले कामगारों को मुआवजा देने का दायित्व नियोजकों पर अधिरोपित करने और ऐसे दायित्व के लिए नियोजकों द्वारा बीमा कराने का उपलब्ध करने वाला विधेयक एक प्रवर समिति को निर्दिष्ट किया जाय।[2] बाबा साहेब ने इसके समर्थन में प्रबल तर्क प्रस्तुत किया और अंततः विधेयक पारित हो गया।

खदान प्रसूति लाभ (संशोधन) विधेयक

29 जुलाई 1943 को खदान प्रसूति लाभ संशोधन विधेयक को पेश किया गया। बाबा साहेब के प्रयास से यह विधेयक पारित हो सका।

---

[1] वही, पृष्ठ सं0– 1370–1373।
[2] विधान सभा वाद–विवाद (केन्द्रीय) खण्ड–2, पृष्ठ सं0– 1649–1651।

पूर्ण श्रम सम्मेलन का प्रथम सत्र

6 सितम्बर 1943 को नई दिल्ली में पूर्ण श्रम सम्मेलन के प्रथम सत्र में बाबा साहेब ने अध्यक्षता करते हुए भाषण दिया– मैं पूर्ण श्रम सम्मेलन के प्रथम सत्र में आप सभी का स्वागत करता हूँ। इस सम्मेलन की सूची में 8 विषय सम्मिलित किये गए हैं–

1. कोयला और कच्चेमाल आदि की कमी के कारण अस्वैच्छिक बेरोजगार।
2. सामाजिक सुरक्षा, न्यूनतम मजदूरी।
3. मंहगाई भत्ता निर्धारित करने के सिद्धान्त।
4. बृहद औद्योगिक फर्मों में बंबई औद्योगिक विवाद अधिनियम के अध्याय 5 के उपबन्धों के आधार पर स्थायी आदेशों के लिए उपबंध।
5. पूर्ण सम्मेलन के लिए प्रक्रिया के नियमों को स्वीकार करना।
6. प्रान्तों में त्रिपक्षीय संगठनों का गठन।
7. विधान मंडलों और अन्य निकायों में मजदूरों का प्रतिनिधित्व।
8. भविष्य निधि के लिए आदर्श नियम।

मजदूर और संसदीय लोकतंत्र

8–17 सितम्बर 1943 तक दिल्ली में इंडियन फेडरेशन ऑफ लेवर के तत्वावधान में आयोजित अखिल भारतीय कार्मिक संघ के कार्यकर्ताओं के अध्ययन शिविर के समापन सत्र में बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने मजदूर और संसदीय लोकतंत्र विषय पर अपना बौद्धिक भाषण दिया।[1]

श्रम सदस्य के रूप में कोयला खानों की मात्रा

श्रम सदस्य के रूप में बाबा साहेब ने कोयला खानों की यात्रा कर श्रमिकों की स्थिति का अवलोकन किया। उन्होंने 15 दिसम्बर 1943 को झरिया कोयला खान की

[1] इंण्डियन फेडरेशन ऑफ लेवर, 30 फैज बाजार दिल्ली द्वारा प्रकाशित भाषण, बंबई में श्री आर0टी0 शिंदे द्वारा सौंपी गई प्रति।

यात्रा श्रम सचिव श्री एच0सी0 प्रायर और भारत सरकार के श्रम कल्याण सलाहकार श्री आर0एस0निवंकर के साथ की।[1]

1 जनवरी 1944 को बाबा साहेब धनवाद कोयला खदान पहुँचे। बाबा साहेब को कोयला खान श्रमिकों की दयनीय स्थिति का पूरा–पूरा ज्ञान हुआ। यहीं पर बाबा साहेब श्रमिक बस्ती में भी गये और उनकी गरीबी तथा भुखमरी को, नंगे बच्चों को, गन्दे आवासों को देखा तो उनके भोजन और बच्चों की शिक्षा–दीक्षा का भी अध्ययन किया। वापस लौट कर बाबा साहेब ने श्रमिक हितों के लिए अनेक योजनाऐं आरम्भ करवाईं। 31 जनवरी 1944 को कोयला खदान कल्याण कोष अध्यादेश जारी किया गया जैसे–मजदूरी में वृद्धि की गई महिलाओं के प्रसूति लाभ को बढ़ाया गया आदि। जन स्वास्थ्य और स्वच्छता में सुधार व्यवस्था और मौजूदा सुविधाओं में सुधार किया गया। साथ ही फरवरी 1944 में कोयला खान सुरक्षा (लदान) संशोधित विधेयक पारित किया गया।[2]

मई 1944 को कोयला खान कल्याण कोष संबन्धी परामर्श समिति गठित की गई। इसके अतिरिक्त बाबा साहेब के प्रयासों से नवम्बर 1944 में वेतन भुगतान संशोधन विधेयक, फरवरी 1945 को दामोदर घाटी योजना–कलकत्ता सम्मेलन, मार्च 1945 को कारखाना (दूसरा संशोधन) विधेयक, अप्रैल 1945को खदान प्रसूति लाभ (संशोधन) विधेयक, दिसम्बर 1945 को भारत में औद्योगिक कर्मचारियों के लिए आवास व्यवस्था, फरवरी 1946 में कर्मचारी क्षतिपूर्ति संशोधन विधेयक, फरवरी 1946 में ही भारतीय खान संशोधन विधेयक, फरवरी 1946 में ही कारखाना संशोधन विधेयक, मार्च 1946 में पुनर्वास योजनाएं, मार्च 1946 में ही कर्मचारी कल्याण और सामाजिक सुरक्षा विधेयक, अप्रैल 1946 को अश्रक खान श्रमिक कल्याण कोष विधेयक, अप्रैल 1946 में ही औद्योगिक रोजगार (स्थायी आदेश) विधेयक आदि महत्वपूर्ण कानूनों को पारित करवा कर श्रमिकों के कल्याण का महान कार्य किया। 24 अगस्त 1946 को गवर्नर जनरल की कार्यकारिणी

---

[1] इंडियन इनफार्मेशन, पृष्ठ सं0– 336।

[2] विधान सभा (केन्द्रीय) वाद–विवाद, खण्ड–1, पृष्ठ सं0– 443–446।

परिषद का त्याग–पत्र स्वीकार कर लिया गाय।[1] इस प्रकार बाबा साहेब का श्रम मंत्री के रूप में ऐतिहासिक कार्यकाल समाप्त हुआ।

बाबा साहेब ने भारतीय संविधान में भी श्रमिकों, कृषकों के हितों को विशेष ध्यान रखा। शोषण और दासता का उन्मूलन इसी का परिचायक है। बाबा साहेब ने आजादी के बाद पं0 नेहरू के समक्ष प्रस्ताव किया कि कृषि राज्य का उद्योग बने, न कोई जमींदार हो, न काश्तकार और न भूमिहीन मजदूर।[2]

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर न केवल एक महान मजदूर नेता अपितु श्रकि कल्याण के लिए बने अनेक कानूनों के निर्माता भी थे। वे कांग्रेस पार्टी और कम्युनिस्टों के विपरीत सच्चे हृदय से श्रमिकों के हितैषी थे, जिसका साक्ष्य श्रमिक हितों के लिए किया गया उनका विराट संघर्ष है। श्रमिकों–मजदूरों के लिए उनका एक ही नारा था– शिक्षित बनो!, संगठित हो! और संघर्ष करो।

---

[1] डा0 बाबा साहेब, सम्पूर्ण वांडमय, भाग–18, पृष्ठ सं0– 366।
[2] मधुमिलये– बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0– 106।

अध्याय
पन्द्रह

अध्याय– पन्द्रह

''दलित शोषित वर्ग के मसीहा के रूप में बाबा साहेब''

पृथ्वी पर समय–समय पर अनेक महापुरुष अवतार लेकर अत्याचार, अनाचार, अन्याय, हिंसा एवं असत्य का विरोध कर न्याय, अहिंसा, सत्य, समानता एंव बन्धुता की स्थापना करते रहे है। इस क्रम में ईशामशीह, जर्थुस्ट, कन्फ्यूशियस, मुहम्मद साहेब, राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, कबीर, नानक एवं बाबा साहेब डा0 भीम राव अम्बेडकर समय–समय पर अपनी भूमिका का निर्वहन किया। भारत भूमि पर मध्य प्रदेश के इन्दौर के समीप महू नामक स्थान पर 14 अप्रैल 1891 में सुबेदार रामजी सकपाल एवं भीमाबाई के घर जन्म लेकर भीम (डा0 भीमराव अम्बेडकर) ने अपने सम्पूर्ण जीवन को हजारों–हजारों वर्षों से शोषित, दलित, उपेक्षित, पशु से भी दयनीय जीवन व्यतीत करने के अभिषप्त करोड़ों लोगे के मानवीय अधिकार दिलाने, उनके कष्टों का उन्मूलन करने, उनको समानता, स्वतन्त्रता एवं बन्धुत्व दिलाने के लिए अपने सम्पूर्ण जीवन को समर्पित कर दिया।

डा0 अम्बेडकर से पूर्व दलितों, शोषितों को समानता, स्वन्त्रता तथा बन्धुता प्राप्त कराने के लिए शाक्य मुनि भगवान बुद्ध ने एक नये धर्म की नीव रख कर उसके दरवाजे बिना किसी भेद–भाव के समस्त नर--नारी के लिए खोल दिया। बौद्ध धर्म को बड़ी संख्या में हजारों वर्षों से दलित मानवता ने बड़ी सहजता के साथ अंगीकार किया लेकिन सातवीं शताब्दी ई0 के बाद बौद्ध धर्म के पतन का आरम्भ हुआ और इसी के साथ दलित वर्ग को प्राप्त समानता का अधिकार समाप्त हो गया। बौद्ध धर्म के पतन के अनेक कारण रहे है, जिनकी विशद व्याख्या बाबा साहेब ने अपनी ऐतिहासिक पुस्तक 'द

बुद्धा एण्ड हिज धम्मा' में किया है, लेकिन हिन्दू धर्म के षड़यन्त्र की पराकाष्ठा तब दिखाई पड़ती है जब भगवा बुद्ध को भगवान विष्णु के 24 अवतारों (गुप्तकालीन साहित्कार अमर सिंह ने अपने अमर कोष में भगवान विष्णु के कुल 39 अवतारों का उल्लेख किया है लेकिन 10 लोक प्रिय अवतार रहे हैं) में सम्मिलित कर लिया।

भक्ति काल में क्रांतिदर्शी कबीर ने मानव–मानव के बीच विभेद को समाप्त कर समानता का सन्देश दिया। यही कार्य भक्ति काल के अन्य सन्तों ने भी किया लेकिन वे वर्ण व्यवस्था एवं जाति व्यवस्था के बन्धनों को समाप्त करने में संगठित आन्दोलन को जन्म न दे सके जिससे आन्दोलन सफल नहीं हो सका।

19वीं शताब्दी में महाराष्ट्र की भूमि पर महात्मा ज्योबिता फूले ने 1873 ई0 में सत्य शोधक समाज को स्थापित कर वर्ण जाति व्यवस्था के खिलाफ संगठित आन्दोलन करने का प्रयास किया। इसके पूर्व 1872 ई0 में उन्होंने 'गुलाम गिरि' नामक पुस्तक लिखी थी। सत्य शोधक समाज का लक्ष्य था– बंचक ब्राह्मणों एवं उनके अवसर वादी शस्त्रों से निम्न जातियों की रक्षा करना। कालान्तर में बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने महात्मा ज्योतिबा फूले की विचारधारा और उनके आन्दोलन को संगठित रूप से आगे बढ़ाकर आजीवन संघर्ष कर शोषित, दलित वर्ग को मानवीय एवं वैधानिक अधिकार दिलाने, आत्म सम्मान, आत्म गौरव एवं स्वाभिमान तथा चेतना जगाने में सफलीभूत हुए।

बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर अपने शैशवाकाल से ही दलित, अछूतों की दारुण स्थिति को न केवल देखा अपितु भोगा भी। अपने स्कूली जीवन में अस्पृश्यता के दंश को बार–बार झेला था। बडौदा रियासत की सेवा के दौरान उन्हें अस्पृश्यता का दुखद अनुभव हुआ। संक्षेप में अपने पूरे जीवन काल में बाबा साहेब ने अस्पृश्यता के दंश को झेला। उन्होंने देखा कि अस्पृश्य वर्ग के लोग किस नरकीय एवं दयनीय स्थिति में जीवन–यापन कर रहे हैं। गाँव के बाहर झोपड़ियों में रहते हुए गन्दे, मैले वस्त्रों को पहनने, मरे हुए जानवरों का मांस खाने, जूठन खाने, गोबर के दानों को खाने को खाते हुए गन्दे व्यवसाय करने के लिए विवश हैं। बाबा साहेब ने अपने विद्यार्थी जीवन से ही

अस्पृश्य समुदाय को मानवीय अधिकार दिलाने, सम्मान जनक जीवन यापन की सुविधा दिलवाने के लिए चिंतन आरम्भ किया। उच्च शिक्षा के लिए अपने अमेरिकी प्रवास के दौरान बाबा साहेब ने 9 मई 1916 ई0 को डा0 ए0ए0 गोल्डन विजर द्वारा आयोजित नेतृत्व विज्ञान विषयक गोष्ठी में एक निबन्ध पढ़ा, जिसका शीर्षक था– ''भारत में जाति व्यवस्था का उद्भव, विकास और स्वरूप''।[1]

इस बौद्धिक निबन्ध में बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि यह कहना कि व्यक्ति ही समाज को बनाते हैं बहुत ही सतही कथन है। वर्गों के मिलने से समाज बनता है। वर्ग संघर्ष के सिद्धान्त में कुछ अतिश्योक्ति हो सकती है लेकिन यह सच है कि समाज के भीतर वर्ग होते हैं, उन वर्गों के आधार अलग–अलग हो सकते हैं। आधार आर्थिक, बौद्धिक या सामाजिक हो सकते हैं किन्तु व्यक्ति सदैव समूह का सदस्य होता है, यह सार्वभौम सत्य है और प्राचीन हिन्दू समाज इस नियम का अपवाद नहीं हो सकता और हम जानते है कि वह अपवाद नहीं था। बाबा साहेब ने इसमें स्पष्ट किया कि भारत में जाति व्यवस्था मनु से पूर्व विद्यमान थी, मनु ने केवल उसे संहिताबद्ध किया। साथ ही यह भी कहा कि मनु एक उद्धत पुरुष था। बाबा साहेब ने इस पर भी प्रकाश डाला कि भारत में हजारों वर्षों से अस्पृश्य वर्गों के साथ कितने व्यापक स्तर पर घृणित एवं निर्दयता पूर्वक व्यवहार किया जाता है रहा है।

अमेरिका में अध्ययन पूर्ण कर भारत वापस आकर बाबा साहेब ने गहन चिन्तन, मनन एवं अनुशीलन करके सुनियोजित तरीके से दलित अस्पृश्य वर्ग के हितों के लिए संघर्ष को आरम्भ किया। इसी समय माण्टेग्यू चेम्सफोर्ड सुधार योजना (1918) प्रकाशित हुई, जिसके आधार पर 1919 का भारत शासन अधिनियम पारित हुआ। माण्टेंग्यू चेम्सफोर्ड सुधार योजना के अन्तर्गत ही साउथवरा कमेटी का गठन किया गया, जिसे भारत में मताधिकार के सम्बन्ध में आवश्यक सुझाव देना था। साउथवरा कमेटी के सम्मुख अस्पृश्य वर्ग की ओर से कर्मवीर सिन्दे और डा0 बी0आर0 अम्बेडकर ने गवाही

---

[1] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चितंन, पृ0सं0– 20

दी।[1] बाबा साहेब ने दलित वर्गों के हितों से सम्बन्धित एक प्रतिवेदन सौंपा, जिसमें उन्होंने हिन्दू समाज के भीतर विभाजन की विशद जानकारी दी और इस बात का विश्लेषण किया कि हिन्दू समाज के अलग–अलग विभागों में मतदाताओं की संख्या किस दृष्टि से मतदान की पात्रता की जो शर्तें रखी गई हैं उसका क्या परिणाम होगा। बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि इन कठिन शर्तों के कारण ब्राह्मण मतदाताओं की संख्या अधिक और दलित वर्गों के मतदाताओं की संख्या नगण्य होगी।

बाबा साहेब ने अपने प्रतिवेदन में दलित वर्गों के सम्बन्ध में सुझाव दिया कि जनसंख्या के अनुपात मे उनके लिए स्थान आरक्षित किये जायें, दलित वर्गों के लए पृथक निर्वाचन मण्डल हो, दलित वर्गों के मतदाओं की संख्या बढ़ाने के लिए आय और सम्पत्ति सम्बन्धी शर्तों को शिथिल किया जाये। बाबा साहेब ने इसके अतिरिक्त उन समस्त बाधाओं का क्रमवार उल्लेख किया, जिनका दलित वर्ग शिकार रहा है। उन्होंने कमेटी को बताया कि दलित वर्ग के लोग व्यापार नहीं कर सकते, उद्योग धन्धों के रास्ते उनके लिए बन्द हैं, नौकरियों में उनके लिए जगह नहीं है। बाबा साहेब ने यह मांग की कि दलित जातियों के सेना में भर्ती के लिए लगे प्रतिबन्ध समाप्त किये जायें। उन्होंने साउथवरा कमेटी को यह भी बताया कि अस्पृश्यों के स्कूल में वरिष्ठ श्रेंणी के अध्यापक की जगह खाली होती है तो वह सवर्णों से भरी जा सकती है लेकिन सवर्णों के स्कूल में जगह खाली होने अस्पृश्य उम्मीदवार द्वारा वह जगह भरी नहीं जा सकती। बाबा साहेब ने अत्यन्त आवेश में कहा कि हिन्दुओं के सामाजिक व्यवहार की यही नैतिकता है।[2]

बाबा साहेब ने अपने इस प्रतिवेदन के माध्यम से ब्रिटिश सरकार के सम्मुख भारत के दलित, अस्पृश्य वर्ग की मांगों को रखा था। उन्होंने समाचार पत्रों के माध्यम से भी दलित वर्ग के हितों को प्रचारित किया। बाबा साहेब ने 16 जनवरी 1919 को टाइम्स ऑफ इण्डिया में अपना वक्तव्य दिया– ''स्वराज्य जैसा ब्राह्मणों का जन्मसिद्ध अधिकार है, वैसा ही वह महारों का भी है, यह बात कोई भी स्वीकार करेगा, इसलिए उच्च वर्ग के

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बडकर, जीवन चरित,पृ0 सं0– 40
[2] बाबा साहेब अम्बेडकर, राइटिंग एण्ड स्पीच, खण्ड–1, पृ0सं0– 262

लोगों का यह प्रथम कर्त्तव्य है कि वे दलितों को शिक्षा देकर उनका मनोबल और सामाजिक स्तर ऊँचा करने की कोशिश करें। जब तक यह नही होगा तब तक भारत के स्वतन्त्रता का दिन बहुत दूर रहेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है।"[1]

बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर ने यह महशूश किया कि दलित, अस्पृश्य वर्ग में चेतना लाने, जागरूकता पैदा करने में समाचार पत्रों की प्रमुख भूमिका है। उन्होंने कोल्हापुर के उदारवादी महान शासक छत्रपति साहू जी महाराज से एक समाचार पत्र प्रकाशित करने में आर्थिक सहयोग की अपील की। महाराज ने आर्थिक सहायता देना स्वीकार कर लिया और बाबा साहेब ने 31 जनवरी 1920 को 'मूकनायक' नामक प्रसिद्ध पाक्षिक का प्रकाशन शुरू किया। मूकनायक के संपादक पांडुरंग नंदराम भटकर थे लेकिन वास्तविक कर्ताधर्ता बाबा साहेब ही रहे। मनुवादियों ने आरम्भ से ही इस पत्र का विरोध किया। बाल गंगाधर तिलक के समाचार पत्र केसरी ने मूकनायक के विषय में दो शब्द लिखना तो दूर रहा, पैसे लेकर उसका विज्ञापन छापने से भी इन्कार कर दिया।[2]

बाबा साहेब ने मूकनायक के अगले अंक में अपने क्रांतिकारी विचारों को इस प्रकार रखा– "हिन्दुस्तान एक ऐसा देश है जो विषमता का मायका है, हिन्दू समाज एक मीनार है और एक–एक जाति एक–एक मंजिला, लेकिन यह ध्यान रखने की जरूरत है कि मीनार में कोई सीढ़ी नहीं है। एक मंजिल से दूसरी मंजिल तक जाने के लिए कोई मार्ग नहीं है। जस मंजिल पर जो पैदा हो, उसी पर मरे। निचले मंजिल का व्यक्ति चाहे कितना ही योग्य क्यों न हो, उसे ऊपर की मंजिल में प्रवेश नहीं मिलता। ऊपर की मंजिल में पैदा हुआ व्यक्ति चाहे कितना ही नालायक क्यों न हो, नीचे ढ़केलने की किसी की हिम्मत नहीं होती। सचेतन के साथ–साथ अचेतन वस्तुएं भी ईश्वर का रूप हैं– ऐसा मानने वाले स्वधर्मियों को अपवित्र मानते हैं।.......... युगों–युगों से चली आ

---

[1] टाइम्स ऑफ इण्डिया, 16 जनवरी, 1919

[2] बहिष्कृत भारत, 20 मई 1927

रही दासता, दरिद्रता से बहिष्कृत वर्ग की मुक्ति के लिए आकाश, पाताल एक करना होगा।[1]

मूकनायक में लिखे गए एक दूसरे लेख में बाबा साहेब ने लिखा— कि केवल भारत को स्वतन्त्र करना ही पर्याप्त नहीं है, परन्तु यह एक श्रेष्ठ राष्ट्र बने जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक समानता प्राप्त हो। प्रत्येक को अपना भविष्य उज्ज्वल बनाने और उन्नत करने का अवसर दिया जाये।

मूकनायक के प्रकाशन के बाद 29 मार्च 1920 को काल्हापुर रियासत के मांनगॉव में बाबा साहेब की अध्यक्षता में एक विशाल सभा हुई, जिसमें छत्रपति साहू जी महाराज स्वयं उपस्थित थे। महाराज ने अपने भाषण में कहा— मेरे राज्य के बहिष्कृत प्रजाजनों, तुमने अपना सच्चा नेता खोज निकाला है। इसलिए मैं हृदय से तुम्हारा अभिनन्दन करता हूँ। मेरा विश्वास है कि डा0 अम्बेडकर तुम्हारा उद्धार किए बिना नहीं रहेंगे। इतना ही नहीं एक समय ऐसा आयेगा कि वे समस्त हिन्दुस्तान के नेता होंगे।

डा0 अम्बेडकर जुलाई 1920 में अपनी पढ़ाई पूर्ण करने के लिए लन्दन गए। इस बार शिक्षा के लिए सहयोग छत्रपति साहू जी महराज ने किया था। लन्दन में अपने अध्ययन के दौरान भी उन्होंने दलितों के कष्टों, समस्याओं को ब्रिटिश सरकार के सम्मुख रखने का प्रयास किया। उन्होंने भारत मंत्री मांटेग्यू से मुलाकात की और दलितों की समस्याओं से उन्हें अवगत कराया। इस वार्तालाप की सम्पूर्ण सूचना छत्रपति साहू महराज को 3 फरवरी 1921 को पत्र लिखकर दी। उन्होंने बताया कि भारत मंत्री भारत के उदारवादी दल के सूचना के अनुसार कार्य कर रहे हैं। दलितों की वास्तविक दयनीय स्थिति के विषय में ब्रिटेन के लोगों को कोई जानकारी नहीं है। बाबा साहेब ने छत्रपति साहू जी महाराज से अनुरोध किया कि ब्रिटेन में दलितों की एक संस्था स्थापित करने के लिए वे आर्थिक सहायता प्रदान करें। उन्होंने पत्र में यह लिखा था— आपके मार्ग दर्शन के अनुसार यहाँ कोई संस्था स्थापित करना संभव होगा या नहीं, मैने इस सम्बन्ध

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0— 41

में यहाँ के कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों के साथ चर्चा की। उन्होंने सर्व सम्मति से मेरी इस कल्पना का स्वागत किया। तथापि उनके मतानुसार वैतनिक कार्यवाहक के बिना इस प्रकार की संस्था टिक नहीं सकती। इसका मतलब यह है कि कम से कम 500 पौण्ड वार्षिक इस संस्था पर व्यय होगा। इस तरह की संस्था अस्पृश्य वर्ग की दृष्टि से हितकारी होगी। लेकिन मेरा विश्वास है कि वह व्यय उनकी (डा0 अम्बेडकर) व्यय के बाहर का होगा।[1]

बाबा साहेब ब्रिटेन में अपना अध्ययन समाप्त कर जुलाई 1923 में भारत लौट आये। भारत आकर बाबा साहेब ने देश के विभिन्न भागों में चल रहे अछूतोद्धार आन्दोलन का गंभीरता पूर्वक अध्ययन किया और इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इनमं से किसी भी आन्दोलन के द्वारा अस्पृश्यों, दलितों, शोषितों के अन्तहीन कष्टों को समाप्त नहीं किया जा सकता। उन्होंने यह गुरुतर दायित्व स्वयं ही अपने ऊपर लेने का संकल्प किया। बाबा साहेब ने इसी उद्देश्य को लेकर 9 मार्च 1924 को मुंबई के दामोदर बरली सभागार में अस्पृश्य वर्ग की एक विशाल सभा बुलाई। सभा में दलित वर्ग की दयनीय स्थिति तथा उनकी समस्याओं पर विस्तार से चर्चा की गई तथा एक संगठन को स्थापित करने का निर्णय किया गया। 20 जुलाई 1924 को बहिष्कृत हितकारिणी सभा स्थापित की गई। वैसे इस सभा को फरवरी 1920 में पाण्डुरंग नन्दराम भटकर ने आरम्भ किया था, लेकिन धनाभाव के कारण यह बन्द हो गई थी। इसका पुनः रजिस्ट्रेशन करवाया गया तथा इसके निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किये गये–[2]

1. दलित वर्गों में शिक्षा का प्रचार–प्रसार करना, छात्रावासों की स्थापना करना और न साधनों का विकास करना जो उनके उत्थान के लिए समयानुसार आवश्यक हों।

2. दलित वर्गों में वाचनालय, सभाज कन्द्र और विद्या केन्द्र स्थापित करके संस्कृति का प्रचार करना।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर एक जीवन चरित, पृ0सं0– 47

[2] बहिष्कृत हितकारिणी सभा– नियम पत्रक

3. दलित वर्गों की आर्थिक स्थितियों को सुधारना तथा औद्योगिक और कृषि विद्यालयों को स्थापित करना।

4. दलित वर्गों की विभिन्न समस्याओं का प्रतिनिधित्व एवं निस्तारण करना।

इस सभा के अध्यक्ष सर चिमनलाल हारेलाल सीतलवाड़ थे, डा0 वी0पी0 चावड़ और वी0पी0 खरे प्रबन्ध समिति के अध्यक्ष, डा0 बी0आर अम्बेडकर उसके कार्यकारिणी समिति के अध्यक्ष तथा शिवतकर कोषाध्यक्ष थे। यह संस्था डा0 अम्बेडकर के प्रयासों से ही स्थापित हुई। इस संस्था की स्थापना द्वारा भारत के करोड़ों दलितों, अस्पृश्यों को आत्मनिर्भरता, स्वाभिमान और आत्मोद्धार की सीख देकर क्रांतिकारी परिवर्तन का मार्ग प्रशस्त हुआ। सभा ने जनवरी 1925 में शोलापुर में अपना पहला छात्रावास खोला। दलित छात्रों में जागरूकता लाने के उद्देश्य से सरस्वती विलास नामक मासिक पत्र प्रकाशित किया। सभा ने अनेक भागों में वाचनालय और हाकी क्लब स्थापित किया।

इस प्रकार सभा के माध्यम से बाबा साहेब ने अस्पृश्य वर्गों की दयनीय स्थिति में सुधार करने के लक्ष्य की पूर्ति के लिए आन्दोलन आरम्भ किया। बहिष्कृत हितकारिणी सभा के शत्रुओं ने उन्हें बदनाम करने का प्रयास किया किन्तु इसका नगण्य प्रभाव पड़ा और डा0 अम्बेडकर की ख्याति बढ़ने लगी। उन्होंने सभा को विरोध आन्दोलन तथा सीधी कार्यवी का मंच बना दिया।[1]

अस्पृश्यों, शोषितों, दलितों को मानवीय अधिकार दिलाने, उनकी नरकीय स्थिति में सुधार लाने के लिए बाबा साहेब ने अपने जुझारू व्यक्तित्व का भी परिचय दिया। ऐतिहासिक महाड सत्याग्रह में उनका जुझारू व्यक्तित्व सामने आता है।

---

[1] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिन्तन, पृ0सं0 17

1. महाड़ सत्याग्रह

बाबा साहेब ने अस्पृश्य वर्ग के पानी पीने के मानवीय अधिकार को लेकर मार्च 1927 में ऐतिहासिक महाड़ सत्याग्रह किया। महाड़ में चोकदार नामक एक तालाब था, जिसे महाड़ नगर पालिका ने 1923 ई0 के केशव राम बोले के विधेयक के अनुपालन के तहत अस्पृश्य वर्ग के लिए खोल दिया था लेकिन स्पृश्य हिन्दुओं के प्रबल विरोध और आतंक के कारण वहां के अस्पृश्य अपने अधिकारों का उपभोग नहीं करने पा रहे थे। यहां के अस्पृश्यों ने बाबा साहेब को आमंत्रित किया। इनके आमंत्रण को स्वीकार कर बाबा साहेब ने महाड़ में 19–20 मार्च 1927 को महाड़ में विशाल सभा का आयोजन किया, जिसका व्यापक प्रचार–प्रसार किया गया। सभा को सफल बनाने के लिए सुरेन्द्र नाथ, सुरेन्द्र टिपणिस, सुबेदार बिश्राम, गंगाराम सवादकर, सम्भाजी तुकाराम गायकवाड़ आदि ने कड़ी मेहनत की।[1] प्रचार–प्रसार से महाड़ में 10 हजार अछूत इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए महाड़ आये। उस समय जब देश की सम्पूर्ण जनसंख्या लगभग 32 करोड़ थी तो दस हजार अस्पृश्यों का एकत्र होना एक अभूतपूर्व एवं ऐतिहासिक घटना थी। स्पृश्य हिन्दुओं ने इसका विरोध किया, जिससे पानी मिलना भी दुर्लभ हो गया था, अन्त में सम्मेलन के लिए 15 रुपये रोज खर्च कर पानी की व्यवस्था करनी पड़ी।[2]

19 मार्च को सम्मेलन आरम्भ हुआ, जिसकी अध्यक्षता करते हुए बाबा साहेब ने अपना ऐतिहासिक क्रांतिकारी भाषण दिया– "इस अंग्रेजी राज्य और हिन्दू व्यवस्था में अछूतों की कोई मदद नहीं करता, उनका कोई भी आदर नहीं करता और न ही उन्हें सुखी और सम्मानित जीवन जीने का ज्ञान देता है। आज से अछूत अपनी सहायता स्वयं करें, वे अपनी सन्तानों को शिक्षित, सुखी और सम्मानित बनायें। जो माता पिता अपने बच्चों को शिक्षित और सम्मानित नहीं बनाते वे पशुओं से भी गये बीते हैं।............." बाबा साहेब ने अपना भाषण जारी करते हुए आगे कहा– "स्वयं अपना सुधार करो, गन्दी

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0–66

[2] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–4, पृ0सं0– 170

आदतों से दूर रहो, साफ–सुथरे कपड़े पहनों, मरे हुए जानवरों का मांस मत खाओ, शराब या अन्य नशा न करो यही अछूतों की मुक्ति का मार्ग है।''

बाबा साहेब ने प्रबल विरोध के बावजूद अपने हजारों अनुयायियों के साथ चोकदार तालाब के पानी को हाथ में लेकर पिया। इस प्रकार बाबा साहेब ने हजारों वर्ष पुराने हिन्दू व्यवस्था के विरुद्ध विद्रोह किया और दलितों, अस्पृश्यों के मानवीय अधिकारों की स्थापना कराई। उन्होंने यह बताया कि मानव होने के नाते अस्पृश्य वर्ग को भी उन सभी अधिकारों का उपभोग करने का अधिकार है जो स्पृश्य हिन्दू कर रहे हैं। यहीं पर बाबा साहेब ने मनु–स्मृति सबसे पहले जलाया था। मनु–स्मृति का विरोध एक प्रतीक था कि हिन्दू धर्म के असमानतापूर्ण व्यवस्थ को अस्पृश्यजन अब स्वीकार नहीं करेंगे।

2. कालाराम मन्दिर आन्दोलन

ऐतिहासिक महाड़ सत्याग्रह के पश्चात बाबा साहेब ने अस्पृश्यों के मंदिर प्रवेश को लेकर आन्दोलन चलाया जो कालाराम मंदिर आन्दोलन के नाम से इतिहास में उल्लेखनीय है। यद्यपि इसके पूर्व देश के अनेक भागों में कांग्रेस तथा अन्य संगठनों के प्रयास से मंदिर प्रवेश आन्दोलन चल रहा था यथा 1924 में त्रावनकोर के वायकोम नामक ग्राम से मंदिर प्रवेश को ले करके वायकोम सत्याग्रह आरम्भ हुआ। 30 मार्च 1924 को कांग्रेसियों के नेतृत्व में सवर्ण और अस्पृश्यों का एक जलूस छुआ–छूत कानुन की अवहेलना करके मंदिर पहुंच गया और योगक्षेम सभा (नाम्बूदरी ब्राह्मणों का संगठन) ने प्रस्ताव पारित कर अस्पृश्यों के मंदिर प्रवेश का समर्थन किया।[1] लेकिन अस्पृश्य समाज की ओर से मंदिर प्रवेश के अधिकार को लेकर डा0 अम्बेडकर के नेतृत्व में यह पहला आन्दोलन किया गया

महाराष्ट्र के नासिक के कालाराम मंदिर में प्रवेश के लिए डा0 अम्बेडकर ने 2 मार्च 1930 को विशाल सत्याग्रह सभा का आयोजन किया, एक सत्याग्रह समिति की

---

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ0सं0– 201

स्थापना हुई, जिसके प्रचार--प्रसार एवं प्रयासों के फलस्वरूप 15 हजार अस्पृश्यजन कालाराम मंदिर प्रांगण में एकत्रित हुए।[1]

2 मार्च को प्रातः 10 बजे बाबा साहेब की अध्यक्षता में एक विशाल सभा आरम्भ हुई, अन्त में सत्याग्रहियों का एक जलूस मंदिर की ओर बड़ा। यह जलूस एक मील लम्बा था जो नासिक के इतिहास में अभूतपूर्व था। जलूस के आगे-आगे बैण्ड बाजा बज रहा था और उसके पीछे डा0 अम्बेडकर अपने कुछ विश्वस्त सहयोगियों के साथ और पीछे नर—नारियों का विशाल जलूस था। जलूस धीरे—धीरे मंदिर की ओर बढ़ रहा था और मंदिर के प्रबन्धकों ने मंदिर के सभी द्वार बन्द कर दिये थे। सुरक्षा व्यवस्था के लिए नासिक के पुलिस सुपरिटेन्डेन्ट भारी पुलिस बल के साथ उपस्थित थे। सत्याग्रहियो के सामने बड़ी विषम परिस्थिति थी क्योंकि भारी पुलिस बल के कारण मंदिर में प्रवेश नहीं कर सकते थे इसलिए जलूस गोदावरी के घाट की ओर मोड़ दिया गया और सभा के रूप में बदल गया। यह घटना ठीक उसी प्रकार थी जैसे फ्रांसीसी क्रांति के समय टेनिसकोर्ट की शपथ हुई थी, इसका महत्व टेनिसकोर्ट की शपथ से कम नहीं है। सभा में निर्णय लिया गया कि अहिंसक तरीके से मंदिर के सम्मुख सत्याग्रह चलाया जायेगा।[2]

3 मार्च 1930 से क्रमबद्ध सत्याग्रह आरम्भ हुआ, जिसमें प्रतिदिन सैकड़ों स्त्री—पुरुषमंदिर के द्वार पर बैठते थे। सम्पूर्ण नासिक सहित देश में तनाव का वातावरण था। उसी समय राम नवमी के दिन एक दुखद घटना हो गई, जिसमें फैली हिंसा में अनेक लोग मारे गये तथा घायल हुए। बाबा साहेब के अनुयायियों ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर अपने नेता के प्राणों की रक्षा की। यद्यपि थोड़ी बहुत चोंट बाबा साहेब को भी लगी थी।[3] मंदिर के प्रबन्धकों ने मंदिर एक साल के लिए बन्द कर दिया।

---

[1] डा0 भटनागर, राजेन्द्र मोहन, डा0 अम्बेडकर, जीवन दर्शन, पृ0सं0— 56
[2] राय, हिमांशु, युग पुरुष बाबा साहेब अम्बेडकर, पृ0सं0—36
[3] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0— 138

बाबा साहेब ने इस दुर्भाग्यपूर्ण घटना के तत्काल पश्चात् बंबई के गवर्नर फेडरिक साइक्स से मुलाकात कर सम्पूर्ण घटना की जानकारी दी। अनेक अस्पृश्य हिन्दू नेताओं ने बाबा साहेब से निवेदन किया कि सनातनी हिन्दुओं के ह्दय परिवर्तन का एक मौका दें। अन्ततः बाबा साहेब ने सत्याग्रह स्थगित कर दिया लेकिन कुछ समय बाद जब मंदिर प्रवेश पर फैसला नहीं हो सका पुनः सत्याग्रह आरम्भ हो गया जो अक्टूबर 1935 से तब तक जारी रहा जब तक कानून पारित कर मंदिर सभी लोगों के लिए खोल नहीं दिया गया।

इस प्रकार बाबा साहेब ने इन दोनो आन्दोलनों में अस्पृश्यजनों के मानवीय अधिकारों के लिए जुझारू आन्दोलन किया। बाबा साहेब अस्पृश्य वर्ग को मानवीय अधिकार दिलाने एवं उनके कष्टों के निवारण के लिए अन्य मंचों एवं साधनों का भी उपयोग किया–

साइमन कमीशन

बाबा साहेब ने साइमन कमीशन के सामने अस्पृश्य वर्ग की ओर से अपना प्रतिवेदन एवं अपना पक्ष प्रस्तुत किया। बाबा साहेब ने बताया कि दलितों की संख्या तीन करोड़ दस लाख है जो ब्रिटिश भारत की जनसंख्या का 19 प्रतिशत है। बाबा साहेब ने कमीशन को आगे बताया – "पहली बात तो मैं यह कहना चाहूँगा कि हम दावा करते हैं कि हमें हिन्दुओं से अलग एक विशिष्ट अल्प संख्यक माना जाय। अभी तक हमें हिन्दुओं में शामिल करके हमारे अल्पसंख्यक स्वरूप को छिपाया गया है परन्तु वास्तव में दलित वर्गों और हिन्दुओं के बीच कोई सम्पर्क नहीं है। इसलिए सम्मेलन के सामने पहली बात रखना चाहता हूँ कि हमें एक विशिष्ट और स्वतन्त्र अल्पसंख्यक माना जाय। दूसरे मैं यह कहना चाहता हूँ कि बिटिश भारत में दलित वर्गों को किसी अन्य अल्पसंख्यक वर्ग की अपेक्षा कहीं अधिक राजनैतिक संरक्षण की आवश्यकता है क्योंकि शिक्षा की दृष्टि से दलितों का अल्पसंख्यक वर्ग बहुत पिछड़ा है, सामाजिक दृष्टि से बड़ा हुआ है, ऐसी राजनैतिक विवशताओं से ग्रस्त है, जिनसे काई अन्य वर्ग ग्रस्त नहीं है। हम मुस्लिम

अल्पसंख्यक वर्ग की तरह का प्रतिनिधित्व चाहते हैं। हम आरक्षित सीटें चाहते है, यदि वे वयस्क मताधिकार के साथ दी जायें।

इस प्रकार बाबा साहेब ने साइमन कमीशन के सम्मुख दलित, शोषित वर्ग की समस्याओं को ही नहीं रखा अपितु उनकी प्रमुख मांगों को भी सामने रखा।

मुम्बई विधान सभा के सदस्य के रूप में बाबा साहेब

ब्रिटिश सरकार ने डा0 अम्बेडकर की योग्यता, दक्षता, कर्मठता और जुझारू व्यक्तित्व को देखते हुए 1927 में अस्पृश्य वर्गो की ओर से मुम्बई विधान सभा के सदस्य के रूप में मनोनीत किया। नई विधान परिषद का कार्यकाल 12 फरवरी 1927 को आरम्भ हुआ। डा0 अम्बेडकर का पहला भाषण 24 फरवरी 1927 को बजट जैसे महत्वपूर्ण विषय पर हुआ था,[1] जिसमें बाबा साहेब ने अपना बौद्धिक विवेचन प्रस्तुत किया था। बाबा साहेब ने मुम्बई विधान सभा के सदस्य के रूप में दलित, शाषित वर्गों के हितों से सम्बन्धित मुद्दों पर ब्रिटिश सरकार को अपने विद्वतापूर्ण भाषणों द्वारा विवश करते थे। कई बार बाबा साहेब की झड़प भी हो गई। ऐसी ही एक बार झड़प मुम्बई के गवर्नर सर लेस्लीविल्सन से हो गई तो गवर्नर साहेब ने उन्हें राजभवन बुलाया और कहा कि ब्रिटिश सरकार ने उन्हें विधान परिषद मनोनीत किया है इस प्रकार एक मनोनीत सदस्य के रूप में सरकर की आलोचना उचित नहीं है। बाबा साहेब ने गवर्नर को उत्तर दिया कि विधान परिषद में अपने बुद्धि को जो उचित लगा वह मैं बोल चुका हूँ। ब्रिटिश शासन काल में अस्पृश्य वर्ग का तनिक भी कल्याण नहीं हुआ है।[2]

इस प्रकार बाबा साहेब ने विधान परिषद सदस्य के रूप में दलित, शोषित वर्गों के हितों, प्रश्नों को वरीयता दी। बाबा साहेब ने सदैव दलित, शोषित वर्ग के हितों के लिए संघर्ष किया चाहे वह सदन रहा हो या सदन के बाहर का कोई भी मंच रहा हो।

---

[1] बाम्बे लिजिसलेटिव काउन्सिल डिबेट्स, खण्ड–19, पृ0सं0– 164,168

[2] वही, खण्ड– 23, पृ0सं0– 381–382

स्टार्ट कमेटी के सदस्य के रूप में बाबा साहेब

मुम्बई सरकार ने सर ओ0बी0एच0 स्टार्ट की अध्यक्षता में एक कमेटी गठित की जिसे अस्पृश्य वर्ग की सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक स्थिति की जानकारी कर उनकी स्थिति को सुधारने के लिए उठाये जाने वाले उपायों की समीक्षा करने का दायित्व सौंपा गया।[1] इस कमेटी में डा0 सोलंकी के साथ डा0 अम्बेडकर को भी सदस्य बनाया गया। समिति के सदस्यों के साथ बाबा साहेब ने बम्बई प्रेसीडेन्सी का विषद दौड़ा किया। समिति ने पर्याप्त परिश्रम कर अपना प्रतिवेदन मार्च 1930 में प्रस्तुत किया, जिसमें कहा गया कि ''यद्यपि अस्पृश्य समुदाय हिन्दुओं के धर्मकृत कानून और त्योहार मानती है और स्वीकारती है फिर भी उसे बहिष्कृत स्थिति में दूर अलग रहना पड़ता है। प्रतिरोध के कारण वह समाज में सम्मिलित नहीं हो पाती। इसलिए वह दासता की बुरी हालत में फंसी हुई है।'' स्टार्ट समिति ने अस्पृश्य वर्ग की दशा सुधारने के लिए अनेक महत्पूर्ण सिफारिसें भी कीं।

गोलमेज सम्मेलन

भारतीय संवैधानिक प्रश्नों पर विचार विमर्श करने के लिए 1930 ई0 में लंदन में प्रथम गोलमेज सम्मेलन आयोजित हुआ, जिसमें ब्रिटिश सरकार ने भारतीय जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले सभी दलों, रियासतों के प्रतिनिधियों को आमंत्रित किया। आमंत्रित सदस्यों की सूची में अस्पृश्य वर्ग की ओर से डा0 बी0आर0 अम्बेडकर भी शामिल थे। ब्रिटिश सम्राट ने जार्ज पंचम ने 12 नवम्बर 1930 को प्रथम गोलमेज सम्मेलन का उद्घाटन किया। उद्घाटन के पश्चात गोलमेज सम्मेलन सेन्ट जेम्स महल में होने लगी। सम्मेलन में डा0 अम्बेडकर ने अपना बौद्धिक भाषण दिया– ''सभापति महोदय मैं इस सभा में संवैधानिक सुधारों के प्रश्न पर दलित वर्ग का पक्ष प्रस्तुत कर रहा हूँ, जिसका मुझे और मेरे सहयोगी राव बहादुर श्रीनिवासन को प्रतिनिधित्व करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यह भारत की चार सौ तीस लाख जनता 1/5 प्रतिशत

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 132

जनसंख्या का पक्ष है। दलित वर्ग स्वयं में ऐसे लोगों का समूह है जो मुसलमानों से भिन्न एवं अलग हैं। यद्यपि उन्हें हिन्दू कहा जाता है किन्तु हिन्दू जाति का किसी भी अर्थ में अविभाज्य अंग नहीं हैं। वे न केवल उनसे अलग रहते हैं, अपितु उन्हें जो दर्जा प्राप्त है वह भी भारत में अन्य जातियों के दर्जे से बिल्कुल भिन्न है। भारत में अनेक जातियों अत्यन्त दयनीय एवं गुलामी की स्थिति में रह रहीं है किन्तु दलित वर्गों की स्थिति बिल्कुल भिन्न है।........... दलित वर्ग अस्पृश्यता के अभिशाप का शिकार है, उससे भी खराब बात यह है कि अस्पृश्यता के कारण उन पर लादी गई गुलामी से न केवल उनके सामाजिक जीवन में उनके साथ भेद–भाव बर्ता जाता है बल्कि उन्हें सामान्य अवसरों और मानवीय जीवन के लिए आवश्यक नागरिक अधिकारों से भी वंचित रखा जाता है। मुझे विश्वास है कि इतने बड़े वर्ग, जिनकी जनसंख्या इंग्लैण्ड अथवा फ्रांस की जनसंख्या के बराबर है और जो अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करने के लिए भी सक्षम नहीं हैं, के दृष्टिकोंण को हृदयगम करने से ही राजनैतिक समस्या का सही समाधान होगा।............. अंग्रेजी शासन के 150 वर्ष बीत जाने पर भी हमारी तकलीफें उन घावों की तरह हैं, जिन पर मरहम लगाने का कोई प्रयास नहीं किया गया।

हमारा आरोप यह नहीं है कि अंग्रेजी शासन ने हमारी उपेक्षा की है अथवा उनकी हमारे प्रति सहानुभूति नहीं है। हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वह हमारी समस्याओं का समाधान कर ही नहीं सकते।.......... दलित वर्ग भारत के लिए सुरक्षापायों सहित डोमिनियन स्टेट चाहते हैं किन्तु वे इस प्रश्न पर बल देना चाहते हैं कि डोमिनियन भारत का संचालन कैसे किया जायेगा? राजनैतिक सत्ता का केन्द्र कहाँ होगा? यह सत्ता किसके हाथ में होगी? क्या दलित वर्ग इसके वारिश होंगे? उनके लिए विचारणीय प्रश्न हैं। दलित वर्ग यह अनुभव करते हैं कि जब तक नये संविधान की निर्मात्री राजनैतिकि मशीनरी विशिष्ट प्रकार की नहीं होगी, दलित वर्गों की राजनैतिक सत्ता में भागीदारी रत्ती भर भी नहीं होगी।....... दलित वर्ग यह चाहते हैं कि राजनैतिक तन्त्र ऐसा हो जो समाज के मनो विज्ञान के अनुकूल हो अन्यथा आप एक ऐसे संविधान

का निर्माण करेगें जो चाहे जितना सन्तुलित क्यों न हो, वह एक विकृत संविधान होगा और जिस समाज के लिए उसे बनाया जायेगा उसके लिए उपुयक्त नहीं होगा।

इस विषय पर अपनी बात समाप्त करने से पहले मैं एक बात और कहना चाहता हूँ कि हमें बार–बार यह याद दिलाया जाता है कि दलित वर्गों की समस्या एक सामाजिक समस्या है और उसका समाधान राजनीति में नहीं है। इस विचार का जोरदार विरोध करते हैं। हम यह महसूर करते हैं कि जब तक दलित वर्गों के हाथ में राजनैतिक सत्ता नहीं आती, उनकी समस्या का समाधान नहीं हो सकता।

बाबा साहेब का यह ओजस्वी भाषण सम्पूर्ण विश्व में चर्चा का केन्द्र बना, जिसके द्वारा उन्होंने भारत के अस्पृश्य वर्ग के साथ हजारों वर्षो से किये जा रहे घृणित एवं अपमानित व्यवहार के प्रति विश्व का ध्यान आकृष्ट किया। ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने बाबा साहेब के भाषण की प्रशंसा करते हुए कहा था कि यह भाषण बक्त्रत्व कला का एक उत्कृष्ट नमूना है। सम्मेलन में भाग ले रहे बडोदरा नरेश महाराज सायजी गायकबाड़ ने अपनी पत्नी से कहा कि हमारे सारे प्रयास और पैसा दोनो का उचित इस्तेमाल हुआ है। आज एक महान कर्म की सफलता दिखाई पडी, यश का लाभ हुआ।[1]

गोलमेज सम्मेलन में अनेक उपसमितियों का गठन किया गया, जिसमें अल्पसंख्क उप समिति थी। इस उप समिति की दूसरी बैठक 31 दिसम्बर 1930 को हुई, जिसमें बाबा साहेब ने दलित वर्ग की समस्याओं और उनकी मांगों पर विस्तार से चर्चा की। बाबा साहेब ने कहा महोदय मैं एक बात आपको बताने जा रहा हूँ कि भारत के दलित वर्ग की स्थिति अन्य अल्पसंख्यक दर्गों से भिन्न है। पहली बात ''इस देश में दलितों को कुछ भी नागरिक अधिकार प्राप्त नहीं है जो कानूनी रूप से अन्य अल्पसंख्यकों को प्राप्त हैं।'' दूसरी सबसे महत्वपूर्ण बात है ''दलितो का सामाजिक उत्पीडन। भारत में दलितों का जितना घृणित सामाजिक उत्पीड़न होता है वैसा दुनिया में शायद ही कहीं होता हो।'' तीसरी बात दलितों को एक डर और भी है वह है कि नये

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 149

विधान मण्डल में दलितों को चाहे जितना प्रतिनिधित्व दिया जाये, कुल मिलाकर उनका स्वरूप एक छोटे वर्ग का ही रहेगा, विधान मण्डल में प्रभुत्व बहुसंख्यक रूढ़िवादियों का ही रहेगा। दलितों के प्रति इस वर्ग का जो व्यवहार है उसे देखते हुए दलितों के मन में यह भय है कि उनके हितों की अनदेखी की जायेगी। इन बातों को देखते हुए मैं दलितों के हितों की सुरक्षा के लिए कुछ उपाय सुझा रहा हूँ–

सबसे पहले प्रस्तावित संविधान में कुछ मौलिक अधिकार की व्यवस्था की जाये। बाबा साहेब ने जिन मौलिक अधिकारों का उल्लेख किया वे एक प्रतिवेदन के रूप में वर्णित हैं, जिन्हें बाबा साहेब ने श्रीनिवासन के साथ तैयार कर अल्पसंख्यक उप समिति को सौंपा था। इस प्रतिवेदन में दलित वर्गों के हितों की सुरक्षा के लिए शर्तों के रूप में मांग की गयी थी। इसमें बहुसंख्यक शासन को स्वीकार करने के लिए दलित वर्ग ने जो शर्तें रखीं थीं वे इस प्रकार थीं[1]–

शर्त नं० 1

1. समान नागरिकता

अस्पृश्यता को समाप्त करने और समान नागरिकता का अधिकार बहाल करने के लिए निम्नलिखित मौलिक अधिकारों को प्रस्तावित संविधान में सम्मिलित किया जाये।

2. मौलिक अधिकार

भारत के सभी नागरिक कानून की दृष्टि में एक समान हैं और सबके नागरिक अधिकार बराबर हैं। वर्तमान समय में अस्पृश्यता के विषय में लागू कोई भी अधिनियम, कानून, आदेश, व्याख्या या रिवाज जो किसी व्यक्ति को दण्डित करता है, असुविधा पहुँचाता है, अयोग्य करार देता है या पक्षपात करता है तो उसे नये संविधान के लागू होते ही समाप्त माना जायेगा।

---

[1] प्रोसीडिंग्स ऑफ द सब कमेटी नं0 3 (माइनारिटीज), पृ0सं0– 168– 176

शर्त नं० 2

समान अधिकारों का स्वतन्त्र उपयोग

इसके लिए दलित चाहते हैं कि भारत सरकार अधिनियम 1919 भाग– 11, जो अपराध प्रक्रिया एवं दण्ड परिभाषित करता है उसके साथ निम्नलिखित धारा जोड़ दी जाये ''यदि कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति को सार्वजनिक वास, लाभ, सुविधा, धर्मशाला में ठहरने के अधिकार, शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश, सड़क, रास्ता, गली, तालाब, हवा व पानी के उपयोग के अन्य स्थान, सार्वजनिक वाहन, भूमि, हवा अथवा पानी, नाटक गृहों अथवा कला व रंगकर्म से जुड़े अन्य सार्वजनिक उपयोग से रोकता है, तो उसे अस्पृश्यता के बारे में पहले से चली आ रही शर्तो पर विचार किये बिना पाँच वर्ष तक के कारावास की सजा अथवा दोनो दी जायेंगी।

दलित वर्ग और सामाजिक बहिष्कार

इसमें सामाजिक बहिष्कार पर प्रतिबन्ध लगाने और इसे अपराध घोषित करने की मांग की गई।

शर्त नं० 3

भेद-भाव के खिलाफ संरक्षण

प्रस्तावित संविधान में निम्नलिखित प्राविधान आवश्यक होगा–

1. संविदा का अधिकार और उसके अनुपालन का अधिकार, मुकदमा दायर करने, पक्ष बनने, साक्ष्य देने, उत्तराधिकार पाने, खरीदने, पट्टे पर देने, बेंचने, रखने और निजी सम्पत्ति का अधिकार।
2. नागरिक एवं सैनिक सेवाओं तथा शिक्षण संस्थाओं में भर्ती का अधिकार

शर्त नं० 4 :– विधान मण्डल में समुचित प्रतिनिधित्व

शर्त नं० 5 :– नौकरियों में पर्याप्त प्रतिनिधित्व

शर्त नं० 6 :– पक्षपात एवं हितों की अनदेखी का निराकरण

शर्त नं० 7 :– विशेष विभागीय देखभाल

शर्त नं० 8 :–

दलित वर्ग और मन्त्रिमण्डल

गवर्नर जनरल के मन्त्रिमण्डल में दलितों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया जाये।

बाबा साहेब ने प्रथम गोलमेज सम्मेलन में अल्पसंख्यक उप समिति के सम्मुख दलित वर्गों के हितों से सम्बन्धित उक्त शर्तें प्रस्तावित संविधान स्वीकार करने के लिए रखीं। बाबा साहेब के प्रयासों का यह परिणाम हुआ कि दलित वर्गों की दारुण स्थिति की कहानी विश्व के सम्मुख स्पष्ट हुई।

बाबा साहेब 13 फरवरी 1931 को लन्दन से वापस भारत लौट आये। बम्बई बन्दरगाह पर हजरों अस्पृश्य नर–नारियों ने बाबा साहेब का बड़े उत्साह के साथ भव्य स्वागत किया। उनके सम्मान में एक मार्च 1931 ई0 को बम्बई के परेल सभागार में एक विशाल सभा आयोजित की गई, जिसमें भाषण देते हुए उन्होंने कहा कि अपने अनुयायियों और सहयोगियों की सहायता और आन्दोलन से अस्पृश्य वर्ग के लिए कुछ अधिकार प्राप्त करने में मुझे सफलता प्राप्त हुई है।

इसी बीच कालाराम मन्दिर सत्याग्रह पुनः आरम्भ हुआ, जिसमें भाग लेकर बाबा साहेब ने सत्याग्रहियों का उत्साह संवर्धन किया। इसी मध्य ब्रिटिश सरकार ने लन्दन में दूसरा गोलमेज सम्मेलन आयोजित करने का निर्णय लिया। इस सम्मेलन के लिए सदस्यों की सूची में डा0 अम्बेडकर का नाम पुनः शामिल हुआ। रोचक बात यह रही कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जिसने सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ किया था।

गाँधी इरविंग पैक्ट पर 5 मार्च 1931 को हस्ताक्षर होने के पश्चात् द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में शामिल होने के लिए सहमत हो गई और उसके प्रतिनिधि के रूप में महात्मा गाँधी सम्मिलित होने के लिए सहमत हुए। दलित वर्गों ने द्वितीय गोलमेज सम्मेलन में जाने की पूर्व सन्ध्या पर बाबा साहेब के सम्मान में बम्बई में एक सभा आयोजित की, सभा में बाबा साहेब ने दलित वर्ग को आश्वस्त किया कि उनकी समस्याओं को रखने एवं उनके हितों की संरक्षा की जो जिम्मेदारी उनके ऊपर आयी है उसे पूर्ण मनोयोग से वे पूर्ण करेंगे।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन 7 सितम्बर 1931 को आरम्भ हुआ, जिसमें प्रथम गोलमेज सम्मेलन में कार्यरत सभी समितियाँ काम कर रहीं थीं। डा0 अम्बेडकर को पुनः इन समितियों का सदस्य बनाया गया। अल्पसंख्यक समिति की 28 सितम्बर 1931 को सातवीं बैठक हुई, जिसमें बाबा साहेब ने कहा कि बैठक के स्थगित होने से पहले मैं एक बात कहना चाहता हूँ, जहाँ आपके सुझाव का प्रश्न है कि अन्य अल्पसंख्यक वर्ग के साथ आए अपना – अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिए बात–चीत चल रही है, मैं यह कहना चाहता हूँ कि जहाँ तक दलित वर्ग का सम्बन्ध है, हम अपना पक्ष पिछली बार अल्पसंख्यक उप समिति को प्रस्तुत कर चुके हैं.......। जो लोग समझौता कर रहे हैं, उनको यह जान लेना चाहिए कि उन्हें कोई पूर्णाधिकार प्राप्त नहीं है। श्री गाँधी के कांग्रेस के लोग हैं, चाहे जिसके भी प्रतिनिधि हों, वह हमें बाँध कर रखने की स्थिति में नहीं हैं, बिल्कुल भी नहीं है। मैं इस बैठक में ज्यादा से ज्यादा जोर देकर कह रहा हूँ।[1]

इसी अल्पसंख्यक समिति की 8 अक्टूबर 1931 की 9वीं बैठक में बाबा साहेब ने कहा– "श्री गाँधी हमेशा से यह दावा करते आ रहे हैं कि कांग्रेस दलित वर्ग के लिए है और दलित वर्गों का उनसे ज्यादा प्रतिनिधित्व करती है, जितना मैं और मेरे साथी कर सकते हैं। इस दावे के बारे में मैं इतना ही कह सकता हूँ कि यह एक ऐसा दावा है जो गैर जिम्मेदार लोग करते हैं या किया करते हैं। हालाँकि जो लोग इससे

[1] प्रोसेडिंग्स ऑफ द फेडरल स्ट्रक्चर कमेटी एण्ड माइनारिटीज कमेटी, खण्ड–1, पृ0सं0– 1335–1338

सम्बन्धित हैं, वे इन दावों को लगातार अस्वीकार करते रहे हैं।"[1] सम्मेलन के दौरान गाँधी जी और बाबा साहेब में कई बार झड़प हुई थी। बाबा साहेब ने अपने ओजस्वी और तार्किक तथा बौद्धिक भाषण से अस्पृश्य वर्ग के दुःखों को और उनकी मांगों को परिषद के सम्मुख रखा था। उनकी प्रकाण्ड बौद्धिकता से ब्रिटेन के सम्राट जार्ज पंचम सहित पूरा विश्व स्तब्ध था लेकिन गाँधी जी का प्रबल विरोध करने के कारण बाबा साहेब को भारत में एक बड़े विरोध का सामना करना पड़ा। कांग्रेस समर्थक समाचार पत्रों ने बाबा साहेब पर तीव्र हमला किया लेकिन वास्तविकता यह है कि अम्बेडकर जैसा अस्पृश्य नेता अगर उस समय न होता तो गोलमेज परिषद में दलितों की शिकायतों की गीता इतनी निर्भीकता एवं कर्त्तव्य निष्ठा से कौन कर पाता।[2]

ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने 1 दिसम्बर 1931 को द्वितीय गोलमेज सम्मेलन समाप्त करने की घोषणा की और इसी के साथ बाबा साहेब ने 29 जनवरी 1932 को भारत लौट आये। हजारों दलितों ने बाबा साहेब को बन्दरगाह पर भव्य स्वागत किया। इसके कुछ दिन बाद लोथियन समिति भारत आई जिसे मतादिधार कमेटी भी कहा जाता है। इस कमेटी में डॉ0 अम्बेडकर सहित 18 सदस्य थे लेकिन कमेटी के सदस्यो से मतभेद होने के कारण बाबा साहेब ने अलग से इस कमेटी के सम्मुख अपना प्रत्यावेदन प्रस्तुत किया। जिसमें उन्होंने मांग की थी कि दलित वर्ग शब्द को केबल अस्पृश्यों तक ही सीमित ही रखा जाय।[3] इस प्रत्यावेदन में बाबा साहेब ने अस्पृश्यों के नामकरण के सम्बन्ध में भी अपना मत प्रस्तुत किया था और कहा था कि दलित नाम से इस वर्ग को आपत्ति है, यह नाम अनुपयुक्त है और जबतक कोई नया नही प्राप्त हो जाता है उन्हे वाह्य जातियां या बहिस्कृत जातियां ही कहा जाय।

इसी बीच एक षड्यंत्र के तहत 20 फरवरी 1932 को राजा–मुन्जे समझौता हो गया जिसके तहत अस्पृश्यों के पृथक अस्तित्व और पृथक मतदान प्रणाली के प्राविधान

---

[1] वही, पृ0सं0– 1356
[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 184
[3] बाबा साहेब डॉ0 अम्बेडकर सम्पूर्ण वाडमय खण्ड–4 पृ0सं0 204

को छोड़ दिया गया। नागपुर में अखिल भारतीय डिस्प्रेष्ट क्लास परिषद की 7 मई को बैठक हुई जिसमे भी राजा–मुन्जे समझौते का प्रबल विरोध किया गया।

द्वितीय गोलमेज सम्मेलन के निर्णय के अनुसार 17 अगस्त 1932 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री रेम्ज मेक्डॉनल्ड ने अपना महत्वपूर्ण कम्युनल अवार्ड (सम्प्रदायिक पंचाट) घोषित किया जिसके विरूद्ध महात्मा गाँधी ने यवर्दा जेल से ही 20 सितम्बर 1932 से अपना आमरण असन्न आरम्भ किया। देश में व्यापक स्तर पर डॉ0 अम्बेडकर के खिलाफ का बातावरण का निर्माण हुआ और उनपर गाँधी जी के प्राणों की रक्षा का दवाब पड़ा। समाचार पत्रों में देश भर में डॉ0 अम्बेडर के खिलाफ आपत्तिजनक टिप्पणियां की गई तथा अपशब्दों का प्रयोग किया गया। डॉ0 अम्बेडकर के सम्मुख बड़ी विषम परिस्थितियां थी। उन्होंने स्वयं कहा "मेरे सामने दो ही रास्ते थे। मेरा पहला कर्तव्य था, जिसे मैं मान्वीय कर्तव्य मानता हूँ श्री गाँधी के प्राणों का बचाया जाय। दूसरी ओर मेरे सामने समस्या थी कि अस्पृश्यों के उन अधिकारों की रक्षा की जाये जो प्रधानमंत्री ने दिये थे। मैंने मानवता की पुकार को सुना और श्री गाँधी के प्राणों की रक्षा की।"[1] 24 सितम्बर 1932 को एतिहासिक पुर्न समझौते पर हस्ताक्षर हुए। इस समझौते के तहत दलित वर्ग के लिए पृथक निर्वाचन मन्डल समाप्त कर दिया गया। प्रान्तीय विधानमन्डलों में दलितों के लिए आरक्षित सीटों की संख्या 71 से बढ़ा कर 147 कर दी गई तथा केन्द्रीय विधान मण्डल में आरक्षित सीटों की संख्या में 18 प्रतिशत की बृद्धि की गई।

पूना समझौते के पश्चात कांग्रेस ने अपने अस्पृश्यता निवारण नीति को और तीव्र किया जिसके क्रम में अखिल भारतीय हरीजन सेबक संघ की स्थापना की गई। गाँधी जी ने दलितों को हरिजन नाम दिया जिसका बाबा साहेब ने घोर विरोध किया। उनके अनुसार हरिजन नाम गुजरात के भू–भृत्यों का है। यद्यपि बाबा साहेब ने आरम्भ में

---

[1] बाबा साहेब डॉ0 अम्बेडकर सम्पूर्ण वाडमय खण्ड 16 पृ0सं0–92

हरिजन सेबक संघ में कांग्रेसियों के साथ मिलकर कुछ समय के लिए कार्य किया लेकिन गम्भीर मतभेद के कारण उसका परित्याग कर दिया।

इसी समय गाँधी जी की योजना के अनुसार सुब्बाराव और रंगा अय्यर ने मंदिर प्रवेश विधेयक प्रस्तुत किया जिसका गाँधी जी ने डॉ0 अम्बेडकर से समर्थन करने का आग्रह किया लेकिन डॉ0 अम्बेडकर ने इस विधेयक का समर्थन करने से इन्कार कर दिया। बाबा साहेब का मानना था यह विधेयक मूल रूप में गलत है क्योंकि यह अस्पृश्यता को पापाचार नही मानता। उन्होंने भौतिक तथा अध्यात्मिक आधार पर भी इस विध्येक का दलित वर्गों द्वारा समर्थन न करने का कारण बताया। अन्ततः रंगा अय्यर का विधेयक पारित नही हो सका।

ब्रिटिश सरकार ने मार्च 1933 में संविधान में सुधार व संशोधन हेतु श्वेत पत्र प्रकाशित किया और इसी के साथ एक संयुक्त समिति भी गठित की, जिसके सदस्यों में डॉ0 अम्बेडकर भी सम्मिलित थे। इस समिति में बाबा साहेब ने अस्पृश्यों के अधिकारों के लिए महत्वपूर्ण कार्य किया। इसी मध्य में बाबा साहेब की जीवन की महत्वपूर्ण घटना घटी जब उन्होने 13 अक्टूबर 1935 को यबेला के एक विशाल सम्मेलन में अपने हजारों अनुयाईयों को धर्म परिवर्तन के लिए कहा और स्वयं धर्मान्तरण की घोषणा की। इसकी देश भर में तथा विदेशों में भी प्रतिक्रिया हुई लेकिन बाबा साहेब अपने निर्णय पर अडिग रहे।

बाबा साहेब ने 1935 के भारत शासन अधिनियम के तहत होने वाले चुनाव में भाग लेने के लिए 1936 में स्वतंत्र मजदूर दल की स्थापना की और 1937 के चुनाव में मुम्बई विधान सभा में उनके दल को महत्वपूर्ण सफलता प्राप्त हुई। बाबा साहेब दलित शोषित, श्रमिक वर्ग के हितों के लिए महत्वपूर्ण कार्य किया और अनेक विधेयक उनके हितों में पारित करवायां! बाबा साहेब ने 1939 में मुम्बई विधान सभा में कांग्रेस के युद्ध विषयक प्रस्ताव पर बोलते हुए यह ऐतिहासिक घोषणा की "जब कभी मेरे निजी स्वार्थ और देश हित में संघर्ष होगा तो मैं सदैव देशहित को सर्वोपरि महत्व दूगां लेकिन यदि कभी

दलित वर्ग और देश हित के बीच में संघर्ष होगा तो मैं दलित वर्ग के पक्ष में खड़ा हूगा। बाबा साहेब आजीवन दलित शोषित वर्गों के हितों के लिए ही कार्य करते रहे। वाइसराय के काउन्सिल के श्रम सदस्य के रूप में भी उन्होनें दलित शोषित वर्ग के हितो के लिए अविस्मर्णीय कार्य किया। बाबा साहब को जब कभी लगा कि ब्रिटिश सरकार दलित वर्गों के हितों को अन्देखी कर रही है तो उसका प्रबल विरोध किया। क्रिप्स मिशन प्रस्ताव तथा कैबिनेट मिशन प्रस्ताव का विरोध इसी नीति का प्रतिफल थी।''

देश की आजादी समीप आते देश बाबा साहेब ने दलित शोषित वर्ग के हितों की रक्षा के लिए कांग्रेस से नजदीकिया बढ़ा कर न केबल संविधान सभा में प्रवेश किया अपितु संविधान प्रारूप समिति का अध्यक्ष बनकर भारतीय संविधान अस्पृश्य वर्ग, पिछड़े दलित वर्ग के हितों के लिए महत्वपूर्ण संवैधानिक प्रावधान किया। पण्डित नेहरू की सरकार में वित्त मंत्री का पद भी दलित वर्गों के हितों की रक्षा के लिए ही स्वीकार किया था। 1948 में लखनऊ में श्ड्यूल कॉस्ट फेडरेशन के सम्मेलन में अपने अध्यक्षीय भाषण में बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि दलित वर्गों के हितों के लिए ही मैने कांग्रेस में प्रवेश किया है। बाद में नेहरू सरकार की नीतियों के विरोध के फलस्वरूप अपना त्यागपत्र दे दिया।

बाबा साहेब ने आजीवन दलित शोषित वर्गों को मानवीय अधिकार दिलाने उनके शोषणों एवं दुखों का अन्त करने के लिए प्रयास किया। उन्होने कभी भी जीवन में अपने निजी सुखों या स्वाथों का ख्याल नही रखा, उनका लक्ष्य तो केवल दलित, पीड़ित, मानवता का त्राण ही था। वे सच्चे अर्थों में दलित शोषित वर्ग के मसीहा रहे। बाबा साहेब के संघर्षों के फलस्वरूप ही दलित शोषित वर्ग को अधिकार प्राप्त हो पाया और उनके दुखों का अन्त हो पाया।

अध्याय सोलह

अध्याय– सोलह

"भारतीय संविधान के निर्माता के रूप में बाबा साहेब"

स्वतन्त्रता राष्ट्र और उसकी जनता के लिए जितना एक आनन्द का विषय है, उतना ही उत्तरदायी भी। ऐसे संविधान की रचना होनी चाहिए, जो बाबा साहेब के शब्दों – जनता के द्वारा चुनी हुई, जनता की सरकार, जनता के लिए हो। साथ ही वह देश को जोड़ने का कार्य करे, एकता और अखण्डता की रक्षा कर सके तथा स्वतन्त्रता, समानता और भ्रातृत्व की भावना का विकास कर सके। यह गुरुतर दायित्व देश के कंधे पर आ पड़ा था। संयोग से भारत में ऐसी महान विभूतियों का प्रादुर्भाव समय–समय पर होता रहा है, जिन्होंने निःस्वार्थ भाव से देश तथा मानवता के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया। इसी परम्परा का निर्वाह बाबा साहेब ने भी किया, जिन्हें भारतीय संविधान का निर्माता, आधुनिक मनु, संविधान शिल्पी आदि कहा जाता है।

भारत का संवैधानिक विकास

मार्च 1946 में कैबिनेट मिशन द्वारा स्थापित संविधान सभा कोई विस्मय करने वाली चमत्कारिक घटना नहीं थी और न ही किसी राजनैतिक क्रांति का परिणाम थी अपितु यह भारतीय जनता के सैकड़ों वर्षों के संघर्षों का प्रतिफल थी। संवैधानिक विकास का एक लम्बा इतिहास है, जिसे निम्न रूपों में देखा जा सकता है –

1. ### रेग्यूलेटिंग ऐक्ट

बिटिश शासन के इतिहास में सर्वप्रथम 1773ई0 में ब्रिटिश संसद ने रेग्यूलेटिंग ऐक्ट पारित करके भारत में ईस्ट–इण्डिया कम्पनी के शासन में हस्तक्षेप किया। भारतीय प्रशासन के लिए गवर्नर–जनरल और उसके 4 सदस्यी

कौंसिल का गठन किया गया। साथ ही कलकत्ता में एक सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की गई, जिसमें एक मुख्य न्यायाधीश (लार्ड इम्पे प्रथम मुख्य न्यायाधीश थे) तथा तीन अन्य सदस्य होने थे।

2. **पिट का इण्डिया ऐक्ट- 1784**

इसमें गवर्नर–जनरल को कुछ अन्य अधिकार देते हुए रेग्यूलेटिंग ऐक्ट की कमियों को दूर किया गया था। साथ ही ब्रिटेन में Board of Control का गठन किया गया।

3. **1786 का विशेष अधिनियम**

इसके द्वारा गवर्नर–जनरल को मुख्य सेनापति भी बनाया गया तथा कौंसिल में वीटो शक्ति दी गई।

4. **1793 का चार्टर ऐक्ट**

गवर्नर–जनरल लार्ड कार्नवालिस को जो शक्ति 1786 के विशेष अधिनियम से दी गई थी, उसे आने वाले सभी गवर्नरों को दे दिया गया तथा कम्पनी का अधिकार 20 वर्ष के लिए और बढ़ा दिया गया।

5. **1813 का चार्टर ऐक्ट**

इसके द्वारा कम्पनी का अधिकार 20 वर्ष के लिए और बढ़ा दिया गया तथा भारत में मुक्त–व्यापार नीति लागू कर दी गई साथ ही शिक्षा के विकास के लिए 1 लाख रुपये का प्राविधान भी किया गया।

6. **1833 का चार्टर ऐक्ट**

इस अधिनियम ने कम्पनी को आगामी 20 वर्ष के लिए जीवन दान दिया और उसे महामहिम सम्राट तथा उसके उत्तराधिकारियों की ओर से भारत को Trust के रूप में अपने नियंत्रण में रखने तथा प्रशासन करने की अनुमति दी

गई। कम्पनी के व्यापारिक एकाधिकार पूर्णता समाप्त कर दिये गए और अब उसे भविष्य में केवल राजनैतिक कार्य ही करने थे।

इस अधिनियम की सबसे महत्वपूर्ण धारा 87 थी जिसमें, प्रावधान किया गया कि किसी भी भारतीय अथवा क्राउन की देशज प्रजा को अपने धर्म, जन्म स्थान, वंशानुक्रम, वर्ग अथवा इनमें से किसी एक कारण से कम्पनी के अधीन किसी स्थान पद अथवा सेवा के अयोग्य नहीं माना जाएगा।[1]

7. 1853 का चार्टर ऐक्ट

इसके तहत कम्पनी को भारतीय प्रदेशों को महामहिम सम्राज्ञी तथा उत्तराधिकारियों की ओर से Trust के रूप में किसी निश्चित समय के लिए नहीं अपितु जब तक न चाहे, उस समय तक के लिए अपने अधीन रखने की अनुमति दी गई। साथ ही डायरेक्टरों की संख्या 24 से घटाकर 18 कर दी गई।

8. 1858 का अधिनियम

भारत शासन को अधिक अच्छा बनाने के लिए इस अधिनियम के द्वारा भारत पर कम्पनी के शासन को समाप्त कर दिया गया

और ब्रिटिश सम्राज्ञी ने भारतीय प्रशासन को अपने हाथ में ले लिया। भारत का प्रशासन वाइसराय (प्रतिनिधि) को सौंप दिया गया। इंग्लैण्ड में एक भारतीय राज्य का प्रावधान किया गया। Secretary of State for India और उसकी सहायता के लिए 15 सदस्यीय मंत्रणा परिषद बनाई गई।

9. 1861 का भारतीय परिषद अधिनियम

इसके द्वारा वाइसराय की कार्य–कारिणी परिषद में एक 5वाँ सदस्य सम्मिलित कर लिया गया जो विधि वृत्तिका व्यकित था। अधिक सुविधानुसार कार्य करने के लिए 'कैबिनेट' प्रणाली आरम्भ की गई। इस प्रकार भारत सरकार

---

[1] प्रो0 वी0 एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 517

की मंत्रिमण्डलीय व्यवस्था की नीवं रखी गई।[1] इसमें यह व्यवस्था भी की गई कि अब वाइसराय की कौंसिल में न्यूनतम 6 और अधिकतम 12 अतिरिक्त सदस्यों की नियुक्ति से उसका विस्तार किया जाएगा। इन्हें वाइसराय मनोनीत करेगा और वे 2 वर्ष के लिए अपने पद पर रहेंगे। इनमें से न्यूनतम आधे सदस्य गैर सरकारी होंगे। यद्यपि भारतीयों के लिए कोई वैधानिक प्रावधान नहीं था, परन्तु व्यवहार में कुछ गैर सरकारी सदस्य उच्च श्रेंणी के भारतीय थे।

इसमें संकटकालीन दशा में गवर्नर–जनरल को अध्यादेश जारी करने की अनुमति दी गई जो 6 माह तक लागू रह सकता था।

10. 1892 का भारत परिषद अधिनियम

इस अधिनियम में केवल भारतीय विधान परिषदों की शक्तियाँ, कार्य तथा रचना की ही बात कही गई थी। केन्द्रीय विधान मण्डल के विषय में प्रावधान किया गया कि अतिरिक्त सदस्यों की संख्या कम से कम 10 हो तथा अधिकतम 16 हो। इसमें यह सुझाव दिया गया था कि परिषद में कम से कम 40 प्रतिशत लोग अशासकीय होने चाहिए। इनमें कुछ चुने हुए और कुछ मनोनीत होते थे। प्रान्तीय मण्डलों का भी विस्तार किया गया। इस अधिनियम द्वारा पहली बार 'चुनाव' का सिद्धान्त सीमित रूप से स्वीकार किया गया।

11. भारतीय परिषद ऐक्ट 1909 मिन्टो मॉरले सुधार

इस अधिनियम द्वारा केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान मण्डलों की शक्तियों तथा आकार में वृद्धि किया गया। केन्द्रीय विधान मण्डल में अतिरिक्त सदस्यों की अधिकतम संख्या 60 कर दी गई। अब विधान मण्डल में कुल 69 सदस्य थे जिसमें 37 शासकीय सदस्य तथा 32 अशासकीय वर्ग के थे।

---

[1] प्रो0 वी0 एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 526

प्रान्तीय विधान भण्डलों का भी विस्तार किया गया यथा– बंगाल–52, मद्रास– 47, बम्बई–47, सं0प्रा0–47, वर्मा– 16 आदि।

इस अधिनियम का सबसे महत्वपूर्ण और विवादस्पद प्रावधान पृथक–निर्वाचन प्रणाली थी जो मुस्लिमों को प्रदान किया गया था। ब्रिटिश सरकार ने इसे अल्प संख्यक वर्ग के हितों के नाम पर किया था, पर वास्तव में यह 'फूट डालो और राज्य करो' की नीति के तहत किया गया था। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने इस पर टिप्पणी की कि इससे उनके (अंग्रेजों) चारो ओर एक राजनैतिक प्रतिरोध बन गये जिन्होंने उन्हें शेष भारत से अलग कर दिया जिससे शताब्दियों से आरम्भ हुए एकतत्व तथा मिलने की ओर किये गए सभी प्रयत्नों को पलट दिया। के0एम0 मुंशी के अनुसार इन्होंने उभरते हुए प्रजातंत्र को जान से मार डाला।[1]

12. भारत-शासन अधिनियम-1919 (मॉंटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधार)

इस अधिनियम के द्वारा भारत राज सचिव से कुछ कार्य लेकर भारतीय उच्च्य आयुक्त (Indian High Commissioner) नामक एक नये पदाधिकारी की नियुक्ति की गई।

भारत में भी महत्वपूर्ण बदलाव किया गया। यद्यपि केन्द्र में उत्तरदायी शासन लाने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया परन्तु भारतीयों को अधिक महत्वपूर्ण भूमिका दी गयी। गवर्नर–जनरल की 8 सदस्यी कौंसिल में 3 भारतीय नियुक्त किए गये। इन मंत्रियों को विधि, शिक्षा, श्रम, स्वास्थ्य तथा उद्योग जैसे विभाग सौंपे गये।

एक अन्य महत्वपूर्ण प्रावधान के समस्त विषयों को केन्द्र तथा प्रान्तों में विभाजित कर दिया गया। राष्ट्रीय महत्व तथा एक से अधिक राज्यों से सम्बन्ध

---

[1] प्रो0 वी0 एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 538

रखने वाले विषयों को राष्ट्रीय विषय यथा– विदेश, रक्षा, डाक–तार संचार व्यवस्था आदि तथा प्रान्तीय महत्व के विषयों यथा– स्वास्थ्य, शिक्षा आदि प्रान्तीय विषय बनाया गया।

केन्द्र में द्वि–सदस्यी विधान मण्डल बनाया गया। एक सदन राज्य परिषद (Council of State) और दूसरा सदन केन्द्रीय विधान सभा (Central Ligislative assembly) था।

इस अधिनियम के तहत प्रान्तों में द्वैत शासन प्रणाली लागू की गई। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इस अधिनियम को निराजाजनक तथा असंतोष प्रद कहा।

13. साइमन कमीशन

ब्रिटिश सरकारने नवम्बर 1927 में सर साइमन की अध्यक्षता में एक कमीशन नियुक्त किया जिसे 1919 में अधिनियम की समीक्षा करके भावी संवैधानिक सुधारों की रूपरेखा प्रस्तुत करने का दायित्व सौंपा गया। इस श्वेत कमीशन का लगभग सभी भारतीयों ने विरोध तथा बहिष्कार किया। बाबा साहेब ने साइमन कमीशन के सम्मुख अछूत वर्ग की समस्याओं को बड़े ही प्रभावशाली ढंग से रखा। 1930 में इस कमीशन की रिपोर्ट प्रकाशित हुई।

14. गोल मेज सम्मेलन

भारतीय संवैधानिक प्रश्नों पर विचार करने के लिए लंदन मे तीन गोल मेज सम्मेलन आयोजित हुए--

1. प्रथम गोल मेज सम्मेलन

1930 में प्रथम गोल मेज सम्मेलन हुआ जिसमें भारतीय राजनीतिक जीवन के सभी पक्षों को बुलाया गया था, लेकिन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस,

जिसने सविनय अवज्ञा आन्दोलन आरम्भ किया था, भाग नहीं लिया। बाबा साहेब ने इस सम्मेलन में भाग लेकर महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।

2. द्वितीय गोल मेज सम्मेदन

यह 1931 में सम्पन्न हुआ जिसमें 4 अप्रैल को गाँधी इर्विगं (भारत का वाइसराय) समझौता होने के बाद भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की ओर से महात्मा गाँधी सम्मिलित हुए थे। बाबा साहेब भी सम्मिलित हुए।

3. तृतीय गोल मेज सम्मेलन

1932 में तृती गोल मेज सम्मेलन हुआ, जिसमें कांगेस ने भाग नहीं लिया लेकिन बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर सहित अनेक भारतीय प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

15. कम्यूनल अवार्ड

ब्रिटिश प्रधानमंत्री रेम्ज मैकडोलन ने 4 सितम्बर 1932 को अपना महत्वपूर्ण कम्यूनल अवार्ड– साम्प्रदायिक निर्णय दिया। इसमें पृथक निर्वाचन प्रणाली का विस्तार किया गया। इसमें प्रमुख बात यह थी कि अछूत वर्ग को भी अल्पसंख्यक का दर्जा देकर पृथक–निर्वाचन प्रणाली प्रदान की गई थी। इसके विरुद्ध गाँधी जी ने अपना ऐतिहासिक पूना आमरण अनशन किया। अंत में तमाम राजनैतिक दबाव के कारण बाबा साहेब पूना पैक्ट को स्वीकार कर लिया।

16. 1935 का भारत शासन अधिनियम

भारतीय संवधान में सर्वाधिक प्रभाव इसी अधिनियम का पड़ा है। 250 से अधिक धाराएं स्वीकार उसी प्रकार कर ली गई। इस महत्वपूर्ण अधिनियम में निम्नलिखित महत्वपूर्ण कमेटियों, मशविदों की सहायता ली गई :–

1. साइमन कमीशन 2. नेहरू रिपोर्ट (1928), 3. गोल मेज सम्मेलन के वाद–विवाद, 4. खेत–पत्र, 5. संयुक्त प्रवर समिति रिपोर्ट, 6. लोथिया रिपोर्ट।

यह अधिनियम बहुत ही विस्तृत था। इसके तीन मुख्य अंग हैं–

क– अखिल भारतीय संघ।

ख– संरक्षणें सहित उत्तरदायी सरकार।

ग– विभिन्न साम्प्रदायिक तथा अन्य वर्गों के लिए पृथक प्रतिनिधित्व।

इस अधिनियम के द्वारा प्रान्तों में द्वैत शासन व्यवस्था समाप्त कर प्रान्तीय स्वयत्ता की स्थापना की गई। साथ ही एक संघीय न्यायालय की स्थापना की व्यवस्था भी की गई।

इस अधिनियम को अगस्त 1935 में ब्रिटिश सम्राट की अनुमति मिल गई। संघ का क्रियान्वित न करके प्रान्तीय स्वयत्ता को 1 अप्रैल 1937 को लागू कर दिया गया।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस सहित अनेक दलों ने इसकी आलोचना की। कांग्रेस के तत्कालीन अध्यक्ष जवाहर लाल नेहरू ने इसे अनैच्छिक, अप्रजातांत्रिक और अराष्ट्रवादी संविधान की संज्ञा दी। जिन्ना साहेब ने भी इसे पूर्ण तया सड़ा हुआ मूल रूप से बुरा और बिल्कुल अस्वीकृत बताया।[1]

इस आलोचना के बावजूद भी भारतीय संविधान पर सर्वाधिक प्रभाव इसी अधिनियम का पड़ा।

17. क्रिप्स प्रस्ताव- 1942

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान भारतीयों का अधिकाधिक सहयोग प्राप्त करने के लिए ब्रिटिश सरकार ने हाउस ऑफ कामन्स के नेता सर स्टेफर्ट क्रिप्स के नेतृत्व में एक शिष्ट मण्डल भारत भेजा। क्रिप्स मिशन के मशविदे में सबसे प्रमुख

---

[1] प्रो0 वी0 एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 559

प्रावधान था-- युद्ध समाप्त होते ही भारतीयों का एक निर्वाचित निकाय बनाया जायेगा जो भारत के लि एक संविधान बनाएगा। इस संविधान सभा का चुनाव प्रान्तीय विधान सभाओं के निम्न सदन द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के अनुसार किया जायेगा। संविधान भारत को डोमिनियन स्टेट और ब्रिटिश राष्ट्र में बराबर की भागीदारी देगा।

क्रिप्स मिशन के प्रस्ताव को किसी भारतीय दल ने स्वीकार नहीं किया। महात्मा गाँधी ने इसे उत्तर तिथीय चेक (Post Dated Cheque) की संज्ञा दी। मुस्लिम लीग भी पाकिस्तान का उल्लेख न होने के कारण असंतुष्ट थी। कांग्रेस ने असंतुष्ट होकर 8 अगस्त 1942 को बंबई प्रस्ताव द्वारा भारत छोड़ो आन्दोलन आरम्भ किया।[1]

18. कैबिनेट मिशन

द्वितीय विश्व युद्ध में 1945 में (अगस्त 06.09.1945 को अमेरिका द्वारा जापान पर परमाणु बम हमले के बाद समाप्त हुआ विश्व युद्ध) समाप्त होने के बाद बदलती हुई राजनैतिक आर्थिक परिस्थितियों में ब्रिटिश सरकारने 19 फरवरी 1946 को घोषणा की कि मंत्रिमण्डल का एक शिष्ट मण्डल भारत जाये ताकि वाइसराय की सहायता से भारतीय नेताओं से राजनैतिक, संवैधानिक मामलों पर प्रभावशाली बात–चीत हो सके। यह कैबिनेट मिश 24 मार्च 1946 को भारत (दिल्ली) पहुँचा, जिसमें लार्ड पैथिक लारेन्स, सर स्टेफर्ट क्रिप्स और ए0बी0 एलेक्जण्डर सम्मिलित थे। कैबिनट मिशन आते ही भारतीय नेताओं के साथ बिस्तार से चर्चा की। मुस्लिम लीग और कांग्रेस में भारत की एकता अथवा बंटवारे के सम्बन्ध में समझौता नहीं हो सका, इसलिए कैबिनेट मिशन ने अपनी ओर से संवैधानिक समस्या का हल प्रस्तुत किया। यह प्रस्ताव लार्ड बेबल (गवर्नर–जनरल) और

---

[1] डी0डी0 बसू, भारत का संविधान, पृष्ठ सं0– 14

कैबिनेट मिशन के एक संयुक्त वक्तव्य में 16 मई 1946 को प्रकाशित किए जो इस प्रकार है–

1. भारतीय संघ की स्थापना की जाए जिसमें भारतीय राज्य तथा प्रान्त सम्मिलित हो। इस संघ के पास प्रतिरक्षा, विदेश संबंध तथा संचार व्यवस्था का उत्तरदायित्व रहे। संघ को स्पष्ट रूप से दिये गये विभागों के अतिरिक्त समस्त अधिकार प्रान्तों अथवा राज्यों को उपलब्ध रहेंगे।

2. प्रान्तों को पृथक समूह बनाने का अधिकार हो। प्रत्येक समूह को यह निर्णय करने का अधिकार हो कि कौन–कौन विषय समूह के अधिकार में रखे जाएं।

3. संघ और समूह के संविधान में यह व्यवस्था कीजिए कि प्रत्येक 10 वर्ष के बाद कोई भी प्रान्त अपने विधान मण्डल के बहुमत से संविधान में संशोधन का प्रस्ताव कर सके।

4. तब तक के लिए केन्द्र में एक अंतरिम सरकार की स्थापना हो, जिसमें भारत के सभी प्रमुख दलों के प्रतिनिधि सम्मिलित हों। केन्द्रीय सरकार के सभी विभाग इन्हीं प्रतिनिधियों के अधीन हों।[1]

कैबिनेट मिशन की इस योजना का गुण यह था कि इसने कांग्रेस तथा लीग दोनो के दृष्टिकोंण में मध्यममार्ग निकालने का प्रयत्न किया। कांग्रेस को संतुष्ट करने के लिए संगठित भारत की व्यवस्था की गई और मुस्लिम लीग तथा भारतीय नरेशों को संतुष्ट करने के लिए उस संघ को दुर्बल रखा गया। प्रान्तों को गुट बनाने को अधिकार देते हुए A, B तथा C श्रेंणियों में उनका वर्गीकरण भी किया गया –

1. A श्रेंणी में मद्रास मुंबई, संयुक्त प्रान्त, बिहार, मध्य प्रदेश और उड़ीसा थे।

[1] प्रो0 बी0एल0 शुक्ला, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 901

2. B श्रेंणी में उत्तर–पश्चिम के मुस्लिम बहुसंख्यक प्रान्त, पंजाब, सीमा प्रान्त और सिंध के प्रदेश थे।

3. C श्रेंणी में मुख्य आयुक्त के प्रान्त, दिल्ली, अजमेर, और दुर्ग सम्मिलित थे।

कैबिनेट मिशन का सबसे महत्वपूर्ण प्रस्ताव संविधान सभा के गठन का था। यह दीर्घ काल से चली आ रही मांग थी जिसे अब स्वीकार किया गया। कैबिनेट मिशन ने स्वीकार किया कि संविधान बनाने की संस्था स्थापित करने का सबसे अच्छा तरीका है– वयस्क मताधिकार पर अधारित चुनाव।[1] लेकिन साथ ही कैबिनेट मिशन का यह भी विचार था कि अभी ऐसा कदम उठाने से नया संविधान बनाने में काफी देर हो सकती है। इसीलिए यह निर्णय किया गया कि प्रदेशों की नव–निर्वाचित असेम्बलियाँ 10 लाख की जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि के हिसाब से संविधान सभा के सदस्यों का चुनाव करें। सिक्ख और मुस्लिम विधायक अपने सम्प्रदायों की जनसंख्या के हिसाब से अपने प्रतिनिधि चुन लें।

संविधान सभा में 389 सदस्य प्रस्तावित थे, जिसमें से 296 ब्रिटिश भारत से तथा 93 सदस्य भारतीय रियासतों के होने थे।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने काफी हिचकिचाहट के बाद कैबिनेट मिशन योजना को स्वीकार कर लिया, लेकिन मुस्लिम लीग ने इसका प्रबल विरोध किया। जिन्ना को इस बात का दुःख था कि इस योजना ने "बंटकर रहेगा हिन्दुस्तान और लेकर रहेंगे पाकिस्तान" की मांग को जो कि लीग की मांग थी, अस्वीकृत कर दिया। अंत में अन्तर्विरोधों के बीच कांग्रेस और लीग दोनो ने कैबिनेट मिशन की दीर्घकालिक योजना स्वीकार कर ली।

बाबा साहेब इस ऐतिहासिक बेला में दलित वर्गों के हितों के लिए पूर्ण सचेष्ट थे यद्यपि 1946 के प्रान्तीय विधान सभा चुनावों में बाबा साहेब और उनकी पार्टी

---

[1] कैबिनेट मिशन और वाइसराय का बयान– 16मई 1946, बी0पी0 मेनन, द ट्रांसफर ऑफ पावर इन इण्डिया, प्रिंसटन 1957, अपेंडिक्ट IV पृष्ठ सं0– 47

'अनुसूचित जाति संघ' को कारारी पराजय का सामना करना पड़ा था। बाबा साहेब स्वयं मुंबई सीट से चुनाव हार गए थे क्योंकि कांग्रेस और उसके समर्थक समाचार पत्रों ने गहरी शाजिस की थी। इससे बाबा साहेब निराश हो गये थे, लेकिन हताश नहीं। दलित वर्गों के हितों के लिए वे पूर्ण संकल्पी ही नहीं थे अपितु अपने सम्पूर्ण जीवन को न्योछावर करने को तत्पर थे। 15 जुलाई 1946 को बाबा साहेब ने अपने अनुयायियों के साथ पुणे सत्याग्रह आरम्भ किया। दलित वर्ग की ओर से प्रतिनिधित्व करने और शिकायतें प्रस्तुत करने का अधिकार कांग्रेस द्वारा हथिया लेने के कारण बाबा साहेब का यह संघर्ष कांग्रेस के विरुद्ध था। लखनऊ और कानपुर में भी इसी प्रकार का सत्याग्रह बाबा साहेब के अनुयायियों ने आरम्भ किया। 19 जुलाई 1946 को बाबा साहेब ने पत्रकारवार्ता में स्पष्ट किया– "अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान छोड़ना तय किया है सत्ता स्पृश्य (सवर्ण) हिन्दुओं और मुसलमानों के हाथों में आने वाली है। इसलिए हम कांग्रेस से पूँछ रहे हैं कि आप इस छः करोड़ दलित समाज को नये संविधान के अनुसार कौन से अधिकार देने वाले हैं।" इसी समय बाबा साहेब ने मांग की कि पूना पैक्ट को रद्द किया जाए। इस पैक्ट की वजह से ही दलित वर्ग के सच्चे प्रतिनिधि नहीं चुने जा सकते। इससे दलित वर्ग का मतदान का अधिकार मानो अपहृत कर लिया गया है।[1] बाबा साहेब के इस सत्याग्रह की महात्मागाँधी ने अपने हरिजन पत्र में खिल्ली उढ़ाई। बाबा साहेब ने इसकी परवाह नहीं की और सत्याग्रह जारी रखा। बदली हुई परिस्थितियों में कांग्रेस के कुछ नेताओं ने समझौते का प्रयास किया और इसी क्रम में बंबई प्रान्तीय कांग्रेस के नेता पाटिल 27 जुलाई को सिद्धार्थ महाविद्यालय आकर बाबा साहेब से मिले। नारायण मल्हार जोशी ने भी मध्यस्ता की और बाबा साहेब की सरदार पटेल से मुलाकात हुई लेकिन अंततः समझौता नहीं हो सका।

बाबा साहेब 15 अक्टूबर 1946 को लंदन रवाना हुए और वहाँ पत्रकारों से कहा कि लिवरल पार्टी ने दलित वर्ग के साथ विश्वास घात किया है।[2] लंदन में बाबा

---

[1] प्रो0 रामलखन शुक्ला, आधुनिक भारत का इतिहास, पृष्ठ सं0– 901
[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेड़कर जीवन चरित, पृष्ठ सं0– 362

साहेब ने ब्रिटेन के अनेक नेताओं से मुलाकात कर दलित वर्ग के हितों की ओर ध्यान आकृष्ट किया। उन्होंने ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली और भारत मंत्री सैम्युअल होमर से भी मिलकर दलित समस्याओं पर चर्चा की लेकिन कोई सार्थक सफलता नहीं मिल सकी और उन्हें निराश मनः स्थिति में भारत लौटना पड़ा।

भारत आकर बाबा साहेब ने अपना सम्पूर्ण ध्यान संविधान सभा में प्रवेश के प्रश्न पर लगा दिया। वे अब भली–भाँति जान चुके थे कि संविधान सभा में प्रवेश के बिना दलित वर्ग के समस्याओं का समाधान नहीं हो सकता जिसके लिए आज तक संघर्ष करते रहे। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस बाबा साहेब की नम्बर एक पर की कट्टर दुश्मन थी और उसने अपने दरवाजे ही नहीं अपितु खिड़कियों को भी बाबा साहेब के लिए बंद कर लिया था। मुंबई विधान सभा में उनके इतने सदस्य भी नहीं थे कि वहाँ से चुने जाते। दलित वर्ग के सौभाग्य से बंगाल विधान सभा के अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधियों ने बाबा साहेब को मुस्लिम लीग की सहायता से संविधान सभा के लिए चुन लिया। उनके इस चुनाव में जोगेन्द्रनाथ मण्डल का सराहनीय योगदान रहा।[1] यह एक बड़ी घटना थी, साथ ही बाबा साहेब के विरोधियों के मुख पर तमाचा भी थी जो यह कहते थे कि वे महार जाति के महाराष्ट्र के छोटे भाग के नेता हैं। इस चुनाव ने दिखा दिया कि वे सम्पूर्ण भारत के दलित वर्ग के नेता हैं।

राष्ट्रीय संविधान सभा के लिए जुलाई–अगस्त 1946 में चुनाव संपन्न हुए। कुल 389 सदस्य प्रस्तावित थे जिसमें 296 ब्रिटिश भारत से और 93 भारतीय रियासतों के सदस्य होने थे। इस चुनाव में केवल ब्रिटिश भारत के ही सदस्यों का चुनाव हुआ। इसमें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने सामान्य श्रेणी वाली 210 सीटों में से 199 सीटें जीती। कांग्रेस ने पंजाब में 4 सिक्ख सीटों में से 3 सीटें भी जीतीं। साथ ही कांग्रेस को 78 मुस्लिम सीटों में से 3 सीटें मिली और 3 सीटें कुर्ग, अजमेर–मारवाड़ तथा दिल्ली से

---

[1] हरिजन, 4 अगस्त 1946

मिलीं। इस प्रकार कांग्रेस को कुल 208 सीटें प्राप्त हुई। मुस्लिम लीग ने 78 मुस्लिम सीटों में से 73 सीटें जीतीं।[2]

अगला महत्वपूर्ण कार्य संविधान निर्माण के लिए योग्य व्यक्तियों की खोज करना था। यह प्रशसन्ता की बात थी कि उस समय सौभाग्य से ऐसी प्रतिभा सम्पन्न एवं प्रशिक्षित व्यक्ति प्रचुरता से उपलब्ध थे। इस कार्य में स्वयं गाँधी जी ने पहल की। उन्होंने लिस्ट के लिए 16 प्रमुख नामों का सुझाव दिया। इस प्रकार 30 ऐसे लोग कांग्रेस लिस्ट में चुने गये जो इसके सदस्य नहीं थे। असेम्बली का वैचारिक स्वरूप.... स्वयं कांग्रेस सदस्यता के कारण अधिक व्यापक हो गया।[1]

संविधान सभा के चुनाव के बाद मुस्लिम लीग अपने को अल्पमत में पाकर बहिष्कार का निर्णय लिया। कांग्रेस और जवाहर लाल नेहरू अंतरिम सरकार के अध्यक्ष के रूप में समझौते का प्रयास करते रहे, लेकिन असफल रहे। अंत में 20 नवम्बर 1946 को संविधान सभा 9 दिसम्बर 1946 को बुलाये जाने की घोषणा की गई। बाइसराय लार्ड वेवेल असेंबली बुलाने से हिचकिचा रहे थे। कांग्रेस इस बात पर जोर दे रही थी कि अब असेम्बली चुनी जा चुकी है, इसलिए उसे अपना कार्य शुरू कर देना चाहिए। पं0 नेहरू को वाइसराय की इस इच्छा का भी दृढ़ता से विरोध करना पड़ा कि वे (वाइसराय) स्वयं ही असेम्बली का अस्थायी सदस्य चुने और अपने ही नाम से इसका प्रथम अधिवेशन बुलाए।[2] नेहरू जी के जोर देने पर सच्चिदानंद सिन्हा संविधान सभा के अस्थायी सदस्य बने और 9 दिसम्बर 1946 को प्रातः 11बजे संविधान सभा की बैठक आरम्भ हुई। इस प्रथम अधिवेशन में 207 सदस्य उपस्थित थे, शेष अनुपस्थित सदस्य मुस्लिम लीग के थे, क्योंकि मुस्लिम लीग ने चुनाव के तत्काल बाद बहिष्कार का निर्णय लिया था। 11 दिसम्बर 1946 को डा0 राजेन्द्र प्रसाद को संविधान सभा का स्थायी सदस्य चुना गया।

---

[2] प्रो0 विपिन चन्द्र, आजादी के बाद का भरत, पृष्ठ सं0– 51

[1] डा0 डी0आर0 जाटव, डा0 अम्बेडकर–संविधान के मुख्य निर्माता, पृष्ठ सं0–

[2] प्रो0 विपिन चन्द्र, आजादी के बाद का भारत, पृष्ठ सं0– 52।

13 दिसम्बर को जवाहर लाल नेहरू ने प्रसिद्ध उद्देश्य संबन्धी प्रस्ताव पेश किया जिसकी प्रमुख बाते इस प्रकार थीं–

1. भारत एक पूर्ण प्रभुता सम्पन्न गणराज्य होगा, जो स्वयं अपना संविधान निर्मित करेगा।

2. भारत संघ में ऐसे सभी क्षेत्र शामिल होंगे, जो इस समय ब्रिटिश भारत में हैं या देशी रियासतों में हैं अथवा इन दोनो से बाहर ऐसे क्षेत्र हैं जो प्रभुता सम्पन्न भारत में शामिल होना चाहते हैं।

3. भारत में जो भी क्षेत्र हैं, अपनी वर्तमान सीमाओं सहित या संवधिान सभा द्वारा संवैधानिक कानून के अधीन निर्धारित, वे स्वायत्त इकाइयों के रूप में अवशिष्ट शक्तियों सहित सरकार एवं प्रशान के सभी कार्य करेंगी, सिवाय उनके जो संघ में निहित है।

4. भारतीय संघ तथा इकाइयों में समस्त राजशक्ति तथा औचित्य का मूल स्रोत स्वयं जनता होगी।

5. भारत के समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक न्याय पद अवसर और कानूनों की समानता, विचार, भाषण, विश्वास, व्यवसाय, संगठन निर्माण और कार्य की स्वतन्त्रता, कानून तथा सार्वजनिक नैतिकता के अनुरूप प्राप्त होगी।

6. अल्पसंख्यक वर्ग, पिछड़ी जातियों तथा जनजातियों, पद्र दलित तथा अन्य पिछड़ी जातियों के हितों की रक्षा की समुचित व्यवस्था की जायेगी।

7. न्याय एवं सभ्य राष्ट्रों की दृष्टि से भारतीय गणतन्त्र की अखण्डता तथा क्षेत्र और उनके अधिकारों का रख–रखाव किया जाएगा।

8. इस प्राचीन भूमि को सही और सम्मानजनक स्थान संसार में प्राप्त हुआ है। भारत विश्व–शांति एवं मानव जाति के कल्याण हेतु पूर्ण योगदान करेगा।

नेहरू जी ने अपने सुन्दर भाषण से पूरे सदन को मंत्रमुध्य कर दिया। राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन ने नेहरू जी के प्रस्ताव का अनुमोदन किया। इस पर 19 दिसम्बर तक बहस होती रही। डा0 मुकुन्दराव जयकर ने नेहरू जी के प्रस्ताव में संशोधन सूचित किया। कुछ सदस्यों ने मांग की कि इस पर अन्तिम निर्णय तब तक के लिए स्थगित किया जाए जब तक कि मुस्लिम लीग तथा भारतीय रियासतों के प्रतिनिधि शामिल न हो जाएं। श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने इसका विरोध किया।

अध्यक्षने डा0 अम्बेडकर को अपने विचार--प्रस्तुत करने के लिए आमंत्रित किया। बाबा साहेब कांग्रेस के कट्टर विरोधी थे, इसलिए सभी सदस्य उनको सुनने के लिए उत्सुक थे। बाबा साहेब ने बड़े ही गंभीर स्वर और वक्तत्वपूर्ण भाषा में बड़े आत्मविश्वास के साथ अपना भाषण शुरू किया, पण्डित नेहरू के प्रस्ताव का प्रथम भाग निर्विवाद है। संविधान समिति के उद्देश्य और साध्य निरूपित करने वाला प्रथम भाग यद्यपि पाण्डित्यपूर्ण और अधिकार प्रतिपादनकारी है, फिर भी आज जिन पर अन्याय हो रहा है, उनको उसके निवारण का मार्ग नहीं बता पा रहा है, फिर भी यह विशेष वादग्रस्त नहीं है।

अपना भाषण जारी रखते हुए बाबा साहेब ने कहा– ''इस देश में सामाजिक, राजनैतिक और धार्मिक क्रांति आज नहीं तो कल होने वाली है। इसके विषय में हम एक दूसरे से अलग हो गए हैं, यह मैं समझता हूँ। हम एक दूसरे से संघर्ष कर रहे हैं। मैं भी एक युद्ध छावनी का नेता हूँ। लेकिन यह सब रहते हुए भी आश्वस्त हूँ कि समय और परिस्थितियां आने पर इस दुनिया में ऐसा कुछ नहीं है जो देश को एक होने से रोक सके। इस देश में अनेक जातियां एवं धर्म हैं फिर भी सब एक होंगे, इस बारे में मेरे मन में किसी प्रकार की शंका नहीं है। देश के विभाजन की मांग मुस्लिम लीग द्वारा की जा रही है, फिर भी एक दिन ऐसा आएगा कि अखण्ड हिन्दुस्तान में सबका हित है, यह मुसमानों की समझ में अपने आप आ जायेगा। देश के अंतिम साध्य के बारे में मुझे कोई शक नहीं है। मुख्य प्रश्न यह है कि इस देश के विभिन्न जातियों के समिश्र समुदाय को

एक निश्चित और सहकार्य की भावना से एकता के रास्ते पर कैसे लाया जाए? यह हमारी राजनैतिक चतुराई का महान प्रयास होगा। यदि हम इस देश के सभी दल और समाज को उसमें सम्मिलित करने में और उन्हें खुश करने के लिए उनकी कुछ मांगे पूरी करनें में सफल हो जाए।....... राष्ट्र का भविष्य निर्धारित करते समय पार्टी और नेताओं की प्रतिष्ठा को महत्व नहीं देना चाहिए।"

बाबा साहेब ने नेहरू के प्रस्ताव के स्थगन की अनुमति चाही और कांग्रेसी नेताओं से निवेदन किया कि वे एक बार किसी समझौते के लिए सुनिशचित प्रयास करें। बाबा साहेब ने कहा कि गतिरोध तोड़ने के 3 विकल्प हैं–

1. एक पक्ष का दूसरे के प्रति आत्म समर्पण।
2. सुलह–समझौते पर आधारित शांति।
3. युद्ध।

मैं यह स्वीकार करता हूँ कि युद्ध की कल्पना से मैं काँप उठता हूँ। यह युद्ध मुसलमानों के खिलाफ या उससे भी अधिक बुरा ब्रिटिश और मुसलमानों इन दोनो के खिलाफ होने की संभावना है। अगर आपको यह लगता है कि यह समस्या युद्ध से हल होगी या मुसलमानों को जीतकर उन्हें नापसंद संविधान को स्वीकार करने के लिए विवश करेंगे, तो देश मुसलमानों को जीतने के लिए हमेशा युद्ध में व्यस्त रहेगा।

हमे अपने व्यवहार से यह सिद्ध करना चाहिए कि यदि विधान सभा ने अपने में सत्ता सम्पन्न शक्तियाँ निहित कर ली हैं तो वह उन्हें बुद्धिमत्ता से संचालित करेगी।[1] यही एक तरीका है कि हम अपने देश के सभी वर्गों को अपने साथ लेकर चल सकते हैं। अन्य कोई तरीका नहीं है जो हमें एकता की ओर ले जा सके।

बाबा साहेब का यह भाषण राष्ट्रीय एकता से अभिभूत था। इस भाषण से सदस्यों के मन में सहकार्य भावना निर्मित हुई। कांग्रेस के वही सदस्य जो अब तक बाबा साहेब के दुश्मन थे, तालियों से उनके भाषण का स्वागत किया। उनका उपहास करने

---

[1] सी0ए0डी0 खण्ड–1, 17 दिसम्बर, 1946, पृष्ठ सं0– 99–103

वाले लोग अब उनके मित्र बन गए थे। उन्होंने कांग्रेस सदस्यों को पूरी तरह मोहित कर दिया था। संविधान सभा मंत्रमुग्ध हो गई थी।

नेहरू के संकल्पों को विचार विनिमय के लिए स्थगित कर दिया गया लेकिन अंत में 20 जनवरी 1947 को यह प्रस्ताव पारित किया गया। संविधान सभा स्थगित होते ही बाबा साहेब पीपुल्स एजूकेशन सोसाइटी का कार्य देखने बंबई चले गए। इसी समय 20 फरवरी 1947 का ब्रिटिश प्रधानमंत्री लार्ड एटली ने घोषणा की कि जून 1948 तक ब्रिटिश सरकार भारत को मुक्त कर देगी। इसी के साथ एक नया दौर आरम्भ हो गया। वेवेल के स्थान पर लार्ड माउन्टवेटन को नया वाइसराय बनाकर भेजा गया। 3 जून 1947 को माउन्टवेटन ने भारत का विभाजन तथा 15 अगस्त 1947 को भारत को स्वतन्त्र करने की घोषणा की। भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम 4 जुलाई 1947 को ब्रिटिश संसद में रखा गया जिसे 18 जुलाई को पारित कर दिया गया। अब पूरी परिस्थिति तथा घटनाक्रम ही बदल गई थी।

संविधान सभा के कुल चार सत्र हुए, जिसमें प्रथम सत्र 9 दिसम्बर 1946 से 31 जुलाई 1947 तक चला।[1]

प्रथम सत्र में भारतीय संविधान के कुछ प्रारम्भिक बातों पर विचार विमर्श हुआ। इसी दौरान नेहरू संकल्प पर चर्चा होकर उसे पारित किया गया। संविधान निर्माण के लिए अनेक समितियों, उपसमितियों का गठन किया गया। इसमें एक प्रमुख झण्डा समिति थी। डा0 राजेन्द्र प्रसाद की अध्यक्षता में यह काम कर रही थी जिसके प्रमुख सदस्य बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर भी थे। भारत के राष्ट्रध्वज का निर्माण करने पर विचार विमर्श जारी था। बंबई में बाबा साहेब के निवास पर अंतराब गडे, प्रबोधकार ठाकरे और गावड़े जैसे महाराष्ट्र के नेताओं ने मुलाकात करके आग्रह किया कि भारत का राष्ट्रध्वज भगवा रंग का होना चाहिए। 10 जुलाई को बाबा साहेब जब दिल्ली जा रहे थे तो बंबई में हिन्दू महासभा के कार्यकर्ताओं ने उन्हें भगवा ध्वज अर्पित किया।

---

[1] डा0 डी0आर0जाटव, डा0 अम्बेडकर– संविधान के मुख्य निर्माता, पृष्ठ सं0–

लम्बे–विचार विमर्श के पश्चात् संविधान समिति ने राष्ट्रध्वज के रूप में 22 जुलाई 1947 को अशोक चक्र से अंकित तिरंगा झण्डा स्वीकृत किया। इस समय एक महत्वपूर्ण प्रश्न आया कि झण्डे में अशोक चक्र हो या गाँधी जी का चरखा? तब बाबा साहेब ने अशोक चक्र (यह सम्राट अशोक के सारनाथ अभिलेख में उत्कीर्ण हैं) के पक्ष में प्रबल तक दिया। इस समय तक बाबा साहेब बौद्ध धर्म के पूर्ण संपर्क में आ गये थे और उनमें बौद्ध धर्म के प्रति गहन आस्था उत्पन्न हो गई थी। अंत में बाबा साहेब के गंभीर तर्कों के कारण अशोक चक्र को स्वीकार किया गया और गाँधी जी के चर्खे को भी स्थान देकर मध्यम मार्ग निकाला गया।

संविधान सभा ने सरदार पटेल की अध्यक्षता में अपने प्रस्ताव दिनांक 24 जनवरी 1947 के तहत एक सलाहकार समिति का गठन किया था जिसमें 50 सदस्य थे। इन सदस्यों में बाबा साहेब भी शामिल थे। इस समिति ने अपने दायित्व को सुचारु रूप से सम्पन्न करने के लिए चार उप समितियाँ गठित की–

1. मौलिक अधिकार उप समिति।
2. अल्प संख्यक अधिकार उप समिति।
3. उत्तर पूर्वी सीमान्त सजातीय क्षेत्र उप समिति।
4. वर्जित तथा अंशकित : वर्जित (आसाम को छोंड़कर) क्षेत्र उप समिति।

बाबा साहेब मौलिक अधिकार समिति एवं अल्पसंख्यक समिति के सदस्य थे और उन्होंने इसमें सराहनीय कार्य किया। बाबा साहेब ने मौलिक अधिकार उप समिति को एक स्मरण–पत्र प्रस्तुत किया, जिसमें उन्होनें अपने विचारों को ठोस रूप प्रदान किया। यह स्मरण–पत्र बाद में स्टेट्स ऐण्ड मारनारिटीज–व्हाट ऑर देयर राइट्स सीक्योर देम इन द कान्स्टीट्यूशन ऑफ फ्री इण्डिया (राज्य और अल्पसंख्यक, उनके अधिकार क्या हैं? और उन्हें स्वतन्त्र भारत के संविधान में किस प्रकार सुरक्षित किया जा सकता है) के नाम प्रकाशित हुआ।

संविधान सभा ने इस बीच 3 अन्य समितियों का गठन किया–

1. संघ–शक्ति समिति।
2. संघ–संविधान समिति।
3. प्रान्तीय संविधान समिति।

पं0 जवाहर लाल नेहरू प्रथम दो समितियों के अध्यक्ष थे जबकि तीसरी समिति के अध्यक्ष सरदार पटेल थ। इन समितियों की नियुक्ति संविधान सभा के प्रस्ताव दिनांक 30.04.1947 के तहत की गई थी।[1] बाबा साहेब प्रथम समिति के अति महत्वपूर्ण सदस्य थे। इन विभिन्न समितियों में बाबा साहेब ने जिस उत्कृष्ट बौद्धिकता, सच्चे लगन और कठोर परिश्रम से कार्य किया था उससे कांग्रेस सहित पूरा देश प्रभावित हुआ। डा0 अम्बेडकर के कटु आलोचक रहे कांग्रेस के शीर्ष नेताओं ने यही उपयुक्त समझा कि उन्हें (बाबा साहेब को) संविधान सभा की क्रियाओं में निकट का सहयोगी बनाया जाये।[2]

इस बीच देश के विभाजन के फलस्वरूप बाबा साहेब की सदस्यता समाप्त हो गई क्योंकि वे बंगाल से चुने गये थे। बाबा साहेब के सम्मुख अब एक गम्भीर समस्या थी किस प्रकार संविधान सभा में पुनः प्रवेश किया जाए, लेकिन इस समय देश के राजनैतिक वातावरण में काफी परिवर्तन आ चुका था। कांग्रेस का दृष्टिकोंण पूणतः बदल गया था– गाँधी जी का भी डा0 अम्बेडकर के प्रति निरोध कम हो गया था। सरदार पटेल ने बाबा साहेब से वार्ता की जिस पर गाँधी जी सहमत थे।[3] बाबा साहेब भी दलित वर्ग के हितों के लिए कांग्रेस के साथ भी सहयोग के लिए तैयार थे। इसी समय एम0आर0 जयकर ने संविधान सभा त्याग–पत्र दिया तो सरदार पटेल ने एक सुनहरा मौका देखा। निजलिंगरपा ने अम्बेडकर के नाम का प्रस्ताव किया और बम्बई के

[1] डा0 डी0आर0जाटव, डा0 अम्बेडकर– संविधान के मुख्य निर्माता, पृष्ठ सं0– 38
[2] वही, पृष्ठ सं0– 38
[3] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0– 95।

मुख्यमंत्री खरे साहेब को पत्र लिखा कि डा0 अम्बेडकर को जितवाना है यह कार्य हो गया।[1] जुलाई 1947 में मुंबई विधान सभा से संविधान सभा के सदस्य निर्वाचित होकर बाबा साहेब पुनः संविधान सभा में प्रवेश किए। यह एक ऐतिहासिक घटना थी। गैर–कांग्रेसी प्रतिभाओं को सहयोगी बना कर कांग्रेस ने एक युगान्तकारी कार्य किया। भारत में संविधान निर्माण के इतिहासकार ग्राविल ऑस्टिन के शब्दों में– संविधान सभा एक पार्टी वाले देश में एक पार्टी वाली संस्था थी। असेंबली कांग्रेस थी और कांग्रेस भारत। एक तीसरा अवयव भी था जो एक नया त्रिकोण बनाता था– सरकार (अर्थात चुनी हुई प्रादेशिक और राष्ट्रीय सरकारों का ढांचा) कांग्रेस सरकार भी थी दूसरे देशों की एक दलीय प्रणाली को देखते हुए हम यह नतीजा निकाल सकते हैं कि भारत की एक दलीय जन–प्रणाली संकुचित और कठोर होगी और उसका शक्तिशाली नेतृत्व भिन्न मतों को कुचल देगा तथा निर्णय लेने का काम कुछ लोग ही लेंगे। लेकिन भारत में सच्चाई इसके विपरीत थी। संविधान सभा और उसके बाहर कांग्रेस के सदस्यों में प्रतिक्रियावाद से लेकर क्रांतिकारी विचार तक पाये जाते हैं और वे इन्हें प्रकट करनें में भी हिचकिचाते नहीं थे। असेम्बली के नेताओं का कांग्रेस तथा केन्द्र सरकार में भी वही स्थिति थी। वे राष्ट्रीय हस्तियां थीं और उनके पास असीमित अधिकार थे, फिर भी असेंबली में निर्णय लेने की मशीनरी जनतांत्रिक थी। भारतीय संविधान कुछ लोगों की जरूरत होने के बजाय बहुतों की इच्दा का प्रतिनिधित्व कर रही थी।[2]

सविंधान सभा का द्वितीय सत्र 14 अगस्त 1947 से 25 फरवरी 1948 तक चला, जिसमें अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य किए गए। 29 अगस्त 1947 को संविधान सभा ने संविधान प्रारूप समित का गठन किया, जिसमें देश के सबसे योग्य व्यक्तियों का चयन किया गया। इस प्रारूप समिति में कुल 7 सदस्य थे–

---

[1] सरदार पटेल, कोरस्पांडेट्स, खण्ड–5 (अहमदाबाद 1973), पृष्ठ सं0– 149

[2] अंगस्टिन, द इंडिन कांस्टीच्यूशन, पृष्ठ सं0– 13

1. अल्लादि कृष्णा स्वामी अय्यर, 2. एन0 गोपालास्वामी अय्यर, 3. के0एम0 मुंशी, 4. डा0 बी0आर0अम्बेडकर, 5. सैय्यद मोहम्मद सादुल्ला, 6. बी0एल0 मित्तर 7. डी0पी0 खेतान।

लोक सभा के प्रथम अध्यक्ष प्रो0 जी0वी0 मावलंकर ने कहा कि संविधान प्रारूप समिति के सदस्य बड़े अनुभवी तथा दूरदर्शी थे। संविधान सभा इससे बेहतर बुद्धिमत्तापूर्ण तथा फलदायक निर्णय नहीं ले सकती थी। डा0 अम्बेडकर को इस प्रारूप समिति का अध्यक्ष चुना गया। यह इतिहास का विस्मयकारी संयोग था। जिस अम्बेडकर को विद्यार्थी जीवन में अछूत होने के कारण पग–पग पर अपमानित होना पड़ा, बडौदा रियासत की सेवा के दौरान आमुनषिक वर्ताव का समना करना पड़ा, जिसे अंग्रेजों का पिठ्ठू, देश द्रोही न जाने क्या–क्या कहा जाता था उसी अम्बेडकर को आज इतना बड़ा दायित्व सौंपा गया। भारतीय इतिहास का एक चमत्कार था।

संविधान प्रारूप समिति में बाद में सर बी0एल0 मित्तर के स्थान पर टी0एन0 माधवराव और डी0पी0 खेतान के स्थान पर श्री टी0टी0कृष्णमाचारी को सदस्य बनाया गया। जी0वी0 मालवंकर ने कहा कि समिति का प्रत्येक सदस्य एक रत्न था और बी0आर0 अम्बेडकर जो उस समिति के चेयरमैन थे सबसे चमकीला रत्न थे। 5 नवम्बर 1948 को टी0टी0 कृष्णमाचारी ने कहा कि डा0 अम्बेडकर भारतीय संविधान के मुख्य निर्माता हैं। मैं उस श्रम की मात्रा तथा उत्साह से परिचित हूँ, जिसे उन्होंने (बाबा साहेब) इस संविधान के पान्डुलेखन में लगाया है। सदन संभवता अवगत है कि आप द्वारा मनोनीत 7 सदस्यों में से एक ने इस्तीफा दे दिया ओर उस स्थान पर एक को चुना गया। एक सदस्य की मृत्यु हो गई जिसके स्थान पर किसी को नहीं चुना गया। एक सदस्य अमेरिका में रहते थे और एक अपने प्रदेश की राजनीति में लगे थे। एक या दो सदस्य दिल्ली से दूर थे और संभवतः स्वास्थ्य कारणों से कम समय दे पा रहे थे। इस प्रकार अन्ततः ऐसा हुआ कि संविधान के प्रारूप को बनाने के काम का भार डा0

अम्बेडकर पर ही आ पड़ा, और मुझे सन्देह नहीं कि हम उनके प्रति कृतज्ञ हैं, इस काम को उस ढंग से सफल बनाने में जो निःसन्देह ही प्रशंसनीय है।[1]

इस कथन से स्पष्ट है कि संविधान प्रारूप की तैयारी में डा0 अम्बेडकर जी ने कितना समय, परिश्रम तथा उत्साह एवं लगन से कार्य किया। संविधान मसौदा तैयार करने के लिए नियुक्त लेखन समिति में कई बार बाबा साहेब और उनके सचिव को ही कार्य करते देखा गया था। प्रारूप समिति ने किस परिश्रम व लगन से कार्य किया वह इस कथन से स्पष्ट है– "समिति 27 अक्टूबर 1947 से प्रतिदिन संवैधानिक सलाहकार के कार्यालय द्वारा तैयार प्रारूप की धाराओं के विचार–विमर्श एवं संशोधन के क्रम में अपनी बैठकें करती रही। समिति ने 13 फरवरी 1948 तक कुल मिलाकर 44 बैठकें की, जिसमें सम्मिलित होकर डा0 अम्बेडकर ने स्वयं काम–काज को संचालित किया। संविधान के नये प्रारूप को जैसा कि प्रारूप समिति ने निश्चित किया था, 21 फरवरी 1948 को संविधान सभा के अध्यक्ष को सौंप दिया गया। समिति अपना कार्य निरंतर करती रही और समय–समय पर जो संशोधन आये, उनका निराकरण भी करती रही। यह प्रारूप संविधान जनता के समक्ष आठ महीनें तक रखा जाता रहा और फिर संविधान सभा के समक्ष विचार–विमर्श के लिए 4 नवम्बर 1948 को प्रस्तुत किया गया।"

संविधान सभा तीसरा सत्र 4 नवम्बर 1948 को प्रातः 11 बजे आरम्भ हुआ। संविधान सभा के अध्यक्ष डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने डा0 अम्बेडकर को आमंत्रित किया कि वे प्रारूप संविधान को विचार–विमर्श हेतु प्रस्तुत करें। डा0 अम्बेडकर ने खड़े होकर उस ऐतिहासिक प्रारूप संविधान का प्रस्तुत किया, जिसे तैयार करनें उन्हें और उनके साथियों को असीम शारीरिक और बौद्धिक ऊर्जा व्यय करनी पड़ी थी। बाबा साहेब ने इस अवसर पर महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया– "संविधान सभा ने प्रारूप समिति को 29 अगस्त 1947 को चुना। उसने अपनी पहली बैठक 30 अगस्त 1947 को की। 30 अगस्त से वह 141 दिन बैठी, जिसके दौरान वह प्रारूप संविधान की तैयारी में व्यस्त रही। प्रारूप संविधान में

---

[1] डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, रायटिंग्स एण्ड स्पीचेज, खण्ड–13, पृष्ठ सं0–71–92

जिसे संवैधानिक सलाहकार ने प्रारूप समिति के द्वारा कार्य रूप देने के लिए बनाया था, 243 अनुच्छेद और 13 सूचियां थीं। प्रथम प्रारूप संविधान में जैसा कि उसे प्रारूप समिति ने संविधान सभा में प्रस्तुत हेतु तय किया था 315 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियां थीं।..... मैं यह तथ्य वर्णित करता हूँ कि एक ऐसी स्थिति आयी जब कहा जा सकता था कि प्रारूप समिति ने अपना कार्य पूरा करने में बहुत लम्बा समय लिया, किवह आराम से चलती रही और सार्वजनिक धन का अपव्यय करती रही। इसे नीरों का एक किस्सा कहा गया– नीरो बंशी बजा रहा था, रोम जल रहा था।'' क्या शिकायत का कोई औचित्य है? बाबा साहेब ने स्वयं प्रश्न किया।''[1]

बाबा साहेब ने बताया कि अन्य देशों की संविधान सभाओं ने अपने–अपने संविधान को तैयार करनें में बहुत कम समय लिया। यह सही है किन्तु हमें दो बातों की ओर ध्यान देना चाहिए–

1. अमेरिका, कनाड़ा, दक्षिणी अफ्रीका तथा आस्ट्रेलिया के संविधान बहुत लघु हैं, उनमें बहुत कम अनुच्छेद हैं, जबकि भारतीय संविधान में अधिक हैं।[2]
2. इन देशों के संविधान निर्माताओं को संशोधन की समस्याओं का कम सामना करना पड़ा जबकि हमे कुल 7635 संशोधन प्राप्त हुए, जिनमें से 4273 संशोधनों की छान–बीन करनी पड़ी।

डा0 अम्बेडकर ने अपने 4 नवम्बर के भाषण में यह स्वीकार किया कि विभिन्न समितियों के प्रतिवेदन बहुत देर से उनके पास पहुँचे, जिसके कारण समायोजन का कार्य कठिन हो गया। उन्होंने संविधान के कुछ प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डाला– अमेरिकन पद्धति में जो शासन प्रणाली है, उसे अध्यक्षीय शासन–प्रणाली कहते हैं, वहाँ कार्यपालिका का प्रमुख राष्ट्राध्यक्ष होता है, हमारे संविधान में ब्रिटिश संविधान के राजा

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, राइटिंग्स एण्ड स्पीचेज, खण्ड–13, पृष्ठ सं0–972–981

[2] वही।

के समान राष्ट्रपति का दर्जा है। वह राज्य का प्रमुख है, किन्तु कार्यपालिका का प्रमुख नहीं है। वह राष्ट्र का प्रतिनिधि है किन्तु राष्ट्र का काम–काज नहीं करता।

अमेरिकन मुख्य कार्यपालिका लोकतन्त्रात्मक कार्यपालिका मंडल नहीं है क्योंकि लोकसभा के बहुमत पर उस कार्यपालिका मंडल का अस्तित्व निर्भर है। ब्रिटिश राज्य पद्धति में कार्यपालिका मण्डल लोकतंत्रात्मक होता है क्योंकि उसका अस्तित्व ब्रिटिश लोकसभा के मतों पर निर्भर है। भारतीय संविधान में उत्तरदायित्व का सिद्धान्त निहित हैं, यहाँ दोहरी राज व्यवस्था है किन्तु नागरिकता एकहरी है, न्याय मंडल एक है, संघ एक है, अखिल भारतीय स्तर के अधिकारी समान हैं। प्रांत और केन्द्र के लिए एक ही संविधान है, यह लचीला भी है और कठोर भी। संविधान संशोधन का अधिकार लोक सभा और विधान सभा को दिया गया है। 1935 के कानून का संविधान काफी मात्रा में उपयोग कर लिया गया है" बाबा साहेब का ऐतिहासिक भाषण सुनकर संविधान सभा मंत्र मुग्ध हुई।

प्रारूप संविधान पर उसके प्रत्येक धारा पर चर्चा होती थी और उसे स्वीकार किया जाता था। 20 नवम्बर 1946 को संविधान की धारा 17 को स्वीकृति दी गई जिसमें अस्पृश्यता का उन्मूलन किया गया था। इस विधेयक को पेश करने का सौभाग्य सरदार पटेल को मिला था। हजारों–हजारों वर्षों से चली आ रही अपृश्यता, जिसके विरुद्ध बाबा साहेब ने अनवरत संघर्ष किया था, आज समाप्त कर दी गई थी। विश्व के प्रमुख समाचार पत्रों ने अस्पृश्यों की स्वतन्त्रता, अस्पृश्यता को निर्वासित करने वाली ऐतिहासिक घटना, 'मानवीय स्वतन्त्रता की एक विजय' आदि शीर्षक से इसका ब्योरा छापा। न्यूयार्क टाइम्स ने कहा– अनेक युगों से लगा हुआ यह कलंग धो डालने की उनकी प्रगति की तुलना नीग्रो लोगों की मुक्ति के साथ की जा सकती है। लंदन के प्रसिद्ध समाचार पत्र न्यू क्रॉनिकल ने लिखा– यह कार्य इतिहास के चरम महान कार्यों में से एक है। बाबा साहेब के जीवन का सबसे बड़ा स्वप्न आज साकार हुआ।

संविधान प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में बाबा साहेब ने 4 नवम्बर 1948 को संविधान सभा में संविधान प्रारूप प्रस्तुत किया। इसमें 315 धाराए और 8 अनुसूचियां थी। इस प्रारूप पर 9 नवम्बर तक संक्षिप्त चर्चा हुई जो प्रथम वाचन था। बहस के पश्चात धाराओं की संख्या 386 हो गई और अन्त में 395 धाराए और 8 अनुसूचियां स्वीकार की गई। संविधान सभा का दूसरा वाचन 15 नवम्बर 1948 से आरम्भ होकर 9 जनबरी 1949 तक चला। उसमें यथा सम्भव आम राय बनाने का प्रयास डॉ0 अम्बेडकर ने किया परन्तु ऐसा न होने पर परस्पर विरोधी विचारधाराओं में बेहतर तालमेल एवं सामन्जस्य बैठाने का प्रयास किया। डॉ0 अम्बेडकर ने संविधान की एक–एक अनुच्छे एवं संशोधन पर अपना बौद्धिक, तार्किक, व्याख्यान प्रस्तुत किया। महान स्वतंत्रता प्रेमी और सहिष्णुतावादी डॉ0 अम्बेडकर ने एक–एक सदस्यों के विचार को ध्यानपूवर्क सुना और फिर अन्त में अपना अकाट्य कर पेश कर निर्णय कराया। ऐसे ही एक अवसर डॉ0 अम्बेडकर ने कहा "राज्य का दायित्व होगा कि वह जन कल्याण की दिशा में काम करें, किन्तु वह राज्य तथा सरकार को किसी विशिष्ट, सामाजिक एवं आर्थिक ढाँचे में सदैव के लिए बाधना नही चाहते। भावी पीढ़ी के लोगों को भी स्वतंत्रता होनी चाहिए कि समय तथा परिस्थितियों के अनुसार, वे जो भी सामाजिक व्यवस्था चाहे, आर्थिक ढाँचा खड़ा करे, उन्हें ऐसा करने का स्वतन्त्र अवसर मिले।"[1] बाबा साहेब प्रो0 के0टी0 शाह के उस संसोधन विधेयक पर बोल रहे थे जिसमें यह आग्रह किया गया था, कि संविधान की धारा 1(1) में धर्मनिरपेक्ष, संघीय (फेडरल) के पश्चात समाजवादी (सोशलिस्ट) जोड़ दिया जाये। बाबा साहेब ने समाजबादी शब्द जोड़ने का दो कारणों से विरोध किया –

1. जनता की स्वतन्त्रता को ध्यान में रखते हुए राज्य को समाजबादी तथा आर्थिक ढाँचे से बांध दिया जाए, तो यह भावी पीढ़ी की स्वतंत्रता का हनन होगा, साथ ही कुछ लोग समाजवादी व्यवस्थ को पसन्द करते हैं तथा कुछ लोग पूँजीवादी व्यवस्था को। आज जो व्यवस्था अच्छी लगती है वह कल निरर्थक भी हो सकती है।

---

[1] डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर, राइटिंग एण्ड स्पीचेज खण्ड 13 पृ0सं0–327

2. राज्य के नीति निदेर्शक तत्वों में सामाजबादी, समाज व्यवस्था के तत्व निहित है इसलिए पुनः समाजवादी शब्द का उल्लेख पुनरावृत्ति होगी।

इसी प्रकार प्रारूप संविधान के अनुच्छेद 35 पर एकहरी नागरिकता पर बिचार विमर्श के दौरान अनेक मुस्लिम सदस्यों यथा हुसैन इमाम, नसीरूद्दीन अहमद आदि ने अपना बिरोध दर्ज किया लेकिन बाबा साहेब ने देश की राजनैतिक, सामाजिक ढाँचे के परिप्रेक्ष्य में इसे अनिवार्य बाताया और अन्ततः इसे स्वीकार कर लिया गया। इसी प्रकार संविधान के प्रत्येक अनुच्छेद तथा संशोधन पर चर्चा–परिचर्चा हुई और लगभग सभी पर बाबा साहेब के विचारों को स्वीकार किया गया। स्पष्टतः यह कहना उचित होगा कि प्रारूप संविधान की प्रक्रिया में जो भी संशोधन या परिवर्तन करना पड़ा अथवा स्वीकृत या अस्वीकृत करना पड़ा उनमें डा0 अम्बेडकर की मुख्य भूमिका रही। संविधान से सम्बन्धित कोई ऐसा विषय नही था, जिसपर उनकी राय नही ली गई अथवा जिस पर उन्होने अपना मत न व्यक्त किया हो।[1] अनेक अनुच्छेदों जैसे– प्रधानमंत्री तथा मंत्रियों द्वारा प्रशासन की शुद्धता रखना, उनकी शैक्षणिक योग्यता, संसद के विभिन्न प्रतिनिधियों की स्थिति, राज्यपाल के कअधिकार तथा दायित्व, केन्द्र और राज्यों के सम्बन्धों का निराकरण, विषयों एवं अधिकारों के सरकार के अंगों के बीच बितरण, न्यायपालिका की स्वतंत्रता, सरकार द्वारा कानून व्यवस्था क संरक्षण, धर्म निरपेक्षता, ईश्वर के नाम पर या अन्यथा शपथ, संसद तथा उसके सदन एवं सदस्यों, लेखाकार, महालेखा परीक्षक, चुनाव प्रक्रिया, व्यस्क मताधिकार, अल्पसंख्यक तथा बहुसंख्यक, अनुसूचित जातियां, जन जातिया, पिछड़ा वर्ग तथा अन्य सम्बनिधत मुद्दे, इन सभी में डॉ0 अम्बेडकर के तार्किक बिचारों को समझा और सराहा गया। वस्तुतः प्रारूप संविधान पर 15 नवम्बर 1948 से 8 जनवरी 1949 तक जो निरन्तर संशोधनों एवं वाद–बिवादों का

[1] डा0 डी0आर0 जाटव, डॉ0 अम्बेडकर संविधान के मुख्य निर्माता पृ0सं0–78

शिलसिला चला उनमें डॉ0 अम्बेडकर की न केबल महत्वपूर्ण सहभागिता रही अपितु उनकी भूमिका प्रमुख निर्णायक ही रही जिसका प्रमाण हमारे सामने हमारा संविधान है।[2]

संविधान प्रारूप पर चर्चा के लिए संविधान सभा की एक और बैठक 17 नबम्वर 1949 से 26 नबम्वर 1949 तक चली। इसमें संविधान प्रारूप को अन्तिम प्रारूप दिया गया। 17 नबम्वर को प्रातः 10:00 बजे कान्सीट्यूशन हॉल नई दिल्ली में संविधान सभा की बैठक आरम्भ हुई। संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद ने संविधान प्रारूप के अध्यक्ष डॉ0 अम्बेडकर को प्रारूप पेश करने के लिए बुलाया– "मानीय बी0आर0 अम्बेडकर(बम्बई जनरल)

डॉ0 अम्बेडकर ने खड़े होकर कहा "मिस्टर प्रेसीडेन्ट, श्रीमान मैं प्रस्तावित करता हूँ कि सभा द्वारा निर्धारित संशोधन को स्वीकृत किया जाए"[1]

इस प्रस्ताव के पश्चात संक्षिप्त विचार–बिमर्श चला जो 26 नवम्बर तक चलता रहा। 25 नवम्बर को डॉ0 अम्बेडकर ने संविधान सभा में तालियों की गड़गड़ाहट के बीच तृतीय वाचन के लिए संविधान को पेश किया। इस अवसर पर अपने ऐतिहासिक भाषण में कहा "मैंने संविधान सभा में दलित वर्ग के हितों के लिए प्रवेश लिया था संविधान सभा में मेरा चयन मसौदा तैयार करने के लिए गठित समिति की अध्यक्ष पद पर किया गया यह देख कर मैं चकित हुआ। इसके लिए मैं संविधान सभा का कृतज्ञ हूँ। वैसे ही संविधान सभा का मसौदा तैयार करने के लिए गठित प्रारूप समिति का भी ऋणी हूँ जिसने मुझे विश्वासपात्र समझकर, अपना साधन समझकर, राष्ट्र सेवा का महान अवसर प्रदान किया।"[2]

बाबा साहेब ने अपने भाषण में संविधान की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए कहा मैं इस तथ्य से चिन्तित हूँ कि भारत ने एक नही अनेक बार अपने लोगों की गद्दारी और अभक्ति के कार्य स्वतंत्रता गवायी है। जिस समय सिन्धु पर मोहम्मद बिन

---

[2] डॉ0 डी0आर0 जाटव, डॉ0 अम्बेडकर संविधान के मुख्य निर्माता पृ0सं0–79
[1] सी.ए.डी. आफिसीयल रिपोर्ट खण्ड X 17 नबम्वर 1949 पृ0सं0–607, 8
[2] सी.ए.डी. आफिसीयल रिपोर्ट खण्ड XI पृ0सं0–979–81

कासिम ने आक्रमण किया उस समय राजा दाहिर के सैनिकों ने मोहम्मद बिन कासिम से रिश्वते लीं और उन्होने लड़ने से इन्कार कर दिया। जयचन्द ने मोहम्मद गोरी को आमंत्रित किया और पृथ्वीराज चौहार के विरूद्ध अपनी ओर से सोलंकी राजाओं की सहायता का बचन दिया ....। क्या इतिहास स्वयं को फिर दोहरायेगा? .... यदि आप अपने पार्टी का हित राष्ट्रहित से बड़ा मान लिया तो भारतीय स्वतंत्रता को खतरा है। यह स्वतंत्रता सदैव के लिए समाप्त हो सकती है। इसलिए हमें रक्त के अन्तिम बूद तक देश की सेवा करनी चाहिए। बागा साहेब ने अपने भाषण में यह भी कहा "26 जनबरी 1950 को हम अन्तरविरोधों के जीवन में प्रवेश करने जा रहे। राजनीति में हम समान्ता प्राप्त करेंगे और हमारे सामाजिक तथा राजनैतिक जीवन मे असमान्ता रहेगी। राजनीति में हम एक आदमी और एक वोट, एक वोट एक कीमत के सिद्धान्त को पाने जा रहे हैं। हम सामाजिक और आर्थिक जीवन में अपने सामाजिक एवं आर्थिक ढाँचे के अन्तर्गत एक आदमी एक कीमत की सिद्धान्त को अस्वीकार करते रहेगें। प्रतिरोधों के इस जीवन को हम कब तक सहन करते रहेगे? हम अपने सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में कब तक समानता को नकारते रहेगें? अगर यह असमानता की स्थिति लगातार बनी रहे तो राजनैतिक स्वतंत्रता खतरे में पड़ जायेगी। जितनी जल्दी हो सके, इस अन्तरविरोध को खत्म करना होगा, बरना वे लोग जो इस असमानता को भोग रहे हैं, राजनैतिक लोकतंत्र के ढाँचे का जिसे संविधान सभा ने कड़ी मेहनत से बनाया है उठा कर रख देगें।"

बाबा साहेब ने इस चेतावनी दी– "कि जो लोग जनता द्वारा सरकार की सिद्धान्त से उकता गये हैं वे जनता की सरकार चाहते हैं और इस सिद्धान्त के प्रति कोई रूचि नही है कि क्या यह सरकार जनता के लिए तथा जनता द्वारा बनाई गई है। यदि हम इस संविधान को सुरक्षित रखना चाहते हैं, जिसमें हमने जनता की, जनता के लिए, तथा जनता द्वारा सरकार के सिद्धान्त को प्रतिपादित किया है, तो आइए हम इस बात का संकल्प लें कि हमारे रास्ते में जो बुराइयां हैं, जिसके कारण लोग जनता द्वारा सरकार के सिद्धान्त की तुलना में जनता के लिए सरकार के सिद्धान्त अपनाने के लिए

प्रेरित होते है, उन्हे पहचाने में टाल–मटोल न करें। इन्हें दूर करने के लिए हमें तत्काल पहल करने चाहिए। देश की सेवा करने का यही एक रास्ता है। मैं जानता हूँ इससे अच्छा और कोई रास्ता नही हो सकता।''

अपने इस ऐतिहासिक भाषण में बाबा साहेब ने यह भी कहा– ''तथाकथित काई भी संविधान कितना ही अच्छा क्यो न हो यह निश्चित रूप से खराब साबित हो सकता है। यदि इसे कार्यान्वित करने वाले लोग खराब हों। कोई संविधान कितना भी बुरा क्यों न हो यह बहुत अच्छा हो सकता है, यदि इसे कार्यान्वित करने वाले लोग अच्छे हों।''

संविधान सभा ने संविधान प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ0 अम्बेडकर सहित अन्य सदस्यों के गुरूतर दायित्वों को सफलतापूर्वक निवर्हन करने के लिए हार्दिक बधाई दी। संविधान सभा के अध्यक्ष डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद ने कहा – ''पीठासीन रहकर मैने सभा की दिन–प्रतिदिन की कार्यवाही देखी है और यह महसूस किया है कि प्रारूप समिति के सदस्य और विशेष कर इसके सभापति डॉ0 अम्बेडकर ने अश्वस्त होने के बावजूद भी जिस निष्ठा और लगन से कार्य किया है, उस प्रकार कोई नही कर सकता था। हमने डॉ0 अम्बेडकर को प्रारूप का सदस्य चुनने के बाद उन्हें इसका सभापति बनाने से बढ़कर कभी कोई इतना सही निर्णय नही किया। उन्होंने अपने चयन को न्यायसंगत ही नही ठहराया बल्कि जो कार्य किया, उसमें चार चाँद लगा दिया।''

डॉ0 अम्बेडकर ने अपनी विनम्रता और महानता का परिचय देते हुए संविधान निर्माण का श्रेय संवैधानिक सलाहकार, अपने प्रारूप समिति के सहयोगियो, अपने स्टॉफ के सदस्यों को धन्यवाद देते हुए कांग्रेस पार्टी को भी धनयवाद दिया– ''प्रारूप समिति कांग्रेस पार्टी के अनुशासन के कारण ही प्रत्येक अनुच्छेद और संशोधन के सम्बन्ध में निश्चित जानकारी के साथ संविधान सभा में संविधान तैयार करने में सक्षम रहे। इसलिए कांग्रेस पार्टी को सभा में संविधान के प्रारूप को निर्वाद रूप से तैयार करने का पूरा श्रेय मिलना चाहिए।''

बाबा साहेब के लम्बे भाषण के बाद संविधान सभा को अगले दिन के लिए स्थगित कर दी गई। अगले दिन 26 नवम्बर को प्रातः 10:00 बजे पुनः बैठक आरम्भ हुई डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद ने सदस्यों को बधई दी अन्त में वे संविधान को पूरे देश के लिए स्वीकार कर लिया गया। 26 नवम्बर को इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित, और आत्मार्पित किया गया और इसी दिन संविधान की अनेक धाराए लागू कर दी गई तथा शेषा धाराए 26 जनबरी 1950 से लागू हुई।

संविधान निर्माण में बाबा साहेब के अविस्मर्णीय योगदान के लिए सभी ने प्रशंसा की यथा यूनाइटेड प्रॉविन्स के आर0बी0 धुलेकर ने कहा "अन्त में मैं आपके प्रति, अध्यक्ष महोदय और डॉ0 अम्बेडकर के प्रति अपने सह्रदय धन्यवाद रिकार्ड पर लाता हूँ। हमारे समक्ष जो कार्य था वह बहुत ही महान कार्य था। डॉ0 अम्बेडकर ने एक बहुत ही महान कार्य को सम्पन्न किया है..................। उन्होंने अपने नाम भीमराव को न्यायोचित ठहराया है और उन्होने आपेन कार्य को दृष्टि की स्पष्टतया, बिचार की स्वतंत्रता, और भाषा की स्पष्टतया के साथ सम्पूर्ण किया है....................। हम उनके प्रति बहुत ही कृतज्ञ हैं।"[1] इसके अतिरिक्त अजीत प्रसाद जैन, बेगम एजाज रसूल, जसपत राय कपूर, श्रीमती हंसा मेहता, एम0एन0 घोष, महबूब अली बेग, पण्डित ठक्कर दास भार्गव, अनंथसयनम, बीजीखेर, बी0आई0 मुनि स्वामी पिल्लई आदि ने बाबा साहेब की महान योगदान की प्रशंसा करते हुए उन्हें भारतीय संविधान का मुख्य शिल्पी कहा।

सुप्रसिद्ध संवैधानिक इतिहासज्ञ और लेखक श्री एम0बी0 पायली ने भी संविधान निर्माण के विषय डॉ0 अम्बेडकर योगदान के विषय में कहा– "संविधान सभा में एक मात्र डॉ0 बी0आर0 अम्बेडकर ही तर्क में अतयन्त प्रभावशाली और विश्वासोत्पादक, अभिव्यक्ति में स्पष्ट और सुबुद्ध तथा बाद विवाद में कुशाग्र और रूचिकर थे................। सचमुच वे आधुनिक मनु हैं और भारत के संविधान के पितामह अथवा मुख्य निर्माता कहे जाने के पात्र हैं।"

---

[1] सी0ए0डी0 खण्ड 13 पृ0सं0 1184

अध्याय सत्रह

अध्याय– सत्रह

"भारत विभाजन और बाबा साहेब"

आधुनिक भारतीय इतिहासकी अति महत्वपूर्ण घटता भारत विभाजन जिसके परिणाम स्वरूप 15 अगस्त 1947 को भारतीय उप महाद्वीप में भारत और पाकिस्तान नामक दो स्वाधीन राष्ट्रों का जन्म हुआ। इस त्रासदी भरी विभाजन का क्या कारण था? क्या यह फूट डालो और राज्य करो, ब्रिटिश नीति का परिणाम था? भारत विभाजन किन परिस्थितियों में हुआ? भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इसे क्यों स्वीकार किया? क्या यह विभाजन अवश्यसंभावी था या इसे टाला जा सकता था? आदि प्रश्नों की गुत्थियां उलझी हुई हैं जिनका उत्तर प्रत्येक विचारक, चिन्तक अपने–अपने नजरिये से देता है।

बड़ी संख्या में इतिहासकारों, विद्वानों, राजनेताओं, नीतिज्ञों ने भारत विभाजन पर अपने–अपने मत प्रकट किये हैं। चिन्तकों का एक वर्ग यह मानता है कि ब्रिटेन चाहता था कि भारतीय अपना शासन खुद चलायें और आजादी उनकी इच्छा का नतीजा थो। चिन्तकों का दूसरा वर्ग यह मानता है कि विभाजन सदियों पुरानें हिन्दू–मुस्लिम वैमनस्य का दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम था, इस बात का प्रमाण यह है कि ये दोनो समुदाय आपस में तय नहीं कर पाये कि सत्ता किसे सौंपी जाए और कैसे? चिन्तकों का तीसरा वर्ग साम्यवादियों का है जो यह मानता है कि आजादी 1946–47 के उन जन संघर्षों द्वारा हासिल की गई जिसमें बहुत से कम्युनिस्टों ने योगदान दिया और अनेक अवसरों पर उनका नेतृत्व भी किया। लेकिन कांग्रेस के बुजुर्ग नेताओं नेता इस

उभार से डर से डर गये और उन्होंने साम्राज्यवादियों से समझौता कर सत्ता अपने हाथ में ले ली। राष्ट्र को इसकी कीमत विभाजन के रूप में चुकानी पड़ी।[1]

भारत विभाजन के कारणों की व्याख्या करते हुए प्रो0 विपिन चन्द्र ने निष्कर्ष रूप में लिखा, ''सच तो यह है कि आजादी विभाजन का यह द्वैध कांग्रेस के नेतृत्व में चले साम्राज्यवाद विरोधी आन्दोलन की सफलता और विफलता का ही द्वैध है।''

मधुलिमये जैसे समाजवादी विचारक ने भारत विभाजन के कारणों की व्याख्या करते हुए लिखा,[2] ''इतिहास पर नजर डालने से लगता है कि 1947 में देश के विभाजन के कई कारण थे। यह पूर्णतया ब्रिटिश राज की कूटनीतिज्ञों का फल नहीं था, न ही इसका मुख्य कारण कांग्रेस और मुस्लिम लीग के नेताओं में राजनैतिक कौशल का अभाव अथवा कुछ व्यक्तियों का दुष्ट बुद्धि था। इसके एक कारणीय स्पष्टीकरण बहुत असंतोषजनक हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि ब्रिटिश सरकार ने मुसलमानों में अलगाव की भावना का पोषण किया किन्तु उन्होंने निश्चय ही यह भावना पैदा नहीं की। इसकी जड़ें आठ सौ वर्ष पूर्व इस्लाम और हिन्दू धर्म के अनसुलझे संघर्ष तक और हिन्दू समाज की शक्ति को झीण करने वाले हजारों वर्ष पुराने सामाजिक विघटन एवं दुर्बलता तक जाती है।''

इस त्रासदी पर डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने इण्डिया डिवाइडेड, मौलाना आजाद ने अनहैपी इण्डिया लिख कर अपने–अपने ढंग से व्याख्या की। बाबा साहेब हिन्दू–मुस्लिम संघर्ष से दूर रह कर और तटस्थ तथा वस्तुनिष्ट ढंग से इस समस्या पर विचार करने का प्रयास कर रहे थे।1 इस विचार की पराकाष्ठा 1940 में दिखाई पड़ती है, जब मुस्लिम लीग ने अपने लाहौर अधिवेशन में मुहम्मद जिन्ना की अध्यक्षता में पाकिस्तन सम्बन्धी प्रस्ताव पारित किया, तो बाबा साहेब ने अपनी विद्वता एवं पाण्डित्यपूर्ण पुस्तक थॉट ऑन पाकिस्तान प्रकाशित कर (प्रथम संस्करण) देश–विदेश का ध्यान

[1] विपिन चन्द्र, भारत का स्वाधीनता संघर्ष, पृ0सं0– 447
[2] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर, एक चिन्तन, पृ0सं0– 62

आकर्षित किया। यह पुस्तक उनकी महान बौद्धिकता का प्रमाण है, जिसका दूसरा संस्करण उन्होंने 1945 में लिखा। प्रथम संस्करण में मुद्रण की अनेक त्रुटियां रह गई थी तथा कुछ और भाग जोड़ने थे, (प्रथम संस्करण में 3 भाग, द्वितीय में 2 भाग और जोड़कर 5 भाग कर दिया) जिससे बाबा साहेब ने दूसरा संस्करण लिखा। इस पुस्तक की उपयोगिता के सम्बन्ध में द्वितीय संस्करण की भूमिका में बाबा साहेब ने लिखा,[1]

"मुझे प्रसन्नता है कि यह पुस्तक भारतीयों के लिए उपयोगी सिद्ध हुई है, जो पाकिस्तान की जटिल समस्या का सामना कर रहे हैं। यह तथ्य है कि श्री गाँधी और श्री जिन्ना ने अपनी हाल की वार्ता में विषय की प्रामाणिकता के तौर पर इस पुस्तक का उल्लेख किया है, जिससे लाभ उठाते हुए अध्ययन किया जा सकता है।"

इस पुस्तक में बाबा साहेब ने भारतीय इतिहास और भारतीय राजनीति के साम्प्रदायिक पहलुओ को विश्लेषणात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। बाबा साहेब ने इस पुस्तक के प्रस्तावना में ही लिखा1 "इस पुस्तक से हिन्दू और मुसलमान दोनो ही समान रूप से अप्रसन्न हुए, जबकि दोनो की अप्रसन्नता के कारण अलग–अलग हैं। इस पुस्तक से जुड़ी इस प्रतिक्रिया पर मुझे कोई खेद नहीं है। हिन्दुओं ने इसे अस्वीकार किया है और मुसलमानों ने भी इसे अपने पक्ष में नहीं माना........ मैंने इस पुस्तक में दोनो ही समाजों की ताकत और कमजोरियों पर निष्पक्ष रूप से प्रकाश डाला है।"

मुस्लिम लीग ने 26 मार्च 1940 को रावी तट पर स्थित लाहौर के ऐतिहासिक अधिवेशन में निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किया था–

1. अखिल भारतीय मुस्लिम लीग की परिषद तथा कार्यकारिणी समिति द्वारा संवैधानिक मुद्दों पर 27 अगस्त, 17 तथा 18 सितम्बर तथा 22 अक्टूबर 1939 और 3 फरवरी 1940 को पारित प्रस्तावों का समर्थन करते हुए अखिल भारतीय मुस्लिम लीग का यह अधिवेशन जोरदार शब्दों में इस तथ्य पर बल देता है कि भारत सरकार के 1935 के अधिनियम में निहित फेडरेशन की योजना इस

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, थॉट ऑन पाकिस्तान, पृ0सं0– प्रस्तावना–X

देश की असाधारण परिस्थितियों में बिल्कुल अनुपयुक्त और असाध्य हैं और भारतीय मुसलमानों को पूर्णतया अस्वीकार्य है।

2. मुस्लिम लीग आगे अपना यह मत प्रकट करती है कि यद्यपि 18 अक्टूबर 1939 को वाइसराय द्वारा महामहिम की सरकार की ओर से की गई घोषणा इस सीमा तक आश्वस्त करने वाली है कि उसमें यह घोषित किया गया है कि नीति और योजना पर भारत सरकार का अधिनियम 1935 आधारित है, उस पर विभिन्न दलों के हितों और भारत के विभिन्न समुदायों के परामर्श से पुनर्विचार किया जाएगा, किन्तु भारत के मुस्लिम तब तक संतुष्ट नहीं होंगे जब तक कि समग्र संवैधानिक योजना पर नए सिरे से पुनर्विचार न किया जाये और यह कि कोई भी संशोधित योजना मुसलमानों को तब तक स्वीकार न होगी, जब तक कि वह उनकी अनुमोदन और सहमति से बनाई जाए।

3. यह निश्चय किया जाता है कि अखिल भारतीय मुस्लिम लीग के अधिवेशन में यह सुनिश्चित मत है कि कोई संवैधानिक योजना इस देश में तब तक साकार नहीं होगी, अथवा मुसलमानों को स्वीकार्य नहीं होगी, जब तक कि उसे निम्नलिखित बुनियादी सिद्धान्तों के आधार पर नहीं बनाया जाएगा, अर्थात वह भौगोलिक तौर पर सन्निहित इकाइयों में सीमांकित की जाए जो इस तरह गठित हो कि आवश्यकता पड़ने पर उसका पुर्नसमायोजन किया जा सके कि जनसंख्या की दृष्टि से मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र जैसे भारत के उत्तर–पश्चिमी और पूर्वी क्षेत्र हैं, उन्हें स्वतन्त्र राज्य के गठन हेतु वर्गीकृत किया जाए, जिससे संवैधानिक इकाइयां स्वायत्त एवं प्रभुता सम्पन्न हों।

4. इन इकाइयों और क्षेत्रों में अल्पसंख्यकों के धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक प्रशासनिक अधिकारों और अन्य हितों की सुरक्षा के लिए संविधान में उनके परामर्श से पर्याप्त प्रभावी तथा अनिवार्य संरक्षणों का विशेष प्रावधान किया जाए तथा भारत के अन्य भाग में जहाँ मुसलमान अल्पसंख्यक हैं उनके

तथा अन्य अल्पसंख्यकों के धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक, प्रशानिक अधिकारों एवं अन्य हितों की सुरक्षा के लिए संविधान में उनके परामर्श से पर्याप्त प्रभावी तथा अनिवार्य संरक्षण का विशेष प्रावधान किया जाए।

5. यह अधिवेशन कार्यकारिणी समिति को पुनः प्राधिकृत करता है कि वह इन बुनियादी सिद्धान्तों के अनुरूप संविधान में ऐसी योजना बनाए जिसमें विभिन्न क्षेत्रों जैसे रक्षा, विदेश, संचार, चुंगी और अन्य आवश्यक मामलों के सम्बन्ध मं इन इकाइयों को सभी अधिकार दिये जाने का समावेश हो।

6. इस प्रकार लीग ने लाहौर में देश के विभाजन का वह प्रस्ताव पास किया जो पाकिस्तान प्रस्ताव कहलाया, यद्यपि प्रस्ताव में पाकिस्तान का कहीं नाम भी न था।[1] विभाजन की मांग स्पष्ट थी जिसे 1942 मे मुहम्मद जिन्ना ने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में इतिहास के प्रोफेसर कूपलैण्ड महोदय को और स्पष्ट रूप में बताया कि– पाकिस्तान एक मुस्लिम राज्य होगा और भारत मेंएक और उत्तर–पश्चिमी सीमा प्रान्त, पंजाब और सिन्ध और दूसरी ओर बंगाल होंगे।[2] जिन्ना साहेब ने अपनी पकिस्तान सम्बन्धी मांग को लाहौर अधिवेशन के तत्काल बाद मार्च 1941 में अलीगढ़ में एक सभा में कहा– पाकिस्तान न केवल हासिल किया जा सकता है बल्कि अगर इस देश में इस्लाम को पूरी तरह खत्म होने से रोकना चाहतें हैं, तो एक मात्र मकसद यही हो सकता है।[3]

प्रायः कवि और राजनैतिक चिन्तक मुहम्मद इकबाल को मुसलमानों के लिए पृथक राज्य पाकिस्तान के विचार का प्रवर्तक माना जाता है। आरम्भ में इकबाल कौमी तराने गाते थे और उनका मशहूर तराना– ''सारे जहाँ से अच्छा हिन्दुस्ता हमारा'' आज भी देशवासी बड़े फक्र के साथ गाते हैं, लेकिन यही इकबाल जब वैरिस्टरी पास करने ब्रिटेन गए तो उनका कायाकल्प हो गया। वे पैन इस्लामिक मूवमेंट से प्रभावित हुए और

[1] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृ0सं0– 692
[2] प्रो0 वी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारतीय इतिहास, पृ0सं0– 599
[3] प्रो0 विपिन चन्द्र, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, पृ0सं0– 404

मजहबी तराने गाने लगे और काफिरों से मुहब्बत करने के लिए खुदा को भी हरजाई बताने लगे तथा, अपने रव से "दिले मुस्लिम की वो जिन्दा तमन्ना" देने की दुआ मांगने लगे, जो कल्ब (हृदय) को गरमा दे, जो रुह को तड़पा दे। उन्होंने गोलमेज सम्मेलन की पूर्व सन्ध्या पर 1930 में इलाहाबाद में सम्पन्न मुस्लिम लीग के अधिवेशन के अध्यक्ष पद से बोलते हुए कहा था– "यदि यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया जाता है कि भारत के साम्प्रदायिक प्रश्न का स्थायी हल भारतीय मुसलमान को अपने देश भारत में अपनी संस्कृति और परम्पराओं के पूर्ण और स्वतन्त्र विकास का अधिकार है, तो मेरी इच्छा यह होगी कि पंजाब, उत्तरी–पश्चिमी सीमा प्रान्त, सिन्ध और बलूचिस्तान को मिलाकर एक राज्य बना दिया जाए। ब्रिटिश साम्राज्य के अन्दर अथवा बाहर एक उत्तर–पश्चिमी भारतीय मुस्लिम राज्य का गठन मुझे कम से कम उत्तर पश्चिमी भारत में मुसलमानों का अन्तिम लक्ष्य प्रतीत होता है।[1]

मुहम्मद इकबाल की इस योजना को मुहम्मद अली जिन्ना ने एक कवि की कल्पना मात्र कहा, लेकिन इस योजना से कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के एक मेधावी छात्र चौधरी रहमत अली बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने 1935 ई० में अपने कुछ सहपाठियों के साथ मिलकर पाकिस्तान नेशनल मूवमेंट की स्थापना की। इनके घोषणा पत्र में निम्नलिखित बातें सम्मिलित थीं–

1. हिन्दुस्तान एक देश नहीं महादेश है,
2. वह एक राष्ट्र नहीं दो राष्ट्र हैं, एक हिन्दू तथा दूसरा मुसलमान,
3. हिन्दुस्तान का नाम इण्डिया गलत है उसका नाम दीनिया होना चाहिए।
4. हिन्दुस्तान में बंगिस्तान (बंगाल), उस्मानिस्तान (हैदराबाद), क्यूनिस्तान (राजस्थान) आदि सूबों को अलग–अलग मुस्लिम सूबों के रूप में गठित कर सबका एक संघ पाकिस्तान के नाम से कायम करना चाहिए।

---

[1] प्रो० वी०एल० ग्रोवर, वही, पृ०सं०– 398

चौधरी रहमत अली की योजना थी कि पंजाब, उत्तर–पश्चिमी प्रान्त, कश्मीर, सिन्ध ओर बलुचिस्तान को भारतीय मुसलमानों का राष्ट्रीय देश होना चाहिए और उसे उसने पाकिस्तान की संज्ञा दी। पाकिस्तान शब्द इसमें से प्रथम चार प्रान्तों के प्रथम और पांचवे अन्तिम अक्षर को लेकर बनाया गया।[1] अनेक इतिहासकार इससे सहमत नहीं है। प्रो0 आर0एल0 शुक्ला के अनुसार यह शब्द फारसी से लिया गया है और उसका अर्थ है पाक लोगों का देश (Land of the Pure)।[2] चौधरी रहमत अली के इस आन्दोलन का मुस्लिम लीग ने उस समय समर्थन नहीं किया लेकिन इसके बाद परिस्थितियां ऐसी आईं कि लीग को अंततः 1940 में लाहौर में पाकिस्तान सम्बन्धी प्रस्ताव पारित करना पड़ा।

लीग ने पाकिस्तान प्रस्ताव की देश में तीव्र प्रतिक्रिया हुई। खान अब्दुल गफ्फार खान के खुदाई खिदमतगार नामक संगठन ने लीग के दो राष्ट्रों के सिद्धान्त का प्रबल विरोध किया। कांग्रेस और महात्मा गाँधी ने इसका लगातार विरोध किया। 1934 में स्थापित होने वाली कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी ने भी द्विराष्ट्र के सिद्धान्त का विरोध किया। इस पार्टी के 2 प्रमुखनेता अशोक मेहता तथा अच्युत पतवर्धन ने लिखा था कि पाकिस्तान की मांग गठनातीत अनिष्ट की संभावना से परिपूर्ण है।[3]

बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर ने इस सम्पूर्ण समस्या पर तत्काल 'थॉन ऑन पाकिस्तान' नामक पुस्तक लिखकर विस्तार पूर्वक प्रकाश डाला। इसका दूसरा संस्करण बाबा साहेब ने 1945 में लिखा। इसमें बाबा साहेब का प्रकाण्ड बौद्धिकता और पाण्डित्य सामने आता है। इसमें उन्होंने हिन्दू, मुस्लिम दोनो समाजों की ताकत ओर कमजोरियों पर निष्पक्ष रूप से प्रकाश डाला है। बाबा साहेब ने अपने पुस्तक के प्राक्कथन में लिखा– मैं पाकिस्तान से विचलित नहीं हूँ और न हीं मुझे इस बारे में रोष है और न ही मेरा यह विश्वास है कि यह मांग उपमाओं या रूपक अलंकारों से ध्वस्त हो

---

[1] प्रो0 बी0एल0 ग्रोवर, वही, पृ0सं0– 298
[2] प्रो0 आर0एल0 शुक्ला, वही, पृ0सं0– 888
[3] प्रो0 आर0एल0 शुक्ला, वही, पृ0सं0– 892

जायेगी।........ मेरे विचार में जिस योजना के पीछे भारत के 90 प्रतिशत मुसलमानों की भावनायें जुड़ी हों, भले ही उनका उत्कृष्ट समर्थन न हो, तो भी उसे एक दम अस्वीकार कर देना न तो बुद्धिमानी होगी और न ही संभव होगा।..... इस बारे में कोई सवाल ही नहीं उठ सकता कि पाकिस्तान एक ऐसी योजना है जिस पर ध्यान देना ही पड़ेगा...... हिन्दू समाज को पाकिस्तान के बारे में गंभीरता पूर्वक ध्यान देना पड़ेगा।

बाबा साहेब ने आगे कहा– "यदि हिन्दू यह आशा करते हैं कि ब्रिटेन पाकिस्तान की मांग को दबाने के लिए बल प्रयोग करेगा तो यह असंभव है। बल प्रयोग करना उपचार नहीं है......... मुसलमानों को आत्मनिर्णय के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता।....... हिन्दू राष्ट्रवादी जो यह आशा करते हैं कि ब्रिटेन मुसलमानों पर पाकिस्तान की मांग को त्यागने के लिए दबाव डाले, वे यह भूल जाते हैं कि विदेशी आक्रामक साम्राज्यवाद से राष्ट्रीयता की आजादी का अधिकार और बहुसंख्यक आक्रामक राष्ट्रीयता से अल्पसंख्यकों की स्वतन्त्रता के संघर्ष के दो पहलू हैं तथा उनका नैतिक आधार भी बराबर है। आक्रामक साम्राज्यवाद से स्वन्त्रता क लिए संघर्ष करने वाले राष्ट्रवादी स्वतन्त्रता के लिए अल्पमत के अधिकारों का निष्फल बनाने के लिए ब्रिटिश साम्राज्यवाद से मदद नहीं मांग सकते।"

बाबा साहेब ने अपनी इस पुस्तक में कुछ मूलभूत प्रश्नों को उठाया यथा– भारत का वास्तविक राष्ट्रीय स्वरूप क्या था? हिन्दू–मुस्लिम संस्कृति के अन्तर्द्वन्द क्या कभी समाप्त हुए? क्या दोनो संस्कृतियों में समरसता कभी स्थापित हुई? हिन्दू मत पाकिस्तानकी मांग का विरोध तथा मुस्लिम मत समर्थन क्यों करता है आदि की तार्किक एवं ऐतिहासिक व्याख्या की। उन्होंने भारत कभी एक राष्ट्र रहा है या नहीं, इसकी विशद व्याख्या की। बाबा साहेब लिखते हैं[1]– "भारत एक राष्ट्र या नहीं यह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना होने के साथ ही एग्लो–इंडियन यह जताते हुए कभी नहीं अघाये कि भारत एक राष्ट्र नहीं है, भारतीय तो भारत के लोगों के लिए एक संज्ञा मात्र ही है।

---

[1] बाबा साहेब सम्पूर्ण वाडमय खण्ड 15 पृ0सं0–148

दूसरी ओर हिन्दू राजनीतिज्ञ और देश भक्त समान रूप से जोर देते रहे हैं कि भारत एक राष्ट्र है। इस बात को नकारा नहीं जा सकता कि एग्लो इंडियन के कथन में सार्थकता है। यहाँ तक कि बंगाल के राष्ट्रीय कार्य डा0 टैगोर भी उनसे सहमत हैं। परन्तु इस मुददे पर हिन्दू कभी डा0 टैगोर के समक्ष भी नहीं झुके। इसक दो कारण है– पहला हिन्दू यह स्वीकार करने में लज्जा महसूस करते हैं कि भारत एक राष्ट्र नहीं है.... एच0जी0 वेल्स के शब्दों में कहा जा सकता है कि भारत के लिए राष्ट्रीयता के बिना होना उतना ही अनुचित होगा जितना कि किसी आदमी का भीड़ मे निर्वस्त्र होना।

दूसरा यह कि उन्होंने यह महसूस किया कि राष्ट्रीयता का स्वराज के दावे से गहन सम्बन्ध है। वे जानते थे कि 19वीं शदी के अन्त तक यह एक मान्य सिद्धान्त हो गया था कि जो लोग एक राष्ट्र के रूप में रहते हैं, वे स्वशासन के अधिकारी है और यदि कोई भी देशभक्त जो अपनी जनता के लिए स्वशासन की मांग करता है, उसे यह सिद्ध करना होगा कि वह जनता एक राष्ट्र है।..... वह एक बात जानता है कि यदि उसे भारत के लिए स्वशासन की अपनी मांग से सफलता पानी है, तो उसे इस बात पर कायम रहना हागा कि भारत एक राष्ट्र है, भले ही वह इसे सिद्ध न कर सकें।''

बाबा साहेब आगे राष्ट्रीयता के कुछ मूलभूत तत्वों की व्याख्या करते हैं[1]– ''राष्ट्रीयता एक सामाजिक सोच है। यह एकत्व की एक समन्वित भावना की अनुभूति है, जो लोगों में जो इससे अभिभूत है, परस्परता की भावना और उनमें यह अनुभूति जगाती है कि वे एक ही तरुवर के फूल है। यह राष्ट्रीय अनुभूति की दुधारी अनुभूति है। यह जहाँ अपने प्रियजनों के प्रति अपनत्व की अनुभूति है, वही जो एक व्यक्ति के अपने प्रियजन नहीं हैं। उनके प्रति अपनत्व विरोधी अनुभूति भी हैं। यह एक प्रकारक बोध की अनुभूति है, जो एक ओर जिनमें यह है उन्हें एकता के इतने मजबूत सूत्र में बाँधती है कि आर्थिक विभिन्नताओं अथवा सामाजिक वर्गीकरण से उदभूत सभी मतभेदों पर विजय पा जाती है। दूसरी ओर उन्हें यह उन लोगों से अलग भी करती है जो उनके जैसे नहीं

---
[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, वही, पृ0सं0– 13

है। यह किसी अन्य समूह से सम्बद्ध न होने का भाव बोध भी जगाती है। यही राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय भावना का सार तत्व है।

बाबा साहेब ने अनेक तर्कों के आधार पर यह स्पष्ट किया कि हिन्दू–मुस्लिम समुदायों में अनेक समानताओं के बावजूद इतने गहरे विरोध हैं कि संस्कृति सामंजस्य स्थापित नहीं हो सका। उन्होंने यह महत्वपूर्ण प्रश्न उठाया कि क्या हिन्दू और मुसलमान मिलकर एक राष्ट्र हैं और इन बातों में उनमें यह अनुभूति आई है कि वे एक दूसरे के पूरक हैं।[1] बाबा साहेब ने दोनो धर्म के आपसी सम्बन्धों का ऐतिहासिकविश्लेषण कर यह निष्कर्ष निकाला– जहाँ तक उनके सम्बन्धों का मामला है तो वे एक दूसरे के खिलाफ संघर्षरत सशस्त्र वटालियनों जैसे रहे हैं। सामूहिक उपलब्धि के लिए योगदान का कोई भी सामूहिक चक्र नही चला। उनका अतीत तो पारस्परिक विनाश का अतीत है, पारस्परिक शत्रुता का अतीत, राजनैतिक और धार्मिक दोनो ही क्षेत्रों में जैसा कि भाई परमानन्द ने "हिन्दू राष्ट्रीय आन्दोलन" शीर्षक वाले अपने पत्रक में इंगित किया है– इतिहास में हिन्दू लोग, पृथ्वीराज, राणप्रताप सिंह, शिवाजी, ओर वीर वैरागी का आदर सहित स्मरण करते हैं, जो इस भूमि के सम्मान और स्वतन्त्रता के लिए मुसलमानों के विरुद्ध लडे थे, जबकि मुसलमान भारत पर हमला करने वाले मुहम्मद बिन कासिम ओर औरंगजेब सरीखे शासकों को अपना राष्ट्रपुरुष स्वीकार करते हैं। धार्मिक क्षेत्र में हिन्दू रामायण, महाभारत, और गीता से प्रेरणा लेते हैं तो दूसरी ओर मुसलमान कुरान और हदीस से प्रेरणा लेते हैं। इस तरह जोड़ने वाले तत्वों की तुलना में अलग करने वाली बातें अधिक हावी हैं।

बाबा साहेब यह स्वीकार करते हुए लिखते हैं कि– खेद का विषय यह है कि दोनो समुदाय अपने अतीत को सर्वत्र भूल नहीं सकते अथवा उनका उन्मूलन भी नहीं स्वीकार कर सकते। उनका अतीत उनके धर्म में समाहित है और उनमें से प्रत्येक का

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, वही, खण्ड– 19 पृ0सं0-- 15

अपने अतीत को विस्मृत करना धर्म को त्यागना है। इसलिए ऐसा होने की आशा संजोना भी मात्र कल्पना है।[1]

बाबा साहेब हिन्दू–मुस्लिम सम्बन्धों के अनेक ऐतिहासिक बिन्दुओं को स्पष्ट करते हुए इस तथ्य को स्पष्ट करते हैं– भारत पर ब्रिटिश विजय ने दोनो समुदायों की सापेक्ष स्थिति में एक पूर्ण राजनैतिक क्रांति ही ला दी। मुसलमानों ने छः सौ वर्षों तक हिन्दुओं पर हुकूमत की थी। ब्रिटिश सत्ता के आने सेवे भी हिन्दुओं के स्तर पर ही धकिया दिये गये। मालिकों से वह सहयोगी प्रजाजन बना दिये गए। यह पराभव ही बहुत था, किन्तु सहयोगी प्रजाजनों की अपेक्षा हिन्दुओं की प्रजा बन जाना तो निश्चय ही अपमान जनक है।

बाबा साहेब ने अपनी पुस्तक में भारत की तथा कथित एकता और अखण्डता के स्वरूप पर भी अत्यन्त तार्किक रूप से प्रकाश डाला है। बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि जो हिन्दू एकता के हामी हैं, वे मुख्यता इस तथ्य पर भरोसा करते हैं कि जिन क्षेत्रों को मुसलमान भारत से पृथक करना चाहते हैं, व सदैव भारत का अंग रहे हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से यह निश्चय ही सत्य है। यह क्षेत्र उस समय भारत का अंग था, जब चन्द्रगुप्त मौर्य भारत के शासक थे। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपनी डायरी में यह उल्लेख किया था कि भारत 5 भागों में विभाजित था– 1. उत्तरी भारत, 2. पश्चिमी भारत, 3. मध्य भारत, 4. पूर्वी भारत, और 5. दक्षिणी भारत। ह्वेनसांग के अनुसार उत्तरी भारत में पंजाब था, जिसमें कश्मीर और उसके आस–पास का पहाड़ी राज्य तथा सिन्ध पार का समस्त पूर्वी अफगानिस्तान ओर सरस्वती नदी के पश्चिम तक के वर्तमान सिस–सतलज राज्य शामिल थे।

यह सत्य है कि ह्वेनसांग जब भारत आये थे तो न सिफ पंजाब अपितु आज का अफगानिस्तान भी भारत का भाग था और इसके अलावा पंजाब और अफगानिस्तान के निवासी वैदिक अथवा बौद्ध के अनुयायी थे परन्तु ह्वेनसांग के भारत

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, वही, खण्ड–15, पृ0सं0– 19

से लौटने के बाद क्या हुआ? बाबा साहेब ने भारतीय इतिहास के घटना क्रम पर सिलसिलेवार प्रकाश डालते हुए स्पष्ट किया कि पश्चिमोत्तर भारत के रास्ते से भारत पर मुस्लिम आक्रमण का एक दीर्घकालीन सिलसिला आरम्भ हुआ। भारत पर पहला मुस्लिम आक्रमण 711 ई0 में मुहम्मद बिन कासिम के नेतृत्व में अरबों ने राजा दाहिर पर किया।। भारत पर प्रभावशाली मुस्लिम आक्रमण मुहम्मद गजनवी के नेतृत्व में हुआ, जो 1001ई0 से होकर 1030ई0 तक चला। भारत पर मुस्लिम आक्रमण का सिलसिला 1761 ई0 में अहमद शाह अब्दाली के नेतृत्व में पानीपत के तृतीय युद्ध तक चलता रहा।

बाबा साहेब ने यह सारगर्भित प्रश्न उठाया कि हिन्दुओं को यह कहने का हक कहाँ तक है कि उत्तरी भारत आर्यावर्त्त का भाग है? हिन्दुओं को यह कहने का कितना अधिकार है कि चूँकि एक बार यह क्षेत्र उनका था अतएव हमेशा ही भारत का अविभाज्य अंग रहना चाहिए? जो लोग पृथकता का विरोध करते हैं और अफगानिस्तान सहित उत्तरी भारत जो कभी भारत का भाग था और उस क्षेत्र के लोग बौद्ध अथवा हिन्दू थे, इस प्राचीन तथ्य से उद्भूद ऐतिहासिक भावना पर बल देते हैं, उनसे यह पूँछा ही जाना चाहिए कि क्या 762 वर्षों से अनवरत मुस्लिम आक्रमणों की घटनाओं को, जिस उद्देश्य से वे किये गये थे और अपने मकसद को पूरा करने के लिए इन आक्रान्ताओं ने जो हथकंडे अपनाये थे, क्या उन्हें महत्वहीन मान लिया जाए।[1]

बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि इन आक्रमणों के फलस्वरूप उत्तरी भारत की संस्कृति और स्वरूप में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। स्थिति यह है कि इस क्षेत्र और शेष भारत के बीच एकता तो है ही नहीं अपितु दोनो के मध्य वास्तविक विद्वेष एक तथ्य बन गया है। डा0 साहेब ने यह भी ऐतिहासिक घटना क्रम के आधार पर स्पष्ट किया कि उत्तरी भारत एक रेलगाड़ी में लगे डिब्बे जैसा रहा है, जिसे संचालन की परिस्थितियों के अनुसार जोड़ा या अलग किया जा सकता है।[2]

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, वही, पृ0सं0– 48
[2] वही, पृ0सं0– 48

मुस्लिम आक्रमण के परिणामों की चर्चा करते हुए इसका एक प्रमुख परिणाम हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच कटुता है। दोनो के बीच यह कटुता इतनी गहराई से बैठी हुई है कि एक शताब्दी का राजनैतिक जीवन इसे न तो शांत कर पाने में सफल हुआ है और न ही इसे लोग भुला सके हैं। क्योंकि इन हमलों के साथ ही मंदिरों का विध्वंस, बलात धर्मान्तरण, सम्पत्ति की तवाही, संहार और गुलामी तथा नर–नारियों और बालिकाओं का अपमान हुआ था, अतएव क्या यह आश्चर्य की बात है कि ये हमले सदेव याद बने रहे हैं। ये मुसलमानों के लिए गर्व का स्रोत बने तो हिन्दुओं के लिए शर्म का।........ मुस्लिम आक्रान्ता निःसन्देह हिन्दुओं के विरुद्ध घृणा के गीत गाते हुए आये थे परन्तु वे घृणा का वह गीत गाकर और मार्ग में कुछ मंदिरों को आग लगाकर ही वापस नहीं लौटे। ऐसा होता तो यह वरदान माना जाता । वे ऐसे नकारात्मक परिणाम मात्र से संतुष्ट नहीं थे। उन्होंने इस्लाम का पौधा लगाते हुए सकारात्मक कार्य भी किया। इस पौधे का विकास भी उल्लेखनीय है। यह ग्रीष्म में रोपा गया कोई पौधा नहीं है। यह तो आक वृक्ष की तरह विशाल ओर सुदृढ़ है। उत्तरी भारत में इसका सर्वाधिक सघन विकास हुआ है।[1]

डा0 अम्बेडकर ने इस विशद व्याख्या के बाद यह सवाल किया कि पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के बीच हिन्दू कौन सी एकता देखते हैं? यदि वह भौगोलिक एकता है तो वह कोई एकता नहीं है। भौगोलिक एकता प्रकृति–पोषित एकता होती है। भौगोलिक एकता के आधार पर राष्ट्रीयता के निर्माण में यह अवश्य ही स्मरण रखना चाहिए कि यह प्रकृति सुझाती है और मानव मिटाता है। यदि यह वाह्य बातों जैसे कि जीवन सम्बन्धी आदतें और रिवाजों के मामलें में हो, तो भी यह कोई एकता नहीं है। ऐसी एकता तो एक साझे परिवेश का परिणाम होती है। यदि यह प्रशासनिक एकता है तो भी इसे एकता नहीं कहा जा सकता। वर्मा का उदाहरण सामने है.............। भारत ओर वर्मा क बीच प्रशासनिक एकता 1826 ई0 में स्थापित हो गई थी। यह प्रशासनिक एकता 110 वर्षों से भी अधिक समय तक रही। 1937 में यह गांठ काट दी गई जिसने

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, वही, पृ0सं0– 49

दोनो को बांधा था, मगर किसी व्यक्ति ने एक आँसू तक नही गिराया! .... यदि इन तर्कों और विचारों के आधार पर तौल और परखा जाए तो पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के बीच एकता एक कल्पित भर है। वास्तव में पाकिस्तान और हिन्दुस्तान के बीच की अपेक्षा हिन्दुस्तान और वर्मा के बीच अधिक आध्यात्मिक एकता है, और यदि हिन्दू वर्मा के भारत से अलग होने पर आपत्ति नहीं करते तो यह समझ में आ पाना कठिन है कि हिन्दू पाकिस्तान जैसे उन क्षेत्र के अलग होने पर आपत्ति कैसे कर सकते हैं, जो शेष भारत से राजनैतिक तौर पर विभाज्य, सामाजिक तौर पर विद्वेष तथा आध्यात्मिक दृष्टि से परकीय है।[1]

बाबा साहेब ने पाकिस्तान निर्माण से भारत की रक्षा व्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभावों पर विस्तार से प्रकाश डाला। सबसे पहले उन्होंने भारत की वैज्ञानिक सीमा के प्रश्न पर विचार किया। उन्होंने कहा– जहाँ तक इतिहास बताता है कि भारत की कोई एक वैज्ञानिक सीमा नहीं रही और अलग–अलग लोगों ने भारत के लिए अलग–अलग सीमाओं का समर्थन किया है।...........वास्तव में इस बात पर जोर देने का कोई लाभ नहीं है कि एक विशेष सीमा सबसे अधिक सुरक्षित होगी। इसका कारण है कि आज की दुनिया में भौगोलिक परिस्थितियां निर्णायक नहीं है और आधुनिक तकनीकी के सामने सीमाओं का पुराना महत्व बहुत कम हो गया है, चाहे वहाँ पर ऊँचे–ऊँचे शक्तिशाली पर्वत, बड़े–बड़े झरने, विशालकाय महासागर या दूर–दूर तक फैले रेगिस्तान क्यों न हो?

बाबा साहेब ने यह भी तर्क रखा कि जिन देशों की अपनी प्राकृतिक सीमाएं नहीं होती उन्होंने भी कृतिम बाधाओं का निर्माण कर अपनी सीमायें सुरक्षित की हैं। उन्होंने प्राकृतिक सीमा न होने के भय को दूर करते हुए कहा– साधन होने पर हिन्दू भी सुदृढ़ सीमा का निर्माण कर सकेंगे।

बाबा साहेब ने भारतीय सशस्त्र सेनाओं के स्वरूप पर भी सविस्तार चर्चा की। अनेक लोगों ने यह आशंका प्रकट की थी कि पाकिस्तान के निर्माण से भारतीय

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, वही, पृ0सं0– 50

सेना के गठन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा क्योंकि सेना में पश्चिमी भारत के लड़ाकू जातियों का अधिकांशता भर्ती किया जाता है डा0 अम्बेडकर ने इस तथ्य की अत्यन्त वैज्ञानिक और तार्किक व्याख्याकरते हुए कहा— लड़ाकू और गैर लड़ाकू जातियों के बीच का विभाजन पूर्णतया मनमाने और कृतिम ढंग से किया गया है। यह हिन्दुओं के जाति प्रथा जैसा ही मूखर्तापूर्ण है, जिसमें योग्यता के बजाय जन्म के आधार पर मान्यता मिलती है।

बाबा साहेब ने भारतीय सेना की आन्तरिक संरचना के आधार पर यह बताया कि पश्चिमोत्तर प्रान्त के मुस्लिम सैनिकों की संख्या भारतीय सेना में अधिक है। इस अधिकता के कारण उन्हें हिन्दुस्तान का द्वारपाल कहा जाता हैं। बाबा साहेब ने हिन्दू जनता के सम्मुख एक सारगर्भित प्रश्न उठाया कि हिन्दू इन द्वारपालों पर कितना निर्भर कर सकते हैं कि वे दरवाजे पर जमें रहेंगे और हिन्दुस्तान की स्वतन्त्रता और आजादी की रक्षा करेंगे? इन प्रश्नों का उत्तर निश्चित रूप से इस बात पर निर्भर करेगा कि दरवाजे को खोलने के लिए प्रयास कौन करेगा? यह तो बिल्कुल स्पष्ट है कि केवल दो देश हैं जो हिन्दुस्तान की उत्तर–पश्चिमी सीमा की ओर प्रवेश करना चाहेंगे– रूस या अफगानिस्तान। यदियह हमला रूस की ओर से हुआ तो यह आशा की जा सकती है कि भारत के ए द्वारपाल बड़ी मजबूती से और वफादारी से द्वार की रक्षा करेंगे और हमलावर को रोक देंगे। यदि अफगान अपने बूते या अन्य मुस्लिम देशों के साथ मिलकर हमला करे तब ये द्वारपाल हमलावरको रोकेंगे या उन्हें भीतर आने देंगे?....... अफगान हमले की दशा में क्या वे अपनी जन्मभूमि की रक्षा को महत्व देंगे या मजहब के नाम पर वह जाएंगे।[1] बाबा साहेब ने कहा कि इस प्रश्न पर हिन्दुओं को अवश्य विचार करना चाहिए।

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाङ्मय खण्ड 15 पृ0सं0– 50

बाबा साहेब ने हिन्दुओं के सन्मुख रक्षा की दृष्टि से यह विकल्प रखा कि हिन्दुओं को एक कठिन विकल्प अपनाना है– सुरक्षित सेना हो या सुरक्षित सीमा।[1] डा0 अम्बेडकर ने हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के संसाधनों का तुलनात्मक ब्यौरा पेश किया– केन्द्रीय सरकार का कुल राजस्व 121 करोड़ रु0 होता है। इसमें लगभग 52 करोड़ रु0 प्रति वर्ष फौज पर खर्च किया जाता है। फौज पर यह जो 52 करोड़ रु0 खर्च किया जाता है, उसका अधिकांश पाकिस्तान क्षेत्र की मुस्लिम फौज पर खर्च किया जाता है। अब इस 52 करोड़ में जो अधिकांश हिन्दू प्रान्तों से मिलता वह एक ऐसी फौज पर खर्च किया जाता है, जिसमें से अधिकांश गैर हिन्दू हैं। इस खेदजनक स्थिति को कितने हिन्दू जानते हैं? कितने लोग जानते हैं कि यह खेदजनक स्थिति किसकी कीमत पर बनायी जा रही है? आज हिन्दू इसके लिए जिम्मेदार नहीं है कि वे इसे रोक नहीं सकतें। प्रश्न यह है कि क्या वे इस खेदजनक स्थिति को चलते रहने देंगे? यदि वे इसे रोकना चाहते हैं तो इसका सबसे निश्चित तरीका यह है कि पाकिस्तान की योजना को प्रभावी होने दिया जाए। इसका विरोध करना अपने विनाश के लिए स्वयं सहायक हथियार खरीदना है। सुरक्षित सीमा से सुरक्षित फौज बेहतर होती है।[2]

इस प्रकार बाबा साहेब ने इस तथ्य को स्पष्ट किया कि पाकिस्तान के निर्माण से देश की रक्षा व्यवस्था कमजोर होने के स्थान पर मजबूत ही होगी।

बाबा साहेब ने इस प्रश्न पर भी विस्तार से प्रकाश डाला कि पाकिस्तान के निर्माण से साम्प्रदायिक समस्या का कितना और किस प्रकार समाधान होगा। साम्प्रदायिक समस्या के स्वरूप और उद्‌भव का विश्लेषण करते हुए बाबा साहेब ने अपना यह प्रस्तुत किया कि इस साम्प्रदायिक समस्या के लिए हिन्दू और मुसलमान दोनो ही दोषी हैं। हिन्दू लोग मुस्लिमों पर दुराग्रह का आरोप लगाते हैं, मुस्लिम हिन्दुओं पर नीचता का आरोप लगाते हैं। तथापि दोनों यह भूल जाते हैं कि साम्प्रदायिक समस्या पैदा होने का यह कारण नहीं है कि मुस्लिम अपनी मांगे बहुत बढ़ा–चढ़ा कर बहुत

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड– 15, पृ0सं0 87

[2] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड– 15, पृ0सं0 87

गुस्ताखी से रखते रहते हैं और हिन्दू रियायतें देते समय बहुत नीचता अनिच्छा व द्वेष भावना रखते हैं। यह समस्या तब तक बनी रहेगी जब तक एक शत्रुतापूर्ण बहुमत का शत्रुतापूर्ण अल्पमत सामना करता रहेगा................ साम्प्रदायिक समस्या का सर्वोत्तम हल यह है कि अल्पसंख्यक समुदाय और बहुसंख्यक समुदाय दोनो ही एक दूसरे से टक्कर लेने के लिए एक ही सरकार, एक फौलादी ढांचे में न रहें।"

लेकिन एक स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि क्या विभाजन से साम्प्रदायिक समस्या का हल हो जाएगा? प्रस्तावित पाकिस्तान वाले क्षेत्रों में निवास कर रहे गैर मुस्लिमों का क्या होगा? इस समस्या पर भी एक वकील की भांति अपना सुस्पष्ट विचार रखा "समस्या का सर्वोत्तम हल यही है कि अपनी-अपनी सीमाओं से ही अपने से भिन्न अल्पसंख्यकों की अदला-बदली कर लें और अपनी सीमाओं में परिवर्तन न करें ताकि समजातीय राज्य बन सकें।[1] बाबा साहेब ने इसके समर्थन में तुर्की, यूनान और वुल्गारिया का उदाहरण रखा जहां सफलतापूर्वक जनसंख्या का स्थानान्तरण हुआ।

अपनी पुस्तक में बाबा साहेब ने हिन्दू और मुस्लिम विकल्पों पर भी विस्तार से प्रकाश डाला। पाकिस्तान के हिन्दू विकल्प पर बावा साहेब ने वी0डी0सावरकर, लाला हरदयाल आदि के प्रस्तावों, विचारों का उल्लेख किया है। सावरकर ने इस बात पर जोर दिया था कि यद्यपि भारत में दो राष्ट्र हैं (हिन्दू और मुस्लिम) परन्तु हिन्दुस्तान को दो भागों में- एक मुस्लिमों के लिए और दूसरा हिन्दुओं के लिए नहीं बांटा जाएगा। ए दोनो कौम एक ही देश में रहें और एक ही संविधान के अन्तर्गत रहेंगी। यह संविधान ऐसा होगा कि जिसमें हिन्दू राष्ट्र को वह वर्चस्व मिले जिसका वह अधिकारी है और मस्लिम राष्ट्र को हिन्दू राष्ट्र के अधीनरथ सहयोग की भावना से रहना होगा"। बाबा साहेब ने सावरकर के इस विचार को अतार्किक और विचित्र बताया है।

पाकिस्तान के मुस्लिम विकल्प पर विचार करते हुए बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि मुसलमानों के पास पाकिस्तान ही एक मात्र माग है, दूसरा कोई नहीं।

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड- 15, पृ0सं0 101

मुसलमानों ने पाकिस्तान के विकल्प को कभी स्पष्ट नहीं किया। यदि कभी मुस्लिम समुदाय के सम्मुख पाकिस्तान के विकल्प की बात आती है तो इस विकल्प का भी बाबा साहेब ने ऐतिहासिक, वैधानिक परिवर्तनों के आधार पर अनुमान लगाया कि उनका प्रस्ताव निम्नवत् होगा–

1. केन्द्रीय और प्रान्तीय दोनो विधान मण्डलों में पृथक निर्वाचन प्रणाली के आधार पर मुस्लिमों को 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व होगा।
2. केन्द्रीय और प्रान्तीय कार्यपालिका में मुस्लिम प्रतिनिधित्व 50 प्रतिशत होगा।
3. सरकारी सिविल सेवाओं में 50 प्रतिशत पद मुस्लिमों के लिए निर्धारित किए जाएंगे।
4. सशस्त्र सेनाओं में सैनिकों और उच्च पदों में मुस्लिमों का अनुपात आधा–आधा होगा।
5. सभी सार्वजनिक निकायों जैसे परिषदों और आयोगों में सार्वजनिक कार्यों के उद्देश्यों के लिए मुसलमानों का प्रतिनिधित्व 50 प्रतिशत होगा।
6. उन सभी अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में जिनमें भारत भाग लेगा, मुस्लिमों को 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व दिया जाएगा।
7. यदि प्रधानमंत्री हिन्दू होगा तो उप प्रधानमंत्री मुस्लिम होगा।
8. यदि सेनाध्यक्ष हिन्दू होगा तो उप सेनाध्यक्ष मुस्लिम होगा।
9. विधान मंडल के 66 प्रतिशत मुस्लिम सदस्यों की सहमति के बिना प्रान्तीय सीमाओं में कोई परिवर्तन नहीं किया जाएगा।
10. विधान मंण्डल के 66 प्रतिशत मुस्लिम सदस्यों की सहमति के बिना किसी मुस्लिम देश के विरुद्ध कोई कार्यवाही या संधि वैध नहीं होगी।

11. विधान मंडल के 66 प्रतिशत मुस्लिम सदस्यों की सहमति के बिना मुसलमानों की संस्कृति या धर्म से सम्बन्धित किसी धार्मिक रीति–रिवाज को प्रभावित करने वाले कानून नहीं बनाए जाएंगे।

12. हिन्दुस्तान की राष्ट्रीय भाषा उर्दू होगी।

13. गोवध पर प्रतिबन्ध लगाने वाला कोई कानून वैध नहीं होगा और न ही इस्लाम के प्रचार तथा इस्लाम धर्म में परिवर्तन करने वाला कोई कानून वैध होगा, यदि इसे विधान मंडल के 66 प्रतिशत मुस्लिम सदस्यों की सहमति से पारित न किया गया हो।

14. संविधान में परिवर्तन या संशोधन के लिए आवश्यक बहुमत के बिना जिसमें विधान मंडल के 66 प्रतिशत मुस्लिम सदस्यों का बहुमत भी है, संविधान में ऐसा परिवर्तन या संशोधन नहीं माना जाएगा।

बाबा साहेब ने इन अनुमानों के सम्बन्ध में स्पष्ट किया कि ए कोरी कल्पना पर आधारित नहीं है और न ही अनिच्छा पूर्वक या जल्दबाजी में पाकिस्तान स्वीकार करने के लिए हिन्दुओं को भयभीत करने के लिए है। यदि मैं यह कहूँ तो यह मुस्लिम स्रोत से प्राप्त जानकारी के आधार पर सोंच–समझ कर लगाया गया अनुमान है।[1]

बाबा साहेब ने विश्व के अनेक देशों यथा तुर्की, योकोस्लाविया के आधार पर भारत की इस सबसे विषम समस्याका एक मात्र समाधान विभाजन बताया और कहा– "मुस्लिम क्षेत्र हिन्दुस्तान के लिए असामान्य मोटापे जैसा ही है, और हिन्दुस्तान उस पर असामान्य अपबुद्धि जैसा है साथ बंधे रहने से वे भारत को एशिया का रूग पुरुष बना देंगे। साथ बंध कर वे भारत को एक विविध जातीय इकाई ही बनाएगें। पाकिस्तान का गठन यदि भारत के कुछ भागों को अलग कर देने वाली बुराई है, तो उसका एक लाभ भी है और वह यह है कि उसके बनने से संघर्ष के स्थान पर सौहार्द का सृजन होगा..........।" विभाजित होने के बाद प्रत्येक एक सबल और सुगठित राज्य

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड– 15, पृ0सं0 131–132

बन सकेगा। भारत को एक सुदृढ़ केन्द्रीय सरकार की आवश्यकता है, किन्तु वहां तब तक ऐसी सरकार नहीं हो सकती है, जब तक पाकिस्तान भारत का भाग बना रहेगा।[1]

बाबा साहेब ने यह भी स्पष्ट किया कि हिन्दुओं और मुसलनानों को एक करने के लिए सभी प्रयास कर लिए गए हैं, पर वे सभी निष्फल हुए हैं।"[2] इस तथ्य के समर्थन में 1909 (मिण्टो–मारेल सुधार योजना) से लेकर 1940 तक भारतीय ऐतिहासिक–वैधानिक विकास की रूपरेखा प्रस्तुत की। साथ ही सामाजिक और धार्मिक क्षेत्र में हिन्दू–मुस्लिम एकता स्थापित करने के लिए किए गए प्रयासों पर भी प्रकाश डाला और निष्कर्ष निकाला– पिछले तीस वर्षों का इतिहास दर्शाता है कि हिन्दू मुस्लिम एकता प्राप्त नही हुई है। एकता के लिए लगातार और निष्ठापूर्वक प्रयत्न किए गए हैं और अब कुछ करने को शेष नहीं है, सिवाय इसके कि एक पार्टी दूसरे के सामने आत्म समर्पण कर दे। यदि कोई व्यक्ति जो आशावादी नहीं है और उसका आशावादी होना न्यायसंगत न हो, यह कहे कि हिन्दू–मुस्लिम एकता एक मृगतृष्णा की तरह है और एकता के विचार को छोंड देना चाहिए, तो कोई भी उसे निराशावादी या अधीर आदर्शवादी कहने का साहस नहीं कर सकता।"

बाबा साहेब ने इस एकता के विफलता के कारणों का भी विश्लेषण किया है। उन्होंने स्पष्ट किया है कि[3] "हिन्दुओं का अभिमत है कि अंग्रेजों की फूट डालो और राज्य करो की नीति ही इस विफलता के लिए उत्तरदायी हे। इसमें कुछ भी आश्चर्य नहीं है। हिन्दुओं ने आयरलैण्ड के लोगों की तरह हमेशा सरकार के खिलाफ बोलने की राजनीति की एक मानसिकता बना ली है। यहां तक कि कोई मौसम खराब हो गया हो तो इसमें भी सरकार का हाथ है। अब समय आ गया है कि हिन्दुओं को अपनी यह मानसिकता छोड़नी होगी, क्योंकि उनके इस दृष्टिकोण में 2 अहम् मुद्दों का ध्यान नहीं दिया गया है। सर्व प्रथम पहला मुद्दा इस बात को दरकिनार कर देता है कि अंग्रेजों

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड– 15, पृ0सं0 213
[2] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड– 15, पृ0सं0 308
[3] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड-- 15, पृ0सं0 317–318

की फूट डालो और राज्य करो की नीति, यह मानते हुए भी कि अंग्रेज ऐसा करते हैं, तब तक सफल नहीं हो सकती, जब तक हमारे बीच ऐसे तत्व न हो जो यह विभाजन संभव करा सकें और यदि यह नीति इतने लम्बे समय तक सफल होती रही है तो इसका तात्पर्य यह है कि हमारे बीच में हमारा विभाजन कराने वाले तत्व करीब–करीब ऐसे हैं कि उनमें कभी सामन्जस्य स्थापित नहीं हो सकता और वे क्षणिक नहीं हैं........। हिन्दू–मुस्लिम एकता की विफलता का मुख्य कारण इस अहसास का न होना है कि हिन्दुओं और मुसलमानों में जो भिन्नताएं हैं, वे मात्र भिन्नताएं ही नहीं है और उनके बीच मनमुटाव की भावना सिर्फ भौतिक कारणों से ही नहीं है और उनके बीच मन मुटाव की भावना है, वे मात्र भिन्नताएं ही नहीं हैं। इस विभिन्नता का स्रोत ऐतिहासिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक दुर्भावना है और राजनैतिक दुर्भावना मात्र प्रतिबिंब है। ये सारी बातें असंतोष का दरिया बना देती हैं, जिसका पोषण उन तमाम बातों से होता है जो बढ़ते–बढ़ते सामान्य धाराओं को आप्लावित करता चला जाता है। दूसरे स्रोत के पानी की धारा चाहे वह कितना ही पवित्र क्यों न हो जब स्वयं उसमें आ मिलती है तो उसका रंग बदलने के बजाय स्वयं उस जैसा हो जाती है। दुर्भावना का यह अवसाद जो धारा में जमा हो गया है, वह बहुत पक्का और गहरा बन गया है।"

बाबा साहेब ने इस प्रश्न पर भी विचार किया कि यदि भारत का विभाजन न किया जाए और बलात एकता स्थापित की जाए, तो इसका क्या परिणाभ होगा? उन्होंने बताया कि[1] यदि भारत अटूट रहता है तब भी वह सम्पूर्ण भारत नहीं होगा। नाम से भारत भले ही एक देश के रूप में जाना जाता रहे लेकिन वास्तव में वह दो देशों– हिन्दुस्तान और पाकिस्तान, जिनको जबरन कृतिम रूप में जोड़ा गया है, मे ही बंटा रहेगा। यह सब देखते हुए तथ्य और वास्तविकता के संसार में भारत की एकता के विचार का कोई स्थान नहीं है। जबरन एकता का दूसरा दुष्परिणाम यह होगा कि हिन्दू–मुस्लिम समस्या को निपटाने के लिए आधार खोजने होंगे। इस समस्या का निदान करना कितना दुष्कर होगा यह किसी को बताने की आवश्यकता नहीं है........... इस बात

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड– 15, पृ0सं0 335–336

में संदेह नहीं कि जब तक जबरन एकता बनी रहेगी तब तक भारत में साम्प्रदायिकता का निदान नहीं होगा, तब तक भारत कोई राजनैतिक प्रगति नहीं कर सकता।

इस जबरन एकता का तीसरा दुष्परिणाम यह होगा कि एक तीसरी पार्टी का आविर्भाव। यदि संविधान का निर्माण होता है तो यह आपस में शक करने वाले शत्रु राज्यों का संघ होगा, जो अपनी इच्दा से तीसरी पार्टी की उपस्थिति चाहेंगे, जो उनके विवादों को निपटा सके।

इन समस्याओं को देखते हुए बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि विभाजन ही हिन्दू–मुस्लिम के लक्ष्यों की प्रतिपूर्ति का वह रास्ता खोलता है जो ए दोनो अपने लिए निर्धारित करें। उसे चुनने के लिए दोनो स्वतन्त्र हैं। मुसलमान पाकिस्तन को एक स्वतन्त्र राष्ट्र या डोमेनियमन स्टेट के रूप में जो भी उन्हें उचित लगे, चुनने के लिए स्वतन्त्र होंगे। इसी प्रकार हिन्दू भी अपने विवेकानुसार हिन्दुस्तान के लिए स्वतन्त्र राष्ट्र या डोमेनियन स्टेट के रूप में जो भी उचित लगे, चुनने के लिए स्वतन्त्र हों। इससे मुसलमान हिन्दु राज्य के भय से मुक्त हो जाएगा। उद्देश्य की प्राप्ति न हो पाने से पैदा निराशा को भी इससे नई आशा मिलेगी।[1]

बाबा साहेब ने पाकिस्तान समसया पर पृथक अध्याय में भी विचार किया है। पाकिस्तान की एक समस्या सीमाओं को लेकर भी थी। क्योंकि 1940 में लीग ने अपने लाहौर अधिवेशन में पाकिस्तान की स्पष्ट मांग ही की थी लेकिन उसकी सीमाओं के सम्बन्ध में स्पष्ट प्रस्ताव नहीं किया। 1942 में श्री जिन्ना ने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्रोफेसर कूपलैण्ड को व्याख्या करते हुए कहा था कि पाकिस्तान एक मुस्लिम राज्य होगा और भारत के एक ओर उत्तर–पश्चिमी सीमा प्रानत, पंजाब और सिंधु और दूसरी बंगाल होंगे।[2] बाद में कुछ और प्रान्त जोड़ दिए गए। पाकिस्तान की सीमा के सम्बन्ध में जिन्ना साहेब ने उस समय स्पष्ट किया कि सीमाओं के सम्बन्ध में इस समय कोई भी बात करना असामयिक है और इस विजय में पाकिस्तान के सिद्धान्त को अंगीकार करने के

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड– 15, पृ0सं0 347

[2] प्रो0 बी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारत का इतिहास, पृ0सं0– 599

उपरान्त बहस की जा सकती है। इस सम्बन्ध में डा0 अम्बेडकर का मत रहा कि पाकिस्तान की सीमाओं की घोषणा न करने में श्री जिन्ना ने जिस हठधर्मिता का प्रदर्शन किया वह एक राजनायिक के लिए अक्षम्य है।[1]

सीमाओं के विवाद के समाधान हेतु डा0 अम्बेडकर ने जनता के आत्मनिर्णय के सिद्धान्त को वैज्ञानिक एवं न्यायसंगत बताया। उन्होंने यह भी बताया कि यदि जनता को मालूम हो जाए कि वे अपने निवास हेतु भारत या पाकिस्तान का चनाव करने में स्वतन्त्र हैं, तो वे विभाजन को सहज स्वीकार कर लेंगे। अधिकांश जनता इस समाधान को अधिक पसंद करती है और वह पाकिस्तान की स्वीकृति के लिए तैयार और इच्छुक हो जाएगी। यदियह प्रदर्शित किया जा सके कि जनसंख्या का आदान–प्रदान संभव है। बाबा साहेब ने इस बिन्दु का भी सूक्ष्म विवेचन किया कि जनसंख्या की अदला–बदली में कौन–कौन सी संभावित समस्याएं आ सकती है, जो निम्नवत हैं–

1. जनसंख्या के प्रभावी एवं निर्विघ्न स्थानान्तरण को संपादन करने का तंत्र।
2. स्थानान्तरण के विरुद्ध सरकार की मनचाही।
3. स्थानान्तरण के फलस्वरूप अन्यत्र जाने वाले परिवार की सम्पत्ति पर सरकार द्वारा भारीकर लगाना।
4. परिवार के लिए अपनी अचल को अपने साथ नए स्थान पर ले जाने की संभावना का न होना।
5. अन्यत्र रहने वाले परिवार की सम्पत्ति का कम मूल्यांकन करने की न्याय विरुद्ध एवं अनुपयुक्त कार्यवाही के पतिरोध की कठिनाइयां।
6. बाजार में बिक्री द्वारा सम्पत्ति का पूर्ण मूल्य उपलब्ध न होने पर उसकी क्षति का भय।

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड– 15, पृ0सं0 376

7. देशांतर गमन करने वाले परिवार को दातत्य पेंशन तथा अन्य सम्बन्धी धन की वसूली में कठिनाई।

8. उस मुद्रा को निर्धारित करने की कठिनाई, जिसमें धन को अदा करना है।

यदि ए कठिनाइयां दूर हो जाए तो जनसंख्या का सहज स्थानान्तरण हो सकता है। बाबा साहेब का यह भी मत था कि यह स्थानान्तरण ऐच्छिक होना चाहिए, बाध्यकारी नहीं।[1]

बाबा साहेब ने पाकिस्तान समस्या के कुछ अन्य प्रश्नों की भी समीक्षात्मक व्याख्या की। पाकिस्तान के वैज्ञानिक सीमांकन के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सीमा आयोग के गठन को न्यायोचित बताया। बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि पाकिस्तान की सीमाओं के निर्धारणके बाद मुसलमान रूक सकते हैं। वे यह सोंचकर संतुष्ट हो सकते हैं कि जो भी हो पाकिस्तान का सिद्धान्त मान लिया गया है जो सीमांकन का अर्थ है। मानलीजिए मुसलमान सीमांकन मात्र से संतुष्ट नहीं होते और पाकिस्तान की स्थापना चाहते हैं तो उनके लिए दो विकल्प हैं– 1 वे तत्काल पाकिस्तान की स्थापना की मांक कर सकते हैं, 2. वे एक ही केन्द्रीय सरकार के शासन में कुछ समय तक दस वर्ष कह लीजिए रह सकते हैं। हिन्दुओं को यह दिखाने का अवसर मिलेगा कि अल्पसंख्यक उन पर भरोसा कर सकते हैं। मुसलमान अनुभव करके जानेंगे कि हिन्दू राज्य से उनका भय कहां तक उचित है? एक संभवना और भी है। मुसलमान तुरन्त अलग होने का निर्णय करने के बाद कालान्तर में पाकिस्तान से इतने हताश हो सकते हैं कि वे फिर वापस आकर भारत से मिलना और एक संविधान की प्रज्ञा बनना पसंद करें।

ये कुछ ऐसी संभावनाएं हैं जो मुझे सूझती हैं। मैं तो कहूँगा कि इन संभावनाओं को घटित होने के लिए समय और परिस्थितियों पर छोंड़ देना चाहिए। मुसलमानों से यह कहना मुझे गलत लगता है कि 'यदि तुम भारत में एक अंग होकर रहना चाहते हो तो तुम कभी बाहर नहीं जा सकते, यदि तुम आना चाहते हो तो फिर

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड– 15, पृ0सं0 385

कभी वापस नहीं जा सकते।......... इरामें इस तथ्य पर विचार कर लिया गया है कि पाकिस्तान की मुस्लिम माग अस्थाई हो सकती है।[1] बाबा साहेब ने यह भी स्पष्ट किया कि हिन्दुओं को यह उम्मीद नहीं करनी चाहिए कि अंग्रेज शक्ति–प्रयोग से पाकिस्तान की मांग को दवा देंगे।[2]

इस प्रकार बाबा साहेब ने पाकिस्तान की समस्या पर तटस्थ रह कर किया। विभाजन के प्रति उनका रवैया बिल्कुल भावना निरपेक्ष था। यह रोग ग्रस्त अंग के प्रति शल्य चिकित्सा का रवैया था। उन्होंने कहा– "यह सवाल भौतिक–अनैतिक कुछ नहीं है............ यह नैतिकता निरपेक्ष है............ पाप के लिए इसमें कोई जगह नहीं है।"[3] डॉ0 अम्बेडकर ने स्पष्ट है कि भारत का विभाजन अनिवार्य है। पाकिस्तान की अनिवार्यता के सम्बन्ध में डॉ0 अम्बेडकर के मंतव्य का आधार मुस्लिम राजनीति का वस्तुनिष्ठ और विद्वतापूर्ण मूल्यांकन है।[4]

विभाजन को अनिवार्य मानते हुए भी बाबा साहेब में इतना मानव–प्रेम और देश प्रेम था कि वे अखण्ड भारत के अनुराग को नहीं हो छोंड़ सकते थ। उनकी योजना में एक भारत भारत परिषद की व्यवस्था थी। यह परिषद सर्वोपरि प्रभुसत्ता वाली संस्था नहीं बल्कि दो प्रभुता सम्पन्न राज्यों की प्रतिनिधि संस्था थी।[5] उन्होंने स्पष्ट किया कि– यह न तो संघ होगा न महासंघ बल्कि यह हिन्दुस्तान को तब तक जोड़ने का काम करेगा, तब तक वे एक संविधान के अन्तर्गत एक नहीं हो जाते।[6]

बाबा साहेब ने अपनी इस पाण्डित्यपूर्ण पुस्तक में चिकित्सक की भाँति निरपेक्ष ढंग से पाकिस्तान की दुरुह समस्या पर सूक्ष्म एवं विशद विवेचन करते हुए निष्कर्ष रूप में स्पष्ट किया कि कैंसर जैसी भयंकर बीमारी का यदि कोई इलाज है तो

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डयमय खण्ड– 15, पृ0सं0 400–401
[2] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर, एक चिन्तन, वही, पृ0सं0– 63
[3] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिन्तन, वही, पृ0सं0– 67–68
[4] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाडमय खण्ड सं0 15 पृ0सं0– 393
[5] डा0 बी0आर0 अम्बेडकर थॉन ऑन पाकिस्तान, द्वितीय संस्करण, पृ0सं0– 274
[6] मधु लिमये, वही, पृ0सं0– 67

वह विभाजन है। उन्होंने कहा– यदि पाकिस्तान ही इसका निराकरण है, तब इस उपचार पर ध्यान देने की जरूरत है क्योंकि एक निराकरण के रूप में तुष्टीकरण की निरंतर मांग समाप्त हो जाएगी, तथा वे सब इसका स्वागत करेंगे जो देश में अमन–चैन चाहते हैं। मुसलमान अपने राजनैकि सत्ता की निरन्तर बढ़ती भूख के कारण हिन्दुओं के साथ जैसा वर्ताव कर रहे हैं और एक असुरक्षा का वातावरण बना रहे हैं, उससे बेहतर यही होगा कि पाकिस्तान के निर्माण के बारे में गंभीरता पूर्वक विचार हो और विभाजन को स्वीकार कर लिया जाये।[1] डा0 रामविलास शर्मा ने भी लिखा– कि "डा0 अम्बेडकर का निष्कर्ष यह है कि यदि मुसलमान पाकिस्तान बनाने पर अड़े हुए हैं तो वह उन्हें दे देना चाहिए।"

बाबा साहेब का यह निष्कर्ष सात वर्ष बाद एक पूर्ण सत्य भविष्यवाणी के रूप में सामने आया। यह निःसन्देह उनकी उच्चकोटि की दूरदर्शिता का परिणाम थी। मधुलिमये जैसे महान समाजवादी चिन्तक ने स्वीकार किया कि भारतीय नेताओं में अकेले डा0 अम्बेडकर ही थे जिन्होंनें दावों, सूत्रों और समाधानां के जंगल में एक स्पष्ट दिशा देखी। कालान्तर में भारत की आजादी और संवैधानिक समाधान ठीक वैसे ही हुआ जैसा डा0 अम्बेडकर ने सुझाया था।

भारत के संवैधानिक विकास के इतिहास में एक महत्वपूर्ण पड़ाव क्रिप्स मिशन प्रस्ताव (मार्च 1942) था। क्रिप्स मिशन के प्रस्ताव से कांग्रेस सहित भारत का कोई भी राजनैतिक दल संतुष्ट नहीं हुआ था। यद्यपि कांग्रेस में क्रिप्स प्रस्ताव के सम्बन्ध में मतभेद था। अबुल कलाम आजाद के अनुसार "गाँधी जी आरम्भ से ही क्रिप्स योजना के विरोधी थे और जवाहर लाला नेहरू समर्थक।[2] अंततः कांग्रेस और मुस्लिम लीग सभी ने क्रिप्स मिशन के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। महात्मा गाँधी ने इसे 'उत्तर तिथिय चेक (Post dated check) कहा।[3] मुस्लिम लीग पाकिस्तान के निर्माण की स्पष्ट

---

[1] डा0 बी0आर0 अम्बेडकर थॉन ऑन पाकिस्तान, द्वितीय संस्करण, पृ0सं0– 274
[2] अबुल कलाम आजाद, इण्डिया वीन्स फीडम, पृ0सं0– 56
[3] प्रो0 बी0एल0 ग्रोवर, आधुनिक भारतीय इतिहास, पृ0सं0– 577

घोषणा के न होने के कारण असंतुष्ट थी यद्यपि प्रान्तों को पृथक संघ बनाने का अधिकार दिया गया था जो पाकिस्तान के निर्माण की दिशा में एक कदम था। डा० बी०आर० अम्बेडकर ने क्रिप्स प्रस्ताव पर टिप्पणी की– "महामहिम की सरकार ने कांग्रेस को न केवल वह दिया जो उसने नहीं मांगा था, परन्तु वह उसे अतिरिक्त अधिकार भी दिया, जिससे वह केवल बहुमत द्वारा अल्पसंख्यकों के अधिकारों की बात का निर्णय कर सके। पाकिस्तान के सम्बन्ध में इसी प्रकार की प्रवृत्ति दृष्टव्य है। मुस्लिम लीग ने इस बात की मांग नहीं की थी तत्काल पाकिस्तान की स्वीकृति दी जाए। मुस्लिम लीग ने यही मांगा था कि संविधान के आगामी संशोधन में मुसलमानों को पाकिस्तान के प्रश्न को उठाने से रोका जाए। वर्तमान प्रस्तावों में यह बात बढ़–चढ़ कर कही गयी हे। और मुस्लिम लीग को स्पष्ट रूप से पाकिस्तान बनाने का अधिकार दिया गया है।[1]

क्रिप्स प्रस्ताव के असफल होने के पश्चात् बदले घटना क्रम में कांग्रेस की विशेष कार्यकारिणी ने बंबई के ग्वालियर टैंक मैदान में भारत छोड़ो का प्रस्ताव पारत किया। 9 अगस्त को कांग्रेस वार्किंग कमेटी के सारे सदस्य गिरफ्तार कर लिए गए। गाँधी जी, सरोजनी नायडू को पूना के आगा खाँ पैलेस में तथा राजेन्द्र प्रसाद को छोंड़कर (वे पटना में गिरफ्तार किए गए) वार्किंग कमेटी के अन्य सदस्य अहमदाबाद के दुर्ग में नजरबंद कर दिए गए।[2]

कांग्रेस नेताओं की गिरफ्तारी के तत्काल बाद जिन्ना ने एक वक्तव्य दिया– "कांग्रेस ने सरकार के खिलाफ लड़ाई का एलान किया है। ऐसा करते वक्त कांग्रेस ने सिर्फ अपना स्वार्थ देखा है, दूसरों का नहीं, उन्होंने मुसलामानों से अपील की कि वे इस आन्दोलन से बिल्कुल पृथक रहें।"[3]

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, सम्पूर्ण वाण्डमय, खण्ड–19, पृ०सं०– 58

[2] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृ०सं०– 716

[3] सर कूपलैण्ड, दि कॉस्टीट्यूशनल प्रावलम्स इन इण्डिया (आक्सफोर्ड– 1945) भाग–2, पृ०सं०– 299

पूरे देश में कांग्रेस के आह्वान पर व्यापक जनान्दोलन चला जिसके प्रति ब्रिटिश सरकार ने कठोर दमनात्मक नीति अपनाई। इसी समय मुस्लिम लीग ने 1943 ई0 में अपने कराची अधिवेशन में अपनी रणनीति के अनुसार एक नया नारा दिया– "बाँटो और भागो"। अर्थात ब्रिटिश सरकार भारत का विभाजन कर और पाकिस्तान लीग को सौंप कर यहां से चले जाए।

विश्व स्तर पर तीव्र गति से बदल रहे घटनाक्रम में भारत में आए गतिरोध को समाप्त करने के लिए वाइसराय लार्ड वेवल ने जून 1945 में शिमला में सभी भारतीय दलों के प्रतिनिधियों का एक सम्मेलन बुलाने की घोषणा की। बाबा साहेब ने लार्ड बेबल को पत्र लिखकर अनुसूचित जातियों के मन्तव्य को प्रकट किया। लार्ड वेवल ने भारत सचिव लार्ड एमटी को 7 जून को तार भेजकर डा0 अम्बेडकर के विचारों से उन्हें अवगत कराया– "अम्बेडकर श्रीवास्तव और खेर ने आज सुबह एक संयुक्त टिप्पणी प्रस्तुत की जिसमें सवर्ण हिन्दू और मुसलमानों की प्रस्तावित समानता के विरुद्ध आपत्ति प्रकट की तथा इस बात पर बल दिया कि महामहिम सरकार द्वारा अनुमोदित प्रस्ताव हिन्दुओं और अनुसूचित जातियों दोनोके लिए अनुचित है। उन्हें इस बात पर विचार करना चाहिए कि सवर्ण हिन्दुओं का मुसलमानों और अनुसूचित जातियों से अधिक बहुमत है। अतः उनके लिए एक सदस्य से आधेक सदस्य होने चाहिए।[1]

बाबा साहेब ने लार्ड बेवल को 7 जून 1945 को प्रस्तुत किए गए अपे प्रतिवेदन में यह मांग की थी कि अनुसूचित जाति के लिए एक से अधिक सदस्य होने चाहिए। बाबा साहेब ने कहा– "नौ करोड़ मुसलमानों को 5 सीटें, करोड अछूतों को 1 सीट तथा लाख सिखों को 1 सीट देना राजनैतिक गणित का ऐसा विचित्र दोषपूर्ण कृत्य है जो न्याय तथा सामान्य बुद्धि के मेरे विचारों के बिल्कुल विपरीत है।......... यदि महामहिम की सरकार इस गलती को दूर करने में असफल रही तो मैं निश्चित कार्यवाही करूँगा।" बाबा साहेब ने अनुसूचित जातियों के लिए कम से कम तीन स्थानों की मांग

---

[1] द ट्रान्सफर ऑफ पावर, खण्ड–5, सं0– 482, पृ0सं0– 1094–97

की थी और यह स्पष्ट चेतावनी दी कि यदि ब्रिटिश सरकार उनकी मांगे अस्वीकार की तो वे नव गठित कार्यकारिणी परिषद का सदस्य नहीं बन सकते।

शिमला सम्मेलन 25 जून 1945 को आरम्भ हुआ। सभी प्रमुख नेताओं के साथ बाबा साहेब ने भी सम्मेलन में भाग लिया। "हिन्दू महासभा ने भी निमंत्रण पत्र पाने की कोशिश की लेकिन वाइसराय ने उनके दावे को स्वीकार नहीं किया।" सम्मेलन में लार्ड बेवल ने 14 सदस्यीय एक्जिक्यूटिव कौंसिल का प्रस्ताव रखा। इसमें 5 कांग्रेस क, 5 लीग के तथा 4 सदस्य लार्ड बेबल द्वारा मनोनीत होने थे। कांग्रेस ने अबुल कलाम आजाद, जवाहर लाल नेहरू, सरदार पटेल एक पारसी और एक भारतीय इसाई का नाम देना चाहा। बेबल ने 1 सिख, 2 अनुसूचित जाति, और 1 पंजाब के मुख्यमंत्री खिजर हयात का नाम देना चाहा। जिन्ना ने मुस्लिम सदस्यों जो कांग्रेस तथा लीग द्वारा प्रस्तावित थे, का विरोध किया और कहा कि मुसलमान नाम सिर्फ मुस्लिम लीग ही दे सकती है।[1] अन्ततः सम्मेलन असफल हो गया। लीग और कांग्रेस दोनो ने एक दूसरे पर असफलता के लिए दोषी ठहराया।

इस बीच अन्तर्राष्ट्रीय घटनाक्रम तेजी से बदलरहा था। द्वितीय विश्व युद्ध में अन्ततः 7 मई 1945 को नाजीवादी जर्मनी 14 जून 1945 को जापान ने आत्म समर्पण कर दिया और उसकी के साथ द्वितीय विश्व युद्ध समाप्त हो गया। ब्रिटेन यद्यपि विजेताओं की पंक्ति में खड़ा था लेकिन इसकी आन्तरिक स्थिति कमजोर हो गई थी। इस बीच भारत में 18 फरवरी 1946 को भारत में नौसैनिक विद्रोह आरम्भ हुआ। इस विद्रोह ने दूरगामी प्रभाव डाला। 19 फरवरी को ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली ने हाउस ऑफ कामन में कैबिनट मिशन भारत भेजने की घोषणा की।

अन्ततः परिवर्तित परिस्थितियों में ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली 20 फरीबरी 1947 को ब्रिटिश हॉउस ऑफ कामन में भारत सम्बन्धी महत्वपूर्ण नीति की घोषणा की कि जून 1948 के पूर्व उत्तरदायी भारतीय के हाथों में सत्ता स्थनान्तरित कर दी जायेगी। कांग्रेसी

---

[1] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृ0सं0– 734

नेताओं ने ब्रिटिश प्रधानमंत्री के इस व्यक्तव का स्वागत किया। नये बाइसराय के रूप में 24 मार्च 1947 को माउण्ट बेटेन ने अपना कार्यभार ग्रहण किया। माउण्ड बेटेन 3 जून 1947 को अपनी योजना प्रस्तुत की जिसे मन–बाटन योजना के नाम से जाना जाता है। इसने देश के बिभाजन की बात जिसे बाबा साहेब ने 1940 में ही अपनी पुस्तक में स्पष्ट कर दिया था। सत्य साबित किया। बाबा साहेब ने जिस प्रकार बिभाजन को सुझाया था ठीक वैसी ही भारत का विभाजन हुआ इससे अच्छी भविष्यवाणी और क्या होसकती थी। कालान्तर में भारत की आजादी और संवैधनिक संविधान वैसे ही हुआ जैसे डॉ0 अम्बेडकर ने सुझाया था।

ब्रिटिश संसद में 4 जुलाई 1947 को भारतीय स्वाधीनता विधेयक पेश किया गया जिस पर 18 जुलाई को ब्रिटिश सम्राट ने हस्ताक्षेप कर दिया और इसी के साथ घोषणा की गई कि 15 अगस्त 1947 को भारतीय अधिराज के दो टुकड़े कर दिये जायेगें जिसके तहत 14 अगस्त को पाकिस्तान अधिराज तथा 15 अगस्त को भारतीय अधिराज की स्थापना हुई। बाबा साहेब का आकलन और निष्कर्ष सत्य साबित हुआ लेकिन उनकी यह अपेक्षा पूर्ण नही हुई कि विभाजन शान्तिपूर्ण और अस्थाई होगा।

अध्याय अट्ठारह

अध्याय– अठ्ठारह

"आजादी के बाद भारतीय राजनीति और बाबा साहेब"

विश्व इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों में अनेक ऐसे विभूतियों का उल्लेख है, जिन्होंने अपने अपार मेध शक्ति के बल पर ऐसे सिद्धान्तों, मूल्यों, आदर्शों एवं प्रतिमानों की स्थापना की जो देश–काल (देशकाल– जर्मनी के महान बुद्धिवादी दार्शनिक एमैनुअल काण्ट के दार्शनिक सिद्धान्त का नाम है) निरपेक्ष होकर युगों–युगों तक मानवीय चिन्तन के प्रेरणा स्रोत तथा क्रियाकलापों की दिग्दर्शिता बने रहेंगे। ईशा मशीह, पैगम्बर मुहम्मद साहेब, कन्फ्यूशियश, भगवान बुद्ध, महावीर स्वामी, रूसो, वाल्टेयर, कार्ल मार्क्स लेनिन, कबीर, नानक, महात्मा फूले, डा0 बी0आर0 अम्बेडकर आदि महामानवों के कालजयी चरित्र रहे रहें। बाबा साहेब डा0 बी0आर0 अम्बेडकर ने जिस वैचारिक और सैद्धान्तिक आन्दोलन की आधार शिला रखी और जिस स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुतापूर्ण राष्ट्र समाज की स्थापना हेतु आजीवन अविराम, अनवरत तथा अनथक संघर्ष किया वह शाश्वत प्रेरणा स्रोत बन कर हमें उन सिद्धान्तों, मूल्यों की प्राप्ति हेतु प्रेरित करते रहेंगे।

23 जून 1957 को प्लासी के मैदान में ईस्ट इण्डिया कम्पनी (1600ई0 में स्थापित, महारानी एलिजाबेथ के सहयोग से बनी थी) के एक मामूली क्लर्क लार्ड क्लाइव (बाद में गवर्नर बना) ने बंगाल के नबाव सिराजुद्दौला को पराजित कर छल– बल से, जिस ब्रिटिश साम्राज्य की नींव भारत में रखी वह उत्तरोत्तर विकसित और समृद्ध होता गया और वह अंततः एक दीर्घ संघर्ष के बाद 15 अगस्त 1947 को ब्रिटिश साम्राज्य के दासता के जूए से मुक्त हुआ। मार्च 1946 में भारत आए कैबिनेट मिशन योजना के तहत संविधान सभा का गठन किया गया और आरम्भिक अस्वीकृति के बाद कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने 8 अगस्त 1946 को प्रस्ताव पास किया कि वह कैविनेट मिशन की

दीर्घकालीन योजना और अंतरिम सरकार की योजना दोनो को पूरी तरह मानती है। आजाद के शब्दों में[1] "वर्किंग कमेटी के प्रस्ताव ने कैबिनेट मिशन की पूरी पूरी योजना स्वीकर कर ली। इसके माने थे कि दीर्घकालीन योजना और अंतरिम सरकार के प्रस्ताव दोनो स्वीकार कर लिए गए" वाइसराय ने 12 अगस्त 1946 को कांग्रेस के पास अंतरिम सरकार बनाने के लिए निमंत्रण भेजा। 24 अगस्त 1946 को केन्द्र में अंतरिम सरकार की स्थापना की घोषणा वाइसराय ने की।[2] इस अंतरिम सरकार में बाबा साहेब के स्थान पर बाबू जगजीवन राम को सम्मिलित किया गया था। अनुसूचित जाति संघ ने बाबू जगजीवन राम से अनुरोध किया कि जब तक अंतरिम सरकार मे अनुसूचित जाति को पर्याप्त स्थान न मिले, वे अंतरिम सरकार में सम्मिलित न हों।[3] इस विरोध के बावजूद अंतरिम सरकार मे बाबा साहेब को सम्मिलित नहीं किया गया है, लेकिन वे संविधान सभा में प्रवेश करने में सफल रहे।

20 फरवरी 1947 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री श्री एटली ने घोषणा की कि ब्रिटिश सरकार जून 1948 के अन्दर भारत की सत्ता जिम्मेदार भारतीयों के हाथ सौंप देना चाहती है। घोषणा इस प्रकार थी– "अनिश्चितता की वर्तमान हालत खतरे से भरी है और अनिश्चित काल तक जारी नहीं रखी जा सकती। महामहिम की सरकार यह स्पष्ट कर देना चाहती है कि जून 1948 के पूर्व ही जिम्मेदार भारतीय हाथों में सत्ता हस्तान्तरण को पूरा करने के लिए आवश्यक कदम उठाने का उसका निश्चित इरादा है।[4]

4 जुलाई 1947 को ब्रिटिश संसद में भारतीय स्वाधीनता विधेयक पेश किया गया जो 15 जुलाई को हाउस ऑफ कामंस द्वारा तथा 16 जुलाई को हाउस ऑफ लाड्र्स द्वारा पारित हो गया। 18 जुलाई को ब्रिटिश सम्राट ने उस पर हस्ताक्षर कर दिए। घोषणा हुई कि 15 अगस्त 1947 से हिन्दुस्तान के दो टुकड़े कर दिए जाएंगे और

---

[1] अबुल कलाम आजाद, इण्डिया वींस फ्रीडम, पृ0सं0– 158
[2] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृ0सं0– 72–73
[3] बुद्ध शरण हंस, बाबा साहेब अम्बेडकर (जीवन कथा), पृ0सं0– 118
[4] डा0 धीरेन्द्र नाथ सेन, रिवोल्यूशन वार कांसेंट (विद्योदय लाइब्रेरी कलकत्ता, प्रथम संस्करण), पृ0सं0– 317

दो अलग–अलग अधिराज्य कायम किए जायेंगे। 14 अगस्त को पाकिस्तान अधिराज्य तथा 15 अगस्त को पाकिस्तान अधिराज्य की स्थापना होगी। 14 अगस्त की आधी रात को संविधान सभा को संबोधित करते हुए पं0 जवाहर लाल नेहरू ने कहा– आधीरात की इस घड़ी में जब दुनिया सो रही है, भारत जाग कर जीवन और स्वतन्त्रता प्राप्त करेगा। एक क्षण ऐसा आता है, जो इतिहास में बहुत ही कम आता है, जब हम पुराने युग से नए युग में कदम रखते हैं, जब एक युग खत्म होता और जब एक राष्ट्र की अरसे से दबी आत्मा बोल उठती है। यह बहुत ही अच्छी बात है कि इस पवित्र क्षण में हम भारत और उसकी जनता की सेवा और उससे भी बढ़कर मानवता कीसेवा करने की सौगंध लेते हैं।[1]

भारत विभाजन के साथ आजादी मिली और स्थितियां पूरी तरह बदल गई। बाबा साहेब की संविधान सभा की सदस्यता बंगाल के विभाजन के साथ खतरे में पड़ गई, क्योंकि वे संयुक्त बंगाल से चुनकर आये थे। सरदार पटेल ने इस स्थिति में बाबा साहेब के साथ पुनः वार्ता आरम्भ की। जब श्री एम0आर0 जयकर ने संविधान सभा से त्याग पत्र दिया तो सरदार पटेल ने एक सुनहरा मौका देखकर जयकर के स्थान पर बाबा साहेब की उम्मीदवारी का समर्थन किया। बाबा साहेब ने बंबई विधान सभा से संविधान सभा में अपनी उम्मीदवारी का पर्चा भरा था।कांग्रेसी सदस्यों ने भी बाबा साहेब को अपना मत दिया औरइस प्रकार बाबा साहेब जीत प्राप्त कर संविधान सभा में पुनः प्रवेश किए।

कांग्रेस का एक गुट जिसका नेतृत्व पटेल जी कर रहे थे बाबा साहेब का मंत्रिमण्डल में शामिल करने के लिए प्रयास कर रहा था। जवाहरलाल नेहरू ने भी इसका समर्थन किया ओर उन्होंने स्वयं बाबा साहेब को बुलाकर वार्ता की और कहा– "क्या आप स्वतन्त्र भारत के लिए मंत्रिमण्डल में विधि मंत्री के पद को स्वीकार करेंगे।"[2] बाबा साहेब ने उत्तर दिया कि "विधि विभाग में उनके पास काम करने के लिए कुछ

---

[1] रमेश चन्द्र मजूमदार, हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूववमेंट इन इण्डिया, पृ0सं0–809

[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 376

विशेष नहीं होगा।" इस पर नेहरू जी ने कहा, इसकी चिन्ता मत करें और बहुत से काम वहाँ होंगे।[1] जवाहरलाल नेहरू ने बाबा साहेब को यह आश्वासन भी दिया कि बाद में योजना विभाग भी उन्हें दे दिया जायेगा। अंततः दलित वर्गों के हितों की रक्षा करने के लिए तथा देश निर्माण में अपना योगदान देने के उद्देश्य से बाबा साहेब ने नेहरू मंत्रिमण्डल में शामिल होना स्वीकार कर लिया। भारत के केन्द्रीय मंत्रिमण्डल में एक अस्पृश्य को यह महत्वपूर्ण पद प्राप्त होना, भारतीय इतिहास की विस्मयकारी घटना थी। जिन कांग्रेसियों और उनके समर्थक समाचार पत्रों ने अब तक बाबा साहेब को अंग्रेजों का पिट्ठू, देशद्रोही आदि कहा था वही विरोधी अब महान कूटनीतिज्ञ के रूप में बाबा साहेब का जयघोष कर रहे थे।

इस प्रकार बाबा साहेब नेहरू मंत्रिमण्डल में विधिमंत्री के रूप में सम्मिलित हुए लेकिन इन दोनो के मध्य कभी मधुर सम्बन्ध नहीं बन पाये। गृह और विदेश नीति के तमाम मुद्दों पर बाबा साहेब का पं० नेहरू के साथ गंभीर मतभेद थे। नेहरू के मार्क्सवाद और अर्थवाद से बाबा साहेब साहेब को कभी सहानुभूति नहीं रही साथ ही नेहरू जी की भावुकता और अस्पष्टता को भी उन्होंने कभी पसन्द नहीं किया। जम्बू-काश्मीर के प्रति जवाहर लाल नेहरू की नीति से भी के बाबा साहेब ने अपनी घोर असहमति व्यक्ति की। पं० नेहरू की भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की नीति से भी बाबा साहेब असहमत थे। पं० नेहरू की विदेश नीति विशेषकर चीन के साथ सम्बन्ध की प्रखर आलोचना की।

बाबा साहेब और पंडित नेहरू के मतभेद कभी-कभी बहुत तीखे रूप में सामने आते थे। 25 अप्रैल 1948 को बाबा साहेब ने अनुसूचित जाति संघ के लखनऊ में हो रहे अधिवेशन मे एक महत्वपूर्ण भाषण दिया- "राजनैतिक सत्ता ही समाज के उन्नति की कुंजी है। इसलिए दलित समाज अपना संगठन निर्मित करें और मजबूत राजनैतिक दल स्थापित कर राजनैतिक सत्ता पर काबिज हो जाए....... मैं केन्द्रीय सरकार से जा

---

[1] सरदार पटेल, कोरेस्पांडेंड, खण्ड-4, पृ०सं०- 536

मिला हूँ, कांग्रेस दल से नहीं............. एक दो वर्षों में उसका विनाश हो जाए तो मुझे कोई आश्चर्य नहीं होगा।....... कांग्रेस एक जलता हुआ घर है।[1]

इस भाषण से देश के राजनैतिक क्षितिज पर भूकम्प आ गया। पं0 नेहरू ने तत्काल पत्र लिखा "यदि मंत्री इस तरह की भावना रखे और बात करें तो मंत्रिमण्डल का सामूहिक उत्तरदायित्व कहां रह जायेगा। प्रधानमंत्री को अपनी दुकानदारी बन्द कर देनी पड़ेगी।.... इस प्रकार तो सहयोग करना और मिलकर काम संभव नहीं।[2] बाबा साहेब के इस भाषण से उनके समर्थक पटेल भी आश्चर्य चकित थे। पटेल जी ने जवाहर लाल नेहरू से यह कहा कि मैं नहीं समझता कि अम्बेडकर इस भाषण के बाद मंत्रिमण्डल में कैसे रह सकते हैं। लेकिन पटेल जी की यह इच्छा थी कि इतने विवाद के बावजूद डा0 अम्बेडकर जैसे प्रखर बौद्धिक व्यक्ति मंत्रिमण्डल में रहें। कांग्रेस हाईकमान ने एक कड़ा पत्र लिखकर डा0 अम्बेडकर से स्पष्टीकरण मांगा। बाबा साहेब ने 30 अप्रैल 1948 का अपना स्पष्टीकरण दिया कि "मैंने वह वक्तव्य नहीं दिया जिसे मेरा बताया जा रहा है। अखबार वालों ने शब्दों को तोड़ा–मरोड़ा है और प्रसंग से काट कर प्रस्तुत किया है। समाचार पत्र मेरे साथ कभी न्यायपूर्ण वर्ताव नहीं करते।[3]

इस स्पष्टीकरण के बाद यह प्रकरण समाप्त हो गया और बाबा साहेब पूर्ण निष्ठा तथा ईमानदारी के साथ अपने दायित्वों का निर्वहन करते रहे। बाबा साहेब और पं0 नेहरू के मध्य सम्बन्धों में एक निर्णायक मोड़ हिन्दू कोड बिल को लेकर आया। बाबा साहेब पं0 नेहरू की सलाह मशविरा से 1941 से प्रक्रियाधीन हिन्दू कोड बिल का काम अपने हाथ में लिया। उन्होंने दिन–रात परिश्रम करके इस बिल को तैयार किया, जिसमें कुल 9 भाग तथा 139 धारायें थी। इस बिलका मूल उद्देश्य हिन्दू परम्परा पर आधारित सामाजिक विषमता, भेदभाव और क्रूरतापूर्ण मान्यताओं, रीतियों तथा नियमों को नष्ट

---

[1] सरदार पटेल, कारेस्पांडेड, खण्ड– 5. पृ0सं0– 328–329
[2] कीर धनंजय, वही, पृ0सं0– 385
[3] मधुलिमये, वही, पृ0सं0– 97

करना था। हिन्दू समाज की इन्हीं विसंगतियों को हटाने और समाज में एक रूपता लाने के लिए डा0 अम्बेडकर ने हिन्दू कोड बिल को वर्तमान रूप में बनाया।

हिन्दू कोड बिल को बाबा साहेब ने 24 फरवरी 1949 को संसद में पेश किया। विधेयक पर चर्चा करते हुए बाबा साहेब ने कहा– यदि आपको हिन्दू आचार, हिन्दू संस्कृति या हिन्दू समाज को स्थाई बनाना है तो यहां सुधार करना आवश्यक है...... जहां तक हिन्दू कोड बिल के आधार का सम्बन्ध है, वह हिन्दू शास्त्रों के अनुसार ही बनाया गया है। स्त्री के सम्पत्ति का अधिकार जीमूतवाहन के दाय भाग के अनुसार है। तलाक का आधार पराशर स्मृति है....... जो हिन्दू अपने पुराने रास्ते पर चलना चाहते हैं उनको यह बिल ऐसा करने से नहीं रोकता तथा जो हिन्दू न्यायी जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, यह उनका मार्ग खोलता है।

विधेयक पेश होते ही इसका तीव्र विरोध आरम्भ हुआ। पूरा देश दो भागों में विभाजित हो गया। एक ओर सनातनी पुरातनवादी, रूढ़िवादी लोग थे तो दूसरी ओर उदारवादी, प्रगतिवादी लोग थे। इस विधेयक के प्रश्न पर कांग्रेस पार्टी में ही गम्भीर मतभेद हो गया। सरदार पटेल, राजेन्द्र प्रसाद तथा पट्टाभिसीतारमैया जैसे चोटी के कांग्रेस के कर्णधारों ने विधेयक का विरोध आरम्भ किया। डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने जवाहर लाल नेहरू को पत्र लिखा– "प्रिय नेहरू इस बिल से यद्यपि काफी लाभ है फिर भी मेरा ऐसा विचार है कि बिल के दूरगामी परिणामों के बारे में लोगों में मतभेद हैं। इसलिए विधि मंडल के रूप में काम कर रहे संविधान सभा को इस बिल को पास नहीं करना चाहिए। किसी भी रूप में इस विधेयक का समर्थन नहीं करना है, तथा पास करने की जल्दी नहीं करना है......... मेरा अनुरोध है कि इन सब बातों पर ध्यान देकर विचार कीजिए।"

इन विरोधों के बावजूद पं0 नेहरू विधेयक को पास कराना चाहते थे। दिसम्बर 1949 में उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा कि हिन्दू कोड बिल का संसद में पास होना या न होना सरकार पर विश्वास या अविश्वास प्रस्ताव का मुद्दा बन सकता है,

ऐसा सरकार का विचार है। इस मुद्दे पर सरकार या तो सत्ता में रहेगी या सत्तापद छोड़ देगी। इस वक्तव्य से विरोधी गुट में खलबली मच गई, लेकिन डा0 राजेन्द्र प्रसाद झुकने को तैयार नहीं थे। दूसरी बार बाबा साहेब संसद में तथा उसके बाहर बिल के समर्थन में स्वीकृति का वातावरण तैयार कर रहे थे। बम्बई के सिद्धार्थ कालेज[1] में सनातनी हिन्दुओं को जवाब देते हुए उन्होंने कहा– "हिन्दू कोड बिल (हिन्दू जीवन पद्धति) हिन्दू समाज को सुन्दर बनाने के लिए तथा कानून सम्मत बनाने के लिए लाया गया है। हिन्दू समाज को आदर्शमय बनाने के लिए हिन्दू कोड बिल जरूरी है। हिन्दू कोड बिल ही सम्पूर्ण राष्ट्र के हिन्दुओं को एक सूत्र में बाँधता है। हिन्दू कोड बिल के सभी विधान हिन्दू शास्त्र सम्मत हैं।"

बाबा साहेब ने नवम्बर 1950 में हिन्दू कोड बिल पर 39 पृष्ठों की एक पुस्तिका लिख कर देश भर में वितरण किया। इस बिल पर देश में आम सहमति न बनने के कारण संसद में गतिरोध जारी रहा, जिससे 22 दिसम्बर 1950 से 5 फरवरी 1951 तक संसद का सत्र स्थगित रहा। 5 फरवरी 1951 को संसद का सत्र पुनः आरम्भ होने पर इसे पुनः सदन के पटल पर रखा गया। इसका पुनः विरोधी गुटों द्वारा जोरदार विरोध आरम्भ हुआ, अंततः सदन सितम्बर तक के लिए स्थगित कर दी गई। इस बीच 10 अगस्त 1951 को बाबा साहेब ने पं0 नेहरू के पास पत्र लिखकर अपने गिरते हुए स्वास्थ्य का उल्लेख करते हुए आगामी सत्र में इसके पास होने की इच्छा व्यक्त की।

19 सितम्बर 1951 को संसद का सत्र आरम्भ हुआ और हिन्दू कोड बिल को पुनः प्रस्तुत किया गया। बाबा साहेब ने 20 सितम्बर को विधेयक पर चर्चा करते हुए कहा–"रामायण काल में यदि हिन्दू कोड बिल जैसा कानून होता तो पुरुषोत्तम राम ने सीता को कभी धर से बाहर नहीं किया होता।" इस वक्तव्य से सदन में जोरदार हंगामा हुआ। अंततः बाबा साहेब ने खेद प्रकट करते हुए कहा– "अगर मेरे वक्तव्य से सदन की

---

[1] सिद्धार्थ कालेज मुम्बई में 11 जनवरी 1950 को डा0 अम्बेडकर के दिए गये भाषण के अंश।

भावनाएं आहत हुई हो तो मैं खेद व्यक्त करता हूँ। अंत में विरोधियों के सम्मुख घुटने टेकते हुए पं0 नेहरू ने यह घोषणा की कि यह बिल सदन से वापस लिया जाता है।

हिन्दू कोड बिल के न पारित होने से बाबा साहेब को पुत्र निधन की भाँति अपार कष्ट हुआ। वे बोले– "बिना किसी आकृन्दन और अश्रुसिंचन के हिन्दू कोड बिल की हत्या की गई और दफना दिया गया।[1] बाबा साहेब अत्यन्त व्यथित होकर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि मंत्री पद पर बने रहने का अब कोई अर्थ नहीं है। वह कांग्रेसी सरकार में थे और कांग्रेस तथा कांग्रेसी ही उनका विरोध कर रहे थे। यद्यपि प्रधानमंत्री पं0 नेहरू ने बाबा साहेब बाबा साहेब के अथक परिश्रम तथा क्षमताओं की प्रशंसा की थी, परन्तु वह उनको सहयोग व समर्थन न दे सके। बाबा साहेब ने अत्यन्त दुःखीमन से 27 सितम्बर 1951 को मंत्री पद से त्याग पत्र दे दिया। बाबा साहेब ने अपने त्याग पत्र पर एक वक्तव्य दिया– मंत्रिमण्डल से बाहर निकलने की कई दिनों से मेरी हार्दिक इच्छा थी। इस इच्छा निर्मित को एक के बाद कई प्रसंगों को जन्म दिया। प्रथमता मैं कारणों की चर्चा करूँगा।...... प्रधानमंत्री ने मंत्री पद का प्रस्ताव मेरे सामने रखा..... और कहा था कि योजना विभाग शीघ्र ही बनने वाला है, यह विभाग आपको दे दिया जायेगा....... योजना विभाग मेरे सिवाय किसी अन्य को दिया गया........ विदेश व्यवहार समिति आदि मुख्य समितियों का निर्माण प्रधानमंत्री करता है, ऐसी किसी समिति में भी मेरा मनोनयन नहीं हुआ........ केवल हिन्दू कोड बिल के लिए मैं पद पर बना रहा....... अब मंत्रिमण्डल में बने रहना संभव नहीं है।[2]

बाबा साहेब के त्याग पत्र की पूरे देश में चर्चा हुई। टाइम्स ऑफ इण्डिया ने अपने अग्रलेख में कहा– "यद्यपि मनुका मुकुट अम्बेडकर को नहीं मिला, फिर भी मंत्रिमण्डल में काफी ठोस कार्य करके अम्बेडकर बाहर जा रहे हैं। पहले से ही मंत्रिमण्डल में बुद्धिमान लोगों की कमी है और डा0 अम्बेडकर जैसा पैनी दृष्टि वाला पंडित और सार्वजनिक कार्य में उत्कृष्ट कार्य करने वाले मंत्री के जाने से मंत्रिमण्डल का

---

[1] दस स्पोकेन अम्बेडकर, खण्ड– 1, पृ0सं0– 108
[2] डा0 बाबा साहेब आंवेडकर चीपंत्र, सं शकररा शरात, पृ0सं0– 305

तेज सीमित हो गया है।" बम्बई के नेशनल स्टैर्ड ने लिखा– "नियोजन, अर्थ या व्यापार और उद्योग धन्धा विभागों का मंत्रिपद स्वीकार करने में अम्बेडकर जैसा लायक और गुण सम्पन्न व्यक्ति देश में बहुत कम हैं।" बम्बई के ही फी प्रेस जनरल ने लिखा–"अम्बेडकर जैसा ख्याति प्राप्त मंत्री को इतने दुःखी मन से मंत्रिमण्डल से बाहर निकलना पड़ा।"

पं० नेहरू ने बाबा साहेब ने त्याग पत्र को स्वीकार करने के सम्बन्ध में कहा कि चालू अधिवेशन के अंतिम दिन से मैंने आपका इस्तीफा स्वीकार करना तय किया है, इसलिए आप तब तक कार्य करते रहें। बाबा साहेब ने 4 अक्टूबर को प्रधानमंत्री को पत्र लिखा कि 11 अक्टूबर तक उनके नाम पर जो भी कार्य हों निपटा लिया जाए। 11 अक्टूबर को संसद का सत्र आरम्भ हुआ और डा० अम्बेडकर ने उठकर कहा कि पहले मुझे अपना कथन प्रस्तुत करने की अनुमति दी जाए लेकिन उप सभापति द्वारा समय 6 बजे शायं दिये जाने से क्षुब्ध होकर बाबा साहेब ने तत्काल अपने कागजात इकठ्ठा किए और बहिष्कार के रूप में सदन से बाहर निकल गए। इस प्रकार संविधान के प्रधान शिल्पी को अपने मंत्री पद का त्याग करते ही सभागृह छोंड कर जाने के लिए विवश होना पड़ा।[1] दूसरे दिन विरोधी दल के नेता के रूप में सभागृह में डा० अम्बेडकर का स्वागत किया गया।

बाबा साहेब ने मंत्रिमण्डल से बाहर आने के बाद 12 अक्टूबर को अपने त्यागपत्र के कारणों से समाचार पत्रों को अवगत कराया, जिसमें पाँच कारणों का उल्लेख था।[2]

1. प्रधानमंत्री ने मंत्रिमण्डल में उन्हें सम्मिलित करते समय आश्वासन दिया था कि नियोजन विभाग उन्हें दे दिया जाएगा, लेकिन जब यह विभाग बना तो दूसरे को दे दिया गया। साथ ही मंत्रिमण्डल समितियों से भी उन्हें अलग रखा गया।

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 413

[2] बुद्धशरण हंस, बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन कथा, पृ0सं0– 148

2. नेहरू सरकार दलित वर्गों के विकास के प्रति सर्वदा उदासीन रही।

3. काश्मीर समस्या के प्रति पं0 नेहरू की सरकार तत्पर नहीं रही। बाबा साहेब बराबर बल देते रहे कि जम्बू कश्मीर का दो भागों में विभाजन कर दिया जाए। मुस्लिम बाहुल्य भाग पाकिस्तान को तथा हिन्दू तथा बौद्ध बाहुल्य भाग भारत को दे दिया जाए।

4. भारत की विदेशी नीति ऐसी है कि दोस्त कम और दुश्मन अधिक पैदा हुए हैं। भारत की त्रुटिपूर्ण नीति के कारण भारत को अपने 350 करोड़ राजस्व में से 108 करोड़ की राशि सेना पर व्यय करनी पड़ रहा है। भारत को अपने पड़ोसी देशों की मित्रता पर अधिक ध्यान देना चाहिए ताकि देश पर संकट पड़ने पर वे मददगार बन सकें।

5. हिन्दू कोड बिल पारित कराने में प्रधानमंत्री बहुत उदासीन रहे। उन्होंने टाल–मटोल की नीति अपनाई। इसके लिए जिस दृढ़ता और लगनशीलता की आवश्यकता थी, वह प्रधानमंत्री में नहीं है।

इन कारणों से क्षुब्ध होकर बाबा साहेब ने त्याग पत्र दे दिया। इसके बाद बाबा साहेब को अपने भावी कार्यक्रम के विषय में निर्णय लेना था। जनवरी 1952 में स्वतन्त्र भारत में लोकसभा और विधान सभाओं के लिए प्रथम आम चुनाव होने थे, जिसके लिए बाबा साहेब को पर्याप्त तैयारी की आवश्यकता थी। बाबा साहेब ने जिस अनुसूचित जाति संघ का गठन किया था, उसी को चुनावी वैतरणी में उतारने का निर्णय लिया, लेकिन कुछ पार्टियों से राजनैतिक तालमेल की संभावनाओं पर विचार किया। साम्यवादियों के साथ उनके मूलभूत मतभेद थे, कांग्रेस से नाता ही तोड़ लिया था। अब समाजवादी पार्टी ही एक ऐसी पार्टी थी, जिसके साथ अखिल भारतीय स्तर पर समझौता

कर सकते थे। बाबा साहेब 7 नवम्बर 1951 को पटना में समाजवादी नेता जय प्रकाश नारायण से मिले और वार्ता की। अंततः दोनो पार्टियों में समझौता हो गया।[1]

बाबा साहेब अपनी पार्टी अनुसूचित जाति संघ (1942 में स्थापित) से बड़ी संख्या में उम्मीदवार लोक सभा के लिए तथा कई प्रान्तों की विधान सभाओं के लिए उतारे और बड़े स्तर पर चुनाव प्रचार मे लग गये। पंजाब के जालंधर जिले में अनुसूचित जाति संघ का अधिवेशन 27 अक्टूबर 1951को आरम्भ हुआ। इसमें भाषण देते हुए बाबा साहेब ने कहा– "प्रारम्भ में आपसे क्षमा चाहूँगा कि अनेक बार कार्यक्रमों की घोषणा होने के बावजूद भी मैं केन्द्रीय शासन में मंत्री और कार्य की अधिकता एवं स्वास्थ्य खराब होने के कारण आपके बीच नहीं आ सका.... मेरे जीवन का क्या अर्थ है, यह मैं बचपन से ही समझने लगा था। मैंने जीवन में एक ही सिद्धान्त का पालन किया है, वह है अपने अछूत भाइयों की सेवा करना। मैं जहां कहीं और जिस स्थिति में रहा हूँ, मैं हमेशा अपने भाइयों के कल्याण के लिए विचार करता रहा हूँ। मैंने इतना अधिक ध्यान किसी अन्य समस्या पर नहीं दिया है। अतीत में मेरे जीवन का लक्ष्य रहा है कि मैं अछूतों के हितों की रक्षा करूँ और भविष्य में भी यह जारी रहेगा.......।

बैरिस्टर बनने की योग्यता प्राप्त कर जब मैं इंग्लैण्ड से वापस आया तो मुझे जिला जज बनने का प्रस्ताव इस वचनबद्धता के साथ दिया गया कि तीन वर्षों में मुझे उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बना दिया जाएगा..... तब भी मैंने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया था, क्योंकि उस कार्य को स्वीकार करने पर जिसमें कि बहुत अधिक वेतन मिलने के कारण मेरा सम्पूर्ण आर्थिक जीवन तो निश्चित हो जाता, पर मेरे जीवन के उद्देश्य अर्थात अपने लोगों के उत्थान एवं कल्याण के मार्ग में यह एक स्वाभाविक बाधा होती।..... 1947 में मैं केन्द्रीय सरकार में शामिल हुआ। मेरे कुछ आलोचकों ने मुझ पर आरोप लगाया था कि मैं कांग्रेस में शामिल हो गया हूँ। मेरे आलोचकों द्वारा मुझ पर जो आरोप लगाए गए उसका उत्तर मैने लखनऊ में एक भाषण

[1] मधु लिमये, वही, पृ0सं0– 102

में दिया था। उस भाषण में मैंने अपने देशवासियों से कहा था कि मैं किसी मिट्टी के लोंदे के समान नहीं जिसे पानी के बहाव के साथ बहाया जा सके। मैं एक चट्टान की भाँति हूँ, जो गलती नहीं, अपितु नदी के बहावको मोड़ देती है..... मैंने अपनी सम्पूर्ण ईमानदारी एवं शक्ति से मातृभूमि की सेवा हेतु कांग्रेस सरकार मे चार वर्ष तक सहयोग किया था।..........

अब आने वाले चुनाव के विषय में मैं अनुसूचित जाति के सदस्यों से अपील करूँगा कि चुनावों की हमारे समाज के लोग जीवन एवं मरण का प्रश्न समझें और आगे आने वाले महीनों में इसी भावना से प्रेरित होकर कार्य करें। हमें अपनी सम्पूर्ण शक्ति अपने उम्मीदवारों को जिताने में लगा देनी चाहिए।....... हमारे पास एक शक्ति हो सकती है और वह है राजनैतिक शक्ति। इस शक्ति को हमें अवश्य प्राप्त करना होगा। इस शक्ति से लैस होकर हम अपने लोगों के हितों की रक्षा कर सकते हैं।...... गाँधी अछूतों के राजनैतिक अधिकार देने के पक्षधर नहीं थे, क्योंकि उन्हें डर था कि ऐसा करने से उनके (अछूतों) मस्तिष्क में महत्वाकांक्षाएं विकसित होने लगेंगी। वे उन्हें उच्च वर्ग के हिन्दुओं की दय पर निर्भर रखना चाहते थे।....... कांग्रेस ने सभी उचित अनुचित साधनों को अपनाकर अछूतों को उनके न्यायोचित अधिकारों से वंचित कर रखा था।

पंडित नेहरू ने अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के प्रति कभी न्याय नहीं किया...... अनुसूचित जाति के लोगों को इस बात से सतर्क रहना चाहिए कि कांग्रेस उनका विभाजन न कर सके। कांग्रेस के नेताओं की बनावटी बातें और कांग्रेस के प्रचार से उन्हें प्रभावित नहीं होना चाहिए। आप सब लोग यह जानते हैं कि अनुसूचित जाति संघ का चुनाव चिन्ह हाथी है। मैंने हाथी को चुनाव चिन्ह इसलिए चुना है कि भारत में इसे सब पहचानते हैं। यहां तक कि अशिक्षित व्यक्ति भी इसे आसानी से पहचान सकता है। हाथी अपनी बुद्धिमत्ता, शक्ति और साहस के कारण भी जाना जाता है। हमारे लोग हाथी के समान हैं, जो अपने पैरों पर खड़ा होने के लिए लंबा समय लेते हैं, पर एक

बार अपने पैरों पर खड़ा होने के बाद सरलता पूर्वक उनसे घुटने नहीं टिकवाए जा सकते।[1]

बाबा साहेब ने 28 अक्टूबर को पंजाब के लुधियाना में एक और विशाल सभा को सम्बोधित करते हुए कहा– प्यारे भाइयो और बहनो मैं अपने लोगों से बात करने के लिए पहली बार यहाँ आया हूँ। यहाँ आने का मैंने पहले कई बार विचार किया था लेकिन अपरिहार्य परिस्थितियों के कारण ऐसा नहीं कर सका........ मैं आग्रह करना चाहूँगा कि अनुसूचित जाति के सभी लोग अनुसूचित जाति संघ के उम्मीदवार को अपना मत दें जो कि अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़ी जातियों का एक मात्र संघ है।

मैं आप लोगों को बताना चाहता हूँ कि ब्रिटिश लोगों ने भारत पर अपने शासनकाल में हमें कैसे धोखा दिया..... ब्रिटेन के लोग अनुसूचित जाति के लोगों की सहायत से भारत के शासक बने, जिन्हें कि उनके ही देशवासी अछूत कहते थे।...... उनके सामने जीवन यापन के लिए ब्रिटिश सेना में भर्ती होने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं था।..... अंग्रेजों को हमारे लोगों के कल्याण के लिए कछ करना चाहिए था पर उन्होंने हमारे लिए कुछ नहीं किया........ अनेक वर्षो के संघर्ष के पश्चात् हमने कुछ राजनैतिक अधिकार प्राप्त किया है जो कि भारत में संविधान में समाविष्ट है।...... बहुत से दल इन अधिकारों को छीनने के लिए उत्सुक है। वे हमारे मतों को प्राप्त करने के लिए उत्सुक हैं और अपने विश्वस्त अनुचर को उन स्थानों पर भेजना चाहते हैं, जो कि हमारे लिए आरक्षित हैं।....... यदि प्रान्तों की विधान सभाओं एवं केन्द्र की संसद के लिए उचित प्रतिनिधि नहीं चुने जाते हैं तो हम स्वतन्त्रता का उपभोग नहीं कर सकते।

.........मैं यह स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि यदि आपने कांग्रेस को मत दिया तो आप सदैव कष्ट झेलते रहेंगे। मुझे ज्ञात है कि कांग्रेस के पास पर्याप्त धन है जिसके बल पर वह मतों को खरीदना चाहेगी। इसके लिए आपको सतर्क रहना होगा।..... मैं उन लोगों के विषय में आपको बताना चाहता हूँ जो कि आरक्षित स्थानों पर कांग्रेस के

---

[1] ले0 एल0आर0 वाली, डा0 अम्बेडकर जीवन और मिशन, पृ0सं0– 308

टिकट से संसद का चुनाव जीते थे। उनकी संख्या 30 थी, इन 30 में से एक भी सदस्य ने अनुसूचित जातियों की व्याधियों के विषय में संसद में एक भी प्रश्न नहीं उठाया है।.....

प्रत्येक राजनैतिक दल ने अपना घोषणा पत्र जारी कर दिया है....... मुझे विश्वास है कि हमारा घोषणा पत्र सर्वोत्तम होगा। सभी दलों ने अपने घोषणा पत्र में जनता को बहुत से आश्वासन दिए हैं। आश्वासन देना सरल है, किन्तु पूरा करना कठिन है। घोषणा पत्र केवल आश्वासनों की सूची मात्र नही होना चाहिए। समें देश के सामने उपस्थित समस्याओं का उल्लेख होना चाहिए।...... अनुसूचित जाति संघ सभी अस्पृश्य तथा पिछड़ी जातियों का प्रतिनिधित्व करता है। प्रत्येक पिछड़ी जाति को प्रतिनिधित्व दिया जायेगा।....... वैसे भी हमारे वोट पर्याप्त नहीं हैं और यदि मतदाता अपने मत का प्रयोग उस दिन नहीं करते तो हमारे हित में यह अच्छा नहीं होगा। मतदान का दिन हम सबक के लिए जीवन–मरण का दिन है।"[1]

इन भाषण में बाबा साहेब ने बहुत सारी बातों के अलावा यह भी स्पष्ट उल्लेख किया कि अनुसूचित जाति संघ केवल अनुसूचित जातियों का ही नहीं वरन सभी दलित, शोषित, पिछडो की पार्टी है। बाबा साहेब ने आलोचकों के इस आलोचना का मुंहतोड़ जवाब दिया कि अनुसूचित जाति संघ केवल दलितों का संघ है। बाबा साहेब जैसी महान बुद्धिजीवी और दूरदर्शी व्यक्ति यह जानता था कि जातीयता से ओतप्रोत भारतीय समाज में दलित, शोषित, पिछड़ों को एकजुट करके ही राजनैतिक शक्ति प्राप्त की जा सकती है।

बाबा साहेब ने अगले दिन 29 अक्टूबर को पटियाला में भी चुनावी भाषण दिया, जिसमें कांग्रेस को जलता हुआ घर बताया तथा यह भी सप्रमाण कहा कि कांग्रेस के मंत्री कितने व्यापक पैमाने पर भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी तथा भाई–भतीजावाद में लिप्त हैं। बाबा साहेब ने इस बात काभी उल्लेख भाषण में किया, "मैंने गाँधी जी से एक साधारण प्रश्न पूछा था। मैंने उनसे कहा था कि हम इस बात के खिलाफ नहीं कि

[1] 28 अक्टूबर 1951 को लुधियाना में दिया गया भाषण।

हमारा देश स्वतन्त्रता प्राप्त करे। मैं उनसे जानना चाहता था कि स्वराज्य में अनुसूचित जाति के लोगों की स्थिति क्या होगी? गाँधी और किसी कांग्रेसी ने मुझे कोई संतोषप्रद उत्तर नहीं दिया । मैं आज उसी प्रश्न को उच्च जाति के हिन्दुओं के समक्ष रख रहा हूँ।"[1]

राजनैतिक गहमागहमी के बीच जनवरी 1952 में स्वाधीन भारत में प्रथम आम चुनाव सम्पन्न हुए। बाबा साहेब की पार्टी अनुसूचित जाति संघ और उनकी सहयोगी समाजवादी पार्टी को भारी पराजय का सामना करना पड़ा। बाबा साहेब स्वयं काग्रेसी उम्मीदवार नारायण काजरोलकर से बंबई लोक सभा सीट से पराजित हो गए। बाबा साहेब की इस पराजय से कांग्रेसियों को छोंड़कर सारा देश हतप्रभ था। यद्यपि उनकी चुनावी सभाओं में लाखों – लाखों लोगों की भीड़ उमड़ती थी फिर भी उनका पराजित होना एक विस्मयकारी घटना थी। बाबा साहेब तथा उनके लाखों अनुयायियों को इस पराजय से भारी सदमा लगा था। बाबा साहेब ओर उनकी पार्टी के पराजय के कारणों की समीक्षा करने से निम्नलिखित कारण उभर कर सामने आते हैं :–

1. बाबा साहेब को संविधान निर्माता तथा अस्पृश्यों के मशीहा के रूप में जो लोक प्रियता मिली थी, वह गरीब, दलित तथा साधन विहीन लोगों के मन में अधिक थी। सदियों से चले आ रहे सवर्णों के वर्चस्व के कारण वे मतदान करने का साहस नहीं जुटा पाये।

2. हिन्दू कोड बिल को प्रस्तुत करने तथा उसका प्रबल समर्थन करने के कारण सवर्ण और सनातनी हिन्दू उनके घोर विरोधी हो गए। ये तत्व बाबा साहेब को हराने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ हो गए थे।

3. मनुवादी मानसिकता वाले सभी राजनैतिक दलों ने बाबा साहेब को पराजित करने के लिए आन्तरिक समझौतें कर लिए थे। कांग्रेस से तो उनका स्वाभाविक विरोध था लेकिन साम्यवादियों ने भी अपने सैद्धान्तिक विरोध के

[1] 29 अक्टूबर 1951 को पटियाला में दिया गाय भाषण।

कारण बाबा साहेब को पराजित करने के लिए कांग्रेस उम्मीदवार का अन्दर से समर्थन किया।

4. बाबा साहेब को हराने के लिए कांग्रेस ने प्रत्येक छल–बल का सहारा लिया, यहां तक कि अस्पृश्यों को वोट डालने से रोका, बूथ कैपचरिंग की।

5. कांग्रेस ने लम्बे समय से यह प्रचारित कर रखा था कि कांग्रेस के लोगों ने त्याग, बलिदान एवं आत्मोत्सर्ग करके देश को आजाद कराया है, अब देश के जनता के कर्तव्य बनता है कि उनको वोट देकर कृतज्ञता ज्ञापित करें।

6. कांग्रेस के पास धन, जन, बल तथा एक मजबूत संगठन तथा राष्ट्रभक्ति का तथाकथित प्रमाण पत्र था जो बाबा साहेब और उनकी पार्टी के पास नहीं था।

इन कारणों से बाबा साहेब और उनकी पार्टी तथा सहयोगी दल को पराजय का सामना करना पड़ा। प्रथम आम चुनाव के परिणाम इस प्रकार रहे–[1]

पार्टी	जीती गई कल सीटें लोक सभा में	मतों का प्रतिशत	राज्य विधान सभा में जीती गई सीटें
कांग्रेस	364	215.00	2248
कम्युनिस्ट और सम्बन्धी	23	4.60	147
सोसलिस्ट	12	10.60	125
के0एम0वी0पी0	9	5.80	–
जनसंघ	3	3.10	–
हिन्दू महासभा	9	0.95	85
आर0एम0पी0	3	2.03	–
अन्य दल	30	12.80	273
निर्दलीय	41	15.80	325
कुल	489		3279

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, आजादी के बाद का भारत, पृ0सं0– 187

प्रो0 विपिन चन्द्र जैसे इतिहासकारों ने इस चुनाव पर यह मत व्यक्त किया कि यह चुनाव कांग्रेस की सांगठनिक विजय का प्रतिनिधित्व था जो निम्नतम ग्रामीण स्तर तक जा पहुंचा था। यह धर्म निरपेक्षता, जनवाद और राष्ट्रीय एकता की जीत थी और उससे भी ऊपर वह नेहरू के प्रेरणादायक नेतृत्व की जीत थी।[1] वास्तव में यदिइस चुनाव परिणामों की निष्पक्ष समीक्षा की जाए तो स्पष्ट होता है कि यह कांग्रेस के लम्बे समय से किए जा रहे मिथ्या प्रचार, धन, बल और छल–कपट की जीत थी।

चुनाव परिणामों से बाबा साहेब दुःखी तो हुए लेकिन हतोत्साहित तथा निराश नहीं हुए, जैसी उम्मीद कांग्रेस जन लगाए थे। अब बाबा साहेब ने अपना पूरा ध्यान राज्य सभा के माध्यम से संसद में प्रवेश करने पर लगाया, क्योंकि वे जानते थे कि उनके जीवन का उद्देश्य अभी अधूरा है। बाबा साहेब ने अपने सहयोगी कमलाकांत चित्रे को यह कार्य सौंपा कि उनके राज्य सभा में प्रवेश के लिए वातावरण तैयार करें। इस सम्बन्ध में बाबा साहेब की द्वितीय धर्म पत्नी डॉ0 सविता अम्बेडकर ने एक मार्मिक पत्र चित्रे को लिखा – "राजनीति डा0 अम्बेडकर के स्वास्थ जीवन का टानिक है। बिना राजनीति के वे न तो स्वस्थ रह सकते हैं और न सुखी, न शान्त। चुनाव के पूर्व उन्होंने अनेक योजनाएं देश और समाज के लिए बनायी हैं, उन्हें वे चुनाव जीत कर पूरा करना चाहते थे, किन्तु विपरीत परिणामों से उनकी सम्पूर्ण योजनाओं पर पानी फिर गया है। बाबा साहेब का स्वयं चुनाव हारना अत्यन्त दुःखद दुर्योग है। ऐसी स्थिति में डा0 अम्बेडकर का राज्य सभा में जाना एक मात्र विकल्प है और आवश्यकता भी। डा0 साहेब जैसे महान राजनीतिज्ञ, प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति को संसद में उपयुक्त स्थान अपने व्यक्तित्व प्रदर्शन के लिए मिल सकता है।[2]

मार्च 1952 में राज्य सभा के लिए बंबई राज्य में 17 स्थानों का चुनाव होना निश्चित हुआ। बाबा साहेब ने भी एक सीट पर अपना नामांकन दाखिल किया। मार्च

---

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, आजादी के बाद का भारत, पृ0सं0– 188
[2] बुद्ध शरण हंस, बाबा साहेब अम्बेडकर, पृ0सं0– 153

1952 के अंत में निर्वाचन हुआ जिसमें डा0 अम्बेडकर राज्य सभा के लिए चुन लिए गए। अब बाबा साहेब को अपने विचारों को व्यक्त करने का अवसर सुलभ हो गया।

मई 1952 में राज्य सभा का अधिवेशन आरम्भ हुआ। बाबा साहेब ने आम बजट पर चर्चा करते हुए नेहरू सरकार की जोरदार आलोचना की और कहा– "सुरक्षा विभाग का बजट देश की उन्नति में एक बड़ी बाधा है। देश के कल्याण के लिए जो पैसा इस्तेमाल किया जा सकता था, वह फौज खा रही है। यदि सुरक्षा बजट में 50 प्रतिशत की कटौती की जाए तो देश का काफी कल्याण होगा। अगर भारत की विदेश नीति का उद्देश्य सारे विश्व में शांति और सुलह रखना है तो भारत के ऐसे कौन दुश्मन हैं जिनके विरुद्ध इतनी बड़ी फौज भारत को रखनी पड़े।[1] इसी प्रकार 2 सितम्बर 1953 को राज्य सभा में आन्ध्र राज्य विधेयक पर चर्चा करते हुए डा0 अम्बेडकर ने कहा– "सरकार की भाषाई नीति देश की एकता के लिए घातक है।"

राज्य सभा में सम्पत्ति कर विधेयक पर चर्चा में भाग लेते हुए बाबा साहेब ने कहा– "सम्पत्ति कर लेने में सरकार को जितना खर्च आएगा, उतनी आय नहीं होगी। इसलिए भारत को योरप की तरह अंधानुकरण नहीं करना चाहिए।" इसके अतिरिक्त बाबा साहेब ने देश की प्रत्येक समस्या तथा प्रत्येक विधेयक पर अपने अकाट्य तार्किक प्रमाणों के आधार पर सरकार को विचार करने हेतु विवश किया। इसी प्रकार पं0 नेहरू की सरकार ने 1953 में लोक सभा में अस्पृश्यता अपराध विधेयक पेश किया, जो पारित होकर राज्य सभा में प्रस्तुत किया गया। इस विधेयक पर चर्चा करते हुए बाबा साहेब ने कहा– "माननीय उप सभापति महोदय, इसके पूर्व कि विधेयक के प्रावधानों पर वास्तविक रूप से मैं कुछ कहूँ, यह उचित है कि मैं सदन का ध्यान उस उत्तरदायित्व की ओर दिलाऊँ, जिनकी व्यवस्था संविधान की कुछ धाराओं में की है, और उन प्रावधानों को प्रभावशाली बनाने के लिए सरकार को उत्तरदायी बनाया गया है। संविधान की धारा 13 कहती है कि ऐसे सभी कानून जिनकी मूल अधिकारों से असंगति है, उस दिन से अवैध

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 419

हो जाते हैं, जिस दिन से संविधान अस्तित्व में आता है।......... धारा 172 एवं सब क्लाज (2) सरकार को वह शक्ति प्रदान करती है कि वह विद्यमान कानूनों में सुधार कर उन्हें अनुकूल बनाए, जिससे कानूनी की समरूपता मौलिक अधिकारों से हो सके। ....

मैंने स्वयं अपनी समझ के लिए ऐसे कानूनों की सूची बनाई थी, जिसमें संशोधन करना परम आवश्यक था। जिससे कि संविधान से उसकी समरूपता हो सके। बाबा साहेब ने इस सूची में मद्रास रेग्यूलेशन कानून XI-1816, बम्बई म्यूनिरापल सर्वेन्ट्स एक्ट पाप–1890 का विशेष उल्लेख कर उन्हें समाप्त करने की मांग की।........

विधेयक पर चर्चा करते हुए बाबा साहेब ने कहा– मैं विधेयक के शीर्षक के विषय में कहना चाहूँगा। वह कोई महत्वपूर्ण बिन्दु नहीं है, परन्तु मेरा विचार है नाम का महत्व होता है। .... व्यक्तिगत रूप से मेरा विचार है कि उसका नाम होना चाहिए ".... नागरिक अधिकार रक्षा कानून। आखिर आप उसके नागरिक अधिकारों की रक्षा ही तो कर रहे हैं। बाबा साहेब ने विस्तार से चर्चा करते हुए इसमें अनेक संशोधन का प्रस्ताव किया, जिसे स्वीकार कर सदन ने इस विधेयक को पारित किया।

इसीसमय बंबई के भण्डारा, जिला नागपुर, उप चुनाव होना तय हुआ। बाबा साहेब ने सशक्त विपक्ष की भूमिका का निर्वहन करने के लिए राज्य सभा की शक्ति हीनता को समझते हुए लोक सभा में प्रवेश करने के लिए भण्डारा से अपना नामांकन किया। वहीं पर चुनाव प्रचार के दौरान बाबा साहेब ने कहा– लोक सभा में चुनकर जाना उनके लिए आसान बात है, यदि वे आज कांग्रेस से तालमेल कर चुनाव लड़े तो कल ही लोक सभा सदस्य निर्वाचित हो जाएंगे। कांग्रेस भी बराबर यह चाह रही है, किन्तु मैं सशक्त और स्वस्थ विपक्षी रहने के पक्ष में हूँ।[1] कुछ अन्य चुनावी सभाओं में नेहरू सरकार पर जोरदार हमला करते हुए कहा– नेहरू की विदेश नीति की वजह से भारत मित्र विहीन राष्ट्र बन गया है। नेहरू ने कश्मीर समस्या के बारे में गड़बड़ी कर रखी है। उन्होंने रिश्वतखोरों को अपने पास रखा है। भारत की एक ओर से मुसलमानों

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन कथा, बुद्ध शरणं हंस।

और दूसरी ओर सारे एशिया को पदाक्रांत करके उसे समाज सत्तावाद के अधीन लाने के उद्देश्य से प्रेरित हुई रूस और चीन की जोड़ी का घेरा पड़ गया है। अगर तुम्हें इससे छुटकारा पाना है तो तुम्हारे पास बन्दूखें होनी चाहिए........ जिस सरकार को अपनी ताकत क्या है यह सिद्ध करने के लिए अनेक वर्षों की अवधि प्राप्त होने पर भी वह एक भी समस्या हल नहीं कर सकी, उस सरकार को बदलना लोगों का फर्ज है।"[1]

बाबा साहेब ने इस उप चुनाव में भी समाजवादी पार्टी से समर्थन की अपील की। अशोक मेहता जैसे समाजदादी नेता ने अपनी पार्टी का पूर्ण समर्थन देने की घोषणा की। कांग्रेस इस बार भी बाबा साहेब को किसी भी कीमत पर लोक सभा में नहीं पहुँचने देना चाहती थी। कांग्रेस ने अपनी पूरी ताकत बाबा साहेब को हराने में लगा दी। कांग्रेस ने धन–बल, जन–बल, सत्ता का दुरुपयोग, मिथ्या प्रचार सहित हर हथकण्डे अपनाये। मई 1954 में उप चुनाव सम्पन्न हुआ जिसमें कांग्रेस सफल रही और बाबा साहेब एक अदने से कांग्रेस प्रत्याशी माकराव वारेकर से 8381 मतों से पराजित हो गए। बाबा साहेब को 1,32,483 मत प्राप्त हुए थे। बाबा साहेब को अपनी पराजय का समाचार रंगून में एक समाचार पत्र से प्राप्त हुआ। वे रंगून बुद्ध जयन्ती के उपलक्ष्य में गये थे। रंगून जाने की पूर्व सन्ध्या पर अपने मित्र कमलाकान्त चित्रे को पत्र में लिखा था– "अन्य दलों से प्राप्त समाचारों से यह दिखाई देताहै कि इस उप चुनाव में मेरी पराजय होने की ज्यादा संभावना है, जो असंभव नहीं है। अपने मन में यह तैयारी मैंने कर ली है।"[2]

इस उप चुनाव में पराजय के पीछे वही कारण उत्तरदायी थे, जो प्रथम आम चुनाव में थे। इसमें कांग्रेस ने सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग कर बाबा साहेब के पक्ष में पड़े बड़ी संख्या में मतों को अवैध घोषित कर रद्दकर दिया था।

बाबा साहेब रंगून से वापस लौट कर खराब स्वास्थ के बावजूद अगस्त 1954 में ससद के आरम्भ हुए अधिवेशन में सम्मिलित हुए। उन्होंने 26 अगस्त 1954 को राज्य सभा में अपना ऐतिहासिक भाषण देते हुए नेहरू सरकार की विदेशी नीति पर

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 430
[2] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 431

तीखी आलोचना करते हुए कहा– "हमारी विदेश नीति पर विदेशी लोग व्यंग करते हैं...... प्रधानमंत्री ने स्वयं कहा कि वह मुख्यतया तीन सिद्धान्तों के आधार पर चल रहे हैं। 1. शांति, 2. साम्यवाद और स्वतंत्र जनतंत्र के बीच सहःअस्तित्व और 3. सीटो का विरोध।

इन्हीं तीन सिद्धान्तों पर प्रधानमंत्री की विदेश नीति आधारित है। इन सिद्धान्तों की उपयुक्तता और प्रमाणिकता की जांच के लिए उन समस्याओं की पृष्ठ भूमि की जानकारी भी आवश्यक है, जिनके लिए हम आज चिंतित हैं और जिनके समाधान के लिए यह सिद्धान्त प्रतिपादित किए गए हैं।

मेरे विचार से इसकी पृष्ठ भूमि में विश्व में साम्यवाद के प्रसार के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। उस सिद्धान्तों को, उस स्वरूप को, उसकी प्रमाणिकता को तब तक नहीं समझा जा सकता जब तक कि स्पष्ट रूप से यह न समझ लिया जाए कि आज विश्व के सामने प्रमुख समस्या है संसदीय और स्वतन्त्र प्रजातंत्र में कुछ लोगों का विश्वास बनाम साम्यवाद का विस्तार। मैं अधिक अतीत में न जाकर अपनी बात मई 1954 से आरम्भ करूँगा। मई 1954 तक रूस ने दस देशों को हड़प लिया जो इस प्रकार हैं– 1. फिनलैण्ड, 2. एस्टोनिया, 3. लाटविया, 4. लिथुआनिया, 5. पोलैण्ड, 6. हंगरी, 7 चैकोस्लाविया, 8. रूमानिया, 9. बलगारिया, 10. अल्वानिया।

सुदूर पूर्व में रूस ने चीन के तन्नातूवा क्षेत्र मंचूरिया, कोरिया 48वें समानान्तर का उत्तरी भाग तथा दक्षिणी सरवालिन को भी अपनी सीमा में सम्मिलित कर लिया है। इस पृष्ठ भूमि को सामने रखकर सरकार की विदेशी नीति के आधारभूत सिद्धान्तों की उपयुक्तता पर विचार करना चाहिए। पहले मैं शांति सिद्धान्त लूँगा। हम सभी शांति चाहते हैं, युद्ध कोई नहीं चाहता। प्रश्न केवल यह है कि शांति किस कीमत पर? इस शंति की हमें क्या कीमत अदा करनी पड़ेगी? अब यह स्पष्ट है कि शांति देशों को काट–छांट कर उसका विभाजन करके ही की जा रही है।....... मेर अभी के दिए हुए आंकड़े निःसन्देह स्पष्ट करते हैं कि साम्यवादी देश कितना भीमकाय रूप धारण कर चुके

हैं। किसी ने दैत्य देखा है? मैंने भी नहीं देखा है। जितनी कल्पनाकी जा सकती है, उतना ही दीर्घकाय वह होता है। यहां एक विशाल सीमा हीन देश है, जो दूसरों को नष्ट करने में लगा हुआ है और उन्हें स्वतन्त्रता देने के नाम पर अपने अधीन कर रहा है। रूसी विमुक्ति जहां तक मैं समझता हूँ कि स्वतन्त्रता के बाद पराधीनता ही है और वास्तव में मुक्ति अथवा स्वतन्त्रता नहीं। लेकिन बात यह है कि मैं इस विषय को लेकर काफी चिन्तित हूँ। क्या आप ऐसी शांति के पक्ष में हैं कि भूखा दैव्य जब मुंह खोले आप उसको कुछ न कुछ खिलाते रहेंगे, तो हमें स्वयं से यह प्रश्न पूँछना भी चाहिए किक्या यह दैव्य एक दिन हमारी ओर मुड़कर कहेगा– मैं खाने योग्य सब कुछ खा चुका हूँ, अब केवल तुह ही बचे हो मैं तुम्हें भी खाऊँगा।"

भाषण के बीच व्यवधान उत्पन्न करते हुए श्री एच0पी0 सक्सेना ने कहा– "तब हम दैव्य को ही खा जायेंगे"। बाबा साहेब ने अपना भाषण जारी रखते हुए आगे कहा– "हमें बहुत बढ़–चढ़कर बात नहीं करनी चाहिए। अभी तक किसी अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति परीक्षा में हमारी बारी नहीं आई है। जब किसी अन्तर्राष्ट्रीय झगड़े में हमारी परीक्षा होगी, तब हमें पता चलेगा कि हम किसी ऐसी स्थिति का सामना कर सकते हैं अथवा नहीं।"

दूसरा मसला सह अस्तित्व का है। जब तक इसको बहुत सीमित रूप से नहीं लिया जाए, मेरे विचार से यह एक अद्‌भुद सिद्धान्त है। प्रश्न यह है कि क्या साम्यवाद और स्वतन्त्र लोकतन्त्र एक साथ कार्य कर सकते हैं? क्या इसकी आशा और सम्भावना की जा सकती है कि उनमें कोई संघर्ष नहीं होगा? सिद्धान्ततः यह पूर्णतया असंभव लगता है, क्योंकि साम्यवाद की राह में जो भी आता है जल कर राख हो जाता है....... हमें किसी देशकी विदेशी नीति में उसके भौगोलिक स्थिति का महत्व नहीं भूलना चाहिए। जो कनाडा के लिए अच्छा है आवश्यक नहीं कि वह हमारे लिए भी अच्छा हो, जो इंग्लैण्ड के लिए अच्छा है वह हमारे लिए अच्छा व खराब दोनो ही हो सकता है।

इसलिए मुझे लगता है कि हमारे प्रधानमंत्री ने सह अस्तित्व का सिद्धान्त बिना सोचे–समझे अपना लिया है।

बाबा साहेब ने अपने भाषण में सीटो (साम्यवादी देशों का नव स्थापित संगठन, जिसे अमेरिकी नेतृत्व वाले गुट नाटो के टक्कर में बनाया गया था) पर भी सविस्तार प्रकाश डाला और प्रधानमंत्री की इस बात के लिए प्रशंसा भी की कि वे अभी सीटो के विषय में निर्णय नहीं लिए हैं। बाबा साहेब ने अपने भाषण में भारत–चीन समझौते पंचशील पर अपना वक्तव्य मोड़ा–"श्रीमान् आप जानते होंगे कि पंचशील बौद्ध धर्म का आवश्यक अंग है और मिस्टर माओ (चीनी राष्ट्रपति) यदि उसमें जरा भी विश्वास करते तो अपने देश में बौद्ध धर्म के अनुयायियों के साथ अलग ढंग का वर्ताव न करते। राजनीति में पंचशील के लिए कोई स्थान नहीं है और साम्यवादी देशों की राजनीति में तो बिल्कुल ही नहीं। साम्यवादी देशों की नैतिकता के अनुसार वह वचन देकर कल पूरे औचित्य से उसे तोड़ भी सकते हैं।...... प्रधानमंत्री ने चीन का ल्हास (तिब्बत) पर कब्जा करने की छूट देकर उसकी पूरी तरह से मदद की है और वह अपनी सीमाओं को भारत की सीमाओं तक बढ़ा रहा है। इन हालातों को देखते हुए यह कहना गलत नहीं होगा कि जन्दी न सही, एक दिन भारत पर आक्रमण अवश्य होगा। यह आक्रमण उन लोगों के द्वारा होगा जो आक्रमण के आदी रहे हैं।"

बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने आगे कहा कि "प्रधानमंत्री को माओ द्वारा मान्य किये गए पंचशील सिद्धान्त एवं तिब्बत पर अनाक्रमण सन्धि में पंचशील सिद्धान्त का उपयोग होने के कारण बेखबर नहीं रहना चाहिए।[1] बाबा साहेब ने अपने भाषण में पंडित नेहरू की काश्मीर नीति एव गोवा नीति की भी आलोचना की। बाबा साहेब के इस ऐतिहासिक भाषण की पूरे देश सहित विश्व में भी चर्चा हुई।

बाबा साहेब अपने मिशन पर निरन्तर अजेय योद्धा की भांति खराब स्वास्थ के बावजूद सजग प्रहरी की भांति कार्यरत थे। उन्होंने 3 अक्टूबर 1954 को आकाशवाणी

---

[1] भगवानदास, डा0 अम्बेडकर के विचार, पृ0सं0– 57–64

पर अपने जीवन दर्शन और सिद्धान्तों को संक्षेप में देश के सम्मुख रखा। गीता में प्रतिपादित जीवन दर्शन और शंकराचार्य के दार्शनिक विवेचना का खण्डन करते हुए अपना सामाजिक तत्व प्रणाली तीन शब्दों स्वतन्त्रता, समानता और बंधुता में व्यक्त किया। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि ''ए तत्व मैंने फ्रांसीसी राज्य क्रांति (1789) से उधार नहीं ली अपितु अपने गुरू भगवान बुद्ध से मैंने यह प्रणाली ली है। मेरे तत्व प्रणाली की जड़ें धर्म में हैं राजशास्त्र में नहीं........ बंधुता का दूसरा नाम मानवता है और मानवता ही धर्म का दूसरा अभिधान है।[1]

बाबा साहेब को दलित–शोषित समाज अपने सर आखों पर बैठाया था। 29 अक्टूबर 1954 को बम्बई नगर दलित फेडरेशन (हाड्यूल कास्ट फेडरेशन) ने एक विशाल सभा का आयोजन कर बाबा साहेब को सम्मानित कर 1,18,000/– रु0 की थैली भेंट की। इस संस्था के अध्यक्ष आर0डी0 भंडारे (बाद में बिहार के राज्यपाल बने) ने यह थैली अपने हाथों से भेंट की थी।

बाबा साहेब इस बीच बौद्ध धर्म ग्रहण करने की दिशा में बढ़ रहे थे और देश विदेश में अनेक बौद्ध कार्यक्रमों में अपनी भागीदारी कर रहे थे। इसी बीच जुलाई 1955 को उन्होंने बम्बई राज्य कनिष्ट ग्राम सेवक एसोसिएशन स्थापित किया। महार वतनो की समस्या का समाधान करने का उन्होंने इस संस्था के माध्यम से अंतिम प्रयास किया। बाबा साहेब के प्रयासों से अंततः नेहरू सरकार ने 1959 को (बाबा साहेब के देहान्त के पश्चात्) सदियों से चली आ रही इस अमानुषिक प्रथा को समाप्त करने सम्बन्धी कानून पारित किया। अपने प्रयास को सफलीभूत होते देखना बाबा साहेब के भाग्य में नहीं लिखा था।

बाबा साहेब ने 1957 में होने वाले द्वितीय आम चुनाव में अपनाई जाने वाली रणनीति पर गहनता से विचार आरम्भ किया। उनकी शिड्यूल कास्ट फेडरेशन में निहित स्वार्थों के लोग अधिक सक्रिय हो गए थे, जिससे यह कमजोर पड़ गई थी।

---

[1] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 435

फेडरेशन के अध्यक्ष राजभोज को हटाकर रवोवागड़े को नया अध्यक्ष बनाया गया। राजभोज लगातार दस वर्ष तक अध्यक्ष पद पर रहे। पद से हटने के बाद उन्होंने आरोप लगाया कि अम्बेडकर ने अवैध नीति से अध्यक्ष पद के अधिकार छीन लिए हैं और तानाशाह बन गए हैं।[1] एक अन्य सहयोगी शिवराज भी अलग हो गए और यह प्रचारित किया कि निष्ठापूर्वक कार्य करने के बावजूद अम्बेडकर ने उन्हें बाहर कर दिया है। इसके अतिरिक्त कमलाकांत चित्रे और शिवातकर जैसे सहयोगी भी कतिपय मतभेदों के कारण बाबा साहेब से अलग हो गए। बाबा साहेब से अलग हो रहे लोगों के लिए कांग्रेस ने उदारता पूर्वक बड़े उत्साह के साथ अपने दरवाजे खोल दिये। इस प्रकार अनुसूचित जाति संघ विभाजित होकर निःप्राण हो गया था।

इन परिस्थितियों में भी बाबा साहेब कभी हताश नहीं हुए और उन्होंने अपने समर्थकों, कार्यकर्ताओं को संगठित कर नए चुनाव की तैयारी आरम्भ की। इस बार उन्होंने नया राजनैतिक दल ''रिपब्लिकन पार्टी'' बनाने का निर्णय लिया। बाबा साहेब ने 5 मई 1956 को नागपुर में प्रेस कांफ्रेन्स में यह स्पष्ट किया कि वे शीघ्र ही रिपब्लिकन पार्टी नामक पार्टी का गठन करेंगे। बाबा साहेब ने यह भी स्पष्ट किया कि उनकी रिपब्लिकन पार्टी के मूलभूत सिद्धान्त होंगे – समानता, स्वतन्त्रता और बंधुता या भातृत्व। उन्होंने इस नई पार्टी के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण कार्य करने का दायित्व सिद्धार्थ कालेज के पुस्तकालयाध्यक्ष एस0एम0 रेग को सौंपा।

बाबा साहेब का स्वास्थ्य निरन्तर खराब होता जा रहा था फिर भी समय निकाल कर उन्होंने रिपब्लिकन पार्टी का पूरा प्रारूप तैयार किया लेकिन 6 दिसम्बर 1956 को असामयिक महापरिनिर्वाण के कारण बाबा साहेब का यह अंतिम जीवन काल का अन्तिम स्वप्न साकार नहीं हो सका। बाबा साहेब को अपने निरन्तर खराब हो रहे स्वास्थ के कारण अन्तकाल अति समीप जान पड़ा और इसका पूर्वाभास करके उन्होंने

---

[1] कीर, धनंजय, वही,पृ0सं0– 462

अपने करोड़ों दलित–शोषित अनुयायियों को अपना बहुमूल्य सन्देह दे गये[1] "मैंने जो कुछ भी किय है उसे जीवन पर्यन्त कुचल देने वाले कष्टों और अन्तहीन कठिनाइयों से गुजरने तथा अपने विरोधियों से निरन्तर जूझने के बाद ही कर पाया हूँ। बड़ी मुश्किल से मैं यह करवां यहाँ तक ला पाया हूँ, जहाँ आज यह दिखायी पड़ रहा है। इसके रास्ते में किसी भी तरह की बाधा क्यों न आए, किन्तु यह कारवाँ आगे ही बढ़ता रहना चाहिए। यदि मेरे अनुयायी इस कारवां को आगे न ले जा सके तो उनहें उसे वहीं छोंड़ देना चाहिए, लेकिन किसी भी कीमत पर उसे पीछे जाने की अनुमति नहीं देनी चाहिए। अपने लोगों को मेरा यही सन्देश है।"

बाबा साहेब की इच्छानुसार उनके कारवां को आगे बढ़ाते हुए महापरिनिर्वाण के पश्चात् विधिवत रिपब्लिकन पार्टी की स्थापना की गई। इस पार्टी का मुख्य केन्द्र बिन्दु महाराष्ट्र बना। बाबा साहेब के पौत्र प्रकाश अम्बेडकर के नेतृत्व में महाराष्ट्र में वर्तमान रिपब्लिकन पार्टी मौजूद है लेकिन आपसी फूट के कारण रिपब्लिकन पार्टी महाराष्ट्र सहित पूरे देश में प्रमुख राजनैतिक शक्ति नहीं बन पाई। महाराष्ट्र में इसकी एक उल्लेखनीय उपलब्धि यह रही है कि इसने मराठवाड विश्वविद्यालय मुम्बई का नाम डा0 भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय करने के लिए आन्दोलन किया, जिससे विवश होकर महाराष्ट्र सरकार को यह नाम बदलना पड़ा यद्यपि मनुवादी शक्तियों ने सरकार के इस निर्णय का तीव्र विरोध किया और पूरे महाराष्ट्र में आगजनी, लूटपाट तथा हिंसक घटनाएं हुई लेकिन सरकार अपने निर्णय पर अडिग रही। देश के करोड़ों दलितों, शोषितों को गर्व हुआ कि उनके मसीहा के नाम पर उनके कर्मभूमि महाराष्ट्र में एक विश्वविद्यालय का नामकरण हुआ।

बाबा साहेब के महापरिनिर्वाण के बाद नेतृत्व विहीन हुआ दलित आन्दोलन एक लम्बे समय तक निष्क्रिय और भ्रमित रहा। इसी कारण दलित समुदाय का अधिकांश वोट कांग्रेस पार्टी से जुड़ गया जिसका लाभ उठाकर वह लम्बे समय तक सत्ता का

---

[1] मा0 कांशीराम, चमचा युग, पृ0सं0– 107

खेल खेलती रही। यह स्थिति एक लम्बे समय तक नहीं चल सकी और करोड़ों दलितों को सौभाग्य से मा0 कांशीराम के रूप में एक ऐसा महामानव प्राप्त हुआ जिसने न केवल बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर के करवां को नवजीवन प्रदान कर असीम ऊर्जा, उत्साह, उमंग से भर दिया अपितु बाबा साहेब के स्वप्न को साकार कर हजारों वर्षों से शोषित, शासित समुदाय में शासक बनने की इच्छा ही नहीं जागृत की अपितु इसे देश के सबसे बड़े प्रदेश उत्तर प्रदेश में साकार भी किया।

मा0 कांशीराम ने बाबा साहेब और उनके आन्दोलन का गंभीर अध्ययन करके इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि उनके देहान्त के पश्चात् उनका कारवां रुक गया है। उन्होंने यह भी समझा कि[1] ''देश के करोड़ों शोषित, दलित समुदाय को सबसे बड़ी आवश्यकता है नेतृत्व की। उनकी जनसंख्या की विशालता और समस्याओं की विकरालता को ध्यान में रखते हुए उनके नेतृत्व की आवश्यकता संख्यात्मक और गुणात्मक दोनो रूपों से है। ऐसे दुरुह काम को करने के लिए नेतृत्व को सर्वाधिक सक्षम और कल्पनाशील, रुचि लेने वाला तथा परिश्रमी होना चाहिए और उनके पास दूरदर्शिता और कल्पना शक्ति, साहस और दृढ़ता भी होनी चाहिए।........ किन्तु दुर्भाग्य से विगत कई शताब्दियों से ब्राह्मणवादी व्यवस्था ने शूद्रों और अतिशूद्रों में इन गुणों को विकसित होने की आज्ञा कभी नहीं दी। आज भी भारत के उच्च वर्गीय शासक इन गुणों को विकसित होने की इजाजत नहीं दे रहे हैं..... इन्हीं सबके कारण उनमें नेतृत्वहीनता पैदा हो गई है।''

मा0 कांशीराम जी ने दलित, शोषित समाज को एक मजबूत दूरदर्शी नेतृत्व देने का संकल्प लिया। उन्होंने सर्वप्रथम महाराष्ट्र में अपनी कर्मस्थली बनाई, लेकिन उन्हें दलित आन्दोलन की दिशा और दशा देख कर गहरा क्षोभ हुआ। उन्हीं के शब्दों में– ''जो लोग अम्बेडकरवादी आन्दोलन को पुनर्जीवित करना चाहते हैं विशेषकर महाराष्ट्र में उन्हें अम्बेडकरवादी चमचों के भारी विरोध का सामना करने के लिए तैयार रहना

---

[1] मा0 कांशीराम, चमचा युग, पृ0सं0– 115

चाहिए।"[1] इन परिस्थितियों के कारण महाराष्ट्र में मा0 कांशीराम बाबा साहेब के आन्दोलन को सफलतापूर्वक प्रसारित नहीं कर सके। इसलिए उन्होंने दूसरे विकल्पों पर विचार करना आरम्भ किया। उन्होंने विचार किया कि दलित शोषित समाज के शिक्षित तथा सरकारी सेवाओं में कार्यरत व्यक्तियों को संगठित कर आन्दोलन को आगे बढ़ाया जाए। उनका मानना था कि अपने समाज के व्यक्ति जो शिक्षित होकर सम्पन्न हो चुके हैं, उन पर दलित समाज का ऋण है। उनकी सुधरी हुई बेहतर स्थिति बाबा साहेब के साथ दलित समुदाय के द्वारा किये गये लम्बे संघर्षों का प्रतिफलन है। इसलिए शिक्षित और सम्पन्न हुए लोगों के अपने समाज की दयनीय स्थिति को सुधारने तथा उनके आन्दोलन को सही दिशा देने का दायित्व है। इसी उद्देश्य को लेकर 1973 में वामसेफ की स्थापना हुई। वामसेफ का उद्देश्य है, दलित शोषित समाज को प्रतिदान।

मा0 कांशीराम ने महाराष्ट्र में रिपब्लिकन पार्टी की स्थिति और अपने प्रयासों के असफलता की विशद रूप से चर्चा 30 जुलाई 1997 को संसद में अपने दिए भाषण में की। मां0 कांशीरामने अपने भाषण में कहा"[2]–

"जब मैं 1971 में पूना में था तब पूना में गाडगे महाराज की धर्मशाला में एक समझौता हुआ। बाबा साहेब अम्बेडकर की रिपब्लिकन पार्टी और कांग्रेस में यह समाझैता हुआ था। कांग्रेस पार्टी ने ऐसा समझौता किया था कि 521 में से 520 सीटों पर कांग्रेस लड़ेगी और एक सीट पर रिपब्लिकन पार्टी। जब गाडगे धर्मशाला से बाहर आए तो दारा साहेब गायकवाड़ रिपब्लिकन की तरफ से मोहन धारिया कांग्रेस की तरफ से थे। बाहर, आकर उन्होंने एलान किया कि आज बहुत अच्छी बात हुई है। जो समझौता गाँधी और अम्बेडकर के जिन्दा रहते नहीं हुआ, आज 15 साल बाद यह समझौता हो गया है। मुझे बहुत बुरा लगा। इस समझौते में गाँधी को 520 सीटें मिल गई और अम्बेडकर को एक सीट मिली थी।..... मैं महाराष्ट्र छोंड़ कर चला आया। रिपब्लिकन पार्टी के जो नेता थे, मैं कर्मचारियों से पैसे इकट्ठा करके उन्हें देता था और

---

[1] मा0 कांशीराम, वही, 115, 128
[2] अनुज कुमार, बहुनायक मा0 कांशीराम के अविस्मरणीय भाषण, पृ0सं0– 63

उनसे कहता था कि इस मूवमेंट को मत छोड़ों लेकिन वे कहते थे कि इस मूवमेंट के चलते हुए एम0एल0ए0, एम0एल0सी0 और मिनिस्टर नहीं बन सकते हैं। मैं उनसे कहता था कि हमारा एम0एल0ए0 और एम0पी0 बनना ज्यादा जरूरी नहीं है। जरूरी है इस मूवमेंट को चलाना।''

कांग्रेस के साथ समझौते से रिपब्लिकन पार्टी को दीर्घकालिक हानि हुई लेकिन तात्कालिक कुछ लाभ भी प्राप्त हुआ। 1974 में भारतीय रिपब्लिकन पार्टी के अध्यक्ष श्री आर0एस0 गवई महाराष्ट्र विधान परिषद के उप सभापति बने। महाराष्ट्र के बाहर पंजाब, म0प्र0, तथा उत्तर प्रदेश में भी पार्टी का फैलाव हुआ लेकिन कुशल नेतृत्व तथा आपसी फूट के कारण पार्टी की जड़ें निरन्तर कमजोर होती गई।

इसी समय दलित पैथर नामक एक अन्य संगठन भी सामने आया। महाराष्ट्र, पंजाब, हिमांचल प्रदेश में इसने अपनी जड़ें फैलाने का प्रयास किया लेकिन असफल रहा।

बाबा साहेब के महापरिनिर्वाण तिथि 6 दिसम्बर 1981 में डी0एस0–4 नामक संगठन का गठन पूर्ण मनोयोग से बाबा साहेब के निष्ठावान अनुयायियों ने किया। इस संगठन के विषय में मां0 कारीराम का विचार रहा कि डी0एस0–4 सामाजिक कार्यवाही के लिए बनाया गया अपना समूह है। भविष्य की सभी सामाजिक कार्यवाही डी0एस0–4 द्वारा नियोजित, निर्मित और संचालित होंगी।[1]

मा0 कांशीराम दलित, शोषित समाज को बाबा साहेब के सिद्धान्तों, विचारों, आदर्शों के अनुसार नई दिशा देने की दिशा में प्रयासरत रहे। उन्होंने ऐतिहासिक पूना पैक्ट (गांधी जी और बाबा साहेब के मध्य 15 सितम्बर 1932 में सम्पन्न) का व्यापक स्तर पर विरोध कर दलित, शोषित समाज को जगाने और उनको उनका वास्तविक अधिकार दिलाने का निश्चय किया। बाबा साहेब ने इस समझौते को बडी विवसता से स्वीकार किया था और 1942 तक आते – आते इसको भंग करने की मांग अपनी मृत्योरान्त तक

---

[1] मा0 कांशीराम, चमचा युग, पृ0सं0– 134

करते रहे। मा0 कांशीराम ने भी इसे दलितों की दासता का समझौता कहा और इसका विरोध करने के लिए पूना पैक्ट धिक्कार कार्यक्रम निर्धारित किया। 24 सितम्बर 1982 से 24 अक्टूबर 1982 तक पूना से लेकर जालंधर तक पूना पैक्ट धिक्कार कार्यक्रम चलाया गया। छोटे–बड़े नगरों, कस्बों तथा गावों तकयह संदेश सभाओं के माध्यम से दलित शोषित समुदाय तक पहुंचाया गया। इसके द्वारा इतिहास के पृष्ठों मे बन्द पूना समझौते तथा उसके दुष्परिणामों की जानकारी अज्ञानी, अशिक्षित, उपेक्षित समुदाय को हुई। इन दौरान मा0 कांशीराम को अनेक कष्टों और विरोधों का सामना करना पड़ा फिर भी वे इंचमात्र भी अपने उद्देश्य से विचलित नहीं हुए।

दलित–शोषित वंचित समाज को देश की सर्वोच्च सदन संसद में पर्याप्त प्रतिनिधित्व देने की मांग बुलन्द की और इसके लिए 25 दिसम्बर 1982 को दिल्ली में जन संसद (पीपुल्स पार्लियामेंट) आयोजित किया। इसके बाद देश के कुछ अन्य भागों में भी इसी प्रकार का आयोजन किया गया।

मा0 कांशीराम की 1982 के दौरान ही मुलाकात कु0 मायावती से हुई, जिन्होंने न केवल अद्भुद सहयोगी की भूमिका निभाई तथा अपितु बाबा साहेब के कारवां को अद्भुद ऊँचाई दी अपितु बाबा साहेब के सपनों को साकार करती हुई हजारों वर्षों से शोषित–वंचित दलित समुदाय को राजनैतिक शक्ति दिलाकर शासित समुदाय से शासक समुदाय में परिवर्तित कर उनमें आत्म गौरव तथा आत्म सम्मान की भावना भर कर फ्रांसीसी क्रांति (1789) के समान महान परिवर्तन कर छत्रपति साहू जी महाराज, ई0वी0 रामास्वामी पेरियार, महात्मा ज्योंविता फूले सहित बाबा साहेब के अधूरे स्वप्न को साकार कर रही हैं।

दलित–शोषित समाज के आत्म सम्मान तथा गौरव का प्रतीक बन चुकी कु0 मायावती का जन्म 15 फरवरी 1956 को (लेडी हार्दिग अस्पताल) नई दिल्ली में हुआ। उनके पिता प्रभुदयाल जी मूल रूप से उ0प्र0 के गाजियाबाद जिले के बादलपुर नामक ग्राम के निवासी थे, जो दिल्ली में भारतीय डाकतार विभाग में कार्यरत थे। माँ

रामरती एक सीधी साधी और आदर्श महिला थीं जिनका परिवार भरा–पूरा था, 6 पुत्रों व कुमारी मायावती सहित तीन बेटियों के पालन पोषण में प्रभुदयाल को निम्न मध्यम वर्गीय आर्थिक स्थिति के कारण काफी समस्याओं का सामना भी करना पड़ा। यद्यपि जिस समय कु0 मायावती का जन्म हुआ। उसीदिन उनके पिता की एलडी0सी0 से यू0डी0सी0 पद पर पदोन्नति हुई। उसी दिन जो धनराशि बांकी थी, वह भी मिली। इन घटनाओं का कारण प्रभुदास ने अपनी नवजात कन्या को माना। इसीलिए उनका नाम मायावती रखा।[1]

कु0 मायावती का बचपन दिल्ली में व्यतीत हुआ क्योंकि उनके पिता दिल्ली में ही सरकारी सेवा में थे। वे बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि की साहसी और जागरुक बालिका थीं। उनके बचपन की अनेक घटनायें उनके साहस तथा सामाजिक बोध का परिचय कराती है। बचपन की एक घटना है– एक दिन मायावती अपने माँ–बाप, नाना तथा नानी के साथ अपने नाना के पैतृक गांव सिमरौली से जा रही थीं कि अचानक एक भेड़िया आ गया। उस भेडिये को देखकर कु0 मायावती के नाना ने डराते हुए कहा कि देखोवह भेड़िया है– बच्चों को खा जाता है, उससे बचकर चलो। कु0 मायावती ने कहा– वह जानवर का बेटा क्या कर लेता है? यह कहकर वह दौड़ पड़ी। उस भेडिये के पीछे–पीछे माता–पिता, नाना–नानी सभी शोर मचाते हुए मायावती के पीछे दौड़ने लगे। कुछ किसान भी आ गए और वह भेड़िया भाग गया। चारो तरफ चर्चा होने लगी कि मायावती शेरनी है जिसे देखकर भेड़िया भागता है।[2]

अपनी आरम्भिक शिक्षा पूरी करने के बाद कु0 मायावती ने उच्च शिक्षा के लिए दिल्ली विश्वविद्यालय के कालिंदी कालेज में प्रवेश लिया और वहीं से बी0ए0 की डिग्री प्राप्त की। इसी समय बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर के जीवन–संघर्ष तथा उनकी पुस्तकों का अध्ययन किया। बाबा साहेब को अपने जीवन का आदर्श मानकर कु0 मायावती ने निर्णय किया कि जिस प्रकार बाबा साहेब ने अपने सम्पूर्ण जीवन को

---

[1] कु0 मायावती, मेरे संघर्ष मय जीवन एवं बहुजन मूवमेंट का सफरनामा, खण्ड–1, पृ0सं0– 35।

[2] कु0 मायावती, वही, पृ0सं0–34

दलित–शोषित समाज के उत्थान तथा उनको मानवीय अधिकार दिलाने में अर्पित कर दिया, वैसे वे भी अपने सम्पूर्ण जीवन को अपने समाज के उत्थान में समर्पित करेंगी। कानून को समाजिक न्याय का हथियार मानते हुए उन्होंने बी0ए0 के बाद एल0एल0बी0 करने का निश्चय किया।

कानून के अध्ययन के दौरान कु0 मायावती को पूर्ण विश्वास हो गया कि शिक्षा की कमी ही दलितों के पिछड़ेपन, शोषण का प्रमुख कारण है। उन्हें इस बात का भी एहसास हुआ कि इस समाज में सामाजिक चेतना जगाये बगैर व्यवस्था में परिवर्तन संभव नहीं है। इसलिए उन्होंने शिक्षिका बन कर समाज को जागृत करने का संकल्प लिया। दिल्ली विश्वविद्यालय से बी0एड0 की डिग्री प्राप्त करने के पश्चात 1977 ई0 में दिल्ली प्रशासन में प्राइमरी स्कूल में 21 वर्ष की उम्र में अध्यापिका बन गई।

पिता प्रभुदयाल ओर माँ रामरती ने अपनी सामाजिक उत्तरदायित्व को पूर्ण करने के लिए मायावती के विवाह की बात–चीत आरम्भ की। इस विवाह प्रस्ताव पर कु0 मायावती ने अपना निर्भीक निर्णय इस प्रकार बताया– मैं नौकरी इसलिए नहीं कर रही हूँ कि शादी करके घर बसा लूँ और अपनी खुशियों में खो जाऊँ। दलित परिवार में जन्म लेकर मैंने जो पीड़ा झेली है। मैं नहीं चाहती कि पिछड़ी जातियों के लोग हमेशा ऐसी पीड़ा झलते रहें। मैं अपने समाज में शिक्षा की चेतना जगाऊँगी। जैसे पढ़ लिख कर मैंने नौकरी ले ली, ऐसे ही यदि सभी पढ़ें–लिखें और किसी काम में जुट जाए तो वे समाज के अत्याचारों को चीरकर नई दुनियां का निर्माण करेंगे।[1] फिर कोई दलित ओर पीड़ित नहीं रहेगा। सामाजिक न्याय का जो स्वप्न बाबा साहेब ने देखा था, वही स्वप्न मेरी आँखों में भी है। मैं विवाह नहीं करूँगी। अपना पूरा जीवन समाज की सेवा में लगा दूँगी।[2]

कु0 मायावती ने 1981 में अपने मिशन पर काम करना आरम्भ किया। सरकारी नौकरी जारी रखते हुए उन्होंने वामसेफ की सदस्यता ग्रहण कर ली और

---

[1] एम0पी0 कमल, दलित संघर्ष के महानायक, पृ0सं0– 160
[2] एम0पी0 कमल, दलित संघर्ष के महानायक, पृ0सं0– 160

संगठन में आगे बढ़–चढ़ कर नई–नई जिम्मेदारियां लेनी आरम्भ की। मायावती संगठन के लिए नई अवश्य थीं परन्तु उनके मस्तिष्क में सामाजिक परिवर्तन की जो रूपरेखा अंकित थी वह नई नहीं थी। वे दिल्ली और उसके बाहर भी सभाओं, प्रदर्शनों में भाग लेने लगीं। इसी समय उन्होनें डी0एस0फोर की सदस्यता ग्रहण की। इन कार्यों के बीच कु0 मायावती को लगा कि प्रशासनिक अधिकारी बनकर वे बेहतर ढंग से अपने समाज की सेवा कर सकती हैं। इसलिए आई0ए0एस0 की तैयारी आरम्भ कर दी, लेकिन इसी दौरान मा0 कांशीराम जी से उनकी मुलाकात हुई। तब तक कांशीराम जी की महान दलित नेता के रूप में पूरे देश में ख्याति हो चुकी थी। मा0 कांशीराम जी ने कु0 मायावती के अन्दर छिपी असीम ऊर्जा को पहचान कर उसका उपयोग बाबा साहेब के कारवां को उसकी मंजित तक पहुंचाने का संकल्प लिया। कु0 मायावती भी मा0 कांशीराम के साथ उनके मिशन में पूर्ण मनोयोग के साथ लग गईं।

देश की विभिन्न राजनैतिक पार्टियों द्वारा दलित, शोषितों के साथ किये जाने वाले कपटपूर्ण व्यवहार एवं दलित आन्दोलन के बिखराव तथा विफलता के कारण मा0 कांशीराम तथा कु0 मायावती ने गंभीर चिंतन–मनन करके एक नए राजनैतिक दल का निर्माण कर दलित–शोषित समाज के सर्वांगीण उत्थान का प्रयास आरम्भ किया। बाबा साहेब के जन्म दिन 14 अप्रैल को 1984 ई0 में बहुजन समाज पार्टी (बी0एस0पी0) नामक राजनैतिक दल का गठन किया गया। मा0 कांशीराम तथा कु0 मायावती ने गहन विचार–विमर्श करके यह नामकरण किया। हजारों वर्ष से समाज के बहुत बड़े वर्ग को तिरस्कृत और अमानवीय व्यवहार का भागीदार बनना पड़ा था, जिसके दुःखों को दूर करने के लिए भगवान बुद्ध ने बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय अपने सम्पूर्ण जीवन को समर्पित किया, उसी लक्ष्य को लेकर मा0 कांशीराम तथा कु0 मायावती ने अपने सम्पूर्ण जीवन को समर्पित करने का निश्चय किया। पार्टी का नामकरण बुद्ध धर्म से अनुप्राणित है।

अपने स्थापना काल से ही इस पार्टी के तेवर काफी तेज होने के कारण पार्टी बहुत जल्द ही चर्चित हो गई। इस पार्टी ने दो मुख्य नारे दिये–

1. वोट हमारा– राज तुम्हारा– नहीं चलेगा, नहीं चलेगा।
2. जिसकी जितनी संख्या भारी, उसकी उतनी हिस्सेदारी।

इन नारों ने इस पार्टी को लोकप्रिय तथा चर्चित बनाने में बड़ी अहम भूमिका निभाई। बहुजन समाज पार्टी ने उ0प्र0 को अपना मुख्य कार्य क्षेत्र बनाया क्योंकि उ0प्र0 की सामाजिक संरचना उसकी नीतियों के पुष्पित–फलित होने के पूर्ण अनुरूप थी। कु0 मायावती सरकारी सेवा से त्याग पत्र देकर 1984 से ही मा0 कांशीराम के साथ बहुजन समाज पार्टी को मजबूत करने में तत्पर हो गईं। मा0 कांशीराम बी0एस0पी0 के अध्यक्ष ओर कु0 मायावती महासचिव सर्व सम्मति से चुनी गई। कु0 मायावती के पार्टी के प्रति इतना लगाव तथा समर्पण के कारण पारिवारिक विरोध का भी सामना करना पड़ा लेकिन वे अपने निर्णय पर अडिग रहीं।

मा0 कांशीराम और कु0 मायावती ने 1985 में होने वाले लोक सभा चनुाव के तैयारी की व्यापक रूपरेखा बनाई। 31 अक्टूबर 1984 को प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की उनके सुरक्षा गार्ड द्वारा की गई हत्या के कारण पूरे देश में सिक्ख विरोधी दंगे भड़क उठे। नव निर्वाचित प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने समय पूर्व चुनाव कराने की घोषणा की और 24 से 27 दिसम्बर 1984 के बीच लोक सभा चुनाव सम्पन्न हुए। पूरे देश में कांग्रेस के पक्ष में सहानुभूति लहर चल रही थी। बी0एस0पी0 ने भी बड़ी संख्या में अपने उम्मीदवार खड़े किये और स्वयं कु0 मायावती पहली बार चुनाव लड़ते हुए मुजफ्फर नगर के कैराना सीट से चुनाव लड़ीं लेकिन कांग्रेस के पक्ष में श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या के कारण चल रही सहानुभूति की आंधी के कारण देश के गैर कांग्रेसी पार्टी के दिग्गज नेताओं में अटल बिहारी बाजपेयी ग्वालियर से माधव राव सिंधिया, हेमवती नन्दन बहुगणा इलाहाबाद से अमिताभ बच्चन से चुनाव हार गये थे तो मायावती जैसी नई नेत्री के लिए चुनाव हारना कोई आश्चर्य की बात नहीं थी। कांग्रेस पार्टी को 543 लोक सभा

सीटों में 415 सीटें प्राप्त हुई थीं।[1] कांग्रेस का चुनाव अभियान भारत की एकता–अखण्डता पर केन्द्रित था। गैर कांग्रेसी पार्टियों का सूपडा साफ हो गया था।

इस पराजय से मा0 कांशीराम तथा कु0 मायावती हताश नहीं हुई बल्कि और अधिक मनोयोग से अपने मिशन में लग गए। इसी बीच 1985 में बिजनौर (उ0प्र0) सुरक्षित क्षेत्र से लोक सभा उप चुनाव घोषित हुए इस निर्वाचन क्षेत्र से निर्वाचित सांसद श्री गिरधारी लाल की 16 मई 1985 को मृत्यु हो जाने के कारण यह उप चुनाव दिसम्बर 1985 को हुआ। इस चुनाव में कु0 मायावती एक बार फिर प्रत्याशी बनी। 16 दिसम्बर 1985 को हुए चुनाव में कांग्रेस की मीरा कुमारी 128086 मत पाकर विजयी रही। कु0 मायावती को 61504 मत प्राप्त हुआ जो काफी सम्मानजनक स्थिति का द्योतक रहा। यद्यपि कु0 मायावती को विजय प्राप्त नहीं हुई थी लेकिन दलित, शोषित, पिछड़े समाज का इतना मत प्राप्त कर बेहद खुश थीं। अपने समाज का जो उन्हें सम्मान और प्रेम प्राप्त हुआ उससे उनका मनोबल और बढ़ा।

इसी मध्य 23 मई 1987 को हरिद्वार (सहारनपुर उ0प्र0) लोक सभा क्षेत्र का उप चुनाव हुआ। इस लोक सभा से निर्वाचित श्री सुन्दरलाल की दिनांक 4 जनवरी 1987 को मृत्यु हो गई थी। इस उप चुनाव में भी कु0 मायावती बी0एस0पी0 की प्रत्याशी रहीं लेकिन सफलता कांग्रेस प्रत्याशी रामसिंह को प्राप्त हुई लेकिन कु0 मायावती 125399 मत प्राप्त कर दूसरे स्थान पर रहीं, जो एक बड़ी सफलता थी। कांग्रेस की तुलना में बी0एस0पी0 के पास संसाधन अत्यन्त सीमित थे, लेकिन सीमित साधनों का यह अद्भुद प्रदर्शन था।

बहुजन समाज पार्टी आगामी लोक सभा चुनाव जो 1989 में होने थे, की तैयारी में पूरी तरह लगी थी। इस बीच भारतीय राजनीति में तूफान मचा था। वी0पी0 सिंह को राजीव गांधी ने 1987 में वैचारिक मतभेद के कारण कांग्रेस से निष्कासित कर दिया। वी0पी0 सिंह ने बोफोर्स काण्ड को लेकर भ्रष्टाचार को राष्ट्रवादी मुद्दा बनाकर

---

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, आजादी का भारत, पृ0सं0– 364

राजीव गाँधी विरोधी हवा को तीव्र किया। इस बीच अमिताभ बच्चन ने इलाहाबाद लोक सभा सीट से 1988 में त्याग पत्र दे दिया। इस उप चुनाव में वी0पी0 सिंह नव गठित राष्ट्रीय मोर्चे के प्रत्याशी बने तथा मा0 कांशीराम भी ब0स0पा0 प्रत्याशी के रूप में चुनाव मैंदान में उतरे। वी0पी0 सिंह ने भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलन के नायक के रूप में यह चुनाव जीता। इस उप–चुनाव पर भारत सहित विश्व की नजरें लगी थीं, जिसमें प्रभावशाली रूप में चुनाव लड़कर मा0 कांशीराम ने भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चा पायी।

इलाहाबाद उप–चुनाव के बाद गैर कांग्रेसवाद के नाम पर राजनैतिक क्षेत्र में नया ध्रुवीकरण हुआ। इसके तहत 6 अगस्त 1988 को सात पार्टियों के विलय से राष्ट्रीय मोर्चा का गठन हुआ। राष्ट्रीय मोर्चा, भा0ज0पा0 तथा कम्युनिस्ट पार्टियों ने आपसी ताल–मेल कर 1989 का लोक सभा चुनाव लड़ा। कु0 मायावती ने बी0एस0पी0 प्रत्याशी के रूप में बिजनौर (सुरक्षित) क्षेत्र से चुनाव लड़ी और 183189 मत प्राप्त कर विजय का ताज पहन कर लोक सभा में पहली बार पहुंचीं। बाबा साहेब कांग्रेस तथा सवर्ण हिन्दुओं के साजिश के कारण कभी लोक सभा में नहीं पहुंच सके लेकिन कु0 मायावती इस षडयंत्र को नाकाम कर लोक सभा में प्रवेश कर बाबा साहेब के रुके कारवां को मंजिल तक पहुँचाने का संकल्प लिया। इस प्रकार राजनैतिक पार्टी के रूप में इस लोक सभा चुनाव में पहली बार बी0एस0पी0 लोक सभा में प्रवेश की। इस बार लोक सभा चुनाव परिणाम कांग्रेस के विरुद्ध गए हालाकि वह अभी भी सबसे बड़ी राजनैतिक पार्टी थी और उसे 197 सीटें तथा 39.5 प्रतिशत मत प्राप्त हुए थे।[1] राजीव गांधी ने सरकार बनाने से इन्कार कर दिया। वी0पी0 सिंह ने राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार बनाने का दावा राष्ट्रपति के सम्मुख किया। वाम मोर्चा तथा भा0ज0पा0 ने बिना शर्त बाहर से समर्थन देने की घोषणा की। वी0पी0 सिंह ने 2 दिसम्बर 1989 को प्रधानमंत्री पद की शपथ ग्रहण की। बी0एस0पी0 ने भी वी0पी0 सिंह सरकार को बिना शर्त समर्थन दिया। वी0पी0 सिंह सरकार ने दलित–शोषित समाज सहित पूरे देश के लिए गौरवपूर्ण कदम उठाते हुए बाबा साहेब को वर्ष 1990 में 14 अप्रैल के शुभ दिन पर भारत रत्न का

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, वही, पृ0सं0– 380

सर्वोच्च अलंकरण प्रदान किया। इस अलंकरण से बाबा साहेब नहीं अपितु स्वयं भारत रत्न ही अलंकृत हुआ। राष्ट्रीय मोर्चा सरकार की बाबा साहेब के प्रति यह सच्ची श्रद्धांजलि कहा जा सकता है। राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने 14 अप्रैल 1990 से 14 अप्रैल 1991 तक डा0 अम्बेडकर जन्म शताब्दी के रूप में मनाने का निर्णय किया और 14 अप्रैल को राष्ट्रीय अवकाश घोषित कर इस पावन दिन को राष्ट्रीय पर्व की संज्ञा देकर संसद में भारतीय संविधान के वास्तविक निर्माता बाबा साहेब का तैल चित्र लगाकर इस महान बौद्धिक चिंतक, समाज सुधारक, विधिवेत्ता तथा युग पुरुष और युग श्रष्ठा के प्रति तथा करोड़ों दलितों, शोषितो के प्रति अपने कर्तव्य का निर्वहन किया।

वी0पी0 सरकार ने दलित–शोषित सहित पिछडे वर्गों के उत्थान हेतु 7 अगस्त 1990 को ऐतिहासिक मण्डल कमीशन को लागू करने का निर्णय लिया। यह कमीशन जनता सरकार ने नियुक्त किया था– 1977–79 में और इंदिरा गाँधी सरकारने इसकी चुपचाप उपेक्षा कर दी थी।[1] मण्डल की सिफारिशों में सरकारी सेवाओं और सार्वजनिक क्षेत्रों में 27 प्रतिशत आरक्षण पिछड़ी जातियों के लिए रखा गया था। इस प्रकार बाबा साहेब ने सभी दलित, शोषित समाज सहित पिछड़े वर्गों की स्थिति को सुधारने के लिए जिस विधिक प्रावधानों की निरंतर मांग कर रहे थे और संघर्ष कर रहे थे, वह पिछड़े वर्गों को आजादी के इतने वर्ष बाद प्राप्त हुई। इस ऐतिहासिक निर्णय का समता मूलक समाज में मुक्त कण्ट से स्वागत होना चाहिए था लेकिन हजारों वर्षो से विशेषाधिकारों का उपभोग कर रहे वर्ग ने इस निर्णय का प्रबल विरोध आरम्भ किया और पूरे देश नें मण्डल विरोधी आन्दोलन की आग फैल गई। शोषित, उपेक्षित पिछड़ा समाज इस आन्दोलन से स्तब्ध था।

राजनैतिक और सामाजिक अन्तर्विरोध के कारण 7 नवम्बर 1990 को वी0पी0 सरकार का पतन हुआ और कांग्रेस के सहयोग से 58 सांसदों वाले चन्द्रशेखर गुट ने सरकार बनाया। 10 नवम्बर 1990 को चन्द्रशेखर ने प्रधानमंत्री पद की शपथ ली,

[1] प्रो0 विपिन चन्द्र, वही, पृ0सं0– 382

लेकिन यह भी अल्पजीवी सरकार रही और 5 मार्च 1991 को कांग्रेस ने अपना समर्थन वापस ले लिया। मई 1991 में लोकसभा चुनाव घोषित हुए। इसी चुनाव प्रचार के दौरान 21 मई 1991 को मद्रास के समीप श्रीपेरुवूदर में एक चुनावी सभा में श्रीलंका के आतंकवादी गुट LTTE (लिवरेशन टाइगर ऑफ तमिम ईलम) ने राजी गाँधी की आत्मघाती मानव बम द्वारा हत्या कर दी।

लोक सभा चुनाव में कांग्रेस के पक्ष में सहानुभूति लहर चली और कांग्रेस को 232 सीटें प्राप्त हुईं, जो बहुमत से थोड़ी सी कम थीं लेकिन सबसे बड़ी पार्टी के रूप में नरसिंह राव के नेतृत्व में कांग्रेस पार्टी ने अपनी सरकार बनाई। सहानुभूति लहर के कारण बी0एस0पी0 सहित गैर कांग्रेसी दलों को काफी हानि उठाना पड़ा। कु0 मायावती स्वयं हरिद्वार तथा बिजनौर लोकसभा सीट से चुनाव हार गईं। नरसिंह राव सरकार जोड़–तोड़कर बहुमत सरकार बन गई और महत्वपूर्ण आर्थिक सुधार–नई आर्थिक नीति वित्तमंत्री मनमोहन सिह के निर्देशन में लागू किया। इस सरकार ने अपना 5 वर्ष का कार्यकाल पूरा किया। नरसिंह राव सरकार कार्यकाल में 6 दिसम्बर 1992 को अयोध्या में लाखों कर सेवकों ने विवादित ढाँचा राम जन्मभूमि बाबरी मस्जिद को गिरा दिया, जिसके बाद पूरे प्रदेश में व्यापक साम्प्रदायिक दंगे हुए।

कु0 मायावती केन्द्रीय राजनीति में अपनी भूमिका निभाने हेतु राज्य सभा के लिए 1994 में उ0प्र0 से पर्चा भरा और 2 अप्रैल को पहलीबार राज्य सभा में पहुचने में सफलता प्राप्त की। इसी के साथ राज्य सभा में आजादी के बाद पहली बार बी0एस0पी0 पहुंचने में सफलता कु0 मायावती के सदस्य के रूप में प्राप्त की। कु0 मायावती के गरिमामय उपस्थिति दलित–शोषित समाज के लिए गर्व की बात थी। उनको लगा कि बाबा साहेब के बाद कु0 मायावती के रूप में उनका नया मसीहा देश के सर्वोच्च सदन में पहुंचा है।

वर्ष 1996 में निर्धारित समय पर लोक सभा चुनाव सम्पन्न हुआ, जिसमें कांग्रेस को भारी पराजय का समना करना पड़ा। उसे मात्र 140 सीटों से सन्तोष करना

पड़ा। भा0ज0पा 161 सीटें प्राप्त कर सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरी और अटल बिहारी बाजपेयी के नेतृत्व मे उसने सरकार बनाने का दावा किया। अटल बिहारी बाजपेयी ने 16 मई को प्रधानमंत्री पद की शपथ ली लेकिन पर्याप्त बहुमत न हासिल कर पाने के कारण 1 जून को प्रधानमंत्री पद से त्याग–पत्र दे दिया। इसके बाद एच0डी0 देवगौणा के नेतृत्व में संयुक्त मोर्चा की सरकार बनी। कांग्रेस और भा0क0पा0 ने इसका समर्थन किया और भा0क0पा0 सरकार में सम्मिलित हुई। इस प्रकार आजादी के बाद पहली बार भा0क0पा0 केन्द्रीय सरकार में साझीदार बनी। कांग्रेस ने 30 मार्च 1997 में अपना समर्थन वापस ले लिया लेकिन अपनी सरकार बनाने में असफल रही। बदलते घटना चक्र में उसने संयुक्त मोर्चा सरकार का पुनः समर्थन किया लेकिन नेतृत्व परिवर्तन की शर्त पर अब आई0के0 गुजराज नए प्रधानमंत्री बने, लेकिन सरकार अस्थायी रही। 1997 के अंत में कांग्रेस ने अपना समर्थन पुनः वापस ले लिया। अंततः फरवरी 1998 में पुनः लोकसभा चुनाव हुए। इस चुनाव में भी किसी भी पार्टी को स्पष्ट बहुमत नहीं मिला लेकिन भा0ज0पा0 पुनः 182 सीटें लेकर सबसे बड़ी पार्टी के रूप में उभरी। तृणमूल कांग्रेस तथा तेलगू देशम जैसी अनेक क्षेत्रीय पार्टियों के समर्थन से अटल बिहारी बाजपेयी के नेतृत्व में पुनः भा0ज0पा0 की सरकार बनी लेकिन सहयोगी दलों के अन्तर्विरोध के कारण अप्रैल 1999 में बाजपेयी सरकार अल्पमत में आ गई। सितम्बर–अक्टूबर 1999 में लोक सभा चुनाव हुए। कांग्रेस का ग्राफ निरन्तर गिरता हुआ स्वयं 134 सीटों पर पहुंच गया। भा0ज0पा0 गठबंधन को 296 सीटें प्राप्त हुई और अटल जी के नेतृत्व में सरकार बनी। इस बार अटल सरकार ने अपना कार्यकाल पूरा किया। कुछ उपलब्धियों तथा असफलताओं से यह ओत–प्रोत कार्यकाल रहा। 2004 के चुनाव में भा0ज0पा0 गठबन्धन को पराजय का सामना करना पड़ा और कांग्रेस गठबन्धन की सरकार डा0 मनमोहन सिंह के नेतृत्व में बनी जो अपना कार्यकाल पूरा कर रही है।

प्रादेशिक स्तर पर उ0प्र0 की राजनीति विस्मयकारी रही। बाबा साहेब के सच्चे उत्तराधिकारी मा0 कांशीराम तथा कु0 मायावती अपने सतत् प्रयास और संघर्षों के बल पर बहुजन समाज पार्टी को मजबूत करती रही थीं। वर्ष 1993 के विधान सभा

चुनाव में भा0ज0पा0 की तुलना में समाजवादी पार्टीक साथ अपना अधिक वैचारिक सामंजस्य देकर ब0स0पा0 ने स0पा0 के साथ चुनावी समझौता किया। इस चुनाव में कु0 मायावती ने सघन चुनाव प्रचार कर एक जुझारू तथा तेज तर्रार नेत्री की छवि बना ली। इस चुनाव में स0पा0 और ब0स0पा0 गठबन्धन को स्पष्ट बहुमत मिला और मुलायम सिंह के नेतृत्व में मिली–जुली सरकार बनी। ब0स0पा0 ने 67 सीटें प्राप्त कर प्रदेश में अपने मजबूत हो रहे जनाधार का प्रमाण दिया। 4 दिसम्बर को मुलायम सिंह ने मुख्यमंत्री पद की शपथ ली।

स0पा0 और ब0स0पा0 ने अपनी सरकार चलाने के लिए कुछ साझा नीतियां घोषित की थी लेकिन अन्तर्विरोध तथा आपसी महत्वाकाक्षा के कारण सरकार पर सकंट के बादल मडराते रहे। इस बीच मुलायम सिंह ने सत्ता का प्रलोभन देकर ब0स0पा0 के राजबहादुर, जंगबहादुर, श्रीराम यादव और रामलखन वर्मा जैसे नेताओं को अपनी ओर मिला लिया और ब0स0पा0 का विभाजन करा दिया।[1] मा0 कांशीराम तथा कु0 मायावती राजनैतिक स्थिति पर पैनी नजर रखी थी तथा नए समीकरण की संभावना पर भी विचार विमर्श चल रहा था। नए समीकरण के साथ कु0 मायावती 1 जून 1995 को प्रातः नई दिल्ली से लखनऊ आई और ब0स0पा0 के विधायकों को यू0पी0 गेस्ट हाउस में बुलाया। उपस्थित विधायकों ने कु0 मायावती को अपना नेता चुना उसी दिन शायं उन्होंने राज्यपाल मोतीलाल बोरा से मुलाकात कर अपना समर्थन वापस का पत्र दिया और भा0ज0पा0 के समर्थन से सरकार बनाने का दावा किया। उन्होंने भा0ज0पा0 सहित 282 विधायकों के समर्थन का दावा किया। भा0ज0पा ने बिना शर्त समर्थन देने का लिखित पत्र राज्यपाल को दिया। यह सम्पूर्ण घटनाक्रम अति गोपनीय रखा गया था। इस निर्णय से मुलायम सरकार अल्पमत में आ गई, लेकिन साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति अपना कर मुलायम सिंह सत्ता में बने रहना चाहते थे। डा0 मसूद के नेतृत्व वाले ब0स0पा0 विधायकों का एक गुट सरकार को समर्थन देने की घोषणा किया।

---

[1] कमलकांत सिंह, सुश्री मायावती एक आश्चर्य जनक व्यक्तित्व, पृ0सं0– 42

उ0प्र0 में मड़राते हुए गहरे राजनैतिक संकट के इस वातावरण में अगले दिन 2 जून 1995 को यू0पी0 गेस्ट हाउस में लोकतन्त्र को कलंकित करने वाली घटनाक्रम में आतंक और हिंसा का नंगा नाच हुआ। शायं 4 बजे के आस–पास बड़ी संख्या में नेता यथा– ओमप्रकाश पासवान, रमाकान्त यादव, उमाकांत यादव, कु0 अखिलेश सिंह, अरूण शंकर शुक्ल, आदि हजारों समर्थको के साथ यू0पी0 गेस्ट हाउस में घुस गये। अनेक ब0स0पा0 विधायकों को मारने–पीटने के बाद पकड़ कर मुलायम सिंह के निवास विक्रमादित्य मार्ग पर ले गए। बन्दी बनाए गए ब0स0पा0 विधायकों में रामअचल राजभर (अकबरपुर क्षेत्र अम्बेडकर नगर), अम्बिका चौधरी, मेवालाल बागी, अक्षवर भारती, समई आदि प्रमुख रहे। भीड़ ने कु0 मायावती की हत्या करने का प्रयास किया लेकिन वे अपने कमरे में दरवाजा बन्द कर चुपचाप पडी रहीं। पुलिस–प्रशासन मूकदर्शक ही नही बना रहा अपितु गुण्डाइयों का साथ भी दिया।

भा0ज0पा0 के केन्द्रीय नेताओं ने केन्द्रीय गृहमंत्री एस0पी0 चव्हाण से उ0प्र0 में हस्तक्षेप तथा कु0 मायावती को बचाने की मांग की। अंततः केन्द्रीय सरकार तथा राज्यपाल के हस्तक्षेप से दलितों, शोषितों की मसीहा कु0 मायावती के प्राणों की रक्षा संभव हो सकी। ब0स0पा0 नेताओं तथा कार्य कर्ताओं ने भी अपने प्राणों की बाजी लगाकर गुण्डागर्दी का सामना किया और कु0 मायावती के प्राण बचाने में अपना योगदान दिया। ब0स0पा0 नेताओं में रामअचल राजभर मार खाते रहे लेकिन कमरा नं0 1 में कैद बहन मायावती की रक्षा के लिए गुण्डों के सम्मुख हिम्मत से डटे रहे।

गुण्डागर्दी अधिक समय तक नहीं चल पाई। 3 जून को कु0 मायावती ने पहली बार मुख्यमंत्री पद की शपथ ली। आखिरकार लोकतन्त्र और न्याय की जीत हुई। इसी के साथ बाबा साहेब का स्वप्न साकार हुआ और हजारों वर्ष बाद दलित, शोषित समाज ने कु0 मायावती के रूप में राजनैतिक शक्ति प्राप्त की। उ0प्र0 की राजनीति में यह अपने आप में एक चमत्कारिक घटना थी। पहली बार एक दलित महिला उ0प्र0 की मुख्यमंत्री बनी थी।

कु0 मायावती ने बुलन्द हौसले के साथ शपथ ग्रहण करते ही अपनी बहुजन समाज की नीतियों के अनुसार अपने सरकार की नीति निर्धारित की और पूरे प्रशासन तन्त्र को देखते ही देखते गरीबों, शोषितों, पिछड़ो के हितों से सीधे जोड़ दिया। दबे, कुचले लोगों के कल्याण तथा मनोबल बढ़ाने के लिए कु0 मायावती ने अपना प्रयास आरम्भ किया। भा0ज0पा0 ने शासन का रिमोट कन्ट्रोल अपने हाथ में चाहा तथा अपनी नीतियों को थोपने का लगातार प्रयास किया लेकिन कु0 मायावती को अपने मिशन से कोई समझौत स्वीकार नहीं था। अतः 4 माह बाद ही भा0ज0पा0—ब0स0पा0 गठबंधन टूट गया और कु0 मायावती ने 27 अक्टूबर 1995 को मुख्यमंत्री पद से त्याग पत्र दे दिया। इसी के साथ उन्होंने अपने समाज को यह सन्देश दिया कि सत्ता सुख उनका उद्देश्य नहीं है अपितु सामाजिक न्याय जिसका स्वप्न महत्मा फूले, शाहू जी महराज तथा बाबा साहेब ने देखा तथा दलित, शोषित समाज का उद्धार ही उनका सुख है। अपने अल्प शासन काल में उन्होंने दलित समाज में सामाजिक परिवर्तन का ऐसा स्वाभिमान जगाया कि गरीबों, दलितों, शोषितों व वंचितों के बीच उनकी छवि मसीहा की बन गई।

उ0प्र0 विधान सभा चुनाव 1996 में हुए लेकिन किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत नहीं प्राप्त हुआ। जोड़—तोड़ करके भी कोई दल सरकार नहीं बना पाया, इसलिए 15 अक्टूबर 1995 से 20 मार्च 1997 तक राज्यपाल शासन रहा। कोई तालमेल न बैठने के कारण फिर से चुनाव कराने की स्थिति दिखाई पड़ने लगी।[1] चुनाव से बचने के लिए सभी दलों में चिंता होने लगी। अंततः आपसी वैमनस्य को भुलाकर भा0ज0पा0 और ब0स0पा0 ने पुनः सरकार बनाने का फैसला किया। दोनो पार्टियों में एक नया समझौता हुआ कि 6 माह तक ब0स0पा0 का मुख्यमंत्री और तत्पश्चात् 6 माह तक भा0ज0पा0 का मुख्यमंत्री होगा और इसी प्रकार 6—6 माह के लिए दोनो मुख्यमंत्री होंगे। शासन चलाने के लिए साझा कार्यक्रम भी बनाया गया। इस समझौते के तहत 21 मार्च 1997 को कु0 मायावती ने दूसरी बार उ0प्र0 के मुख्यमंत्री पद की शपथ ली। दलित—शोषित समाज के उत्थान तथा स्वाभिमान की स्थापना हेतु शासन की नीतियां तय की। बहुजन समाज के

---

[1] ए0पी0 कमल, वही, पृ0सं0— 168

नायकों यथा पेरियार, शाहू जी महाराज, महात्मा फूले तथा बाबा साहेब के नाम पर स्मारकों, पार्कों, जिलों, विश्वविद्यालयों की स्थापना की। समाज के एक बड़े वर्ग के द्वारा इसका विरोध भी किया गया लेकिन शासन की नीतियों में परिवर्तन नहीं आया समझौते के अनुरूप 6 माह बाद सत्ता का परित्याग कर दिया।

कु0 मायावती ने 1999 का लोक सभा चुनाव अकबरपुर अम्बेडकर नगर से लड़ीं, जिसमें स0पा0 उम्मीदवार लालता प्रसाद को भारी मतों से पराजित कर विजयी रहीं। यही नहीं उ0प्र0 में अपनी प्रभावशाली उपस्थिति दर्ज कर ब0स0पा0 ने 13 लोक सभा सीटों पर विजय प्राप्त की। इस सफलता ने राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित किया और ब0स0पा0 को एक राजनैतिक ताकत के रूप में स्वीकार किया गया। देश की सबसे बड़ी पंचायत में पार्टी का यह बड़ा उभार था।

इस बीच 2002 में उ0प्र0 विधान सभा चुनाव हुए। कु0 मायावती ने चुनाव की व्यापक तैयारी आरम्भ की और स्वयं लोकसभा सीट का मोह त्याग कर जहांगीरगंज (अम्बेडकर नगर–सुरक्षित) क्षेत्र से उम्मीदवार बनीं। इस चुनाव में ब0स0पा0 ने किसी भी राजनैतिक दल से समझौता न करके सभी 403 सीटों पर अकेले अपने प्रत्याशी उतारा। इस समय ब0स0पा0 संस्थापक मा0 कांशीराम कुछ अस्वस्थ हो गए थे, जिससे चुनाव प्रचार का जिम्मा अकेले कु0 मायावती के ऊपर रहा। इस चुनाव में यद्यपि ब0स0पा0 को पूर्ण बहुमत नहीं मिला फिर भी 98 सीटें जीत कर दूसरी सबसे बड़ी पार्टी बनी। स0पा0 सबसे बड़ी पार्टी बनी थी, लेकिन बहुमत से दूर। बहुमत के अभाव में कोई भी दल सरकार बनाने में सफल नहीं रहा था। जिससे प्रदेश में पुनः चुनाव का खतरा मडराने लगा।

बदली परिस्थितियों में ब0स0पा0 और भा0ज0पा0 ने अपने वैमनस्य का परित्याग कर सरकार बनाने की पहल आरम्भ की और अंततः भा0ज0पा0 के एक गुट के विरोध के बावजूद दोनो पार्टियों में समझौता हो गया। 3 जून 2002 को कु0 मायावती को उ0प्र0 की तीसरी बार मुख्यमंत्री बनने का गौरव प्राप्त हुआ। उनके कार्यकाल को

अभी सवा वर्ष ही बीते थे कि उनके राजनैतिक साझीदारों ने एक बार फिर अपना समर्थन वापस ले लिया। कु0 मायावती ने 25 अगस्त 2003 को मुख्यमंत्री पद से इस्तीफा दे दिया और बहुजन समाज पार्टी को मजबूत करने में जुट गईं। कुद अन्तराल के बाद मुलायम सिंह के नेतृत्व में स0पा0 सरकार बनी।

इस बीच ब0स0पा0 संस्थापक मा0 कांशीराम का स्वास्थ अधिक खराब होता गया। दिल्ली के वत्रा अस्पताल में उनका लम्बा इलाज आरम्भ हुआ। इसी समय दिल्ली, राजस्थान, म0प्र0 तथा छत्तीसगढ़ विधान सभा के चुनाव होने थे। ब0स0पा0 भी चुनाव तैयारी में लग गई लेकिन मा0 कांशीराम की बीमारी एक बडी बाधा बनी हुई थी। पार्टी की भावी रणनीति पर विचार करने के लिए 18 सितम्बर 2003 को दिल्ली में राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाया गया जिसमें कु0 मायावती को सर्व सम्मति से मा0 कांशीराम का उत्तराधिकारी और पार्टी का राष्ट्रीय अध्यक्ष चुन लिया गया। कु0 मायावती अपनी पूर्ण क्षमता से बहुजन समाज के मूवमेंट को आगे बढ़ाने में संलग्न हुई। और उन्होंने अपनी पुस्तक "मेरे संघर्षमय जीवन और बहुजन समाज मूवमेंट का सफरनामा" में स्वयं अपने संघर्ष विषय में दिल्ली में दिए गए भाषण में कहा– "इस मौके पर मै आप लोगों में यह विश्वास दिलाना चाहती हूँ कि बहुजन समाज में जो समय–समय पर संत, गुरु और महापुरुष हए खासतौर से महापुरुषों में महात्मा ज्योतिबा फूले, छत्रपति शाहू जी महाराज, नारायण गुरु, पेरियार जी ओर परम पूज्य बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर, जिन्होंने इस देश में गैर–बराबरी वाली समाजिक व्यवस्था के शिकार करोड़ों लोगों को अपने पैरों पर खड़ा करने के लिए जो उन्होंने जीवन भर संघर्ष किया है, और उनके जीवन संघर्ष से जो, हमें आगे बढ़ने का मौका मिला है और खास तौर से परम पूज्य बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर के जीवन संघर्ष से जो उन्होंने भारतीय संविधान में किस्म–किस्म के कानूनी अधिकार देकर सेल्फ रिस्पेक्ट की जिन्दगी व्यतीत करने के लिए हमें मौका दिया, तो ऐसे महापुरुषों के जीवन संघर्ष से आगे चलकर बी0एस0पी0 के फाउन्डर एवं जन्मदाता

मा0 कांशीराम जी से प्रेरणा लेकर उनके इस सेल्फ–रिस्पेक्ट के मूवमेंट के कारवां को आगे बढ़ाया।[1].........

27 अगस्त 2006 को लखनऊ में बहुजन समाज पार्टी का अखिल भारतीय सम्मेलन हुआ, जिसमें कु0 मायावती को दूसरी बार ब0स0पा0 का राष्ट्रीय अध्यक्ष चुना गया। अधिवेशन में अपने अध्यक्षीय भाषण में कु0 मायावती ने कहा...... आज मैं आपको यह विश्वास दिलाना चाहती हूँ कि मैं पूरे जीवन भर जब तक मैं जिन्दा रहूँगी, मेरे शरीर में आखिरी सांस रहेगी, मेरे जिन्दगी का एक–एक पल आपकी इस सेल्फ रिस्पेक्ट के मूवमेंट को, बहुजन समाज में जो संत, गुरु और महापुरुष हुए हैं, उनके सेल्फ रिस्पेक्ट के मूवमेंट को आगे बढ़ाने के लिए लगता रहेगा।....... मैं जिन्दगी के आखिरी पल तक आप लोगों को हर प्रकार का सहयोग देती रहूँगी।

मा0 कांशीराम के स्वास्थ को लेकर काफी विवाद भी रहा, लेकिन आरोप तो हर महापुरुष पर लगे हैं। कु0 मायावती ने इन विवादों की उपेक्षा कर मा0 कांशीराम को पूर्ण चिकित्सीय सुविधा उपलब्ध कराई लेकिन बहुजन समाज के भाग्य में अपने मार्गदर्शक का साथ बहुत दिन तक नहीं लिखा था और 9 अक्टूबर 2006 को मा0 कांशीराम का देहान्त हो गया। इसी के साथ बाबा साहेब के कारवां को वास्तविक अर्थों में बढ़ाने वाला महानायक का अंत हुआ लेकिन उन्होंने अपने संघर्ष, चिन्तन और विचारों से इस कारवां को इतनी गति प्रदान कर दिया है कि वह भविष्य में और तीव्र होगी, जिसका परिणाम पूरे देश पर दिखाई देगा। अगर करवां भ्रमित नहीं हुआ तो वह दिन दूर नहीं जब देश के राजनीति की चाभी बहुजन समाज के हाथों में होगी। इसका पूर्ण आभास देश को उ0प्र0 विधान सभा चुनाव 2007 से मिल चुका है। इस चुनाव में राजनैतिक विश्लेषकों, मीडिया के पूर्वानुमानों को असत्य सिद्ध करती हुई बहुजन समाज पार्टी ने पूर्ण बहुमत प्राप्त कर की। 403 सदस्यीय विधान सभा में ब0स0पा0 को 206 सीटों पर ऐतिहासिक विजय प्राप्त हुई। एक लम्बे अन्तराल के बाद उ0प्र0 की जनता ने

---

[1] कमलाकांत सिंह, वही, पृ0सं0– 88–89

अल्पमत सरकार के क्रिया कलापों, आचरणों, भ्रष्टाचारों, अराजकता एवं अव्यवस्थ से त्रस्त होकर कु0 मायावती की ब0स0पा0 को पूर्ण बहुमत प्रदान किया। इस चुनाव परिणाम ने उन सभी को आश्चर्यचकित कर दिया जो ब0स0पा0 को अवसरवादी तथा जातिवादी पार्टी कहते थे। इस चुनाव परिणाम पर अमर्यादित टिप्पणियां की। बड़ी संख्या में समीक्षकों ने इसे दलित–ब्राह्मण कार्ड की विजय कहा, लेकिन यह केवल जातिवादी वर्ण व्यवस्थावदी मानसिकता से ओत–प्रोत जनों की टिप्पणी ही कहा जा सकता है। वास्तव में यह बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर के स्वप्नों (स्वतन्त्रता, समानता एवं भ्रातृत्वपूर्ण, भाईचारापूर्ण समाज) को साकार करने की दिशा में कु0 मायावती को उ0प्र0 में किया गया सफल और सच्चा प्रयास मात्र है। हिन्दू समाज की वर्ण व्यवस्था को शीर्ष पर बैठा ब्राह्मण और निम्न पायदान पर स्थित शूद्र को मिलकर वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था को समाप्त करने का असंभव सा दिखने वाला कार्य कु0 मायावती ने संभव कर दिखाया है। वर्ण–व्यवस्था जो अभेद चट्टान की भाँति 2500 वर्षों से अधिक समय से भारत में व्याप्त होकर असमानता, शोषण का पर्याप्त बनी रही, उसमें डायना माइट लगाने का कार्य कु0 मायावती ने किया है। यह एक साधारण कार्य नहीं है अपितु असाधारण कार्य है, जिसे करने में सूफी सन्तों से लेकर भक्ति आन्दोलन के सन्त, पुनर्जागरण के सुधारक, महात्मा फूले, शाहू जी तथा स्वयं डा0 अम्बेडकर असफल रहे थे उसे कु0 मायावती ने सफलता पूर्वक किया है। आगे आने वाली पीढ़ियां, आगे लिखा जाने वाला इतिहास इसे विश्व की महान क्रांति को मानकर श्रद्धा पूर्वक स्मरण करेगा। कु0 मायावती इस अद्भुद क्रांति को पूरे देश में प्रसारित करने का संकल्प ले चुकी हैं। महाराष्ट्र (मुम्बई के शिवाजी पार्क की विशाल रैली) 22 नवम्बर 2007 तथा हिमांचल प्रदेश की रैली इसी दिशा में प्रयास है। जिस समय पूरे देश में यह अद्भुद क्रांति फैलेगी, तो एक नए भारत का निर्माण होगा, समानता होगी, स्वतन्त्रता होगी, भाईचारा होगा, फूट, विषमता के स्थान पर एकता, मधुरता और समरसता होगी।

अध्याय
उन्नीस

अध्याय– उन्नीस

''बाबा साहेब और पं० जवाहर लाल नेहरू के पारस्परिक सम्बन्ध''

अंग्रेजी साहित्य के महाकवि शेक्सपियर का महत्वपूर्ण कथन है कि– कुछ महान पैदा होते हैं और कुछ महान बनते हैं। बाबा साहेब और भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं0 जवाहर लाल नेहरू में से एक महान पैदा हुआ था और दूसरा त्याग, तपस्या, कठोर परिश्रम और सच्चे लगन से महान बना। पं0 जवाहर लाल नेहरू 14 सितम्बर 1889 को अत्यन्त प्रतिष्ठित और सम्मानित नेहरू परिवार में जन्म लिए और बाबा साहेब 14 अप्रैल 1891 में अछूत महार जाति में निर्धन रामजी सकपाल के घर जन्म लिए थे। दोनो मे पारिवारिक, सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमि में जमीन–आसमान का अन्तर था। एक ने धूल से शिखर तक यात्रा की तो दूसरे ने शिखर से शिखर की यात्रा की। एक को भारतीय संविधान का शिल्पी कहा जाता है तो दूसरे को आधुनिक भारत का शिल्पी कहा जाता है। एक स्वतन्त्र भारत का प्रधानमंत्री था तो दूसरा भारत का विधिमंत्री था। एक महत्वपूर्ण प्रश्न प्रबुद्ध वर्ग तथा आम जनता के मन में पैदा होता है कि स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री का अपने मंत्रिमण्डलीय सहयोगी बाबा साहेब के साथ किस प्रकार का सम्बन्ध था? बाबा साहेब ने क्यों पं0 नेहरू के मंत्रिमण्डल में सम्मिलित होना स्वीकार किया? क्या यह बाबा साहेब का स्वार्थ था, या कांग्रेस की चाल थी, या तत्कालीन परिस्थितियों की मांग थी? नेहरू सरकार की आन्तरिक और विदेश नीति पर बाबा साहेब के क्या विचार थे? बाबा साहेब ने पं0 नेहरू के मंत्रिमण्डल से त्याग पत्र क्यों दिया? त्याग पत्र के पश्चात् बाबा साहेब का पं0 नेहरू और उनकी सरकार के प्रति क्या विचार

था? आदि यक्ष प्रश्न भारतीय जनमानस में अनेक शंकाओं, आशंकाओं तथा भ्रांतियों की बीच विद्यमान है।

बाबा साहेब और पं0 नेहरू के तुलनात्मक अध्ययन से ज्ञात होता है कि दोनो की बीच समानता और असमानता दोनो थी। यद्यपि समानता की तुलना में असमानता की खाई अधिक गहरी थी जो इस प्रकार है–

1. बाबा साहेब के एक पुत्री थी जिसका नाम इन्दू था और पं0 जवाहर लाल नेहरू के भी एक पुत्री थी जिसे प्रेम से इन्दू कहते थे।

2. बाबा साहेब की धर्म पत्नी रामाबाई का अल्पकाल में देहान्त हो गया था और पं0 नेहरू की पत्नी कमला नेहरू का भी अल्पकाल में देहान्त हो गया था।

3. पं0 नेहरू के इलाहाबाद स्थित आवास का नाम आनन्द भवन था तो बाबा साहेब ने भी अपने बंबई स्थित आवास का नाम आनन्द भवन रखा।

4. बाबा साहेब तथा जवाहर लाल नेहरू दोनों ने विदेशों में शिक्षा ग्रहण की। बाबा साहेब ने अमेरिकी तथा लंदन में शिक्षा ग्रहण की तो पं0 नेहरू ने लन्दन में शिक्षा ग्रहण की।

5. दोनो ही योरोपीय समाज तथा व्यवस्था से प्रभावित हुए। दोनो में समाजवाद के प्रति गहरी आस्था थी। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने 1936 के कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा था– ''देश के सभी समस्याओं के हल की एक मात्र कुंजी समाजवाद में निहित है।'' बाबा साहेब की भी समाजवाद में अटूट निष्ठा थी, जिसका प्रमाण मार्च 1947 का उनका वह ज्ञापन है जो उन्होंने संविधान सभा की अल्पसंख्यकों और दलित वर्गों से सम्बन्धित सलाहकार समिति के सम्मुख पेश किया था। देश के भावी अर्थव्यवस्था के विषय में अपने विचार व्यक्त करते हुए बाबा साहेब ने लिखा[1]– ''इस योजना के दो विशेष पहलू हैं–

---

[1] फेमिंग ऑफ इण्डियाज कांस्टीट्यूशन, खण्ड–2, पृष्ठ सं0– 90–99

एक यह है कि इसमें आर्थिक जीवन के महत्वपूर्ण क्षेत्रों में राजकीय समाजवाद की स्थापना का काम विधान मंडल की इच्छा पर नहीं छोड़ा गया है। इस राजकीय समाजवाद की स्थापना संविधान के कानून के अन्तर्गत होगी, ताकि विधान मण्डल या कार्यपालिका के किसी कदम से उसमें परिवर्तन न किया जा सके। जिन लोगों की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता पर आस्था है उन्हें तानाशाही से जबर्दस्त एतराज है और वे स्वतन्त्र समाज के शासन तन्त्र के रूप में लोकतन्त्र पर जोर देते रहे हैं.. अतः हमारी समस्या है कि हमारे यहाँ बिना तानाशाही का राजकीय समाजवाद हो, हमारा समाजवाद संसदीय प्रणाली के साथ हो।"

6. दोनो की लोकतन्त्र में गहरी आस्था–निष्ठा थी।

7. दोनो में उच्च कोटि की बौद्धिकता थी। बाबा साहेब तथा पंडित नेहरू दोनो ने बड़ी संख्या में पुस्तकों का लेखन किया। बाबा साहेब के पुस्तकों की सूची बहुत लम्बी थी वहीं पं० नेहरू ने भी डिस्कवरी ऑफ इण्डिया, आटो बायोग्राफी जैसी प्रसिद्ध पुस्तकें लिखीं।

इन कतिपय समानताओ के होते हुए भी दोनो महानुभावों में गहरी असमानता थी–

1. बाबा साहेब अस्पृश्य महार जाति में पैदा हुए थे और उन्होंने आजीवन जाति व्यवस्था, वर्ण व्यवस्था का विरोध किया। पं० नेहरू ब्राह्मण परिवार में जन्म लिए और उनकी वर्ण व्यवस्था में आस्था थी। पट्टाभि सीतारमैया तक ने बताया है कि पं० नेहरू को इस बात पर गर्व है कि वह ब्राह्मण हैं।[1] वर्ण व्यवस्था के विधान के अनुसार उन्होंने 1931 में अपने पिता मोती लाल नेहरू के देहान्त के पश्चात् गंगा किनारे रूढ़िवादी पुरोहितों से कर्मकाण्ड करवाया था।[2] क्या पं० नेहरू 15 अगस्त 1947 को उस यज्ञ में नहीं बैठे थे जो वनारस के ब्राह्मणों ने एक ब्राह्मण के

[1] हिज इनवीटेशन टू जवाहर लाल नेहरू, पृष्ठ सं0– 14, वाई0जी0 कृष्णमूर्ति।
[2] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड– 17, पृष्ठ सं0– 60।

स्वतन्त्र भारत के प्रधानमंत्री बनने के उपलक्ष्य में किया था। क्या उन्होंने वह राजदण्ड ग्रहण नहीं किया था जो उन्हें ब्राह्मणों ने दिया था और वह गंगाजल नहीं पिया था जो वे लेकर आये थे।[1]

2. बाबा साहेब अत्यन्त निर्धन परिवार से सम्बन्धित थे, जिनका जीवन अभाव में बीता था, जबकि पं0 नेहरू एक सम्पन्न और कुलीन परिवार से सम्बन्धित थे, जिन्होंने कभी भी गरीबी, भुखमरी और अभाव नहीं देखा।

3. पं0 नेहरू को राजनीति विरासत में मिली थी, उनके पिता मोती लाल नेहरू 1928 में कांग्रेस के कलकत्ता के वार्षिक अधिवेशन के अध्यक्ष रहे और 1929 के लाहौर अधिवेशन की अध्यक्षता पं0 जवाहर लाल नेहरू ने की। उन्होंने अपने पिता से कार्यभार ग्रहण किया। यह सत्ता का पैतृक हस्तांतरण था। जबकि बाबा साहेब ने अपनी राजनैतिक मंजिल स्वयं तय की, क्योंकि उनके पिता रामजी सकपाल ब्रिटिश सेना में मामूली सूबेदार थे।

4. बाबा साबब का भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और उनके कर्ताधर्ता महात्मा गाँधी से गहरा वैचारिक मतभेद था, जबकि पं0 जवाहर लाल नेहरू कांग्रेस के महान नेता थे, जिन्हें 1941 में महात्मा गाँधी ने अपना राजनैतिक उत्तराधिकारी बनाया। कांग्रेस पं0 नेहरू से है और पं0 नेहरू कांग्रेस से।[2]

इन गहरे असमानताओं के कारण बाबा साहेब और पं0 जवाहर लाल नेहरू के पारस्परिक सम्बन्ध बहुत अच्छे नहीं रहे। वैचारिक समानता और असमानता के गहरे अन्तर्द्वन्द ने पारस्परिक सम्बन्धों को सदा प्रभावित किया। फिर भी बाबा साहेब ने स्वाधीन भारत के प्रथम प्रधानमंत्री बने पं0 जवाहर लाल नेहरू की सरकार में सम्मिलित होना स्वीकार किया। कतिपय समीक्षकों, स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों की दृष्टि में यह बाबा साहेब की अवसरवादी तथा सत्ता लोलुपता थी। निष्पक्ष अध्ययन यह सिद्ध करता है कि

---

[1] बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड– 1, पृष्ठ सं0– 182।
[2] वही, पृष्ठ सं0– 178।

बाबा साहेब का सम्पूर्ण जीवन त्याग और संघर्ष का रहा। दलित, अस्पृश्यों के हितों के सामने अपने निजी जीवन, स्वार्थ या हितों को कभी सोचा ही नहीं। आजादी के समीप आते देख बाबा साहेब ने दलित, शोषित वर्गों के हितों के लिए ही पं0 नेहरू और उनके कांग्रेसी मंत्रिमण्डल में शामिल हुए, लेकिन अपने उद्देश्यों और सिद्धान्तों की कभी उपेक्षा या अनदेखी नहीं की।

स्वाधीनता को समीप आते देख भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस भी अपने कट्टर शत्रु बाबा साहेब के प्रति आकृष्ट होती गई। सरदार पटेल 1945 में जेल से रिहा होने के बाद पूर्णतः बदल गये थे। उन्हें पक्का विश्वास हो गया था कि अब सत्ता हाथ में आने ही वाली है। उन्होंने अब राष्ट्र निर्माण में सबका सहयोग लेने की योजना बनाई। इस सम्बन्ध में उन्होंने बाबा साहेब से 1946 में समझौते की पहल की। महात्मा गाँधी का दृष्टिकोंण इस समझौता वार्ता के प्रति ढुलमुल रहा।[1] महात्मा गाँधी ने 21 जुलाई 1946 को सरदार पटेल को लिखा– यह अच्छी बात है कि तुम भीमराव अम्बेडकर से मिले। वह समझौते के लिए तैयार नहीं होंगे। विधान मण्डल में बीस प्रतिशत सीटे क्यों? मुझे इसमें कुछ गड़बड़ दिखाई देती है। इस पर फिर सोंच लो।[2]

इसके बावजूद भी गाँधी जी नहीं चाहते थे कि यह बातचीत बंद हो लेकिन उन्होंने पटेल से यह भी कहा कि वे मुस्लिम लीग के डर से अम्बेडकर के साथ बातचीत न करें इससे दोनो तरह से नुकसान होगा। पटेल बराबर गाँधी जी से वार्ता करते रहे और अंततः गाँधी जी ने 03 अगस्त 1946 को कहा– "अगर तुम्हें इसमें कोई जोखिम नहीं दिखाई देता है तो मैं इसमें क्या कह सकता हूँ? उनसे समझौता कर लो, मुझे इस विषय में और कुछ नहीं कहना है।"[3]

भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम पर 04 जुलाई 1947 को ब्रिटिश सम्राट के हस्ताक्षर हो गए और घोषणा की गई कि 15 अगस्त 1947 से हिन्दुस्तान के दो

---

[1] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिन्तन, पृष्ठ सं0– 93
[2] वही, पृष्ठ सं0– 93
[3] दि क्लेक्टड वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड– 85, पृष्ठ सं0– 120

भाग कर दिये जायेंगे। 14 अगस्त को पाकिस्तान अधिराज्य और 15 अगस्त को भारतीय अधिराज्य की स्थापना होगी।[1] अब स्थिति में नाटकीय परिवर्तन हो चुका था। बाबा साहेब की संविधान सभा की सदस्यता बंगाल के विभाजन के साथ खतरे में पड़ गई क्योंकि वे संयुक्त बंगाल से चुनकर आये थे। सरटार पटेल ने पुनः बाबा साहेब से वार्ता आरम्भ की। जब श्री एम0आर0 जयकर ने संविधान सभा से त्याग पत्र दिया तो पटेल ने एक मौका देखा और जयकर के स्थान पर बाबा साहेब की उम्मीदवारी का समर्थन किया। उन्होंने बंबई के प्रधानमंत्री खरे को पत्र लिखकर अम्बेडकर को जितवाने को कहा और अंततः बाबा साहेब जीत गए।

पटेल का अगला काम था डा0 अम्बेडकर को मंत्रिमण्डल में सम्मिलित होने के लिए सहमत करना। पं0 जवाहर लाल नेहरू ने स्वयं पहल करके बाबा साहेब से वार्ता की। पं0 नेहरू ने बाबा साहेब को अपने सचिवालय बुलाकर पूँछा– क्या आप स्वतन्त्र भारत के लिए मंत्रिमण्डल में विधिमंत्री पद को स्वीकार करेंगे।[2] बाबा साहेब ने उत्तर दिया कि विधि विभाग में उनके काम करने के लिए कुछ विशेष नहीं होगा।[3] इस पर प्रधानमंत्री नेहरू ने कहा– इसकी चिंता मत करो और बहुत से काम वहाँ होंगे।[4] अंततः देश निर्माण में अपना योगदान देने तथा दलित वर्गों के हितों के लिए बाबा साहेब ने अपनी सहमति दे दी और अब बाबा साहेब नेहरू मंत्रिमण्डल में विधि मंत्री बने। भारत के केन्द्रीय मंत्रिमण्डल में एक अस्पृश्य को यह महत्वपूर्ण पद प्राप्त होना भारतीय इतिहास की अनोखी घटना थी। जिन्होंने अब तक डा0 अम्बेडकर को अंग्रेजों का पिट्ठू कहा था, उन्हीं कांग्रेस विरोधियों ने अब उनका महान कूटनीतिज्ञ के रूप में जयघोष किया।

---

[1] अयोध्या सिंह, भारत का मुक्ति संग्राम, पृष्ठ सं0– 780
[2] कीर धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित्र, पृष्ठ सं0– 376
[3] सरदार पटेल, कारेन्सपोंडेंट्स खण्ड–4, पृ0सं0– 536
[4] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0– 95

बाबा साहेब पं0 जवाहर लाल नेहरू के मंत्रिमण्डल में सम्मिलित तो हुए लेकिन दोनो में कभी मधुर सम्बन्ध नहीं बन सके।[1] समय–समय पर मतभेद प्रकट होते रहे। गृह और विदेश नीति के तमाम मुद्दों पर बाबा साहेब का अपने प्रधानमंत्री से गहरा मतभेद रहा। बाबा साहेब को नेहरू की भावुकता और अस्पष्टता कभी पसन्द नहीं आईं। नेहरू के मार्क्सवाद और अर्थवाद से डा0 अम्बेडकर को कोई सहानुभूति नहीं थी।

बाबा साहेब ने मार्च 1947 में संविधान सभा को ज्ञापन सौंप कर देश के आर्थिक ढांचे में राजकीय समाजवाद को लागू करने की सिफारिश की और इस प्रस्ताव की प्रतिलिपि पं0 जवाहर लाल नेहरू को भेजी। संभवतः बाबा साहेब ने सोंचा कि कांग्रेस के लोगों में नेहरू समाजवादी विचारों को समर्पित हैं और वे इन प्रस्तावों के पक्ष में जोर डालेंगे। उन्होंने अपनी पुस्तक की प्रति 14 मई 1947 को अपने पत्र के साथ नेहरू को भेजी। डा0 अम्बेडकर ने अपने ज्ञापन में सुझाव दिया था कि आर्थिक शोषण को समाप्त करने के लिए मूलभूत उद्योगों का स्वामित्व और प्रबन्ध राज्य के हाथ में हो। बीमा कम्पनियों का राष्ट्रीयकरण हो, सामूहिक खेती कराई जाए। कृषि राज्य का उद्योग बने।

बाबा साहेब की राजकीय और सामूहिक खेती की कल्पना सोवियत संघ की व्यवस्था से मिलती--जुलती है।[2]

नेहरू जी ने 22 मई 1947 को लिखे अपने पत्र में बाबा साहेब के प्रस्ताव के विषय में लिखा-- "सिद्धान्त रूप से हम उन उपबन्धों को संविधान में शामिल कर सकते हैं, यद्यपि वे मूलभूत अधिकारों की पारम्परिक संकल्पना के अनुरूप नहीं है। आपका यह कहना भी ठीक है कि पुरानी संकल्पना को व्यापक बनाकर आर्थिक लोकतंत्र को इसमें शामिल किया जाना चाहिए। हमने इस लक्ष्य को उद्देश्यों से सम्बन्धित प्रस्तावों में कुछ अस्पष्ट रूप में ही सही, अपने समक्ष रखा भी है लेकिन मुझे लगता है कि संविधान में विशेषकर मूलभूत अधिकारों के भाग में आर्थिक ढांचे का स्वरूप ठीक

---

[1] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0– 97।
[2] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0– 106

निर्धारित करना उचित नहीं होगा। आखिरकार यह व्यवहारिक मसला है और हमें सोंचना है कि किस तरह जल्दी से जल्दी हम इस उद्देश्य को प्राप्त कर सकते हैं।''[1]

पं0 जवाहर लाल नेहरू ने अपने पत्र में आगे लिखा– इस समय हमारा सबसे पहला लक्ष्य है– स्थिर और मजबूत सरकार जो गडबड़ी पैदा करने वाले तत्वों का सामना कर सके और देश की प्रगतिशील शक्तियों को आगे बढ़ाये। अगर हम इन मूलभूत आर्थिक प्रश्नों को संविधान – निर्माण की प्रक्रिया के दौरान सुलझाने लगे तो संभव है कि गड़बड़ी फैलाने वाले तत्वों के ही हाथ मजबूत करें और हमें कुछ भी हासिल न हो। समय का बहुत महत्व है और हमें इस समय इन समस्याओं में ही नहीं उलझना चाहिए।''[2]

स्वतन्त्रता के पश्चात् देश के एकीकरण का महत्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित हुआ। 27 जून 1947 को सरदार पटेल ने नवगठित रियासत विभाग का अतिरिक्त कार्यभार संभाला और वी0पी0 मेनन इसके सचिव बने।[3] बाबा साहेब ने भी सभी रियासतों से अपील की कि वे भारतीय संघ में सम्मिलित हो जाएं। हैदराबाद, जूनागढ़ तथा कश्मीर छोंड़कर सभी रियासतें भारतीय संघ में सम्मिलित हो गईं। अंततः ये रियासतें भी सम्मिलित हो गईं। 26 अक्टूबर 1947 को कश्मीर के महाराज हरी सिंह ने भारत में विलय पर हस्ताक्षर किया। जम्मू कश्मीर पर पं0 जवाहर लाल नेहरू की नीति से बाबा साहेब असहमत थे।

बाबा साहेब नेहरू सरकार की भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की नीति से भी असहमत थे। उन्होंने थोट्स ऑन पाकिस्तान नामक अपनी पुस्तक में देश को 20 भाषायी टुकड़ों में बाँटने की कांग्रेसी योजना पर बहुत व्यंग किया है।[4] बाद में

---

[1] जवाहर लाल नेहरू, सेलेक्टिड वर्क्स, दूसरी किस्त, खण्ड–2, पृष्ठ– 196–198

[2] जवाहरलाल नेहरू सेलेक्टिड वर्क्स, दूसरो किस्त, खण्ड–2, पृष्ठ सं0– 196–198

[3] प्रो0 विपिन चन्द्र, आजादी के बाद का भारत, पृष्ठ सं0– 95

[4] डा0 अम्बेडकर, पाकिस्तान एण्ड पार्टिशन ऑफ इण्डिया, द्वितीय संस्मरण, पृष्ठ सं0–68, VI ।

बाबा साहेब के विचारों में परिवर्तन आया और 1955 तक उन्होंने यह स्वीकार किया कि भाषायी राज्य अनिवार्य हैं, जिसके लिए दो कारण उत्तरदायी हैं–

1. लोकतन्त्र के कार्य को आसान बनाना।
2. सांस्कृतिक तथा भाषायी तनावों को दूर करना।

बाबा साहेब को पं0 जवाहरलाल नेहरू की सरकार द्वारा अनुसूचित जाति के लिए किये गये उपबन्धों से भी पूर्ण सन्तोष नहीं था। उन्हें इस बात का अफसोस था कि पिछड़े वर्ग के लिए वे कुछ ठोस सुरक्षा उपाय नहीं कर पाये।[1] उन्हें इस बात का दुःख था कि नेहरू सरकार ने पिछड़े वर्ग के लिए आयो नियुक्त करने की आवश्यकता नहीं समझी। काका कालेकर आयोग काफी विलम्ब से नियुक्त किया गया और उसकी रिपोर्ट पर सरकार ने अमल नहीं किया।

डा0 अम्बेडकर ने पं0 नेहरू के मुस्लिम प्रेम को कभी पसन्द नहीं किया। इस विषय पर अपना विचार बाबा साहेब ने 1952 के प्रथम आम चुनाव की पूर्व सन्ध्या पर 27 अक्टूबर 1952 को जालंधर शहर में दिये गए भाषण में विस्तार से व्यक्त किया– "पं0 नेहरू ने अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के प्रति कभी कोई रुचि नहीं दिखाइ है। पिछले 20 वर्षों से वे भारतीय राजनीति में अग्रणीय हैं। उन्होंने दो हजार से कम सभाओं को संबोधित नहीं किया होगा। क्या उन्होंने कभी इस बात का जिक्र किया है कि हरिजनों पर किस प्रकार के अन्याय हो रहे हैं? जहाँ तक मुझे स्मरण है कभी नहीं। वे मुस्लिम उन्माद से पीड़ित हैं। वे इस व्याधि से ग्रसित हैं। मुसलमानों पर कोई वास्तविक या काल्पनिक अन्याय को जानकर वे जल्दी विचलित हो जाते हैं। वे भारत के मुसलमानों की रक्षा करने को, सब कुछ करने को तैयार रहेंगे।....... अनुसूचित जाति, जनजाति, अपराधी जनजाति, पिछड़ी जाति के अधिकारों की रक्षा या उनके निश्चित कल्याण के लिए क्या कभी पं0 नेहरू ने विचार किया?[2]"

---

[1] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0– 99।
[2] भगवानदास, डा0 अम्बेडकर के विचार, पृष्ठ सं0– 97।

विभाजन के पश्चात् तत्काल पाकिस्तान सरकार ने दलितों के भारत जाने पर रोक लगा दी, क्योंकि उनके जाने पर सफाई आदि कार्य कौन करेगा? बाबा साहेब ने पं0 नेहरू को पत्र लिखकर हस्तक्षेप की मांग की, परन्तु पं0 नेहरू ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया।

बाबा साहेब और पं0 नेहरू के ये मतभेद कभी–कभी बहुत तीखे रूप में सामने आते थे। 25 अप्रैल 1948 को बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने अनुसूचित जाति संघ के लखनऊ अधिवेशन में एक महत्वपूर्ण भाषण दिया जिसने उनके और पं0 नेहरू के सम्बन्धों में भूचाल सा ला दिया। इस भाषण में बाबा साहेब ने कहा था– "राजनैतिक सत्ता ही समाज की उन्नति की कुंजी है। इसीलिए दलित समाज अपना संगठन निर्मित करे और मजबूत राजनैतिक दल स्थापित कर राजनैतिक सत्ता पर काबिज हो जाए...... मैं केन्द्रीय सरकार से जा मिला हूँ, कांग्रेस से नहीं..... एक दो वर्षों में उस दल का विनाश हो जए तो मुझे कोई आश्चर्य नहीं होगा।......"[1]

इस भाषण से तुफान खड़ा हो गया। पं0 नेहरू ने तत्काल बाबा साहेब को पत्र लिखा कि उन्हें उनके भाषण से आश्चर्य एवं दुःख हुआ है। पं0 नेहरू ने लिखा– "यदि मंत्री इस तरह की भावना रखें और बात करें तो मंत्रिमण्डल का सामूहिक उत्तरदायित्व कहाँ रह जायेगा। प्रधानमंत्री को अपनी दुकानबन्द कर लेनी पड़ेगी..... इस प्रकार तो सहयोग करना और मिलकर काम करना संभव नहीं।[2] सरदार पटेल ने पं0 नेहरू से कहा– मैं नहीं समझता, अम्बेडकर इस भाषण के बाद मंत्रिमण्डल में कैसे रह सकते हैं लेकिन पटेल जल्दबाजी में नहीं थे और वे चाहते थे कि डा0 अम्बेडकर सरकार में रहें। फिर भी एक कड़ा पत्र लिख कर बाबा साहेब से स्पष्टीकरण मांगा गया। 30 अप्रैल 1948 को बाबा साहेब ने अपना स्पटीकरण दिया। उन्होंने सम्पूर्ण प्रसंग को बताते हुए अपनी बात को स्पष्ट किया। उन्होंने कहा– "मैने वह वक्तव्य नहीं दिया जो मेरा बताया जाता है। अखबारों ने शब्दों को तोड़ा–मरोड़ा है और प्रसंग से काट कर प्रस्तुत

---

[1] मधु लिमये, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृष्ठ सं0– 85।
[2] सरदार पटेल, कारेस्पोंडेट्स, खण्ड–5, पृष्ठ सं0 328, 329।

किया है। समाचार पत्र मेरे साथ कभी न्यायपूर्ण वर्ताव नहीं करते।"[1] सम्पूर्ण प्रकरण इस स्पष्टीकरण के साथ समाप्त हो गया। लेकिन बाबा साहेब ने दिल्ली से एक पत्र लिखकर विस्तार से प्रकाश डाला– "मैं मंत्रिमण्डल में सहयोगी बना, क्योंकि मंत्रिमण्डल में शामिल होने के लिए मुझे जो आमंत्रण दिया गया था, वह बिना शर्त था। मैं मंत्रिमण्डल में इस विचा से शामिल हुआ कि मंत्रिमण्डल में प्रवेश कर मैं दलितों का कुछ कल्याण कर सकूँगा। साथ ही मैं विरोध के लिए विरोध के सिद्धान्त में आस्था नहीं रखता।[2]

इस घटना के बाद कोई बड़ी घटना नहीं हुई और बाबा साहेब पूर्ण निष्ठा और ईमानदारी से अपने दायित्यों का निर्वहन करते रहे। पं0 नेहरू भी अपने मंत्रिमण्डल का 'रत्न' कहकर डा0 अम्बेडकर का परिचय करवाते थे। लेकिन दोनो के सम्बन्धों में मधुरता नहीं आ सकी। डा0 अम्बेडकर को संविधान के निर्माण के बाद लगने लगा कि उनकी शक्ति और प्रतिभा का पूरा उपयोग नहीं हो पा रहा है। प्रधानमंत्री नेहरू ने उन्हें कानून विभाग के अतिरिक्त योजना विभाग का काम देने का वादा किया था, किन्तु नेहरू ने अपना वादा नहीं निभाया। बाबा साहेब को यह भी शिकायत थी कि उन्हें मंत्रिमण्डल की प्रमुख उप समितियों से अलग रखा गया है। बाबा साहेब को सबसे अधिक पीड़ा इस बात से रही कि सामाजिक सुधारों तथा हिन्दू कानूनों के संहिता के प्रति पं0 नेहरू का रवैया ढुल मुल का रहा।

हिन्दू कोड बिल

हिन्दू कोड बिल देश की राजनीति को झकझोर देने वाला मुद्दा था। हिन्दू विधि में सुधार कर उसको एक संहिता के अन्तर्गत लाने का कार्य विगत कई वर्षों से चल रहा था। ब्रिटिश सरकार ने 1941 में सर बी0एन0 राव की अध्यक्षता में हिन्दू कोड बिल तैयार करने के लिए एक समिति का गठन किया। समिति ने पूरे देश का दौरा

---

[1] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं07 97।
[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृष्ठ सं0– 385–386।

करके हिन्दू कोड बिल को तैयार किया। जिसे 1946 में केन्द्रीय विधि मण्डल में विचार के लिए रखा गया। कतिपय संशोधन का सुझाव देकर बिल वापस कर दिया गया।

विधिमंत्री के रूप में बाबा साहेब ने पं0 जवाहर लाल नेहरू की सलाह से इस बिल का काम अपने हाथ में लिया। उन्होंने कठोर परीश्रम करके इस बिल को तैयार किया, जिसमें कुल 9 भाग तथा 139 धारायें थीं। इस बिल का मुख्य उद्देश्य– हिन्दू परम्परा पर आधारित सामाजिक विषमता, भेदभाव और क्रूरतापूर्ण मान्यताओं, रीतियों एवं नियमों को नष्ट करना था। इसमें विवाह, विवाह विच्छेद, तलाक, दत्तक, सम्पत्ति में बेटी का समान अधिकार और उत्तराधिकारी नियुक्त करने का अधिकार प्रदान किया गया था। इस बिल को 21 अगस्त 1948 के राजपत्र में प्रकाशित किया गया।

हिन्दू कोड बिल को 24 फरवरी 1949 को बाबा साहेब ने केन्द्रीय विधान मण्डल के सम्मुख रखा। बाबा साहेब ने सदन को इस विधेयक के विभिन्न पहलुओं से अवगत कराते हुए कहा– आपको हिन्दू आचार, हिन्दू संस्कृति और हिन्दू समाज को स्थायी बनाना है तो यहाँ सुधार करना आवश्यक है। वहाँ सुधार करने में आनाकानी न करें। हिन्दू धर्म का जो हिस्सा पुराना हो चुका है, उसमें सुधार करना आवश्यक है।

बाबा साहेब ने हिन्दू कोड बिल को हिन्दू धर्मशास्त्रों के अनुकूल बताते हुए कहा कि– "जहाँ तक हिन्दू कोड बिल के आधार का सम्बन्ध है वह हिन्दू धर्म शास्त्रों के अनुसार ही बनाया गया है। स्त्री के सम्पत्ति का अधिकार जीमूतवाहन के 'दायभाग' के अनुसार है। तलाक का आधार पाराशर स्मृति है..... जो हिन्दू अपने पुराने रास्ते पर चलना चाहते हैं, उनको यह बिल ऐसा करने से नहीं रोकता तथा जो हिन्दू न्यायी जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, यह उनका मार्ग खोलता है।"

विधेयक पेश होते ही उसका जबरदस्त विरोध आरम्भ हुआ। एक ओर सनातनी पुरातनवादी, रूढ़िवादी लोग थे तो दूसरी ओर उदारवादी प्रगतिवादी लोग थे। इस विधेयक का विरोध करने वालों में डा0 राजेन्द्र प्रसाद, सरदार बल्लभ भाई पटेल तथा पटाभि सीतारमैय्या जैसे शक्तिशाली लोग थे जिनके आगे पं0 नेहरू हर स्तर पर

झुक जाते थे। इसके विरोध में डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने पं0 नेहरू को पत्र लिखा[1]-- "प्रिय जवाहर लाल जी, इस बिल से यद्यपि काफी लाभ है, फिर भी मेरा ऐसा विचार है कि बिल के दूरगामी परिणामों के बारे में लोगों में मतभेद है। इसलिए विधिमंडल के रूप में काम कर रहे संविधान सभा को इस बिल को पास नहीं कराना चाहिए। किसी भी परिस्थिति में इस बिल का समर्थन नहीं करना है तथा पास करने की जल्दी नहीं करना है। बिल के द्वितीय वाचन में जल्दबाजी हुई है, इस सन्दर्भ में मैंने प्रतिक्रिया व्यक्त की है। मेरा अनुरोध है कि सब बातों पर ध्यान देकर विचार कीजिए।"

इन विरोधों के बावजूद पं0 नेहरू विधेयक को पास कराना चाहते थे। दिसम्बर 1949 में उन्होंने स्पष्ट शब्दों में कहा था– कि हिन्दू कोड बिल का विधान मण्डल में पारित होना या न होना सरकार विश्वास या अविश्वास प्रस्ताव का मुद्दा बन सकता है, ऐसा सरकार का विचार है। इस मुद्दे पर या तो सरकार सत्ता में रहेगी या सत्तापद छोड देगी। इस वक्तव्य से विरोधी गुट में खलबली मच गई, लेकिन डा0 राजेन्द्र प्रसाद झुकने को तैयार नहीं थे तथा और जोरदार ढंग से उन्होंने विधेयक का विरोध आरम्भ किया। शनैः शनैः उनके समर्थकों की संख्या बढ़ती गई। गोपाल स्वामी आयंगार ने पं0 नेहरू को इस तरह का संकेत दिया कि ये ज्यादा जिद करेंगे तो उन्हें प्रधानमंत्री पद छोंड़ना पड़ सकता है।[2]

इस बिल के प्रमुख समर्थकों में कृष्ण चन्द्र शर्मा, सीताराम राजू, अल्लादि कृष्ण स्वामी अय्यर, कमला चौधरी, गोकुल भाई भट्ट, प्रो0 के0टी0शाह आदि शामिल थे। 1951 में इस बिल को पुनः चर्चा के लिए रखा गया। इसका पुनः जोरदार विरोध हुआ। सदन के बाहर सारे देश में सनातनियों ने विरोध तीव्र किया। विधेयक पर चर्चा करते हुए बाबा साहेब ने 20 सितम्बर 1951 को लोकसभा में कहा7 "रामायण काल में यदि हिन्दू कोड जैसा कानून होता तो पुरुषोत्तम राम ने सीता को कभी घर से बाहर नहीं किया होता"। इस वक्तव्य से सदन में जोरदार हंगामा हुआ। बाद में डा0 भीमराव

---

[1] हिन्दू लॉ कमेटी रिपोर्ट, खण्ड–1, पृष्ठ सं0– 283

[2] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिन्तन, पृष्ठ सं0– 100

अम्बेडकर ने इसके लिए खेद प्रकट किया। अंत में 26 सितम्बर 1951 को विरोधियों के सम्मुख घुटने टेकते हुए पं0 जवाहर लाल नेहरू ने यह घोषणा की बिल इस सदन से वापस लिया जाता है।

बाबा साहेब को पुत्र निधन से अधिक दुःख हिन्दू कोड बिल की मृत्यु पर हुआ। वे बोले– (It was killed and burried unwept and unsung) बिना किसी आक्रंदन और अश्रुसिंचन के हिन्दू कोड बिल की हत्या की गई और दफना दिया गया।[1] बाबा साहेब ने यह भी कहा– मैने यह विचार ग्रहण किया कि प्रधानमंत्री में जैसी कर्तव्यनिष्ठा थी, परन्तु हिन्दू कोड बिल के पास करवाने के लिए उनमें वैसी तत्परता व दृढसंकल्प न था।[2] बाबा साहेब ने सोंचा कि कांग्रेस ने राजनैतिक आजादी के लिए लड़ाई लड़ी थी और उसमें कामयाबी मिल गई। अब उसमें एशो–आराम और सत्ता में बने रहने के लिए संघर्ष–षड़यन्त्र चल रहे हैं। उसमें सामाजिक संघर्ष करने की शक्ति चुकती जा रही है। मंत्री पद पर रहने का अब कोई अर्थ भी नहीं था। वह कांग्रेस में थे और कांग्रेस ही उनका विरोध कर रही थी। यद्यपि पं0 नेहरू ने उनके अथक परिश्रम तथा क्षमताओं की प्रशंसा की थी, परन्तु वह उनको समर्थन, सहयोग न दे सके। बाबा साहेब ने दुःखी मन से 27 सितम्बर 1951 को मंत्री पद से त्याग पत्र दे दिया। बाबा साहेब ने अपने त्याग पत्र के बारे में जो वक्तव्य दिया वह इस प्रकार था[3]– "मंत्रिमण्डल से बाहर निकलने की कई दिनों से मेरी हार्दिक इच्छा थी। इस इच्छा निर्मित को एक के बाद कई प्रसंगों ने जन्म दिया। प्रथमता मैं कारणों की चर्चा करूँगा। ये निजीकरण मरे त्योगपत्र के लिए सर्वथा करणीभूत नहीं है।...... प्रधानमंत्री ने मंत्री पद का प्रस्ताव मेरे सामने रखा.... और कहा था योजना विभाग शीघ्र ही बनने वाला है, यह विभाग आपको दिया जायेगा....., योजना विभाग मेरे बजाय किसी अन्य को दे दिया गया... विदेश व्यवहार समिति आदि मुख्य समितियों का निर्माण प्रधानमंत्री करता है, ऐसी किसी समिति

---

[1] दस स्पोकेन अम्बेडकर, खण्ड–1, पृष्ठ सं0– 108
[2] डा0 राजेन्द्र मोहन भटनागर, डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृष्ठ सं0– 116
[3] डा0 बाबा साहेब आंवेडकरांची पत्रे, से0 शंकरा राव खरात, पृष्ठ सं0– 305

पर भी मेरा मनोनयन नहीं हुआ था... केवल हिन्दू कोड बिल के लिए मैं पद पर बना रहा... अब मंत्रिमण्डल में बना रहना संभव नहीं है।"

बाबा साहेब का त्याग पत्र सम्पूर्ण देश में अभूतपूर्व चर्चा का विषय बना। समाचार पत्रों ने भी अधिकांशता उनकी प्रशंसा की थी। टाइम्स ऑफ इण्डिया ने अपने अग्रलेख में कहा– "यद्यपि मनु का मुकुट अम्बेडकर को नहीं मिला फिर भी मंत्रिमण्डल में काफी ठोस कार्य करके अम्बेडकर बाहर जा रहे हैं। पहले से ही मंत्रिमग्डल में बुद्धिमान लोगों की कमी है और अम्बेडकर जैसा पैनी दृष्टि वाला पंडित और सार्वजनिक कार्य में उत्कृष्ट कार्य करने वाले मंत्री के जाने से मंत्रिमण्डल का तेज सीमित हो गया है।" बंबई के नेशनल स्टैंडर्ड ने लिखा– "नियोजन, अर्थ या व्यापार और उद्योग धंध विभागों का मंत्रिपद स्वीकार करने में अम्बेडकर जैसे लायक और गुण सम्पन्न व्यक्ति इ देश में बहुत कम हैं। सरकार ने जो कुछ गवाया है, वह अम्बेडकर के विरोधी दल के विधायक सहयोग से फिर प्राप्त होगा, यह देश की आशा है।" बंबई के ही फ्री प्रेस जर्नल ने लिखा– "अम्बडकर जैसे ख्याति प्राप्त मंत्री को इतने दुःखी हृदय से मंत्रिमण्डल से बाहर निकलना पड़ा।

मंत्रिमण्डल से त्यागपत्र देने के बाद बाबा साहेब को अपने भावी कार्यक्रम के विषय में निश्चय करना था। जनवरी 1952 में स्वतन्त्र भारत में लोक सभा और विधान सभाओं के लिए प्रथम आम चुनाव होने थे, जिसके लिए व्यापक तैयारी बाबा साहेब को करनी थी। साम्यवादियों के साथ उनके मूलभूत मतभेद थे, कांग्रेस से नाता तोड़ ही लिया था, अब एक ही पार्टी थी जिसके साथ अखिल भारतीय स्तर पर चुनाव समझौता कर सकते थे, वह थी समाजवादी पार्टी।[1] 07 नवम्बर 1951 को बाबा साहेब पटना में समाजवादी नेता जयप्रकाश से मिले, अंत में दोनो पार्टियों अनुसूचित जाति संघ तथा समाजवादी पार्टी में समझौता हो गया।

---

[1] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिन्तन, पृष्ठ सं0– 102

बाबा साहेब ने 27 अक्टूबर 1951 को पंजाब के जालंधर शहर में शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन (अनुसूचित जाति संघ) के अधिवेशन में भाषण दिया।[1] "पंडित नेहरू यह कहते नहीं थकते कि कांग्रेस ने अछूतों के लिए बहुत कुछ किया है... पं0 नेहरू ने कुछ नहीं किया। पाकिस्तान में अछूतों की मारकाट के बारे में कांग्रेसी हरिजनों ने उंगली तक नहीं उठाई। अकेले ही मैंने जो कुछ कर सका किया।"

बाबा साहेब ने 29 अक्टूबर 1951 को पटियाला में भाषण दिया– "देश में भ्रष्टाचार, रिश्वत और परिवार पोषण बुरी कुरीतियों का दौर चल रहा है। कांग्रेस ने इन कुरीतियों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। लोग पं0 नेहरू से अपेक्षा रखते हैं कि वे भ्रष्टाचार दूर करेंगे किन्तु दिल्ली अधिवेशन में पं0 नेहरू ने कहा कि भारत से ज्यादा भ्रष्टाचार दूसरे देशों में है।"

25 नवम्बर 1951 को बंबई के शिवाजी पार्क में दो लाख लोगों के मध्य भाषण करते हुए बाबा साहेब ने कहा कि पंडित नेहरू को कांग्रेस पार्टी को छोड़कर समाजवादी पार्टी में आना चाहिए। पं0 नेहरू ने अपने चुनावी भाषणों में कहा– "अम्बेडकर मंत्रिमण्डल में लगभग 4 वर्ष रहे, फिर भी उन्होंने उस समय विदेश नीति का कभी विरोध नहीं किया, यह बड़ी चमत्कारी और आश्चर्य की बात है।"[2]

जनवरी 1952 में सम्पन्न हुए प्रथम आम चुनाव में बाबा साहेब की शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन तथा उसकी सहयोगी समाजवादी पार्टी को भारी पराजय का सामना करना पड़ा। बाबा साहेब स्वयं कांग्रेस उम्मीदवार नारायणराव काजरोलकर से बंबई लोक सभा सीट से पराजित हो गये। बाबा साहेब को 123576 मत तथा काजरोलकर को 137950 मत मिले थे। बाबा साहेब की पराजय से कांग्रेसियों को छोड़कर सारा देश हतप्रभ हो गया। इस पराजय के प्रमुख कारण कांग्रेस की धोखाधड़ी तथा कम्युनिस्ट लोग थे। बाबा साहेब तथा उनके लाखों–कराड़ों अनुयायियों को इस पराजय से गहरा सदमा लगा था।

---

[1] ले0 एल0आर0वाली, डा0 अम्बेडकर जीवन और मिशन, पृष्ठ सं0– 308
[2] मधुलिमये, डा0 साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृष्ठ सं0– 416–417

बाबा साहेब कभी पराजय स्वीकार करने वाले व्यक्ति नहीं थे और मार्च 1952 में ही बंबई विधान सभा द्वारा राज्य सभा के लिए चुन लिए गये। मई 1952 में राज्य सभा का अधिवेशन आरम्भ हुआ। आम बजट पर चर्चा करते हुए बाबा साहेब ने नेहरू सरकार की जोरदार आलोचना की और कहा[1]– सुरक्षा विभाग का बजट देश की उन्नति में एक बड़ी बाधा है। देश के कल्याण के लिए जो पैसा इस्तेमाल किया जा सकता है, वह फौज खा रही है। यदि सुरखा बजट में 50 प्रतिशत कटौती की जाए तो देश का काफी कल्याण होगा। अगर भारत की विदेश नीति का उद्देश्य सारे विश्व में शांति और सुलह रखना है तो भारत के ऐसे कौन दुश्मन हैं जिसके जिनके विरुद्ध इतनी बड़ी फौज भारत को रखनी पड़े।

02 सितम्बर 1953 को राज्य सभा में आन्ध्र राज्य विधेयक पर चर्चा करते हुए कहा कि सरकार की भाषाई नीति देश की एकता के लिए घातक है। 18 सितम्बर 1953 को राज्य सभा में सम्पत्ति कर विषयक विधेयक पर विचार व्यक्त करते हुए बाबा साहेब ने कहा– सम्पत्ति कर लेने में सरकार को जितना खर्चा आयेगा उतनी आय नहीं होगी। इसलिए भारत को योरप की तरह अंधानुकरण नहीं करना चाहिए।

सितम्बर 1953 में ही नेहरू सरकार ने छआछूत अपराध कानून पेश किया। मार्च 1954 में इसे राज्य सभा में पेश किया गया और बाबा साहेब ने कुछ महत्वपूर्ण सुझाव दिए। अंत में यह पारित किया गया।

मार्च 1954 में लोक सभा उप चुनाव हुए जिसमें बाबा साहेब नागपुर से खड़े हुए। चुनावी भाषण में बाबा साहेब ने नेहरू पर जोरदार हमला किया और कहा– "नेहरू के विदेश नीति की वजह से भारत मित्र विहीन राष्ट्र बन गया है। नेहरू ने कश्मीर समस्या के बारे में गड़बड़ी कर रखी है। उन्होंने रिश्वतखोरों को अपने पास रखा है....।[2] मई 1954 के पहले सप्ताह में उप चुनाव हुए जिसमें बाबा साहेब को अपने प्रतिद्वन्दी कांग्रेसी उम्मीदवार भाऊराव बोरकर से 8331 मतों से पराजित होना पड़ा। उस

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृष्ठ सं0– 419

[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृष्ठ सं0– 430

समय बाबा साहेब रंगून में थे। जहाँ एक समाचार पत्र से उन्हें पराजय का समचार मिला।

भारत लौट कर बाबा साहेब अगस्त 1954 में राज्य सभा के शुरू हुए अधिवेशन में शामिल हुए। उन्होंने 26 अगस्त 1954 को नेहरू सरकार की विदेश नीति पर ऐतिहासिक भाषण दिया।[1] हमारी विदेश नीति पर विदेशी लोग व्यंग करते हैं। 'लो' नामक कार्टूनिस्ट ने यूरोपियन विदेश मंत्रियों को नाचते गात और यह कहते हुए बताया कि हमें बिना किसी सिद्धान्त के शांति चाहिए। हमारे प्रधानमंत्री नेहरू के भी कुछ सिद्धान्त हैं जिसके अनुसार वे कार्य करते हैं। नेहरू की विदेश नीति 3 सिद्धान्तों पर आधारित है–

1. शांति, 2. साम्यवाद, 3. लोकतंत्र।

इसमें सहजीवन और सीटो सन्धि का विरोध अनुस्यूत है। उन्होंने आगे कहा कि रूस ने योरप के दस राष्ट्र हड़प लिए हैं तथा चीन, मंचूरिया और कोरिया के प्रदेश रूस में जोड डाले हैं..... रूस स्वतन्त्रता दिन का प्रलोभन दिखाकर लोगों को निगल रहा है.... आप इसे ध्यान में रखिए कि भविष्य में रूस भारत का विरोधी भी बन सकता है।..... साम्यवाद जंगल में लगी उस आग के समान है जो मार्ग में आने वाले सभी को स्वाहा करती है।

बाबा साहेब ने आगे कहा– "किसी भी देश की विदेशनीति में उसी भौगोलिकता का महत्व होता है। प्रादेशिक भूगोल की आवश्यकता के अनुसार राष्ट्र की विदेशनीति में परिवर्तन होता है। जो इंग्लैण्ड के लिए हितकारी होगा, वह भारत के लिए नहीं हो सकता। इसलिए सहा अस्तित्व का सिद्धान्त प्रधानमंत्री ने पूर्णतः विचार किये बिना स्वीकार किया है, ऐसा मुझे लगता है।"

बाबा साहेब ने सदन में बताया कि रूस और चीन को आक्रमण कर अन्य देशों को गुलाम नहीं बनाना चाहिए, इसलिए सीटों संगठन उन पर प्रतिबन्ध लगा रहा

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृष्ठ सं0– 431

है। सीटो संगठन अन्य राष्ट्रों की संप्रभुता के लिए है। नेहरू और रूस के बीच मित्रता और अमेरिकी संघ के बीच मनमुटाव के कारण भारत सीटो का विरोध कर रहा है...। प्रधानमंत्री नेहरू ने चीन का ल्हासा पर कब्जा करने की छूट देकर उसकी पूरी तरह मदद की है और वह अपनी सीमाऐं भारत की सीमा तक बढ़ा रहा है। इन हालातों को देखते हुए यह कहना गलत नहीं होगा कि जल्दी न सही एक दिन भारत पर अवश्यक आक्रमण होगा। यह आक्रमण उन लोगों के द्वारा किया जायेगा जो आक्रमण करने के आदी हैं।

बाबा साहेब ने आगे कहा– "प्रधानमंत्री को माओ द्वारा मान्य किये गए पंचशील सिद्धान्त एवं तिव्वत पर अनाक्रमण संधि में पंचशील सिद्धान्त का उपयोग होने के कारण बेखबर नहीं रहना चाहिए।

बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने नेहरू सरकार की गोवा नीति की भी आलोचना की और कहा कि यदि गोवा का भारत से जुड़ना संभव न हो तो उसे खरीदना चाहिए, नहीं तो संधि से प्राप्त करें। वैसे भी भारत ने यदि गोवा पर पुलिस कार्यवाही की हो तो भी गोवा मिल सकता है। किन्तु नेहरू जी ने पुर्तगालियों के विरुद्ध केवल आक्रंदन किया है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब को नेहरू की विदेश नीति से घोर असहमति थी और वे उसे देश के लिए खतरनाक मानते थे। चीन के सम्बन्ध में बाबा साहेब की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई जब 1962 में चीन ने पंचशील की तंद्रा में सोए भारत पर आक्रमण कर दिया।

06 दिसम्बर 1956 को बाबा साहेब के महापरि निर्वाण के बाद अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए जवाहर लाल नेहरू ने कहा था[1]– "डा0 अम्बेडकर हिन्दू समाज के प्रत्येक विषमता या उत्पीड़न के विरोधी के रूप में सदैव याद किये जायेंगे।

---

[1] हिमांशु राय, युग पुरूष, बाबा साहेब डॉ0 भीमराव अम्बेडकर संघर्ष गाथा पृ0सं0–275

उन्होंने इन विषमताओं के प्रति लोगों में चेतना जागृति का। सच तो यह है कि उन्होंने हर उस बात का विरोध किया जिसका विरोध होना चाहिए था।"

अध्याय
बीस

अध्याय– बीस

''बाबा साहेब का बौद्ध धर्म ग्रहण करना और महापरिनिर्वाण''

धर्म शब्द संस्कृत भाषा के 'धृ' धातु से उत्पन्न होता है, जिसका अर्थ है– धारण करना। महाभारत में धर्म की परिभाषा इस प्रकार दी गई है– धर्मो धर्यतिः सः धर्मः। अर्थात जिसमें धारण करने की शक्ति हो वह धर्म है। अब समता, बंधुता, स्वतन्त्रता, ईमानदारी, उदारता, सदाचरण आदि समस्त नैतिक मापदण्डों को धर्म अपने में धारण करता हे। आरम्भ में ब्राह्मण या वैदिक धर्म में ये सभी गुण विद्यमान थे, लेकिन शनैः–शनैः विलुप्त हो गये और हिन्दु धर्म असमानता, अबन्धुता, परतन्त्रता, अनुदारता आदि की नींव पर खड़ा हुआ। जो हिन्दू धर्म वसुधैव कुटेम्बकं तथा कण–कण में ईश्वर का वास देखता था, वही अब अपने ही सहधर्मियों कि परछाई मात्र से अपवित्र हो जाता था। अपने ही सहधर्मियों के साथ जानवरों से भी अधिक निकृष्ट अमानवीय व्यवहार करता था और हजारों वर्षों से उन्हें अभिशप्त जीवन व्यतीत करने के लिए विवश कर दिया था।

बाबा साहेब का जन्म हिन्दू धर्म की अछूत समझी जाने वाली महार जाति में हुआ था और शैशवकाल से ही उन्हें अस्पृश्यता का कटु अनुभव हुआ था। धर्म में उनकी कार्ल मार्क्स के विपरीत दृढ़ आस्था थी। कार्ल मार्क्स धर्म को अफीम मानता है

और व्यक्ति के लिए निरर्थक, वहीं बाबा साहेब धर्म को व्यक्ति और समाज दोने के लिए आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य मानते थे। बाबा साहेब ऐसे धर्म के समर्थक थे जो

अन्याय, अत्याचार पर नहीं अपितु स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व पर आधारित हो, जिसमें ये गुण न हो उस धर्म का परित्याग कर देना चाहिए। हिन्दू धर्म में अब इन गुणों का नितान्त अभाव था।

बाबा साहेब ने हजारों वर्ष से चली आ रही अस्पृश्यता के विरुद्ध और अस्पृश्य वर्ग के मानवीय अधिकारों के लिए एक लम्बा संघर्ष किया और यही उनके जीवन का एक मात्र उद्देश्य भी रहा। बाबा साहेब ने महाड सत्याग्रह (1924) कालाराम मन्दिर प्रवेश आन्दोलन के साथ ही अस्पृश्यों के अधिकारों के लिए निरंतर संघर्ष किया। सवर्ण हिन्दुओं, सनातनी हिन्दुओं के प्रबल विरोध तथा कांग्रेस द्वारा अछूतों के साथ की जा रही कपटपूर्ण व्यवहार से बाबा साहेब बहुत क्षुब्ध हुए। महात्मा गाँधी की अस्पृश्यता निवारण अभियान की मन्द गति और हिन्दु समाज को समतामूलक सामाजिक व्यवस्था में बदलने की कोशिश से निराश होकर डा0 अम्बेडकर ने नवम्बर 1935 में येवले (नासिक) के अनुसूचित जाति सम्मेलन में धर्म परिवर्तन की युगान्तरकारी घोषणा की।[1]

अस्पृश्यों की समस्याओं पर विचार–विमर्श करने के लिए 13 अक्टूबर 1935 को नासिक के येवला में एक सम्मेलन बुलाया गया। अस्पृश्य समाज के सभी गुटों के लगभग 10 हजार लोग एकत्र हुए। बाबा साहेब ने इस सम्मेलन में अस्पृश्य वर्ग और हिन्दू धर्म में उसकी स्थिति पर विस्तार से प्रकाश डाला। उन्होनें अस्पृश्य वर्ग की आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक और राजनीतिक क्षेत्रों में दयनीय स्थिति पर चर्चा की। कालाराम मंदिर आन्दोलन की चर्चा करते हुए बाबा साहेब ने कहा– "अपने इन्सानियत के मान्य अधिकार प्राप्त करने के लिए और हिन्दू समाज में समान दर्जा प्राप्त कर लेने के लिए यह आन्दोलन भी विफल सिद्ध चुका है। उस आन्दोलन के लिए लगाया गया समय और पैसा सब व्यर्थ गया। यह बड़ी दुःखदायी स्थिति है। इसलिए हमें इस विषय में अंतिम निर्णय लेने का समय आ गया है। अपनी यह दुर्बलता और अवनति की स्थिति इसलिए हम पर आ पड़ी है कि हम हिन्दु समाज के अंग हैं। इसलिए जो धर्म हमें समान

---

[1] मधु लिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिन्तन, पृष्ठ सं0– 110

दर्जा दे सके, समान अधिकार दे और हमारे साथ उचित व्यवहार करे, ऐसे किसी दूसरे धर्म में प्रवेश करें, क्या ऐसा आपको नहीं लगता"?

बाबा साहेब ने आगे कहा– "हिन्दू समाज के साथ के सम्बन्ध को तोड़ दो। स्वाभिमान और शांति मिले ऐसे किसी अन्य धर्म में प्रवेश करो। .... अपने विषय में बाबा साहेब ने घोषणा की कि मैं दुर्भाग्य से अस्पृश्य हिन्दू धर्म में पैदा हुआ हूँ, यह मेरा कोई अपराध नहीं, लेकिन मरते समय मैं हिन्दू के रूप में कभी नहीं मरूँगा।"[1]

बाबा साहेब के धर्मान्तरण की इस घोषणा से देश में तूफान सा आ गया। राजनेताओं तथा धार्मिक नेताओं ने अपने–अपने मत प्रकट किये। गाँधी जी ने कहा– धर्म एक मकान या अंगरखे की भांति नहीं है कि जब इच्छा हो बदला जा सके। यह शरीर से अधिक आत्मा का अभिन्न अंग है। धर्म एक ऐसा वंधन है जो आदमी को ईश्वर से जोड़त है।.... यदि डा0 अम्बेडकर की ईश्वर में आस्था हो तो मैं उनसे कहना चाहूँगा कि वे अपने क्रोध को शांत करें, अपनी स्थिति पर पुनर्विचार करें तथा अपने पूर्वजों के धर्म पर आस्थाहीन अनुयायियों की कमजोरी के आधार पर नहीं, धर्म के गुणों के आधार पर पुनः विचार करें।[2]

गाँधी जी ने डा0 अम्बेडकर को सावधान किया कि सीधे–साधे करोड़ो अशिक्षित हरिजन उनकी बात नहीं स्वीकार करेंगे। उन्होंने डा0 अम्बेडकर को यह विश्वास दिलाया कि छिटपुट अत्याचारों के बावजूद अस्पृश्यता का अंत अब निकट आ चुका है। बाबा साहेब ने महात्मा गांधी को पत्र से सूचित किया कि "जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है मैं अपने इरादे पर अडिग हूँ और मुझे इस बात की चिन्ता नहीं है कि लोग मेरे पीछे आते हैं या नहीं।"[3]

बाबा साहेब के वक्तव्य ने जिसे गाँधी जी ने 'बम विस्फोट' कहा हिन्दू धर्मानुयायियों को भयभीत कर दिया। अनेक हिन्दू नेताओं ने बाबा साहेब से निवेदन

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 243

[2] द् कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड– 62, पृ0सं0– 64–65

[3] वही, पृ0सं0– 37–38

किया कि वे ऐसा कठोर कदम न उठायें। बी0डी0 सावरकर ने भी डा0 अम्बेडकर से धर्मान्तरण न करने का निवेदन किया। उस वर्ष (1935) कांग्रेस के अध्यक्ष डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने भी इस घोषणा पर दुःख प्रकट किया और कहा–" उस प्रस्ताव के मूल में स्थित गुस्से की भावना को हम समझ सकते हैं, परन्तु जिसकी वजह से समाज सुधारकों का कार्य दुष्कर होगा, इस तरह की कोई घटना की जाये, दुर्भाग्यपूर्ण होगा।" काँची के शंकराचार्य ने भी बाबा साहेब से हिन्दू धर्म न छोंड़ने को कहा।

बाबा साहेब ने धर्मान्तरण की घोषणा तो कर दी लेकिन उनके मन में गम्भीर धार्मिक अन्तर्द्वन्द उत्पन्न हुआ। हिन्दु धर्म को छोंड़ने की घोषणा तो कर दी, लेकिन किस धर्म को स्वीकार किया जाये? यह निश्चय करने में 21 वर्ष का दीर्घ काल लगा। बाबा साहेब की मान्यता थी कि महात्माओं के दिन अब समाप्त हो गय हैं और संसार में अब काई नया धर्म संभव नहीं है, उन्हें उन्हीं धर्मों में से किसी को चुनना होगा जो इस समय विद्यमान हैं।[1]

बाबा साहेब अध्ययन, मनन, अनुशीलन के दीर्घ साधना के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि मानव को एक ऐसा धर्म चाहिए जो समानता और बन्धुत्व की नींव प टिका हो। धर्म मनुष्य के लिए है, मनुष्य धर्म के लिए नहीं। वे वहुधा इस सारभूत तथ्य का उल्लेख करते थे– मनुष्य का यह जन्म सिद्ध अधिकार है कि वह सम्मानपूर्ण जीवन यापन करे। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अधिकाधिक कार्य करना चाहिए। हम इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए बड़े से बड़ा बलिदान करने के लिए कटिबद्ध हैं, हम उस मानव–सम्मान के लिए संघर्ष कर रहे हैं, जिसका हिन्दुओं ने हमारे लिए अभी तक निषेध कर रखा था। हम अपने जीवन का उतना पूर्ण तथा सुन्दर बनाना चाहते हैं, जितना संभव हो सके।[2]

बाबा साहेब निरन्तर इस प्रश्न पर चिन्तनशील थे कि वे और उनके समाज के लोग हिन्दू धम के अलावा कौन सा धर्म स्वीकार करें, जिसमें उन्हें समानता का दर्जा

---

[1] राजेन्द्र मोहन भट्नागर, डॉ0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन पृ0सं0–86

[2] दस स्पीक, अम्बेडकर, खण्ड–2, पृ0सं0– 145

प्राप्त हो सके। बाबा साहेब ने सिक्ख धर्म, इस्लाम धर्म, ईसाई धर्म तथा बौद्ध धर्म का गहन तुलनात्मक अध्ययन किया। वे चाहते थे कि सभी लोग मिलकर निर्णय करें। वे यह भी चाहते थे कि किसी जीवंत और शक्तिशाली समुदाय के साथ अपने को जोड़ें। बाबा साहेब धर्मान्तरण के मुद्दे के विचार–विमर्श को अखिल भारतीय स्वरूप देना चाहते थे।[1]

सभी धर्मानुयायियों ने बाबा साहेब की ओर ललचाई दृष्टि से देखा कि वे उनके धर्म को स्वीकार कर लें। ईसाई धर्म के लोगों ने बाबा साहेब के धर्मान्तरण के निर्णय का खुले दिल से स्वागत किया। येथाडिस्ट एपिस्कोपल चर्च बंबई के विशप ब्रनेटन थॉवर्न ने कहा– अम्बेडकर के धर्मान्तरण का ईसाई चर्च स्वागत कर रहा है क्योंकि उस घोषणा के अनुसार जीवन में उन्नति कर लेने की अस्पृश्य समाज की महत्वाकांक्षा दिखाई देती है। अस्पृश्य समाज के नए युग का प्रभात समीप आ गया है। अम्बेडकर की घोषणा उसका प्रतीक है।[2]

बौद्ध धर्म ने भी धर्मान्तरण का स्वागत किया। सारनाथ के महावोधि संस्था के कार्यवाहक ने बाबा साहेब को तार भेजकर सूचित किया कि "बहुसंख्यक लोगों द्वारा स्वीकार किये हुए बौद्ध धर्म को अस्पृश्य समाज स्वीकार करे। बौद्ध धर्म के सामाजिक या धार्मिक विषमता नहीं है। सभी नवबौद्धों को समान मौका और समान अधिकार प्राप्त होंगे, ऐसा मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ। इसमें जाति भेद नहीं है। हम कार्यकर्ता भेजने को तैयार हैं।"[3]

धर्मान्तरण की घोषणा का सिक्ख धर्म ने भी स्वागत किया। अमृतसर स्थित स्वर्ण मन्दिर संस्था के उपाध्यक्ष सरदार दलीप सिंह दोविया ने अपने तार में कहा– अस्पृश्यों के लिए आवश्यक सभी बातें सिख धर्म दे सकता है। सिख धर्म एकेश्वरवादी है। सभी के साथ ममता और समता से बर्ताव करने वाला है।[4] बाबा साहेब डा0 सोलंकी

---

[1] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृ0सं0– 111
[2] कीर, धनंजय, बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 245
[3] द टाइम्स ऑफ इण्डिया, 18 अक्टूबर, 1935,
[4] कीर, धनंजय, वही, पृ0सं0– 245

के साथ 13 जनवरी 1936 को पूणे में सिक्खों के भजन कार्यक्रम में सम्मिलित हुए। सिख नेताओं ने डा0 अम्बेडकर से आग्रह किया कि वे सिख धर्म स्वीकार करें।

इस्लाम धर्म ने भी धमान्तरण का स्वागत किया और अपने धर्म में दलित समाज के सम्मिलित होने का आवाह्न किया। बाबा साहेब नवम्बर 1935 को बदाँयु में सम्पन्न हुई मुस्लिम कांफ्रेस में सम्मिलित हुए।

बाबा साहेब धर्मान्तरण जैसे अति महत्वपूर्ण और संवेदनशील विषय पर जल्दवाजी के पक्ष में नहीं थे। वे कहते थे कि धर्म कोई घर या घड़ा नहीं है जो इच्छा होने मात्र पर बदला जा सके। वे देशवासियों का इस मुद्दे पर विचार विमर्श करने के लिए पर्याप्त समय देना चाहते थे। धर्मान्तरण की समस्या पर 12–13 जनवरी 1936 को प्रो0 एन0 शिवराज की अध्यक्षता में पुणे में एक बड़ा सम्मेलन बुलाया गया। अपने अध्यक्षीय भाषण में प्रो0 शिवराज ने कहा– "अस्पृश्यता के पाश से मुक्ति पाने का एक ही मार्ग है कि एक नये धर्म की स्थापना की जाये या आदि–द्रविडों के प्राचीन धर्म का पुनरुज्जीवन किया जाये।" बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर ने अपना विस्तृत बौद्धिक भाषण दिया "किसी भी धर्म में प्रवेश करने पर भी हमें स्वतन्त्रता और समता के लिए अवश्य संघर्ष करना पड़ेगा। यह समझना मूर्खता है कि अगर हम मुस्लिम धर्म में गये तो हममे से हर एक नवाब बनेगा, या ईसाई धर्म में गये तो पोप बनेगा। हम कहीं भी जायें, हमारी तकदीर में संघर्ष अटल है।..... अब अगर साक्षात परमात्मा भी अवतरित हों और मैं हिन्दू धर्म न छोंडू, इस तरह से मेरा मन परिवर्तित करने लगे तो भी मैं अपने हठ संकल्प से तनिक भी टस से मस नहीं होऊँगा।[1]

बाबा साहेब ने ईसाई धर्म या इस्लाम धर्म को अपनाने के परिणामों पर विचार किया। वे यह स्वीकार करने लगे कि हिन्दुओं की दृष्टि से सिख धर्म सबसे अच्छा होगा।

[1] कीर, धनंजय, बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 251–252

"यदि दलित वर्ग ईसाई धर्म या इस्लाम धर्म को स्वीकार करेंगे तो वे न केवल हिन्दू धर्म से बाहर चले जायेंगे, बल्कि हिन्दू संस्कृति से भी बाहर चले जायेंगे। किन्तु यदि वे सिख धर्म स्वीकार करेंगे तो वे हिन्दू संस्कृति में बने रह सकते हैं। हिन्दुओं के लिए यह कम लाभदायक बात नहीं है........ यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि धर्म परिवर्तन से सारे देश पर क्या असर होगा। इस्लाम या ईसाई धर्म अपनाने पर दलित वर्ग अपनी राष्ट्रीयता खो देगा। अगर वे इस्लाम में जायेंगे तो मुसलमानों की सं0 दुगनी हो जायेगी और मुसलमानों के प्रभुत्व का खतरा भी वास्तविक हो जायेगा। यदि वे ईसाई धर्म स्वीकार करेंगे तो ईसाइयों की संख्या 5 से 6 करोड़ हो जायेगी। इससे अंग्रेजों को दश पर कब्जा बनाये रखने में बड़ी सहायता मिलेगी। इसके विपरीत यदि वे सिख बनेंगे तो देश की नियत को कोई नुकशान नहीं पहुँचेगा, बल्कि उसमें सहायक ही होंगे। दलित वर्गों का निराष्ट्रीयकरण नहीं होगा।"[1]

बाबा साहेब के मन से इसाई धर्म का आकर्षण उत्तरोत्तर कम होता गया। उन्हें यह समझते देर नहीं लगी कि ईसाई ईशा मशीह के धर्म ने सर्वव्यापी जाति व्यवस्था से समझौता किया है। जाति ईसाई धर्म का भी उतना ही हिस्सा है जितना हिन्दू धर्म का।[2]

इस्लाम धर्म से भी बाबा साहेब संतुष्ट नहीं हो सके। यद्यपि इस्लाम की कतिपय विशेषताएं उन्हें आकृष्ट करती थी किन्तु इस्लाम की कुछ मूलभूत सिद्धान्तों के लिए उनके अरुचि थी। बाबा साहेब इस्लाम के गहन अध्ययन से इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इस्लाम में जितना मजबूत एकता है, उतना ही मजबूत विभाजन भी। इस्लाम का बन्धुत्व सब मनुष्यों का बन्धुत्व नहीं है केवल मुसलमानों का बन्धुत्व है।[3] डा0 अम्बेडकर ने 1906 के बंगाल की जनगणना के अधीक्षक का उदाहरण देकर कहा कि मुसलमान मुख्य रूप से दो भागों में विभक्त हैं– 1. अशरफ, 2. अजलफ। कहीं–कहीं एक तीसरा

---

[1] सोर्स मैटिरियल, खण्ड– 1, पृष्ठ सं0– 149–149
[2] मधुलिमये, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन, पृ0सं0– 112
[3] वही, पृ0सं0– 112

वर्ग 'अजील' भी था। बाबा साहेब ने जनगणना रिपोर्ट के आधार पर निष्कर्ष निकाला कि मुसलमान न केवल जाति को मानते हैं, बल्कि छुआछूत को भी मानते हैं।[1]

बाबा साहेब ने भगवान बुद्ध का बौद्ध धर्म का अध्ययन मनन किया और इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि तथागत का बौद्ध धर्म ही उनकी मंजिल है। उसी बौद्ध धर्म की हिमछाया वर्ग के मैं अछूत अँश्रु, क्रंदन एवं दुखों का उन्मूलन हो सकता है। वही धर्म समता और बंधुत्व तथा स्वतन्त्रता की मजबूत नींव पर खड़ा है। वह नैतिकता पर अवलम्बित है। बाबा साहेब का स्पष्ट मत था कि तथागत बुद्ध और उनके धम्म के बिना, मानवता के लिए शक्ति तथा सदुगुणी ढंग से जीना संभव नही है। यह बौद्ध धर्म न केवल इस देश की अपितु समस्त विश्व की सेवा कर सकता है। वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में बौद्ध धर्म विश्वशांति के लिए परम आवश्यक है। बाबा साहेब ने आगे कहा– मैं तो शांति में विश्वास करता हूँ, लेकिन उस शांति में जो न्याय पर आधारित हो, न कि कब्रिस्तान की शांति में। जब तक संसार में न्याय के प्रति सम्मान नहीं होता तब तक किसी प्रकार की शांति नहीं हो सकती। बौद्ध धर्म केवल बौद्ध धर्म ही संसार को बचा सकता है।[2]

बाबा साहेब के मन में रह–रह कर गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का यह गीत गूँजता रहता था– जिसमें गुरुदेव ने भगवान बुद्ध से प्रार्थना की थी कि वह उनके देश को जगायें। यह वह स्थान है जहाँ मस्तिष्क निर्भीक है, ज्ञान निर्बन्ध है, विश्व संकीर्णता से आवृत नहीं है और शब्द सत्य की गहराई से बाहर आते हैं–

" Where the mind is without fear and the head is held high

Where knowldge is fair;

" Where the world has not been broken up into fragment

of narrow domestic walls,

---

[1] अम्बेडकर, क्र0, पृ0सं0– 217–218

[2] राजेन्द्र मोहन भटनागर, डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृ0सं0– 86–87

Where the worlds come out from the depth of truth,

.

.

.

Into that heave of freedom,.... My father (Buddha)

let my countery wake."

धर्मान्तरण की घोषणा के साथ ही एक महत्वपूर्ण प्रश्न चर्चा का विषय बना कि धर्मान्तरण के बाद अस्पृश्य समाज को प्राप्त संवैधानिक सुविधाओं की स्थिति क्या होगी। गोविन्द बल्लभ पंत ने केन्द्रीय विधान सभा में यह प्रश्न उठाया कि– हरिजनों को दोनो बातों का लाभ नहीं होगा। वे हिन्दू के रूप में विशेष अधिकारों का उपभोग करें या अहिन्दू बनकर उनका त्याग करें।[1] बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि अस्पृश्य वर्ग को जो सीटें मिली हैं, वे हिन्दुओं के हिस्से में से होकर आम चुनाव क्षेत्र से प्राप्त हुई हैं। अस्पृश्यों का जो वर्गीकरण किया गया है वह धार्मिक दृष्टि से न होकर सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से किया गया है"।

बाबा साहेब की बचपन से ही भगवान बुद्ध और उनके धर्म के प्रति असीम श्रद्धा थी। 1907 में डा० अम्बेडकर के हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण होने के उपलक्ष्य में बंबई में एक सभा आयोजित की गई जिसमें गुरुवर केलस्कर ने अपने द्वारा रचित 'बुद्धचरित्र' ग्रन्थ भेंट किया था। तभी से बौर्द्ध धर्म के प्रति जिज्ञासा और आस्था पैदा हुई थी। कालान्तर में धर्मान्तरण की घोषणा के बाद सभी धर्मो के तुलनात्मक अध्ययन के दौरान बाबा साहेब ने बौर्द्ध धर्म का गहन अध्ययन किया जिससे उनकी बौद्ध धर्म में प्रबल आस्था उत्पन्न हुई। जाति मत पूँछ आचरण पूँछ, बहुजन हिताय बहुजन सुखाय का नारा देने वाला बौद्ध धर्म उनकी आस्था का केन्द्र बना। वास्तव में बाबा साहेब ने 1935 में धर्मान्तरण की घोषणा के समय ही अपन दृढ़ निश्चय कर चुके थे कि बौद्ध धर्म

---

[1] कीर, धनंजय, बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 265

को स्वीकार करना है, लेकिन इस पर रहस्य का आवरण दिया जिससे देश में होने वाली संभावित प्रतिक्रियाओं को जान सकें, अपने अस्पृश्य समुदाय को मानसिक रूप से तैयार कर सकें। साथ ही वे हिन्दू समाज को एक अवसर भी देना चाहते थे कि वे अस्पृश्यता के कलंक को धो सके, इसीलिए 21 वर्ष का एक लम्बा मौका दिया। 21 वर्ष का यह वैचारिक अन्तर्द्वन्द संघर्ष सामान्य संघर्ष नहीं था, अपितु भगवान राम के 14 वर्ष के वनवास के दौरान आसुरी शक्तियों के विरुद्ध संघर्ष से कम महत्वपूर्ण नहीं था। बाबा साहेब ने हिन्दू धर्म की आसुरी प्रवृत्तियों तथा समाज की अनेक कुरीतियों, विदूपताओं के विरुद्ध विराट संघर्ष किया जो उनके अदम्य साहस और जुझारू व्यक्तित्व का द्योतक है।

बाबा साहेब ने अपने बौद्ध धर्म के प्रति आकर्षण को शनैः शनैः प्रकट किया। मई 1950 में वह बुद्ध जयंती के अवसर पर दिल्ली में आयोजित समारोह में बाबा साहेब ने अपना तीखा भाषण दिया– "भगवान बुद्ध मार्गदाता हैं तथा उनका धर्म नीति पर आधारित है। श्री कृष्ण ने कहा है कि वे स्वयं ईश्वरों के ईश्वर हैं। ईशा मशीह स्वयं को ईश्वर का पुत्र मानते हैं, पैगम्बर कहते हैं वह ईश्वर के दूत हैं। बुद्ध के अतिरिक्त सभी धर्म संस्थापक अपने को मोक्षदाता कहते हैं। बुद्ध स्वयं को मार्गदर्शक कहते हैं। बुद्ध धर्म का अर्थ है नीति। बुद्ध धर्म में ईश्वर का स्थान नीति ने लिया है। हिन्दू धर्म में असमानता है और बुद्ध धर्म में समता है।"[1]

बाबा साहेब बुद्ध जयंती में सम्मिलित होने के पश्चात् 5 मई 1950 के मुबई लौट आये। जनता पत्र के संवाददाता ने उनसे पूँछा– क्या आप बौद्ध धर्म स्वीकार करने वाले हैं? बाबा साहेब ने उत्तर दिया– बौद्ध धर्म की ओर मेरा मन झुक रहा है क्योंकि बौद्ध धर्म के सिद्धान्त शाश्वत हैं तथा समानता पर आधारित हैं। बाबा साहेब ने स्पष्ट किया कि वे अभी बौद्ध धर्म स्वीकार नहीं किये हैं और नहीं अपने अनुयायियों को स्वीकार करने को कहा है।[2]

---

[1] कीर, धनंजय, बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, जीवन चरित, पृ0सं0– 399

[2] वही, पृ0सं0– 399।

बाबा साहेब ने मई 1950 में ही "बुद्ध और उनके धर्म का भविष्य" लेख लिखा जिसे महावोधि संस्था ने अपने मासिक पत्रिका में प्रकाशित किया। इसमें महत्वपूर्ण तथ्य इस प्रकार थे—

1. समाज को अपनी एकता बनाये रखने के लिए कानून का आश्रम लेना पड़ेगा या नैतिकता का। देनो के बिना समाज का विभाजन हो जायेगा।
2. धर्म बुद्धि पर आधारित होना चाहिए। बुद्धि या तर्क का दूसरा नाम विज्ञान है।
3. किसी भी धर्म के लिए नैतिकता ही पर्याप्त नहीं है। अपितु उस नैतिकता को जीवन के मूलभूत सिद्धान्तों, स्वतन्त्रता, समानता और बंधुता को मानना चाहिए।
4. धर्म को निर्धनता का अनुमोदन नहीं करना चाहिए। बुद्ध धर्म एक ऐसा धर्म है जो कि विभिन्न मानदंडों पर खरा उतरता है। बुद्ध धर्म ही ऐसा धर्म है जिसे विश्व को स्वीकार करना चाहिए। बुद्ध ने अहिंसा की शिक्षा दी है। यह एक ऐसा महान सिद्धान्त कि संसार यदि उसका पालन नहीं करेगा तो उसका विनाश हो जायेगा।

श्रीलंका के यंग मैन बुद्धिस्ट ऐसोसिएशन ने बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर को बौद्ध सम्मेलन में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया। बाबा साहेब 25 मई 1950 को अपनी धर्म पत्नी डा0 सविता अम्बेडकर तथा दलित पार्टी के कार्यवाहक पांडुरंगराव राजभोज के साथ कोलंबो (श्रीलंका की राजधानी) के लिए प्रस्थान किया। बाबा साहेब ने कोलम्बो में एक पत्रकार सम्मेलन में कहा कि हम यह देखने के लिए आए हैं कि बौद्ध धर्म के संस्कार और विधि कैसे होते हैं और श्रीलंका में बौद्ध धर्म कहां तक जीवित है।

बौद्ध धर्म सम्मेलन में बाबा साहेब ने बौद्ध धर्म के उदय और पतन विषय पर अपन विद्वतपूर्ण महान भाषण दिया— "यह मुझे मान्य नहीं कि भारत में बौद्ध धर्म नष्ट हो गया है। मैं यह स्वीकार करता हूँ कि बौद्ध धर्म भौतिक दृष्टि से विनष्ट हुआ है, किन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से वह आज भी जीवित है। हिन्दू धर्म के विषय में बाबा साहेब ने कहा कि हिन्दू धर्म 3 पडावों से गुजरा है— वैदिक धर्म, ब्राह्मण धर्म और हिन्दू धर्म। जब हिन्दू धर्म का दूसरा पड़ाव चल रहा था, तभी बौद्ध धर्म का उदय हुआ। ब्राह्मण धर्म

ने असमानता का प्रचार किया जबकि बौद्ध धर्म ने समता का प्रचार किया। यह कहना सत्य नहीं है कि शंकराचार्य के उदय के उपरान्त बौद्ध धर्म भारत से विनष्ट हुआ। बौद्ध धर्म शंकराचार्य के बाद भी विद्यमान रहा। सच तो यह है कि शंकराचार्य और उनके गुरु (चित्सुखाचार्य) दोने बौद्ध धर्मी थे। प्रो0 सी0डी0 शर्मा ने भी शंकराचार्य को प्रच्छन्न बौद्ध माना है।

बाबा साहेब ने भारत में बौद्ध धर्म के उत्थान एवं पतन के कारणों का उल्लेख करते हुए कहा कि पतन के कारणों को मैं विस्तार से खोज रहा हूँ। इसका एक प्रमुख कारण यह रहा कि बौद्ध धर्म के खिलाफ जोरदार प्रचार करने वाले वैष्णव एवं शैव सम्प्रदा के लोगों ने बौद्ध धर्म के आचार–विचार तथा रीति–रिवाजों को स्वीकार कर लिया जिससे बौद्ध धर्म का अन्तर अन्य धर्मों से समाप्त हो गया।

दूसरा महत्वपूर्ण कारण है विदेशियों का आक्रमण। तुर्कों ने भारत पर आक्रमण के दौरान बौद्ध धर्म के प्रति विशेषकर दमन, अत्याचार की नीति अपनाई। मुहम्मद बिन बख्तियार खिलजी ने बिहार पर आक्रमण कर हजारों बौद्ध भिक्षुओं का वध कर दिया तथा नालंदा एवं विक्रमशिला जैसे विख्यात शिक्षा केन्द्रों को जला कर नष्ट कर दिया। हजारो बौद्ध भिक्षु प्राण बचाने के लिए चीन तिब्बत और जापान भाग गये।

तीसरा महत्वपूर्ण कारण था– बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों की सहजता समाप्त हो गई थी और अब उनमें दुरुहता एवं कठोरता आ गई थी।

चौथा कारण था कि हिन्दुस्तान का राजनैतिक वातावरण बौद्ध धर्म के प्रचार के अनुरूप नहीं था।[1]

बाबा साहेब ने इस भाषण में बौद्ध धर्म के मूलभूत सिद्धान्तों की भी चर्चा की थी और बताया कि इनकी सहजता एवं सरलता के कारण ही सामान्य जनता इन्हें स्वीकार कर सकी थी साथ ही बौद्ध धर्म ग्रन्थ जनभाषा (पालि भाषा) में लिखे गये थे

---

[1] 10 जून 1950, जनता।

और इसे व्यापक राजनैतिक समर्थन एवं प्रोत्साहन मिला हुआ था, इससे बौद्ध धर्म का प्रचार प्रसार हुआ था।

बाबा साहेब ने कोलंबो के टाउन हाल में भी भाषण दिया, जिसमें उन्हें वहाँ के दलितों को बौद्ध धर्म स्वीकार करने को कहा।

कोलम्बो से भारत लौटते समय बाबा साहेब ने त्रिवेन्द्रपुरम तथा मद्रास में रुक कर हिन्दू कोड बिल पर व्याख्यान दिया। 29 सितम्बर 1950 को बंबई के वरली स्थित बौद्ध विहार में बुद्ध धर्म पर व्याख्यान किया, जिसमें पहली बार अस्पृश्य वर्ग से आह्वान किया कि वे बौद्ध धर्म को स्वीकार कर लें। साथ में यह भी घोषणा की कि अपना सम्पूर्ण जीवन बोद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार में व्यतीत करूँगा।''

बाबा साहेब की इस घोषणा से भारत का राजनैतिक वातावरण गर्मा गया। टाइम्स ऑफ इण्डिया ने टिप्पणी लिखा– ''जिन लोगों को इस प्रकांड पंडित ओर शूर योद्धा के आर्थिक–सामाजिक विचारों की जानकारी है, उनके मन में यह भ्रम कभी नहीं रहा कि अम्बेडकर राजनैतिक परिधान परित्याग कर कोई नया वस्त्र धारण करेंगे।[1]

दिल्ली के शंकरर्स वीक ली ने व्यंगपूर्ण शब्दों में कहा– जिन भारतीयों को अधिकार और सत्ता की अपेक्षा सन्यास अधिक भाता है, उनमें से डा0 अम्बेडकर एक हैं। बाबा साहेब की तुलना अरविन्दघोष से की गई। अरविन्द घोस ने अलीपुर षडयंत्र काण्ड (18 मई 1908 कोलकत्ता) के बाद राजनीति से सन्यास ले लिया था। यद्यपि इस समय बाबा पं0 नेहरू की सरकार में विधिमंत्री थे, लेकिन हिन्दू कोड बिल पर कांग्रेस आलाकमान के ढुलमुल नीति तथा सनातनियों के जबर्दस्त विरोध के कारण हिन्दू धर्म के प्रति बाबा साहेब के हृदय में अन्तर्द्वन्द विदूयता में बदल गई थी। हिन्दू कोड बिल को वापस लेने के कारण ही बाबा साहेब ने 27 सितम्बर 1951 को नेहरू सरकार से मंत्री पद से त्याग पत्र दे दिया।

---

[1] 30 सितम्बर 1950, टाइम्स ऑफ इण्डिया।

बाबा साहेब ने बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार एवं उस पर अस्पृश्य वर्ग की आम सहमति प्राप्त करने की दिशा में लगातार प्रयास करते रहे। बंबई के वरली में 14 जनवरी 1951 को बाबा साहेब ने बुद्ध धर्म पर पुनः अपना विचार व्यक्त किया– "भारत में बौद्ध धर्म 1200 वर्षों से अधिक समय तक बना रहा।"

फरवरी 1953 में प0एन0 राजभोज ने भारत–जापान सांस्कृतिक सभा के उपाध्यक्ष एम0आर0 मूर्ति के सम्मान में एक चाय पार्टी आयोजित की जिसमें डा0 अम्बेडकर ने यह महत्वपूर्ण भाषण दिया– "वर्तमान या भावी पीढ़ी को बुद्ध या काल–मार्क्स इन दोनो के सिद्धान्तों में से एक सिद्धान्त को चुनना पड़ेगा। पश्चिमी देशों की अपेक्षा पूर्वी देश अधिक महत्वपूर्ण हो गये हें, किन्तु यदि पूर्वी देशों ने बुद्ध दर्शन को नहीं अपनाया तो योरप के इतिहास में जिस प्रकार का संघर्ष हुआ है, वैसा ही संघर्ष एशिया में भी होगा।"[1]

मई 1953 में मुंबई में बौद्ध धर्म पर आयोजित एक समारोह में बाबा साहेब ने प्रेरणादायी भाषण दिया। उस भाषण में बाबा साहेब ने बौद्ध धर्म में श्रद्धा व्यक्त करते हुए उसके लिए आजीवन प्रचार करने की घोषणा की। बाबा साहेब ने आगे कहा– हमने धर्म के लिए सत्याग्रह किया है। हमने पुनः धर्मान्तरण का निर्णय लिया, सब कुछ किया। अब हमें अपना मन पवित्र करना चाहिए।....... हमने पढ़ाई की, इसका अर्थ यह नहीं कि हम सर्वज्ञ हो गये। शिक्षा का महत्व है, इसमें कोई शंका नहीं परन्तु साथ ही व्यक्ति का शील भी पवित्र होना चाहिए। चरित्र के बिना शिक्षा का मूल्य शून्य है। ज्ञान तलवार के समान है....... स्व0 ज्योविता फूले को मैं अपना गुरू मानता हूँ..... आज हम पर अन्याय हो रहा है। हम आन्दोलन करते हैं, इसलिए अन्य लोग खूनी निगाहों से हमें देखते हैं, किन्तु हमारा आन्दोलन निःस्वार्थ भाव से और किसी फल की आशा न रखते हुए शुरू हुए हैं। हमें आशा है कि एक दिन ऐसा आएगा कि फल तो क्या पूरा वृक्ष ही हमारा होगा........ प्रत्येक व्यक्ति को अपने घरों में बुद्ध की प्रतिमा लगानी चाहिए।"

---

[1] द फ्री प्रेस जनरल– 16.02.1953।

बाबा साहेब ने 28 अक्टूबर 1954 को मुंबई के पुरंदर स्टेडियम में आयोजित एक समारोह में अपने जीवन का आत्म चिंतन प्रस्तुत किया– "मेरे जीवन में प्रसंग चित्रपट की भाँति मेरी आँखों के सामने आ रहे हैं। मैं कहाँ पैदा हुआ? मेरे माता–पिता कहाँ लेकर मुझे आये?...... सह सब मेरे आँखों के सामने है....। मेरे जीवन को जो मोड़ मिला है, वह महत्वपूर्ण है। यह कैसे और क्यों हुआ? इसका मैं विवरण देने वाला हूँ....... मेरे तीन गुरू हैं ......। प्रथम और सर्वश्रेष्ठ गुरु बुद्ध हैं..... गुरुवर केलुसकर ने मुझे एक बुद्ध चरित की किताब भेंट की थी। यह पुस्तक पढ़कर मेरे दिमाग में अलग प्रकाश पैदा हुआ। बुद्ध चरित से मुझे और अधिक अध्ययन करने की प्रेरणा मिली। आज भी बुद्ध धर्म ने मेरे मन को पकड़ रखा है। मेरा ऐसा विश्वास है कि बुद्ध धर्म ही विश्व का कल्याण करेगा। हिन्दू लोगों को अपना राष्ट्र जीवित रखना हो तो बुद्ध धर्म की दीक्षा लेनी चाहिए, यह मैं प्रत्येक व्यक्ति के सामने अभी भी बताता हूँ।

मेरे दूसरे गुरू कबीर हैं। मेरे पिता कबीर पंथी थे इसलिए कबीर के जीवन और दर्शन का मुझ पर बहुत प्रभाव पड़ा। मेरे अनुसार कबीर को बुद्ध दर्शन का रहस्य ज्ञात था। मैंने किसी को भी महान नहीं कहा। गाँधी को मैंने महात्मा नहीं कहा क्योंकि कबीर ने कहा है – "मानव होना कठिन है, तो साधू क्या बनू।" जो व्यक्ति मनुष्य नहीं बन सकतावह महात्मा कैसे बन सकता है।

मेरे तीसरे गुरू ज्योविता फूले हैं। गैर– ब्राह्मणों के भी वास्तविक गुरू वे ही थे।....

मेरे तीन उपास्य देवता भी हैं। मेरा पहलादेव विद्या है। विद्या बिना मानव को शांति नहीं, मानवता भी नहीं। सबको विद्या मिलनी चाहिए......। विद्या की इच्छा है, उसे पूरी करा.... आज हिन्दुस्तान में 90 प्रतिशत लोग निरक्षर हैं। वर्मा में 90 प्रतिशत लोग साक्षर हैं। इसका कारण है ब्राह्मणों ने हमें विद्या ही नहीं दी, हमारी विद्या छीन ली गई... मैं चौबीस घण्टा विद्या की पूजा करता हूँ।

मेरा दूसरा देव विनय है। मैंने कभी किसी से याचना नहीं की। मेरा उद्‌दश्य था– कि मुझे स्वयं अपना पेट पालना चाहिए और मुझे अपने लोंगों की सेवा करनी चाहिए....... मेरा कहना है कि दीन मत बनों। मैं भी कुछ हूँ, ऐसा समझो मैं तो इश्वर को नहीं मानता हूँ, इतना मेरा स्वाभिमान प्रकाशमान हैं।

मेरा तीसरा देव शील है। मैंने कभी अपने जीवन में दगाबाजी, धोखाधडी या आत्मसिद्ध के लिए पाप नहीं किया।..... शील संवर्द्धन यह गुण मुझमें तीव्रता से है।

दिसम्बर 1954 में वर्मा के रंगून में विश्व बौद्ध धर्म सम्मेलन हुआ जिसमें बाबा साहेब को आमंत्रित किया गया था। बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए अपनी धर्म पत्नी डा0 सविता अम्बेडकर और निजी सहायक काशीराम विश्राम सवादकर के साथ रंगून गये। यद्यपि बाबा साहेब का स्वास्थ्य काफी खराब था फिर भी बौद्ध धर्म के प्रति असीम श्रद्धा एवं निष्ठा उनको रोक नहीं सकी। सम्मेलन में भाषण देने के लिए जब बाबा साहेब खड़े हुए तो बौद्ध धर्म के प्रति श्रद्धा के कारण भाव विभोर हो गये और आँखों से आँश्रू छलक पड़े, गला रूध गया, लेकिन धीरे–धीरे वे भावुकता पर नियंत्रण किये। उनके ओजरवी बौद्धिक भाषण से बौद्ध परिषद मंत्रमुग्ध हो गई। बाबा साहेब ने कहा– "जिन देशों मे बौद्ध धर्म का अस्तित्व है उनमें श्रीलंका और वर्मा अग्रणी हैं किन्तु धर्म के उत्स पर जो अधिक धन व्यय हो रहा है, वह बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों के विपरीत है।"

बाबा साहेब ने वहाँ यह घोषणा की कि बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों पर यदि कोई वाद–विवाद करना चाहता है तो वे तैयार हैं। उन्हें यह पूर्ण आत्म विश्वास था कि वाद–विवाद में सभी विद्धानों को पराजित करेंगे।[1] बाबा साहेब ने यह घोषणा की थी कि भारत में पूर्ण तैयारी के साथ वे बौद्ध धर्म का प्रचार करेंगे। संविधान बनाते समय उस दृष्टि से अनुकूल होने वाले कुछ अनुच्छेदों को उसमें सम्मिलित किया है। पालि भाषा के अध्ययन की व्यवस्था की गई। दिल्ली में राष्ट्रपति भवन के अग्रभाग में बौद्ध धर्म के ग्रन्थ

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, बुद्ध शरा हंस, पृ0सं0– 163

का एक सुवचन अंकित किया गया है। भारत के राष्ट्रीय ध्वज पर अशोक चक्र झलक रहा है। भारत सरकार ने बुद्ध जयंती पर राष्ट्रीय अवकाश घोषित किया है। यह सब मेरे प्रयासों से हुआ है......। बौद्ध धर्म की परिषद में उपस्थित 18 राष्ट्रों के प्रतिनिधियों में से किसी ने भी इतनी प्रगति नहीं की। इसके अतिरिक्त बंबई और औरंगाबाद में मैंने दो महाविद्यालय स्थापित किए हैं जहाँ 3400 छात्र अध्ययन कर रहे हैं। बौद्ध धर्म के अध्ययन को मैं और प्रोत्साहन दूँगा। अगर वित्तीय सहायता प्राप्त होगी तो हिन्दुस्तान में बौद्ध धर्म का प्रसार करना संभव है। उसके लिए आवश्यक मनोभूमि तैयार है। फिर भी मैं अपना लक्ष्य आपकी सहायता से या उसके बिना भी प्राप्त करूँगा।[1]

परिषद की समाप्ति के पश्चात् बाबा साहेब रंगून से भारत लौट आये। बाबा साहेब ने पूणे के देहूरोड में निर्मित बुद्ध बिहार में 25 दिसम्बर 1954 को भगवान बुद्ध की प्रतिमा स्थापित की, जिसे वे रंगून से अपने साथ लाये थे। समारोह में बोलते हुए बाबा साहेब ने कहा– भारत में 1200 वर्षों बाद बुद्ध की मूर्ति की प्राण–प्रतिष्ठा करने का श्रेय हमारे दलित समाज को प्राप्त हुआ है।...... आज यहाँ इस छोटे से बिहार में भगवा बुद्ध की प्रतिमा स्थापित की गई है। अभी तक हमारी परम्परा थी कि हमारे मंदिरों में भैरो बाबा, खंडोवा, माँ, विष्णु, राम, कृष्ण की प्रतिमाएं स्थापित की जाती थी। हमारे लोग धार्मिक हैं, इसलिए वे विष्णु, शिव आदि देवताओं की मूर्तियां स्थापित करते हैं। आज यहाँ एक नया भगवान ला कर बसाया है। यह प्रसग हमारे लिए नया है। आप में से अनेक लोगों ने भगवान बुद्ध का नाम नहीं सुना होगा। कुछ लोग कहते हैं कि यह नया ईश्वर कहाँ से लाया है?....... भगवान बुद्ध का धर्म इस देश में बहुत प्राचीन है। इसका उदय भारत में ही हुआ है। यह चीन, जापान, वर्मा, श्रीलंका आदि से यह धर्म नहीं आया है। यह वृक्ष इसी देश का है।''

1956 में इस धर्म को ढाई हजार वर्ष पूरे हो जायेंगे...... मेरे कुछ मित्र मुझसे पूँछते हैं कि आपका इतना अच्छा बुद्ध धर्म था तो फिर उसका, विनाश क्यों हुआ?

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 457–458

मैं उनसे पूँछता हूँ कि यह धर्म अच्छा नहीं था, इसलिए इसका विनाश हुआ, यदि ऐसा माना जाय तो फिर चीन, जापान, श्रीलंका, वर्मा, कम्बोडिया आदि देशों में इसका विनाश क्यों नहीं हुआ? वहाँ यह धर्म अभी भी क्यों है? यह धर्म इस देश से लुप्त नहीं हुआ अपितु इसे दीमक लग गई होगी या कुछ गुप्त मंत्रणायें हुई होंगी।''

बाबा साहेब ने अपने उद्‌बोधन में यह भी स्पष्ट किया कि सामान्य व्यक्तियों के लिए सुगम भाषा में बौद्ध धर्म पर ग्रन्थ लिख रहे हैं, वह एक वर्ष में पूरा होगा और पूरा होते ही मैं बौद्ध धर्म स्वीकार करूँगा।[1] इस प्रकार बाबा साहेब ने पहली बार अपने निर्णय के रहस्य से पर्दा हटाया और स्पष्ट किया कि मैं बौद्ध धर्म स्वीकार करूँगा। इस प्रकार धार्मिक क्षेत्र में व्याप्त आशंकाओं के बादल छट गये।

इसी भाषण में बाबा साहेब ने पहलीबार इस तथ्य को जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया कि पंठरपुर में विठोता (विष्णु का एक रूप) की मूर्ति वास्तक में भगवान बुद्ध की मूर्ति है। इस विषय पर वे एक शोध प्रबन्ध लिख रहे हैं, यह भी स्पष्ट किया।'' बाबा साहेब ने मार्च 1955 में विठोआ शीर्षक शोध–प्रबन्ध लिखना आरम्भ किया, लेकिन अपूर्ण रहा। बाबा साहेब ने बताया कि विठोआ का पांडुरंग नाम पुंडरीक से बना है। पुंडरीक का अर्थ है– 'कमल'। कमल को ही पालि में पांडुरंग कहते हैं। अतः पांडुरंग अन्य कोई नहीं अपितु 'बुद्ध' ही हैं।

इस भाषण के पश्चात् पूरे देश में यह समाचार आग की तरह फैल गया कि बाबा साहेब बौद्ध धर्म स्वीकार करने वाले हैं। इस निर्णय से बौद्ध अनुयायियी अपार खुश हुए। कोलकाता महाबोद्धि सोसाइटी के देवप्रयि वाली सिंह ने डा0 अम्बेडकर का हार्दिक अभिनन्दन करते हुए कहा– ''मानव जाति के एक महान हितैषी के रूप में अम्बेडकर का नाम इतिहास में दर्ज जोगा। यदि छः करोड़ दलितों ने बौद्ध धर्म को स्वीकार किया तो इस देश को नवजीवन प्राप्त होगा और उसकी तीव्र प्रगति होगी।''

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 458

डा0 अम्बेडकर ने वाली सिंह को लिखे पत्र में सूचित किया कि धर्म दीक्षा समारोह के लिए उन्होंने एक संस्कार विधि बनाई है। बौद्ध धर्म की दीक्षा लेते समय प्रत्येक को ये संस्कार करने पड़ेंगे।

इसी समय जापान सरकार ने भी भारत में बौद्ध धर्म के प्रसार हेतु आर्थिक सहयोग का प्रस्ताव किया। जापान के सहयोग से बंग्लोर में बौद्ध प्रगति अध्ययन केन्द्र की स्थापना के लिए बाबा साहेब का डा0 फनिक्स वापली के साथ पत्र व्यवहार हुआ। डा0 फेनिक्स वायली अप्रैल 1955 में भारत आए और बाबा साहेब द्वारा बंबई में स्थापित सिद्धार्थ कालेज में उनका भाषण हुआ। भाषण के बाद आभार प्रकट करते हुए महाविद्यालय के इतिहास के प्रोफेसर डा0 केणी ने डा0 फेरिक्स के विचारों की आलोचना की, जिसके कारण उन्हें प्रोफेसर के पद से बाबा साहेब ने हटा दिया।

बाबा साहेब ने मई 1955 में ''बुद्धिस्ट सोसाइटी ऑफ इण्डिया'' नामक संस्था का गठन किया। इसी को आगे चलकर ''भारतीय बौद्ध महासभा'' का नाम दिया गया। इसी समय बाबा साहेब ने वर्मा के सुप्रीम कोर्ट के न्यायाधीश श्री ऊँचातू को पत्र लिखा था– ''मैंने आन्दोलन ठीक ढंग से आरम्भ कर दिया है। लोहे के गर्म होते ही मैं चोंट मारना चाहता हूँ, यदि असफल रहा तो दोष बौद्ध देशों का होगा जो समय रहते सहायता न कर सकेंगे।''

बाबा साहेब ने बौद्ध धर्म पर विशेष ग्रन्थ लिखने का कार्य 1951 से आरम्भ किया था, जिसे कठिन परिश्रम के बाद 1956 के आरम्भ में पूर्ण किया। पहले इस ग्रन्थ को 'द बुद्ध एण्ड हिज गास्पेल' नाम दिया गया था, बाद में 'बुद्ध एण्ड हिज धम्म' नाम दिया। इसी ग्रन्थ के साथ ही बाबा साहेब ने रिवोल्यूशन एंड काउंटर रिवोल्यूशन इन इण्डिया तथा बुद्धा एण्ड कार्ल मार्क्स का लेखन भी आरम्भ किया, लेकिन अपूर्ण रहा। इसी समय उन्होंने 'द रिडल ऑफ हिन्दुइज्म' नामक ग्रन्थ लिखकर हिन्दू धर्म के बुनियाद को हिला दिया। यह अति विवादित पुस्तक के रूप में रही जिसके विरुद्ध सवर्ण एवं सनातनी हिन्दुओं ने व्यापक आन्दोलन छेड़ा था।

मई 1956 लंदन के ब्राडकास्हिंग कार्पोरेशन (BBC) ने बाबा साहेब का एक भाषण प्रसारित किया जिसका विषय था– मैं बौद्ध धर्म क्यों पसन्द करता हूँ और वर्तमान परिस्थितियों में यह विश्व के लिए कैसे उपयुक्त है? बाबा साहेब ने कहा– ''मुझे बौद्ध धर्म इसलिए पसन्द है कि उसमें तीन तत्व पाये जाते हैं जो अन्य किसी धर्म में नहीं मिलते। ये हैं– प्रज्ञा, करुणा और समता। बौद्ध धर्म मुझे प्रज्ञा सिखाता है। वह अंध श्रद्धा और अद्‌भुदता का पाठ नहीं सिखाता। वह मुझे प्रज्ञा, करुणा और समता का तत्व सिखाता है। मनुष्य के अच्छे और सुखी जीवन के लिए इसकी आवश्यकता है। ईश्वर या आत्मा समाज का कल्याण नहीं कर सकते। मार्क्सवाद और कम्यूनिज्म ने विश्व की धार्मिक प्रणाली को भयभीत कर दिया है। बौद्ध धर्म ही कार्ल मार्क्स का समुचित उत्तर है। जो देश बौद्ध धर्मीय होते हुए भी साम्यवादी विचारधारा के हैं, उन्हें कम्युनिज्म का सही अर्थ नहीं मालूम। रूसी साम्यवाद रक्तिम क्रांति लाता है, बुद्ध प्रणित साम्यवाद रक्तहीन क्रांति लाता है।........ गरीबी प्रत्येक स्थान पर है और सर्वदा रहेगी। रूस में भी गरीबी है। परन्तु मानवीय स्वतन्त्रता की वेदी पर बलि देने के लिए गरीबी का बहाना नहीं बनाया जा सकता।...... एक बार यह स्वीकार कर लेने पर कि बौद्ध धर्म सामाजिक तत्व है, उसका पुनरुज्जीवन एक चिरकालिक घटना होगी।''[1]

इसी बीच वाइस ऑफ अमेरिका ने भी बाबा साहेब का एक भाषण प्रसारित किया। उसका विषय था– ''भारत में लोकतंत्र का भविष्य''। बाबा साहेब ने कहा– ''लोकतंत्र की जड़ें सरकारी, संसदीय या अन्य किसी पद्धति से नहीं होती। लोकतंत्र का अर्थ है सहजीवन से रहने की एक पद्धति। लोकतंत्र की जड़ें सामाजिक संबंधों में ढूढ़ लेनी चाहिए।''

बाबा साहेब ने 24 मई 1956 को मुंबई के नरे पार्क में बुद्ध जयंती के अवसर पर घोषणा की कि वे 14 अक्टूबर 1956 को बौद्ध धर्म की दीक्षा लेंगे। अपने भाषण में बाबा साहेब ने वी0डी0 सावरकर की कटु निन्दा की क्योंकि कुछ दिन पूर्व

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 466– 467

सावरकर ने बौद्ध धर्म की अहिंसा पर एक लेख लिखा था। बाबा साहेब ने कहा– अगर सावरकर को कुछ कहना है, तो उसे स्पष्ट बता दें, हम उसका पूरा उत्तर देंगे.... जिन्होंने अस्पृश्यों के उद्धार के लिए प्रयास किये वे ही हमारी आलोचना करें, हमारे आलोचक हमें तंग न करें, हमें और हमारे लोगों को गड्ढे में गिर जाने की स्वतन्त्रता वे दें।

बाबा साहेब ने अपने भाषण में हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म के मध्य अनेक अन्तर को स्पष्ट किया। हिन्दू धर्म ईश्वरवादी है, बोद्ध धर्म अनीश्वरवादी है। हिन्दू धर्म आत्मा में विश्वास करता है, बौद्ध धर्म अनात्मावादी है। हिन्दू धर्म वर्ण व्यवस्था तथा जाति व्यवस्था को स्वीकार करता है बौद्ध धर्म इन्हें स्वीकार नहीं करता अपितु वर्ण व्यवस्था का विरोध करता है........। मार्क्सवादी बौद्ध धर्म का अध्ययन करें, उन्हें ज्ञात होगा कि मानव के दुःख कैसे दूर किये जाए? भाषण के अन्त में बाबा साहेब ने घोषणा की कि भगवान बुद्ध का एक भव्य मंदिर बनवाया जायेगा।

इस भाषण में बाबा साहेब ने पहलीबार धर्मान्तरण का समय स्पष्ट किया था। पूरा विश्व इस अवसर की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा था। बाबा साहेब ने 8 सितम्बर 1956 को भाऊराव गायकवाड़ को पत्र लिखकर सूचित किया कि दशहरा के दिन बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने का वे निश्चय कर चुके हैं। बाबा साहेब ने शंकरानंद शास्त्री जो निष्ठावान अनुयायी थे, से भी धर्मान्तरण की चर्चा की और बताया कि मुंबई, सारनाथ या नागपुर में वे बौद्ध धर्म की दीक्षा लेंगे। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि उनका झुकाव नागपुर की तरफ अधिक है क्योंकि–

1. नागपुर बौद्ध धर्मानुयायियों की प्राचीन पवित्र भूमि है। एक बौद्ध गाथा में कहा गया है–

   "एकादान तिडसरे एका नागपुरे आहु,
   एका गांधार विषय एको सी पुनर्सिहले।"

अर्थात भगवान बुद्ध का एक दाँत स्वर्गतुल्य स्थान पर, एक दांत नागपुर में, एक दांत गांधार में और एक दांत सिंहल द्वीप में है।

2. नागपुर प्राचीन काल के प्रसिद्ध नागवंशीय शासकों का मूल स्थान है। नागवंश प्राचीन भारत का महत्वपूर्ण राजवंश था। समुद्रगुप्त के प्रयाग प्रशस्ति से ज्ञात होता है कि उसने आर्यावर्त के प्रथम एवं द्वितीय युद्ध में अनेक नागशासकों को पराजित किया था।[1] नाग लोग बौद्ध धर्मानुयायी थे और इन्हीं के नाम पर इस स्थान पर नाम नागपुर पड़ा।

3. नागपुर प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान एवं शून्यवाद के संस्थापक आचार्य नागार्जुन का जन्म स्थान था।[2] नागार्जुन बौद्ध धर्म के महान प्रचार सम्राट देवपुत्र कनिष्क के दरवार में थे।

संक्षेप में बौद्ध धर्म का नागपुर प्रसिद्ध केन्द्र था। मुंबई की बौद्ध धर्म के केन्द्र के रूप में कोई ख्याति नहीं थी। इसे पुर्तगालियों ने 1668 ई0 में पुर्तगाली राजकुमारी के साथ ब्रिटेन के राजकुमार के विवाह के उपलक्ष्य में दहेज में अंग्रेजों को दे दिया था।[3]

सारनाथ बौद्ध धर्म का प्रसिद्ध केन्द्र था। यही पर युवराज सिद्धार्थ ने ज्ञान प्राप्ति के लिए कौण्डिय आदि 5 ब्राह्मण साधकों के साथ तपस्या की थी।[4] भगवान बुद्ध ने बोध गया में ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् साथ–साथ में ही प्रथम उपदेश दिया था और यहीं से धर्म चक्र प्रवर्तन हुआ जिसे अमरत्व प्रदान करने के लिए देवनाम प्रियदर्शी सम्राट अशोक ने सतम्भ का निर्माण करवाया। सारनाथ बौद्ध धर्म के महान श्रद्धा का केन्द्र अवश्य था, लेकिन बाबा साहेब के धर्म दीक्षा के लिए उपयुक्त नहीं था, क्योंकि–

---

[1] प्रो0 यू0एन0राय, गुप्तकाल, पृ0सं0–

[2] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर, पृ0सं0– 273

[3] N.C.E.R.T., पृ0सं0–

[4] प्रो0वी0सी0पाण्डेय, प्राचीन भारत का रा0 एवं सांस्कृतिक इतिहास, खण्ड–1, पृ0सं0–

1. बाबा साहेब के अधिकांश अनुयायी मुबई (महाराष्ट्र) के आस–पास के थे, जो उनके साथ बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने वाले थे। लाखों अनुयायियों को धर्म दीक्षा के लिए सुदूर सरनाथ ले जाना अव्यवहारिक था।

2. बाबा साहेब के पास अपने लाखों अनुयायियें को सारनाथ ले जाने के लिए पर्याप्त संसाधन नहीं थे।

3. बाबा साहेब के अनुयायी आर्थिक दृष्टि से निर्बल थे, जो सारनाथ की यात्रा का व्यय नहीं उठा सकते थे।

4. भगवान बुद्ध ने अपने धर्म का प्रचार–प्रसार अपने जन्मभूमि (लुम्बनी वन, कपिलवस्तु के शाक्य गणराज्य जो कोशल महाजनपद के अधीन था) सहित उत्तर भारत में किया। ठीक वैसे ही बाबा साहेब भी अपने जन्मभूमि एवं कर्मभूमि में सबसे पहले बौद्ध धर्म का पुनरुत्थान करना चाहते थे।

इस कारण बाबा साहेब का नागपुर दीक्षा का स्थान चुनना, तार्किक एवं व्यवहारिक था। यद्यपि धर्मान्तरण के संभावित तीन स्थानों की घोषणा के बाद नागपुर बौद्ध संस्था के पदाधिकारियों ने बाबा साहेब को पत्र लिखकर नागपुर में ही दीक्षा समारोह आयोजित करने का अग्रह किया था। बाबा साहेब ने 23 सितम्बर 1956 को एक पत्रक निकाल कर नागपुर में दीक्षा लेने की घोषणा कर दी।

बाबा साहेब ने दीक्षा समरोह की रूपरेखा निश्चित करने के लिए भारतीय बौद्धजन समिति की शाखा के कार्यवाहक वामनराव गोडवोले को दिल्ली आमंत्रित किया। दीक्षा समारोह के सम्बन्ध में उन्होंने सविस्तार चर्चा की और यह विशेष रूप से बताया कि समारोह भव्य रूप में आयोजित होना है। अपने निवास आदि का उचित प्रबन्ध करने को भी कहा। बाबा साहेब ने विशेष तौर पर बताया कि उनका निवास ऊपरी मंजिल पर होना चाहिए तथा लिफ्ट की सुविधा भी हो।

समारोह की रूपरेखा तैयार करने के पश्चात् इस मुद्दे पर भी गंभीर विचार–विमर्श किया गया कि किस बौद्ध भिक्षु से दीक्षा ग्रहण करें। अंत में कुशीनारा

(उ0प्र0 के वर्तमान पडरौना जिले में स्थित है जहाँ भगवान बुद्ध को 486B.C. में महापरिनिर्वाण प्राप्त हुआ था) के बौद्ध भिक्षु चन्द्रमणि के नाम पर सहमति बनी। बाबा साहेब ने महास्थविर चन्द्रमणि को एक पत्र लिखा– हमें ऐसा लगता है कि आप दीक्षा समारोह का पौरोहित्य स्वीकार करें।[1] आपके भारत के सबसे बृद्ध भिक्षु होने से आपके हाथों दीक्षा समारोह सम्पन्न होना उचित होगा। आपको नागपुर लाने के लिए हम अपना आदमी भेज दें। तदानुसार आप हवाई जहाज या गाड़ी से आइये। आपकी इच्छा के अनुसार प्रबन्ध किया जायेगा।[2]

बाबा साहेब ने अपनी पत्नी डा0 सविता अम्बेडकर एवं अपने सचिव नानकचन्द्र रत्तू के साथ 11 अक्टूबर को हवाई जहाज से नागपुर जाना निश्चित किया। बाबा साहेब ने देवप्रिय वाली सिंह के पास यह संदेश भेजा कि इस समारोह में भारतीय महाबोधि संस्था भाग ले। वहाँ कौन से संस्कार होने हैं मुझे नहीं पता। जो कुछ नित्य के संस्कार होंगे, उनके अतिरिक्त मेरी स्वयं की बनाई गई एक शपथ विधि है। वह शपथ विधि दीक्षा समारोह के समय कोई भिक्षु या अन्य कोई बता देगा। बाबा साहेब ने 6 अक्टूबर को पुनः देवसिंह वाली को पत्र लिखा– कि अगर दीक्षा समारोह के संबंध में आपमें और मुझमें कुछ मतभेद होंगे तो वे दूर करने के लिए आप समारोह से पहले नागपुर आ जायें।

बाबा साहेब के निर्देशानुसार उनके अनुयायी समारोह की तैयारी में पूर्ण मनोयोग के साथ लग गये। नागपुर में अंवाक्षरी और माताकेचरी के समीप स्थित विशाल मैदान पर वैशाख पूर्णिमा के दिन भूमि पूजन कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। 14 एकड़ भूमि पर कार्यक्रम के साज–सुसज्ज का कार्य आरम्भ हुआ। मैदान के उत्तरी दिशा में एक बड़े क्षेत्रफल में व्यास पीठ बनाया गया। उसका आकार विश्व प्रसिद्ध सॉची स्तूप (म0प्र0 के विदिशा जिले में स्थित इसे शुंगकाल में बनाया गया था) की भाँति बनाया गया और उसे धवल वस्त्र से सुसज्जित किया गया। व्यास पीठ के दोनो तरफ दो बड़े मंडप बनाये

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीचन चरित, पृ0सं0– 472

[2] वही, पृ0सं0– 472

गये, जिसमें से एक पुरुषो के लिए और दूसरा महिलाओं के लिए था। सम्पूर्ण आयोजन स्थल को बौद्ध धर्म चिन्ह अंकित पताकाओं, झण्डों आदि से अलंकृत किया गया।[1]

बाबा साहेब अपनी धर्म पत्नी डा0 सविता अम्बेडकर व अपने निजी सहायक नानक चन्द्र रत्तू के साथ 11 अक्टूबर 1956 को दोपहर दिल्ली से नागपुर हवाई जहाज से आ गए। उनके रहने की व्यवस्था नागपुर के श्याम होटल में किया गया था। बाबा साहेब के आगमन को गुप्त रखा गया था और केवल कुछ विश्वस्त अनुयायियों को ही जानकारी दी गई थी। बाबा साहेब ने उस रात्रि होटल कक्ष में हारमोनियम एवं तबले पर बुद्ध वन्दना का अभ्यास किया। अगले दिन 12 अक्टूबर को बाबा साहेब ने संवाददाता सम्मेलन आयोजित किया, जिसमें स्पष्ट किया– भगवान बुद्ध द्वारा उपदेशित धर्म दर्शन को मैं स्वीकार करूँगा और आजीवन उसका पालन करूँगा। बौद्ध धर्म के हीनयान और महायान नामक सम्प्रदायों (बौद्ध धर्म का हीनयान और महायान में विभाजन देवपुत्र कनिष्क के समय आचार्य वसुमित्र की अध्यक्षता में काश्मीर के कुण्डवन नामक स्थान में हुई चतुर्थ बौद्ध संगीत में हो गया था)[2] के विभेदों से मुक्त रह कर मेरे अनुयायी आचरण करेंगे। हमारा बौद्ध धर्म नवबौद्ध धर्म या नवयान होगा'' एक पत्रकार ने यह सवाल किया कि आप बौद्ध धर्म क्यों स्वीकार कर रहे हैं? इस प्रश्न से बाबा साहेब क्रोधित हो गये और कहा– ''मैं हिन्दू धर्म का त्याग कर बौद्ध धर्म क्यों स्वीकार कर रहा हूँ, यह प्रश्न आप स्वयं से या अपने पूर्वजों से क्यों नहीं करते?

बाबा साहेब ने आगे कहा– ''इस देश की संस्कृति, विचार और परम्परा से जुड़ा हुआ धर्म केवल बौद्ध धर्म है। हम पूरे विश्व को समता, स्वतन्त्रता, और बंधुभाव का महान विचार दे रहे हैं।..... मैं एक बार अस्पृश्यता के प्रश्न पर गाँधी जी से चर्चा कर रहा था, तब मैंने उनसे कहा था कि यद्यपि अस्पृश्यता की समस्या के बारे में आपके साथ मेरे

[1] बुद्ध शरणे हंस, बाबा साहेब अम्बेडकर (जीवन कथा), पृ0सं0– 166
[2] प्रो0 वी0सी0 पाण्डेय, प्राचीन भारत का रा0एवं सांस्कृति इतिहास, पृ0सं0–

मतभेद हैं, फिर भी समय आने पर मैं उस मार्ग को स्वीकार करूँगा, जिससे इस देश को कम से कम हानि हो।[1]

देश के विभिन्न भागों से बौद्ध भिक्षुओं को आमंत्रित किया गया था, वे सभी आ रहे थे। उनके रहने की व्यवस्था और भोजन की व्यवस्था बाबा साहेब के निर्देशानुसार हो रही थी। देश के विभिन्न भागों से लाखों अनुयायी नागपुर दीक्षा भूमि पहुँच रहे थे। जिन व्यक्तियों के पास किराये के पैसे नहीं थे, पैदल ही मीलों की यात्रा कर नागपुर पहुँच रहे थे। नागपुर का सम्पूर्ण वातावरण बुद्धमय हो गया था। सड़कें 'भगवान बुद्ध की करुणा हो', 'जय भीम', 'जय बुद्ध', 'नमो भीम', 'नमो बुद्ध' के नारों से गूँज रही थीं। नागपुर आ रहे लाखों लोगों में असीम उत्साह–उल्लास एवं श्रद्धा थी। ''बाबा साहेब करे पुकार, बौद्ध धर्म करो स्वीकार, जमीन आसमान एक करो, बौद्ध धर्म स्वीकार करो'' के गगन भेदी नारों से सम्पूर्ण वातावरण गूँज रहा था।[2]

बाबा साहेब 14 अक्टूबर 1956 को प्रातः जल्दी उठे, यद्यपि 13 अक्टूबर की रात्रि को कतिपय सहयोगियों के साथ धर्मान्तरण के मुद्दे पर चर्चा की थी, फिर भी हर्षातिरेक के कारण रात्रि को ठीक से नींद नहीं आई और वे प्रातः ही जग गये। बाबा साहेब ने गर्म पानी से स्नान किया और तैयार हो गये। अपने निजी सहायक नानकचन्द्र रत्तू को आयोजन स्थल की तैयारी देखने के लिए भेज दिया। वापस आकर नानकचन्द्र ने बाबा साहेब को तैयारी का पूरा ब्योरा दिया, इससे बाबा साहेब पूर्ण सन्तुष्ट हुए।

बाबा साहेब ने उस शुभ दिन सफेद लंबा कोट, सफेद कुर्ता और नयी सफेद रेशमी धोती धारण किया। इस सफेद वस्त्र के पीछे महत्वपूर्ण भाव छिपा हुआ था। बौद्ध धर्म के इतिहास में भिक्षुओं के लिए गेरुवा वस्त्र और उपासकों के लिए धवल (सफेद) वस्त्र का प्रावधान था। बाबा साहेब को बौद्ध धर्म ग्रहण करके भिक्षु नहीं बनना था अपितु सम्राट अशोक की भांति उपासक बौद्ध धर्म स्वीकार करके बौद्ध धर्म का प्रचार प्रसार करना था। बाबा साहेब सम्राट अशोक के उदाहरण का अनुगमन कर रहे थे।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 474,
[2] वही, पृ0सं0– 473

बाबा साहेब की धर्म पत्नी डा0 सविता अम्बेडकर भी सफेद रेशमी साड़ी पहने थीं। बाबा साहेब अपनी पत्नी तथा निजी सहायक के साथ प्रातः 8:30 बजे होटल श्याम से निकल कर कार द्वारा दीक्षा भूमि के लिए प्रस्थान किए। 9:00 बजे दीक्षा भूमि पहुँच कर बाबा साहेब ने एक हाथ डंडे पर और दूसरा हाथ नानकचन्द्र रत्तू के कंधे पर रखकर जब अपने लाखों अनुयायियों को दर्शन देने के लिए खड़े हुए तो विशाल जन समूह ने तालियों की करतल ध्वनि से अपने परम पूज्य बाबा साहेब का स्वागत किया। फोटो ग्राफरों में बाबा साहेब का चित्र लेने की आपाधापी मच गई। बाबा साहेब के देदीप्यमान चेहरे पर अलौकिकता का आभास हो रहा था।

व्यास पीठ की मेज पर भगवान बुद्ध की एक छोटी सी ब्रोंज धातु की मूर्ति रखी थी। व्यास पीठ पर देवप्रिय वाली सिंह, कुशीनगर के स्थविर चन्द्रमणि, सारनाथ के बौद्ध भिक्षु सदातिस्सा, सांची के पूज्य भिक्षु पन्नातिक्षा, हुवली के पण्णानंद आदि बौद्ध भिक्षु बाबा साहेब के साथ विराजमान हुए। सम्पूर्ण पाण्डाल धूपबत्तियों की महक तथा दीपों के प्रकाश से जगमग हो रहा था। हजारों बौद्ध भिक्षु आगे की पंक्ति में बैठे थे।

कार्यक्रम का शुभारम्भ कुभारी इन्दुमती वलवंत वराल द्वारा गाये गये भीम गौरवगीत से हुआ। तत्पश्चात् बाबा साहेब के पिता की स्मृति में दो मिनट मौन धारण कर जनसागर ने खड़े होकर उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित की। बाबा साहेब ने इसके बाद बौद्ध भिक्षु महास्थविर चंदमणि के साथ बुद्ध प्रतिमा के सम्मुख मोमबत्ती प्रज्ज्वलित कर पुष्प अर्पित किया। महास्थविर चंद्रमणि ने पुष्प पूजा की गाथा का उच्चारण किया जो पालि भाषा में इस प्रकार है–

वणगन्ध गुणोंपेतं, एतं कुसुम स्नति। पूज्यामि मुसिदस्य सिरीपाद सहो रुहे।

पूजेमि बुद्धं कुसुमेननेन पुत्त्रेन मेन्तेन लभामि मोक्ख।

अर्थात वर्ण, गन्ध और सुन्दर गुणों से युक्त पुष्पों से मैं भगवान बुद्ध के चरण कमलों की पूजा करता हूँ। इस पुष्प से मुझे निर्वाण प्राप्त होगा। यह पुष्प जैसे–जैसे मुरझायेगा, वैसे–वैसे मेरा शरीर विनाश की ओर अग्रसर होगा।

महास्थविर चन्द्रपमणि और चार अन्य बौद्ध भिक्षुओं ने बाबा साहेब और उनकी धर्म पत्नी डा0 सविता अम्बेडकर को पालि भाषा में (प्राचीन बौद्ध ग्रन्थ पालि भाषा में ही लिखे गये हैं) त्रिशरणं दिया–

बुद्धं शरणं गच्छामि।

धम्मं शरणं गच्छामि।

सघं शरणं गच्छामि।।

तत्पश्चात् पंचशील दिया–[1]

1. पाणातिपाता वेरमणी सिक्खा पदं समादियामि।
2. आदि–नानाना वेरमणी सिक्खा पदं समादियामि।
3. कामेसुमिच्छाचारा वेरमणी सिक्खा पदं समादियामि।
4. मूसावादा वेरमणी सिक्खा पदं समादियामि।
5. सुरामैरे यमज्जयमादिद्वाना वेरमणि सिक्खा पदं समादियामि।।

बाबा साहेब ने पंचशील का पाठ पालि और मराठी दोनों में किया। शपथ विधि पूर्ण होते ही बाबा साहेब ने भगवान बुद्ध के चरणों में सिर झुका कर तीन बार प्रणाम किया और पुष्पमाला पहनाई। इसी के साथ यह घोषणा की गई कि डा0 अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म अंगीकार कर लिया है। विशाल जन समुदाय ने यह सुनते ही बाबा साहेब अम्बेडकर की जय, भगवान बुद्ध की जय के गगनभेदी नारों से वातावरण को गुंजित कर दिया। पूरे कार्यक्रम का फिल्मांकन किया गया। यह दीक्षा कार्यक्रम 10:10 बजे हुआ।[2] अनुयायियों ने भाव–विभोर होकर पुष्पमाला से बाबा साहेब को लाद दिया। देवप्रिय वाली सिंह ने बाबा साहेब और उनकी पत्नी डा0 सविता अम्बेडकर को भगवान बुद्ध की मूर्ति उपहार स्वरूप भेंट की। बाबा साहेब ने कहा– "आज मैं अपने पुराने धर्म

---

[1] बाबा साहेब अम्बेडकर, जीवन कथा– बुद्ध शरण हंस, पृ0सं0– 170
[2] बुद्ध शरण हंस, बाबा साहेब अम्बेडकर (जीवन गाथा), पृ0सं0– 170

का त्याग कर फिर से जन्म ले रहा हूँ। बाबा साहेब ने अपने द्वारा रचित 22 प्रतिज्ञायं भी पढ़ीं। उन्होंने जब शपथ ली कि मैं हिन्दू धर्म के देवताओं की पूजा नहीं करूँगा और घोषणा की कि मैं हिन्दू धर्म का त्याग कर रहा हूँ, तब उनका गला एक–दो बार अवरुद्ध हुआ।[1]

बाबा साहेब ने बौद्ध धर्म को स्वीकार करने के पश्चात् अपने अनुयायियों से कहा कि जो बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने वाले हैं वे खड़े हो जायें। दस लाख लोगों का विशाल जन–समुदाय उठ खड़ा हुआ। बाबा साहेब ने सर्व प्रथम त्रिशरणं एवं पंचशील का पाठ पढ़ाया। तत्पश्चात् स्वनिर्मित 22 प्रतिज्ञायें करवाई। बाबा साहेब प्रतिज्ञा पढ़ते थे और अनुयायी उसी का उच्चारण करते थे जो इस प्रकार थीं–

1. मैं ब्रह्मा, विष्णु, महेश को कभी ईश्वर नहीं मानूँगा और न हीं मैं इनकी पूजा करूँगा।
2. मैं राम और कृष्ण को भी ईश्वर नहीं मानूँगा और उनकी पूजा कभी नहीं करूँगा।
3. मै गौरी–गणपति आदि हिन्दू धर्म के किसी भी देवी–देवता को नहीं मानूँगा और न ही उनकी पूजा करूँगा।
4. ईश्वर ने अवतार लिया है इस पर मेरा विश्वास नहीं है।
5. मैं ऐसा कभी नहीं मानूँगा कि बुद्ध ईश्वर के अवतार हैं, ऐसे प्रचार को मैं असत्य समझता हूँ।
6. मैं श्राद्ध कभी नहीं करूँगा और न कभी पिण्डदान करवाऊँगा।
7. मैं बौद्ध धर्म के विरुद्ध कभी कोई बात नहीं करूँगा।
8. मैं कोई भी क्रिया कर्म ब्राह्मणों के हाथों नहीं करवाऊँगा।
9. मैं इस सिद्धान्त को मानूँगा कि सभी मनुष्य समान हैं।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 476

10. मैं समानता की स्थापना का यत्न करूँगा।

11. मैं भगवान बुद्ध के अष्टांगिक मार्ग का पूर्ण पालन करूँगा।

12. मैं भगवान बुद्ध के बताये हुए 10 परिमिताओं का पूर्ण पालन करूँगा।

13. मैं प्राणिमात्र पर दया करूँगा और उनका लालन–पालन करूँगा।

14. मैं कभी चोरी नहीं करूँगा।

15. मैं कभी झूठ नहीं बोलूँगा।

16. मैं व्यभिचार नहीं करूँगा।

17. मैं मदिरा सेवन नहीं करूँगा।

18. मैं अपने जीवन में बोद्ध धर्म के तीन तत्व– प्रज्ञा, शील और करुणा का पालन करूँगा।

19. मैं मानव मात्र के विकास के लिए हानिकारक और मनुष्य मात्र को ऊँच–नीच मानने वाले हिन्दू धर्म को पूर्णतया त्याग कर बौद्ध धर्म स्वीकार करता हूँ।

20. यह मेरा पूर्ण विश्वास है कि भगवान बुद्ध का धर्म ही सही धर्म है।

21. मैं यह मानता हूँ कि अब मेरा पुनर्जन्म हो रहा है।

22. मैं यह पवित्र प्रतिज्ञा करता हूँ कि आज से मैं बौद्ध धर्म के अनुसार आचरण करूँगा।

इस प्रतिज्ञा के बाद सभी लगभग 10 लाख अनुयायी बौद्ध धर्म में दीक्षित हो गये। मानव जाति में इतना बड़ा धर्म परिवर्तन इसके पूर्व कभी नहीं हुआ था कि बिना लोभ, भय या हिंसा के इतने अधिक व्यक्तियों ने धर्म परिवर्तन स्वेच्छा से खुशी–खुशी किया। भगवान बुद्ध ने सारनाथ से धर्म चक्र प्रवर्तन किया तो बाबा साहेब ने यह कार्य नागपुर से किया था। बाबा साहेब के साथ जिन प्रमुख व्यक्तियों ने दीक्षा ली थी उसमें

नागपुर उच्च न्यायालय के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश डा0 एम0भवानीशंकर नियोगी, म0मि0 चितणीस, दादा साहेब गायकवाड, बाबू हरिदास आवले, वीसी0 काम्बले आदि उल्लेखनीय हैं।[1]

बाबा साहेब और उनके लाखों अनुयायियों द्वारा बौद्ध धर्म ग्रहण करना महान ऐतिहासिक घटना थी। यह विश्व में चर्चा एवं आकर्षण का केन्द्र बनी। वर्मा के प्रधानमंत्री यू0वा0स्वे ने बाबा साहेब के पास पत्र भेजा। कलकत्ता के डा0 अरविन्द वरुआ, कोलम्बों (श्रीलंका) के एच0डब्लू0 अमरसूरिया ने भी बताई पत्र भेजा। एक महत्वपूर्ण बात यह रही कि पं0 जवाहर लाल नेहरू, डा0 राजेन्द्र प्रसाद, डा0 राधाकृष्णन, राजगोपालाचारी आदि किसी भी प्रमुख भारतीय नेताओं ने एक भी शब्द इस महत्वपूर्ण घटना पर नहीं कहा।

समाचार पत्रों में मिश्रित प्रतिक्रिया हुई। इण्डियन एक्सप्रेस ने कहा कि डा0 अम्बेडकर अब आदर्श ब्राह्मण हो गये हैं, दैनिक हितवाद ने कहा– धर्मान्तरण यह इस सदी की महान घटना है। डा0 अम्बेडकर को सम्राट अशोक महान की पंक्ति रखा गया। वीर सावरकर ने कहा– अम्बेडकर का पंथान्तरण हिन्दू धर्म में मारी गई छलांग है, बौद्ध अम्बेडकर हिन्दू अम्बेडकर ही हैं।

कार्यक्रम के सम्पन्न होने के पश्चात् बाबा साहेब श्याम होटल लौट आये। होटल में ही उन्होंने अपने कुछ प्रमुख व्यक्तियों से कहा– "मुझे मालुम है कि आपको धर्म की अपेक्षा राजनीति में अधिक उत्साह है, लेकिन मुझे राजनीति की अपेक्षा धर्म के प्रति विशेष अभिरुचि है।" उस रात्रि दीक्षा भूमिपर चिटणीस द्वारा लिखित युग यात्रा का मंचन हुआ।

अगले दिन 15 अक्टूबर 1956 को दीक्षा भूमि में बाबा साहेब का ऐतिहासिक भाषण हुआ– "सभी बौद्ध जनों तथा उपस्थित मेहमानों कल और आज सुबह बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने का जो कार्यक्रम सम्पन्न हुआ और उसके लिए जो स्थान निश्चित किया

---

[1] डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर की संघर्ष यात्रा एवं संदशे, पृ0सं0– 301

गया, उसका क्या कारण है, इस सम्बन्ध में विचारकों के मन में प्रश्न पैदा हुआ है। उनके तथा मेरे मतानुसार कल का समारोह आज और आज का समारोज कल होना था।..... फिर भी तिथि परिवर्तन से कुछ फर्क नहीं पड़ता.... कुछ लोग कहते हैं कि नागपुर आर0एस0एस0 (राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ) का गढ़ है, इसलिए उन्हें चिढ़ाने के लिए हमने यह समारोह नागपुर में आयोजित किया। हमारा कार्य इतना विस्तृत है कि जीवन का प्रत्येक क्षण हमारे लिए कम है। छींक कर अपशकुन करने के लिए मेरे पास समय नहीं हैं स्थान चुनने का कारण भिन्न है............ आर0एस0एस0 के बारे में मेरे मन में कोई विचार नहीं आया। वैसे उसका किसी को अर्थ नहीं लगाना चाहिए।......

पूर्व में हमने मांसाहर छोड़ने का आन्दोलन किया था..... हम बौद्ध हुए हैं, फिर भी हम राजनैतिक अधिकार प्राप्त करेगे, इसका मुझे पूरा विश्वास है। मेरी मृत्यु के पश्चात् क्या होगा, यह मैं नहीं कह सकता। इस आन्दोलन के लिए बहुत कार्य करना पड़ेगा.... हमने हिन्दू धर्म छोड़ने का आन्दोलन 1935 में यवेला में एक प्रस्ताव पारित कर शुरू किया था। मैंन प्रतिज्ञा ली थी कि मैंने यद्यपि हिन्दू धर्म मे जन्म लिया है, लेकिन हिन्दू धर्म में मरूँगा नहीं। यह प्रतिज्ञा मैंने कल पूरी कर दिखाई। मुझे बहुत खुशी हुई। नरक से छुट्टी हुई है, ऐसा मुझे लग रहा है...... हिन्दू धर्म में समता नहीं है.... हिन्दू धर्म से किसी का उद्धार नहीं हो सकता। वह धर्म ही विनाशकारक है...........हमारा उत्कर्ष केवल बौद्ध धर्म में ही हो सकता है।

आपने धर्मान्तरण करने में इतना विलम्ब क्यों किया? इतने दिन क्या कर रहे थे? यह महत्वपूर्ण प्रश्न है। धर्म की महत्ता बताना कोई आसान काम नही है। यह एक मनुष्य का काम नहीं हैं मुझ पर जितनी जिम्मेदारी है, उतनी विश्व के किसी अन्य व्यक्ति पर नहीं है। मुझे दीर्घायु प्राप्त हो जाए तो मैं नियोजित कार्य पूरा करूँगा (डा0 बाबा साहेब अमर रहे की घोषणा)........... यह नया मार्ग जिम्मेदारी का है.......... मुझे सबको साथ लेकर चलना है।" तालियों की गडगड़ाहट से बाबा साहेब का भाषण समाप्त हुआ।

इस प्रकार बाबा साहेब ओर उनके 10 लाख अनुयायियों द्वारा बौद्ध धर्म ग्रहण करने का दीक्षा समारोह सम्पन्न हुआ। कुछ लोगों का आरोप है कि यह धर्मान्तरण राजनैतिक चाल थी। यह उसी प्रकार का आरोप है जैसे महान सम्राट अशोक के धम्म नीति को प्रो0 रोमिला थापर जैसे लोग राजनैतिक चाल मानते हैं। जिस प्रकार इतिहास का गंभीर निष्पक्ष अनुशीलन सिद्ध करता है कि धम्म अशोक की राजनैतिक चाल न हाकर प्रजाका इहलैकिक तथा पारलैकिक कल्याण करना था, उसी प्रकार बाबा साहेब का बौद्ध धर्म ग्रहण करने का एक मात्र उद्देश्य हजारों वर्षो से उपेक्षित, शोषित, दमित, और बद्दलित करोड़ों मानवों को दुःखों से मुक्ति देना था। भगवान बुद्ध का भी तो गृह त्याग के पीछे दुःख का उन्मूलन ही मुख्य उद्देश्य था।

बड़ी संख्या में समीक्षक, नेता तथा समाचार पत्र इसे बाबा साहेब का पलायन मानते हैं। यह भी असत्य एवं आधारहीन आरोप हैं। यह आरोप वही लोग लगाते हैं जो या तो सवर्ण मानसिकता से ओत–प्रोत हैं या बाबा साहेब के व्यक्तित्व से अनजान हैं। बाबा साहेब ने जीवन में कभी पलायन जाना ही नहीं, वे तो आजीवन योद्धा रहे जो अन्याय, अत्याचार, शोषण, मनुवादी व्यवस्था के विरुद्ध सघर्ष करते रहे।

बाबा साहेब ने अपना पूर्ण ध्यान बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार में लगाने का दृढ़ निश्चय किया था लेकिन उनका स्वास्थ्य साथ नहीं दे रहा था। एक ओर रक्त चाप से और दूसरी ओर मधुमेह से परेशान थे। फिर भी उनका मन उत्साह से भरा हुआ था। उन्होंने प्रमुख बौद्ध स्थलों की यात्रा करने का निश्चय किया। नवम्बर 1956 में नेपाल में आयोजित हुई विश्व बौद्ध सम्मेलन में खराब स्वास्थ्य के बावजूद बाबा साहेब ने भाग लेने का निश्चय किया। नेपाल निवास का सम्पूर्ण बन्दोवस्त कलकत्ता के एम0ज्योति ने किया। बाबा साहेब 14 नवम्बर को जहाज द्वारा पटना से काठमांडु रवाना हुए। 15 नवम्बर 1956 को सम्मेलन का उद्घाटन महाराजा महेन्द्र सिंह ने किया। सम्मेलन में बोलते हुए बाबा साहेब ने कहा "बौद्ध धर्म विश्व का सबसे बड़ा धर्म है क्योंकि वह केवल

धर्म न हाकर एक महान सामाजिक सिद्धान्त हैं यह विश्व को बताने मैं आया हूँ।"[1] परिषद के प्रतिनिधियों ने 20 नवम्बर को डा0 अम्बेडकर से कार्ल मार्क्स और बुद्ध विषय पर बोलने का आग्रह किया। उक्त विषय पर बोलते हुए बाबा साहेब ने कहा– "बुद्ध और मार्क्स का उद्देश्य एक ही था। मार्क्स के अनुसार व्यक्तिगत सम्पत्ति ही दुःख का मूल कारण है। बुद्ध के अनुसार व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं रखना चाहिए, क्योंकि वह दुःखों का कारण है.... लेकिन दोनो के मार्ग अलग–अलग हैं। मार्क्स का मार्ग हिंसा पर आधारित है और बुद्ध का मार्ग अहिंसा पर आधारित है।" बाबा साहेब का यह भाषण अत्यन्त प्रभावशाली रहा।

नेपाल से लौटते समय बाबा साहेब भगवान बुद्ध की जन्म स्थली लुम्बनीवन का दर्शन किया जहाँ 563BC (ई0पू0) में वैशाख पूर्णिमा के दिन उनका जन्म हुआ था।[2] लुम्बनीवन (नेपाल की तराई में स्थित है) पहुँचकर बाबा साहेब आत्मविभोर हो उठे। वहीं से बाबा साहेब कुशीनगर आये जहाँ भगवान का महापरिनिर्वाण हुआ था। यहाँ बाबा साहेब को बौद्ध धर्म के क्षणिक सिद्धान्त (विश्व में सब कुछ क्षणिक मात्र अस्तित्व में हैं) का विशेष स्मरण हुआ।

बाबा साहेब 24 नवम्बर 1956 को काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के समारोह में भाग लिया। 25 नवम्बर को प्रातः 10 बजे काशी विद्यापीठ के छात्र संघ का उद्घाटन करते हुए कहा– "बुद्ध के धर्म का प्रारम्भ ठोस आधार पर हुआ है। यह मानव धर्म है और मानव कल्याण के लिए इससे बढ़कर दूसरा कोई धर्म नहीं है।"[3]

बाबा साहेब का स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन खराब होता जा रहा था, उनकी पत्नी डा0 सविता अम्बेडकर निजी सचिव स्वास्थ्य पर नजर लगातार रखे रहे। बाबा साहेब ने 1 दिसम्बर 1956 को दिल्ली में लगी प्रदर्शनी देखी। प्रदर्शनी मे लगी बुद्धिस्ट आर्ट गैलरी से बाबा साहेब ने कुछ पुस्तकें खरीदीं। 2 दिसम्बर 1956 को बाबा साहेब ने

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 482
[2] डा0 बी0आर0 अम्बेडकर, द बुद्ध एण्ड हिज धम्मा , पृ0सं0– 5
[3] प्रो0 अगने लाल, बोधिसत्व बाबा साहेबब डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृ0सं0– 141

दलाई लामा के सम्मान में दिल्ली के अशोक बिहार में आयोजित समारोह में भाग लिया। 3 दिसम्बर की शाम को बाबा बहुत थके हुए थे और अपने आवास के लॉन में अपनी पत्नी डा0 सविता अम्बेडकर, उनके पिता कृष्णराम कबीर और डा0 माधवराव मालवणकर के साथ कुछ देर बैठे तथा कुछ देर रत्तू के कंधे पर हाथ रख कर टहले। अपने बूढ़े माली जो बीमार चल रहा था, से बाचचीत की फिर उसकी झोपड़ी से निकल कर धीरे–धीरे टहलते हुए रत्तू से कहा– "देखो इस गरीब आदमी को मरने का डर लगता है, मैं नहीं डरता मृत्यु किसी भी क्षण आ जाए।"

4 दिसम्बर को बाबा साहेब राज्य सभा गये जहाँ अपने ईष्ट मित्रों से मुलाकात की। यही उनकी अंतिम यात्रा सिद्ध हुई। उसी दिन बाबा साहेब के पत्नी के पिता, भाई और जाधव दिल्ली से रेलगाडी से बंबई के लिए निकले। रेलयात्रा स्वास्थ्य को देखते हुए असंभव थी, इसलिए बाबा साहेब ने 14 दिसम्बर को हवाई जहाज से बंबई जाने का कार्यक्रम बनाया।

5 दिसम्बर को बाबा साहेब का स्वास्थ्य और खराब रहा तथा अपनी पत्नी से झड़प भी हुई थी।[1] उसी दिन एक जैन प्रतिनिधि मण्डल से भी मिले। उसी दिन शांय रत्तू से भगवान बुद्ध और उनका धम्म की टंकणित प्रति मंगवाई। (रात्रि 11:00 बजे) रत्तू किताब–कागज और अन्य सामग्री रखकर चले गए) रत्तू बाबा साहेब के पैर दबाए, सिर में तेल लगाया। बाबा साहेब धीरे–धीरे कुछ गुनगुना रहे थे। धीरे धीरे स्पष्ट हो रहा था कि वे बुद्धं शरणं गच्छामि गुनगुना रहे थे। उन्होंने यह गीत रेडियो ग्राम पर लगाने के लिए रत्तू को कहा। उसी समय रसोइये ने कहा– खाना तैयार है। बाबा साहेब ने केवल चावल खाया और कुछ नहीं। रत्तू का हाथ पकड़कर खड़े हुए और "महात्मा कबीर का चलो कबीरा तेरा भवसागर डेरा" पद गुनागुनाना आरम्भ किया। धीरे–धीरे अपने पुस्तकालय का एक ग्रन्थ देखा, फिर शयन कक्ष में आ गये तथा रत्तू ने पैर दबाना आरम्भ किया। अब तक रात्रि के 11:15 बज चुके थे और रत्तू यह जानकर कि बाबा

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 486

साहेब सो चुके हैं अपने घर के लिए प्रस्थान किए। रत्तू बाहर निकले ही थे कि सुदामा ने आवाज दी कि बाबा साहेब बुला रहे हैं। रत्तू वापस आए तो बाबा साहेब ने बुद्ध और उनका धम्म पुस्तक की टंकणिका प्रतियां मेज पर रखने को कहा। रत्तू प्रतियाँ रखकर घर चले गये, लेकिन उन्हें शायद आभास नहीं था कि यह उनको दर्शन तथा सेवा करने की अन्तिम रात्रि है। सुदामा ने भी बाबा साहेब के बिस्तर के पास मेज पर पानी, कॉफी से भरा थर्मस तथा मिठाईयां रख दी। बाबा साहेब नियमित इनका सेवन रात्रि में करते थे। सुदामा को भी दूर–दूर तक आभास नहीं हुआ कि बाबा साहेब अब कभी इन वस्तुओं का सेवन नहीं कर पायेंगे।

6 दिसम्बर को प्रातः डा0 सविता अम्बेडकर उठीं और अपने पति बाबा साहेब के कमरे में 6:30 बजे झांक कर देखा कि बाबा साहेब का पाँव तकिये पर टिका हुआ था, और लगा कि वे सो रहे हैं। डा0 सविता अम्बेडकर नियमित दिनचर्या की भाँति बगीचे में टहलने चली गईं। वापस आकर बाबा साहेब के कमरे में गईं और उन्हें जगाना चाहा तो उनके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा। कॉपती हुई आवाज में लड़खड़ाती हुई डा0 सविता अम्बेडकर मूर्छित होकर सोफे पर गिर गईं। उसी समय रत्तू आ गए, कुछ नौकर दौड़कर उनको बुला लाये थे। हॉफते कॉपते रत्तू शयन कक्ष में पहुँचे और बाबा साहेब की वह शान्त मुद्रा देखते ही आवाक रह गए और बोले– क्या ...बाबा... ग........।''[1] रत्तू ने बाबा साहेब के पैर पर झुक कर कहा– ''बाबा साहेब मैं सेवा के लिए आया हूँ, मुझे काम दीजिए।'', कह कर वे जोर–जोर से रोने लगे। उधर डा0 सविता अम्बेडकर का रो–रोकर बुरा हाल था। उनके पति, उनका सौभाग्य, आश्रय सब कुछ सदा–सदा के लिए साथ छोंड गया था। एक पत्नी के लिए पति के देहान्त से दुःखद त्रासदीपूर्ण घटना जीवन में नहीं होती वही दशा सविता अम्बेडकर की थी। आस – पास के लोग उन्हें ढाढ़स बधा रहे थे। करोणों शोषितों के मसीहा बाबा साहेब अब चिर निद्रा में सो रहे थे, उनका रास्ता मौन था, कोई स्पंदन नहीं था, यह सच था क्योंकि मृत्यु के पाश से कोई बच नहीं सका है।

---

[1] कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहेब अम्बेडकर जीवन चरित, पृ0सं0– 488।

यह दु:खद समाचार आग की भाँति फैल गया और इसी के साथ बड़ी संख्या में लोग बाबा साहेब के आवास (26 अलीपुर मार्ग दिल्ली) की ओर दौड़ पड़े। प्रधानमंत्री पं0 जवाहर लाला नेहरू समाचार पाकर तत्काल बाबा साहेब के आवास पहुँचे और डा0 सविता अम्बेडकर से बात–चीत कर अपनी शोक संवेदना व्यक्त की। साथ ही अंतिम यात्रा की व्यवस्था के संबंधमें चर्चा की और कहा आप लोगों की इच्छा के अनुरूप पूर्ण व्यवस्था सरकार करेगी।

बाबा साहेब के आवास पर अंतिम दर्शन हेतु पहुंचने वाले अन्य प्रमुख व्यक्तियों में गृहमंत्री गोविन्द बल्लभपंत, संचार मंत्री जगजीवनराम, राज्य सभाके उप सभापति प्रमुख थे। अंततः बाबा साहेब का अंतिम संस्कार मुंबई में होना निश्चित हुआ। इसके लिए केन्द्रीय संचार मंत्री जगजीवनराम ने हवाई जहाज की व्यवस्था की। बाबा साहेब का शव एक ट्रक में व्यास पीठ बनाकर रखा गया। पूर्ण राजकीय सम्मान के साथ शव यात्रा आरम्भ हुई जिसमें लाखों लोगों ने भाग लिया। पं0 नेहरू ने अपने विशेष दूत के माध्यम से बाबा साहेब के शव पर पुष्पमाला अर्पित की। लोक सभा और राज्य सभा के सचिवों ने भी पुष्पमाला अर्पित कीं। बाबा साहेब अमर रहं के स्वर के साथ शव यात्रा आरम्भ हुई, जिसे हवाई अड्डे तक पहुँचने में पॉच घण्टे लगे। रात्रि के 9:30 बजे जहाज दिल्ली से मुंबई के लिए प्रस्थान किया। जहाज में बाबा साहेब के शव के साथ डा0 सविता अम्बेडकर, नानकचंद रत्तू, सुदामा, शंकरानंद शास्त्री, भिक्खू आनंद कोशल्यायन तथा कुछ अन्य व्यक्ति थे।[1] सांताक्रूज हवाई अड्डे पर जहाज प्रातः 3:00 बजे पहुँचा, जहाँ हजारों की संख्या में शोक संतप्त व्यक्ति दर्शन के लिए मौजूद थे। बाबा साहेब का शव दादर स्थित उनके आवास लाया गया जहाँ लाखों व्यक्ति कई घण्टों से अपे मसीहा के अंतिम दर्शन के लिए व्याकुल थे। बाबा साहेब का शव अंतिम दर्शन के लिए उनके आवास पर रखा गया, जहाँ लाखों व्यक्तियों ने अपना श्रद्धा सुमन अर्पित किया और अंतिम दर्शन किया। पूरी मुंबई शोक में डूबी थी, सारा जन जीवन ठप्प रहा। सिनेमाघर तक बंद रहे, स्कूल, कालेज, कारखाने मिलें सभी बंद थीं।

[1] डा0 राजेन्द्र मोहन भटनागर, डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, पृ0सं0– 122

7 दिसम्बर को दोपहर 1:30 बजे बाबा साहेब के निवास से अंतिम यात्रा पूर्ण राजकीय सम्मान के साथ आरम्भ हुई। एक सजे हुए ट्रक में बाबा साहेब का शव था, सिर के पास भगवान बुद्ध की मूर्ति रखी थी। लाखों लोग शव यात्रा में चल रहे थे। पूरे मुंबई में इतनी बड़ी शवयात्रा पहले कभी नहीं हुई थी। जिस रास्ते से शवयात्रा हो रही थी, वहाँ घरों में खड़े नारियों ने पुष्प वर्षा की, मीलों लम्बी शवयात्रा 4 घण्टे बाद दादर शमशान भूमि में पहुँची। बड़ी संख्या में पुलिस के अधिकारी और जवान प्रबन्ध में लगे थे। बौद्ध भिक्षुओं ने बौद्ध धर्म के अनुसार संस्कार विधि आरम्भ की।

बाबा साहेब के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए बौद्ध धर्म भिक्षु आनन्द कोशल्यायन के द्वारा एक लाख लोगों ने बौद्ध धर्म की दीक्षा ली। शायं 7:30 बजे बाबा साहेब के पुत्र यशवंत राव ने बाबा साहेब की चिता को अग्नि दी और इसी के साथ उपस्थित जन सागर की आँखों से अश्रुधारा बहने लगी। चिंता के साथ ही भिक्खू आनन्द कौशल्यायन ने कहा "डा0 अम्बेडकर एक महान नेता थे, उन्होंने देश की सेवा कर निर्वाण प्राप्त कर लिया।"

बाबा साहेब के देहान्त से सारादेश शोक संतृप्त था। सभी अपनी शोक संवेदना व्यक्त कर रहे थे। प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने लोक सभा में श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा– "डा0 अम्बेडकर हिन्दू समाज की प्रत्येक विषमता व उत्पीडन के विद्रोही के रूप में सदैव याद किये जायेंगे, उन्होंने इन विषमताओं के पति लोगों में एक चेतना जाग्रत की। सच तो यह है कि उन्होंने हर उस बात का विरोध किया जिसका कि विरोध होना चाहिए था।"[1] बाबा साहेब के सम्मान में लोकसभा का कार्य एक दिन के लिए स्थगित कर दिया गया।

डा0 राजेन्द्र प्रसाद ने कहा– "अम्बेडकर हमारे संविधान के शिल्पी है और उनकी मृत्यु अनेक क्षेत्रों में की हुई सेवा और विशेषतः दलितों के उद्धार के लिए की हुई सेवा बडी सहनीय है।"

---

[1] हिमांशुराय, युग पुरुष बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, पृ0सं0– 275

राजगोपालाचारी ने कहा– "अम्बेडकर के गुस्से के दर्शन उनके द्वारा कथित बौद्ध धर्म की उनके द्वारा ली गई दीक्षा में होते हैं।...... वे तीखे बुद्धि के कानून ज्ञाता थे........ उनकी विद्वता प्रचंड थी।"

वीर सावरकर ने कहा– "अम्बेडकर के निधन से भारत एक सच्चे महापुरुष से वंचित हुआ।"

विदेशों से भी शोक संदेश आए। मलाया और श्रीलंका के बौद्ध भिक्षुओं ने बाबा साहेब को श्रद्धांजलि अर्पित की। देश के सभी प्रमुख समाचार पत्रों ने भी शोक संवेदना व्यक्त कीं। टाइम्स ऑफ इण्डिया ने लिखा– "अम्बेडकर एक कर्तव्यमान, बुद्धिमान और अठपहलू व्यक्ति थे। अलग परिस्थितियों में उन्होंने अपने समाज और देश की सेवा की।" हिन्दुस्तान टाइम्स ने लिखा – "उनके द्वारा की गई देश की महान सेवा की याद रह जायेगी।" बंबई के फ्री प्रेस जनरल दैनिक ने लिखा– "अन्याय के खिलाफ सात्विकता से झगड़ने वाले एक नेता के रूप में देश को अम्बेडकर की याद चिरकाल तक रहेगी।"

कलकत्ता के स्टेटमैन दैनिक ने लिखा– "उनकी प्रकाण्ड बौद्धिकता और विधि विज्ञान, अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, श्रमिक और राजनीति के विभिन्न शास्त्रों एवं क्षेत्रों के अनुभव ने उन्हें अलग परिस्थितियों में और ठोस कार्य करनके सक्षम किया होता।" अमृत बाजार पत्रिका ने लिखा– "अन्याय पर आधारित और इनसानियत के अधिकार नकारने वाली समाज संरचना का विनाश करने का मानो अम्बेडकर की लड़ाकू प्रवृत्ति ने मानो वीड़ा ही उठाया था।"

विदेशी समाचार पत्रों ने भी अपनी प्रतिक्रियायें व्यक्त की थीं। अमेरिका के न्यायार्क टाइम्स ने लिखा था– "मुख्यतया अस्पृश्यों के हिमायती के रूप में डा0 अम्बेडकर का नाम सारे विश्व को मालुम था। शायद जो नहीं मालुम था वह यह था कि उन्होंने अपने व्यक्तित्व की छाप भारत के कानूनी संरचना के बड़े अंश पर डाल दी है।"

ब्रिटेन के प्रमुख अखबार लंदन टाइम्स ने लिखा– "ब्रिटिश सत्ता की अंतिम कालावधि का भारत की सामाजिक और राजनैतिक उत्कर्ष का जब इतिहास लिखा जायेगा तब उसमें अम्बेडकर के नाम का प्रमुखतया निःसंशय उल्लेख किया जायेगा।"

वर्मा के प्रधानमंत्री ने कहा– "अम्बेडकर एक विख्यात व्यक्ति थे। परिवर्तित प्रवाह और परिस्थिति जब राष्ट्र की सामाजिक संरचना और जीवन पर असर डाल रही थी, उस समय उन्होंने हिन्दुस्तान में बड़ा ऐतिहासिक कार्य किया।"

निष्कर्ष

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब ने हिन्दू धर्म की विदूपता, अस्पृश्यता के विरुद्ध दीर्घ संघर्ष करते हुए जान लिया कि वर्ण व जाति व्यवस्था जो हिन्दू धर्म की रीढ़ है विनाश नहीं किया जा सकता। वर्ण–व्यवस्था और जाति व्यवस्था के रहते अस्पृश्यों के हजारों वर्षों के दुःखों को समाप्त भी नहीं किया जा सकता। हिन्दू धर्म असमानता पर आधारित है। इस सच को स्वीकार कर 1935 में यवेला में धर्म परिवर्तन की झकझोर देने वाली घोषणा की जिसे गाँधी जी ने बम विस्फोट कहा था। धर्म के महत्व को स्वीकार करते हुए बाबा साहेब ने तत्काल धर्मान्तरण का निश्चय नहीं किया अपितु 20 वर्षों तक चिन्तान, मनन और विचार–विमर्श करते रहे। सभी धर्मों का सूक्ष्म एवं गहन अध्ययन किया और अंततः बौध धर्म की स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व की विशाल भावना के कारण बौद्ध धर्म स्वीकार करने की घोषणा की, जिसे साकार करते हुए नागपुर में 14 अक्टूबर को बौद्ध धर्म की दीक्षा लाखों अनुयायियों के साथ ली। यह न तो उनका पलायन था, न ही राजनैतिक स्वार्थ से प्रेरित निर्णय था अपितु करोड़ों शोषितों को समानता के धरातल पर खड़ा करने एवं शोषण व दुखों से मुक्ति दिलाने के लिए अत्यन्त बौद्धिक एवं क्रांतिकारी निर्णय था, लेकिन उनके असामयिक निधन से बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार का बाबा साहेब का स्वप्न अधूरा रह गया। बाबा साहेब मर कर भी अमर हैं क्योंकि भारतीय दर्शन के अनुसार अमरता दो प्रकार की होती है। एक अमरता

कर्तव्य की हाती है। कुछ व्यक्ति अपने कार्यों से अमर हो जाते हैं। बाबा साहेब के कार्य बौद्ध धर्म की सेवा अमरत्व के लिए पर्याप्त आधार है। बाबा साहेब के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि उनके अधूरे मिशन (स्वप्न) समतापूर्ण समाज, बन्धुता या भ्रातृत्वपूर्ण समाज तथा स्वतन्त्र समाज को पूरा करने के लिए अपना सर्वस्व हम सभी अर्पित करें।

अध्याय इक्कीस

अध्याय– इक्कीस

''उपसंहार''

बोधिसत्व युग पुरुष भारत--रत्न बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर के स्मरण मात्र से एक महान बुद्धिजीवी, मनीषी, चिन्तक, अत्याचार, शोषण, अन्याय, अपमान, तिरस्कार का प्रबलतम विरोधी, समतामूलक समाज, स्वतन्त्रता प्रेमी समाज तथा महान मानवतावादी, शांति प्रिय, अहिंसावादी आदि न जाने कितने विशेषणों से युक्त, गुणों से युक्त महामानव का चित्र उभर कर सामने उपस्थित होता है। बाबा साहेब ने अपने जीवन में बौद्ध धर्म के महायान सम्प्रदाय के बोधिसत्व के आचरणको पूर्ण रूपेण साकार किया है, जिसमें बौद्ध दर्शन के अनुसार बोधिसत्व वह महाप्राणी है, जो बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय अपने सम्पूर्ण जीवन को ही नहीं समर्पित करता है अपितु अपने नितान्त व्यैक्तिक सुखों, स्वार्थों का परित्याग भी करता है। बाबा साहेब का सम्पूर्ण जीवन बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय मे ही समर्पित रहा और उन्होंने अपने निजी सुखों, हितों का कभी ख्याल नहीं रखा, कष्ट सहे, अपमान और तिरस्कार सहे लेकिन बोधिसत्व के आदर्श से कभी विचलित नहीं हुए। प्रोफेसर का पद, प्रिंसिपल (लॉ कालेज मुम्बई) का पद, वाइसराय के कौंसिल की सदस्यता, श्रम मंत्री तथा स्वतन्त्र भारत के प्रथम विधि मंत्री का पद परित्याग किया, जिसमें पद, प्रतिष्ठा, सुख, सुविधा सब कुछ था लेकिन यह उनके जीवन का अभीष्ट नहीं था, अभीष्ट था, करोड़ों, दलितों, शोषितों जनों के कष्टों, दुःखों का उन्मूलन कर समतामूलक समाज की स्थापना, जिसमें केवल समानता हो, स्वतन्त्रता हो, भ्रातृत्वभाव हो, यही तो मानवतावाद है। भगवान बुद्ध ने भी कनक, कामिनी और वैभव के दृष्टतम बन्धनों को तोड़कर दुःख से जलते मानवों के त्राण के लिए गृह त्याग किया था। अपने सर्वश्रेष्ठ गुरु भगवान बुद्ध का अनुसरण कर बाबा साहेब ने भी त्याग मय

जीवन अपनाया। ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् भगवान बुद्ध के मन में तत्काल निष्क्रियता भाव आया था लेकिन वह शीघ्र दूर हुआ और उन्होंने जिस मार्ग से ज्ञान प्राप्त किया था, उसे विश्व कल्याण में लगाने का निश्चय कर धर्म प्रचार में निमग्न हुए। ठीक ऐसा ही विचार 1935–36 में बाबा साहेब के जीवन में आया जब वे सन्यासी की कफनी पहनते थे, सिर मुंडन करवा लेते थे और पूर्ण सन्यासी की भाँति दिखाई देते थे।[1] इस परिवर्तन को देखकर शोषित समुदाय स्तब्ध था, लेकिन बाबा साहेब की निष्क्रियता शीघ्र समाप्त हुई और पीड़ित जनों के दुःखों को समाप्त करने का संकल्प उन्होंने जीवन के अन्तिम सांस तक करने का निश्चय किया। बाबा साहेब ने दीक्षा भूमि नागपुर में दीक्षा समारोह के दूसरे दिन 15 अक्टूबर को विशाल जन समुदाय को दिए गए भाषण में इसी भाव को व्यक्त करते हुए कहा– "मुझे दीर्घायु प्रापत हो जाए तो मैं नियोजित कार्य पूरा करूँगा।"

बाबा साहेब ने केवल बोधिसत्व के आचरण को ही साकार नहीं किया अपितु बौद्ध धर्म के हीन सम्प्रदाय के आदर्श– आत्मदीपोभवः के आचरण को भी साकार किया। उन्होंने कठोर परिश्रम तथा सच्ची निष्ठा से धूल से शिखर तक की यात्रा स्वयं तय की और अपने करोड़ों अनुयायियों को आत्मदीपोभवः के आदर्शानुसार आचरण करने का संदेश दिया। उन्होंने कहा कि "दलित–शोषित समुदाय को अपनी दयनीय स्थिति को सुधारने के लिए स्वयं प्रयास करना पड़ेगा।" वे आजीवन इस सुप्त, संचेतना रहित, पौरुष विहीन समाज में जागृति लाने का प्रयास करते रहे। उनका सन्देश था– शिक्षित बनो, संगठित हो, संघर्ष करा।

हजारों वर्षों से मनुवादी व्यवस्था से पदाक्रान्त मानवता की करुण पुकार को सुनकर बाबा साहेब ने महायान के आदर्श "बोधिसत्व" तथा हीनयान के आदर्श "आत्मदीपोभवः" दोनो को अपने जीवन में साकार कर करोड़ों दलितों को, जो बहिष्कृत भारत थे, मृत जानवरों का मांस खाना, जूठन खाना, फटे चीथड़ों में झोपडियों में रहना ही जिनका भाग्य था, जिनके स्पर्श तो दूर परछाई मात्र से अपवित्रता का भाव पैदा होता

---

[1] कीर्ति धंनजय बाबा साहेब डॉ0 अम्बेडकर जीवन चरित्र पृ0सं0–282

था, को मानवीय अधिकार दिलाने, शोषण एवं अत्याचार, तिरस्कार, अपमान एवं घृणास्पद व्यवहार से मुक्ति दिलाने, उनमें आत्म सम्मान का बोध कराने, समता मूलक समाज जो स्वतन्त्रता और भ्रातृत्व, प्रेम, मानवता की आधारभूमि पर अवलम्बित हो, के लिए एक विराट संघर्ष की रूपरेखा ही नहीं बनाई अपितु अजेय योद्धा की भाँति कंटकयुक्त, पथरीले मार्ग पर चलते हुए, अंतिम सांस तक संघर्ष करते रहे। यह संघर्ष साधारण नही अपितु असाधारण था, राम के चौदह वर्ष के संघर्ष के समान महान था, क्योंकि यदि राम ने आसुरी प्रवृत्तियों के उन्मूलन हेतु संघर्ष कर असत्य पर सत्य, अन्याय पर न्याय की विजय की, तो बाबा साहेब ने हिन्दू धर्म की आसुरी प्रवृत्तियों के विरुद्ध संघर्ष कर शोषण, असमानता, अन्याय का अंत किया। वर्ण एवं जाति व्यवस्था का पोषण करने वाले वेदों एवं धर्मशास्त्रों में डायनामइट लगाने का आह्वान एक धर्म प्राण और धर्म भीरु देश में एक महान क्रांतिकारी घटना थी, जो ईसाई धर्म में मार्टिन लूथर के विरोध से अधिक विद्रोही थी। यह बाबा साहेब के उस निर्भीकता का प्रमाण है, जो उन्हें अपने दूसरे गुरु क्रांतिकारी महात्मा कबीर से मिला था, उस कबीर से जिसने आह्वान किया–

कबिरा खड़ा बजार में, लिए लुआठी हाथ।

जो घर फूकौं आपुनो, चलो हमारो साथ।।

हिन्दू धर्म की असमानता, विद्रूपता को विश्व के सम्मुख अपने शोध पत्रों, पुस्तकों, भाषणों से रखकर देव भूमि कहलाने वाले भारत की तथाकथित सभ्यता को घोर असभ्यता, हिन्दू धर्म को विश्व का सबसे विभेदकारी अन्यायी धर्म सिद्ध करते हुए कहा– "इसका असली नाम कलंक होना चाहिए। ऐसी सभ्यता का और कहा ही क्या जा सकता है, जिसने मनुष्यों का एक वर्ग पैदा किया जिसे जीवकापार्जन के लिए अपराध वृत्ति की मान्यता प्राप्त है, एक दूसरा मानव समुदाय है, जिसे सभ्यता के युग में आदिम वर्वरता के साथ फलने–फूलने के लिए छोंड़ दिया गया है, तीसरा वह समुदाय है जिसका मानवेत्तर अस्तित्व है और जिसके छूने भर से छूत लग जाती है।" उन्होंने हिन्दू धर्म की तुलना एक बहु मंजिली मीनार से की– "हिन्दू सोइटी उस बहु मंजिली मीनार

की तरह है, जिसमें प्रवेश करने के लिए न कोई सीढ़ी है न दरवाजा, जो जिस मंजिल में पैदा होता है, उसे उसी मंजिल में मरना होता है।''

हिन्दू धर्म की हजारों वर्ष की कठोर चट्टान सदृश्य विषमताओं, बुराइयों से अंततः दुःखी होकर 1935 ई0 में यवेला में बाबा साहेब ने धर्म परिवर्तन की घोषणा की और ऐसे सद्धर्म की खोज में प्रवृत्त हुए जो स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुता पर आधारित हो। अंततः बुद्ध की हिमछाया में जाने का निश्चय किया जिसे उन्होंने विश्व का सर्वश्रेष्ठ धर्म कहा, जो करुणा और प्रेम पर आधारित है। बाबा साहेब आजीवन समानता, स्वतन्त्रता और भ्रातृत्व भाव पूर्ण समाज के आदर्श को लेकर संघर्ष करते रहे और यही तीन तत्व उनके जीवन दर्शन हैं।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध में शोधार्थी ने बाबा साहेब युग पुरुष युग सृष्ठा के सर्वांगीड़ व्यक्तित्व का सांगोपांग विवेचन और मूल्यांकन कर अनगिनत अन्तर्विरोधों को समाप्त करने तथा स्थापित मिथकों को तोड़ने का प्रयास कर बावा साहेब का जीवन दर्शन, सिद्धान्तों, विचारों जो अम्बेडकरवाद के रूप मे जाने जाते हैं, स्पष्ट करने का प्रयास किया है। समस्त उपलब्ध साक्ष्यों की निष्पक्ष और वैज्ञानिक विवेचना करने का प्रयास शोधार्थी ने किया है। विषय वस्तु की व्यापकता तथा स्वयं बाबा साहेब के व्यक्तित्व की विशालता से शोध–प्रबन्ध का आकार विस्तृत आयाम ग्रहण कर लिया है।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध के द्वितीय अध्याय में बाबा साहेब के जन्म की पूर्व सन्ध्या के भारत का राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक स्वरूप स्पष्ट किया गया है। राजनैतिक रूप से प्लासी के युद्ध (22 जून 1757) से स्थापित ब्रिटिश साम्राज्य का एक ओर पूर्ण विस्तार हो चुका था तो दूसरी आर ब्रिटिश शासन की विभिन्न नीतियों के फलस्वरूप समाज के अनेक वर्गों में असंतोष उत्पन्न होकर विभिन्न विद्रोहों के रूप में सामने आ रहा था। इस समय राष्ट्रवाद का उदय हो रहा था जो दिसम्बर 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ उत्तरोत्तर विकसित होता गया। राजाराम मोहन राय के ब्रह्म समाज (1882) से आरम्भ हुआ, पुनर्जागरण विकसित होकर धार्मिक,

सामाजिक क्षेत्रों की आलोचना कर रुग्ण एवं सुसुप्त भारत को जगाने के लिए चटाकारी दे रहा था। महात्मा ज्योबिता फूले ने महाराष्ट्र में सत्यशोधक समाज की स्थापना कर दलित, शोषित, वंचित वर्गो की आवाज बुलन्द की, जिसे महान उदारवादी कोल्हापुर नरेश छत्रपति साहू जी महाराज जैसे महापुरुषों ने आगे बढ़ाया।

सामाजिक रूप से वर्ण एवं जाति व्यवस्था से जकड़ा हुआ हिन्दू समाज अस्पृश्यता के कलंग का माथे पर लगाये अनेक बुराईयों से ओत–प्रोत था। हिन्दू धर्म विशेषाधिकारों एवं कर्मकाण्डों, पाखण्डों, आडम्बरों का धर्म होकर बिखराव की ओर बढ़ रहा था। इस्लाम एवं पारसीक धर्म में भी अनेक बुराइयां आ गई थीं लेकिन इन सब में सुधारवादी आन्दोलन चल रहे थे। आर्थिक रूप से ब्रिटिश शासन की औपनवेशिक नीतियों के फलस्वरूप भारत का पारम्परिक औद्योगिक ढांचा समाप्त होकर सम्राज्यवादी शासन के अनुरूप नये आर्थिक ढांचे का निर्माण हो रहा था। सामंती/जमीदारी व्यवस्था पूर्ण शोषित रूप में विद्यमान थी। इन परिस्थितियों में बाबा साहेब का अछूत महार जाति में जन्म हुआ।

शोध प्रबन्ध के तृतीय अध्याय में बाबा साहेब का जन्म और महार जाति का इतिहास तथ्यात्मक रूप से वर्णित है। इसमें बाबा साहेब के पूर्वजों, बाबा साहेब का जन्म, करुणामयी माँ का देहान्त, बुआ द्वारा लालन–पालन, रमाबाई से बाबा साहेब का विवाह, पिता का देहान्त, रमाबाई का देहान्त, महारों की उत्पत्ति, महाराष्ट्र का नामकरण आदि को स्पष्ट किया गया है। यहाँ यह भी वर्णित है कि बाबा साहेब का परिवार आर्थिक दयनीयता से ओत–प्रोत था और यहाँ तक कि उनकी माँ को पारिवारिक दायित्वों के निर्वहन हेतु मजदूरी का कार्य भी करना पड़ा। इन पारिवारिक समस्याओं का सामना बाबा साहेब को बराबर करना पड़ा लेकिन उनका जुझारू व्यक्तित्व अपने मूल उद्‌देश्य से कभी विचलित नहीं हुआ।

शोध प्रबन्ध के चतुर्थ अध्याय मे बाबा साहेब की शिक्षा को स्पष्ट करते हुए अस्पृश्यता से साक्षात्कार को वर्णित किया गया है। इसमें बाबा साहेब की आरम्भिक

शिक्षा का विवरण प्रस्तुत करते हुए तत्कालीन भारतीय शिक्षा व्यवस्था की विसंगतियों को प्रकट किया गया है, जिसमें अस्पृश्य जाति को किस प्रकार स्कूल जैसे संस्थानों में अपमान जनित व्यवहार का भागीदार बनना पड़ता था तथा संस्कृत जैसे विषयों को पढ़ने के लिए अभी भी बाबा साहेब को रोंक दिया गया था। यही स्थिति माध्यमिक शिक्षा तक रही। बाबा साहेब उच्च शिक्षा के लिए बडौदा नरेश महाराज साहजी गायकवाड़ की छात्रवृत्ति प्राप्त कर उच्च शिक्षा के लिए अमेरिका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय में प्रवेश लिया जहां का वातावारण भारतीय सामाजिक वातावरण से पूर्णतः भिन्न था। बाबा साहेब ने अनुभव किया कि वहाँ के समाज में स्वतन्त्रता है तथा समानता है। लंदन में उच्च शिक्षा के दौरान भी बाबा साहेब को यही अनुभव प्राप्त हुआ, यद्यपि लंदन की अधूरी शिक्षा छत्रपति साहू जी महाराज के सहयोग से पूरी हुई थी लेकिन अमेरिका तथा योरप के अनुभव ने उनके मन में स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुता जैसे उच्चतम मानवीय मूल्यों के प्रति और प्रगाढ़ आस्था उत्पन्न कर दी।

अस्पृश्यता जैसे हिन्दू समाज के कलंक से बाबा साहेब का शैशवा काल से ही साक्षात्कार हुआ। माँ के साथ बाजार जाते हुए दुकानदार द्वारा दूर से वस्तुए फेंकना, नाई द्वारा बाल न काटे जाने पर बुआ के द्वारा बाल काटे जाना, स्कूल में अस्पृश्यता का अनुभव और सबसे कटु अनुभव बड़ौदा रियासत की सेवा के दौरान हुआ, जिससे बाबा साहेब को ज्ञात हुआ कि भारती समाज में योग्यता एवं गुण का कोई महत्व नहीं है, महत्व है केवल जाति का, इससे उनमें जाति व्यवस्था और वर्ण व्यवस्था के प्रति तीव्र वित्रिष्णा पैदा हुई।

शोध--प्रबन्ध के पांचवे अध्याय में अस्पृश्यता और मनुवादी व्यवस्था के खिलाफ आजीवन संघर्ष को प्रस्तुत किया गया है। इसमें बाबा साहेब ने अस्पृश्यता के खिलाफ विराट संघर्ष का सिंहनाद किया, जिसका आरम्भ 1916 में अमेरिका में नृतृत्व विज्ञान विषयक गोष्ठी में बाबा साहेब द्वारा प्रस्तुत शोध पत्र ''भारत में जाति व्यवस्था उद्‌भव और विकास'', से हुआ जो लगातार बढ़ता हुआ ब्रिटिश सरकार द्वारा नियुक्त

समस्त कमेटियों, आयोगो, समितियों में प्रतिवेदन तथा अपन मत प्रस्तुत करना एवं अस्पृश्यों के मानवीय अधिकारों को लेकर किया गया महाड़ सत्याग्रह जो पानी के अधिकार को लेकर किया गया था तथा कालाराम मंदिर सत्याग्रह उल्लेखनीय है। बाबा साहेब ने आजीवन मनुवादी व्यवस्था के खिलाफ संघर्ष किया, उनके मनुवाद का अभिप्राय किसी जाति, वर्ग से न होकर अपितु उससे है, जो स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुता का विरोधी है। यही तो मानवतावाद है। जो मनुवाद में आस्था रखता है वह मानवतावादी नहीं हो सकता। बाबा साहेब ने स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुता को ही अपने जीवन का मूल उद्देश्य निर्धारित किया था और उसी की स्थापना के लिए आजीवन प्रयास किया।

शोध–प्रबन्ध के छठें अध्याय में बाबा साहेब का निजी जीवन और उनकी वैशिष्ट पूर्ण जीवन शैली वर्णित है। इसमें बाबा साहेब की उत्कृष्ट बौद्धिक्ता एवं अध्ययन प्रेम को स्पष्ट करते हुए उन्हें भारत ही नहीं विश्व के महान बुद्धिजीवी के रूप में निरूपित किया गया है, जिनकी बड़ी उत्कृष्ट इच्छा थी कि वे आजीवन विद्यार्थी रहें। बाबा साहेब न केवल विद्यार्थी जीवन में अपितु राजनीति में आने के बाद, वाइसराय के कौसिल के श्रम सदस्य तथा स्वतन्त्र भारत के प्रथम विधिमंत्री के रूप में कार्य करते हुए भी चौदह घण्टे नियमित अध्ययन करते थे। उनका समस्त लेखन, भाषण उनके महान बौद्धिकता का परिचायक है। बाबा साहेब को पुस्तकों से पुत्र से भी अधिक स्नेह था, जिन्हें मदनमोहन मालवीय तथा बिड़ला आदि ने जब खरीदने का प्रस्ताव किया तो उन्होंने उसे अस्वीकार कर दिया। इसमें यह भी स्पष्ट किया गया है कि बाबा साहेब एक महान वक्ता भी थे जो कि उन्हें उनके निरन्तर प्रयास और अभ्यास से प्राप्त हुआ था। गोलमेज सम्मेलन में बाबा साहेब ने जिस प्रकार ओजस्वीपूर्ण और बौद्धिक भाषण दिया उससे सम्पूर्ण विश्व स्तब्ध हो गया। बाबा साहेब की वांणी में भगवान बुद्ध और हिटलर जैसी ओजस्विता और तार्किकता थी, जो श्रोता को मन्त्रमुग्ध कर देती थी। इसमें बाबा साहेब के पश्चात्य वेश–भूषा को भी स्पष्ट किया गया है, जिसका उन्हें स्वयं ही अहम् था कि भारतीय राजनीतिज्ञों में वे और जिन्ना ही ऐसे व्यक्ति हैं जो सुन्दर पोषाक पहनते हैं। अपने वस्त्रों द्वारा बाबा साहेब ने गन्दे, फटे वस्त्रों को अपना भाग्य मानने वाले

शोषितों, दलितों को अच्छे कपड़े पहनने का सन्देश दिया। इसमें यह भी उल्लिखित किया गया है कि बाबा साहेब मृदुभाषी, पाककला में प्रवीण तथा कभी मदिरा, धम्रपान का सेवन न करने वाले उच्च कोटि का नैतिक जीवन व्यतीत करने वाले महामानव थे, जिनका आचरण शील और विनय पर आधारित था।

शोध–प्रबन्ध के सातवें अध्याय में भारतीय राजनीति में बाबा साहेब के अवतरण को स्पष्ट किया गया है। इसमें बाबा साहेब के भारतीय राजनीति में आगमन की परिस्थितियां और उस समय के राजनैतिक वातावरण को स्पष्ट करते हुए बाबा साहेब के द्वारा साहूजी महाराज के सहयोग से मूकनायक जैसे समाचार पत्र का आरम्भ, बहिष्कृत हितकारिणी सभा की स्थापना तथा उसके कार्यों को स्पष्ट किया गया है। इस संस्था ने अस्पृश्य वर्ग के शैक्षणिक सुधार हेतु उल्लेखनीय प्रयास किया। इसमें बाबा साहेब द्वारा महाड़ सत्याग्रह तथा कालाराम मंदिर सत्याग्रह को भी स्पष्ट किया गया है, जिनके द्वारा अस्पृश्य वर्ग में एक ओर जहां चेतना आई वहीं दूसरी ओर उनको मानवीय अधिकार प्राप्त हुए। गोलमेज सम्मेलनो में बाबा साहेब ने भाग लेकर वैश्विक स्तर पर अस्पृश्य वर्ग के दुःखों को प्रकट किया। कम्युनल अवार्ड के पश्चात् गाँधी जी द्वारा आरंभ किये गये आमरण अनशन के बाद अत्यन्त मानवीय दृष्टिकोण अपनाते हुए बाबा साहेब ने गाँधी जी के प्राणों की रक्षा के लिए ऐतिहासिक पूना समझौते पर हस्ताक्षर किया, जिसका उन्हें आजीवन दुख रहा। 1936 में स्वतन्त्र मजदूर पार्टी की स्थापना कर मजदूरों के हितों के लिए प्रयास किया तथा वाइसराय की कौंसिल के श्रम सदस्य के रूप में श्रमिकों के रूप में अनेक ऐतिहासिक कार्य किये तथा स्वतन्त्र भारत के प्रथम विधिमंत्री का पद सुशोभित किया और कठोर परिश्रम कर हिन्दू कोड बिल का निर्माण किया।

शोध प्रबन्ध के आठवे अध्याय में बाबा साहेब का भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के साथ सम्बन्धों को स्पष्ट किया गया है। बाबा साहेब ने आरम्भ से ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रबल विरोध किया। उनका मानना था कि कांग्रेस का यह दावा निराधार है

कि वह सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व करती है। उन्होंने सप्रमाण प्रमाणित किया कि कांग्रेस कम से कम अस्पृश्य वर्ग का प्रतिनिधित्व नहीं करती। कांग्रेस केवल शासक वर्ग का प्रतिनिधित्व करती और उन्ही के हितों के लिए संघर्ष कर रही है। कांग्रेस केवल राजनैतिक सत्ता के लिए संघर्ष कर रही है, उसका अस्पृश्यता उन्मूलन का कार्यक्रम और हरिजन सेवा संघ का कार्य केवल अस्पृश्य वर्ग के छलावे के लिए है। आजादी के नजदीक आते ही बाबा साहेब और कांग्रेस की दूरियां कम हुई। कई चक्र के वार्ता के पश्चात् अनन्तः अस्पृश्य वर्ग के हितों की संरक्षा के लिए बाबा साहेब ने कांग्रेस मंत्रिमण्डल में शामिल होना स्वीकार किया लेकिन कभी कांग्रेसी नहीं बने। नेहरू सरकार की नीतियों से क्षुब्ध होकर उन्होंने अपना त्याग पत्र भी दे दिया और राज्य सभा में नेहरू सरकार और कांग्रेस की नीतियों की जम कर आलोचना की। महापरि निर्वाण तक बाबा साहेब कांग्रेस का विरोध करते रहे।

शोध प्रबन्ध के नौंवे अध्याय में बाबा साहेब का महात्मा गाँधी से सम्बन्धों और वैचारिक अन्तर्विरोधों को स्पष्ट किया गया है। इसमें महात्मा गाँधी का भारतीय राजनीति में अवतरण को स्पष्ट करते हुए उनके समस्त आन्दोलनों, क्रियाकलापों के प्रति बाबा साहेब के दृष्टिकोंण को तथ्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है, जिससे स्पष्ट होता है कि बाबा साहेब का महात्मा गाँधी के साथ वैचारिक, गहरा अन्तर्विरोध था, विशेष तौर वर्ण और जाति व्यवस्था को लेकर विरोध था, साथ ही गाँधी जी की हिन्दू धर्म में गहरी आस्था थी जबकि बाबा साहेब ने असमानता का पोषण करने वाले हिन्दू धर्म की कटु आलोचना की और कहा कि हिन्दू धर्म के भाग्य में विनाश लिखा है। इसके अतिरिक्त बाबा साहेब और महात्मा गाँधी के मध्य आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक क्षेत्रों में अनेक बिन्दुओं पर मतभेद रहे। महात्मा गाँधी ग्राम स्वराज्य के समर्थक थे तथा बड़े उद्योगों के विरोधी थे जबकि डा0 अम्बेडकर इनके विरोधी थे। यद्यपि कुछ बिन्दुओं में समानता थी लेकिन विरोधों का स्वर ज्यादा गहरा था। गाँधी जी के अस्पृश्यता उन्मूलन कार्यक्रम में डा0 अम्बेडकर को तनिक भी आस्था नहीं थी। बाबा साहेब ने गाँधी जी के महात्मा

स्वरूप को प्रमाणों के आधार पर कभी स्वीकार नहीं किया, उनका निष्कर्ष रहा कि मनुष्य होना ही दुर्लभ है, कोई महात्मा कैसे बन सकता है?

शोध प्रबन्ध के दसवें अध्याय में बाबा साहेब का ब्रिटिश सरकार से सम्बन्धों को स्पष्ट किया गया है। यद्यपि बाबा साहेब पाश्चात्य देशों के उदारवादी मूल्यों के समर्थक थे और ब्रिटिश सरकार को उन्होंने अछूत वर्ग के संरक्षक के रूप में महसूस किया लेकिन ब्रिटिश सरकार की अनेक अवसरों पर जबदस्त आलोचना भी की यदि उनको यह लगा कि यह देश तथा अस्पृश्य वर्ग के हितों के विरुद्ध है। गोलमेज सम्मेलन में दिया हुआ भाषण इसका प्रमाण है साथ ही क्रिप्स मिशन, शिमला वार्ता तथा कैबिनेट मिशन पर उनकी प्रतिक्रिया और आलोचना इसी का प्रमाण है।

शोध–प्रबन्ध के ग्यारहवें अध्याय में बाबा साहेब का मुस्लिम लीग और उनके कर्ता–धर्ता जिन्ना से सम्बन्धों को स्पष्ट किया गया है। इसमें यह स्पष्ट किया गया है कि मुस्लिम लीग की स्थापना किन परिस्थितियों में हुई और मुस्लिम लीग द्वारा किये गये समस्त आन्दोलनों, विचारों के प्रति बाबा साहेब की कितनी सहमति और असहमति थी। बाबा साहेब ने कभी मुस्लिम परस्त राजनीति नहीं की, जिन्ना साहेब के विषय में 1941 में महादेव गोविन्दरानाड़े के जन्मसदी अवसर पर दिये गये भाषण में जिन्ना साहब और महात्मा गाँधी के व्यक्तित्व पर विस्तृत प्रकाश डाला कि उन्होंने किस प्रकार भारतीय राजनीति को प्रभावित कर गलत दिशा की ओर मोड़ दिया है। अपने चाटुकारों से घिरे रह कर महिमा मण्डल कर लिया है। यद्यपि 1939 में पाकिस्तान द्वारा मनाये गये मक्ति दिवस में जिन्ना साहेब के साथ बाबा साहेब ने भागीदारी की थी लेकिन उनका यह विरोध केवल कांग्रेस की नीतियों के कारण था। 1942 में क्रिप्स प्रस्ताव तथा शिमला सम्मेलन 1945 में मुस्लिम लीग के दृष्टिकोंण का बाबा साहेब ने विरोध किया था। कैबिनेट मिशन योजना जिसे लीग ने कुछ हिचकिचाहट के बाद स्वीकार किया लेकिन बाद में संविधान सभा में अपने को अल्पमत पाकर उसका बहिष्कार किया तथा

अंतरिम सरकार में आरंभिक विरोध के बाद सामिल हुई। समस्त घटना क्रम पर बाबा साहेब ने अपने दृष्टिकोण प्रकट किये।

इस शोध प्रबन्ध के बारहवें अध्याय में बाबा साहेब का भारतीय रियासतों के साथ सम्बन्ध को स्पष्ट किया गया है। इसमें भारर्त.य रियासतों का संक्षिप्त इतिहास, बाबा साहेब का बडौदरा रियासत से सम्बन्ध, कोल्हापुर के साहू महाराज से सम्बन्ध, विभिन्न रियासतों में हो रहे सामन्ती अन्याय का बाबा साहेब द्वारा विरोध, गोल मेज सम्मेलन में रियासतों के सम्बन्ध में बाबा साहेब का मत, भारतीय रियासतों में हो रहे प्रजामण्डल आन्दोलन का बाबा साहेब द्वारा समर्थन, आजादी के समय रियासतों का भारतीय संघ में शामिल होने के लिए बाबा साहेब का निवेदन, की व्याख्या प्रस्तुत की गई। इसमें साक्ष्यों के आधार पर यह भी स्पष्ट किया गया है कि बाबा साहेब सभी प्रकार के सामन्ती उत्पीड़न के विरुद्ध थे, और रियासतें सामन्ती प्रथा का प्रतीक। वे सामन्ती व्यवस्था को समतामूलक समाज की स्थापना में बड़ी बाधा मानते थे, इसलिए उन्होंने आजादी के बाद रियासतों को भारतीय संघ में शामिल होने के लिए आमंत्रित ही नहीं किया अपितु भू–सुधार तथा सहकारी खेती की मांग की।

शोध–प्रबन्ध के तेहरवें अध्याय में भारतीय स्वाधीनता में बाबा साहेब की भूमिका ओर उनके योगदान का मूल्यांकन किया गया है। इसमें स्पष्ट किया गया है कि कांग्रेस द्वारा संचालित स्वतन्त्रता संग्राम से मूलभूत विरोध के कारण बाबा साहेब कभी सम्मिलित नहीं हुए। उनका मानना था कि कांग्रेस राजनैतिक आजादी की लड़ाई लड़ रही है, जो शासक वर्ग के आजादी की लड़ाई है। बाबा साहेब ने बार–बार मांग की कि कांग्रेस अस्पृश्य वर्ग के सुरक्षा उपायों को पहले मान्यता दे। बाबा साहेब का यह पूर्ण विश्वास था कि यदि अस्पृश्य वर्ग को पर्याप्त संवैधानिक सुरक्षा दिए बिना ब्रिटिश शासन समाप्त होता है तो अस्पृश्य वर्ग पुनः सवर्णों के शासन के अधीन होंगे और और ब्रिटिश शासन से बद्तर गुलामी, शोषण, असमानता में उन्हें जीने के लिए विवश होना पड़ेगा। बाबा साहेब के स्वतन्त्रता का अर्थ कांग्रेस के स्वतन्त्रता के अर्थ से अधिक व्यापक था।

उनकी स्वतन्त्रता में सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनैतिक स्वतन्त्रता सभी सम्मिलित थी और वे उसी की प्राप्ति के लिए आजीवन लगे रहे। वे स्वतन्त्रता संग्राम के महानायक ही नहीं अपितु महान राष्ट्रप्रेमी थे, यह उनके आजीवन कृत्यों, भाषणों से प्रमाणित होता है। उनहोंने सदैव निजी स्वार्थों के स्थान पर राष्ट्रहित को सर्वोपरि माना।

शोध–प्रबन्ध के चोदहवें अध्याय में श्रमिक आन्दोलनों में बाबा साहेब की सहभागिता को स्पष्ट किया गया है। इसमें श्रमिक आन्दोलन तथा श्रमिक संघों का संक्षिप्त इतिहास बताते हुए श्रमिक हितों के लिए बाबा साहेब द्वारा बंबई विधन परिषद के सदस्य से लेकर वाइसराय की कौंसिल के श्रम सदस्य के रूप में किए गए समस्त कार्यों, प्रयासों को तथ्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। बाबा साहेब ने श्रमिकों के हड़ताल के अधिकार को स्वतन्त्रता का अधिकार कह कर समर्थन ही नहीं किया अपितु प्रसूतिलाभ विधेयक, युद्ध क्षतपूर्ति विधेयक आदि लाभकारी विधेयकों को पारित करवाया तथा उनकी दारुण दशा को देखने के लिए बंगाल और उड़ीसा की गहरी संकरी कोयला खानों में अन्दर जाकर अपनी जान की पहवाह न करके देखा और ऐसी जोखिम लेने वाले वे भारत के पहले और एक मात्र श्रम मंत्री हैं। उनका श्रमिक प्रेम इस बात से भी स्पष्ट होता है कि वे अपनी राजनैतिक पार्टी का नाम 1936 में स्वतन्त्र मजदूर दल रखा। ये सभी विवेचन उनको महान श्रमिक नेता के रूप में स्थापित करते है।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध के पन्द्रहवें अध्याय में बाबा साहेब के समस्त कार्यो एवं संषर्घों के अधार पर दलित, शोषित वर्ग के मसीहा के रूप में उन्हें प्रस्तुत किया गया है। अस्पृश्य होने की पीड़ा स्वयं भोगने वाले बाबा साहेब ने अमेरिका में अध्ययन के दौरान ही अपने दलित शोषित वर्ग की वेदना और उसका आधार वर्ण और जाति व्यवस्था की विभेदकारी और अत्याचारी व्यवस्था को दुनिया के सम्मुख 1916 में कोलम्बिया में ही प्रकट किया था और बाद में उनके मानवीय अधिकार को लेकर महाड़ सत्याग्रह, कालाराम मन्दिर सत्याग्रह, ही नहीं किया अपितु ब्रिटिश सरकार द्वारा नियुक्त किए गए प्रत्येक समिति, आयोग, सम्मेलनों (तीनो गोलमेज सम्मेलन) में अस्पृश्य वर्ग के दुःखों,

कष्टों को विश्व के सम्मुख रखकर उनको विशिष्ट अधिकार देने की मांग की जिससे हजारों वर्ष से चले आ रहे शोषण, पाशविक व्यवहार से उनको मुक्ति मिल सके और समता मूलक समाज, जो स्वतन्त्रता और भ्रातृत्व पर आधारित हो, स्थापित हो सके। उनके प्रयासों से अस्पृश्य वर्ग को मनुवादी व्यवस्था से मुक्ति मिली।

शोध–प्रबन्ध के सोलहवें अध्याय में संविधान निर्माण में बाबा साहेब की भूमिका का मूल्यांकन किया गया है। इसमें भारत में संवैधानिक विकास को स्पष्ट किया करते हुए कैबिनेट मिशन योजना द्वारा स्थापित संविधान सभा का गठन और उसमें किन परिस्थितियों में बाबा साहेब का प्रवेश संभव हुआ, स्पष्ट किया गया है। आजादी की पूर्व सन्ध्या पर बदलते घटनाक्रम में बाबा साहेब और कांग्रेस की नजदीकिया बढ़ीं और बाबा साहेब स्वतन्त्र भारत के पहले विधि मंत्री ही नहीं बने अपितु संविधान प्रारूप समिति के अध्यक्ष भी बने। अत्यन्त कठिन परिश्रम करके संविधान का प्रारूप तैयार किया, जिसे संविधान सभा ने कतिपय संशाधनों के साथ स्वीकार कर लिया। यह तथ्यों, साक्ष्यों के आधार पर स्पष्ट किया गया है कि प्रारूप समिति का कार्य लगभग अकेले बाबा साहब ने ही किया था। निःसन्देह वास्तविक अर्थो में वे संविधान शिल्पी रहे। संविधान सभा में प्रवेश बाबा साहेब केवल दलित वर्ग के हितों की संरक्षा के लिए ही किए और दलित वर्गों का अधिकार सुरिक्षत करवाने में सफल रहे।

शोध–प्रबन्ध के सत्रहवें अध्याय में भारत विभाजन पर बाबा साहेब के मत और दृष्टिकोंण का मूल्यांकन किया गया है। आधुनिक भारत के इस विवादस्पद और त्रासदीपूर्ण समस्या पर इतिहासकारों, बुद्धिजीवियों ने अपने–अपने दृष्टिकोण से प्रकाश डाला है। बाबा साहेब ने मुस्लिम लीग द्वारा अपने लाहौर अधिवेशन में 1940 में पाकिस्तान की मांग के साथ ही उसी वर्ष अपना विश्व प्रसिद्ध पुस्तक थॉट ऑफ पाकिस्तान लिखकर इस समस्या की अति दूरदर्शितापूर्ण बौद्धिक व्याख्या की और एक शल्य चिकित्सक के रूप में पाकिस्तान की असाध्य बीमारी का एक मात्र समाधान भारत का विभाजन बताया। उन्होंने अपनी पुस्तक में भविष्यवाणी की कि पाकिस्तान का निर्माण

अवश्यमभावी है, जिसे टाला नहीं जा सकता। कहना नहीं होगा बाद में भारत का विभाजन उसी रूप में हुआ जिस रूप में बाबा साहेब ने 1940 में सुझाया था। बाबा साहेब ने हिन्दू–मुस्लिम राजनीति का ऐतिहासिक विशद मूल्यांकन कर यह निष्कर्ष तटस्थ शल्य चिकित्सक के रूप में प्रतिपादित किया था, लेकिन भारत विभाजन उनकी इस आशा के अनुरूप नहीं हुआ कि विभाजन शांतिपूर्ण होगा और अस्थायी होगा।

शोध–प्रबन्ध के अठारहवें अध्याय में आजादी के बाद भारतीय राजनीति और बाबा साहेब को स्पष्ट किया गया है। प्रस्तुत अध्याय में आजादी के बाद नेहरू मंत्रिमण्डल में विधिमंत्री के रूप में बाबा साहेब के कार्य, अपने प्रधानमंत्री से आन्तरिक और विदेश नीति पर विवाद, हिन्दूकोड बिल विवाद तथा बाबा साहेब के त्याग–पत्र के कारणों का मूल्यांकन किया गया है। यह भी स्पष्ट किया गया है कि देश के प्रथम आम चुनाव में बाबा साहेब और उनकी अनुसूचित जाति संघ को अप्रत्याशित पराजय का क्यों सामना करना पड़ा? बाबा साहेब ने पराजित होने के बाद राज्य सभा में महाराष्ट्र से प्रवेश कर जिस प्रकार पं0 नेहरू की विदेश नीति विशेषकर साम्यवादी देशों– रूस, चीन के साथ सम्बन्धों की तथ्यपरक ढंग से ऐतिहासिक परिदृष्य में आलोचना की, वह भारत में ही नहीं अपितु विश्व में चर्चा का विषय बना। बाबा साहेब ने अपने भाषण में चीन के भारत पर आक्रमण की आशंका व्यक्त की थी, जो 1962 में सत्य सिद्ध हुई। बाबा साहेब ने अपने महापरिनिर्वाण के पूर्व रिपब्लिकन नामक राजनैतिक दल बनाने की रूपरेखा तैयार की, लेकिन असामयिक महापरिनिर्वाण के कारण योजना मूलरूप में सकार नहीं हो पाई। उनके महापरिनिर्वाण के बाद उनका कारवां भ्रमित और विभाजित हो गया। आगरा में बाबा साहेब ने 1956 में अपनी मृत्यु के पूर्व अपने अनुयायियों से अपील की थी कि उनके कारवां को यदि वे आगे न ले जा सकें, तो वहीं छोंड़ दे, पीछे न ले जाएं। एक अन्तराल के बाद बाबा साहेब के कारवां को स्व0 मा0 कांशीराम और कु0 मायावती के नेतृत्व में आगे बढ़ने का सौभाग्य मिला और बाबा साहब के इन सच्चे उत्तराधिकारियों के संघर्षों, प्रयासों से देश के विशाल राज्य उ0प्र0 में बाबा साहेब के स्वप्नों को साकार करते हुए बहुजन समाज पार्टी ने राजनैतिक सत्ता ही नहीं प्राप्त की अपितु 16 वर्षों के

अन्तराल के बाद उ0प्र0 की राजनीति में मील का पत्थर शाबित करता हुआ पूर्ण बहुमत की सरकार स्थापित कर समता, स्वतन्त्रता और बन्धुता मूलक समाज की स्थापना की दिशा में प्रयासरत हैं।

शोध–प्रबन्ध के उन्नीसवें अध्याय में बाबा साहेब और पं0 जवाहर लाल नेहरू के सम्बन्धों का मूल्यांकन किया गया है। मूल्यांकन के क्रम में दोनो में समानता और असमानता के बिन्दुओं को स्पष्ट करते हुए बाबा साहेब द्वारा पं0 नेहरू की सरकार में विधिमंत्री का पद स्वीकार करने के कारणों, परिस्थितियों का तथ्यात्मक मूल्यांकन किया गया है। बाबा साहेब ओर पं0 नेहरू के मतभेदों, आन्तरिक और विदेशनीति पर मतभेद, हिन्दू कोड बिल पर विवाद पर प्रकाश डालते हुए बाबा साहेब के त्याग–पत्र के कारणों को स्पष्ट करते हुए, राज्यसभा में पंडित नेहरू की विदेशनीति की तीव्र आलोचना की विवेचना की गई है। बाबा साहेब ने पं0 नेहरू की साम्यवादीपरस्त नीति की कटु आलोचना वैश्विक परिवेश में की और आशंका व्यक्त की कि पंचशील समझौते से आश्वस्त भारत पर चीन का हमला होगा, जो बाद में सत्य भविष्वाणी सिद्ध हुआ। यह बाबा साहेब का महान कूटनीतिज्ञ स्वरूप सामने लाता है।

शोध–प्रबन्ध के बीसवें अध्याय में बाबा साहेब का बौद्ध धर्म ग्रहण करना और महापरि निर्वाण की विवेचना की गई है। विवेचना के क्रम में स्पष्ट किया गया है कि हिन्दू धर्म की पाषाण सदृश्य कठोर तथा पहाड़ सदृश्य अडिग विषमताओं, वर्ण व्यवस्था, जाति व्यवस्था से व्याथित होकर बाबा साहेब ने 1935 में यवेला सम्मेलन में धर्म परिवर्तन की क्रांतिकारी घोषणा की, जिसकी देश–विदेश में तीव्र प्रतिक्रिया हुई। बाबा साहेब ने जल्दवाजी में निर्णय न करके पर्याप्त चिन्तन, मनन द्वारा निर्णय लेने का फैसला किया और सभी धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन के पश्चात् अपनी मंजिल बुद्ध की हिमछाया में पाया, जहाँ सिर्फ करुणा है, मैत्री है, समानता है, स्वतन्त्रता हैं और भ्रातृत्व है। बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय समर्पित बौद्ध धर्म को स्वीकार करने का निर्णय लेकर नागपुर में 14 अक्टूबर 1956 को बौद्ध धर्म की दीक्षा अपने दास लाख अनुयायियों के

थ ली, जो एक अभूतपूर्व घटना थी क्योंकि विश्व इतिहास में कभी भी इतनी बड़ी ख्या में लोगों ने एक साथ धर्मान्तरण नहीं किया था। इसी के साथ बाबा साहेब ने पने सम्पूर्ण जीवन के बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार में लगाने का संकल्प लिया लेकिन देन–प्रतिदिन खराब हो रहे स्वास्थ तथा असामयिक महापरिनिर्वाण प्राप्त होने के कारण अपना संकल्प पूर नहीं कर सके, लेकिन दलित, शोषित समाज में बौद्ध धर्म को लोकप्रिय बनाकर बौद्ध धर्म को भारत भूमि से लुप्त होने से बचाकर महान सेवा कार्य किया, जो बाबा साहेब को अशोक, कनिष्क तथा हर्षवर्धन की पंक्ति में लाकर खड़ा करता है।

शोध–प्रबन्ध के इस इक्कीसवें अध्याय में उपसंहार है तथा अंतिम बाइसवें अध्याय में बाबा साहेब के जीवन से सम्बन्धित विशिष्ट चित्रों का संकलन है। इसमें बाबा साहेब के सम्पूर्ण जीवन को निरूपित, अंकित करने वाले विभिन्न भावों को व्यक्त करने वाले तथा घटनाओं के साक्षी दुर्लभ चित्रों का संकलन किया गया है।

इस प्रकार प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध में बाबा साहेब के समग्र व्यक्तित्व का पुनर्मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है। बाबा साहेब ने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं आर्थिक सभी क्षेत्रों में अपने संघषो, प्रयासों तथा चिन्तन से अमिट छाप छोंड़ी है। वे प्रत्येक प्रकारकी विषमता, असमानता, शोषण तथा अत्याचार के विरोधी रहे है, उनका सम्पूर्ण जीवन समानता, स्वतन्त्रता और बन्धुतामूलक समाज की स्थापना के लिए समर्पित रहा। इन तीन मूलमंत्रों को बाबा साहेब ने फ्रांसीसी क्रांति से न लेकर अपने सर्व प्रमुख गुरु भगवान बुद्ध से लिया था। इन्हीं तत्वों को उन्होंने मानवतावाद तथा लोकतन्त्र कहा तथा इनके विरोधियों को मनुवादी, फांसीवादी कहा। यहाँ एक प्रश्न उत्पन्न होता है कि बाबा साहेब ने जिस वर्ग विहीन, जाति विहीन समाज की स्थापना के लिए प्रयास किया, वही प्रयास तो कार्ल मार्क्स ने किया, तो दोनो में क्या अन्तर है? क्या अम्बेडकर और मार्क्सवाद समान हैं? दोनो के साध्य अवश्य समान हैं, लेकिन साधन अलग–अलग हैं। मार्क्स इस साध्य की प्राप्ति के लिए हिसंक साधनों

को अपनाता है, जबकि बाबा साहेब का हिंसा में विश्वास नहीं था। वे तो तथागत भगवान बुद्ध के धर्म के महान अहिंसावादी सिद्धान्त के पुजारी थे। बाबा साहेब ने कहा था मार्क्स का एक मात्र उत्तर बुद्ध है, विश्व को शांति बुद्ध से मिलेगी, मार्क्स से नहीं।

गाँधी जी का भी यही लक्ष्य था और दोनो महापुरुष साध्य और साधन दोनो की पवित्रता पर ध्यान देते थे, लेकिन महत्वपूर्ण प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि आखिर दोनो में अन्तर क्या था? मूल अन्तर था कि गाँधी जी वर्णाश्रम मे विश्वास करते थे, जबकि डा0 अम्बेडकर वर्णाश्रम को सभी असमता और समस्याओं की जड़ मानकर प्रबल विरोध करते थे। बाबा साहेब ने शांति अहिंसा का संदश दिया लेकिन वे ऐसी शांति नहीं चाहते थे, जो कब्रिस्तान में मिले, अपितु ऐसी शांति जो न्याय पर आधारित हो, इसलिए उन्होंने प्रेरणास्पद सूत्र दिया–

शिक्षित बनो

संगठित बनो

संघर्ष करो।

बाबा साहेब द्वारा संघर्ष का आह्वान समानता के लिए था, स्वतन्त्रता के लिए था, और बन्धुत्व भाव या भाईचारा के लिए था। जब तक यह पूरा नहीं होगा, तब तक बाबा साहेब और उनके मूल्यों, सिद्धान्तों की प्रासंगिकता बनी रहेगी। पूर्व राष्ट्रपति के0आर0 नारायणन ने ठीक ही लिखा– बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर के रास्ते पर चलकर ही समतामूलक समाज के सपने को साकार किया जा सकता है।

आजादी के इतने वर्षो के बाद भी संविधान में समानता को मूल अधिकार में सम्मिलित करने के बावजूद समानता स्थापित नहीं हो पाई है। उदारीकरण के बढ़ते दौर में आर्थिक असमानता बढ़ती जा रही है। गरीब के और गरीब होने, अमीर के और अमीर होने से सामाजिक न्याय की अवधारणा उसके प्रतिरूप सामाजिक अन्याय के रूप में दिखाई पड़ती है। आज यह प्रश्न बहुधा समाज के एक वर्ग द्वारा उठाया जाता है कि सामाजिक न्याय की बात दलित, पिछड़ा ही अधिक क्यों करता है? इसका कारण

यह है कि सामाजिक अन्याय का सर्वाधिक शिकार यही वर्ग रहा है, इसलिए बार–बार सामाजिक न्याय की बात करता हैं। अस्पृश्यता के संविधान के अनुच्छेद 17 में अपराध घोषित होने के बावजूद आजादी के 60 वर्ष बाद भी क्या भारतीय समाज में गावों और शहरों में अस्पृश्यता का पूर्णतः उन्मूलन हो पाया है? क्या अस्पृश्यों के साथ किया जा रहा है अत्याचार समापत हो गया है? इन प्रश्नों का उत्तर नकारात्मक ही मिलता है। आज भी देश के प्रमुख समाचार पत्रों में आए दिन अस्पृश्यों के साथ अन्याय, अत्याचार का समाचार पढ़ने को मिल जाता है। इसी कड़ी में वैश्विक स्तर पर भारत जैसे गरीब राष्ट्र आज भी नस्लवाद का शिकार है।

आजादी के बाद भी देश के राजनैतिक एवं सामाजिक जीवन में जातीयता और वैमनस्यता कम होने के स्थान पर बढ़ता जा रही है। यह मनुवादी मानसिकता तथा डा0 अम्बेडकर के जीवन दर्शन को ठीक से न समझन के कारण यह बीमारी बढ़ती जा रही है। एक जाति का दूसरे जाति के प्रति घृणा भावना, द्वेष भावना बढ़ती जा रही है। बन्धुता या प्रेम का प्रचार–प्रसार होने पर ही यह समाप्त हो सकता है। इन सबका समाधान बाबा साहेब के जीवन दर्शन स्वतन्त्रता समानता और बन्धुता में ही है। जब तक समाज में देश में विश्व में असमानता, परतन्त्रता, और द्वेषभाव रहेगा तब तक बाबा साहेब के सिद्धान्तों, मूल्यों की प्रासंगिकता, उपयोगिता रहेगी।

वैश्विक स्तर पर भी समानता, स्वतन्त्रता और बन्धुता की आधिकाधिक आवश्यकता बढ़ती जा रही है। विकसित और पिछड़े राष्ट्रों में आर्थिक असमानता की खाई चौड़ी हो रही है, उदारीकरण का लाभ जनसंख्या के एक छोटे से भाग को मिल रहा है, राष्ट्रों में आपसी द्वेष, असंतोष फैल रहा है, स्वतन्त्रता सीमित हो चुकी है, ऐस आतंकवादी वैश्विक चुनौती बना है, इन सब का समाधान बाबा साहेब के जीवन दर्शन में निहित है।

बाबा साहेब ने सस्ती और सर्वसुलभ शिक्षा की लगातार मांग की थी, लेकिन आज शिक्षा दिन प्रतिदिन मंहगी होती जा रही है, जिससे गरीब वर्ग अच्छी और

उच्च शिक्षा प्राप्त करने से वंचित हो रहा है। आजादी के बाद सर्वशिक्षा अभियान जैसे कार्यक्रमों के बावजूद देश की साक्षरता दर 62 प्रतिशत के आसपास है और देश का एक बड़ा वर्ग अशिक्षित है। सबको शिक्षित करने में बाबा साहेब के शिक्षा सम्बन्धी विचार हमारे प्रेरणा स्रोत बने हुए हैं

बाबा साहेब ने देशप्रेम और देश सेवा के लिए निजी स्वार्थों को त्यागने तथा देश के सामाजिक व आर्थिक ढांचे को लोकतन्त्र के अनुरूप बनाने का आह्वान किया। क्या आज हम अपने स्वार्थों को देशहित के लिए बलिदान करने के लिए तैयार है? क्या देश का सामाजिक, आर्थिक ढांचा लोकतन्त्र के अनुरूप बन पाया है? उत्तर नकारात्मक आता है।

बाबा साहेब के सिद्धान्तों, आदर्शों, मूल्यों, को अपनाकर ही मानवता का विकास किया जा सकता है। डा० अम्बेडकर का संघर्ष एक मानवतावादी संघर्ष था, अम्बेउकरवाद ,मानवतावाद का दूसरा नाम है। अम्बेडकरवाद प्रत्यक्ष रूप से तथागत युद्ध का मानवतावादी दर्शन है, जिसकी आज के विश्व को अधिक आवश्यकता है।

खेद है कि भारत के शायद ही किसी विश्वविद्यालय ने अम्बेडकर और अम्बेडकरवाद को अपने पाठ्यक्रम में शामिल किया है। यदि समानता, स्वतन्त्रता और प्रेमभाव बन्धुता पर आधारित समाज, राष्ट्र, विश्व का निर्माण करना है, जिसमे अत्याचार, शोषण, वैमनस्य का अभाव हो और सभी मिलकर निःस्वार्थ भाव से मैत्रीभाव फैलाते हुए देश सेवा करें, जिससे एक सशक्त राष्ट्र, का निर्माण हो सके, तो अम्बेडकर और अम्बेडकरवाद का न सिर्फ प्रचार–प्रसार करना होगा बल्कि व्यक्ति से लेकर राष्ट्र के स्तर पर इसे सम्पूर्ण निष्ठा से जीना भी होगा।

अध्याय

बाइस

अध्याय– बाइस

शोध प्रबन्ध के इस अध्याय में बोद्धिसत्व, भारत रत्न, बाबा साहेब डॉ0 भीमराब अम्बेडकर के सांगोपांग व्यक्तित्व का अंकन करने वाले चित्रों का संकलन है, जिसके में बाबा साहेब के सम्पूर्ण परिवार का चित्र, पिता सूबेदार रामजी सकपाल का चित्र, धर्म पत्नी रामाबाई का चित्र, बड़ौदरा नरेश महाराज सायजी गायकवाड का चित्र, कोलम्बिया विश्वविद्यालय से डाक्टर ऑफ फिलासफी की उपाधि प्राप्त करने का चित्र, स्वतंत्र मजदूर दल के सदस्यों के साथ चित्र, द्वितीय पत्नी डॉ0 सबिता अम्बेडकर का चित्र, पुत्र यशवंत राव का चित्र, संविधान सभा में विविध अवसरों से सम्बन्धित चित्र, हिन्दू कोडबिल विवाद पर विचार–विमर्श करने का चित्र, नागपुर में बौद्ध धर्म दीक्षा का चित्र, महापरिनिर्वाण तथा बुद्ध की हिमछाया सहित अनेक दुलर्भ चित्रों का संकलन है, जो इस प्रकार है –

बैरिस्टर आंबेडकर
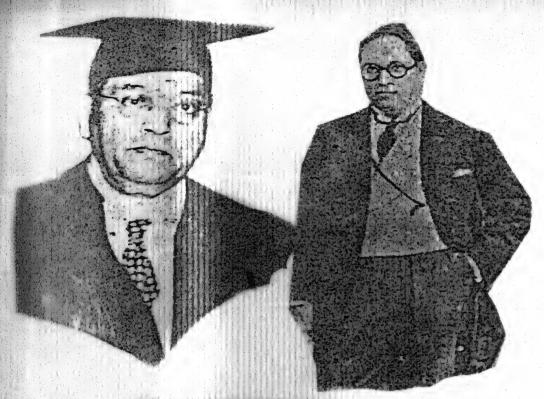
पुत्र यशवंतराव आंबेडकर एवं मीराताई आंबेडकर

देवी रमाबाई आंबेडकर
वैवाहिक जीवन का पूर्वार्ध दरिद्रता में मसक गया ।
पति की सुरक्षा और उन्नति के लिए हमेशा परमात्मा से प्रार्थना की ।

[illegible], डॉ. बाबासाहब, देवी रमाबाई, श्रीमती लक्ष्मीबाई, भतीजा मुकुंदराव
और लाडला कुत्ता टॉबी
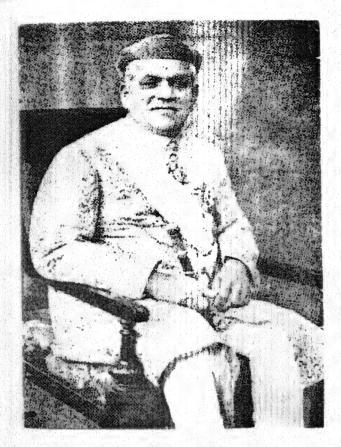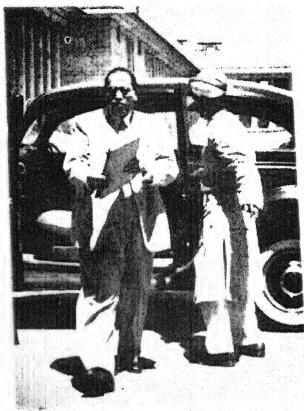
पुण्यश्लोक महाराज सयाजीराव गायकवाड

ब्रिटिश प्रतिनिधि मंडल से
मिलने के लिए - 1946
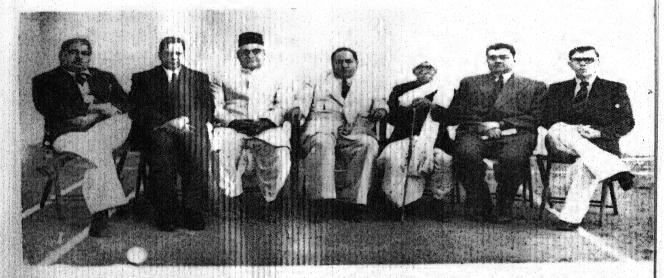
शिक्षा - क्षेत्र के सहयोगी : पीपल्स एजुकेशन सोसाइटी, बम्बई, कार्यकारी समिति :
प्रा. वि. ग. राव, प्राचार्य अ.बा. गजेंद्रगडकर, आचार्य मो.वा. दोंदे, डॉ. बाबासाहब आंबेडकर,
रावबहादुर सी.के. बोले, श्री दौलतराव गलाजीराव जाधव, श्री कमलकांत चित्रे

तथागत के अंक में

पुणे करार - 1933
बै. मुकुंदराव जयकर, सर तेजबहादुर सप्रू, डॉ. आंबेडकर
और अन्य नेता

अनुरक्ति व
विरक्ति के क्षण

मंत्रिमंडलीय सहयोगियों के साथ
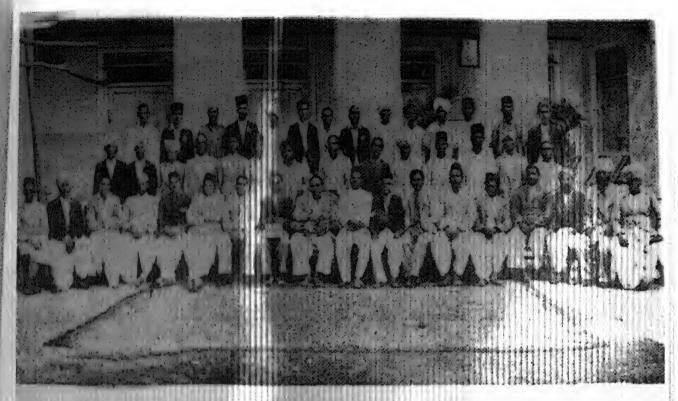
स्वतंत्र मजदूर दल के नेता और कार्यकर्ता - 1937

प्रकांड पंडित डॉ. बाबासाहब आंबेडकर
एम.ए., पीएच डी., डी.एस.सी.,बार-ॲट-लॉ
तपसा प्राप्यते यशः ।

बुद्धं शरणं गच्छामि
14 अक्तूबर, 1956
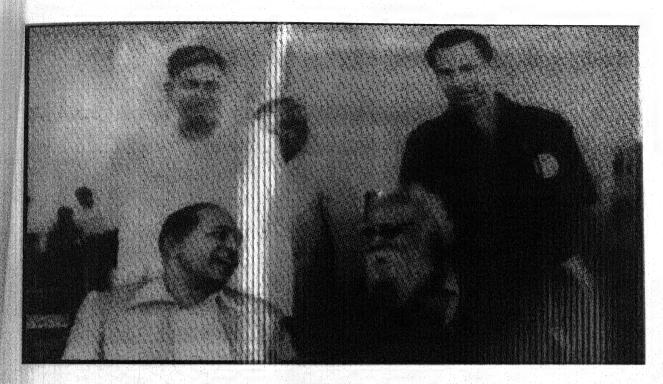
डॉ. आम्बेडकर ई. वी. रामास्वामी नायकर पेरियार के साथ

खनिज कामगारों से बातचीत—1943

पूना करार (24.9.1932) बैरिस्टर मुकुंदराव जयकर

व सर तेज बहादुर सप्रू के साथ

पैठन में संत एकनाथ की समाधि पर। साथ में दादा साहब गायकवाड़,

कमलाकांत चित्रे, भा.न. राजभोज आदि (1949)
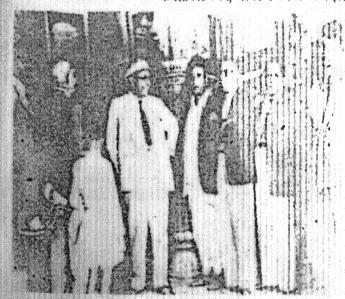
डॉ. आम्बेडकर अपनी दूसरी पत्नी डॉ. सविता आम्बेडकर के साथ

स्वतंत्र भारत के कानून मंत्री के रूप में शपथ लेते हुए

स्वतंत्र भारत के प्रथम विधि मंत्री

संविधान प्रारूप समिति सदस्य - 1947
बैठे हुए : श्री एन माधवराव, श्री सय्यद सादुल्ला, डॉ. आंबेडकर (अध्यक्ष),
श्री अलादी कृष्णस्वामी अय्यर, सर बेनेगल नरसिंगराव
पीछे खड़े हुए : कार्यालयी अधिकारी

राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद को भारतीय संविधान की प्रति देते हुए (1950)

सूबेदार रामजी मालोजी आंबेडकर
शिक्षा, शील एवं अनुशासन का महत्त्व अंकित किया।

नई दिल्ली में अपने पुस्तकालय में श्रीलंका के बौद्ध भिक्षुओं के साथ (1950)

हिंदू कोड विल पर बुद्धिजीवियों से चर्चा—1951
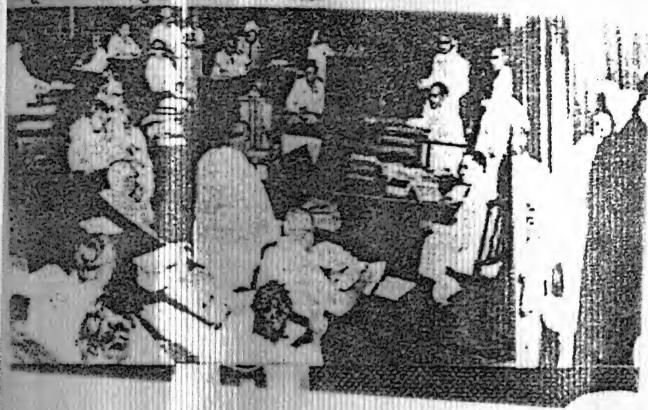
डॉ. आंबेडकर दीक्षा भूमि पर 22 प्रतिज्ञाएँ देते हुए—14.10.1956

र, 1956 मुंबई की दादर चौपाटी में अंतिम यात्रा के मार्मिक क्षण

तथागत की
शीतल-शरण में
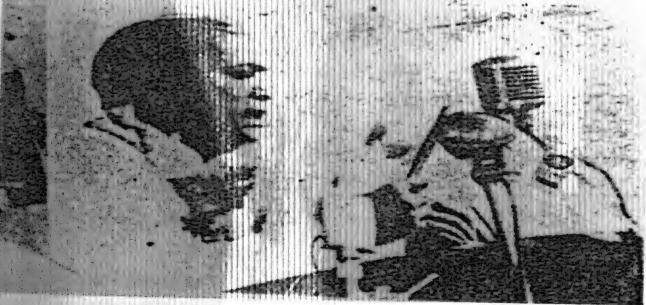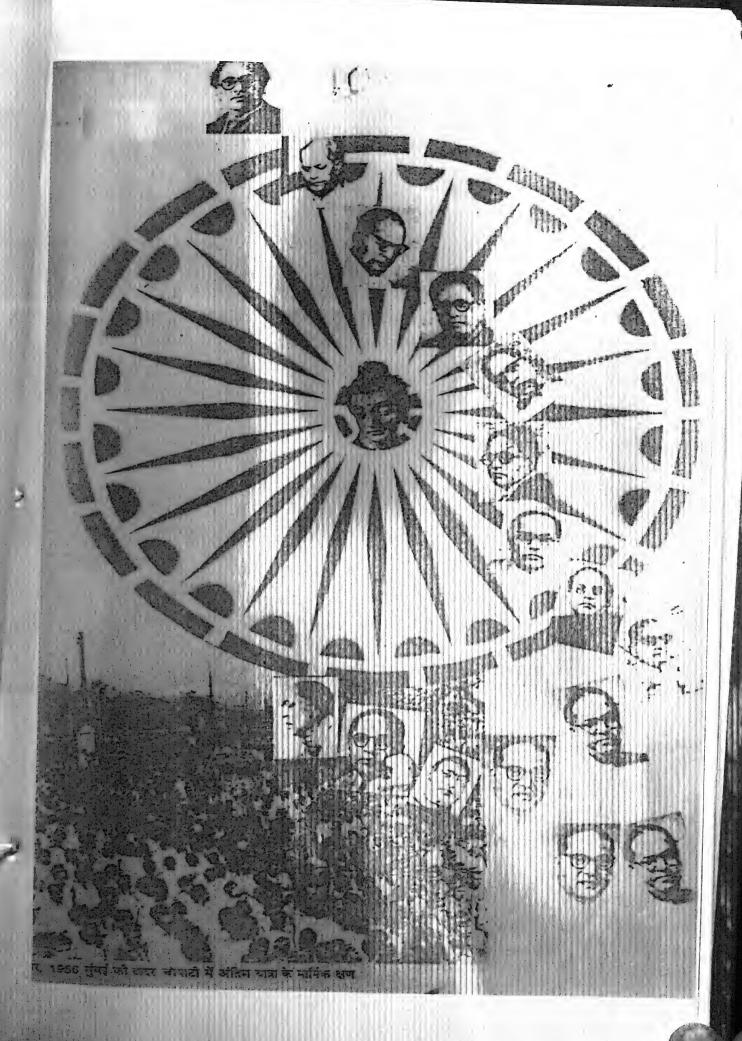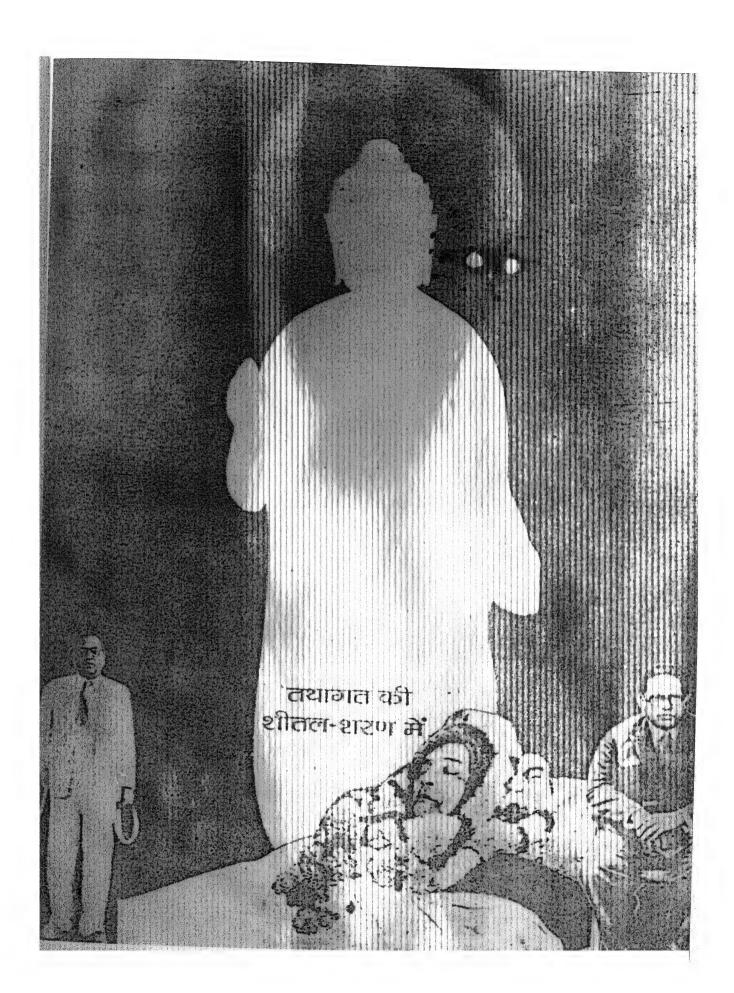
सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अम्बेडकर, बी0आर0, अनुवादक भदन्त आनन्द कौशल्यायन, रिडल्स ऑफ हिन्दुइज्म, समता प्रकाशन समता सैनिक दल नागपुर, प्रथम संस्करण।

2. अम्बेडकर, बी0आर0, व्हाट गाँधी एण्ड कांग्रेस हैव टू द अनटचबिल्स, प्रकाशक थैंकर एण्ड कम्पनी, मुम्बई, 1946।

3. अम्बेडकर, बी0आर0, द बुद्धा एण्ड हिज धम्मा, बुद्ध भूमि पब्लिकेशन, नागपुर प्रथम संस्करण।

4. अम्बेडकर, बी0आर0, स्टेट्स एण्ड मैनारिटीज, प्रकाशक थैंकर एण्ड कम्पनी, मुम्बई, 1947।

5. अम्बेडकर, बी0आर0, रानाडे, गांधी एण्ड जिन्ना, प्रकाशक थैंकर एण्ड कम्पनी, मुम्बई, 1943।

6. अम्बेडकर, बी0आर0, पाकिस्तान एण्ड द पार्टिशन ऑफ इण्डिया, प्रकाशक थैंकर एण्ड कम्पनी, मुम्बई, 1946।

7. अम्बेडकर, बी0आर0, हू आर द शूद्राज, प्रकाशक थैंकर एण्ड कम्पनी, मुम्बई, 1946।

8. अम्बेडकर, बी0आर0, थॉट ऑन लीविंग्सटिस्क स्टेट्स, 1955।

9. अम्बेडकर, बी0आर0, मिस्टर गाँधी एण्ड द इमैन्सीपेशन्स ऑफ द अनटच बिल्स, प्रकाशक थैंकर एण्ड कम्पनी, मुम्बई, 1943।

10. अम्बेडकर, बी0आर0, ऐनिहललेशन ऑफ कास्ट, प्रकाशक थैंकर एण्ड कम्पनी, मुम्बई, 1936।

11. अम्बेडकर बी0आर0, द अनटचबिल्स, अमृत प्रकाशन, नई दिल्ली, 1948।

12. अग्रवाल, श्याम मोहन, गाँधी एवं अम्बेडकर– राजनैतिक और सामाजिक चिंतन, रितु पब्लिकेशन, सीतारामपुरी, आमेर रोड, जयपुर, संस्करण 2000।

13. अजीत, रे, पोलोटिकल पॉवर इन इण्डिया, कलकत्ता, 1981 संस्करण।

14. आनन्द, टी0आर0, धम्म दर्पण, शशि एजेन्सीज बोरे गांव बरघा महाराष्ट्रा, अक्टूबर–दिसम्बर अंक, 1980

15. आजाद, मौलाना अबुल कलाम, इण्डिया वीन्स फ्रीडम

16. अहीर, डी0सी0, गाँधी और अम्बेडकर,

17. अंतरिम संसद की कार्यवाही, 06 फरवरी फरवरी 1951 एवं 20 सितम्बर 1951।

18. इण्डियन इन्फारमेशन, 15 जुलाई 1939 का अंक।

19. कुमार, अनुज, बहुजन नायक मा0 कांशीराम के अविस्मरणीय भाषण।

20. कुबेर, डब्लू0एन0, आधुनिक भारत के निर्माता, भीमराव अम्बेडकर।

21. कौशाम्बी, धर्मानन्द, भगवान बुद्ध और जीवन दर्शन, लोक भारतीय प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण।

22. कांस्टिट्यूट्स असेम्बली डिवेट्स, खण्ड 1 से 7 तक।

23. कीर, धनंजय, डा0 बाबा साहब अम्बेडकर, जीवन–चरित्र, पापुलर प्रकाशन प्रा0लि0, दरियागंज, नई दिल्ली।

24. कमल, एम0पी0, दलित संघर्ष के महानायक, स्नेह साहित्य सदन, दरियागंज, नई दिल्ली।

25. कमल भारती, मायावती और दलित आन्दोलन।

26. ग्रोवर, बी0एल0, आधुनिक भारत का इतिहास एक नवीन मूल्यांकन, एस0चन्द्र एण्ड कम्पनी लि0, रामनगर, नई दिल्ली।

27. गुरुदत्त, स्वाधीनता के पथ पर, नेशनल बुक ट्रस्ट ऑफ इण्डिया, प्रथम संस्करण।

28. चन्द्र, विपिन, आजादी के बाद का भारत, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, तृतीय संस्करण 2004।

29. चन्द्र, विपिन, भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, प्रथम संस्करण 1990।

30. चंचरीक, के0एल0, मायावती संघर्ष और सत्ता का सफर।

31. चन्द्र, विपिन, अनुवादक, एन0ए0खान शाहिद, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन, अनामिका पब्लिसर्स एण्ड डिस्टीब्यूटर दरियागंज दिल्ली।

32. जगताप, मुरलीधर, युग पुरुष महात्मा फूले, महात्मा फूले चरित साधने प्रकाशन समिति द्वारा उच्चतन्त्र शिक्षा विभाग महाराष्ट्र शासन मन्त्रालय, मुम्बई।

33. जैन, पुखराज, भारत के स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, चतुर्थ संस्करण।

34. जैन, पुखराज, भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन तथा भारतीय संविधान, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 6वां संस्करण।

35. जवाहर लाल नेहरू सिलेक्टेट वर्क्स, एस0गोपाल द्वारा सम्पादित खण्ड–15, ओरिहैंग लांग मैन दिल्ली।

36. जसराम, हरनोटिया, समता के स्तम्भ बाबा साहेब और बाबू जी।

37. जाटव, डी0आर0, गाँधी लोहिया और अम्बेडकर, समता प्रकाशन सदन, जयपुर।

38. जाटव, डी0आर0, दी क्रिटिक्स ऑफ अम्बेडकर, जन उत्थान परिषद, नई दिल्ली, संस्करण 1975।

39. जाटव, डी0आर0, डा0 अम्बेडकर संविधान के मुख्य निर्माता, समता साहित्य सदन, जयपुर, प्रथम संस्करण।

40. जाटव, डी0आर0, राष्ट्रीय आन्दोलन में डा0 अम्बेडकर की भूमिका, समता साहितय सदन, जयपुर, 1989 संस्करण।

41. झॉ, दुजेन्द्र नारायण एवं श्रीमाली कृष्ण मोहन, प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली।

42. ट्रन्सफर ऑफ पावर खण्ड 1 से 7 तक

43. डा0 अम्बेडकर की भारतीयता, उ0प्र0 सन्देश, डा0 तुकाराम वर्मा, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ0प्र0, अंक– अप्रैल 1991

44. डींगर, डी0सी0, डा0 अम्बेडकर स्मृति ग्रन्थ, बोधिसत्व प्रकाशन, लखनऊ।

45. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 1, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

46. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 2, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

47. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 3, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

48. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 4, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

49. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 5, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

50. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 6, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

51. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 7, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

52. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 8, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

53. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 9, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

54. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 10, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

55. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 11, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

56. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 12, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

57. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राईडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 13, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

58. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 14, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

59. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 15, संकलन बसन्त मून (प्रकाशन महाराष्ट्र सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग बाम्बे)

60. डॉ0 बाबा साहेब अम्बेडकर 'राइडिंग एण्ड स्पीचेज' खण्ड 52, संकलन बसन्त मून

61. ताराचन्द्र, भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का इतिहास, खण्ड–iv, प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।

62. तिवारी, विनोद, डा0 भीमराव अम्बेडकर, मनोज पब्लिकेशन, मेनरोड बुराडी दिल्ली।

63. देवीदयाल, बाबा साहेब भीनराव अम्बेडकर की दिनचर्या, दलित टू डे प्रकाशन, इन्दिरा नगर लखनऊ।

64. देव, शांति और बाग सी0एस0, डा0 अम्बेडकर एण्ड कनवर्सन, डा0 अम्बेडकर

65. दुसाध, एच0एल0, आदि भारत मुक्ति बहुजन समाज।

66. दुसाध, एच0एल0, डाइवर्सिटी। सामाजिक परिवर्तन और बी0एस0पी0, सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2000।

67. दुसाध, एच0एल0, सामाजिक परिवर्तन और बी0एस0पी0, सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2000।

68. दस स्पोक अम्बेडकर, खण्ड–1, जालंधर, 1977, संपादन भगवानदास।

69. दस स्पोक अम्बेडकर, खण्ड–2, जालंधर, 1977, संपादन भगवानदास।

70. दस स्पोक अम्बेडकर, खण्ड–3, जालंधर, 1977, संपादन भगवानदास।

71. दस स्पोक अम्बेडकर, खण्ड–4, जालंधर, 1977, संपादन भगवानदास।

72. दस स्पोक अम्बेडकर, खण्ड–5, जालंधर, 1977, संपादन भगवानदास।

73. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 1, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

74. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 2, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

75. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 3, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

76. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 4, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

77. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 5, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

78. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 6, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

79. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 7, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

80. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 8, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

81. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 9, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

82. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 10, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

83. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 11, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

84. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 12, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

85. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 13, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

86. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 14, नई दिल्ली (1966), प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

87. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 47, नई दिल्ली (1977), प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

88. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 49, नई दिल्ली (1977), प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

89. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 51, नई दिल्ली (1977), प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

90. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 85, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

91. द कलेक्टिव वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 90, नई दिल्ली, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली।

92. दत्त, रजनी पाम इण्डिया टुडे, मैकमिलन प्रा0लि0 नई दिल्ली, भारतीए इतिहास परिसंस्करण द्वितीय संस्करण।

93. धर्मवीर, डा0 अम्बेडकर की प्रभावशाली व्याख्या, शेष साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली।

94. नन्दा, बी0आर0, महात्मा गाँधी एक जीवनी, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1986।

95. नन्दा, बी0आर0, महात्मा गाँधी ए बायोग्राफी, ओ0यू0पी0 दिल्ली, 1958

96. नेहरू, जवाहरलाल, द डिस्कवरी ऑफ इण्डिया, मेरिडियन बुक्स लंदन, 1944 संस्करण।

97. नागर, विष्णुदत्त एवं नागर कृष्ण बल्लभ पंत, डा अम्बेडकर के आर्थिक विचार और नीतियां, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।

98. नम्बूदरी पाद, ई0एम0एस0, गाँधी जी और उनका वाद, नेशनल बुक सेन्टर, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1976।

99. नईम, इन्तिजार, दलित समस्या की जड़, साहित्य सौरभ प्रकाशन, 1781 हौज, सुईवालान, नई दिल्ली, 1996, द्वितीय संस्करण।

100. नयमिश राय मोहनदास, बहुजन समाज।

101. प्रसाद, राजेन्द्र, गाँधीवाद–समाजवाद, नवयुग साहित्य सदन, इन्दौर, प्रथम संस्करण– 1945।

102. प्रसाद, राजेन्द्र, इण्डिया डिवाइडेड,

103. प्रसाद, विश्वेसर, वान्डेज एण्ड फ्रीडम, खण्ड–दो, राजेश पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

104. प्रसाद, विमल, गांधी नेहरू एण्ड जे0पी0, चाणक्या पब्लिकेशन, दिल्ली, 1985

105. प्रसाद, ईश्वरी, अर्वाचीन भारत का इतिहास, 1740–1947, इण्डियन प्रेस पब्लिकेशन प्रा0 लि0, इलाहाबाद, 1986 संस्करण।

106. प्रसाद ईश्वरी, प्राचीन भारतीय संस्कृति,

107. प्रोसीडिंग्स ऑफ राउन्ड टेबिल कांफ्रन्स (फस्ट सेशन) गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया, पब्लिकेशन ब्रांच कलकत्ता, 1931–32,

108. प्रो0 लाल, अंगने, बोधिसत्व डा0 अम्बेडकर अवदान।

109. प्रो0 लाल, अंगने, बौद्ध संस्कृति, प्रबुद्धि प्रकाशन, लखनऊ।

110. प्रो0 लाल, अंगने, बोधिसत्व बाबा साहब डा0 भीमराव अम्बेडकर जीवन और दर्शन, सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उ0प्र0।

111. प्रशान्त, जी0पी0, बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर का जीवन संघर्ष, कल्चरल पब्लिशर्श, लखनऊ।

112. पन्त, गोविन्द बल्लभ, धर्म चक्र, तुलसी प्रकाशन, इन्दिरा नगर लखनऊ, 1949 संस्करण।

113. पुजारी, विजय कुमार, डा0 अम्बेडकर जीवन दर्शन,

114. पालीवाल, कृष्ण दत्त, डा0 अम्बेडकर सामाजिक व्यवस्था और दलित साहित्य।

115. पाण्डेय, बी0सी0, प्राचीन भारत का राजनैतिक और सांस्कृतिक इतिहास, भाग–1 एवं भाग–2।

116. पब्लिकेशन सोसायटी, हैदराबाद, 1965 संस्करण।

117. पाण्डे बी0सी0 प्राचीन भारत का राजनैतिक और सांस्कृतिक इतिहास प्रकाशन सेन्ट्रल पब्लिकेशन प्रकाशन इलाहाबाद तृतीय संस्करण।

118. प्रोसीडिंग्स ऑफ राउन्ड टेबिल कान्फ्रेन्स (फर्स्ट सेशन) गवर्मेन्ट ऑफ इण्डिया, पब्लिकेशन ब्रान्च, कोलकाता 1931।

119. बेचैन, श्योराज सिंह एवं रजत रानी मीनू, दलित दखल।

120. बेचैन श्योराज सिंह एवं चौबे देवेन्द्र, चिंतन की परंपरा और दलित साहित्य।

121. बसू, डी0डी0, भारत का संविधान। प्रेतिस हाल ऑफ इण्डिया प्रा0 लि0 नई दिल्ली आठवा संस्करण।

122. बाली, एल0आर0, डा0 अम्बेडकर, जीवन और मिशन, भीम प्रकाशन, जालंधर, पंजाब।

123. बासम, ए0एल0, अद्‌भुद भारत,

124. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड–1, प्रकाशन, कल्याण मंत्रालय भारत सरकार प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार संकलन बसन्त मून सम्पादक डॉ0 श्याम सिंह शसी 1993।

125. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड़मय, खण्ड–2, प्रकाशन, कल्याण मंत्रालय भारत सरकार प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार संकलन बसन्त मून सम्पादक डॉ0 श्याम सिंह शसी 1993।

126. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–3, प्रकाशन, कल्याण मंत्रालय भारत सरकार प्रकाशन विभाग सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार संकलन बसन्त मून सम्पादक डॉ0 श्याम सिंह शसी 1993।

127. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड–4, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 1998 संकलन

कर्ता बसंत मून अनुवादक बृजेन्द्र नाथ शर्मा, सीताराम खाडोबल, रघुनाथ सिंह, ओम प्रकाश कश्यप।

128. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–5, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 1998 संकलन कर्ता बसंत मून।

129. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–6, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 1998 संकलन कर्ता बसंत मून।

130. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–7, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 1998 संकलन कर्ता बसंत मून।

131. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–8, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 1998 संकलन कर्ता बसंत मून।

132. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–9, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 1998 संकलन कर्ता बसंत मून अनुवादक सीताराम खाडोबल, स्व0 रघुनन्दन सिंह, डॉ0 देवेश चन्द्र।

133. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांडमय, खण्ड–10, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 1998 संकलन कर्ता बसंत मून।

134. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–11, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 1998 संकलन कर्ता बसंत मून।

135. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–12, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 1998 संकलन कर्ता बसंत मून।

136. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–13, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 2003 संकलन कर्ता बसंत मून।

137. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–14, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 2003 संकलन कर्ता बसंत मून।

138. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–15, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 2003 संकलन कर्ता बसंत मून।

139. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–16, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 2003 संकलन कर्ता बसंत मून।

140. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–17, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 2003 संकलन कर्ता बसंत मून।

141. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–18, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 2002 संकलन कर्ता बसंत मून।

142. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड--19, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 2002 संकलन कर्ता बसंत मून।

143. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड--20, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 2003 संकलन कर्ता बसंत मून।

144. बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर, सम्पूर्ण वांड.मय, खण्ड–21, डॉ0 अम्बेडकर प्रतिष्ठान कल्याण मन्त्रालय भारत सरकान नई दिल्ली द्वितीय संस्करण 2003 संकलन कर्ता बसंत मून।

145. बाम्बे लेजिस्लेटिव काउन्सिल डिवेट खण्ड 1 से 26 तक (महाराष्ट्र सरकार प्रकाशन विभाग)।

146. बाम्बे गवर्नमेन्ट गजट खण्ड 1 से 5 (महाराष्ट्र सरकार प्रकाशन विभाग)।

147. बासम, ए0एल0, अद्भुत भारत, अग्रवाल एण्ड कम्पनी प्रकाशन आगरा, द्वितीय संस्करण।

148. भटनागर, राजेन्द्र मोहन, डा0 अम्बेडकर जीवन और दर्शन, प्रकाशक किताब घर, दरियागंज, दिल्ली।

149. भट्ट, भरतराम, मनीषी अम्बेडकर, साहित्य केन्द्र प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण।

150. भोंसले, एस0एस0, अनुवादक वेदालंकार, वेदकुमार, क्रांति के अग्रदूत राजर्षि साहू महाराज, मूल प्रकाशक मुम्बई राज्य साहित्य अणि संस्कृत मण्डल, मुम्बई, अनुवाद प्रकाशक– विकास प्रकाशक, कानपुर।

151. मजूमदार, रमेश चन्द्र, राय चौधरी हेमचन्द्र, कालीकिंकर दत्त, भारत का बृहत इतिहास, भाग–1, 2 एवं 3, मैकमिलन इण्डिया लि0, नई दिल्ली।

152. मजूमदार, रमेश चन्द्र, हिस्ट्री ऑफ फ्रीडम मूवमेन्ट्स, मैकमिलन इण्डिया लि0, नई दिल्ली।

153. मजूमदार, रमेश चन्द्र, कांग्रेस मैन इन द प्रि गाँधियन, मैकमिलन इण्डिया लि0, नई दिल्ली।

154. मदन, गुरु प्रसाद, बाबा साहेब अम्बेडकर और सामाजिक न्याय की चुनौतियाँ।

155. माता प्रसाद, उत्तर प्रदेश का दलित दस्तावेज,

156. माता प्रसाद, धर्म परिवर्तन, तुलसी प्रकाशन सी 2098 इन्दरा नगर लखनऊ।

157. मा0 कांशीराम, चमचा युग, सिद्धार्थ बुक सदन, शहादरा नई दिल्ली, प्रथम संस्करण।

158. महाजन, विद्याधर एवं सावित्री महाजन, भारत 1556 से आगे, यश चन्द्र अण्ड कम्पनी लि0 नई दिल्ली, 6वां संस्करण।

159. महाजन, बी0डी0, फिफ्टी इयर्स ऑफ माडर्न इण्डिया, चाँद एण्ड कम्पनी, दिल्ली, संस्करण 1970

160. रत्तू, नानक चन्द्र, डा0 अम्बेडकर, जीवन के अन्तिम कुछ वर्ष,

161. रोमिला, थापक, भारत का इतिहास, राजकमल प्रा0लि0, दिल्ली।

162. राविन, जे0, द अम्बेडकर एण्ड हिज मूवमेन्ट, अम्बेडकर सोसायटी, हैदराबाद, 1965 प्रथम संस्करण।

163. रामनाथ, बाबा साहेब के तीन उपदेश, प्रज्ञा प्रकाशन कानुपुर।

164. राम दिनेश, दलित मुक्ति का प्रश्न और दलित साहित्य, श्री साहित्यिक संस्थान, गाजियाबाद उत्तर प्रदेश।

165. राय, शेखर, बी0डी0, महात्मा गाँधी और डा0 अम्बेडकर, दलित साहित्य एकादमी बंगलौर, कर्नाटक।

166. राय, हिमांशु, युग पुरुष बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर संघर्ष गाथा, समता प्रकाशन नई दिल्ली।

167. राय, यू0एन0, गुप्त राज वंश,

168. रहवर, हंसराज, बेनकाब गाँधी, भगत सिंह विचार मंच, सहबरा, दिल्ली, 1996, प्रथम संस्करण।

169. रघुवंशी, बी0पी0एस0, इण्डियन नेशनलिस्ट, मूवमेंट एण्ड थॉट, लक्ष्मीनारायण प्रकाशन आगरा, 1959 संस्करण।

170. रॉर्वसन एलेक्जेन्डर, द् महार फोल्क, कौशल्या प्रकाशन औरंगाबाद महाराष्ट्र।

171. लेनिन, बी0वाई0, मार्क्स एण्ड एंजल्स, लोक भारतीय प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण।

172. लिनलिथिगो पेपर्स, नेहरू मेमोरियल म्यूजियम लाइब्रेरी, नई दिल्ली।

173. लिमये, मधु, बाबा साहेब अम्बेडकर एक चिंतन। आत्मा राम एण्ड सॅन्स कश्मीरी गेट नई दिल्ली, प्रथम संस्करण।

174. वासुदेव, धरती के देवता, तुलसी प्रकाशन, लखनऊ।

175. वर्मा, लाल बहादुर, दि मुस्लिम लीग, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली।

176. वर्मा, हरिश्चन्द्र, दिल्ली संतल्त का राजनैतिक और सांस्कृतिक इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली।

177. विवेक, रामलाल, डा0 अम्बेडकर, जीवन और आदर्श, प्रकाशक मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर।

178. विमल कीर्ति, बुद्ध का दर्शन अम्बेडकरवाद का दर्शनिक आधार।

179. सेन, धीरेन्द्र, रिबोल्यूशन वार कान्सेट, विद्योदय लाइब्रेरी, कलकत्ता, प्रथम संस्करण।

180. सत्याराय, भारत में उपनिवेशवाद एवं राष्ट्रवाद।

181. सत्यप्रेमी, पुरुषोत्तम, दलित साहित्य सृजन के सन्दर्भ, कामना प्रकाशन, दिल्ली।

182. सत्य नारायण, बाबा साहेब डा0 भीमराव अम्बेडकर सामाजिक एवं राजनैतिक विचार।

183. सुभाषचन्द्र, अम्बेडकर से दोस्ती, समता और मुक्ति, इतिहास बोद्ध प्रकाशन इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2006।

184. सागर, माता प्रसाद, दलित कारवां, प्रकाशक, भारतीय दलित साहित्य अकादमी उ0प्र0।

185. सोर्स मैटेरियल्स ऑन द बाबा साहेब अम्बेडकर एण्ड द मूवमेण्ट्स ऑफ अनटच वेल्स, 1985, मुम्बई, सम्पादक वी0जी0 कुण्टे।

186. सरदार पटेल करेस्पांडेंट्स, खण्ड 1 (अहमदाबाद 1971)

187. सरदार पटेल करेस्पांडेंट्स, खण्ड 2 (अहमदाबाद 1971)

188. सरदार पटेल करेस्पांडेंट्स, खण्ड 3 (अहमदाबाद 1972)

189. सरदार पटेल करेस्पांडेंट्स, खण्ड 4 (अहमदाबाद 1972)

190. सरदार पटेल करेस्पांडेंट्स, खण्ड 5 (अहमदाबाद 1973)

191. सरदार पटेल करेस्पांडेंट्स, खण्ड 6 (अहमदाबाद 1973)

192. सरदार पटेल करेस्पांडेंट्स, खण्ड 7 (अहमदाबाद 1973)

193. साहरे, एम0एल0, सामाजिक न्याय के सजग प्रहरी डा0 अम्बेडकर।

194. सांपला, बी0आर0, युग पुरुष अम्बेडकर, प्रकाशक डा0 अम्बेडकर समाज कल्याण परिषद, दिल्ली।

195. सरदार पटेल करेस्पांडेंट्स, खण्ड–5 व 6, अहमदाबाद, 1973।

196. सरकार, सुमित, आधुनिक भारत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली प्रथम छात्र संस्करण।

197. सिंह, अयोध्या, भारत का मुक्ति संग्राम, मैकमिलन इण्डिया लि0, द्वितीय संस्करण।

198. सिंह, तेज, आज का दलित साहित्य, अतिश प्रकाशन, दिल्ली।

199. सिंह, राजपाल, भारतीय संविधान के शिल्पकार, समता प्रकाशन दिल्ली।

200. सिंह, रामगोपाल, डा0 अम्बेडकर का विचार दर्शन।

201. सिंह, रघुबीर, बदलते जीवन मूल्य और बौद्ध धर्म, अतिश प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण।

202. सिंह, कमलाकांत, सुश्री मायावती एक आश्चर्य जनक व्यक्तित्व। डॉ0 भीमराव अम्बेडकर शिक्षण एवं मानव विकास सेवा संस्थान, आजमगढ़ उत्तर प्रदेश प्रथम संस्करण 2006।

203. सिंह, धरमपाल, महामानव की महा समाधि, मंजू प्रकाशन, 75—चौपाटिया रोड चौक, लखनऊ।

204. शुक्ल, रामलखन, आधुनिक भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली।

205. शास्त्री, शंकरानन्द, युग पुरुष डा0 बाबा साहेब डा0 अम्बेडकर,

206. शास्त्री, मनोहर लाल, डा0 भीमराव अम्बेडकर, जीवन संघर्ष, प्रवाहनी प्रकाशन, बन्थरा बाजार, लखनऊ, प्रथम संस्करण।

207. शर्मा, रामविलास, गाँधी, अम्बेडकर और लोहिया और भारतीय इतिहास की समस्यायें,

208. शर्मा, रामशरण, प्राचीन भारत में भौतिक प्रगति एवं सामाजिक संरचनाएं, प्रकाशक —राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली द्वितीय संस्करण।

209. श्रीवास्तव, के0सी, प्राचीन भारत का इतिहास, यूनाइटेड बुक डिपो यूनिवर्सिटी रोड, इलाहाबाद।

210. श्रीवास्तव, ए0एल0, भारत का इतिहास 1000ई0 से 1760 ई0, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी आगरा।

211. हंस, बुद्ध शरण, डा0 अम्बेडकर के विचार, प्रकाशक अम्बेडकर मिशन, डा0 अम्बेडकर मार्ग, चितकोहरा, पटना।

समाचार पत्र एवं पत्रिकाए

1. मूक नायक 1920 से
2. बहिष्कृत भारत 1924 से
3. समता 1926 से
4. यंग इण्डिया 1919 से 1936 तक
5. हरिजन 1932 से
6. बाम्बे क्रॉनिकल 1926 से 1947
7. द् फ्री प्रेस जनरल 1931 से 1942
8. जनता 1922 से 1931
9. हेराल्ड
10. टाइम्स ऑफ इण्डिया 1924, 31, 32, 36, 54, 56।
11. हिन्दू
12. प्रताप 1931 से 36
13. दैनिक जागरण
14. डॉन
15. संदेश उत्तर प्रदेश सरकार सूचना एवं प्रसारण विभाग वर्ष 2007 मई, जून, जुलाई अंक
16. अम्बेडकर टुडे,